श्रीवेङ्कटेशशर्मप्रणीतः

सर्वार्थचिन्तामणिः

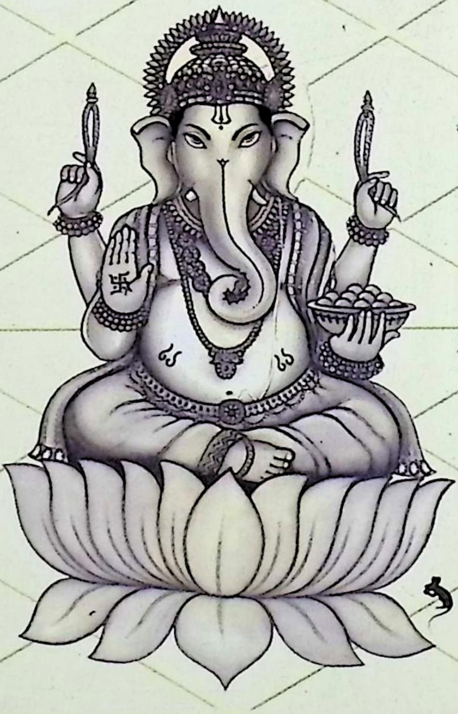

हिन्दीव्याख्याकार

आचार्य गुरुप्रसाद गौड़

श्रीवेङ्कटेशशर्मप्रणीतः

सर्वार्थचिन्तामणिः

'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दीटीकासहितः

CHAUKHAMBA SANSKRIT PRATISHTHAN
38 U.A., Bungalow Road, Opp. Hansraj
College Back Gate, Delhi-110007
Ph.:- 23856391, 41530902

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

३९७

* * *

श्रीवेङ्कटेशशर्मप्रणीतः

सर्वार्थचिन्तामणिः

‘सर्वार्थबोधिनी’ हिन्दीटीकासहितः

हिन्दीव्याख्याकारः

आचार्य गुरुप्रसाद गौड़

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

© सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी अंश का किसी भी रूप में पुनर्मुद्रण या किसी भी विधि (जैसे-इलेक्ट्रोनिक, यांत्रिक, फोटो-प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग या कोई अन्य विधि) से प्रयोग या किसी ऐसे यंत्र में भंडारण, जिससे इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता हो, प्रकाशक की पूर्वलिखित अनुम्ति के बिना नहीं कियां जा सकता है।

सर्वार्थचिन्तामणिः - गुरुप्रसाद गौड़

ISBN : 978-93-83721-61-0

प्रकाशक :
चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के 37/117 गोपाल मन्दिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129
वाराणसी 221001
दूरभाष : (0542) 2335263
e-mail : csp_naveen@yahoo.co.in
website : www.chaukhamba.co.in

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

संस्करण : 2015
₹ 280

वितरक :
चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस
4697/2 ग्राउण्ड फ्लोर, गली न. 21-ए
अंसारी रोड़, दरियागंज
नई दिल्ली 110002
दूरभाष : (011) 32996391, टेलीफैक्स : 23286537
e-mail : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

*

अन्य प्राप्तिस्थान :
चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान
38 यू. ए. बंगलो रोड़, जवाहर नगर
पोस्ट बॉक्स न. 2113
दिल्ली 110007

*

चौखम्बा विद्याभवन
चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पोस्ट बॉक्स न. 1069
वाराणसी 221001

मुद्रक :
डीलक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली,

भूमिका

ऐसा कहना कथमपि अनुचित नहीं होगा कि भारतीय ज्योतिष शास्त्र की फलित शाखा के इतिहास पर अभी बहुत कुछ शोधकार्य होना शेष है। ग्रन्थों एवं ग्रन्थकारों के विषय में कहीं-कहीं तो अल्पतम जानकारी भी उपलब्ध नहीं है; भले ही वह ग्रन्थ कितना ही उपयोगी तथा महत्त्वपूर्ण क्यों न हो। सर्वार्थचिन्तामणि के विषय में भी यही बात पूर्णत: घटित हो रही है। भारतीय फलित ज्योतिष के इतिहास पर प्रकाश डालने वाली जो भी सामग्री अब तक प्रकाशित हुई है, उसमें इस ग्रन्थ-जैसे अनेक छोटे-बड़े ग्रन्थों का उल्लेख तक नहीं है। इस लघुकलेवरी भूमिका में इस ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार के बारे में यत्किञ्चित् विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

ग्रन्थ का नाम— इस ग्रन्थ का नाम 'सर्वार्थचिन्तामणि' है, जिसका उल्लेख ग्रन्थकार ने प्रथम श्लोक में किया है। इसके साथ अध्यायों के अन्त में भी पाण्डुलिपियों में यही नाम लिखा गया है।

श्रीमच्छेषगिरेस्तटाधिनिलयं श्रीवेङ्कटेशं गुरुं
नत्वा वेङ्कटनायकं त्वनुदिनं जातोऽहमार्यात्सुधी: ।
ज्योति:शास्त्रमहाब्धिपारगमने वक्ष्यामि पोतात्मकम्
ज्योति:शास्त्रविवेकपाकविदुषां सर्वार्थचिन्तामणिम् ।।

ग्रन्थकार के अनुसार नौकारूपी 'सर्वार्थचिन्तामणि' नामक प्रकृत ग्रन्थ की रचना ज्योतिषशास्त्ररूपी महासमुद्र को पार करने के लिये ज्यौतिष शास्त्रसम्बद्ध ज्ञान से परिपक्व विद्वानों के लिये की गई है।

ग्रन्थ की विशेषता— इस ग्रन्थ में लगभग दो सहस्र श्लोक हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ उपसंहारसहित अट्ठारह अध्यायों में विभक्त है। इसका प्रथमाध्याय संज्ञाध्याय है। इसमें राशियाँ, उनके स्वरूप, वर्गभेद, ग्रहविवेचन के साथ-साथ क्षणिक ग्रहों तथा अप्रकाश ग्रहों का भी वर्णन है। अप्रकाश ग्रहों को स्पष्ट करने की विधि भी यहाँ दी गयी है। ग्रहों की पाचकादि संज्ञा अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा विशेष है। द्वितीय अध्याय से लेकर अष्टम अध्याय तक लग्नादि द्वादश भावों का फल अतिविस्तार से वर्णित है। नवें अध्याय में राजयोगों का वर्णन किया गया है। दशमाध्याय में अल्पायु योग दिये गए हैं। ग्यारहवाँ अध्याय अरिष्टभङ्ग योगों का है तथा बारहवें में मध्यमायु एवं दीर्घायु के योगों का वर्णन है। तेरहवें अध्याय के प्रारम्भ में ग्रहों की दीप्तादि संज्ञाओं का कथन है और सामान्य रूप से ग्रहों की दशाओं के फल उनके बलानुसार दिये गए हैं। तत्पश्चात् सोलहवें अध्याय तक सभी ग्रहों की दशान्तर्दशाओं का फल अनेक दृष्टिकोणों से इतने विस्तार

से वर्णित है कि दशाफलहेतु ज्योतिष के विद्यार्थियों को किसी अन्य ग्रन्थ की आवश्यकता कदापि नहीं होगी। इतना साङ्गोपाङ्ग दशावर्णन किसी अन्य ग्रन्थ में दृष्टिगोचर नहीं होता। सत्रहवाँ अध्याय प्रकीर्णाध्याय तथा अठारहवाँ उपसंहाराध्याय है। इन दो अध्यायों में पिछले अध्यायों में अनुल्लिखित आवश्यक जानकारियों का सङ्ग्रह है। इस प्रकार इस ग्रन्थ का नाम सर्वार्थचिन्तामणि चरितार्थ हो जाता है।

ग्रन्थ के तेरहवें अध्यायपर्यन्त प्रत्येक अध्याय के अन्त में श्लोकात्मक पुष्पिका दी गयी है; परन्तु बाद के अध्यायों में सत्रहवें को छोड़कर पुष्पिका का नितान्त अभाव है। सम्भव है कि शेष पाँच अध्याय ग्रन्थकर्त्ता के किसी शिष्य ने रचकर जोड़े हों। आचार्य की शारीरिक असमर्थता के कारण उनकी इच्छानुसार शिष्य ने या पुत्र ने अपने कर्तव्य की पूर्ति की हो और पुष्पिका देना अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया हो। जो भी हो; यह ग्रन्थ जातकशास्त्र का एक अनुपम रत्न है।

ग्रन्थ के रचयिता— अध्यायों के अन्त में दी गई पुष्पिकाओं के अनुसार इस ग्रन्थ के प्रणेता श्री वेङ्कटेश नामक आचार्य हैं। ग्रन्थ के प्रथम श्लोक के अनुसार ग्रन्थकर्त्ता ने भगवान् वेङ्कटेश को अपना गुरु माना है। श्री शिव एवं विष्णुस्वरूप भगवान् वेङ्कटेश वेङ्कटाचलम् पर्वत के अधिष्ठातृ देव भी हैं। इस पर्वत को संस्कृत में वेङ्कटाद्रि या वेङ्कटगिरि तथा शेषगिरि या शेषाद्रि भी कहा जाता है। तेलुगु भाषा में यह पर्वत 'तिरुमलै' के नाम से जाना जाता है। यही 'श्रीपर्वत' के नाम से आन्ध्रप्रदेश का प्रसिद्ध तीर्थस्थल भी है। इससे अधिक इनका परिचय प्राप्त नहीं है। द्वितीयाध्याय की पुष्पिका में लेखक का नाम 'व्यङ्कटशर्मा' भी मिलता है—

ग्रहयोगेक्षणाभ्यान्तु बलाबलवशादपि ।
लग्नस्यैव फलं प्रोक्तं श्रीमद्व्यङ्कटशर्मणा ॥

ग्रन्थ का रचना-काल— सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ में उसके रचना-काल का उल्लेख कहीं भी न होने से ग्रन्थकार के जीवनकाल का कुछ भी ज्ञान नहीं होता है। सर्वार्थचिन्तामणि के अनेक श्लोक ज्यों के त्यों ही जातकपारिजात (श्रीवैद्यनाथ दीक्षितरचित) में मिलते हैं। इस आधार पर विद्वानों ने इन्हें जातकपरिजात के रचयिता श्री वैद्यनाथ दीक्षित का पिता माना है, जो कि समीचीन ही है। जातकपारिजात के प्रथमाध्याय के द्वितीय श्लोक में श्रीवैद्यनाथ दीक्षित ने श्री व्यङ्कटाद्रि को अपना पिता लिखा है—

भारद्वाजकुलोद्भवस्य विदुषः श्रीव्यङ्कटाद्रेरिह
ज्योतिःशास्त्रविशारदस्य तनयः श्रीवैद्यनाथः सुधीः ।
होरासारसुधारसंज्ञविबुधश्रेणी मनःप्रीतये
राशिस्थाननिरूपणादिसकलं वक्ष्ये यथानुक्रमम् ॥

जातकपारिजात के अन्तिम श्लोक में भी इसी तथ्य का उल्लेख किया गया है। पं० गोपेश कुमार ओझा के अनुसार जातकपरिजात की रचना शकाब्द १३४७ या

विक्रमी संवत् १४८२ में हुई थी। यह समय ईस्वी सन् १४२५ होता है। इस आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि ग्रन्थकार श्री व्यङ्कटेश (व्यङ्कट शर्मा) संवत् १४५० विक्रमी शकाब्द १३१५; तदनुसार ईस्वी सन् १३९३ में विद्यमान रहे होंगे और इसी समय के आगे-पीछे सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ की रचना भी हुई होगी। ग्रन्थकार भारद्वाज गोत्रीय ब्राह्मण थे ।

अध्यायों की अट्ठारह संख्या का रहस्य– सर्वार्थचिन्तामणि में अट्ठारह अध्याय हैं । ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों की संख्या अट्ठारह ही है एवं ज्योतिष शास्त्र की शाखाओं की संख्या भी अट्ठारह ही होती है। ग्रन्थकार अपने समय के प्रकाण्ड तथा उद्भट विद्वान् थे।

सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ का मुद्रण एवं प्रकाशन तो एक शताब्दी समय से अधिक पूर्व ही हो गया था; परन्तु इसके उत्तम शुद्ध पाठसहित मुद्रण तथा सरल हिन्दी टीका की अत्यन्त आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। इस भाव की पूर्ति का प्रयास चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी के संचालक श्री नवनीत दासजी गुप्त के अनुरोध पर किया गया है । इस ग्रन्थ का मूल पाठ वेङ्कटेश्वर प्रेस, मुम्बई के संस्करण के आधार पर रखा गया है; परन्तु उसमें अनेक स्थानों पर लिपि या मुद्रणदोष के कारण पाठभ्रष्टता थी; जिसे स्वमति के अनुसार यथासम्भव शुद्ध करके तदनुसार हिन्दी टीका लिखी गयी है। टीका को यथासम्भव विद्वानों, विद्यार्थियों एवं जिज्ञासुओं के लिये उपादेय बनाने का हर सम्भव प्रयास किया गया है। इसीलिये शोधार्थियों एवं लेखकों को श्लोकसंख्या उद्धृत करने में सुविधा हो— यह विचार करते हुए प्रत्येक अध्याय में श्लोकांक प्रथम से अन्तिम तक लगातार क्रम से दिये गए हैं। अन्त में यही कहना चाहूँगा कि—

कृतार्थन्तु विद्वांसो ज्योतिःशास्त्रविशारदाः ।
दृष्ट्वा भ्रमं कृपादृष्ट्या पूरयन्तु त्रुटिं मम ॥

विदुषामनुचरः
आचार्य गुरुप्रसाद गौड़

गुरु (व्यास) पूर्णिमा,
संवत् २०६१ विक्रमी

विषयानुक्रमणी

विषयाः पृष्ठाङ्काः

प्रथमोऽध्यायः १-३५
(संज्ञाध्यायः)

मङ्गलाचरणम् १
देववन्दना १
ग्रहराशिप्रार्थना २
जातकप्रश्नयोरभेदत्वम् २
राशीश्वराः २
राशिचक्रे कालचक्रस्याङ्गानि ३
द्वादशराशीनां स्वरूपाणि ३
होराद्रेष्काणकथनम् ४
नवमांशाः ५
द्वादशांश-त्रिंशांश-सप्तमांशकथनम् ५
दशमांशाः, षोडशांशाः षष्ट्यंशाश्च ७
षष्ट्यंशानां सामान्यफलम् १०
दशवर्गप्रयोजनम् ११
पारिजातादेः शुभफले ह्रासकथनम् ११
पारिजातादिसंज्ञाकथनम् ११
पारिजातादिसंज्ञानां फलम् १२
क्षणिकग्रहाः १२
ग्रहाणां बालाद्यवस्थाकथनम् १३
राशीनां नामानि १३
द्वादशभावानां संज्ञाकथनम् १५
दुःस्थानानि राशीनां दिवारात्रिबलमुदयकथनञ्च १६
अप्रकाशग्रहकथनम् १६
भावानां केन्द्रादिसंज्ञाकथनम् १७
राशीनां बलकथनम् १७

विषयाः पृष्ठाङ्काः

ग्रहाणामुच्चनीचादिकथनम् १७
पुनश्च राशीनां बलकथनम् १८
राशीनां वर्णकथनम् १८
वेशिआदिसंज्ञाकथनम् १८
ग्रहाणामुपाधयः १९
शरीरे ग्रहप्रभावकथनम् १९
ग्रहाणां नामानि १९
ग्रहाणामाकारकथनम् २०
ग्रहाणां जातयः २२
ग्रहाणां वर्णदेवतादिशादिकथनम् २२
ग्रहाणां लिङ्गभेदशारीरिकधात्वादिकथनम् २२
ग्रहाणां वासस्थानानिवासांसि च २३
ग्रहाणां पार्थिवधातूनां वस्त्रभेदानाञ्च कथनम् २३
ग्रहाणां ऋतवः २४
ग्रहाणां षड्रसाः फलपाकसमयश्च २४
ग्रहाणां धातुमूलजीवकथनम् २५
ग्रहाणामूर्ध्वादिदृष्टिकथनम् २५
ग्रहाणां भावदृष्टिकथनम् २५
ग्रहाणां नैसर्गिकमैत्रीकथनम् २६
तात्कालिक मैत्री-पञ्चधा मैत्री च कथनम् २६
ग्रहाणां स्थानबलकथनम् २७
ग्रहाणां दिग्बल-कालबलकथनम् २७
ग्रहाणां नैसर्गिकबलकथनम् २८
ग्रहाणां चेष्टाबलकथनम् २८
लग्नलग्नेशयोः बलम् २८

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ग्रहाणां वाञ्छितषड्बलंप्रमाणम्	२८
ग्रहाणां भावबलकथनम्	२९
प्राणपदप्रसङ्गे लग्नचन्द्रयोः विकल्पम्	३०
ग्रहाणां पाचकादिकथनम्	३१
ग्रहाणां पाचकादिस्थानकथनम्	३१
पाचकादि निर्णयवशेन मित्राऽमित्रकथनम्	३२
पाचकमैत्रीफलम्	३३
बोधकसंज्ञकग्रहफलम्	३३
वेधकग्रहफलम्	३३
कारकग्रहफलम्	३३
गुलिकानयनविधिः	३४
मान्द्यानयनविधिः	३४
पाकेशात् शत्रुमित्रकथनम्	३५
ग्रहयुत्यनुसारेण फलम्	३५
संज्ञाध्यायसमाप्तिः	३५
द्वितीयोऽध्यायः (लग्नफलविचाराध्यायः)	३६-६४
लग्नफलविचारणा	३६
भावानां शुभाशुभफलम्	३६
दुःस्थानस्थितिसम्बन्धाद् ग्रहाणां फलम्	३६
पुनश्च शुभाशुभफलम्	३६
शेषभावानां फलविचारम्	३७
पुनश्च अशुभफलकथनम्	३७
कर्माजीवविचारणा	३७
सूर्यनवांशफलम्	३८
चन्द्रनवांशफलम्	३८
भौमनवांशफलम्	३८
बुधनवांशफलम्	३९
गुरुनवांशफलम्	३९
शुक्रनवाशंकफलम्	३९
शनिनवांशफलम्	३९
अजीविकाफले तारतम्यकथनम्	४०
जीविकार्थे अशुभफलकथनम्	४०
मृत्युकथनम्	४०
धननाशकरयोगाः	४१
पापफलं मिश्रफलं शुभफलञ्च	४१
तृतीये पापस्थितिफलम्	४१
पुनश्च फलम्	४२
चतुर्थभावस्याशुभफलम्	४२
पञ्चमभावस्याशुभफलम्	४२
षष्ठेशदशान्तर्दशाफलम्	४२
सप्तमभावदशाफलम्	४२
अष्टमेशदशाफलम्	४३
नवमेशदशाफलकथनम्	४३
दशमेशफलम्	४३
लाभेशदशाफलम्	४३
व्ययेशदायफलम्	४३
विशेषर्फलम्	४४
आधानलग्नाज्जन्मलग्ननिर्णयम्	४४
आधानलग्नात् पुंस्त्रीज्ञानम्	४५
पिण्डाकृतिजन्मकथनम्	४५
यमलजन्मकथनम्	४५
पादजात-नालवेष्टितजन्मकथनम्	४५
नालवेष्टितजन्मकथनम्	४६
अन्यनालवेष्टितयोगाः	४६
पशुजन्मकथनम्	४७
पुनश्च वियोनिजन्मकथनम्	४७
पशुजन्मकथनम्	४७
नपुंसकजन्मकथनम्	४८
षट्क्लीबयोगाः	४८
संस्काररहितबालकजन्म	४८
पुनः संस्काररहितजन्मकथनम्	४९
सूतिकागृहद्वारादिकथनम्	४९
उपसूतिकाकथनम्	४९

विषयाः **पृष्ठाङ्काः**
पुनरपि विशेषेण उपसूतिकाजातिकथनम् ५०
दीपस्थितिकथनम् ५०
तनुभावविचारः ५१
देहसौख्यकथनम् ५१
सत्कीर्तियोगः ५२
समृद्धिकथनम् ५२
सौख्यादिहानिकथनम् ५२
चौरभयकथनम् ५३
पुनश्चौरादिभयकथनं बृहद्वीजकथनञ्च ५३
पुनश्च चौरादिभयकथनम् ५४
शिरोव्रणयोगाः ५४
लघुशीर्षनिर्बलशरीरकथनञ्च ५४
शरीरस्य स्थौल्यकथनम् ५५
अतिस्थौल्ययोगः पिशाचपीडाकथनञ्च ५५
विविधरोगादिकथनम् ५६
पिशाचादिभयभ्रमणमन्तयोगश्च ५६
विदेशे भाग्योदयकथनम् ५७
पुनरपि भाग्योदयकथनम् ५७
बालाद्यवस्थायां सुख-दुःखकथनम् ५८
बाल्ये यौवने च सुखकथनम् ५८
पुनरपि बाल्यावस्थायां सुखपूर्वकं यौवने सुखयोगम् ५९
अन्त्यावस्थायां सुखयोगकथनम् ५९
आदौ दुःखमन्ते सुखकथनम् ५९
बाल्यकाले सुखयोगकथनम् ५९
सत्कीर्तियोगः ६०
असत्कीर्तियोगः ६०
पुनश्च सत्कीर्तियोगकथनम् ६१
पूर्वार्धे सौख्यमपरार्धे दुःखयोगकथनम् ६१
सत्कीर्तिसहदीर्घायुयोगः ६१
पुनश्च शुभफलप्रदयोगः ६१

विषयाः **पृष्ठाङ्काः**
शतायुयोगः ६२
सन्दिग्धायुकथनम् ६२
अमितायुयोगः ६२
रमतेरामयोगः ६३
सलक्ष्मीयुगान्तमायुर्योगः ६३
युगपुरुषयोगः (मुनियोगः) ६३
विंशतिवर्षमितवयोपरन्ते सुखप्राप्तियोगः ६४
त्रिंशद्वर्षोपरान्तसुखयोगः ६४
षोडशाब्दात्परं सुखप्राप्तियोगः ६४
अध्यायोपसंहारः ६४

तृतीयोऽध्यायः ६५-१०५
(धनभावफलविचाराध्यायः)

द्वितीयस्थानाद्विचारणीयविषयाः ६५
अस्थिहानिनक्तान्ध्यकरयोगश्च ६५
अन्धकाणयोगश्च ६५
अन्योऽपि नेत्रनाशकथनम् ६५
निमीलिताक्षयोगः ६६
विशालदृष्टिकथनम् ६६
पुनश्च नेत्ररोगयोगाः ६६
पित्तप्रकोपेन नेत्ररुक्कथनम् ६६
लग्नेतरभावात्सम्बन्धीनां रोगविचारकथनम् ६७
कारकैरपि नेत्ररोगविचाराणा ६७
कुटुम्बसंरक्षणादिकथनम् ६७
परोपकारियोगः ६७
असहाययोगः ६८
सुखहीनयोगः ६९
राजयोगः ६९
पुनः राजयोगः ७०
दुर्घटजीविकायोगः ७०
विंशतिजनानां पालकयोगः ७०
शतत्रयजनानां नायकयोगः ७०
सहस्रजनानां पालकयोगः ७०

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
असङ्ख्यजनपालकयोगः	७१
सुमुखयोगः	७१
प्रफुल्लवदनयोगः	७१
दुर्मुखयोगः	७१
क्रुद्धमुखयोगः	७२
वाग्मीयोगः	७२
मूकयोगः	७२
वाचालयोगः	७३
पटुतरवाग्मीयोगः	७३
वाज्मीयोगः	७३
सभाजडयोगः	७३
उत्तमज्योतिर्विदयोगः	७४
गणितज्ञयोगः	७४
पुनः गणितज्ञयोगः	७४
पुनरपि गणितज्ञयोगः	७४
युक्तिपरायणयोगः	७५
न्यायशास्त्रज्ञयोगः	७५
वैयाकरणयोगः	७५
वेदान्तज्ञयोगः	७५
षट्शास्त्रीयोगः	७६
विप्रलम्भी योगः	७६
परिहासकरयोगः	७६
वेदशास्त्रविद्यायोगः	७६
पुनरपि वेदवेदान्तज्ञयोगः	७७
बहुत्वे धनलाभयोगः	७७
पुनश्च बहुत्वेन धनलाभयोगः	७७
बाल्यकाले धनलाभयोगः	७७
पुनर्बाल्ये धनाप्तियोगः	७८
बहुनिध्यादियोगः	७८
पराक्रमेण धनलाभयोगाः	७८
मध्यावस्थायां धनलाभयोगः	७९
वृद्धावस्थायां धनलाभयोगः	७९
भातृतो धनप्राप्तियोगः	७९
पुनश्च भ्रातृतो धनाप्तियोगः	७९

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
बहुप्रकारेण धनागमः	७९
स्वबलेन धनाप्तियोगः	८०
बान्धवाद्धनाप्तियोगम्	८०
पुत्राद्धनाप्तियोगाः शत्रुतोऽपि	८०
शत्रोः सकाशात्कलत्राच्च धनाप्तिकथनम्	८४
पितृतः गुरोः सकाशाच्च धनाप्तिकथनम्	८४
लाभेशयोगाद्धनाप्तिकथनम्	८५
पापदृग्योगाद्धननाशकथनम्	८५
राजदण्डाद्धनक्षययोगाः	८५
पुनश्च राजकोपाद्धननाशयोगाः	८६
चौराग्निभूपैः धननाशयोगाः	८७
लोकापवादाद्धननाशयोगः	८७
निर्धनयोगाः	८८
अल्पधनयोगाः	८८
धनिकयोगः	८९
सर्वनाशयोगः	८९
धनवानयोगाः	८९
तत्कालधनयोगौ	८९
नामतो धनिकयोगः	९०
सहस्रनिष्कभर्तायोगः	९०
सहस्रद्वयनिष्कभर्त्तायोगः	९१
सहस्रत्रयनिष्कभर्त्तायोगः	९१
अष्टसाहस्रयुग्योगः	९१
अयुतनिष्कप्राप्तियोगः	९१
अयुताधिकधनप्राप्तियोगः	९२
लक्षाधीशयोगः	९२
द्विलक्षपतियोगः	९२
त्रिलक्षपतियोगः	९२
त्रिलक्षाधिकधनयोगः	९२
प्रयुतधनाधीशयोगः	९३
कोटीश्वरयोगः	९३
ऋणप्रदातायोगाः	९३

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ऋणग्रस्तयोगाः	९४
दन्तरोगयोगाः	९४
उन्मादरोगयोगः	९५
तालुरोगोत्पत्तियोगः	९६
नेत्रोत्पाटनयोगः	९६
नयनप्रमादयोगः	९६
पित्रादिकानां नेत्ररोगकथनविधिः	९७
कर्णविच्छेदनयोगाः	९७
रौप्यपात्रयोगः	९७
स्वर्णपात्रयोगाः	९७
भोजनकाले बहुपात्रयोगाः	९८
लौहपात्रयोगाः	९८
कांस्यपात्रयोगः	९८
अदृढपात्रयोगः	९९
धातुद्वयपात्रकथनम्	९९
बह्वाशनस्य योगायोगकथनम्	९९
सुखभोजनयोगाः	९९
हितभुग्योगः	१००
अन्नदातायोगाः	१०१
अल्पाशी-रुचिराशीयोगौ	१०२
परान्नभक्षणभोजनदूषणयोगश्च	१०२
श्राद्धभुग्योगम्	१०२
कुभोक्तायोगम्	१०२
शीघ्रभुग्योगम्	१०२
चिरभुग्योगम्	१०२
विस्फोटकादियोगः	१०२
त्वाच्यरुधिररोगयोगः	१०३
पुनश्च त्वाच्यरक्तपित्तरोगयोगः	१०३
शुनकभीतियोगः	१०३
सर्पभयं कदन्नभुग्योगश्च	१०४
वाक्चलनम्	१०४
पुनश्च वाक्चलनयोगः	१०४
विषप्रयोगाद्वञ्चनयोगम्	१०४
मित्रादीनां कृते फलकथनम्	१०५

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अध्यायस्योपसंहारः	१०५
चतुर्थोध्यायः	१०६-१४७
(तृतीयचतुर्थभावफलविचाराध्यायः)	
तृतीयभावाद्विचारणीयविषयाः	१०६
सोदरविनाशयोगः	१०६
सहोदरक्षयश्चिन्तनम्	१०८
भ्रातृलाभयोगाः	१०८
अन्यभ्रातृवृद्धियोगाः	१०८
सहोदराणां बाहुल्ययोगः	१०९
अनुजसम्भवयोगाः	१०९
पुनः भ्रातृवर्द्धनयोगः	१०९
सहोदरैः सह मित्रताशत्रुतायोगाः	१०९
सहजानां विषये लिङ्गनिर्धारणम्	११०
सहोदराणां संख्यानिर्धारणम्	११०
पराक्रमादिफलकथनम्	१११
कलहप्रवीणयोगम्	१११
युद्धे पराजययोगम्	१११
युद्धे प्रवीणाऽप्रवीणयोगम्	११२
चतुर्थेशेन ग्रहयुतिफलम्	११२
विविधभीतियोगान् प्रमादयोगाञ्च	११४
सुखभुक्तियोगः	११५
विविधरोगाणां योगाः	११५
कर्णाभूषणकथनम्	११५
सदसत्कर्णरुचिम्	११६
चतुर्थभावविचारः	११७
बन्धुभावाद्विचारणीयविषयाः	११७
सामान्यगृहलाभयोगः	११७
चित्रविचित्रगृहप्राप्तियोगः	११८
हर्म्यप्राकारमण्डितगृहयोगः	११८
सौधमण्डितगृहयोगः	११८
दैविकगृहयोगः	११८
विचित्रसौधप्राकारगृहमण्डितयोगः	११८
गृहनाशयोगः	११९

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
बन्धुपूज्ययोगः	११९
बन्धुश्रेष्ठयोगः	११९
बन्धूपकर्त्तायोगाः	१२०
बन्धुभिः त्यक्तयोगः	१२०
बन्धुवर्गे निन्दितयोगः	१२०
बन्धूनां भयकर्मकृद्योगः	१२०
बन्धूपभोगी योगः	१२१
पुनश्च बन्धूपकर्तायोगः	१२१
बन्धुद्वेषीयोगः	१२१
पुनश्च बन्धुपूज्ययोगः	१२१
बहुस्थाने गृहयोगः	१२१
स्थिरनिवासयोगः	१२२
नष्टगेहानां संख्या	१२२
समीचीनगेहानां संख्या	१२२
बहुक्षेत्रयोगाः	१२३
भ्रातृक्षेत्रयोगः	१२३
पुनश्च भ्रातृधनादियोगः	१२४
स्वबलेन क्षेत्राप्तियोगः	१२४
कलत्रात्क्षेत्रयोगः	१२४
शत्रुतो क्षेत्राप्तियोगः	१२४
पुनः बहुक्षेत्रयोगः	१२४
बह्वर्थरूपं गृहयोगः	१२५
कृषिनाशयोगः	१२५
पुनश्च कृषिनाशयोगः	१२५
पुनरपि कृषिनाशकथनम्	१२६
भूमिविक्रययोगः	१२६
आज्ञाक्षयार्द्धा	१२६
मुख्यत्वयोग	१२६
पुनश्च मुख्य	१२७
पुनरपि मुख्यत्वम्	१२७
सुखयोगः	१२७
दुःखयोगाः	१२७
पापकर्मायोगः	१२८
पुनश्च पापकर्मायोगः	१२८

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
भुक्तिभागी योगः	१२८
पुण्यभागी योगः	१२९
कूपतटाम्बुराशौ पतनयोगः	१२९
जलराशिमग्नयोगः	१२९
तडागादिषु पतनयोगः	१२९
पुनरपि कूपादिषु पतनयोगः	१२९
शिलाप्रहारयोगः	१३०
पुनश्च शिलापीडनयोगः	१३०
अगम्यागमनयोगानां कथनम्	१३०
मातृचरित्रसूचकयोगानां कथनम्	१३१
परजातादियोगाः	१३२
जनन्याः दीर्घायुष्ययोगाः	१३४
मातृनाशकयोगाः	१३४
मातुः जीवनावधिज्ञानम्	१३४
हृत्कापट्ययोगः	१३६
मिश्रितयोगाः	१३८
मातृस्नेहकथनम्	१३८
मातृस्नेहन्यूनताकथनम्	१३८
वाहनयोगाः	१३९
राजकीयसुविधाप्राप्तियोगाः	१४०
सिंहासनप्राप्तियोगाः	१४१
आत्मोन्नतियोगाः	१४१
पुनश्च नानावाहनप्राप्तियोगाः	१४२
पुनश्च वाहनयोगाः	१४३
पुनरपि वाहनाधीशयोगाः	१४५
पुनश्च शंखवादित्रयुक्तवाहनयोगाः	१४६
पुनरपि वाहनादिसौख्यम्	१४६
अध्यायोपसंहारः	१४७

पञ्चमोऽध्यायः १४८-१८१

(पञ्चम-षष्ठभावफलविचाराध्यायः)

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पञ्चमभावाद्विचारणीयविषयाः	१४८
विविधफलकथनम्	१४९
पुत्रप्राप्तियोगाः	१४९

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पुनश्च पुत्रप्राप्तियोगाः	१५०
पुनरपि पुत्रप्राप्तियोगानां कथनम्	१५०
पुत्रहानिकरयोगाः	१५१
पुनश्च पुत्रपीडाकथनम्	१५१
पुत्रप्राप्तिकरयोगाः	१५१
वंशक्षयादियोगानां कथनम्	१५४
पुत्रसुखहानिकराः योगाः	१५५
बुद्धिप्रदान् योगाः	१५५
पुनरपि बुद्धिप्रदान् योगाः	१५८
धारणादियोगाः	१५८
बुद्धिनाशकयोगाः	१५९
जड़बुद्धियोगः	१५९
परामर्शदातायोगः	१६१
त्रिकालज्ञयोगाः	१६१
सुपुत्रयोगाः	१६१
कन्यादियोगाः	१६२
पुत्रादिसंख्याकथनम्	१६२
पितापुत्रसौहार्द्रम्	१६२
पितृद्वेषीयोगः	१६३
आज्ञादायकयोगः	१६३
अन्नदानकर्त्तायोगः	१६३
उदरादिरोगः	१६४
षष्ठभावविचारः	१६४
उपदंशकथनम्	१६४
व्रणादिकथनम्	१६४
भावानुसारेणाङ्गविभागः	१६५
अङ्गविभागचक्रम्	१६५
अपानरोगकथनम्	१६५
लिङ्गादिरोगकथनम्	१६७
शिरश्छेदनातिह्रस्वकाययोगश्च	१६९
दुर्मरणयोगाः	१६९
युद्धे मरणयोगाः	१७०
पैत्तिकव्रणयोगः	१७२
वातविकारस्य रक्तपित्तस्य च योगः	१७२
वातकफविद्रधिरोगश्च	१७२
गुल्मरोगो भूतादिबाधाश्च	१७२
विविधरोगानां योगाः	१७३
शत्रुपीडाकरयोगाः	१७६
शत्रुनाशनयोगाः	१७६
ज्ञातिपीडा	१७७
ज्ञातिसौख्ययोगः	१७८
ज्ञातिबाहुल्यम्	१७८
ज्ञातिक्षययोगः	१७८
ज्ञात्युत्कर्षम्	१७८
चौराग्निभययोगः	१७८
ज्ञात्युपकारकयोगः	१७८
उपदंशप्रिययोगः	१७९
मधुरादिप्रिययोगाः	१७९
अम्लप्रिययोगाः	१७९
विप्रलम्भयोगाः	१८०
अध्यायोपसंहारः	१८१
षष्ठोऽध्यायः	१८२-२०७

(सप्तमभावफलविचाराध्यायः)

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
सप्तमभावाद्विचारणीयान्विषयाः	१८२
सप्तमस्थग्रहाणां फलम्	१८३
पुनश्च परदाररतयोगः	१८४
अनपत्ययोग-जारपुत्रयोगाँश्च	१८४
बहुदारयुतेऽप्यपुत्रयोगः	१८४
पुनश्च परस्त्रीरतयोगाः	१८४
भार्यामृतिकथनम्	१८५
स्त्रीसंख्याकथनम्	१८५
बहुभार्यायोगः	१८५
द्विभार्यायोगः	१८६
स्त्रीमरणयोगः	१८६
विवाहद्वययोगः	१८६
पुनश्च विवाहद्वययोगः	१८६
विवाहस्वरूपनिरूपणम्	१८६

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
कलत्रान्तरयोगाः	१८६
त्रिभार्यायोगाः	१८७
पुनश्च कलत्रान्तरयोगाः	१८७
कलत्रहायोगः	१८७
पुनश्च बहुभार्यायोगः	१८८
पुनरपि बहुभार्यायोगाः	१८८
शतस्त्रीयोगः	१८८
द्विशतस्त्रीयोगः	१८९
शतत्रयस्त्रीयोगः	१८९
दशस्त्रीयोगः	१८९
कुस्त्रीकयोगः	१८९
पुनश्च कुस्त्रीयुतो योगः	१९०
सत्कलत्रयोगाः	१९०
पतिव्रतायोगाः	१९१
पापपरायणस्त्रीयोगः	१९१
पतिभक्तियुक्तायोगः	१९१
कठिनापराधायोगः	१९१
चरित्रवतीयोगः	१९२
कर्कशायोगः	१९२
क्रूराऽपि पतिभक्तायोगः	१९२
पतिघ्नी योगः	१९२
धर्मशीलायोगः	१९३
वाचालिकायोगः	१९३
जरातिदुष्टायोगः	१९४
ब्रह्मवादिनीयोगः	१९४
कुशीलायोगः	१९४
बाल्यावस्थायां विवाहयोगः	१९४
विवाहोपरान्तभाग्यहानियोगः	१९५
भाग्यनाशोपरान्ते पुनः भाग्यप्राप्तियोगः	१९६
विवाहोपरान्ते नष्टभाग्यस्य बहुदिनोपरान्ते पुनराप्तियोगाः	१९६
हीनजातिपत्नीप्राप्तियोगः	१९७
उत्कृष्टजातिकलत्रलाभयोगाः	१९७
समजातियोगः पतिभक्तायोगश्च	१९७
श्वशुरालये मित्रामित्रम्	१९८
पत्नीवर्णकथनम्	१९८
सप्तमादिषु दृष्टियुतिफलम्	१९८
पुत्रादिकथनम्	१९८
सप्तमस्थग्रहानुसारेण स्त्रीसङ्गम्	१९९
वाहनादिकथनम्	२००
चतुष्पादमैथुनयोगाः	२०१
पुनश्च पशुव-मैथुनयोगः	२०१
भगचुम्बनयोगाः	२०१
स्त्रीभगविचारः	२०३
सूपदध्याज्यप्राप्तियोगाः	२०५
घृतसूपादिरहितभोजनयोगः	२०६
क्षीरपानादियोगः	२०६
गुडक्षीरादिपानभाग्योगः	२०६
मूत्रकृच्छ्रयोगः	२०६
अध्यायोपसंहारः	२०७

सप्तमोऽध्यायः २०८-२३१

(आयुर्धर्मभावफलविचाराध्यायः)

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अष्टमभावाद्विचारणीयान् विषयाः	२०८
अल्पायुयोगः	२०८
दीर्घायुयोगाः	२०८
पूर्णायुयोगाः	२०९
पुनश्च दीर्घायुयोगाः	२१०
पुनश्च पूर्णायुयोगः	२१०
पुनश्चाल्पायुयोगानां कथनम्	२१०
त्रिधाऽयुर्योगकथनपूर्वकमल्पायुयोगः	२११
दीर्घायुमध्यमायुकथनम्	२११
मृत्युदायकविंशोत्तरीदशाकालकथनम्	२१२
शस्त्रेण मरणयोगद्वयम्	२१३
मृत्युकारणकथनम्	२१३
पुनश्च मृत्युहेतून्	२१४

विषया:	पृष्ठाङ्का:
मातासहपितृमरणयोग:	२१४
सापस्मारपिशाचपीडायोग:	२१४
चातुर्थिकज्वरपीडायोग:	२१५
राजपीड़ा पितृमारणयोगश्च	२१५
केचिदरिष्टयोगा:	२१५
पुत्रमृत्युयोग:	२१६
नेत्रनाशयोगा:	२१७
देहविनाशयोग: पितृमातृनिधनयोगश्च	२१७
मातृदुग्धाभावयोग: पुत्रसुखहानियोगश्च	२१७
मिश्रितयोगा:	२१७
अन्यथायोगे मातृमृत्युकथनम्	२१८
मृत्युसमये पिता दूरे समीपे वा	२१८
मातापित्रो: विकालदहनयोग:	२१८
मातृसङ्कटयोग:	२१९
गुह्यरोगयोग:	२१९
सुखान्नयोग:	२१९
पराभवयोग:	२१९
अपराभवयोग:	२१९
दूरदेशे मरणयोग:	२१९
नवमभावविचार:	२२०
नवमभावाद्विचारणीयविषया:	२२०
गुरुदारगामीयोग:	२२१
धर्मशीलयोगा:	२२१
क्रूरकर्मायोगा:	२२२
पितृसौख्ययोगा:	२२३
पितृदु:खयोगा:	२२३
पितृवशानुगयोग:	२२४
पितृकर्मसमापनयोग:	२२४
पितृतुल्यगुणान्वितयोग: पितृधनाश्रितयोगश्च	२२४
मिश्रितयोगा:	२२४
श्रेष्ठजनयोग:	२२५

विषया:	पृष्ठाङ्का:
बहुभाग्ययोगा:	२२६
भ्रातुर्धनाद्भाग्याप्तियोग:	२२६
पुत्राद्भाग्यवृद्धियोग:	२२६
ज्ञातिभिरैश्वर्यप्राप्तियोग:	२२६
कलत्राद् शत्रुतो भाग्यवृद्धियोगा:	२२७
भाग्यहीनयोगा:	२२७
भाग्यस्य पुनराप्तियोग:	२२७
पुनश्च भाग्यनाशयोग:	२२७
भाग्यपुनराप्तियोग:	२२८
ब्रह्मनिष्ठयोगा:	२२८
दानशीलयोगा:	२२९
दानशीलयोगेषु विशेषम्	२२९
पुनश्च दानयोगौ	२३०
प्रतिग्रहीता (प्रतिग्रहकर्त्ता) योगा:	२३०
अध्यायस्योपसंहार:	२३१

अष्टमोऽध्याय: २३२-२५१

(दशमभावविचाराध्याय:)

दशमभावाद्विचारणीयविषया:	२३२
कर्मविकलतायोग:	२३२
यज्ञकर्त्तायोगा:	२३२
गङ्गास्नानादियोगा:	२३३
जीर्णोद्धारकृद्योगा:	२३३
यज्ञकर्त्तायोगा:	२३४
पुनश्च क्रूराज्ञाकरयोग:	२३५
सत्कीर्तियोगा:	२३६
अपकीर्तियोगा:	२३६
दृढव्रतयोगा:	२३७
इङ्गितज्ञयोग:	२३७
मानहीनयोग:	२३७
सञ्चारी-मृगयात्री योगश्च	२३७
दास-दासीबाहुल्ययोगा:	२३८
भुक्तिविज्ञारजानुदौर्बल्यञ्च	२३८
प्रव्रज्यायोगा:	२३८

विषया:	पृष्ठाङ्का:
लाभभावविचार:	२४०
एकादशभावाद्विचारणीयविषया:	२४०
धनलाभयोगा:	२४१
धनहानिकरयोग: लाभयोगश्च	२४१
कर्णसौख्ययोगा: कर्णहानिश्च	२४२
पुनश्च हानिलाभयोगौ	२४३
व्ययभावविचार:	२४३
व्ययभावाद्विचारणीयविषया:	२४३
पापमूलाद्धनव्यययोगा:	२४४
धर्ममूलाद्धनव्यययोगा:	२४४
पुनश्च पापमूलाद्धनव्ययम्	२४४
पुनश्च धर्ममूलाद्धनव्यययोग:	२४५
शत्रुमूलाद्धनव्यययोग:	२४५
स्त्रीमूलाद्धनव्यययोग:	२४५
भ्रातृमूलाद्धनक्षययोग:	२४५
पुत्रमूलाद्धनव्यययोग:	२४५
मातृमूलाद्धनव्यययोग:	२४६
देहवैकल्ययोग:	२४६
नरकपातयोगा:	२४६
देवलोकादिज्ञानम्	२४७
उच्चनीचादिफलम्	२४७
स्वर्गप्राप्तियोगा:	२४७
नेत्रस्य शुभाऽशुभकथनम्	२४८
वाहनविचार:	२४८
शयनसुखविचार:	२४८
देवोपासनाकथनम्	२४९
स्वार्थे वा परार्थे उपासनाम्	२५१
सौम्यक्रूरोपासना वेत्याह	२५१
उपास्यदेवानां संख्यामैत्र्यादिकथनम्	२५१
अध्यायोपसंहार:	२५१
नवमोऽध्याय: २५२-२८४ (राजयोगाध्याय:)	
राजाधिराजयोग:	२५२
नृपयोगा:	२५२
राजतुल्ययोगा:	२५८
नीचभङ्गराजयोग:	२६०
भूपतितुल्यभाग्ययोग:	२६१
पुनश्च नीचभङ्गराजयोग:	२६१
ऐश्वर्यप्रदयोगा:	२६१
पुनश्च नृपतुल्ययोगा:	२६२
नृपमानसमन्वितयोग:	२६३
राजराजयोग:	२६३
नृपतियोगा:	२६३
नृपश्रेष्ठयोगा:	२६४
अन्यदेशे राज्योग:	२६४
राजयोगेषु गुरुचन्द्रयोरुत्तमांशस्य महत्त्वम्	२६६
नृपतुल्ययोग:	२६६
धरापतियोग:	२६६
पुनश्च नृपयोग:	२६६
नृपसमयोग:	२६७
पुनश्च राजयोग:	२६७
जातकभङ्गयोगा:	२६७
चाण्डालयोग:	२६७
विप्रसमानयोग:	२६८
लुब्धयोग:	२६८
उक्तयोगानामपवाद:	२६८
विविधरोगाणां योगा:	२६९
उन्मादयोगा:	२७०
परान्नभुग्दुष्कर्मकर्तायोगश्च	२७१
कुलनाशकादियोगा:	२७१
अभिशप्तादियोगा:	२७२
सत्कर्महीनयोगा:	२७३
पुनश्च कुलघ्नादियोग:	२७३
हेयवृत्तियोग:	२७५
भाग्यहीनयोगा:	२७५
परमनीचस्थितरवे: फलम्	२७६
शुक्रेण राजयोगभङ्ग:	२७६

विषयाः **पृष्ठाङ्काः**
उल्कादिभिः राजयोगभङ्गः २७६
प्रेष्ययोगः २७७
बन्धनयोगः २७७
नेत्ररोगीयोगाः २७८
विकलाङ्गपतितयोगौ २७८
कुष्ठादिचर्मरोगयोगाः २७८
गुल्मदन्तकण्ठरोगी योगः २७८
क्रोधोन्मत्तयोगाः २७९
हृच्छूलभाग्यहीनयोगौ २७९
ज्ञानधनादिहीनः कलहप्रिययोगश्च: २८०
संस्कारहानियोगः २८०
संवाहनाद्भीतियोगः २८०
देहसौख्यं जले मृत्युयोगश्च २८०
मीने सूर्यचन्द्रयुतिफलम् २८०
जीवादिघातकयोगाः २८१
गलान्तमृत्युनेत्रहानियोगश्च २८१
जातकगृहे विविधजन्तूनां भयम् २८१
सप्तमभावात् स्त्रीसङ्गम् २८२
सङ्गमस्थानानि २८३
प्रकीर्णयोगाः २८३
गृहस्थितिकथनम् २८३
धनोपयोगः २८४
अध्यायोपसंहारः २८४

दशमोऽध्यायः २८५-३१२
(अरिष्टाध्यायः)

योगप्रशंसामाह २८५
त्रिविधा आयुर्योगाः २८५
आद्वादशाब्दादायुनिर्णयोऽसम्भवम् २८५
जन्मलग्नेशसूर्ययोः सम्बन्धादायुकथनम् २८९
मृत्युनक्षत्रम् २९०
जैमिनिमतेन आयुर्योगकथनम् २९०
आयुस्सम्बन्धिनिर्णयः २९२
तारादशासु विशेषः २९३

विषयाः **पृष्ठाङ्काः**
राशिसन्धिषु जन्मफलम् २९३
गण्डान्ते जन्मफलम् २९४
एकवर्षायुयोगः २९४
दशाहे मृतियोगः २९४
सद्योमृतियोगः २९४
मृत्प्राययोगः २९४
षण्मासायुयोगः २९६
दारुणवेलासु जन्मफलम् २९६
पुनश्च शीघ्रमृतियोगाः २९७
बाल्ये मृत्युयोगाः २९७
मातृसहितशिशुमरणयोगः २९८
शस्त्रपातेन मृत्युयोगः २९८
पुनरपि बालमृत्युयोगाः ३००
चन्द्रस्य द्वादशराशीषु मृत्युभागानां कथनम् ३०१
धातुदोषकथनम् ३०२
मासद्वये मृत्युयोगौ ३०२
अतिप्रयोगेन मृत्युः ३०३
दशमस्थपापदृष्टसूर्यफलम् ३०३
सप्तपञ्चैकादशवर्षेषु मृत्युयोगाः ३०३
सप्तचतुस्त्रिषु वर्षेषु मृत्युयोगाः ३०४
नववर्षे मृत्युयोगः ३०५
पञ्चमवर्षे मृत्युयोगः ३०५
द्वादशे वर्षे मृत्युयोगः ३०५
सप्तदशवर्षे मृत्युयोगः ३०५
कतिपयदिने मृत्युयोगः ३०६
द्वादशवर्षे मृत्युयोगः ३०६
मृत्युयोगः ३०६
नवमवर्षे मरणयोगकथनम् ३०६
चतुर्थमासे मृत्युयोगकथनम् ३०६
द्वादशवर्षे मृत्युयोगः ३०७
षोडशवर्षे मरणयोगः ३०७
अष्टादशवर्षे मरणयोगः ३०७
विंशतिवर्षे मृत्युयोगः ३०७

विषया:	पृष्ठाङ्का:
द्वाविंशे मरणयोगौ	३०७
पञ्चविंशे मरणयोग:	३०८
सप्तविंशे मरणयोग:	३०८
एकोनत्रिंशद्वर्षे मृत्युयोग:	३०८
अष्टाविंशे मृतियोग:	३०९
त्रिंशद्वर्षे मृतियोग:	३०९
अष्टाविंशे मृतियोग:	३०९
त्रिंशद्वर्षे मृतियोग:	३०९
पुनश्च त्रिंशद्वर्षे मृतियोग:	३०९
पुनश्च द्वाविंशे मरणयोग:	३१०
द्वात्रिंशे मरणयोग:	३१०
सप्तविंशे मरणयोग:	३१०
त्रिंशद्वर्षायुयोग:	३१०
चतुर्विंशतिवर्षायुर्योग:	३११
पुनश्च त्रिंशद्वर्षायुर्योग:	३११
षट्त्रिंशद्वर्षायुर्योग:	३११
पुनश्चषट्त्रिंशद्वर्षायुर्योग:	३११
अध्यायोपसंहार:	३१२

एकादशोऽध्याय: ३१३-३१९

(अरिष्टभङ्गाध्याय:)

लग्नस्थगुरुफलम्	३१३
दीर्घायुयोगकथनम्	३१३
प्रयत्नेनारिष्टभङ्गयोग:	३१३
चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोग:	३१३
अरिष्टभङ्गयोग:	३१३
चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोग:	३१४
अरिष्टभङ्गयोग:	३१४
चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोग:	३१५
अरिष्टभङ्गयोग:	३१५
पुनरपि चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोग:	३१६
अध्यायोपसंहार:	३१९

द्वादशोऽध्याय: ३२०-३३८

(मध्यमायुर्दीर्घायुर्योगविचाराध्याय:)

विषया:	पृष्ठाङ्का:
मध्यमायुकालविचार:	३२०
त्रयस्त्रिंशद्वर्षे आयुर्योग:	३२०
मध्यमायुर्योगा:	३२०
षट्त्रिंशद्वर्षे आयुर्योग:	३२१
चतुश्चत्वारिंशतवर्षेमरणयोग:	३२१
पञ्चचत्वारिंशद्वर्षे निधनयोग:	३२१
अष्टचत्वारिंशद्वर्षे निधनयोग:	३२२
द्विपञ्चाशद्वर्षे मरणयोग:	३२२
मध्यमायुयोगा:	३२२
षष्टिवर्षे निधनयोगा:	३२२
षट्षष्टिवर्षे मृत्युयोग:	३२३
अष्टषष्टिवर्षे मृत्युयोग:	३२३
पुनश्च षट्षष्टिवर्षायुर्योग:	३२४
पञ्चषष्टिवर्षायुयोग:	३२४
सप्ततिवत्सरायुयोग:	३२४
दीर्घायुर्योगा:	३२५
सप्ततिवर्षाधिकायुर्योग:	३२५
अशीत्यायुर्योग:	३२५
चत्वारिंशद्वर्षोपरान्तसुखयोग:	३२५
पुरुषस्यसभाग्यदीर्घायुर्योग:	३२६
स्त्रीणां सौभाग्यदीर्घायुर्योगश्च	३२६
निर्भाग्यानां दीर्घायुकथनम्	३२६
भाग्यसहितदीर्घायुर्योगानां विरलता	३२६
अशीत्यायुर्योग:	३२६
षडशीत्यायुर्योग:	३२७
दीर्घायुर्योग:	३२७
जितेन्द्रिययोगा:	३२७
शताधिक आयुर्योगा:	३३०
परमायुर्योगा:	३३०
पुनश्च परमायुर्योगा:	३३१

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पुनश्च पुण्यसहितपरमायुर्योगाः	३३१
अमितायुर्योगाः	३३२
पुनश्च अमितायुर्योगः	३३२
पुनरप्यमितायुर्योगाः	३३२
इन्द्रतुल्ययोगाः	३३३
देवतुल्ययोगाः	३३३
ब्रह्मपदप्राप्तियोगाः	३३५
पुनरप्यमितायुर्योगाः	३३६
मुनियोगाः	३३७
अध्यायोपसंहारः	३३८

त्रयोदशोऽध्यायः ३३९-३६३

(सूर्यचन्द्रदशाफलविचाराध्यायः)

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
दीप्ताद्यवस्थानम्	३३९
दीप्तग्रहदशाफलम्	३४०
स्वस्थदशाफलम्	३४०
मुदितदशाफलम्	३४०
शान्तग्रहदशाफलम्	३४०
हीनदशाफलम्	३४०
दुःखितग्रहस्य दशाफलम्	३४१
विकलदशाफलम्	३४१
खलदशाफलम्	३४१
कोपान्वितग्रहदशाफलम्	३४१
सूर्यदशाफलानि	३४२
परमोच्चगतसूर्यफलम्	३४२
उच्चस्थसूर्यदशाफम्	३४२
आरोहीसूर्यदशाफलम्	३४२
अवरोही सूर्यदशाफलम्	३४२
नीचस्थसूर्यदशाफलम्	३४३
परमनीचसूर्यदशाफलम्	३४३
मूलत्रिकोणस्थरविदशाफलम्	३४३
स्वक्षेत्री रविदशाफलम्	३४३
अधिशत्रुसूर्यदशाफलम्	३४३
शत्रुराशिस्थसूर्यदशाफलम्	३४४
मित्रराशिस्थसूर्यफलम्	३४४
अधिमित्रराशिगतसूर्यदशाफलम्	३४४
समराशिस्थसूर्यदशाफलम्	३४४
नीचयुतसूर्यदिशाफलम्	३४४
उच्चान्वितसूर्यदशाफलम्	३४५
पापयुक्तसूर्यदशाफलम्	३४५
शुभयुक्तसूर्यदशाफलम्	३४५
शुभदृष्टसूर्यदशाफलम्	३४५
पापदृष्टसूर्यदशाफलम्	३४५
केन्द्रस्थसूर्यदशाफलम्	३४६
त्रिकोणस्थसूर्यदशाफलम्	३४६
उच्चांशकगतसूर्यदशाफलम्	३४६
नीचनवांशगतसूर्य दिशाफलम्	३४६
सूर्यदशाकाले आदिमध्यान्तफलम्	३४६
षष्ठस्थसूर्यदशाफलम्	३४७
अष्टमभावगतसूर्यदशाफलम्	३४७
द्वादशस्थसूर्यदशाफलम्	३४७
द्वितीयस्थसूर्यदशाफलम्	३४७
तृतीयस्थसूर्यदशाफलम्	३४८
चतुर्थभावस्थसूर्यदशाफलम्	३४८
सप्तमस्थानगतसूर्यदशाफलम्	३४८
कर्मभावस्थसूर्यदशाफलम्	३४८
लाभस्थसूर्यदशाफलम्	३४८
अन्यफलम्	३४९
स्थानबलाधिकसूर्यदशाफलम्	३४९
स्थानबलहीनसूर्यदशाफलम्	३४९
दिग्बली सूर्यदशाफलम्	३४९
निसर्गबली सूर्यदशाफलम्	३५०
चेष्टाबली सूर्यदशाफलम्	३५०
दृग्बली सूर्यदशाफलम्	३५०
क्रूरादिषष्ट्यंशगतसूर्यदशाफलम्	३५०
मृद्वंशषष्ट्यंशगतसूर्यफलम्	३५१
पारावतांशयुतसूर्यदशाफलम्	३५१
दशाफले तारतम्यम्	३५१

विषयाः **पृष्ठाङ्काः**

सर्पादिद्रेष्काणगतसूर्यदशाफलम् ३५१
उच्चराशौ नीचानवांशे सूर्यदशाफलम् ३५१
उच्चनवांशे नीचराशौ च सूर्यदशाफलम् ३५२
चन्द्रदशाफलानि ३५२
परमोच्चचन्द्रदशाफलम् ३५२
उच्चस्थचन्द्रदशाफलम् ३५२
आरोही चन्द्रदशाफलम् ३५२
अवरोही चन्द्रदशाफलम् ३५३
नीचनवांशगतचन्द्रदशाफलम् ३५३
मूलत्रिकोणस्थचन्द्रदशाफलम् ३५३
स्वक्षेत्रगतचन्द्रफलम् ३५३
अधिशत्रुक्षेत्री चन्द्रदशाफलम् ३५४
शत्रुराशिगतचन्द्रदशाफलम् ३५४
मित्रक्षेत्री चन्द्रदशाफलम् ३५४
अधिमित्रराशिगतचन्द्रदशाफलम् ३५४
नीचराशिगतचन्द्रदशाफलम् ३५५
क्षीणचन्द्रदशाफलम् ३५५
पूर्णचन्द्रदशाफलम् ३५५
उच्चस्थग्रहयुक्तचन्द्रदशाफलम् ३५५
पापान्वितचन्द्रदशाफलम् ३५६
शुभग्रहयुक्तचन्द्रदशाफलम् ३५६
पापेक्षितचन्द्रदशाफलम् ३५६
शुभेक्षितचन्द्रफलम् ३५६
पुनश्च मूलत्रिकोणगतचन्द्रदशाफलम् ३५६
चतुर्थभावगतचन्द्रदशाफलम् ३५७
सप्तमभावस्थचन्द्रदशाफलम् ३५७
दशमस्थितचन्द्रदशाफलम् ३५७
नीचनवांशगतचन्द्रदशाफलम् ३५७
उच्चनवांशगतचन्द्रदशाफलम् ३५८
चन्द्रदशायां नानाविधफले तारतम्यकथनम् ३५८
षष्ठस्थचन्द्रदशाफलम् ३५८

विषयाः **पृष्ठाङ्काः**

अष्टमस्थचन्द्रदशाफलम् ३५८
द्वादशस्थचन्द्रदशाफलम् ३५८
धनस्थानगतचन्द्रदशाफलम् ३२९
तृतीयभावस्थचन्द्रफलम् ३५९
एकादशस्थचन्द्रदशाफलम् ३५९
अस्तङ्गतचन्द्रदशाफलम् ३५९
स्थानबली चन्द्रदशाफलम् ३६०
स्थानबलहीनचन्द्रदशाफलम् ३६०
दिग्बली चन्द्रदशाफलम् ३६०
नैसर्गिकबलयुक्तचन्द्रदशाफलम् ३६२
पुनश्च दिग्बली चन्द्रदशाफलम् ३६२
क्रूरादिषष्ट्यंशगतचन्द्रदशाफलम् ३६२
मृद्वंशषष्ट्यंशस्थितचन्द्रदशाफलम् ३६३
पारावतांशगतचन्द्रदशाफलम् ३६३
क्रूरद्रेष्काणस्थितचन्द्रदशाफलम् ३६३
चन्द्रदशाफलपद्धति ३६३

चतुर्दशोऽध्यायः ३६४-३८८
(भौमबुधदशाफलविचाराध्यायः)

परमोच्चभौमदशाफलम् ३६४
उच्चस्थभौमदशाफलम् ३६४
उच्चारोहितभौमदशाफलम् ३६४
अवरोही कुजदशाफलम् ३६४
नीचराशिगतभौमदशाफलम् ३६५
मूलत्रिकोणस्थितकुजदशाफलम् ३६५
स्वक्षेत्रीकुजदशाफलम् ३६५
अतिशत्रुराशिगतकुजदशाफलम् ३६५
शत्रुराशिगतमङ्गलदशाफलम् ३६५
मित्रराशिगतभौमदशाफलम् ३६६
अधिमित्रराशिगतभौमदशाफलम् ३६६
समराशिस्थभौमदशाफलम् ३६६
नीचसहितभौमफलम् ३६६
उच्चसहितभौमदशाफलम् ३६७
पापान्वितभौमदशाफलम् ३६७

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
शुभान्वितभौमदशाफलम्	३६७
शुभेक्षितकुजदशाफलम्	३६७
पापदृष्टभौमदशाफलम्	३६८
केन्द्रगतभौमदशाफलम्	३६८
चतुर्थराशिस्थितभौमदशाफलम्	३६८
सप्तमस्थितभौमदशाफलम्	३६८
दशमभावस्थभौमफलम्	३६९
सूर्यसहितभौमदशाफलम्	३६९
धनस्थभौमदशाफलम्	३६९
पुत्रस्थानगतभौमदशाविशेषफलम्	३७०
अष्टमभावस्थितभौमदशाफलम्	३७०
नवमस्थभौमफलम्	३७०
लाभस्थभौमदशाफलम्	३७१
व्ययगतभौमफलम्	३७१
उच्चनवांशगतभौमफलम्	३७१
नीचनवांशगतभौमदशाफलम्	३७२
भौमदशायां फले तारतम्यम्	३७२
पुनश्च भौमदशायां फले तारतम्यम्	३७३
स्थानबलयुक्तभौमदशाफलम्	३७३
स्थानबलहीनभौमदशाफलम्	३७४
दिग्बली भौमदशाफलम्	३७४
कालबली भौमदशाफलम्	३७४
निसर्गबली कुजदशाफलम्	३७४
निसर्गबलहीनकुजदशाफलम्	३७४
वक्री भौमदशाफलम्	३७५
पुनश्च दिगबलयुतकुजदशाफलम्	३७५
क्रूरषष्ट्यंशगतचन्द्रदशाफलम्	३७५
सौम्यषष्ट्यंशगतमङ्गलफलम्	३७५
क्रूरद्रेष्काणगतभौमदशाफलम्	३७६
उच्चराशिगतभौमदशाफलम्	३७६
नीचोच्चांशकस्थितभौमदशाफलम्	३७६
बुधदशाफलम्	३७६
उच्चस्थबुधदशाफलम्	३७७
आरोही बुधदशाफलम्	३७७
अवरोहिबुधदशाफलम्	३७७
नीचस्थबुधदशाफलम्	३७७
मूलत्रिकोणस्थबुधफलम्	३७८
स्वक्षेत्रगतबुधदशाफलम्	३७८
शत्रुक्षेत्री बुधफलम्	३७८
अधिशत्रुराशिगतबुधफलम्	३७८
मित्रक्षेत्री बुधदशाफलम्	३७९
अधिमित्रक्षेत्री बुधफलम्	३७९
समराशिगतबुधदशाफलम्	३७९
नीचग्रहसंयुक्तबुधदशाफलम्	३७९
उच्चस्थग्रहसंयुक्तबुधफलम्	३८०
पापान्वितबुधफलम्	३८०
शुभसंयुक्तबुधफलम्	३८०
शुभग्रहदृष्टबुधदशाफलम्	३८१
पापेक्षितबुधदशाफलम्	३८१
केन्द्रगतबुधदशाफलम्	३८१
लग्नगतबुधदशाफलम्	३८१
धनभावगतबुधदशाफलम्	३८२
तृतीयभावगतसौम्यदशाफलम्	३८२
सुखभावस्थबुधदशाफलम्	३८२
पञ्चमभावस्थबुधदशाफलम्	३८३
त्रिकभावगतबुधदशाफलम्	३८३
द्वादशभावगतबुधविशेषफलम्	३८३
कलत्रगे बुधदशाफलम्	३८४
नवमभावस्थबुधदशाफलम्	३८४
कर्मभावस्थितबुधदशाफलम्	३८४
लाभभावस्थबुधदशाफलम्	३८४
द्वादशस्थबुधदशाफलम्	३८५
उच्चनवांशस्थितबुधदशाफलम्	३८५
नीचांशगतबुधदशाफलम्	३८५
बुधदशाफलम्	३८५
सूर्ययुतबुधदशाफलम्	३८६
स्थानबलयुक्तसौम्यदशाफलम्	३८६
स्थानबलहीनबुधदशाफलम्	३८६

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
दिग्बलयुतसौम्यदशाफलम्	३८६
कालबली बुधदशाफलम्	३८६
निसर्गबली बुधदशाफलम्	३८७
वक्री चेष्टाबलयुक्तबुधदशाफलम्	३८७
दृग्बलयुक्तबुधदशाफलम्	३८७
क्रूरषष्ट्यंशगतबुधदशाफलम्	३८७
मृद्वंशस्थितबुधदशाफलम्	३८७
वैशेषिकांशस्थबुधदशाफलम्	३८८
क्रूरद्रेष्काणस्थितबुधदशाफलम्	३८८
उच्चराशिस्थबुधदशाफलम्	३८८
नीचराशिस्थ उच्चांशगतबुधदशाफलम्	३८८
पञ्चदशोऽध्यायः (गुर्वादिदशाफलविचाराध्यायः)	३८९-४१८
परमोच्चगतगुरुदशाफलम्	३८९
कर्कस्थितगुरुदशाफलम्	३८९
उच्चारोही गुरुदशाफलम्	३८९
उच्चारोही जीवदशाफलम्	३८९
उच्चावरोही जीवदशाफलम्	३९०
अतिनीचस्थगुरुदशाफलम्	३९०
मूलत्रिकोणगतगुरुदशाफलम्	३९०
स्वक्षेत्री जीवदशाफलम्	३९०
अतिशत्रुराशिस्थजीवदशाफलम्	३९०
शत्रुराशिस्थजीवदशाफलम्	३९१
अधिमित्रराशिगतगुरुदशाफलम्	३९१
मित्रराशिगतगुरुदशाफलम्	३९१
समराशिस्थितगुरुदशाफलम्	३९१
उच्चराशिस्थग्रहसंयुक्तजीवदशाफलम्	३९२
पापयुतजीवदशाफलम्	३९२
शुभग्रहयुक्तजीवदशाफलम्	३९२
पापेक्षितजीवदशाफलम्	३९२
शुभेक्षितजीवदशाफलम्	३९३

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
केन्द्रगतजीवदशाफलम्	३९३
लग्नस्थजीवदशाफलम्	३९३
चतुर्थभावस्थगुरुदशाफलम्	३९३
कलत्रभावस्थितगुरुदशाफलम्	३९३
दशमस्थजीवदशाफलम्	३९४
पञ्चमभावस्थगुरुदशाफलम्	३९४
त्रिकोणस्थजीवदशाफलम्	३९४
उच्चांशगतजीवदशाफलम्	३९४
नीचांशसंयुक्तगुरुदशाफलम्	३९५
अस्तङ्गतजीवदशाफलम्	३९५
गुरुदशाफलम्	३९५
द्वितीयभावगतजीवदशाफलम्	३९५
पुनरपि द्वितीयभावस्थजीवदशाफलम्	३९५
तृतीयभावगतजीवदशाफलम्	३९६
षष्ठभावगतजीवशाफलम्	३९६
अष्टमस्थजीवदशाफलम्	३९६
लाभस्थजीवदशाफलम्	३९६
व्ययस्थजीवदशाफलम्	३९६
स्थानबली जीवदशाफलम्	३९७
निसर्गबलयुतजीवदशाफलम्	३९७
वक्रजीवदशाफलम्	३९७
दृष्टिबलयुक्तजीवदशाफलम्	३९७
क्रूरषष्ट्यंशस्थजीवदशाफलम्	३९८
शुभषष्ट्यंशस्थजीवदशाफलम्	३९८
पारावतांशयुक्तजीवदशाफलम्	३९८
पाशद्रेष्काणयुक्तजीवदशाफलम्	३९८
उच्चराशिनीचांशकस्थजीवदशाफलम्	३९८
नीचराशि उच्चांशकस्थजीवदशाफलम्	३९९
शुक्रदशाफलम्	३९९
परमोच्चशुक्रदशाफलम्	३९९
उच्चराशिगतशुक्रदशाफलम्	३९९

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
उच्चारोही शुक्रदशाफलम्	३९९
नीचावरोही शुक्रदशाफलम्	४००
परमनीचगतशुक्रदशाफलम्	४००
मूलत्रिकोणराशिस्थशुक्रदशाफलम्	४००
वृषराशिगतशुक्रदशाफलम्	४००
अतिशत्रुराशिस्थभृगुदशाफलम्	४००
शत्रुराशिस्थशुक्रदशाफलम्	४०१
मित्रराशिगतशुक्रदशाफलम्	४०१
अतिमित्रराशिगतशुक्रदशाफलम्	४०१
समराशिगतशुक्रदशाफलम्	४०१
नीचगतग्रहयुक्तशुक्रफलम्	४०१
उच्चराशिगतग्रहयुक्तशुक्रदशाफलम्	४०२
पापयुक्तशुक्रदशाफलम्	४०२
शुभग्रहयुक्तशुक्रदशाफलम्	४०२
पापदृष्टशुक्रदशाफलम्	४०२
शुभग्रहदृष्टशुक्रदशाफलम्	४०३
केन्द्रगतशुक्रदशाफलम्	४०३
लग्नस्थशुक्रदशाफलम्	४०३
चतुर्थभावस्थशुक्रदशाफलम्	४०३
सप्तमस्थशुक्रदशाफलम्	४०३
दशमस्थशुक्रदशाफलम्	४०४
नवमस्थशुक्रदशाफलम्	४०४
पञ्चमस्थशुक्रदशाफलम्	४०४
धनभावस्थशुक्रदशाफलम्	४०४
तृतीयभावस्थशुक्रदशाफलम्	४०४
षष्ठभावस्थशुक्रदशाफलम्	४०५
अष्टमस्थशुक्रदशाफलम्	४०५
लाभस्थशुक्रदशाफलम्	४०५
व्ययस्थशुक्रदशाफलम्	४०५
जीवराशिगतशुक्रदशाफलम्	४०५
सूर्यराशिगतशुक्रदशाफलम्	४०६
स्थानबलयुक्तशुक्रदशाफलम्	४०६
निसर्गबलयुक्तशुक्रदशाफलम्	४०६
वक्रशुक्रदशाफलम्	४०६
दृग्बलयुक्तशुक्रदशाफलम्	४०७
क्रूरषष्ट्यंशस्थितशुक्रदशाफलम्	४०७
सौम्यषष्ट्यंशागतशुक्रदशाफलम्	४०७
वैशेषिकांशयुक्तशुक्रदशाफलम्	४०७
क्रूरद्रेष्काणस्थितशुक्रदशाफलम्	४०७
नीचराशि उच्चांशकगतशुक्रदशाफलम्	४०८
अथ शनिदशाफलम्	४०८
परमोच्चगतशनिदशाफलम्	४०८
उच्चगतशनिदशाफलम्	४०८
आरोही शनिदशाफलम्	४०८
नीचराशिगतशनिदशाफलम्	४०९
मूलत्रिकोणशनिदशाफलम्	४०९
स्वक्षेत्री शनिदशाफलम्	४०९
अतिशत्रुराशिगतशनिदशाफलम्	४०९
शत्रुराशिगतशनिदशाफलम्	४१०
मित्रक्षेत्री शनिदशाफलम्	४१०
अधिमित्रगतशनिदशाफलम्	४१०
समराशिगतशनिदशाफलम्	४१०
नीचराशिगते नीचसंयुक्ते वा शनिदशाफलम्	४११
उच्चस्थग्रहसंयुक्तशनिदशाफलम्	४११
पापान्वितशनिदशाफलम्	४११
शुभान्वितशनिदशाफलम्	४१२
पापेक्षितशनिदशाफलम्	४१२
शुभेक्षितशनिदशाफलम्	४१२
केन्द्रान्वितशनिदशाफलम्	४१२
लग्नस्थशनिदशाफलम्	४१३
चतुर्थस्थानगतशनिदशाफलम्	४१३
सप्तमभावगतशनिदशाफलम्	४१३
दशमस्थशनिदशाफलम्	४१३
द्वितीयभावगतशनिदशाफलम्	४१४
तृतीयस्थशनिदशाफलम्	४१४

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पञ्चमभावगतशनिदशाफलम्	४१४
षष्ठस्थशनिदशाफलम्	४१४
अष्टमभावस्थशनिदशाफलम्	४१४
नवमस्थशनिदशाफलम्	४१५
एकादशस्थशनिदशाफलम्	४१५
द्वादशस्थशनिदशाफलम्	४१५
अस्तङ्गतशनिदशाफलम्	४१५
नीचनवांशगतशनिदशाफलम्	४१६
उच्चांशगतशनिदशाफलम्	४१६
शनिदशायामादिमध्यान्तफलम्	४१६
स्थानबली शनिदशाफलम्	४१६
दिग्वीर्ययुतशनिदशाफलम्	४१७
कालबलयुक्तशनिदशाफलम्	४१७
वक्रशनिदशाफलम्	४१७
क्रूरषष्ट्यंशस्थशनिदशाफलम्	४१७
सौम्यषष्ट्यंशयुक्तशनिदशाफलम्	४१७
वैशेषिकांशस्थशनिदशाफलम्	४१८
क्रूरद्रेष्काणस्थशनिदशाफलम्	४१८
नीचराशिस्थशनिदशाफलम्	४१७
उच्चराशिनीचांशकस्थितशनिदशाफलम्	४१८

षोडशोऽध्यायः ४१९-४७१

(राहुकेतुदशाफलसहितसर्वग्रहान्तर्दशाफलविचाराध्यायः)

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
राहुदशाफलम्	४१९
राहोर्तुङ्गादिकथनम्	४१९
केतोः मूलत्रिकोणकथनम्	४१९
उच्चस्थराहुफलम्	४१९
नीचस्थराहुफलम्	४१९
सामान्यराहुदशाफलम्	४२०
लग्नगतराहुदशाफलम्	४२०
द्वितीयस्थराहुदशाफलम्	४२०
तृतीयस्थराहुदशाफलम्	४२०
चतुर्थस्थराहुदशाफलम्	४२०
पञ्चमभावस्थराहुफलम्	४२१
षष्ठस्थराहुदशाफलम्	४२१
सप्तमस्थराहुदशाफलम्	४२१
अष्टमस्थराहुदशाफलम्	४२२
नवमस्थराहुदशाफलम्	४२२
दशमभावस्थितराहुदशाफलम्	४२२
दशमस्थराहोर्विशेष(दशा)फलम्	४२२
एकादशभावस्थराहुफलम्	४२३
व्ययभावगतराहुदशाफलम्	४२३
कर्क-वृष-मेषराहुदशाफलम्	४२३
कन्या-मीन-धनुस्थराहुदशाफलम्	४२३
पापग्रहयुक्तराहुदशाफलम्	४२४
शुभग्रहनिरीक्षितराहुफलम्	४२४
पापदृष्टराहुदशाफलम्	४२४
उच्चग्रहयुक्तराहुफलम्	४२४
नीचराशियुतराहुदशाफलम्	४२४
आदिमध्यान्तराहुदशाफलम्	४२५
केतुदशाफलम्	४२५
केन्द्रस्थितकेतुदशाफलम्	४२५
लग्नस्थितकेतुदशाफलम्	४२६
धनराशिगतकेतुदशाफलम्	४२६
तृतीयभावस्थकेतुदशाफलम्	४२६
चतुर्थराशिस्थकेतुदशाफलम्	४२६
पञ्चमभावस्थकेतुदशाफलम्	४२६
षष्ठभावस्थकेतुदशाफलम्	४२६
सप्तमस्थकेतुदशाफलम्	४२७
अष्टमभावस्थकेतुदशाफलम्	४२७
नवमस्थकेतुदशाफलम्	४२७
कर्मस्थकेतुदशाफलम्	४२७
लाभस्थकेतुदशाफलम्	४२७
द्वादशस्थकेतुदशाफलम्	४२७
आदिमध्यान्तकेतुदशाफलम्	४२८
शुभदृष्टकेतुदशाफलम्	४२८
पापदृष्टकेतुदशाफलम्	४२८

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अन्तर्दशाफलानि	४२८
नवांशबलयुक्तग्रहान्तर्दशाफलम्	४२८
शुभसंयुक्तग्रहान्तर्दशाफलम्	४२८
षष्ठाष्टमेशयोः परस्परार्न्तदशाफलम्	४२९
पाकेशादन्त्यगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४२९
पाकेशयुक्तग्रहान्तर्दशाफलम्	४२९
पाकेशाद्वितीयस्थानगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४२९
पाकेशात्तृतीयभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४२९
पाकेशाच्चतुर्थभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४३०
विशेषफलम्	४३०
पाकेशात्पञ्चमभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४३०
पाकेशात्षष्ठभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४३०
पाकेशात्सप्तमभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४३१
पाकेशादष्टमभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४३१
पाकेशान्नवमभावस्थग्रहान्तर्दशाफलम्	४३१
पाकेशादेकादशभावस्थग्रहान्तर्दशाफलम्	४३२
पाकेशाद्व्ययभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्	४३२
पापे पापान्तर्दशाफलम्	४३२
शुभे शुभान्तर्दशाफलकथनम्	४३३
ग्रहाणां लग्नादिस्थिति भेदेन पुनरप्यन्तर्दशाफलविशेषः	४३३
सूर्यान्तर्दशाफलम्	४३३
लग्नस्थसूर्यदशाफलम्	४३३
गोचरागोचरकथनम्	४३४

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
लग्नस्थसूर्यान्तर्दशाफलम्	४३४
धनस्थसूर्यान्तर्दशाफलम्	४३४
तृतीयस्थसूर्यदशाफलम्	४३५
चतुर्थस्थसूर्यदशाफलम्	४३५
पञ्चमस्थसूर्यदशाफलम्	४३५
लग्नात्सप्तमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्	४३६
लग्नादष्टमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्	४३६
लग्नान्नवमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्	४३६
लग्नाद्दशमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्	४३७
लग्नादेकादशस्थरवेरन्तर्दशाफलम्	४३७
लग्नाद्व्ययभावगतरवेरन्तर्दशाफलम्	४३८
चन्द्रदशायामन्तर्दशाफलम्	४३८
लग्नगतचन्द्रदशाफलम्	४३८
धनस्थचन्द्रदशाफलम्	४३८
तृतीयस्थचन्द्रदशाफलम्	४३९
चतुर्थस्थचन्द्रदशाफलम्	४३९
पञ्चमस्थचन्द्रदशाफलम्	४३९
षष्ठभावस्थचन्द्रदशाफलम्	४४०
सप्तमस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्	४४०
अष्टमभावस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्	४४०
पुनरपि नवमभावस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्	४४१
दशमस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्	४४१
लाभस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्	४४१
भौमदशान्तरफलानि	४४२
लग्नस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४२
द्वितीयस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४२
तृतीयस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४३
चतुर्थस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४३
पञ्चमस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४३
षष्ठस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४४
सप्तमभावस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४४
अष्टमस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४४
नवमस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४५

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
दामस्थमंगलदशान्तर्दशाफलम्	४४५
एकादशस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४५
व्ययस्थभौमान्तर्दशाफलम्	४४५
राहुदशान्तरफलानि	४४६
लग्नस्थराह्वन्तर्दशाफलम्	४४६
दुःस्थानस्थराह्वन्तर्दशाफलम्	४४६
केन्द्रत्रयस्थितराह्वन्तर्दशाफलम्	४४७
त्रिकोणस्थितराह्वन्तर्दशाफलम्	४४७
तृतीयलाभस्थराह्वन्तर्दशाफलम्	४४८
धनराशिस्थराह्वन्तर्दशाफलम्	४४८
जीवान्तर्दशाफलम्	४४९
केन्द्रस्थितजीवान्तर्दशाफलम्	४४९
त्रिकोणस्थगुर्वन्तर्दशाफलम्	४५०
अन्यफलम्	४५०
षष्ठाष्टमव्ययस्थगुरोरन्तर्दशाफलम्	४५१
दुःस्थानगतगुरोर्दशायां शुभभुक्तौ फलम्	४५१
तृतीयायगतगुरोरन्तर्दशाफलम्	४५१
धर्मस्थितगुरोरन्तर्दशाफलम्	४५२
द्वितीयभावगतगुर्वन्तर्दशाफलम्	४५३
शनेरन्तर्दशाफलम्	४५४
केन्द्रस्थशनिर्दायफलम्	४५४
त्रिकोणस्थशनिर्दाये पापान्तर्दशाफलम्	४५५
शनेर्दाये शुभभुक्तौ फलम्	४५५
षष्ठाष्टमव्ययस्थशनेर्दाये पापान्तर्दशाफलम्	४५६
षष्ठाष्टमव्ययस्थशनेर्दाये शुभान्तर्दशाफलम्	४५६
तृतीयलाभभावस्थशनेर्दाये शुभहतिफलम्	४५६
तृतीयलाभराशिस्थशनेर्दाये पापहतिफलम्	४५७
धनभावस्थशनेर्पाके पापहतिफलम्	४५७
द्वितीयस्थशनेर्दशायां शुभभुक्तिफलम्	४५८
बुधान्तर्दशाफलम्	४५८
केन्द्रस्थितबुधान्तर्दशाफलम्	४५८
त्रिकोणस्थबुधान्तर्दशाफलम्	४५९
दुःस्थानस्थबुधान्तर्दशाफलम्	४६०
तृतीयलाभस्थबुधान्तर्दशाफलम्	४६०
धनभावस्थबुधदशाफलम्	४६२
केतोरन्तर्दशाफलम्	४६२
चतुष्टयस्थकेतोर्पापहतिफलम्	४६२
केन्द्रस्थकेतोर्दाये शुभभुक्तिफलम्	४६३
त्रिकोणस्थकेतोर्दाये पापान्तर्दशाफलम्	४६३
त्रिकोणस्थकेतोर्दाये शुभानामन्तर्दशाफलम्	४६४
षष्ठाष्टमव्ययस्थकेतोर्दाये पापान्तर्दशाफलम्	४६४
उक्तकेतोर्दाये सौम्यान्तर्दशाफलम्	४६५
त्रिलाभस्थकेतोर्दाये शुभान्तर्दशाफलम्	४६५
उक्तकेतोर्दाये पापभुक्तिफलम्	४६६
धनभावस्थितध्वजदाये पापान्तरफलम्	४६६
धनभावस्थध्वजदाये शुभान्तर्दशाफलम्	४६७
शुक्रान्तर्दशाफलम्	४६७
केन्द्रस्थभृगुदाये शुभान्तर्दशाफलम्	४६७
केन्द्रस्थभृगुदाये पापभुक्तौ फलम्	४६८
त्रिकोणस्थशुक्रदाये शुभभुक्तिफलम्	४६८
त्रिकोणस्थशुक्रदाये पापभुक्तिफलम्	४६८
दुःस्थानस्थशुक्रदाये अन्तर्दशाफलम्	४६९
तृतीयलाभस्थशुक्रदशामध्ये अन्तर्दशाफलम्	४६९

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
धनस्थितशुक्रदाये अन्तर्दशाफलम्	४७०
सप्तदशोऽध्यायः	४७२-४७४
(प्रकीर्णाध्यायः)	
तिथ्यादीनां वृद्धि-क्षयफलम्	४७२
प्रकीर्णयोगाः	४७२
शङ्कराचार्यमते तु	४७३
ग्रहाणां खगादिद्रेष्काणकथनम्	४७३
नभोगानां शुष्कादिकथनम्	४७४

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ग्रहाणां नीचभागादिफलकथनम्	४७४
अध्यायोपसंहारः	४७४
अष्टादशोऽध्यायः	४७५-४७७
(उपसंहारकाध्यायः)	
ताराकथनम्	४७५
ग्रहाणां विशेषबाधकत्वकथनम्	४७५
भावानां कारकाः	४७६
कारकसूत्राणि	४७६

❖

तन्त्रशास्त्र के महत्वपूर्ण ग्रन्थ - मूल संस्कृत एवं हिन्दी टीका सहित

- **तन्त्रसार** : परमहंस मिश्र. (1-2 भाग)
- **कुलार्णवतन्त्रम्** : परमहंस मिश्र
- **नित्योत्सव** : (श्रीविद्याविमर्शकसद्ग्रन्थ) परमहंस मिश्र
- **त्रिपुरारहस्यम्** : (ज्ञान एवं महात्म्य खण्ड) जगदीशचन्द्र मिश्र (1-2 भाग)
- **तन्त्रालोक** : राधेश्याम चतुर्वेदी (1-5 भाग)
- **स्वच्छन्दतन्त्रं** : राधेश्याम चतुर्वेदी (1-2 भाग)
- **नेत्रतन्त्रम्** : राधेश्याम चतुर्वेदी
- **कामाख्यातन्त्रम्** : राधेश्याम चतुर्वेदी
- **महाकालसंहिता** : (कामकला-कालीखण्ड) राधेश्याम चतुर्वेदी
- **महाकालसंहिता** : (गुह्यकाली-खण्ड) राधेश्याम चतुर्वेदी (1-5 भाग)
- **रुद्रयामलम्** : सुधाकर मालवीय (1-2 भाग)
- **शारदातिलकम्**-सुधाकर मालवीय (1-2 भाग)
- **मन्त्रमहोदधि** : सुधाकर मालवीय
- **लक्ष्मीतन्त्रम्** : कपिलदेवनारायण (1-2 भाग)
- **तन्त्रराजतन्त्रम्**-कपिलदेवनारायण (1-2 भाग)
- **महानिर्वाणतन्त्रम्** : कपिलदेवनारायण
- **कामकलाविलास** : श्यामाकान्त द्विवेदी
- **वरिवस्यारहस्यम्** : श्यामाकान्त द्विवेदी
- **स्पन्दकारिका** : श्यामाकान्त द्विवेदी
- **सर्वोल्लासतन्त्रम्** : एस. खण्डेलवाल
- **नीलसरस्वतीतन्त्रम्** : एस. खण्डेलवाल
- **भूतडामरतन्त्रम्** : एस. खण्डेलवाल
- **सिद्धनागार्जुनतन्त्रम्** : एस. खण्डेलवाल
- **अन्नदाकल्पतन्त्रम्** : एस. खण्डेलवाल
- **त्रिपुरार्णवतन्त्रम्** : एस. खण्डेलवाल
- **विज्ञानभैरव** : बापूलाल अँजना
- **अहिर्बुध्न्यसंहिता** : सुधाकर मालवीय (श्रीपाञ्चारात्रागमान्तर्गता) (1-2 भाग)
- **देवीरहस्यम्** : (रुद्रयामलतन्त्रोक्तम्) कपिलदेवनारायण (1-2 भाग)
- **स्वर्णतन्त्र** : भाषा टीका
- **महानिर्वाणतन्त्रम्** : कपिलदेवनारायण
- **बृहत्तन्त्रसार** : कपिलदेवनारायण (1-2 भाग)
- **सौन्दर्यलहरी** : लक्ष्मीधरी टीका सहित सुधाकर मालवीय
- **सिद्धसिद्धान्तपद्धति** : द्वारकादास शास्त्री

◆◆◆

डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी द्वारा हिन्दी में लिखित
तंत्र विषयक महत्त्वपूर्ण शास्त्रीय ग्रन्थ

- **श्रीविद्या-साधना** : (श्रीविद्या-उपासना का साङ्गोपाङ्ग शास्त्रीय विवेचन)
- **भारतीय शक्ति-साधना** : (शक्ति-विज्ञानः स्वरूप एवं सिद्धान्त का शास्त्रीय विवेचन)
- **ब्रह्मास्त्रविद्या एवं बगलामुखी-साधना** : (महाविद्याबगला-उपासना का शास्त्रीय विवेचन)
- **काश्मीर शैवदर्शन एवं स्पन्दशास्त्र** : (शिवसूत्र, शक्तिसूत्र एवं स्पन्दसूत्र के सन्दर्भ में शास्त्रीय विवेचन)
- **मुद्राविज्ञान एवं साधना** : (नित्यकर्मीय एवं तान्त्रिक मुद्राओं का सर्वाङ्गपूर्ण, सचित्र एवं शास्त्रीय विवेचन)

◆◆◆

प्राप्ति स्थान

चौखाम्बा पब्लिशिंग हाऊस
4697/2, 21-ए, अंसारी रोड़,
दरियागंज नई दिल्ली - 110002
फोन न. 011-23286537, 32996391

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
के - 37/117 गोपाल मंदिर लेन
वाराणसी-221001
फोन न. 0542-2335263, 2335264

।। श्रीः ।।

श्रीवेङ्कटेशशर्मप्रणीतः

सर्वार्थचिन्तामणिः

'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दीटीकासहितः

* * *

अथ प्रथमोऽध्यायः

संज्ञाध्यायः

मङ्गलाचरणम्

श्रीमच्छेषगिरेस्तटाधिनिलयं श्रीवेङ्कटेशं गुरुं
नत्वा वेङ्कटनायकं त्वनुदिनं जातोऽहमार्यात्सुधीः ।
ज्योतिःशास्त्रमहाब्धिपारगमने वक्ष्यामि पोतात्मकं
ज्योतिःशास्त्रविवेकपाकविदुषां सर्वार्थचिन्तामणिम् ।।

❁ सर्वार्थबोधिनी ❁

श्रीयक्षेश्वरदेवतां गणनाथं सरस्वतीम् ।
गुरुप्रसादः कुरुते नमस्कारं मुहुर्मुहुः ।।१।।
सर्वार्थबोधिनी टीका सर्वार्थचिन्तामणेः ।
नवनीतानुरोधेन भाषायां सुमनोहरा ।।२।।

इस ग्रन्थ के रचयिता श्री वेङ्कट शर्मा ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति-हेतु मङ्गलाचरण करते हैं— मैं (व्यङ्कट शर्मा) वेङ्कटाचल पर्वत के अधिष्ठाता (शेषाद्रि पर्वत पर निवास करने वाले) भगवान् वेङ्कटेश्वर तथा अपने गुरुवर्य को प्रतिदिन प्रणाम करता हूँ; जिनकी कृपा से मुझे ज्योतिषशास्त्र में निपुणता प्राप्त हुई है। ज्योतिषशास्त्र का फल जानने के लिये विद्वानों को ज्योतिषरूपी महान् समुद्र से पार कराने के लिये सर्वार्थचिन्तामणि नामक यह ग्रन्थ, जो कि नौका के तुल्य है, उसे रचता हूँ।।१।।

देववन्दना

नीलाम्बुजरुचिं देवं सकृद्ध्यान्ति मनोरथम् ।
देवाः प्रणम्य यं सर्वे तं नमामि गजाननम् ।।२।।

वाग्विभूतिप्रदा देवी या श्वेताम्बुरुहस्थिता ।
गोक्षीरधवलाकारा स्वयं तिष्ठतु वाचि मे ।।३।।

जिन श्रीगणेश जी महाराज को सभी देवगण प्रणाम करके शीघ्र ही अपने मनोरथ को पूरा कर लेते हैं, ऐसे नीलकमल के सदृश कान्ति वाले श्रीगणेश को मैं प्रणाम करता हूँ। गोदुग्ध के समान श्वेत वर्ण वाली तथा श्वेत कमल पर स्थित, वाणी की विभूति प्रदान करने वाली देवी सरस्वती (को मैं प्रमाण करता हूँ) स्वयं मेरी वाणी में विराजमान हों॥२-३॥

ग्रहराशिप्रार्थना

मेषादिराशयः सर्वे दिनेशप्रमुखा ग्रहाः ।
ये च लोकोपकर्त्तारः पातु मामिह ते सदा ।।४।।

मेषादि द्वादश राशियाँ सूर्यादि ग्रहोपग्रह तथा अन्य जो भी लोकोपकार करने वाले ग्रह हैं, वे मेरी सदा मेरी रक्षा करते रहें॥४॥

जातकप्रश्नयोरभेदत्वम्

यज्जातके निगदितं भुवि मानवानां
तत्प्राश्निकेऽपि सकलं कथयन्ति तज्ज्ञाः ।
प्रश्नोऽपि जन्मसदृशो भवति प्रभेदः
प्रश्नस्य चात्र जननस्य न कश्चिदस्ति ।।५।।

इस पृथ्वी पर मनुष्यों के लिये जन्मकुण्डली के विचार में जो फलादेश होता है; ठीक वैसा ही फलादेश प्रश्नकुण्डली से भी घटित होता है। तथैव प्रश्नविचार भी जातक के समान ही किया जाता है। वस्तुतः प्रश्नशास्त्र तथा जातकशास्त्र में कोई भी भेद नहीं होता है॥५॥

राशीश्वराः

भौमाच्छविच्चन्द्ररविज्ञशुक्रवक्रेज्यमन्दाऽर्किसुतामरेज्याः ।
मेषाधिभानामधिपाः क्रमेण तदंशकानामपि ते भवेयुः ।।६।।

(१) भौम, (२) अच्छ (शुक्र), (३) वित् (बुध), (४) चन्द्र, (५) रवि, (६) ज्ञ (बुध), (७) शुक्र, (८) वक्र (मङ्गल), (९) इज्य (गुरु), (१०) मन्द (शनि), (११) आर्कि (शनि) तथा (१२) अमरेज्य (गुरु)— ये क्रमशः मेषादि बारहों राशियों के स्वामी होते हैं तथा इन राशियों में जो अंशक (होरा-द्रेष्काण-नवांशादि विभाग) होते हैं, उन अंशकों के स्वामी भी यही ग्रह होते हैं॥६॥

विशेष— इस श्लोक में 'अंशक' शब्द केवल नवांश या त्रिंशांश का ही नहीं; अपितु षड्वर्ग-सप्तवर्ग-दशवर्ग तथा षोडश वर्गों के अन्तर्गत आने वाले सभी राशिभागों

(वर्गों) में आने वाली राशियों का भी बोधक है। इस श्लोक के अनुसार वर्ग राशियों के होते हैं; न कि ग्रहों के। वर्ग में जो राशि होती है, बस वही ग्रह उसका स्वामी होता है।

राशीस्वामी-बोधक चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशि
मङ्गल	शुक्र	बुध	चन्द्र	सूर्य	बुध	शुक्र	मङ्गल	गुरु	शनि	शनि	गुरु	स्वामी

राशिचक्रे कालचक्रस्याङ्गानि

मेषादिमूर्धा वदनं गलाधो हृत्कुक्षिवासोभृतबस्तिगुह्यम् ।
ततोरुजानुद्वयजङ्घमङ्घ्री पापान्वितं यत्तदुपैति नाशम् ।।७।।

मेषादि राशियों में कालपुरुष के शिर, मुख, स्तन, हृदय, उदर, कटिप्रदेश, बस्ति, गुह्य, ऊरू, जंघा, जानु तथा चरण स्थित होते हैं। इनमें जो राशि पापग्रह से युक्त होती है, उसी राशि से सम्बन्धित अङ्ग में रोग, पीड़ा तथा विकार होता है अर्थात् उस अङ्ग की हानि (क्षति) होती है।।७।।

कालपुरुष-अङ्गप्रदर्शक-चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
शिर	मुख	स्तन	हृदय	उदर	कमर	बस्ति	गुप्ताङ्ग	उरु (घुटने के ऊपर)	जंघा (पिंडली)	घुटना	पैर	अङ्ग

द्वादशराशीनां स्वरूपाणि

व्यत्यस्तमत्स्यद्वयमश्वजङ्घश्चापी मनुष्यः सगदं सवीणम् ।
नृयुग्ममादाय करेऽग्निसस्ये नौस्थाबला मानधरो वणिक् च ।।८।।
घटी जलादानग्रहीतुकामः शेषाः स्वनामानुगुणा भवन्ति ।
मेषस्तु मेषो वृषभः स एव कर्की कुलीरस्त्वथ वृश्चिकोलिः ।।९।।

एक-दूसरे की पूँछ को अपने मुख से पकड़ने की चेष्टा करती हुई मछलियाँ मीन राशि का स्वरूप हैं। धनु राशि के स्वरूप में घोड़े की जंघाओं (चार पैरों) पर धड़ से ऊपर का भाग मनुष्य का है। मिथुन राशि में गदाधारी पुरुष तथा वीणाधारी कन्या का जोड़ा है। कन्या राशि में हाथ में अग्नि लिये नाव में बैठी हुई कन्या का आकार दिखायी पड़ता है। तुला राशि में हाथ में तराजू लिये वणिक् बैठा है। कुम्भ राशि में एक मनुष्य अपने कन्धे पर जलपूर्ण घड़ा धारण किये प्रतीत होता है। शेष राशियाँ अपने नाम के अनुसार आकृति वाली; जैसे— मेष भेड़ा के आकार की, वृष बैल के आकार की, कर्क केकड़े के आकार की, वृश्चिक बिच्छू के आकार की होती हैं। इसी प्रकार सिंह को सिंहाकृति और मकर को मगरमच्छ-सदृश जानना चाहिये।।८-९।।

होराद्रेष्काणकथनम्

युजीन्दुसूर्यौ भवने रवीन्दू नाथौ त्वयुग्मे भवनस्य चार्द्धे ।
राशिं त्रिधाकृत्य दृकाणमाहुस्तदीशपुत्रेशशुभाधिनाथाः ।।१०।।

राशि के आधे भाग को 'होरा' कहते हैं। इनमें युग्म (सम) राशियों में चन्द्र-सूर्य— इस क्रम से राशि के पूर्वार्ध (पन्द्रह अंश) तथा उत्तरार्ध (सोलह से तीस अंश तक) होरा होते हैं। अयुग्म राशियों (विषम राशियों) में सूर्य-चन्द्र— इस क्रम से होरा होते हैं। राशि के तीन भाग करने पर उन्हें द्रेष्काण, दृकाण, त्रिभाग या तृतीयांश कहा जाता है। उनके स्वामी प्रत्येक राशियों में स्वराशिपुत्र (पञ्चम) शुभ (नवम) राशि का द्रेष्काण— इस क्रम से होते हैं।।२०।।

विशेष— कई प्रतियों में दशवें श्लोक का पूर्वार्ध बाद में तथा उत्तरार्ध पहले लिखा गया है, किन्तु मेरी सम्मति में वह पाठ समीचीन नहीं है। हस्तलिखित प्रति में मुझे जो पाठ प्राप्त हुआ, मैंने उसी को यहाँ दिया है। पुनश्च होरा-द्रेष्काण के बारे में आचार्यों में मतभेद है। ग्रन्थों में होरा तीन प्रकार से तथा द्रेष्काण चार प्रकार से उपलब्ध है। यहाँ प्रचलित प्रकार से तथा आर्षमत (विश्वपञ्चाङ्ग) से होराचक्र तथा द्रेष्काण-चक्र दिये जा रहे हैं।

होराचक्र (प्रचलित मत)

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ	
५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	० से १५ अंश तक	देव
४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	१६ से ३०अंश तक	पितर

आर्षमत से होराचक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
१	३	५	७	९	११	१	३	५	७	९	११	० से १५ अंश तक
२	४	६	८	१०	१२	२	४	६	८	१०	१२	१६ से ३० अंश तक

द्रेष्काण-चक्र (प्रचलित-मत)

मेष	वृष	मियुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ	
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	० से १० अंश तक	नारद
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	११ से २० अंश तक	अगस्त्य
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२१ से ३० अंश तक	दुर्वासा

आर्षमत (विश्वपञ्चाङ्ग) से द्रेष्काण-चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१० अंश तक
२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२० अंश तक
३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३० अंश तक

नवमांशाः

चरेंऽशकानामधिपास्तदंशाद् राशौ स्थिरे तन्नवमेश्वराद्याः ।
द्विदेहमेतत् सुतराशिनाथाद् वदन्ति शास्त्रार्थविदो महान्ताः ।।११।।

चर राशि में नवांश की गणना उसी राशि से प्रारम्भ होती है। स्थिर राशियों में उसके नवम राशि से गिनते हैं। द्विस्वभाव राशि में उस राशि की पञ्चम राशि से नवांश-गणना करते हैं। ऐसा इस ज्योतिषशास्त्र के मर्म को जानने वाले विद्वान् कहते हैं।।११।।

नवमांशचक्र

आख्या	दैवत्य	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
		चर	स्थिर	द्वि०	च०	स्थि०	द्वि०	च०	स्थि०	द्वि०	च०	स्थि०	द्वि०	स्वभाव
संख्या ↓	देवता ↓	मेषादि	मकरादि	तुलादि	कर्कादि	मेषादि	मकरादि	तुलादि	कर्कादि	मेषादि	मकरादि	तुलादि	कर्कादि	आद्यगण/ आद्ये
प्रथम	देव	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	३°२०'तक
द्वितीय	मनुष्य	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	६°४०'तक
तृतीय	राक्षस	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	१०°००'तक
चतुर्थ	देव	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	१३°२०'तक
पञ्चम	मनुष्य	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	१६°२०'तक
षष्ठ	राक्षस	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	२०°००'तक
सप्तम	देव	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	२३°२०'तक
अष्टम	मनुष्य	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	२६°२०'तक
नवम	राक्षस	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	३०°००'तक

द्वादशांश-त्रिंशांश-सप्तमांशकथनम्

तत्क्षेत्रपा द्वादशभागनाथा लग्नस्य वर्गाधिपतिस्तदीशात् ।
त्रिंशांशपा भौमशनीज्यसौम्यशुक्रा भवन्त्योजगृहे समे तु ।।१२।।
विलोमतः पञ्चशराष्टसप्तबाणाः क्रमादूचुरनेकशास्त्रैः ।
सप्तांशपास्त्वोजगृहे तदीशाद्युग्मे गृहे सप्तमराशिपात्तु ।।१३।।

एक राशि के बारह भाग द्वादशांश कहलाते हैं । प्रत्येक द्वादशांश ढाई अंश (२°/३०') का होता है तथा प्रत्येक राशि का द्वादशांश उसी राशि से गिना जाता है। त्रिंशांश (पञ्चमांशों) में विषम राशियों में प्रथम पाँच अंश तक मंगल का, फिर बारह अंश तक शनि का त्रिंशांश, फिर बीस अंश तक गुरु का, फिर पच्चीस अंश तक बुध का और अन्त में तीस अंश तक शुक्र का त्रिंशांश होता है। सम राशि में उलटे क्रम से उसके स्वामी होते हैं; यथा— प्रथम पाँच अंश तक शुक्र, फिर बारह अंश तक बुध, फिर अट्ठारह तक गुरु का, फिर पच्चीस तक शनि का और अन्त में मङ्गल का होता है। एक राशि के सात भाग सप्तांश या सप्तमांश कहे जाते हैं। विषम राशि में सप्तमांश उसी राशि से गिना जाता है, परन्तु सम राशि में उस राशि से सातवीं राशि से गणना होती है।।१२-१३।।

विशेष— द्वादशांश तथा सप्तमांश के बारे में आचार्यों में कोई मतभेद नहीं है, परन्तु त्रिंशांश के बारे में गम्भीर मतभेद हैं; क्योंकि त्रिंशांश का अर्थ है— एक राशि के तीस भाग या अंश; अत: त्रिंशांश का प्रत्येक भाग एक-एक अंश का होना चाहिये, परन्तु यहाँ केवल पाँच भाग किए गए हैं और वह भी बराबर के नहीं हैं। यह मत, जिसमें नाम त्रिंशांश है तथा हिस्से सिर्फ पाँच हैं, सिकन्दर के आक्रमण के बाद भारतीय ज्योतिष में प्रविष्ट हुआ है। इस गड़बड़ी को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के ज्योतिष विभागाध्यक्ष पं० रामयत्न ओझा ने ठीक किया है। काशी विश्वपञ्चाङ्ग में शुद्ध दशवर्ग दिये गये हैं। आगे दोनों प्रकार का त्रिंशांश चक्र दिया गया है।

सप्तमांश चक्र

संख्या	देवत्य	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	देवत्य	विभाग
	विषम में	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	सम राशि में	
प्रथम	क्षार	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	शुद्धोदक	४°/१७′
द्वितीय	क्षीर	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	मद्य	८°/३४′
तृतीय	दधि	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	इक्षुरस	१२°/५१′
चतुर्थ	आज्य	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	आज्य	१७°/३४′
पञ्चम	इक्षुर	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	दधि	२१°/२५′
षष्ठ	मद्य	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	क्षीर	२५°/४२′
सप्तम	शुद्धोदक	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	क्षार	३०°/००′

द्वादशांश चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	अंश
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२° ३०′
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	५° ०′
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७° ३०′
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१०° ०′
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१२° ३०′
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५° ०′
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१७° ३०′
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२०° ०′
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२° ३०′
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२५° ०′
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२७° ३०′
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०° ०′

यवनमत से त्रिंशांश चक्र

अंश	मेष	मिथुन	सिंह	तुला	धनु	कुम्भ	वृष	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन	अंश
५°	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	५°
१०°	११	११	११	११	११	११	६	६	६	६	६	६	१२°
१८°	९	९	९	९	९	९	१२	१२	१२	१२	१२	१२	२०°
२५°	३	३	३	३	३	३	१०	१०	१०	१०	१०	१०	२५°
३०°	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	८	३०°

आर्षमत से शुद्ध त्रिंशांशचक्र

त्रिंशांश की भागसंख्या एवं राशियों के प्रवेशांश	राशिस्पष्ट के गतांश	विषम	सम
		मेष-मिथुन सिंह-तुला-धनु-कुम्भ	वृष-कर्क-कन्या-वृश्चिक-मकर-मीन
प्रथम/त्रयोदश/पञ्चविंश अंश	०/१२/२४	१	७
द्वितीय/चतुर्दश/षड्विंश अंश	१/१३/२५	२	८
तृतीय/पञ्चदश/सप्तविंश अंश	२/१४/२६	३	९
चतुर्थ/षोडश/अष्टाविंश अंश	३/१५/२७	४	१०
पञ्चम/सप्तदश/एकोनत्रिंश अंश	४/१६/२८	५	११
षष्ठ/अष्टादश/त्रिंश अंश	५/१७/२९	६	१२
सप्तम/उनविंश/	६/१८/३०	७	१
अष्टम/विंश/	७/१९	८	२
नवम/एकविंश/	८/२०	९	३
दशम/द्वाविंश/	९/२१	१०	४
एकादश/त्रयोविंश/	१०/२२	११	५
द्वादश/चतुर्विंश/	११/२३	१२	६

दशमांशाः, षोडशांशाः षष्ट्यंशाश्च

दशांशपानामधिपास्तदीशादोजे समे तन्नवमेश्वराद्याः।
ओजे कलानामधिपास्तदीशाश्चतुर्मुखो विष्णुहरौ दिनेशः।।१४।।
युग्मे क्रमाद्व्यत्ययमेव राशौ षष्ट्यंशपानामधिपास्त्वयुग्मे ।
घोरांशको राक्षसदेवभागौ कुबेररक्षोगणकिन्नरांशाः।।१५।।
भ्रष्टः कुलघ्नो गरलाग्निसंज्ञौ मायांशकः प्रेतपुरीषभागः।
अपाम्पतिर्देवगणेशभागः कालाहिभागावमृतांशुचन्द्रौ।।१६।।
मृद्वंशकः कोमलपद्मभागौ लक्ष्मीशवागीशदिगम्बरांशाः।
देवार्द्रभागौ कलिनाशभागः क्षितीश्वरांशः कमलाकरांशः।।१७।।

क्रमेण मन्दात्मजमृत्युकालः दावाग्निघोरामयकण्टकाश्च ।
सुधाऽमृतांशौ परिपूर्णचन्द्रः विषप्रदग्धौ कुलनाशमुख्यौ ।।१८।।
वंशक्षयोत्पातककालरूपाः सौम्यश्च मृद्वंशसुशीतलांशौ ।
दंष्ट्राकरालेन्दुमुखप्रवीणाः कालाग्निदण्डायुधनिर्मलांशाः ।।१९।।
शुभाशुभांशावतिशीतलांशः सुधापयोधिभ्रमणेन्दुरेखाः ।
ज्ञेयाः क्रमाद्व्यत्ययमेव युग्मे शुभान्वितांशो यदि शोभनासिः ।।२०।।

एक राशि के दशमांश में प्रत्येक तीन अंश का होता है! विषम राशियों (मेष-मिथुन-सिंह-तुला-धनु-कुम्भ) में उसी राशि से दशमांश की गणना होती है, जबकि सम राशियों में उससे नवीं राशि से होती है। (कहीं-कहीं १४वें श्लोक का पाठ 'समे तद्दशमेश्वाद्याः' भी मिलता है, जो अधिक समीचीन है। काशी विश्वपञ्चाङ्ग में इसी पाठ के अनुसार दशमांश स्वीकार किया गया है।

शुद्धदशमांशचक्र

मे. तु.	वृ. वृ.	मि. ध.	क. म.	सिं. कु.	क. मी.	अंशा
१	११	९	७	५	३	३
२	१२	१०	८	६	४	६
३	१	११	९	७	५	९
४	२	१२	१०	८	६	१२
५	३	१	११	९	७	१५
६	४	२	१२	१०	८	१८
७	५	३	१	११	९	२१
८	६	४	२	१२	१०	२४
९	७	५	३	१	११	२७
१०	८	६	४	२	१२	३०

षोडशांश— एक राशि के तीस अंशों में सोलह का भाग देने पर प्रत्येक भाग १ अंश ५२' तथा ३०" का होता है। यही षोडशांश या कलांश कहलाता है। विषम राशियों में इसके स्वामी ब्रह्मा-विष्णु-हर तथा सूर्य चार पालियों में होते हैं तथा सम राशियों में सूर्य-हर-विष्णु तथा ब्रह्मा— इस क्रम से होते हैं। षोडशांश में राशियों का क्रम सरल रूप में रहता है।

शुद्धषोडशांशचक्र

चर	स्थिर	द्विस्वभाव	
मे. क. तु. म.	वृ. सि. वृ. कु.	मि. क. ध. मी.	अंशादि
१	५	९	१।५२।३०
२	६	१०	३।४५।०
३	७	११	५।३७।३०
४	८	१२	७।३०।०
५	९	१	९।२२।३०
६	१०	२	११।१५।०
७	११	३	१३।७।३०
८	१२	४	१५।०।०
९	१	५	१६।५२।३०
१०	२	६	१८।४५।०
११	३	७	२०।३७।३०
१२	४	८	२२।३०।०
१	५	९	२४।२२।३०
२	६	१०	२६।१५।०
३	७	११	२८।७।३०
४	८	१२	३०।०।०

षष्ट्यंश— एक राशि के साठ भाग किये जाते हैं, तब उन्हें षष्ट्यंश कहा जाता है। प्रत्येक भाग तीस कला (आधे अंश) का होता है। श्लोक में दिये गए साठ देवता विषम षष्ट्यंश में घोरादि क्रम से तथा सम राशियों में व्युत्क्रम से स्वामी होते हैं, आगे दिये गये चक्र से सब स्पष्ट है॥१४-२०॥

ग्रन्थान्तरों में षष्ट्यंश के स्वामियों के नामों में भी अन्तर है। आगे शुद्ध षष्ट्यंश चक्र दिया जा रहा है।

शुद्धषष्ट्यंश-चक्र

विषमे	सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मि.	अंशादि	समे
घोर	१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	०।३०	इन्दुरेखा
राक्षस	२	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१।०	भ्रमण
देव	३	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१।३०	पयोधि
कुबेर	४	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२।०	सुधांशु
यक्ष	५	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२।३०	अतिशीतल
किन्नर	६	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	३।०	क्रूर
भ्रष्ट	७	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	३।३०	सौम्य
कुलघ्न	८	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	४।०	निर्मल
गरल	९	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	४।३०	दण्डायुध
अग्नि	१०	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	५।०	कालाग्नि
आप	११	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	५।३०	प्रवीण
प्रेतपुरीष	१२	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	६।०	इन्द्रमुख
अपांपति	१३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	६।३०	दंष्ट्राकराल
मरुत्वान	१४	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	७।०	शीतल
काल	१५	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७।३०	कोमल
महिमा	१६	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	८।०	सौम्य
अमृत	१७	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	८।३०	कालरूप
चन्द्र	१८	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	९।०	उत्पात
मृद्वंश	१९	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	९।३०	वंशक्षय
मृदु	२०	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१०।०	कलिनाश
पद्म	२१	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	१०।३०	विषदग्ध
ब्रह्मा	२२	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	११।०	पूर्णचन्द्र
विष्णु	२३	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११।३०	अमृत
महेश्वर	२४	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२।०	सुधांशु
देव	२५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१२।३०	कण्टक
आर्द्र	२६	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१३।०	यम
कलिनाश	२७	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१३।३०	घोर
क्षितीश्वर	२८	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१४।०	दवाग्नि
कमलाकर	२९	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१४।३०	काल
मान्दी	३०	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५।०	मृत्यु
मृत्यु	३१	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१५।३०	मान्दी
काल	३२	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१६।०	कमलाकर

विषमे	सं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	घ.	म.	कुं.	मि.	अंशादि	समे
दावाग्नि	३३	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	१६।३०	क्षितीश्वर
घोर	३४	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१७।०	कलिनाश
यम	३५	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	१७।३०	आर्द्र
कण्टक	३६	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१८।०	देव
सुधांशु	३७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१८।३०	महेश्वर
अमृत	३८	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१९।०	विष्णु
पूर्णचन्द्र	३९	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१९।३०	ब्रह्मा
विषदग्ध	४०	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२०।०	पद्म
कलिनाश	४१	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२०।३०	मृदु
वंशक्षय	४२	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२१।०	मृद्वंश
उत्पात	४३	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२१।३०	चन्द्र
कालरूप	४४	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२२।०	अमृत
सौम्य	४५	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२।३०	महिमा
कोमल	४६	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२३।०	काल
शीतल	४७	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२३।३०	मरुत्वान
दंष्ट्राकराल	४८	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	२४।०	अपांपति
इन्द्रमुख	४९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२४।३०	प्रेतपुरीष
प्रवीण	५०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२५।०	आप
कालाग्नि	५१	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	२५।३०	अग्नि
दण्डायुध	५२	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२६।०	गरल
निर्मल	५३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२६।३०	कुलघ्न
सौम्य	५४	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२७।०	भ्रष्ट
क्रूर	५५	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२७।३०	किन्नर
अतिशीतल	५६	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२८।०	यक्ष
सुधांशु	५७	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२८।३०	कुबेर
पयोधि	५८	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२९।०	देव
भ्रमण	५९	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२९।३०	राक्षस
इन्दुरेखा	६०	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०।०	घोर

षष्ट्यंशानां सामान्यफलम्

क्रूरषष्ट्यंशगाः सर्वे नाशयन्ति खचारिणः ।
यदि पूर्णबलैर्युक्ताः स्वोच्चमूलत्रिकोणगाः ।।२१।।
स्वर्क्षकेन्द्रोत्तमांशस्था मित्रक्षेत्रत्रिकोणगाः ।
सप्तवर्गोद्भवाः स्वांशाः स्वाधिमित्रांशकान्विताः ।।२२।।

जो ग्रह अपने उच्च एवं मूल त्रिकोण में पूर्ण बली होकर क्रूर षष्ट्यंश में हों तो शुभ फल तथा उत्तम फल को नष्ट करते हैं एवं जो ग्रह स्वराशि, केन्द्रस्थित, मित्र-क्षेत्री, त्रिकोणस्थित हों, सप्तवर्ग में, स्वांश में या अधिमित्रांश में हों वे बली होते हैं।।२१-२२।।

दशवर्गप्रयोजनम्

वर्गास्तु ये दश प्रोक्ताः पूर्वाचार्यैः महर्षिभिः ।
भवन्ति वर्गसंयोगे पारिजातादिसंज्ञकाः ।।२३।।

पूर्व महर्षियों ने जो दशवर्ग (राशि, होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश, दशमांश, द्वादशांश, षोडशांश, त्रिंशांश, षष्ट्यंश) कहे हैं, वे पारिजातादि संज्ञक होते हैं।।२३।।

विशेष— इन दश वर्गों में जब दशमांश, षोडशांश तथा षष्ट्यंश— ये तीन वर्ग न्यून कर दिये जाते हैं, तब वे 'सप्तवर्ग' कहलाते हैं। सप्तवर्ग में यदि सप्तमांश कम कर दिया जाय तब उनको 'षड्वर्ग' कहा जाता है। परन्तु यदि इन दशवर्गों में चतुर्थांश (पादांश), विंशांश (नवांश), सिद्धांश (चतुर्विंशांश), भांश (सप्तविंशांश), खवेदांश (चत्वरिंशांश) तथा अक्षवेदांश (पञ्चचत्वारिंशांशः) ये छः वर्ग और मिला दिये जायँ तो वे षोडशवर्ग कहलाते हैं। इन्हीं वर्गों के आधार पर जन्मपत्रिकायें षड्वर्गी, सप्तवर्गी, दशवर्गी तथा षोडशवर्गी कहलाती हैं।

पारिजातादेः शुभफले ह्रासकथनम्

दुःस्थारिनीचमूढस्था ग्रहा बलविवर्जिताः ।
मरणावस्थगाश्चेत्तु पारिजातादिनाशकाः ।।२४।।

जो ग्रह दुःस्थानों (६-८-१२) में अथवा शत्रु राशि, नीच राशि में अथवा अस्तंगत वा बलहीन होते हैं या जो बालाद्यवस्थाओं में, मृतावस्था में (विषम राशियों में २४° के बाद ३०° तक तथा सम राशि में प्रारम्भ के ६ अंश तक) होते हैं, वे ग्रह पारिजातादि अवस्थाओं के फल को नष्ट या न्यून करते हैं।।२४।।

पारिजातादिसंज्ञाकथनम्

उत्तमं तु त्रिवर्गैक्यं चतुर्वर्गं तु गोपुरम् ।
वर्गपञ्चकसंयोगे सिंहासनमिहोच्यते ।।२५।।
वर्गद्वयं पारिजातं षण्णां पारावतांशकम् ।
सप्तमं देवलोकं स्यादष्टमं चामरम्भवेत् ।।२६।।
ऐरावतं तु नवमं फलं तेषां पृथक्-पृथक् ।
दशवर्गस्य संयोगे विदुर्वैशेषिकांशकान् ।।२७।।

ऊपर जो होरा-द्रेष्काणादि दशवर्ग कहे गए हैं, उनमें जब कोई ग्रह स्वद्रेष्काण, स्वराशि, स्वहोरा, स्वनवमांशादि में होता है तो वह स्ववर्गी कहलाता है। इसी तरह से उच्चादि वर्गों में भी क्रमशः श्रेष्ठ होता है। इस प्रकार के तीन वर्गों में वह ग्रह हो तो उसकी संज्ञा उत्तम होगी, चार वर्गों में उसकी संज्ञा गोपुर, पाँच वर्ग एकत्र होने पर सिंहासन, दो वर्गों के एकत्रित होने से पारिजात, छः वर्ग के समुच्चय पर पारावतांश,

सात वर्गों की एकता पर देवलोक तथा आठ वर्गों में अमर एवं नौ वर्गों में ऐरावत संज्ञा होती है। दशवर्गैक्य में वैशेषिकांश संज्ञा कहलाती हैं।।२५-२७।।

उदाहरण— मान लीजिये कि गुरु स्पष्ट राश्यादि ८।१°।३५'।२१" है तो यह आर्षमत के वर्गों के अनुसार अपनी मूल त्रिकोण राशि, सप्तमांश, अपने दशमांश, अपने द्वादशांश तथा अपने षोडशांश में होने से यह ग्रह 'सिंहासनांश' में कहा जायेगा। आगे इन पारिजातादि नौ संज्ञाओं को चक्र के द्वारा समझाया जा रहा है—

पारिजातादिसंज्ञाबोधकचक्र

दो	तीन	चार	पाँच	छः	सात	आठ	नौ	दश	वर्गैक्य
पारिजात	उत्तम	गोपुर	सिंहासन	पारावतांशक	देवलोक	अमर (सुरलोक)	ऐरावतांश	वैशेषिकांश	संज्ञा

पारिजातादिसंज्ञानां फलम्

ऐरावते सार्वभौमः सर्वैश्वर्यसमन्वितः ।
देवलोके महादानकर्त्ता राजा क्षितीश्वरः ।।२८।।
पारावते माण्डलिकः सर्वशास्त्रविशारदः ।
सिंहासने भवेद् भूमिपतिः सर्वैः स्तुतो महान् ।।२९।।
गोपुरे धनवान्नित्यं सर्वविद्याविशारदः ।
उत्तमे सकला सम्पत् पारिजाते धनान्वितः ।।३०।।
स्वांशे यशस्वी मतिमान् सर्वसौख्यसमन्वितः ।
पारिजातादिसंज्ञानां फलं प्रोक्तं महर्षिभिः ।।३१।।

जिसकी कुण्डली में दशवर्गों में ग्रह यदि ऐरावतांश में हों तो उस जातक के पास सभी ऐश्वर्य होते हैं। देवलोकांश में जातक राजा, अधिक भूमि एवं अचल सम्पत्ति का स्वामी तथा महादानी (परोपकार करने वाला) होता है। पारावतांश में सम्पूर्ण शास्त्रों का विद्वान् होता है तथा उसकी बृहत् शिष्यमण्डली होती है। सिंहासनांश में जनता में लोकप्रिय नेता होता है। गोपुरांश होने पर जातक स्थिर धन-सम्पत्ति से युक्त अनेक विद्याओं एवं कलाओं में पारङ्गत होता है। उत्तमांश वाले जातक के पास सभी प्रकार की सम्पत्ति एकत्रित रहती है तथा पारिजातांश में जातक धनी होता है। स्वनवांश में उत्पन्न जातक यशस्वी, बुद्धिमान् तथा सभी सुखों से युक्त होता है। वर्गों की पारिजातादि संज्ञा का इस प्रकार का फल प्राचीन ऋषियों ने बताया है।।२८-३१।।

क्षणिकग्रहाः

लग्नं क्रमात्सार्धघटीद्वयं स्यान्मेषाद्दिनेशस्थितकोणभानाम् ।
राशीश्वरात्प्राणपदं क्रमेण घटीचतुर्थांशमुशन्ति तज्ज्ञाः ।।३२।।

चापाद्विपर्येति रविस्तु सार्धं घटीद्वयं रात्रिकरोऽपि तस्मात् ।
क्रमेण सार्धद्वयनाडिकालः कुजो वृषाद्व्यत्ययनाडिमात्रम् ।।३३।।
चापाद्बुधो व्यत्ययनाडिमात्रं मीनादधः पञ्चघटीन्द्रपूज्यः ।
क्रमेण युग्माद्भृगुनन्दनस्तु घटीप्रमाणो दिननाथपुत्रः ।।३४।।
व्यत्यासमार्गेण घटीप्रमाणो मेषादगुः सार्धघटीयुगं स्यात् ।
मीनाच्छिखी तन्मदगो विलोमाच्छास्त्रान्तरे तत्फलमाहुरार्याः ।।३५।।

मेषादि राशियों के लग्न क्रमशः ढाई घटी के (दो आवृत्तियों में) होते हैं। सूर्य जिस राशि में स्थित है, उससे नवम राशिस्वामी से चतुर्थांश घटी (१५ पल) पर प्राणपद होता है। धनु राशि से विपरीत क्रम से ढाई घटी (२।३०) सूर्य एवं उसके पश्चात् ढाई घटी पर चन्द्रमा होता है। वृष राशि से विपरीत क्रम में (पीछे) नाडीमात्र (एक घटी) मङ्गल होता है। धनु से व्यत्यय (उलटे क्रम में) एक घटी मात्र बुध होता है। मीन से विपरीत ५ घटी पर गुरु होता है। मिथुन में क्रम से १ घटी पर शुक्र और उसके पश्चात् एक घटी प्रमाण से दिननाथपुत्र (शनि) होता है। मेष से विपरीत ढाई घटी प्रमाण राहु होता है तथा राहु से सप्तम केतु होता है। इनके फल अन्य ग्रन्थों में श्रेष्ठ आचार्यों द्वारा बताए गये हैं।।३२-३५।।

ग्रहाणां बालाद्यवस्थाकथनम्

बालाद्यवस्थाः क्रमशो ग्रहाणामोजे समे तद्विपरीतमाहुः ।
बालः कुमारोऽथ युवाऽथ वृद्धो मृतो लवानामृतुभिः क्रमेण ।।३६।।
बालाद्यवस्थानुगुणं व्रजन्ति तत्पाककाले दिननाथमुख्याः ।
ग्रहा समस्ता हि फलप्रदानं बलानुसारं कुरुते नराणाम् ।।३७।।

ग्रहों की बालाद्यवस्थायें विषम राशियों में ६-६ अंश के अन्त पर क्रमशः बाल, कुमार, युवा, वृद्ध तथा मृत— इस क्रम से होती हैं; परन्तु सम राशियों में यह क्रम उलटकर क्रमशः मृत, वृद्ध, युवा, कुमार तथा बाल हो जाता है। दशन्तदर्शाओं में सूर्यादि ग्रहों का फल उनकी अवस्थाओं के अनुकूल ही स्व-स्व बलानुसार घटित होता है।।३६-६७।।

राशीनां नामानि

मेषाजवस्तं प्रथमं क्रियश्च वृषोक्षगो तावुरिशुक्रभञ्च ।
बौधं नृयुग्मं जितुमं तृतीयं चान्द्रं कुलीरं तु चतुर्थराशिम् ।।३८।।
सिंहस्य कण्ठीरवलेपसंज्ञा पाथोनषष्ठी त्वबला च तन्वी ।
जूको वणिक् सप्तमतौलिसंज्ञः कौर्प्योऽष्टमं कौजमलेस्तु संज्ञाः ।।३९।।
जैवं धनुस्तौक्षिकचापसंज्ञं त्वाकेकरं स्याद्दशमञ्च चक्रम् ।
हृद्रोगकुम्भौ घटराशिसंज्ञे मीनो झषश्चातिमरिष्फसंज्ञः ।।४०।।

(१) मेष राशि के प्रथम, अज, वस्त, क्रिय— ये पर्यायवाची हैं। (२) वृष राशि के उक्ष, गो, तावुरि एवं शुक्रभ, (३) मिथुन के बौध, नृयुग्म, जितम एवं तृतीय, (४) कर्क के चान्द्र, कुलीर एवं चतुर्थ, (५) सिंह के कण्ठीरव एवं लेय और (६) पाथोन, षष्ठी, अबला, तन्वी— ये कन्या राशि के पर्यायवाची हैं। (७) तुला राशि के जूक, वणिक्, सप्तम तथा तौलि, (८) वृश्चिक राशि के कौर्प्य, अष्टम, कौज, अलि, (९) धनु राशि के तौक्षिक, चाप, (१०) मकर के आकेकर, दशम एवं चक्र, (११) कुम्भ के हृद्रोग एवं घट तथा (१२) मीन राशि के रिष्फ, झष एवं अन्तिम— ये पर्यायवाची हैं॥३८-४०॥

राशियों के इन पर्यायवाचियों के इनसे भी अधिक पर्याय हैं, जो कि निम्नवत् है—

मेष— संस्कृत में छाग, हन्यल (मारे जाने योग्य), रमः, भेडः, अरिषः; अरबी में हमुल, फारसी में बरह, अंग्रेजी में अरिस्।

वृष— संस्कृत में तूवरः, तुवरः, सौरभः, सौरभेयः, अरबी में सौर तथा बकर, फारसी में गाव तथा अंग्रेजी में टॉरस।

मिथुन— संस्कृत में युगलम्, युज्, युजः, यमलः, द्वन्द्व, द्वय, द्वौप्रकरः अरबी में जौजा, फारसी में दो पैकर तथा अंग्रेजी में जेमिनि।

कर्क— संस्कृत में कर्कटः, कर्काटम्, कर्कटकम्। इन्हीं शब्दों से अंग्रेजी के कैंसर, अरबी का सतनि तथा फारसी में खर्चंग शब्दों का निर्माण हुआ है।

सिंह— संस्कृत में केसरि, हरि. असत्, शीर्वि, असत्व। अरबी में असद, भारि फारसी में शेर तथा अंग्रेजी में लिओ कहते हैं।

कन्या— युवती, नारी, रमणी, तरुणी, सुशीला, शुषि, श्यामला, वर्ज्यजननी— ये संस्कृत पर्याय हैं तथा खुशे (फारसी), सुम्बुला (अरबी) तथा विर्गो (अंग्रेजी)।

तुला— संस्कृत में मसारः, धटः, महाजनीन, माहाजनीन, मानदण्डः, लीभारः, लीभारिकः, लीभारिन्, फारसी में तराजु, अरबी में मीजान तथा आङ्ग्ल भाषा में लिब्रा कहते हैं।

वृश्चिक— संस्कृत में अखर्बः, अखर्वः, वस्कराटिका, कष्टधूनः आदि; अरबी में अकरब, फारसी में कष्दुम् तथा अंग्रेजी में स्कॉरपिओ कहते हैं।

धनु— संस्कृत में क्षेपकः, सज्यः, कमनः, कोदण्डः, कार्मुकः, कासू आदि; अरबी में कौस, फारसी में कमान तथा अंग्रेजी में सेगिटारियस् कहते हैं।

मकर— संस्कृत में अमरधातृ, जग्धिः, क्षिप्रघूर्णः, कृकोदिलः, बुभुक्षु आदि; अरबी में जदी, फारसी में बोज़ तथा अंग्रेजी में केप्रीकॉर्नस।

कुम्भ— संस्कृत में दुलु, घटी, कलश, कलशगामिनि, उदञ्चनम्, आसवाहरः

उदकाहर, उद्रेकः आदि। अरबी में दलव, फारसी में दुलु तथा अंग्रेजी में एक्वारियस कहते हैं।

मीन— संस्कृत में मत्सी, धौति, धूति, पिशिता आदि तथा अरबी में हूत, फारसी में माही एवं अंग्रेजी में पिशेस कहा जाता है।

इस प्रकार राशियों के बहुत-से पर्यायवाची हैं। अन्य भाषाओं में जो नाम हैं, वे संस्कृत के ही अपभ्रंश हैं। विश्व की समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा है।

द्वादशभावानां संज्ञाकथनम्

होरा तनुर्मूर्त्युदयं शिरश्च वाग्वित्तकौटुम्बमथाक्षिसंज्ञम्।
सहोत्थदुश्चिक्यगलं तृतीयं शौर्यं च कर्णं सुखमम्बु बन्धुः ।।४१।।
रसातलं वै हिबुकं च वेश्म पातालहृद्वाहनमातृसंज्ञाः।
बुद्धिप्रभावात्मजमन्त्रसंज्ञं विवेकशक्ती उदरप्रदेशः ।।४२।।
रोगक्षतारिव्यसनं तु चोरस्थानं भवेद्विघ्नमिहाहुरार्य्याः।
चित्तोत्थकामो मदनश्च भर्तृस्थानं कलत्रं दधिसूपसंज्ञम् ।।४३।।
क्षीरं गुडं मूत्रककृच्छ्रनाम गुह्यं च रन्ध्रं मरणान्तकायुः।
धर्मो दया पैत्रिकभाग्यभं तु गुरुस्तपो लाभशुभार्जितानि ।।४४।।
आज्ञा च मानं दशमञ्च कर्म तदास्पदं खं धनलाभमायम्।
व्ययोऽन्त्यभं रिष्फविनाशसंज्ञं लग्नान्त्यखण्डः कथितो मुनीन्द्रैः ।।४५।।

ग्रन्थकार ने राशियों की भाँति ही भावों के पर्यायों को भी स्पष्ट किया है। क्रमशः भावगत संज्ञायें निम्नांकित हैं—

१. प्रथम भाव— इसे होरा, तनु, मूर्ति, उदर तथा शिर कहा जाता है।

२. द्वितीय भाव— यह वाक्, वित्त, कुटुम्ब और अक्षि नामों से ज्ञात होता है।

३. तृतीय भाव— यह सहोत्थ, दुश्चिक्य तथा गल नाम से सूचित होता है।

४. चतुर्थ भाव— शौर्य, कर्ण, सुख, अम्बु, बन्धु, हिबुक, रसातल, वेश्म (घर), पाताल, हृत्, वाहन, मातृ नामों से अभिप्रेत है।

५. पञ्चम भाव— बुद्धि, प्रभाव, आत्मज, मन्त्र, विवेक, शक्ति, उदर कहा जाता है।

६. षष्ठ भाव— इसकी संज्ञा रोग, क्षत, अरि (शत्रु), व्यसन, चोर स्थान तथा विघ्न है।

७. सप्तम भाव— इसे चित्तोत्थ, काम, मदन, स्त्रियों का भर्तृभाव और कलत्र, दधि, सूप कहते हैं।

८. अष्टम भाव— इस भाव को क्षीर, गुड, मूत्रकृच्छ्र, गोपन, रन्ध्र, मृत्यु, अन्तक और आयु कहते हैं।

९. नवम भाव— इस भाव के पर्याय धर्म, दया, पैतृक, भाग्य, गुरु, तप, लाभ, शुभ तथा अर्जित कहे गये हैं।

१०. दशम भाव— यह भाव आज्ञा, मान, दशम, कर्म, आस्पद तथा खं नामों से जाना जाता है।

११. एकादश भाव— इसकी संज्ञा लाभ तथा आय है।

१२. द्वादश भाव— इस भाव को मुनीश्वरों ने व्यय, अन्त्य, रिष्फ, विनाश और लग्नान्त्यखण्ड नामों से उच्चारित किया है।।४१-४५।।

दुःस्थानानि राशीनां दिवारात्रिबलमुदयकथनञ्च

दुःस्थाश्च नाशप्रभवा भवन्ति षष्ठाष्टरिष्फानुगतास्तथैव ।
उद्यन्ति पृष्ठेन वृषाजचापकुलीरनक्रा बलिनः सयुग्माः ।।४६।।
ते रात्रिकालेऽह्नि बलास्तु शेषाः शीर्षोदया मीनमुदेत्युभाभ्याम् ।
फलानुमानो कथिता मुनीन्द्रैः बलोदयाभ्यां च नभश्चराणाम् ।।४७।।

दुःस्थानों (६-८-१२) भावों में स्थित ग्रहों का प्रभाव नष्ट हो जाता है। इन राशियों में वृष-मेष-धनु-कर्क-मकर तथा मिथुन राशियाँ रात्रिबली तथा पृष्ठोदयी होती हैं। मीन राशि उभयोदयी तथा दिवाबली एवं रात्रिबली दोनों है। शेष सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक तथा कुम्भ— ये राशियाँ दिवाबली तथा शीर्षोदयी हैं। इस प्रकार से राशियों में स्थित ग्रहों का बलादि अनुमानित कर फलनिश्चय करना चाहिये। यह प्राचीन ऋषियों का कथन है।।४६-४७।।

अप्रकाशग्रहकथनम्

धूमोऽर्को विश्वभागश्रुतिभवनयुतो मण्डलाच्छोधितोऽसौ
पातः षड्राशियुक्तः परिधिरथ भसंशोधितश्चापनामा ।
शैलाशाभागयुक्तं धनुरथ च शिखी पञ्च ते त्वप्रकाशाः
प्रादुर्भावे च तेषां फलमिह कथितं जातकप्रश्नयोः स्यात् ।।४८।।

तात्कालिक सूर्य स्पष्ट में राश्यादि ४।१३°।२०'।०" जोड़ देने पर 'धूम' नामक ग्रह स्पष्ट होता है। इसी प्रकार धूम स्पष्ट को १२ राशि में घटाने पर 'पात' स्पष्ट होता है। पात में ६ राशि जोड़ने पर 'परिधि' स्पष्ट होता है। फिर मण्डल अर्थात् १२ राशि में से इस परिधि को घटाकर 'इन्द्रचाप' नामक ग्रह स्पष्ट होता है। इन्द्रचाप में केवल १७°।४० अंश जोड़ देने पर 'उपकेतु' या 'शिखी' नामक अप्रकाशक ग्रह स्पष्ट हो जाता है। इनके फल का विचार प्रश्न तथा जातक दोनों सन्दर्भों में किया जाता है।।४८।।

इति प्रकाशग्रहाः

◆

भावानां केन्द्रादिसंज्ञाकथनम्

व्योमास्तपातालविलग्नभानां वदन्ति नामानि मुनीन्द्रजाला: ।
तत्कण्टकं केन्द्रचतुष्टयं च वर्गोत्तमास्तत्स्वनवांशकास्तु ।।४९।।

ज्योतिष के आचार्यों द्वारा प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम भावों को कण्टक, केन्द्र तथा चतुष्टय कहा गया है। जो राशि लग्नकुण्डली में जिस भाव में हो, यदि वही नवांश कुण्डली में भी उसी भाव का प्रतिनिधित्व करती हो तो वह वर्गोत्तम होती है।।४९।।

विशेष— केन्द्रों की अन्य संज्ञा आत्मा, अत्ता, अप्पो तथा आपो भी है। ये आत्म-स्थान होते हैं। चर रशियों में पहला नवांश (३ अंश २० कला तक), स्थिर राशियों में पाँचवाँ नवांश (१६ अंश ४० कला तक) तथा द्विस्वभाव राशियों में नवें नवांश (२६ अंश ४० कला) के पश्चात् वर्गोत्तम होता है।

राशीनां बलकथनम्

जलचरपशुनरकीटा बन्धौ माने तनौ मदे चापि ।
क्रमशो भवन्ति वीर्या विगतबलास्तत्सप्तमे वाऽपि ।।५०।।

कर्क, वृश्चिक, मकर (उत्तरार्द्ध) तथा मीन— ये जल राशियाँ हैं। ये चतुर्थ स्थान में बली होती हैं; क्योंकि चतुर्थ स्थान जल का स्थान है। मेष, वृष, सिंह तथा मकर का पूर्वार्द्ध और धनु का उत्तरार्द्ध— ये चतुष्पद अर्थात् पशु राशियाँ होती हैं; जो दशम भाव में बली कही गई हैं। इसी प्रकार मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वार्द्ध— ये मनुष्य राशियाँ हैं, जो लग्न में बली होती हैं। कीटराशियाँ अर्थात् कर्क एवं वृश्चिक— सप्तम भाव में बली होती हैं। प्रत्येक राशि जिस स्थान में बली होती है, उससे सप्तम स्थान में पूर्ण निर्बल होती है।।५०।।

ग्रहाणामुच्चनीचादिकथनम्

मेषोक्षनक्राङ्गनकर्किमीनतुलाधरा: स्युर्दिनपात्स्वतुङ्गा: ।
अत्युच्चभागैर्नयनागदारमत्यामनासारनरै: क्रमेण ।।५१।।
सिंहोक्षवस्ताङ्गनचापतौलिकुम्भा भवन्त्युच्चसमानभावा: ।
मूलत्रिकोणानि भवन्ति तानि किञ्चिद्विहीनानि बलानि सूर्यात् ।।५२।।

सूर्य की उच्च राशि मेष, चन्द्र की वृष, मङ्गल की मकर, बुध की कन्या, गुरु की कर्क, शुक्र की मीन एवं शनि की तुला है। इन ग्रहों की परमोच्च स्थिति भी विभिन्न अंशों पर है। सूर्य मेष के १० अंश तक, चन्द्र वृष के ३ अंश तक, मङ्गल मकर के २८ अंश तक, बुध कन्या के १५ अंश तक, गुरु कर्क के ५ अंश तक, शुक्र मीन के २७ अंश तक एवं शनि तुला के २० अंश तक परमोच्च स्थिति में होता है। इसी प्रकार सूर्य सिंह में, चन्द्रमा वृष में, मेष का मङ्गल, कन्या का बुध, धनु का गुरु, तुला का शुक्र तथा कुम्भ का शनि मूल त्रिकोणस्थ कहलाता है। इन-इन राशियों में उक्त ग्रहों

की स्थिति, उच्चस्थिति से थोड़ी ही कम होती है॥५१-५२॥

विशेष— यहाँ श्लोकसंख्या ५१ में ग्रन्थकार ने अङ्कों का कथन जैमिनिसूत्र की वृद्धकारिका के अनुसार किया है, जिसके अनुसार क ख ग घ ङ, च छ ज झ— ये क्रमशः १ से लेकर ९ तक के अङ्कों को सूचित करते हैं। इसी प्रकार ट ठ ड ढ ण, त थ द ध— ये अङ्क भी क्रमशः १ से ९ तक की संस्था के सूचक होते हैं। फिर ५ तक की संख्या पवर्ग के पाँच अक्षरों से तथा य र ल व— इन अक्षरों से ४ तक की संख्या सूचित की गई है। श ष स ह— ये ५-८ अङ्कों के द्योतक हैं तथा सभी स्वर एवं न और ञ शून्य के वाचक होते हैं। फिर 'अङ्कानां वामतो गतिः' के अनुसार अङ्कों को पलटकर उनका अर्थ ग्रहण करते हैं। यथा—

कटपयवर्गभवैरिह पिण्डान्त्यैरक्षरङ्काः ।
नञि च शून्यं ज्ञेयं तथा स्वरे केवले कथितम् ॥

पुनश्च राशीनां बलकथनम्

दिवाबला मानुषराशयः स्यू रात्रौ बलाढ्याः पशवश्च कीटाः ।
सन्ध्याद्वये भ्रातृभवास्पदानां सषष्ठभानां तु चयेति संज्ञा ।।५३।।

नरराशियाँ दिन के समय बलयुक्त होती हैं, पशुराशियाँ रात्रि के समय बलवती होती हैं एवं कीट राशियाँ दोनों सन्ध्या समयों में बलवान होती हैं। तृतीय, षष्ठ, दशम और एकादश (३,६,१०,११) भावों को चय या उपचय भाव कहा जाता है॥५३॥

राशीनां वर्णकथनम्

रक्तः श्वेतः श्यामकान्तिश्च रक्तो धूम्रश्चित्रः कृष्णकान्तिः सुवर्णः ।
स्वर्णाभः स्यात्कर्बुरो बभ्रुवर्णः स्वच्छो वर्णो वर्णितो बुद्धिमद्भिः ।।५४।।

मेष राशि लाल रंग वाली, वृष राशि श्वेत वर्ण, मिथुन हरे रंग की, कर्क भी लालिमायुक्त, सिंह धूम्र वर्ण की, कन्या विचित्र वर्ण की (अनेक रंगों से मिलकर), तुला कृष्ण वर्ण, वृश्चिक स्वर्णकान्ति से युक्त, धनु पीले रंग वाली, मकर कर्बुर (चितकबरी), कुम्भ विडाल के वर्ण के तुल्य तथा मीन का रंग विद्वानों ने श्वेत बताया है॥५४॥

वेशिआदिसंज्ञाकथनम्

वेशिस्थानं सूर्ययुक्ताद्द्वितीयं चक्रार्द्धेऽस्मिन्मानमाहुर्मुनीन्द्राः ।
वेदघ्नं स्याद्बाणसंख्याधिकं तु वैलोम्याद्वा जूकराशेः क्रमेण ।।५५।।

सूर्य से द्वितीय भाव को वेशि कहते हैं (इसी प्रकार सूर्य से बारहवें भाव को वोशि कहते हैं)। बारह राशियों के राशिचक्र को भचक्र या चक्र कहते हैं। मण्डल भी इसी की संज्ञा है। इसके पूर्वार्द्ध और परार्द्ध दो भाग होते हैं। मेषादि ६ राशियाँ पूर्वार्द्ध तथा तुलादि ६ राशियाँ उत्तरार्द्ध में गिनी जाती हैं। इसी प्रकार लग्न से षष्ठ भाव तक तथा सप्तम

से द्वादश भाव तक दृश्य चक्रार्द्ध तथा अदृश्य चक्रार्द्ध कहे जाते हैं। इसी प्रकार चतुर्थ भाव से नवम भाव तक तथा दशम से तृतीय भाव तक भी चक्रार्द्धों की गणना की जाती है। यह अनुलोम और विलोम दोनों क्रम से होती है; अत: विद्वानों में इस सम्बन्ध में मतभिन्नता है।।५५।।

ग्रहाणामुपाधय:

दिनेशचन्द्रौ नरपालमुख्यौ सेना कुजः सोमसुतः कुमारः ।
शुक्रेज्यपूज्यौ सचिवौ शनिश्च प्रेष्यस्तु तद्वृत्तिमुपैति जातः ।।५६।।

सूर्य राजा तथा चन्द्र रानी (महिषी), मङ्गल सेनापति, बुध राजकुमार, गुरु-शुक्र मन्त्री तथा शनि भृत्य (सेवक) है। जातक की कुण्डली में इनमें से जो ग्रह बलवान होगा। उसी के अनुसार उसके कृतित्व तथा व्यक्तित्व का निर्धारण किया जाता है।।५६।।

शरीरे ग्रहप्रभावकथनम्

आत्मा रविः शीतकरो मनस्तु सत्त्वं कुजो भाषणमब्जसूनुः।
वाचाम्पतिर्ज्ञानसुखे मदश्च शुक्रो भवेदर्कसुतस्तु दुःखम् ।।५७।।

सूर्य आत्मा, चन्द्रमा मन, मङ्गल सत्त्व, बुध वाणी, गुरु ज्ञान तथा सुख, शुक्र काम एवं शनि दु:ख का प्रतीक या कारक है। इस प्रकार शरीर के इन सभी तत्त्वों पर तत्तत् ग्रहों का अधिकार है।।५७।।

ग्रहाणां नामानि

सूर्यो हेलिर्भानुमान्दीप्तरश्मिश्चण्डांशुः स्याद्भास्करोऽहस्करश्च ।
अब्जः सोमश्चन्द्रमाः शीतरश्मिः शीतांशुः स्याद् ग्लौर्मृगाङ्कः कलेशः ।।५८।।
आरो वक्रश्चावनेयः कुजः स्याद्भौमः क्रूरो लोहिताङ्गोऽथ पापी ।
विज्ञः सौम्यो बोधनश्चन्द्रपुत्रश्चान्द्रिः शान्तः श्यामगात्रोऽतिदीर्घः ।।५९।।
जीवोऽङ्गिरा देवगुरुः प्रशान्तो वाचाम्पतीज्यत्रिदिवेशवन्द्याः ।
भृगूशनोभार्गवसूनवोच्छकाणौः कविर्दैत्यगुरुः सितश्च ।।६०।।
छायात्मजः पङ्गुयमार्कपुत्राः कोणो सितः सौरिशनी च नीलः ।
क्रूरः कृशाङ्गः कपिलाक्षदीर्घौ तमोसुरश्चेत्यगुसैंहिकेयौ ।।६१।।
राहुस्तु स्वर्भानुविधुन्तुदौ स्यात्केतुः शिखी स्याद्ध्वजनामधेयः ।
शनेः सुतः स्याद्गुलिकोऽथ मान्दिर्यमात्मजः प्राणहरोऽतिपापी ।।६२।।
प्राणस्त्वसुः प्राणपदस्य नाम पर्यायमन्यत्प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।
धूमो धूम्रो पातः पातकश्च परिधिस्तथा परिवेषोऽप्युक्तम् ।।६३।।
चापेन्द्रचापो धनुस्तथा च केतूपकेतौऽप्रकाशका ।।६४।।

(१) सूर्य के पर्याय— सूर्य, हेलि, भानुमान्, दीप्तरश्मि, चण्डांशु, भास्कर एवं

अहस्कर। (२) चन्द्र के पर्याय— अब्ज, सोम, चन्द्रमा, शीतरश्मि, शीतांशु, ग्लौ, मृगाङ्क तथा क्लेश। (३) मङ्गल के पर्याय— आर, वक्र, आग्नेय, कुज, भौम, क्रूर, लोहिताङ्ग एवं पापी। (४) बुध के पर्याय— वित्, ज्ञ, बोधन, चन्द्रपुत्र, चान्द्रि, शान्त, श्यामगात्र एवं अतिदीर्घ। (५) बृहस्पति के— जीव, अङ्गिरा, देवगुरु, प्रशान्त, वाचांपति (वाचस्पति), इज्य एवं त्रिदिवेशवन्द्य। (६) शुक्र के पर्याय— भृगु, उशना, भार्गवसूनु, अच्छ, काण, कवि, दैत्यगुरु एवं सित। (७) शनि के— छायात्मज, पङ्गु, यम, अर्कपुत्र, कोण, असित, सौरि, शनि, नील, क्रूर, कृशाङ्ग, कपिलाक्ष, दीर्घ एवं शनि। (८) राहु के— तम, असुर, अगु, सैंहिकेय, राहु, स्वर्भानु एवं विधुन्तुद। (९) केतु के— केतु, शिखी एवं ध्वज। (९) गुलिक के— शनिपुत्र, गुलिक, मान्दि, यमात्मज, प्राणहर एवं अतिपापी। (१०) प्राणपद के— प्राण, असु एवं प्राणपद। धूम को धूम्र भी कहते हैं। पात को पातक तथा परिधि को परिवेष भी कहा जाता है। इन्द्रचाप को चाप एवं धनु भी कहा जाता है। उपकेतु को केतु भी पुकारते हैं।।५९-६४।।

विशेष— यहाँ उपकेतु अप्रकाश ग्रह है। सूर्य को अंग्रेजी में Sun, फ्रेंच में Soleil (सोले), जर्मन भाषा में Sonne रुसी में सोलीत्स, अरबी में शम्श, फारसी में आफताब, लैटिन में Sol (सोल) एवं ग्रीकभाषा में अपोलो (Apollo) कहते हैं। चन्द्रमा को अंग्रेजी में मून (Moon), जर्मन में Mond, फ्रेंच में Lune, अरबी में क़मर, फारसी में माहताब तथा लैटिन भाषा में लूना (Luna) कहते हैं। मङ्गल को अरबी में मिरीख़, फारसी में बहराम, अंग्रेजी में Mars, फ्रैंच में मार (Mar) तथा जर्मन में मार्ज (Marz) कहते हैं। बुध को अरबी में अतारद्, फारसी में तीर, अंग्रेजी में Mercury एवं फ्रेंच में Mercure कहते हैं। बृहस्पति को अरबी में मुश्तरी, फारसी में पीरजीं, बिरजीं तथा अहुरमज़्द तथा अंग्रेजी में जुपीटर (Jupiter) कहते हैं। शुक्र को अरबी में ज़ुहर, फारसी में नाहीद तथा अंग्रेजी में Venus कहते हैं। शनि को अरबी में ज़ुहल, फारसी में केवान तथा अंग्रेजी में Saturn कहते हैं। राहु को अरबी में रास एवं अंग्रेजी में ड्रेगंसहेड कहते हैं। इसी प्रकार केतु को ड्रैगंसटेल (अंग्रेजी) तथा जनब (अरबी) कहते हैं।

ग्रहाणामाकारकथनम्

भानुर्युगात्प्राङ्कितदेहरक्तश्यामान्वित: पिङ्गलनेत्रकान्ति: ।
पित्तात्मकोऽयं समगात्रयष्टि: प्रतापयुक् सत्त्वगुणोल्परोमा ।।६५।।
सञ्चारयुक् सङ्कुचितार्थवाक्य: स्वल्पप्रदो दैविकबुद्धियुक्त: ।
चन्द्र: सिताङ्ग: समगात्रयष्टिर्वाग्मी परिध्यङ्गविवेकयुक्त: ।।६६।।
क्वचित्कृश: शीतलवाक्ययुक्त: सत्त्वाश्रयो वातकफानिलात्मा ।
कोपाग्निनेत्र: सितरक्तगात्र: पित्तात्मकश्चञ्चलबुद्धियुक्त: ।।६७।।
कृशाङ्गयुक्तामसबुद्धियुक्तो भौम: प्रतापी रतिकेलिलोल: ।
दूर्वादलाभ: शशिजोऽतिविद्वान् रजोगुण: सूनृतवाक्यजाल: ।।६८।।

हास्यप्रियः पित्तकफानिलात्मा सद्यः प्रतापी ननु पुंश्चलश्च ।
बृहस्पतिस्तुन्दिलगात्रयष्टिः कफात्मकः श्रेष्ठमतिः सुविद्वान् ।।६९।।
सत्त्वाश्रयः सर्वगुणाभिरामः पिङ्गाक्षमूर्धन्यकचाभिरामः ।
सुलोचनश्चास्फुजिदात्तकामः सुखी बली सुन्दरकान्तिपूर्णः ।।७०।।
आनीलवर्णाङ्कितरोमयुक्तो रजोगुणः सर्वगुणाभिरामः ।
जाल्मस्तु मन्दः कृशदीर्घगात्रः पिङ्गेक्षणः क्रूरकचाभिरामः ।।७१।।
स्थूलद्विजस्तामसबुद्धियुक्तो वातात्मको वाक्कठिनस्तु निन्द्यः ।
बलेन निश्चित्य वदेद् ग्रहाणां तत्प्राश्निके जन्मनि तद्गुणास्तु ।।७२।।

ग्रन्थकार ने प्रत्येक ग्रह की आकृति-प्रकृति (स्वभाव) गुणावगुणों का निरूपण निम्न प्रकार से किया है—

सूर्य— यह चतुरस्र शरीर वाला (चौकोर), रक्त और श्याम वर्ण से युक्त, पीली आँखों वाला, पित्तप्रकृति से युत, सम काया, पराक्रमी, सत्त्वगुणवान् तथा अल्प केशों वाला कहा गया है। साथ ही यह भ्रमणशील, संक्षेप में अपना मन्तव्य प्रकट करने वाला, अल्पदाता एवं दैवीय बुद्धि से युक्त होता है।

चन्द्र— यह श्वेत वर्ण का, सम शरीर, वार्तालाप में कुशल, गोलाकार अङ्गों वाला, विवेकी, कुछ अङ्गों में स्थूल तथा कुछ अङ्गों में कृश, मधुर वचनों का प्रयोग करने वाला, सत्त्वगुणी तथा कफ-वायु प्रकृति वाला होता है।

मङ्गल— क्रोध से जलते हुए नेत्रों वाला, श्वेत-रक्तमिश्रित रङ्ग के शरीर वाला, पित्तप्रकृति, चञ्चल मति, दुबली काया वाला, तमोगुणी बुद्धि वाला, प्रतापवान् तथा अतिशय कामुक होता है।

बुध— हरी दूब के समान रङ्ग वाला, अतिविद्वान्, रजोगुणयुक्त, सत्यवक्ता, हास्यप्रिय (मजाकिया), पित्त-कफ-वायु प्रकृति वाला, दूसरों पर तात्कालिक प्रभाव करने वाला तथा व्यभिचारी होता है।

गुरु— बड़ी तोंद वाला, कफप्रकृति, उत्तम बुद्धि, श्रेष्ठ विद्वान्, सत्त्व गुणसम्पन्न, सर्वगुणोपेत, पीत वर्ण के केशों तथा नेत्रों वाला एवं प्रसन्नमना होता है।

शुक्र— सुन्दर नेत्रों वाला, सुख-सुविधाओं से युक्त, आरामतलब, बलवान्, सुन्दर कान्ति वाला, नीले वर्ण की रोमावली से युक्त, रजोगुणी तथा सभी गुणों का अभिराम, निधान होता है।

शनि— धूर्त, दुर्बल शरीर, लम्बा-छरहरा, पीले नेत्र, क्रूर स्वभाव, बालों को सजाने वाला (चिकना रखने वाला), तामस बुद्धि, बड़े-बड़े दाँतों वाला, वात प्रकृति, कठोर वचन बोलने वाला तथा समाज में निन्दित होता है।

इस प्रकार जन्मकुण्डली तथा प्रश्नकुण्डली में जो ग्रह बलवान हो, उसके अनुसार आकृति तथा स्वभाव का वर्णन करना चाहिये॥६५-७२॥

ग्रहाणां जातयः

विप्रौ भवेतां गुरुदानवेज्यौ दिनेशभौमौ नरपालमुख्यौ ।
सोमश्च विट्वैश्यकुलप्रसूतो दिनेशपुत्रस्तु चतुर्थवर्णः ।।७३।।
चाण्डालजातिस्त्वथ सैंहिकेयः केतुश्च जात्यन्तरमन्त्रमान्दिः ।।७४।।

गुरु तथा शुक्र ये दोनों ब्राह्मण जाति हैं। सूर्य तथा मङ्गल क्षत्रिय जाति हैं। चन्द्र तथा शुक्र वैश्य हैं। शनि शूद्र, राहु चाण्डाल, केतु वर्णसङ्कर तथा मान्दि मान्त्रिक (जादूगर) होता है॥७३-७४॥

ग्रहाणां वर्णदेवतादिशादिकथनम्

रक्तः श्वेतोऽतिरक्तो हरितकनकरुक् चित्रनीलास्तु नाथा
वह्न्यंभस्त्वग्निजातो हरिसुरगणराडिन्द्रभार्याब्जजाताः ।
भानुः काव्यो धराभूरगुशनिशशिनः सोमपुत्रामरेज्या
ज्ञेयास्त्विन्द्रादिनाथाः क्रियवृषमिथुना राशयस्ते सचान्द्राः।।७५।।

ग्रहों के रङ्ग— सूर्य का रक्त, चन्द्र का श्वेत, मङ्गल का अतिरक्त, बुध का हरा, गुरु का सुनहला, शुक्र का चित्रित तथा शनि का नील वर्ण है।

ग्रहों के स्वामी (देवता)— सूर्य के अग्नि, चन्द्र का जल, मङ्गल का अग्निजात, बुध के विष्णु, गुरु के इन्द्र, शुक्र की इन्द्राणी तथा शनि के ब्रह्मा देवता हैं।

ग्रहों की दिशायें— सूर्य की दिशा पूर्व, शुक्र की अग्निकोण, मङ्गल की दक्षिण, राहु की नैर्ऋत्य, शनि की पश्चिम, चन्द्रमा की वायव्य, बुध की उत्तर तथा गुरु की ईशान दिशा हैं।

राशियों की दिशायें— मेष, सिंह, धनु पूर्व की; वृष, कन्या, मकर दक्षिण की; मिथुन, तुला कुम्भ पश्चिम की तथा कर्क, वृश्चिक, मीन उत्तर दिशा की राशियाँ हैं॥७५॥

ग्रहाणां लिङ्गभेदशारीरिकधात्वादिकथनम्

क्षीणेन्दुभूसूनुदिनेशमन्दाः पापा बुधस्तत्सहितस्तु पापः ।
नपुंसकौ सौम्यदिनेशपुत्रौ शशाङ्कशुक्रौ युवती च शेषाः ।।७६।।
नरग्रहा भानुकुजामरेज्याः सूतौ बलात्तत्प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।
भौमस्य मज्जाऽपि वसा गुरोस्तु शुक्रं भृगोस्त्वक् शशिनन्दनस्य ।।७७।।
चन्द्रस्य रक्तं दिनपस्य चास्थिः स्नायुः शनेर्धातुवशादुपाधिः ।
तद्धातुकोपान्मरणं प्रयाति रन्ध्रस्थितानामिह खेचराणाम् ।।७८।।

क्षीण चन्द्र, मङ्गल, सूर्य, शनि तथा पापग्रह के साथ बुध— ये पापग्रह होते हैं।

शेष पूर्णचन्द्र, निष्पाप बुध, गुरु तथा शुक्र— ये शुभग्रह हैं। बुध तथा शनि नपुंसक ग्रह हैं एवं चन्द्र तथा शुक्र स्त्रीलिङ्ग है। शेष सूर्य, मङ्गल तथा गुरु पुरुष ग्रह हैं। जन्मसमय में बली ग्रह के अनुसार फल होता है। मङ्गल की धातु मज्जा, गुरु की धातु वसा, शुक्र की वीर्य, बुध की धातु त्वचा, चन्द्र की धातु रक्त, सूर्य की धातु अस्थि तथा शनि ग्रह की धातु स्नायु है। जन्मसमय में जो ग्रह अष्टम भाव में स्थित होता है, उस ग्रह की धातु में विकृति से जातक की मृत्यु होती है॥७६-७८॥

ग्रहाणां वासस्थानानिवासांसि च

देवस्थानं भास्करस्याम्बुवासं चन्द्रस्याग्निस्थानमङ्गारकस्य ।
क्रीडास्थानं सोमपुत्रस्य कोशस्थानं जीवस्येवामाहुर्भृगोऽस्तु ।
सुप्तिस्थानं भानुजस्योत्करन्तु सर्पस्थानं सैंहिकेयस्य चैवम् ।।७९।।
जीर्णं शनेर्वासरनायकस्य स्थूलं गुरोर्मध्यमकं कवेश्च ।।८०।।
काठिन्यमब्जस्य तु नूतनं वित् क्लिन्नं कुजस्याग्निहतं च वस्त्रम् ।
कन्या फणीन्द्रस्य तु चित्ररूपा केतोर्महाछिद्रयुता विशेषात् ।।८१।।

अब इन श्लोकों में सूर्यादि ग्रहों के वासस्थान तथा वस्त्र कहे गए हैं। ग्रहों के वास स्थान इस प्रकार हैं— सूर्य का देवस्थान, चन्द्र का जलस्थान, मङ्गल का अग्निस्थान (रसोई आदि यज्ञशाला), बुध का क्रीडास्थान (थियेटर-स्टेडियम इत्यादि), गुरु का कोशस्थान बैंक, खजाना, तिजोरी, स्ट्राँगरूम), शुक्र का शयनस्थान (सोने वाला कमरा), शनि का उत्कर (मलबे का ढेर टीला, भूसा या चारे का ढेर, लकड़ी-ईंट आदि का चट्टा), राहु का सर्पस्थान (बांबी)। केतु का भी स्थान राहु की भाँति ही होता है। शनि का घर एवं वस्त्र जीर्ण (फटा-पुराना), सूर्य का वस्त्रादि मोटा, गुरु का मध्यम आकार वाला, शुक्र का भी मध्यम, चन्द्रमा का कठोर, बुध का नया, मङ्गल का टूटा-फटा-जला हुआ, राहु का गुदड़ी, केतु का विचित्र रूप छेदों वाला वस्त्र होता है॥७९-८१॥

ग्रहाणां पार्थिवधातूनां वस्त्रभेदानाञ्च कथनम्

ताम्रं दिनेशस्य निशाकरस्य मणिर्हिरण्यं तु धरासुतस्य ।
शुक्तिर्विदो देवगुरोस्तु रौप्यं मुक्ता भृगोरायसमर्कसूनोः ।।८२।।
राहोस्तु शीशं शिखिनस्तु नैल्यं धरामणिस्तत्कथयन्ति तज्ज्ञाः ।
पीताम्बरं देवगुरोर्भृगोस्तु क्षौमाम्बरं भास्करमिन्द्रगोपम् ।।८३।।
शुक्लं क्षामं रात्रिनाथस्य चान्द्रेः श्यामं क्षौमं रक्तचित्रं कुजस्य ।
वस्त्रं चित्रं पट्टवस्त्रं शनेस्तु नीलं राहोर्जीर्णचित्रान्वितञ्च ।।८४।।
रूपान्वितं तद्वसनञ्च केतोर्बलान्वितानां तु वदेद् ग्रहाणाम् ।।८५।।

सूर्य की खनिज धातु ताम्र, चन्द्रमा का चन्द्रमणि, मङ्गल का स्वर्ण, बुध की शुक्ति, गुरु की चाँदी, शुक्र का मोती, शनी का लौह, राहु का सीसा एवं केतु का

नीलाञ्जन ज्योतिषियों द्वारा बतायी गई हैं।

अब ग्रहों के वस्त्रों का प्रकार कहते हैं— गुरु का पीताम्बर, शुक्र का श्वेत वस्त्र, सूर्य का बीरबधूटी के रङ्ग का, चन्द्रमा का श्वेत वस्त्र, बुध का हरित ऊनी वस्त्र, मङ्गल का रक्त वर्ण विचित्र, शनि का छींटदार, राहु का पुराना नील वस्त्र चितकबरा-सा एवं केतु का विभिन्न वर्ण का बलवान ग्रह के उक्त धातु-वस्त्र जन्म तथा प्रश्नकुण्डली में कहना चाहिये॥८२-८५॥

ग्रहाणां ऋतवः

भृगोर्वसन्तः क्षितिसूनुभान्वोर्ग्रीष्मः शशाङ्कस्य ऋतुः प्रवर्षः।
विदः शरद्देवगुरोस्तु हैम्नो ऋतुः शनेः स्याच्छिशिरस्तु कालः।।८६।।

शुक्र ग्रह की ऋतु वसन्त (२० फरवरी से २० अप्रैल तक), मङ्गल-सूर्य की ग्रीष्म (२१ अप्रैल से २० जून तक), चन्द्रमा की वर्षा (२१ जून से २० अगस्त तक), बुध की शरद् (२१ अगस्त से २२ अक्टूबर तक) बृहस्पति की हेमन्त (२३ अक्टूबर से २२ दिसम्बर तक) तथा शनि की शिशिर (२३ दिसम्बर से १९ फरवरी तक) कही गई है॥८६॥

विशेष— ऋतुओं का विचार सायन सूर्य की राशियों तथा वैदिक मधु, माधव मासों के अनुसार किया जाना समीचीन है। सम्प्रति भारतीय राष्ट्रीय पञ्चाङ्ग में इसी प्रकार से ऋतुओं का उल्लेख रहता है।

ग्रहाणां षड्रसाः फलपाकसमयश्च

द्रेष्काणपैस्तद्गतवस्तु वाच्यं प्रश्ने प्रसूतावपि नष्टसंज्ञे।
भानोः कटुर्भूमिसुतस्य तिक्तं सोमस्य तावल्लवणं विदस्तु।।८७।।
मिश्रीकृतं वस्तु सुरेज्यभृग्वोर्माधुर्यमम्लं च शनेः कषायः।
ऋतुत्रयं वासरनायकस्य क्षणं शशाङ्कस्य दिनं कुजस्य।।८८।।
विदो ऋतुर्देवगुरोस्तु मासः पक्षो भृगोर्वत्सरमर्कसूनोः।
अष्टौ तु मासास्तुहिनांशुशत्रोः केतोस्तु मासत्रयमेव कालः।।८९।।

प्रश्नकालिक तथा जन्मकालिक नष्ट वस्तु के विषय में द्रेष्काणेश[1] के अनुसार विवेचन करना चाहिये।

अब ग्रहों के रस बतलाते हैं। सूर्य का रस कटु अर्थात् मिर्च-जैसा चरपरा, मङ्गल का तीखा (नीम-जैसा), चन्द्रमाँ का नमकीन, बुध का रस अनेक प्रकार का (मिश्रित), बृहस्पति का मीठा, शुक्र का खट्टा तथा शनि का कसैला होता है।

---

[1] द्रेष्काण से नष्ट वस्तु तथा चोर के विचार के लिये इस टीकाकार की षट्पञ्चाशिका हिन्दी-टीका देखिये। प्रकाशक– चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

ग्रहों के कार्यसिद्धि (फल प्रदान करने) का समय— सूर्य का ६ मास, चन्द्रमा का एक मुहूर्त अर्थात् दो घड़ी (अड़तालीस मिनट), बुध का दो मास, गुरु का एक मास, शुक्र का एक पक्ष (१५ दिन), शनि का एक वर्ष, राहु का आठ मास तथा केतु तीन मास में कार्य के परिणाम को प्रकट करता है॥८७-८९॥

ग्रहाणां धातुमूलजीवकथनम्

धातुग्रहा राहुशनीन्दुभौमा मूलग्रहौ शुक्रदिनाधिनाथौ ।
जीवग्रहौ जीवशशाङ्कसूनू मेषादि दस्रादि यथाक्रमेण ।।९०।।

राहु, शनि, चन्द्र तथा मङ्गल— ये धातुसूचक ग्रह हैं। सूर्य तथा शुक्र मूलसंज्ञक ग्रह हैं तथा शेष दोनों ग्रह बुध तथा गुरु जीवसंज्ञक वस्तुओं के सूचक हैं। मेषादि राशियाँ भी क्रम से धातु-मूल-जीवसंज्ञक होती हैं। इसी प्रकार अश्विन्यादि २७ नक्षत्र भी अनुक्रमपूर्वक धातु-मूल-जीव संज्ञक होते हैं॥९०॥

धातुसंज्ञक राशियाँ— मेष, कर्क, तुला, मकर।
मूलसंज्ञक राशियाँ— वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ।
जीवसंज्ञक राशियाँ — मिथुन, कन्या, धनु, मीन।
धातुसंज्ञक नक्षत्र — अश्विनी, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, विशाखा, मूल, श्रवण, पूर्वभाद्र।
मूलसंज्ञक नक्षत्र — भरणी, मृगशिरा, पुष्य, पूर्वफाल्गुनी, चित्रा, अनुराधा, पूर्वाषाढ़ा, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद।
जीवसंज्ञक नक्षत्र — कृत्तिका, आर्द्रा, श्लेषा, उत्तराफाल्गुनी, स्वाती, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़, शतभिषा, रेवती।

ग्रहाणामूर्ध्वादिदृष्टिकथनम्

अथोर्ध्वदृष्टी दिननाथभौमौ दृष्टिः कटाक्षेण कवीन्दुसून्वोः ।
शशाङ्कगुर्वोः समभागदृष्टिस्त्वधोक्षिपातस्त्वहिनाथशन्योः ।।९१।।

सूर्य और भौम ऊर्ध्व दृष्टि वाले, बुध तथा शुक्र तिरछी दृष्टि से युक्त, चन्द्र और गुरु सम दृष्टि वाले तथा राहु और शनि की अधोदृष्टि कही गई है॥९१॥

ग्रहाणां भावदृष्टिकथनम्

पश्यत्यसौ भानुसुतस्तृतीयं मानं च पूर्णं चतुरस्रमारः ।
जीवस्त्रिकोणं मदनं च सर्वे पश्यन्ति दृष्ट्या चरणप्रवृद्ध्या ।।९२।।

शनि जिस स्थान पर स्थित रहता है, उससे तीसरे तथा दसवें भाव को पूर्ण दृष्टि से देखता है। इसी प्रकार मङ्गल चौथे तथा आठवें भाव को, गुरु पाँचवें एवं नवें भाव को पूर्ण दृष्टि से देखता है। शेष सभी ग्रह अपने स्थान से सप्तम भाव को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं॥९२॥

ग्रहाणां नैसर्गिकमैत्रीकथनम्

भानोस्तु मित्राणि कुजेन्दुजीवाः समो बुधः शुक्रशनी विपक्षौ ।
इष्टौ शशाङ्कस्य दिनेशसौम्यौ शेषाः समाः भूमिसुतस्य मित्रम् ।।९३।।
रवीन्दुजीवाश्च बुधश्च शत्रुः समौ दिनेशात्मजदानवेज्यौ ।
सौम्यस्य मित्रे दिननाथशुक्रौ शेषाः समा रात्रिकरः सपत्नः ।।९४।।
शुक्रेन्दुजौ देवगुरोः सपत्नौ मित्राणि सर्वे रविजस्तु मध्यः ।
शनीन्दुजाविष्टकरौ भृगोस्तु शेषाः सपत्नाश्च समौ कुजेज्यौ ।।९५।।
सौरस्य मित्रे भृगुपुत्रसौम्यौ समो गुरुस्ते निखिलाः सपत्नाः ।
राहोस्तु मित्राणि कवीज्यमन्दाः केतोस्तथैवात्र वदन्ति तज्ज्ञाः ।।९६।।

यहाँ पर ग्रहों के मित्र, शत्रु, सम का विवेचन किया गया है। **सूर्य** के मङ्गल, चन्द्र और गुरु मित्र, बुध सम (न मित्र न शत्रु) तथा शुक्र और शनि शत्रु हैं। **चन्द्रमा** के सूर्य, बुध मित्र हैं, शेष सभी ग्रह सम हैं, इसका शत्रु कोई ग्रह नहीं माना जाता। **भौम** के सूर्य, चन्द्र, गुरु मित्र ग्रह हैं एवं बुध शत्रु है, शुक्र तथा शनि सम हैं। **बुध** के सूर्यशुक्र मित्र हैं, चन्द्र शत्रु है एवं अन्य शेष ग्रह सम हैं। **गुरु** के बुध और शुक्र शत्रुग्रह हैं, शनि सम हैं तथा शेष ग्रह मित्र हैं। **शुक्र** के बुध और शनि मित्र ग्रह हैं, मङ्गल-गुरु सम है तथा अन्य शत्रु हैं। **राहु-केतु** के गुरु-शुक्र-शनि मित्र हैं एवं अन्य ग्रह शत्रु हैं— ऐसा ज्योतिष के आचार्य कहते हैं।।९३-९६।।

नैसर्गिक मैत्रीचक्र

सूर्य	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	ग्रहाः
चं. मं. गु.	सू० बु०	सू०चं० गु०	सू०शु०	सू०मं० चं.	बु०श०	शु०बु०	गु०शु० श०	मित्राणि
बु०	मं०गु० शु०श०	शु०श०	मं०गु० श०	श०	मं०गु०	गु०	-	समाः
शु०श० रा०	रा०	बु० रा०	चं०	बु०शु०	सू०चं०	सू०चं० मं०	सू०चं० मं०बु०	शत्रवः

अन्य ग्रन्थों से इस नैसर्गिक मैत्री में कुछ भिन्नता है।

तात्कालिक मैत्री-पञ्चधा मैत्री च कथनम्

भवन्ति तात्कालिकमित्रभूताः सर्वे च वाक्सोदरबन्धुयुक्ताः ।
स्वात्स्वात्क्रमाद्व्युत्क्रमतस्तथैवमन्यस्थितास्तत्समयारिभूताः ।।९७।।
तत्कालमित्रं तु निसर्गमित्रं द्वयं भवेत्तत्त्वधिमित्रसंज्ञम् ।
तथैव शत्रोरधिशत्रुसंज्ञमेकत्र शत्रुः समतामुपैति ।।९८।।

प्रत्येक ग्रह से आगे-पीछे, तीन-तीन स्थान (द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ तथा दशम,

एकादश, द्वादश) कुल ६ स्थानों में अवस्थित ग्रह उस ग्रह के तात्कालिक मित्र होते हैं। इसी प्रकार उस ग्रह के साथ अवस्थित ग्रह तथा शेष ५,६,७,८,९— इन स्थानों में अवस्थित ग्रह तात्कालिक रूप से शत्रु होते हैं।

अब पञ्चधा मैत्री कहते हैं। नैसर्गिक मैत्री तथा तात्कालिक मैत्री दोनों को मिलाकर पञ्चधा मैत्री होती है।

१. दोनों प्रकार की मैत्री से जो ग्रह मित्र होते हैं वे ग्रह **अधिमित्र** कहलाते हैं।
२. दोनों प्रकार की शत्रुता वाले ग्रह को **अधिशत्रु** कहा जाता है।
३. एक स्थान पर मित्र और दूसरे स्थान पर शत्रु होने पर वह ग्रह **सम** होता है।
४. एक प्रकार से सम और दूसरे प्रकार से मित्र होने पर वह ग्रह **मित्र** कहलाता है।
५. एक प्रकार से सम और दूसरे प्रकार से शत्रु होने पर वह ग्रह **शत्रु** कहलाता है।

ग्रहाणां स्थानबलकथनम्

स्वोच्चे सुहृद्भे स्वनवांशकेऽपि स्वर्क्षे दृकाणे द्विरसांशकेऽपि ।
कलांशकाद्यंशयुतेऽपि चैवमुपैति तत्स्थानबलं ग्रहेन्द्रः ।।९९।।

प्रत्येक ग्रह अपनी उच्च राशि में, मित्र राशि में, स्वनवांश में, अपनी राशि में, अपने द्रेष्काण में, अपने द्वादशांश में तथा षोडशांश में होने पर स्थानबली कहलाता है। इसके विपरीत नीच राशि, शत्रुराशि, नवांशादि में शून्यबली होता है। इनके मध्य में स्थित ग्रह का अनुपात से फल समझना चाहिये।।९९।।

ग्रहाणां दिग्बल-कालबलकथनम्

लग्ने बुधेज्यौ बलिनौ तु पूर्वे वीर्ये यमे तद्दशमेऽर्कभौमौ ।
कामेऽर्कसूनुर्बलवाञ्जलेशे बन्धौ निशानाथकवी कुबेरे ।।१००।।
तत्सप्तमे दिग्बलशून्यमाहुस्तदन्तरे चेत्त्वनुपात एव ।
स्वमासहोरादिनवत्सरेषु वीर्यान्विता भानुमुखा ग्रहेन्द्राः ।।१०१।।

बुध तथा गुरु— ये दोनों ग्रह लग्न अर्थात् पूर्व दिशा में दिग्बली होते हैं। सूर्य तथा मङ्गल दक्षिण दिशा में अर्थात् दशम भाव में दिग्बली होते हैं। सप्तम भाव पश्चिम दिशा है, इसमें शनि को दिग्बल प्राप्त होता है तथा उत्तर दिशा अर्थात् चतुर्थ भाव में चन्द्र तथा शुक्र दिग्बली होकर बल प्राप्त करते हैं।

जो ग्रह जिस भाव में स्थित होकर बलवान (दिग्बली) होता है, उससे सप्तम स्थान में जाने पर वह दिग्बल से शून्य होता है और अन्य स्थानों में अनुपात से बल जानना चाहिये। सभी ग्रह स्वयं के मास, काल, होरा, दिन तथा वर्ष में कालबल से युक्त होते हैं।।१००-१०१।।

रात्रौ बलाढ्या शनिचन्द्रभौमास्त्रयो ग्रहाश्चाह्नि रवीज्यशुक्राः ।
सदा बली वित्सितकृष्णपक्षे सौम्यास्तदन्ये बलिनः क्रमेण ।।१०२।।

शुभेक्षिताः पूर्णबलान्वितास्तु दृष्टेर्बलं पापखगैरदृष्टः ।
सौम्यायने त्वतिबली दिवसाधिनाथश्चन्द्रस्तदन्यसमये बलपूर्णयुक्तः ।।१०३।।

शनि, चन्द्र और मङ्गल— ये ग्रह रात्रि में बली होते हैं। सूर्य, गुरु, शुक्र— ये तीनों ग्रह दिन में तथा बुध प्रत्येक समय बली होता है। शुक्ल पक्ष में शुभ ग्रह तथा कृष्ण पक्ष में पापग्रह बलवान होते हैं। जो ग्रह शुभग्रहों से देखे जाते हैं, अर्थात् पाप दृष्टि से रहित होते हैं, वे पूर्ण बली होते हैं। सूर्य उत्तरायण में बलवान होता है तथा चन्द्रमा इससे अन्य (दक्षिणायन) होने पर बली होता है।।१०२-१०३।।

ग्रहाणां नैसर्गिकबलकथनम्

मन्दारसौम्यगुरुशुक्रशशाङ्कसूर्या ।
नैसर्गिकाख्यबलिनः खचराः क्रमेण ।।१०४।।

शनि, मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र तथा सूर्य— ये सातों ग्रह उत्तरोत्तर बलवान होते हैं। भाव यह है कि शनि से अधिक मङ्गल, मङ्गल से अधिक बुध— इस प्रकार सूर्य सभी ग्रहों में नैसर्गिक रूप से सर्वाधिक बली होता है।।१०४।।

ग्रहाणां चेष्टाबलकथनम्

वक्रान्विताः क्षितिसुतप्रमुखाः समस्ता ।
युद्धे जयी जलपदिग्गतकान्तियुक्तः ।।१०५।।

भौमादि पञ्चतारा ग्रहों में जो वक्री हो, उत्तरी शर का होकर युद्ध में जयी हो, उसकी कान्ति (चमक) अधिक हो तब वह चेष्टाबली माना जाता है।।१०५।।

लग्नलग्नेशयोः बलम्

लग्नस्य वीर्यमधिपस्य बलं तु सर्वम् ।
मुख्यं वदन्ति खलु षड्विधवीर्यमेवम् ।।१०६।।
लग्नं नृभं चेद्बलमत्र रूपमाब्जं चतुष्पाद्धमथार्धसंज्ञम् ।
चेत् कीटलग्नं किमपीह नास्ति स्फुटं विलग्नस्य बलं तदाहुः ।।१०७।।

सभी ग्रहों के छः प्रकार के बलों (षड्बल) में लग्न तथा लग्नेश का बल मुख्य है। यदि लग्न राशि (मिथुन, तुला, कन्या, कुम्भ तथा धनु का उत्तरार्ध) हो तो बल एक (६० कला) प्राप्त होता है। यदि जलचर या चतुष्पद राशि लग्न (मीन, मेष, वृष, सिंह, धनु का पूर्वार्ध, मकर) हो तो आधा बल (३० कला) प्राप्त होता है। कीटराशि लग्न (कर्क-वृश्चिक) हो तो शून्यबल प्राप्त होता है।।१०६-१०७।।

ग्रहाणां वाञ्छितषड्बलप्रमाणम्

सार्द्धानि षट् तीक्ष्णकरो बलीयाँश्चन्द्रस्य षट्पञ्च वसुन्धराजः ।
सप्तेन्दुसूनोरपि षड्गुरोश्च सार्द्धानि पञ्चाऽथ सितो बलीयान् ।।१०८।।

मन्दस्तु पञ्चैव च षड्बलानां संयोग एवापरथान्यथास्युः ।
रूपत्रयं बलमुशन्त्यथ पादहीनं स्थानं तु दिग्बलमथांघ्रिविहीनरूपम् ।।१०९।।
ऋत्वंशहीनबलमत्र तु चेष्टिताख्यमष्टांशहीनयुगमेव तु कालवीर्यम् ।
पूर्णाबला रविशशाङ्कसुतामरेज्याश्चार्धं बलं त्वयनजं हि पृथग्विभागे ।।११०।।

सूर्य को षड्बल में बली होने पर ६।३०, चन्द्रमा को ६, मङ्गल को ५, बुध को ७, बृहस्पति को ६, शुक्र को ६।३० तथा शनि को ५ विश्वा बल प्राप्त होता है। पूर्ण बली न होने पर अनुपात से बल कम होता है। तात्पर्य यह है कि जब सूर्य का षड्बल योग ६।३० (साढ़े छः रूप) हो तब सूर्य बली माना जाता है, तथैव ६ रूप बल प्राप्त कर चन्द्रमा बली होता है। यह तो षड्बल के योग में बलनिर्णय बताया है। स्थानबल में २°।४५', दिग्बल में १°।४५' चेष्टाबल में ५०', काल-बल में ३°।३०' प्रत्येक ग्रह के लिये प्राप्त करना आवश्यक है। अयनबल में जब सूर्य-बुध-गुरु बली होते हैं तो ०°। ३०' बल प्राप्त होता है॥१०८-११०॥

रसांशहीनं दिशि वीर्यमाहुः स्थाने तु पादाधिकयुग्मरूपम् ।
कालं बलं त्र्यंशविहीनयुग्ममर्द्धं भवेच्चेष्टितवीर्यमेव ।।१११।।
त्र्यंशोनमेकं त्वयनं बलं स्याच्छीतांशुदेवेन्द्रसपत्नगुर्वोः ।
चेष्टाबलं त्र्यंशविहीनमेकं साष्टांशरूपं समये बलं स्यात् ।।११२।।
दिश्यर्द्धरूपं बलमायनं च त्र्यंशं भवेत्स्थानिकमर्द्धयुग्मम् ।
दिनेशपुत्रस्य वसुन्धरायाः सूनोः क्रमाद्वीर्यमुदाहरन्ति ।।११३।।

दिग्बल में जब किसी ग्रह को ५० कला ग्रह प्राप्त हो तब बली मांनना चाहिये, स्थान बल में २ अंश १५ कला बल, कालबल में १ अंश ४० कला बल, चेष्टाबल में ३० कला बल, अयन बल में ४० कला बल, अन्य ग्रहों को तथा चन्द्र-गुरु-शुक्र को चेष्टा बल में ४० कला बल प्राप्त होना चाहिये। काल बल में इन ग्रहों को १ अंश, ७ कला, ३० विकला एवं अयनबल में १ अंश, ३० कला प्राप्त होना चाहिये। स्थान-बल में अन्य ग्रहों को २० कला बल तथा शनि, मङ्गल को २ अंश ३० कला बल कहा गया है॥१११-११३॥

ग्रहाणां भावबलकथनम्

आरोहवीर्याः प्रभवन्ति भावसमानपर्यन्तमतश्च्युताः स्युः ।
स्वोच्चे सुहृत्क्षेत्रगते ग्रहेन्द्रे षड्भिर्बलैर्मुख्यबलान्वितोऽपि ।।११४।।
सन्धौ स्थितः सन्नफलः प्रदिष्टश्चिन्त्यं विशेषेण दशाविपाके ।
प्राणत्रिकोणं प्रवदन्ति लग्नं तदेव मान्द्यान्वितराशिकोणे ।।११५।।
मान्द्यंशकात्कोणगतं विलग्नं तदंशकामस्थितराशिकोणे ।
शशाङ्कसंयुक्तभकोणराशौ तदंशकात्तन्मदकोणभे वा ।।११६।।
प्रश्नेऽपि तज्जन्मसमानकाले लग्नस्य निश्चायकमत्र तज्ज्ञाः ।
तयोर्बलेनापि विकल्पमाहुर्लग्नाब्जयोरित्थमुदाहरन्ति ।।११७।।

किसी भी भाव में स्थित ग्रह यदि भावस्पष्ट के अंशों से कम अंशों पर है, तो वह आरोहवीर्य कहलाता है। भाव के अंशों पर ग्रह होने पर भाव सम्पूर्ण फल देता है; परन्तु जब वह ग्रह भावस्पष्ट के अंशों से अधिक अंशों पर होता है, तो उसे अवरोही कहा जाता है। भाव की आगे या पीछे की सन्धियों में स्थित ग्रह कोई फल नहीं देता। भले ही वह उच्च राशि, स्वराशि, मित्रराशि या षड्बल से युक्त हो। भाव के अनुसार ही दशा में सम्पूर्ण या उससे अल्प फल प्राप्त होते हैं। प्राणपद से त्रिकोण में लग्न होना चाहिये अथवा मान्दि से त्रिकोण में लग्न होना चाहिये, अथवा मान्दि (गुलिक) की राशि से त्रिकोण से सप्तम स्थानगत लग्न हो सकता है। चन्द्र का निश्चय भी लग्न की भाँति विकल्प से करना चाहिये। लग्नशुद्धि तथा निर्णय के लिये प्राचीन ग्रन्थों में प्राणपद एवं गुलिक की सहायता ली जाती है।।११४-११७।।

प्राणपद जानने की सरल विधि– इष्टकाल की घटियों को चार से गुणा करें, उसमें पन्द्रह से भाग दें। इष्ट के जो पल हैं, उसमें भी पन्द्रह का भाग दें; अब पन्द्रह से भाग दिये जो चतुर्गुणित इष्ट घटियाँ हैं, उन्हें बारह से भाग देकर लब्धि के चक्रसंख्या को त्याग दें। शेष जो राशि प्राप्त होगी, उसमें भी पन्द्रह से भाग दिये इष्ट पलों की लब्धि को जोड़ दें। यदि जोड़ बारह से कम हो तो उसमें बारह कम कर दें। इष्ट के पलों में १५ का भाग देने पर जो शेष पल बचे, उसको द्विगुणित करने पर अंश प्राप्त होंगे। यह मध्यम प्राणपद के राशि अंश प्राप्त होंगे।

उदाहरणार्थ— मान लीजिये इष्ट १७।४० है। घटी को चौगुना करने पर ६८ हुए, इनमें पन्द्रह का भाग देने से ४ लब्धि आयी। यह चक्र है; अतः इसे त्याग दिया। शेष ८ राशि हुई। ४० पलों में पन्द्रह का भाग अलग से देने पर लब्धि में दो राशियाँ प्राप्त हुई, उन्हें पूर्व की ८ राशियों में जोड़ने पर १० राशि हुई तथा शेष के १० पल को दूना करने पर २० अंश प्राप्त हुए। यह ८।२०° मध्यम प्राणपद है। अब उदाहरण का स्पष्ट सूर्य राश्यादि ४।७°।३३'।१०" है। सूर्य यदि चर राशि का हो तो उसे ज्यों का त्यों मध्यम प्राणपद में जोड़ने से स्पष्ट प्राणपद होता है। यदि सूर्य स्थिर या द्विस्वभाव राशि का हो तो उस सूर्य से त्रिकोण में जो राशि चर हो, उसी राशि का सूर्यस्पष्ट ग्रहण कर मध्यम प्राणपद में जोड़ते हैं। यहाँ सूर्य सिंह (स्थिर में) हैं, सिंह के त्रिकोण में मेष राशि चर है; अतः सूर्य को चर राशि का मानकर राश्यादि ०।७°।३३'।१०" में मध्यम प्राणपद के राश्यादि ८।२०° को जोड़ दिया तो ८।२७°।३३' १०" स्पष्ट प्राणपद हुआ।

प्राणपदप्रसङ्गे लग्नचन्द्रयोः विकल्पम्

लग्ने बले मान्दिवशाद्विलग्नं चन्द्रे बले चन्द्रबलाद्विलग्नम् ।
ओजे तदंशे पुरुषस्य जन्म लग्ने स्त्रियस्तस्य विलग्नभांशे ।।११८।।

यदि लग्न बली हो तो पूर्वकथित प्रकार से त्रिकोण-शोधन करके लग्न निश्चय करना चाहिये। यदि चन्द्रमा बली हो तो चन्द्रमा से त्रिकोणशोधन करके लग्न का निश्चय

करना चाहिये। यदि लग्न विषम राशि तथा अंश में हो तो पुरुष का जन्म तथा स्त्रीराशि नवांश में लग्न होने पर स्त्री का जन्म जानना चाहिये॥११८॥

विशेष— इस विधि से लग्न निर्णय बहुमत से प्राचीन एवं आधुनिक ज्योतिर्विदों को मान्य नहीं है।

ग्रहाणां पाचकादिकथनम्

क्रमाद्ग्रहः पाचकबोधकश्च सकारको वेधकसंज्ञकश्च ।
मन्दारजीवामरशत्रुपूज्याः शुक्रारसूर्यात्मजवासरेशाः ।।११९।।
रवीन्दुसूर्यात्मजचन्द्रपुत्राः शशाङ्कजीवाच्छधरासुताश्च ।
सूर्यात्मजारेन्दुदिनाधिनाथा सौम्येन्दुपुत्राऽर्कदिनेशपुत्राः ।।१२०।।
शुक्रेन्दुदेवेज्यधरासुताश्च भवन्ति तत्पाकमुखाः ग्रहेन्द्राः ।।१२१।।

प्रत्येक ग्रह के लिये एक अन्य ग्रह पाचक, दूसरा बोधक, तीसरा कारक तथा चौथा वेधक होता है। इसी प्रकार सूर्य के लिये– शनि पाचक, मङ्गल बोधक, गुरु कारक तथा शुक्र वेधक होता है। चन्द्र के लिये शुक्र, मङ्गल, शनि सूर्य। मङ्गल के लिये सूर्य, चन्द्र, शनि, बुध। बुध के लिये चन्द्र, गुरु, शुक्र, मङ्गल। गुरु के लिये शनि, मङ्गल, चन्द्र, सूर्य। शुक्र के लिये बुध, सूर्य, गुरु, शनि एवं शनि के लिये शुक्र, चन्द्र, गुरु, मङ्गल क्रमशः पाचक, बोधक, कारक तथा वेधक होते हैं॥११९-१२१॥

ग्रहों के पाचक-बोधक-कारक-वेधक चक्र

सूर्य	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रह
शनि	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	शनि	बुध	शुक्र	पाचक ग्रह
मङ्गल	मङ्गल	चन्द्र	गुरु	मङ्गल	गुरु	चन्द्र	बोधक ग्रह
गुरु	शनि	राहु	शुक्र	चन्द्र	सूर्य	गुरु	कारक ग्रह
शुक्र	सूर्य	बुध	मङ्गल	सूर्य	शनि	मङ्गल	वेधक ग्रह

ग्रहाणां पाचकादिस्थानकथनम्

स्थानानि वक्ष्ये क्रमशो ग्रहाणां षट्सप्तधर्मायगताः क्रमेण ।
भानोः शशाङ्कान्मदभाग्यलाभयुक्तास्तृतीयेन धरासुताच्च ।।१२२।।
धनारिलाभान्त्यगताब्जसूनोः द्वितीयबन्ध्वात्मजसोदराश्च ।
गुरोस्तु षष्ठात्मजकामरिष्फाः शुक्राद्धनारिव्ययबन्धुयुक्ताः ।।१२३।।
तृतीयलाभारिकलत्रगास्तु दिनेशसूनोः प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।।१२४।।

अब सूर्यादि ग्रहों के कुण्डली में कौन-कौन से स्थान पाचक, बोधक, कारक तथा वेधक होते हैं, यह बताते हैं। सूर्य से– ६।७।९।११ भाव, चन्द्र से– ७।९।११।३, मङ्गल से– २।६।११।१२, बुध से– २।४।५।३, गुरु से– ६।५।७।१२, शुक्र से–

२।६।१२।४ तथा शनि से– ३।११।६।७ स्थान क्रमशः पाचक स्थान, बोधक स्थान, कारक स्थान तथा वेधक स्थान होते हैं। इन स्थानों में अवस्थित ग्रहों को भी तदनुसार ही पाचक, बोधक, कारक तथा वेधक जानना चाहिये।।१२२-१२४।।

ग्रहों का पाचकादिस्थानबोधकचक्र

ग्रहाः	सूर्य	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
पाचकस्थानानि	षष्ठ	सप्तम	द्वितीय	द्वितीय	षष्ठ	द्वितीय	तृतीय
बोधकस्थानानि	सप्तम	नवम	षष्ठ	चतुर्थ	पञ्चम	षष्ठ	एकादश
कारकस्थानानि	नवम	एकादश	एकादश	पञ्चम	सप्तम	द्वादश	षष्ठ
वेधकस्थानानि	एकादश	तृतीय	द्वादश	तृतीय	द्वादश	चतुर्थ	सप्तम

स्पष्टीकरण— पूर्वोक्त दोनों चक्रों को मिलाकर पाचक, बोधक, कारक तथा वेधक का निर्णय किया जाता है। जैसे— यदि सूर्य से छठे भाव में शनि होगा तभी वह पाचक कहा जायेगा; अन्यथा नहीं। सूर्य से सप्तम भाव में मङ्गल के होने पर वह बोधक होगा; अन्यथा नहीं। सूर्य से नवें गुरु होने पर ही कारक होगा; अन्यथा नहीं। सूर्य से एकादश में शुक्र होने पर ही वेधक होगा; अन्यथा नहीं।।

पाचकादि निर्णयवशेन मित्राऽमित्रकथनम्

शत्रुर्दिनेशस्य तु पाचकः स्यान्मित्राणि शेषाः शशिनस्तु वैरी ।
व्यये तु भौमस्य च वेधकश्च शत्रुर्बुधस्यान्तकरो गुरोस्तु ।।१२५।।
पाकग्रहो वेधकसंज्ञकश्च शत्रुर्भवेदास्फुजितश्च वैरी ।
सकारको वेधकसंज्ञकश्च शनेस्तु तत्कारकखेचरोऽरिः ।।१२६।।

सूर्य का पाचक ग्रह शत्रु होता है। शेष बोधक, कारक व वेधक मित्र होते हैं। चन्द्रमा का भी व्ययग्रह (पाचक) वैरी होता है, शेष मित्र होते हैं। मङ्गल का वेधक ग्रह शत्रु, बुध का अन्तकर (वेधक) ग्रह शत्रु, गुरु का पाकग्रह (पाचक) शत्रु, शुक्र का वेधक तथा शनि का कारक ग्रह शत्रु होता है एवं शेष ग्रह मित्र होते हैं।।१२५-१२६।।

पाचकादि के अनुसार मैत्रीचक्र

ग्रहाः	सूर्य	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
शत्रवः	पाचक	पाचक	वेधक	वेधक	पाचक	वेधक	कारक
मित्राणि	बो० वे० का०	बो० वे० का०	पा० बो० का०	पा० बो० का०	बो० वे० का०	पा० बो० वे०	पा० बो० वे०

पाचकमैत्रीफलम्

मिष्टान्नपानाम्बरभूषणाप्तिं राज्यार्थभूलाभमतीव सौख्यम् ।
धैर्यं महोत्साहमतीव शक्तिं कुर्याद्ग्रहः पाचकसंज्ञकोऽयम् ।।१२७।।
मित्रे यथान्यायफलं तदन्ये ग्रहे तदन्यत्फलमातनोति ।
समग्रभाग्यं बहुराजपूज्यं विद्यां विनोदाङ्कितराजगोष्ठीम् ।।१२८।।

जब कोई पाचकसंज्ञक ग्रह मित्रसंज्ञक भी हो तब मिष्टान्नपान, श्रेष्ठ वस्त्र-भूषण की प्राप्ति, राज्यलाभ, धनलाभ, भूमिलाभ तथा अत्यन्त सुख देने वाला होता है। मन में उत्साह, शक्ति आदि का सञ्चार भी करता है। इसके कारण भाग्योदय होता है। सभाओं एवं गोष्ठियों में सम्मान प्राप्त होता है। विद्या एवं ज्ञान का प्रभाव प्रकट करने का अवसर प्राप्त होता है; परन्तु शत्रु होने पर यही पाचक ग्रह विपरीत फल देता है।।१२७-१२८।।

बोधकसंज्ञकग्रहफलम्

दयातपःप्राप्तमचिन्त्यभाग्यं कुर्यात्फलं बोधकसंज्ञकश्च ।
ग्रहे तु तस्मिन् फलमातनोति समग्रपर्याप्तफलं तदन्ये ।।१२९।।

जब बोधक ग्रह मित्रसंज्ञक हो तो पूर्व जन्मों के दया-दाक्षिण्य आदि शुभ कर्मों के परिपाकस्वरूप भाग्योदय का फल प्रदान करता है। शत्रुसंज्ञक होने पर वही विपरीत फल प्रदान करता है।।१२९।।

वेधकग्रहफलम्

विदेशयानं धननाशनं च वेधग्रहस्तत्फलमन्यथान्यः ।।१३०।।

जब वेधक ग्रह मित्र हो तो विदेशयात्रा, धनहानि आदि करता है; परन्तु शत्रुसंज्ञक होने पर यह सब नहीं करता है।।१३०।।

कारकग्रहफलम्

भाग्यं क्वचित्क्षीणफलं क्वचिच्च दारार्थबन्ध्वात्मजरोगपीडा ।
चौराग्निपीडा कलही जनैस्तु सकारको मित्रसमो यदि स्यात् ।।१३१।।
सकारको वैरिसमो न तत्तु वदन्ति व्यत्यासफलं विशेषात् ।
चौराग्निबन्धुक्षितिपालसंघैरतीव दुःखं स्वपदच्युतञ्च ।।१३२।।

जब कारक ग्रह मित्रसंज्ञक हो तो कभी भाग्यवृद्धि करता है, कभी भाग्य क्षीण करता है, कभी-कभी पुत्र-बन्धु-बान्धवों को पीड़ा देता है, कभी सुखी करता है; परन्तु कारक ग्रह शत्रु हो तब चौर, अग्नि आदि से भय, राज्यशासन से हानि, पदच्युति आदि विपरीत फल प्राप्त होते हैं।।१३१-१३२।।

गुलिकानयनविधिः

तरुखरजयनृपतनुखनिनाड्यो भास्करादिवारेषु ।
दिनमानघटीगुणिता नागहृता गुलिकनाडिकाः स्पष्टाः ।।१३३।।
स्फुटगुलिकनाडिकाभिस्तत्कालार्केण सायनेनापि ।
लग्नवदानेतव्यो राश्यंशकलादिरूपको गुलिकः ।।१३४।।

रविवार को २६ से, सोमवार को २२ से, मङ्गलवार को १८ से, बुधवार को १४ से, गुरुवार को १० से, शुक्रवार को ६ से तथा शनिवार को २ से स्थानीय दिनमान की घटियों का गुणा करें, फिर गुणनफल में ३० का भाग देने से लब्धि घट्यादि गुलिकेष्टकाल होता है। इस गुलिकेष्ट पर से निरयण या सायन सूर्य के अनुसार निरयण तथा सायन गुलिक स्पष्ट होता है।।१३३-१३४।।

विशेष— चूँकि यहाँ दिनमान से गुणा करना बताया गया है, अतः यह दिन का गुलिक स्पष्ट होगा; परन्तु यदि रात्रि का गुलिक जानना हो तो इसी विधि से गुलिक निकालकर उसमें ६ राशि जोड़ने से रात्रि का गुलिक स्पष्ट होता है।

मान्द्यानयनविधिः

चन्द्ररुद्रजयवैद्यनृपातोनाखुनाडिनिहिताद्दिनमानात् ।
नागलब्धमितमान्दिघटी स्याल्लग्नवत्स्फुटमिहानयनं हि ।।१३५।।

सूर्यादि वारों में क्रमशः चन्द्र (२६), रुद्र (२२), जय (१८), वैद्य (१४) नृपा (१०), तोना (६), आखु (२)— इन ध्रुवाङ्कों में दिनमान के घटी-पलों का गुणा करके तीस का भाग देकर मान्द्य घटी प्राप्त होती है। लग्नस्पष्ट की रीति से इस मान्द्य इष्ट घटी पर (जन्मेष्टकाल की तरह) गुलिकस्पष्ट के राशि अंश स्पष्ट किये जाते हैं।।१३५।।

यह भिन्न प्रकार से गुलिकानयन है।

स्पष्टीकरण— श्लोक १३३ तथा १३४ में गुलिक स्पष्टीकरण की जो विधि दी गयी है, वही विधि श्लोक १३५ में मान्दि स्पष्ट के लिये है। दोनों में एक ही बात कही गयी है। गुलिक तथा मान्द्य या मान्दि एक ही बात है, दोनों में कोई अन्तर नहीं है। हो सकता है कि ग्रन्थकर्त्ता ने यही बात समझाने के लिये अलग-अलग नामों से पुनरुक्ति की हो अथवा इनमें १३५वाँ श्लोक प्रक्षिप्त हो। बृहत् पाराशरादि में गुलिक स्पष्ट की रीति भिन्न है।

मान लीजिये कि गुरुवार को गुलिक (मान्दि) स्पष्ट करना है। उस दिन का दिनमान २८/३० है, इसमें गुरुवार के ध्रुवाङ्क १० से गुणा करने पर गुणनफल २८०/३०० हुआ, अर्थात् घट्यादि २८५।०० हुये, इसमें तीस का भाग देने पर लब्धि ९ घटी प्राप्त हुई, शेष १५ को ६० से गुणा कर पुनः तीस का भाग देने पर ३० पल प्राप्त हुए, यही गुलिक या मान्दि का इष्ट है, अर्थात् ९ घटी ३० पल। अब जिस प्रकार इष्टकाल

से लग्न निकालते हैं, उसी प्रकार मान्दि (गुलिक) इष्ट से निकालने पर लग्नस्पष्ट ही गुलिकस्पष्ट होगा।

पाकेशात् शत्रुमित्रकथनम्

पाकेशाद्वसुभान्त्यशत्रुभवने युक्तोपहारेश्वरः
तच्छत्रुर्भवतीह लाभधनभे सोत्थात्मजे बन्धुभे ।
भाग्ये वा दशमे समन्वितग्रहस्तच्छोभनाख्य स्वतः
तत्कामान्वितखेचरस्त्वशुभदः प्रोक्तो ग्रहाणां क्रमः ।।१३६।।

फल देने वाला ग्रह पाकेश (दशानाथ) से ८।१२।६ भावों में होने पर शत्रु की भाँति फल प्रदान करता है। यदि वह ११।२।५ तथा ४।९।१० इनमें से किसी भाव में स्थित हो तो शुभ फल (मित्रवत्) प्रदान करता है, परन्तु कामभाव (सप्तम) में स्थित हो तो भी अशुभ फल ही देता है।।१३६।।

ग्रहयुत्यनुसारेण फलम्

पापग्रहादिसहितो द्युचरस्तु शत्रुः
स्यात्स्थानतोऽपि शुभदस्त्वतिशोभनाख्यः ।
स्थानानुरूपफलमेव विचिन्त्य मार्गं
ज्ञात्वा वदन्ति मुनयो जगतां सुसिद्ध्यै ।।१३७।।

पापग्रहों से युत ग्रह शत्रु की भाँति होता है। इसी प्रकार शुभ ग्रह से युत तथा शुभ स्थान में स्थित ग्रह अति शुभ होता है। इस प्रकार मुनियों ने लोकोपकार के लिये फल-कथन की यह रीति निर्दिष्ट की है।।१३७।।

संज्ञाध्यायसमाप्तिः

संज्ञाध्यायो वर्णितः सर्वशास्त्रात्सारं बुद्ध्वा सर्वलोकोपकारम् ।
यद्यत्सर्वं वेङ्कटेशेन बुद्ध्वा तत्तत्पाके योजयेत्तत्फलानि ।।१३८।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ संज्ञानिरूपणो नाम प्रथमोऽध्यायः ।।१।।

ग्रन्थकर्ता वेङ्कटेश ने लोकोपकार के लिये सभी शास्त्रों के सार को ग्रहण करके यह संज्ञाध्याय लिखा है। इसमें कथित फल को पाकसमय (दशान्तर्दशाकाल) में कहना चाहिये।।१३८।।

।। इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़रचित
सर्वार्थबोधिनी टीका में प्रथमाध्याय पूर्ण हुआ।।

◆

अथ द्वितीयोऽध्यायः

लग्नफलविचाराध्यायः

लग्नफलविचारणा

भावोद्भवानि विविधान्युचितानि यस्मात्
शास्त्रान्तराद् ऋषिगणा दृढबुद्धयस्तु ।
यान्येव तानि खगयोगवशाद् वदन्ति
बुद्ध्या समीक्ष्य विदुषां तु मुदे करोमि ।।१।।

स्थिरबुद्धि ऋषियों ने जो शास्त्रान्तरों (ज्योतिष के अन्य ग्रन्थों) में अनेक प्रकार के फलों का वर्णन किया है, उन्हीं ग्रहयोगों का वर्णन मैं (ग्रन्थकर्त्ता) अपनी बुद्धि से ऊहापोह करके विद्वानों की प्रसन्नता के लिये करता हूँ।।१।।

भावानां शुभाशुभफलम्

भावाः सर्वे शुभपतियुता वीक्षिता वा शुभेशै-
स्तत्तद्भावाः सकलफलदाः पापदृग्योगहीनाः ।
पापाः सर्वे भवनपतयश्चेदीहाहुस्तथैव
खेटैः सर्वैः शुभमपि फलं निम्नमूढातिहीनैः ।।२।।

जो भाव शुभ ग्रहों से युक्त-दृष्ट, शुभ स्थानपतियों से युत-वीक्षित तथा पापदृष्टि-युति से रहित होते हैं, उन भावों का शुभ फल मिलता है; परन्तु जो भाव पापग्रहों से युत-दृष्ट, दुःस्थानपतियों से युत-दृष्ट, नीच राशिगत, अस्तंगत तथा अति निर्बल ग्रहों से युत-दृष्ट होते हैं, वे शुभ फल न देकर अशुभ फल देते हैं।।२।।

दुःस्थानस्थितिसम्बन्धाद् ग्रहाणां फलम्

लग्नादिभावाद्रिपुरन्ध्ररिष्फे पापग्रहास्तद् भवनादिनाथाः ।
सौम्यास्तु नात्यन्तफलप्रदास्तद् भावादिकानां फलमेवमाहुः ।।३।।

जो ग्रह लग्नादि भावों के स्वामी होकर ६।८।१२ भावों में बैठे हों तो, वे जिन भावों के स्वामी होते हैं, उन भावों की हानि करते हैं। पापग्रह भी इन भावों में अशुभ फल देते हैं। यदि शुभग्रह इन भावों में बैठते हैं तो उनकी शुभता में कमी आ जाती है।।३।।

पुनश्च शुभाशुभफलम्

यद्भावनाथो रिपुरन्ध्ररिष्फे दुःस्थानपो यद्भवनस्थितो वा ।
तद्भावनाशं कथयन्ति तज्ज्ञाः शुभेक्षिते तद्भवनस्य सौख्यम् ।।४।।

जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ में हो अथवा इन स्थानों का स्वामी जिस भाव में हो, उस भाव के शुभ फल में ह्रास होता है। शुभ ग्रह की दृष्टि उस भाव पर होने से शुभ फल में वृद्धि होती है।।४।।

शेषभावानां फलविचारम्

तत्तद्भावात्त्रिकोणे स्वसुखमदनभे चास्पदे सौम्ययुक्ते
पापानां दृष्टिहीने भवनपसहिते पापखेटैरयुक्ते ।
भावानाम्पुष्टिमाहुः सकलशुभकरीमन्यथात्वे प्रणाशं
मिश्रं मिश्रग्रहेन्द्रैः सकलमपि तथा मूर्तिभावादिकानाम् ।।५।।

जिन-जिन भावों से ९।५।२।४।७।१० भावों में शुभ ग्रह बैठे हों तथा उन पर पापग्रहों की दृष्टि न हो, अथवा यदि ये भाव अपने स्वामियों से युत-दृष्ट हों तथा पापदृष्टियों से रहित हों तो इन भावों के शुभ फल की पुष्टि (वृद्धि) होती है। इसके विपरीत स्थिति में इन भावों के शुभ फल का नाश होता है। इन भावों पर शुभ और पाप दोनों प्रकार का प्रभाव होने पर मिश्रित फल प्राप्त होता है।।५।।

पुनश्च अशुभफलकथनम्

नाशस्थानगतो दिवाकरकरैर्लुप्तस्तु यद्राशिपो
नीचारातिगतोऽथ वा यदि भवेत्सौम्यैरयुक्तेक्षितः ।
तद्भावस्य विनाशनं मुनिगणाः शंसन्ति खैटैर्युत-
श्चेदत्रापि फलप्रदो न हि तदा मूर्त्त्यादिभानां क्रमः ।।६।।

जो ग्रह नाशस्थान (अष्टम भाव) में स्थित है अथवा जो सूर्य की किरणों के सामीप्य से अस्तङ्गत है अथवा जिस राशि का स्वामी नीच राशि या शत्रु राशि में बैठा हो अथवा शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट न हो तो उस भाव का फल नष्ट हो जाता है— ऐसा मुनिजनों का अभिमत है। उस भाव का स्वामी भी यदि उसमें बैठा हो तो उसका शुभ फल नहीं मिलता। लग्नादि सभी भावों का यही क्रम है।।६।।

कर्माजीवविचारणा

अर्थाप्तिं कथयेद्विलग्नशशिनोः प्राबल्यतः खेचरै-
र्मानस्थैः पितृमातृशत्रुससुहृद् भ्रात्रादिभिः स्याद्धनम् ।
भृत्याद्वा दिननाथलग्नशशिनां मध्ये बलीयांस्ततः
कर्मेशस्थनवांशराशिवशतो वृत्तिं जगुस्तद्विदाः ।।७।।

लग्न तथा चन्द्रमा में से जो बली हो, उससे दशम में जो ग्रह स्थित हो, उससे सूर्यादि सप्त ग्रहों की स्थिति के अनुसार धन की प्राप्ति तथा आजीविका बताना चाहिये। यदि दशम में सूर्य हो तो पिता से, चन्द्र हो तो माता से, मङ्गल हो तो शत्रु से, बुध हो तो मित्र से, गुरु हो तो भाई से, शुक्र हो तो पत्नी या अन्य स्त्रियों से, शनि हो तो

नौकर-चाकर से धन प्राप्त होता है। जब दशम भाव में कोई ग्रह न हो तब लग्न और चन्द्र में से जो बलवान हो, उससे दशम भाव का स्वामी जिस नवांश में बैठा हो, उस नवांश के अनुसार आजीविका होती है॥७॥

विशेष— फलदीपिका में यह श्लोक एक-दो शब्दों के परिवर्तन के साथ है, परन्तु भाव यथावत् है।

सूर्यनवांशफलम्

भैषज्यचामीकरतोययानपण्येन मुक्तामणिविप्रलम्भात् ।
अन्योन्यदूतागमवृत्तिमार्गाज्जीवत्यसौ वासरनायकांशे ।।८।।

जब दशम भावेश का नवांश सूर्य (सिंह राशि) का हो तब उस व्यक्ति की आजीविका औषधि-निर्माण, औषधिविक्रय, चिकित्सा, व्यवसाय, स्वर्ण धातु से सम्बन्धित कार्य, सोने के पानी से निर्मित वस्तुयें, जलपोतों द्वारा व्यापार से, समुद्री खनिजों के कारोबार, दूसरों का दूतकर्म (नेता, प्रतिनिधि, वकील), भ्रमणकार्य आदि के कार्य से आजीविका चलती है॥८॥

मन्त्रोपदेशरसवादविनोदमार्गैः वृत्तिं जगुः सकलशास्त्रपुराणमार्गैः ।
ज्ञानोपदेशपथिभिः क्षितिपालपूज्यो जीवत्यसौ क्षितितले दिननायकांशे ।।९।।

परामर्शदाता का कार्य, रसक्रिया, चुनाव लड़कर, मुकदमेबाजी से, मनोरञ्जक आध्यात्मिक उपदेश द्वारा, पुराणों की कथा द्वारा, राज्यशासन द्वारा भी सूर्य के नवांश से आजीविका चलती रहती है॥९॥

चन्द्रनवांशफलम्

जलोद्भवानां क्रयविक्रयेण कृषेश्च मृद्वादविनोदमार्गात् ।
राजाङ्गनासंश्रयवृत्तिरूपान्निशाकरांशे वसनक्रयाद्वा ।।१०।।

जब दशमेश चन्द्रमा के नवांश (कर्कनवांश) में हो तो जल से उत्पन्न वस्तुओं (मछली, मोती, मूँगा, शङ्ख, सीप, कौडी, समुद्रफेन, आइसक्रीम, कुल्फी, सिंघाड़ा, जलविद्युत् आदि) के क्रय-विक्रय से, कृषि बागवानी, मृत्तिका से उत्पन्न वस्तुओं से, क्रीडा प्रदर्शन आदि से, राजाङ्गना (रानी, महिला राजनीतिज्ञ, मन्त्रियों तथा सचिवों की पत्नियाँ आदि) से अथवा वस्त्रादिं के व्यापार से आजीविका चलती है॥१०॥

भौमनवांशफलम्

धातोर्विवादेन रणप्रहारात् स्तब्धाग्निवादात् कलहप्रवृत्त्या ।
जीवत्यसौ साहसमार्गरूपैर्धरासुतांशो यदि चोरवृत्त्या ।।११।।

मङ्गल के नवांशक में जब दशमेश हो तब धातुकर्म (खनिज़ धातुओं, खदान आदि से सम्बन्धित कार्य), विवाद (मुकदमेबाजी, लड़ाई-झगड़ा), युद्धादि से, स्तब्धाग्निवाद

(धातुओं की गलाई, ढलाई, खराद, झलाई = वेल्डिङ्ग आदि) से, अग्निकृत्य (होटल, रसोई, बेकरी, चाय, काफी आदि का रेष्टोरेण्ट, ईट, चने आदि का भट्ठा आदि) से, कलहप्रवृत्ति (आक्रामक वृत्ति) से, साहसकर्म (सीनाजोरी) से आजीविका चलती है॥११॥

बुधनवांशफलम्

शिल्पादिकाव्यागमशास्त्रमार्गात् ज्योतिर्गणज्ञानवशाद्बुधांशे ।
परार्थवेदाध्ययनाज्जपाच्च पुरोहितव्याजवशात्प्रवृत्तिः ।।१२।।

बुध का नवांश होने पर शिल्पविद्या (इंजीनियरिंग), काव्यरचना-पाठादि, आगम (तन्त्र एवं विज्ञान), ज्योतिषशास्त्र के कार्य से, दूसरों के कल्याण के लिये वेदपाठ-जप-अनुष्ठान आदि से, पौरोहित्य कर्म से, गण-ज्ञान (गणित का अध्ययन, अध्यापन, मुनीमी, कैल्कुलेटर, कम्प्यूटर आदि) के कार्य से आजीविका चलती है। 'काव्य' शब्द से लेखन, प्रकाशन, स्टेशनरी, टाइपराटर आदि सबका बोध होता है। व्यक्ति इनसे सम्बन्धित व्यवसाय से जुड़ा रहता है॥१२॥

गुरुनवांशफलम्

जीवांशके भूसुरदेवतानामुपासकाध्यापकमार्गरूपात् ।
पुराणशास्त्रागमनीतिमार्गाद् धर्मोपदेशेन कुशीदवृत्त्या ।।१३।।

यदि दशमेश गुरु के नवांश में हो तो ब्राह्मणों, साधुओं, देवताओं की उपासना, अध्यापन कार्य, पुराणकथा-प्रवचन आदि से, वेदशास्त्र के अध्ययन से, राजनीति तथा धर्मनीति से धर्मोपदेश तथा व्याज आदि पर धन एवं अनाज देकर जीविकोपार्जन होता है॥१३॥

शुक्रनवाशंकफलम्

सुवर्णमाणिक्यगजाश्वमूलाद् गवां क्रयाज्जीवनमाहुरार्याः ।
गुडौदनक्षीरदधिक्रयेण स्त्रीणां प्रलोभेन भृगोः सुतांशे ।।१४।।

सुर्वण, चाँदी, हीरा-मोती, हाथी-दाँत, घोड़े आदि से, गाय-बैलों के क्रय-विक्रय से, गुड़-शक्कर, मिश्री, पेठा, मिठाई, दही, दूध, डेयरी का व्यवसाय, स्त्रियों के सहयोग से शुक्र के नवांश में आजीविका चलती है॥१४॥

शनिनवांशफलम्

शन्यंशके कुत्सितमार्गवृत्त्या शिल्पादिभिर्दारुमयैर्वधाद्यैः ।
विन्यस्तभाराज्जलविप्रलम्भादन्योऽन्यवैरोद्धवमूलमार्गात् ।।१५।।

शनि के अंश (मकर, कुम्भ नवांश) में यदि दशमेश हो तो बुरे तथा निन्दनीय मार्ग से, दारुशिल्प (बढ़ईगीरी का कार्य, वृक्षों की कटाई), दूसरों की हानि से, हिंसा से, भार-वाहन (ट्रांसपोर्ट, हाथ-ठेला, कुलीगीरी आदि), जलाश्रय (मछली आदि का

कारोबार), परस्पर फूट डालकर लोगों को लड़ाकर अपना उल्लू सीधा करने से आजीविका चलती है।।१५।।

विशेष— शनि मजदूर ग्रह है, अतः मजदूरी से सम्बन्धित कार्य, तेलघानी, कैरोसिन आदि का व्यवसाय, कबाड़ी का धन्धा आदि करवाता है।।

अजीविकाफले तारतम्यकथनम्

स्वक्षेत्रे स्वनवांशके सुहृदि वा स्वीयोच्चभागे यदा
स्वद्रेष्काणचतुष्टयेषु सहिता मूलत्रिकोणेषु वा ।
तत्तत् कालबलान्वितस्तु खचरा वर्गोत्तमांशेऽपि वा
ते सर्वे शुभदा भवन्ति हि तदा स्वान्तर्दशादावपि ।।१६।।

'जो ग्रह स्वराशि, स्वनवांश, मित्रराशि (मित्रनवांश भी), स्वोच्चराशि में (स्वोच्चनवांश में भी), अपने द्रेष्काणचतुष्टय (स्वद्रेष्काण, मित्रद्रेष्काण, उच्चद्रेष्काण, जो राशि वही द्रेष्काण) अथवा मूलत्रिकोणादि में हो, वह तात्कालिक स्थिति में बली हो, वर्गोत्तम नवांश में हो (अथवा आर्षमत से वर्गोत्तम त्रिंशांश = अंश) में हो तो ऐसे सभी ग्रह शुभ फलदायक होते हैं और उनकी दशान्तर्दशा भी शुभ फलप्रद होती है।।१६।।

विशेष— ऊपर जो आजीविका के नवांश कहे गए हैं, उनमें यदि आजीविका का कारक ग्रह बली हो तो आजीविका के साधन उच्च स्तर के एवं सम्मानजनक होते हैं। बल की मात्रा कम होने पर वे साधन मध्यम या निम्न स्तर के हुआ करते हैं।

जीविकार्थे अशुभफलकथनम्

तत्तद्भावाद्रन्ध्रपो वा खरेशो द्रेष्काणानां चापि नाथोऽर्कपुत्रः ।
मान्दीशो वा तन्नवांशाधिपो वा तेषां मध्ये यो ग्रहः क्रूरभावः ।।१७।।

तद्भावेशस्याधिशत्रुग्रहो वा यो वा खेटो बिन्दुशून्यर्क्षयुक्तः ।
तत्तत्पाके मूर्तिवित्तादिकानां नाशं ब्रूयाद् दैववित् प्राश्निकस्य ।।१८।।

जिस भाव से भी अष्टमेश, खरनवांशेश (भाव के नवांश से ६४वें नवांश का स्वामी), खरद्रेष्काणेश (भाव के द्रेष्काण से २२वें द्रेष्काण का स्वामी) अथवा द्रेष्काणेश शनि हो, मान्दि का स्वामी अथवा मान्दिनवांश का स्वामी इतने प्रकार के ग्रहों में से ग्रह क्रूर भाव में हो, अथवा उस भाव का स्वामी अधिशत्रु ग्रह हो, अथवा अष्टकवर्ग में उस ग्रह को शून्य बिन्दु (प्रकारान्तर से रेखा) प्राप्त हो तो उन ग्रहों के दशान्तर्दशा में जातक तथा प्रश्न में उन-उन भावों का नाश हो— ऐसा ज्योतिषी को बताना चाहिये।।१७-१८।।

मृत्युकथनम्

मन्दमान्द्यगुखरेशरन्ध्रपास्तन्नवांशपतयोऽपि ये ग्रहाः ।
तेषु दुर्बलदशा मृतिप्रदा कष्टभे चरति सूर्यनन्दने ।।१९।।

शनि, मान्दि, राहु, खरांशेश, खरद्रेष्काणेश, अष्टमेश और उनके नवांशेश भी जो

ग्रह हैं, उनमें जो निर्बल होता है उसकी दशा मृत्युप्रद होती है। इसी प्रकार गोचरभ्रमण के समय शनि का भ्रमण जब अष्टम राशि से होता है, तब मृत्यु होती है॥१९॥

धननाशकरयोगाः

धनाधिपः पापखगो यदि स्याच्छन्यारभोगीन्द्रदिनेश्वराणाम् ।
अन्तर्दशायां धननाशमाहुः पापान्विते तद्भवने तथैव ।।२०।।
धनाधिपः पापखगस्तदीशः स्याच्चेद्दशायां क्षितिपालकोपात् ।
नानार्थनाशं निगदेन्नराणां स्थानच्युतिं स्वेष्टजनैर्विरोधम् ।।२१।।

यदि धनभाव का स्वामी पापग्रह हो तो वह शनि, मङ्गल तथा सूर्य की अन्तर्दशा में धननाश करता है। यदि धनभाव में पापग्रह स्थित हो तब भी धननाश होता है। यदि धनेश पापग्रह होकर पापभाव में बैठा हो तो राजकोप से धननाश होता है। उसकी दशा में अर्थहानि, स्थानभ्रंश (मारा-मारा फिरना) तथा मित्रों एवं बान्धवों से विरोध होता है॥२०-२१॥

पापफलं मिश्रफलं शुभफलञ्च

पापग्रहाणामपहारकाले पापग्रहस्यैव दशासु काले ।
भुक्त्यर्थमानात्मजसोदराणां नाशं समायाति शुभैर्न दोषः।।२२।।

वित्ते शुभे शोभनखेचरेशे तत्पाककाले धानलाभमेति ।
शुभग्रहाणामपहारकाले तथा भवेदात्मजवाग्विलासः।।२३।।

पापग्रहों के विंशोत्तरी दशासमय में यदि पापग्रहों की ही अन्तर्दशा हो तब भोजन, धन, मान, सन्तान, भाई-बहन— इनको हानि पहुँचती है। शुभ ग्रह शुभ फल देते हैं। पाप तथा शुभग्रहों के मिश्रण से मिश्रित फल होता है । धनभाव में शुभग्रह बैठा हो तथा धनेश भी शुभ ग्रह हो तो उसकी महादशा तथा अन्तर्दशा की अवधि में धन, मान, सम्मान का लाभ होता है। शुभग्रहों के योगकारकों की दशान्तर्दशा में पुत्रादि का सुख होता है। वाग्विलास (हंसीमस्करी, सम्मानपूर्ण तथा कोमल शिष्ट वार्तालाप) होता है॥२२-२३॥

तृतीये पापस्थितिफलम्

पापग्रहे विक्रमभावनाथे पापान्विते पापवियच्चराणाम् ।
अन्तर्दशायामनलास्त्रचौरैर्दुःखं समायाति शुभप्रदेऽपि ।।२४।।
कलिप्रकोपानलचौरभूपैः दुःखं मनोजाड्यमतीव कष्टम् ।
सोत्थेशपापग्रहदायकाले शुभेक्षिते तादृशमत्र नास्ति ।।२५।।

यदि तृतीय भाव का स्वामी कोई पापग्रह हो अथवा तृतीय भाव में पापग्रह बैठे हों तो उस पापग्रह की अन्तर्दशा में चोरों से कष्ट, अग्निभय, शस्त्रभय आदि होता है। यदि शुभ ग्रह भी पापग्रहों के साथ बैठा हो तो यही फल होता है। तृतीयेश पापग्रह की

महादशा में कलह, अग्नि-चौरभय, राजभय, मानसिक जड़ता (किंकर्त्तव्यविमूढ़ता) तथा अतिकष्ट होता है; परन्तु यदि तृतीयेश शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो इस फल में अशुभता कम होकर शुभता आ जाती है॥२४-२५॥

पुनश्च फलम्

दुश्चिक्यभावाधिपदायकाले सोम्येतराणामपहारकाले ।
नाशं वदेत्तत्र सहोदराणां भवेद्विरोधः सहजैर्विशेषात् ।।२६।।

तृतीयेश की महादशा में पापग्रहों की अन्तर्दशा होने पर सहोदरों (भाई-बहिनों) को कष्ट होता है। जातक एवं प्रश्नकर्ता का उनके साथ विशेष रूप से वैर-विरोध होता है॥२६॥

चतुर्थभावस्याशुभफलम्

क्षेत्राधिपस्यैव शुभेतरस्य पापग्रहाणामपहारकाले ।
स्थानच्युतिं बन्धुविनाशमेति नीचाऽस्तगानामपहारकेऽपि ।।२७।।

यदि चतुर्थेश पापग्रह हो तब पापग्रहों की अन्तर्दशा में स्थानहानि (घर का छूट जाना), बन्धुविनाश (मित्रों से विछोह या मित्रों का अभाव) होता है और यही फल नीच राशिगत ग्रहों का तथा अस्तंगत ग्रहों की अन्तर्दशा में भी होता है॥२७॥

पञ्चमभावस्याशुभफलम्

बुद्धिभ्रमं कुत्सितभोजनञ्च पापग्रहाणां हि सुतेशकाले ।
अन्तर्दशायां प्रवदेन्नराणां शुभग्रहश्चेन्न तथा भवेत्तु ।।२८।।

जब पञ्चमेश पापग्रह हो तो उसकी महादशा में पापग्रह की अन्तर्दशा होने पर बुद्धिभ्रम, कुत्सित भोजन (रूखा-सूखा, बासी-सड़ा-गला, सांवा-कोदों, खेसारी आदि) की प्राप्ति होती है; परन्तु शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा में अशुभ फल नहीं होता॥२८॥

षष्ठेशदशान्तर्दशाफलम्

राजाग्निचौरैर्व्यसनं व्रणेशदशाविपाके तु शुभेतराणाम् ।
अन्तर्दशायामपि कष्टमेति प्रमेहगुल्मक्षयपित्तरोगैः ।।२९।।

यदि षष्ठेश पापग्रह हो तो उसकी दशान्तर्दशाओं में राजभय, चौरभय, अग्निभय (बिजली, बन्दूक, बम आदि भी), चौरभय, संकटग्रस्तता, प्रमेह (बीस प्रकार के मूत्र रोग), गुल्म (पेट गैस आदि), क्षय (शारीरिक क्षीणता तथा सभी प्रकार की टी०बी०), पित्तविकार आदि से कष्ट होता है। शुभग्रह की अन्तर्दशा में कष्ट कम होता है॥२९॥

सप्तमभावदशाफलम्

दारेशपापग्रहदायकाले स्त्रिया विरोधो मरणं च तस्याः ।
विदेशयानं च पुरीषमूत्रकृच्छ्रं भवेत् भूपतिकोप एव ।।३०।।

सप्तमेश पापग्रह की दशा में पत्नी की मृत्यु होती है। पत्नी से मतभेद तथा विरोध उत्पन्न होते हैं। विदेश की यात्रा होती है, जिसमें कष्ट सहना पड़ता है। अतिसार, प्रवाहिका, कब्ज, मूत्रकृच्छ्र तथा राजभय आदि कष्ट होते हैं॥३०॥

अष्टमेशदशाफलम्

रन्ध्रेशकाले फणिनाथभौमशनैश्चराणामपहारकाले ।
आयुर्यशोवित्तविनाशनञ्च दारात्मबन्ध्विष्ट सहोदराणाम् ।।३१।।

अष्टमेश कोई भी ग्रह हो, यदि उसकी अन्तर्दशा में राहु, भौम या शनि की अन्तर्दशा हो तो आयु, यश तथा वित्त की हानि होती है। साथ ही पत्नी, शरीर, बन्धुवर्ग (रिश्तेदार तथा मित्र-मण्डली) एवं भाइयों की भी हानि होती है॥३१॥

नवमेशदशाफलकथनम्

स्थानच्युतिर्बन्धुविरोधिता च विदेशयानं सहजैर्विरोधः ।
भवेच्छुभेशस्य दशाविपाके शनैश्चराराहिदिनाधिपानाम् ।।३२।।

जब नवमेश की दशा में शनि, आर (मङ्गल), अहि (राहु) तथा दिनाधिप (सूर्य) की अन्तर्दशा हो तो बन्धुजनों से विरोध, परदेशगमन, लड़ाई-झगड़ा आदि होता है। अन्य शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा में शुभ फल ही होता है॥३२॥

दशमेशफलम्

कारागृहप्राप्तिरनेकदुःखं दुःस्वप्नशोकानलदग्धदेहम् ।
कर्मेश्वरस्योत्तरमुक्तिकाले पापग्रहाणामपकीर्तिमेति ।।३३।।

दशमेश की महादशा में जब किसी पापग्रह की अन्तर्दशा हो तब कारावास एवं अनेक प्रकार के शारीरिक तथा मानसिक कष्ट होते है। बुरे-बुरे सपने आते हैं, नींद ठीक से नहीं आती। शोक तथा चिन्ता से शरीर सूखकर काँटा हो जाता है। साथ ही अपयश (बदनामी) की प्राप्ति भी होती है॥३३॥

लाभेशदशाफलम्

दशाविशेषे त्वथ लाभपस्य भुक्त्यन्तरे द्रव्यविनाशनञ्च ।
रव्यारभोगीन्द्रशनैश्चराणां कार्यार्थकृच्छ्रं क्षितिपालकोपात् ।।३४।।

लाभेश की अन्तर्दशा में जब रवि, मङ्गल, भोगीन्द्र (राहु) तथा शनैश्चर की अन्तर्दशा हो तो धन की हानि, कार्यहानि (किया हुआ परिश्रम असफल होना), अर्थकृच्छ्र तथा राज्यपक्ष से कष्ट होता है॥३४॥

व्ययेशदायफलम्

व्ययेशदाये रविसूनुभुक्तौ दिनेशभूम्यात्मजयोर्विरोधः ।
कलिक्षयौ मानधनक्षयौ च राहोस्तु भुक्तावरिसर्पपीडा ।।३५।।

व्ययेश की महादशा में शनि, सूर्य, मङ्गल की अन्तर्दशा होने पर जातक का चारो तरफ विरोध होता है। कलह होता है, भय उत्पन्न होता है तथा सम्मान एवं धन की क्षति होती है। व्ययेश की दशा में राहु की अन्तर्दशा होने पर शत्रु तथा सर्प आदि विषाक्त जन्तुओं से पीड़ा होती है॥३५॥

विशेषफलम्

तत्कालशत्रुप्रभावात्फलं तन्मित्रे यदि स्यात् फलमर्धमाहुः ।
अन्योऽन्यषष्ठाष्टमदायकाले स्थानच्च्युतिर्वा मरणं विशेषात् ।।३६।।

स्पष्टीकरिष्यन्ति दशाविभागे विस्तारमार्गेण मुनीन्द्रजालाः ।
आपाततः सङ्कुचितार्थवाक्यैरुक्ता ग्रहाणां फलपाकपंक्तिः ।।३७।।

ग्रह के तात्कालिक शत्रु का फल नैसर्गिक या पाचकादि मैत्री के शत्रुभाव में आधा हो जाता है। जब षष्ठेशों तथा अष्टमेशों की परस्पर अन्तर्दशा होती है तो उसमें जातक या प्रश्नकर्ता की स्थानच्युति (मारा-मारा फिरना) तथा मरण (आठ प्रकार की मृत्यु में से कोई भी प्रकार) होता है। इस प्रकार मुनिजनों ने दशान्तर्दशा समय में सम्पूर्ण फल को अति संक्षेप में विस्तारभय के कारण कहा है अर्थात् गागर में सागर भर दिया गया है॥३६-३७॥

विशेष— ज्योतिषग्रन्थों में जहाँ 'मृत्यु' शब्द अथवा 'मरण' शब्द आया हो, वहाँ साक्षात् मृत्यु ही नहीं, अपितु मृत्यु के अन्य आठ प्रकारों में से कोई भी समझना चाहिये—

व्यथा भयं दुखं लज्जा रोगः शोकस्तथैव च ।
मरणञ्चापमानञ्च मृत्युरष्टविधः स्मृतः ॥

आधानलग्नाज्जन्मलग्ननिर्णयम्

निषेकलग्नाद्दिनपस्तृतीये राशौ यदा चारवशादुपैति ।
आधानलग्नादथ वा त्रिकोणे रवौ यदा जन्म वदेन्नराणाम् ।।३८।।

आधानलग्नात्सुतभे तु जन्मलग्नं भवेच्छास्त्रविदो वदन्ति ।
आधानलग्ने शुभदृष्टियोगे दीर्घायुरैश्वर्यधनान्वितः स्यात् ।।३९।।

गर्भाधान-समय के लग्न को ही आधान लग्न तथा निषेक लग्न भी कहते हैं। प्राचीन काल में राजा-महाराजा एवं शिष्ट लोगों की स्त्रियाँ गर्भाधान समय को याद रखती थीं और गर्भ स्थिति होते ही लग्न के आधार पर ज्योतिषी लोग जन्म लेने वाले जातक की रूपरेखा तथा भविष्य बता देते थे। आधान लग्न तथा जन्म लग्न में एक निश्चित सम्बन्ध रहता है। ऐसा ज्योतिषशास्त्रियों का अनुभव है। उसी को बताते हुए ग्रन्थकार कहते हैं—

यदि सूर्य आधानलग्न से तृतीय राशि में जन्म के समय स्थित हो तो वही सूर्याधिष्ठित राशि लग्न की राशि जाननी चाहिये। अथवा जिस लग्न में आधान लग्न से सूर्य त्रिकोण (नवम-पञ्चम) में स्थित हो, वह लग्न जन्मलग्न होता है। शास्त्रवेत्ताओं का कथन है कि आधानलग्न से पञ्चम राशि के लग्न में जन्म होता है। यदि आधानलग्न में शुभ ग्रह बैठे हों या शुभ ग्रहों की दृष्टि आधानलग्न पर हो तो भविष्य में जन्म लेने वाला बालक अवश्य ही दीर्घायु तथा धन-वैभव से युक्त होता है ॥३८-३९॥

आधानलग्नात् पुंस्त्रीज्ञानम्

धर्मार्थपुत्रेषु निषेकलग्नाद् दृष्टेषु सौम्यैः पुरुषग्रहैर्वा ।
पुत्रांशकैर्वापि निषेककाले पुञ्जन्म बालाजननं विलोमात् ।।४०।।

आधानलग्न से ९।२।५ स्थानों पर शुभ ग्रहों अथवा पुरुषग्रहों की दृष्टि हो अथवा उस समय पुरुष राशि (विषम राशि) का लग्न हो तो पुत्र का जन्म; अन्यथा उन भावों पर स्त्रीग्रहों की दृष्टि अथवा स्त्रीनवांश का आधानलग्न हो तो कन्या का जन्म होता है— ऐसा जानना चाहिये ॥४०॥

पिण्डाकृतिजन्मकथनम्

निषेकलग्ने शशिनन्दनो वा रव्यात्मजो वा यदि पापदृष्टः ।
पिण्डाकृतिं जन्म वदेत्तदानीं शुभेक्षितश्चेन्न तथाविधं तत् ।।४१।।

निषेककुण्डली में बुध अथवा शनि ग्रहों पर यदि पापग्रहों की दृष्टि हो तो पिण्डाकार बालक का जन्म होता है। यदि उन बुध-शनि पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो पिण्डाकार बालक का जन्म नहीं होता॥४१॥

यमलजन्मकथनम्

निषेकलग्नेशतृतीयनाथौ लग्नस्थितौ चेद्यमलोद्भवः स्यात् ।
तृतीयनाथेन युतो निषेकलग्नेश्वरस्तत्सहजे तथैव ।।४२।।

निषेकलग्न का स्वामी और तृतीयेश दोनों ही यदि लग्न में हों तो यमल (जुड़वाँ) शिशु जन्म लेते हैं। इसी प्रकार यदि निषेकलग्नेश तथा तृतीयेश दोनों तीसरे स्थान में एक साथ बैठें हो तब भी यमल जन्म होता है॥४२॥

विशेष— जुड़वाँ बालकों को यमल, यमज आदि कहते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं। जब ये एक ही साथ एक घण्टे के भीतर जन्म लें या जिनके शरीर आपस में जुड़े हों। जुड़वाँ बालक एक ही नाल से अथवा अलग-अलग नालों के साथ उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी दो से भी अधिक बालक एक ही साथ उत्पन्न होते हैं।

पादजात-नालवेष्टितजन्मकथनम्

लग्नेश्वरे कर्मगते विलग्ने भोगीन्द्रयुक्ते सति पादजातः ।
रन्ध्रेश्वरे राहुयुते विलग्ने जातोरगैर्वेष्टितसम्भवः स्यात् ।।४३।।

जन्मकुण्डली अथवा प्रश्नकुण्डली में (अथवा आधानकुण्डली में भी) यदि लग्नेश दशम भाव में तथा राहु (भोगीन्द्र) लग्न में बैठा हो तो बालक पैरों से उत्पन्न होता है, इसे ही पादजात कहते हैं।

सभी जातक सामान्यतः शिर के बल होकर मातृयोनि से बाहर आते हैं अर्थात् जन्म लेते समय शिर पहिले तथा पैर बाद में निकलते हैं, परन्तु राहु लग्न में तथा लग्नेश कर्मभाव में होने पर पैरों के बल ही जन्म होता है। इस जातक को उल्टा उत्पन्न हुआ कहा जाता है। यदि अष्टमेश तथा राहु दोनों एक समय लग्न में हों तो जातक के शरीर में नाल लिपटा हुआ होता है। इसे सर्पवेष्टित या उरगवेष्टिक कहते हैं ॥४३॥

नालवेष्टितजन्मकथनम्

केन्द्रे सराहौ गुलिकेन युक्ते लग्नेश्वरे वा निधनेशयुक्ते ।
क्रूरग्रहाणां तु दृकाणलग्ने जातोरगैर्वेष्टितसम्भवः स्यात् ।।४४।।

राहु केन्द्र में हो, लग्नेश गुलिक के साथ अथवा अष्टमेश के साथ स्थित हो तथा लग्न में पाप ग्रहों का द्रेष्काण हो तो जातक नालवेष्टित होता है ॥४४॥

अन्यनालवेष्टितयोगाः

लग्नत्रिभागेन्द्रजसर्पकाले तन्नाथयुक्ते तु तथा त्रिभागे ।
शुभग्रहाणान्तु दृशा विहीने जातोरगैर्वेष्टितसम्भवः स्यात् ।।४५।।

जब लग्न में अण्डज द्रेष्काण हो (वृष का तीसरा द्रेष्काण) अथवा सर्पद्रेष्काण (कर्क का तीसरा, वृश्चिक का पहिला तथा मीन का तीसरा द्रेष्काण सर्पद्रेष्काण होता है) हो तथा द्रेष्काण में उसका स्वामी बैठा हो तो जातक नालवेष्टित होता है॥४५॥

छागोक्षकण्ठीरवलग्नभूते भौमान्विते वा रविजेन युक्ते ।
राश्यंशसादृश्यसमानदेहो नालेन संवेष्टितसम्भवः स्यात् ।।४६।।

छाग (मेष), उक्ष (वृषभ), कण्ठीरव (सिंह)— इनमें से कोई लग्न हो तथा उनमें मङ्गल या शनि बैठा हो तब वह द्रेष्काण शरीर के जिस अङ्ग का होता है, उसी अङ्ग में शिशु नाल से लिपटा होता है॥४६॥

लग्ने सपापे बहुपापदृष्टे राहुध्वजाभ्यां सहितेऽथ वाऽत्र ।
पापग्रहाणान्तु विलग्नभे वा जातो नरो नालनिवेष्टिताङ्गः।।४७।।

लग्न में पापग्रह हो तथा उन पर बहुत से पापग्रहों की दृष्टि हो अथवा लग्न में राहु या केतु हो या पापग्रहों का लग्न हो तो बालक नालवेष्टित होता है॥४७॥

क्रूरान्तरे लग्नगते सराहौ लग्ने कुजे वासरनाथदृष्टे ।
लग्ने शनौ भूमिसुतेन दृष्टे जातो नरो नालनिवेष्टिताङ्गः ।।४८।।

लग्न यदि पापग्रहों के मध्य में हो अथवा लग्न में राहु, मङ्गल या सूर्य की दृष्टि

अथवा लग्न में मङ्गल से दृष्ट शनि बैठा हो, तो बालक नालवेष्टित होता है।।४८।।

पशुजन्मकथनम्

परस्परक्षेत्रसमाश्रितौ वा देहाम्बुपौ जन्म वदेत्तदानीम् ।
लग्नेश्वरे वा हिबुकेश्वरे वा ध्वजाहियुक्ते जननं पशोस्तु ।।४९।।

लग्नेश तथा चतुर्थेश एक-दूसरे के स्थानों में बैठे हों अथवा लग्नेश तथा चतुर्थेश राहु एवं केतु से युक्त हों तो पशु का जन्म होता है।।४९।।

पापा बलाढ्या बिबलास्तु सौम्या नपुंसकौ केन्द्रगतौ तदानीम् ।
दृष्टिर्तयोर्वाऽथ वियोनिलग्ने चतुष्पदाञ्जन्म वदन्ति तज्ज्ञाः ।।५०।।

जब पापग्रह बलवान तथा सौम्यग्रह निर्बल हो तथा नपुंसकग्रह (बुध-शनि) केन्द्र में स्थित हो; अथवा उनकी लग्न पर दृष्टि हो तब वियोनि लग्न होने पर (मेष, वृष, कर्क, सिंह, वृश्चिक, मकर, मीन में) पशु का जन्म होता है।।५०।।

विशेष— वियोनि से तात्पर्य मनुष्येतर योनियों में जन्म से है। उनमें केवल पशु, पक्षी एवं वृक्षों के विषय में ही जातकग्रन्थों में उल्लेख है। मनु के अनुसार वृक्षों की चेतना गुप्त होती है।

पुनश्च वियोनिजन्मकथनम्

पापा बलाढ्याः स्वगृहं प्रपन्नाः सौम्याः स्वगेहेतरराशियुक्ताः ।
चतुष्पदाञ्जन्मतनौ वियोनौ वदन्ति शास्त्रान्तरपारगम्याः ।।५१।।
पक्षीदृकाणे तु विलग्नभूते बलान्वितेनैव ग्रहेण दृष्टे ।
राशौ चरे वा यदि तन्नवांशे वियोनिजन्मेति बुधांशके वा ।।५२।।

यदि पाप ग्रह बली होकर अपनी राशियों में एवं शुभ ग्रह अपनी राशियों को छोड़ इतर राशियों में बैठे हों; जन्मलग्न चतुष्पद राशि हो तो शास्त्रान्तरों के पारङ्गत विद्वानों ने वियोनि जन्म कहा है। यदि लग्न में पक्षी द्रेष्काण हो तथा उस पर बली ग्रहों की दृष्टि हो अथवा लग्न में चर राशि या उसका नवांश हो अथवा बुध का नवांश हो तो वियोनि में जन्म होता है।।५१-५२।।

पशुजन्मकथनम्

शुक्रेक्षिते गोजननं महिष्याः सूर्यात्मजेनापि युतः स दृष्टः ।
राहुध्वजाभ्यां सहितोऽथ दृष्टो मेषस्तु जातोऽन्यपशुस्तथान्यैः ।।५३।।

ऊपर के योग में यदि शुक्र की दृष्टि लग्न पर हो तो गाय या बैल का जन्म, शनि की दृष्टि हो तो भैंस-भैंसे का जन्म, यदि राहु या केतु से युक्त-दृष्ट हो तो भेड़-बकरी का जन्म तथा अन्य ग्रहों की दृष्टि से अन्य पशुओं का जन्म कहना चाहिये।।५३।।

विशेष— जातकपारिजात के अनुसार मनुष्येतर राशियों का द्वादशांश भी वियोनि जन्मकारक होता है।

नपुंसकजन्मकथनम्

लग्ने बुधक्षेत्रगतेऽरिनाथे लग्नेश्वरे सोमसुतर्क्षसंस्थे ।
जातस्तु सस्त्रीकनपुंसकः स्याच्छन्यारयोगात्पुरुषस्तु षष्ठः ।।५४।।

यदि षष्ठेश लग्न में बुध की राशि का हो तथा लग्नेश बुध स्वयं की राशि में हो तो स्त्री-नपुंसक होता है। यदि उनके साथ शनि तथा बुध भी हों तो पुरुष-नपुंसक होता है।।४५।।

विशेष— नपुंसक को हिजड़ा, उभयलिङ्गी तथा दरम्याना आदि कहते हैं।

षट्क्लीबयोगाः

अन्योऽन्यदृष्टी शशिवासरेशौ युग्मौ च गाविन्दुजभानुपुत्रौ ।
ओजर्क्षगो भानुसुतो दिनेशं पश्यत्यसौ युग्मगतस्तथैव ।।५५।।

ओजे तु लग्ने कुमुदात्मबन्धुः तत्र स्थितो युग्मगभौमदृष्टः ।
युग्मौजगाविन्दुसुतौ कुजेन दृष्टौ विलग्नश्च निशाकरश्च ।।५६।।

षट् क्लीबयोगाः पुरुषांशयुक्ताः प्रोक्ता महद्भिर्बहुशास्त्रविद्भिः ।
लग्नेश्वरश्चन्द्रसुतेन युक्तः षण्ढो भवेत् सौम्यखगेन युक्तः ।।५७।।

इन श्लोकों में नपुंसक के जन्म के छः योग बताए गए हैं—

१. सूर्य एवं चन्द्रमा में परस्पर दृष्टि हो तब नपुंसक का जन्म होता है।
२. बुध तथा शनि युग्म (सम राशियों) में हों तब भी नपुंसक का जन्म होता है।
३. विषम राशिगत शनि सम राशिगत सूर्य को देखता हो तब भी नपुंसन्क का जन्म होता है।
४. ओज लग्न (विषम) में चन्द्रमा हो तथा मङ्गल से युत हो अथवा मङ्गल समराशि में बैठकर उस चन्द्रमा को देखता हो तब भी नपुंसका का जन्म होता है।
५. चन्द्रमा तथा बुध क्रमशः सम तथा विषम राशियों में बैठकर मङ्गल द्वारा दृष्ट हों तब भी नपुंसक का जन्म होता है।
६. लग्नेश बुध से युक्त होकर चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तब भी नपुंसक का जन्म होता है।।५७।।

संस्काररहितबालकजन्म

दुःस्थानगो कर्मशुभाऽधिनाथो बली विलग्नाधिपतिस्तदानीम् ।
सीमन्तकर्मादिविनैव जातो भवेन्नरः प्राथमिकोऽपि तत्र ।।५८।।

नवमेश तथा दशमेश ६-८-१२ भावों में से किसी में स्थित हों तथा लग्नेश बलवान हो, तो जातक अच्छे ब्राह्मण के घर जन्म लेने पर भी सीमन्त तथा जातकर्मादि संस्कारों से रहित होता है ॥५८॥

पुनः संस्काररहितजन्मकथनम्

लाभे सपापे त्वथ तद्गृहे वा जातो नरो प्राथमिकोऽपि तत्र ।

यदि ग्यारहवें घर में पापग्रह हों तब भी सद्ब्राह्मण कुल में जन्म लेने पर भी शिशु के सीमन्तादि संस्कार नहीं होते हैं।

सूतिकागृहद्वारादिकथनम्

सिंहोदये द्वारयुगं गृहं तत् कन्योदये नीचगृहेऽपि जन्म ।।५९।।
नवांशपुत्राधिपतिः सराशेर्द्वारं जगुर्लग्नदृकाणराशेः ।
द्वारं विलग्नाधिपतिः सराशेः केन्द्रस्थितैर्वीर्यसमन्वितैर्वा ।।६०।।

सिंह लग्न होने पर सूतिकागार के दो द्वार होते हैं तथा कन्या लग्न में आधान या जन्म होने पर सूतिकागार छोटा, सकरा, गहरे फर्श अथवा नीची छत वाला होता है। लग्ननवांश के स्वामी की राशि की दिशा में अथवा पञ्चमेश जिस राशि में स्थित है, उसी दिशा में अथवा लग्न के द्रेष्काण की राशि की दिशा में अथवा लग्न या लग्नेश की दिशा में अथवा केन्द्रस्थित बलवान ग्रह की दिशा में सूतिकागृह का द्वार होता है॥५९-६०॥

विशेष— यह सब विचार प्राचीन काल में लग्न की शुद्धता की परख के लिये किया जाता था।

उपसूतिकाकथनम्

ग्रहैर्धनान्त्यास्पदवेश्मगैर्वा वाच्यास्तदानीमुपसूचिकास्तु ।
तत्र स्थिते भानुसुते तु शूद्रा रवौ स्थिते क्षत्रियभामिनी सा ।।६१।।
राहुध्वजाभ्यामथजातिहीना त्वन्यैर्ग्रहैर्जातिसमा प्रदिष्टा ।
धनान्त्यबन्धुस्थितखेचरेन्द्रैर्वाच्यास्तदानीमुपसूतिकाश्च ।।६२।।

प्रसूता (जच्चा) के समीप दाई, महिला चिकित्सक, नर्स तथा अन्य जो भी स्त्रियाँ (प्रसव में सहयोग हेतु) रहती हैं, उन्हें उपसूतिका कहा जाता है। उनके लिये कहा है कि इनकी संख्या द्वितीय, द्वादश तथा दशम भाव में स्थित ग्रहों की संख्या के अनुसार कहनी चाहिये। इन स्थानों में शनि हो तो वह उपसूतिका शूद्रा, सूर्य हो तो क्षत्रिया, राहु, केतु से निम्न जाति की तथा अन्य ग्रहों से समान जाति की हुआ करती है। इस प्रकार दूसरे, बारहवें तथा चौथे घर में जितने ग्रह स्थित हों, उनके अनुसार उपसूतिका कहनी चाहिये॥६१-६२॥

विशेष— इस बासठवें श्लोक में दशम स्थान के स्थानापन्न चतुर्थ स्थान (बन्धु) का उल्लेख है; अत: आचार्य इसमें मतान्तर से चतुर्थ स्थान का भी विचार होना चाहिये— ऐसा अभिप्राय व्यक्त कर रहे हैं।

पुनरपि विशेषेण उपसूतिकाजातिकथनम्

तत्स्थानपैः संयुतखेचरेन्द्रैः किञ्चिद्वदन्त्यत्र सहस्थितैश्च ।
जीवेन्दुपुत्रासुरदेवपूज्यैस्तत्र स्थितैर्ब्रह्मकुलाभिरामाः ।।६३।।

दूसरे, बारहवें, दशवें (चौथे भी) भावों के स्वामियों के वर्णानुसार अथवा उन स्थानों में स्थित बली ग्रहों के अनुसार उपसूतिकाओं की जाति आदि कहनी चाहिये। तात्पर्य यह है कि यदि इन स्थानों में कोई ग्रह न हो तब इनके भावेशों के अनुसार फल कहें और ग्रह हों तो बली ग्रहों के अनुसार फल कहें। यदि उन स्थानों में स्थित ग्रह गुरु, बुध तथा शुक्र हों अथवा उन स्थानों के स्वामी हों (जैसी भी स्थिति हो) तो उपसूतिका ब्राह्मणी होती है।।६३।।

एतेषु पापांशकसंयुतेषु तासान्तु वैधव्यमुदाहरन्ति ।
राहुध्वजाभ्यां सहितेषु तेषु शुभास्त्रियस्तत्र शनेस्तु योगात् ।।६४।।
कृष्णा च कुब्जा विधवा भवेत्सा योगाद् ग्रहाणां प्रवदेच्च संख्याम् ।
बहिःप्रदेशे ग्रहमध्यभागे दृश्यार्धभागस्थितखेचरेन्द्रैः ।।६५।।

यदि ये ग्रह पापग्रहों के नवांशों में हों तो वह ब्राह्मणी उपसूतिका विधवा होगी। यदि राहु-केतु हों तो वह विधवा होने के साथ सुन्दर भी होगी, परन्तु शनि की युति या स्थिति से वह उपसूतिका कुबड़ी (झुकी हुई पीठ एवं कमर वाली) होती है। इस प्रकार ग्रहों के योग से उपसूतिकाओं की संख्या कहनी चाहिये। जितने ग्रह कुण्डली के दृश्यचक्रार्ध में हों, उतनी घर के बाहर तथा जितने ग्रह अदृश्य चक्रार्ध में हों उतनी उपसूतिका सूतिकागार के भीतर होती है।।६४-६५।।

संख्या वदेत्तत्र तदन्ययुक्तैस्त्वेकर्क्षगैस्तत्र बहुत्वमाहुः ।।६६।।

यदि एक ही स्थान में बहुत ग्रह हों तो बहुत स्त्री होगी। यदि उनमें कोई भी ग्रह स्वोच्च राशि या स्वगृही हो तो भी स्त्रियों की संख्या अधिक होती है।।६६।।

विशेष— यहाँ बहुत संख्या से अभिप्राय यह है कि संख्या नौ से अधिक हो सकती है, स्त्रियों के झुण्ड भी उपस्थित हो सकते हैं; क्योंकि कभी-कभी रिश्तेदार महिलाओं का समूह ही जच्चाखाने के बाहर एकत्रित हो जाता है।

दीपस्थितिकथनम्

दीपस्य चाञ्चल्यमुदाहरन्ति चरे स्थिरे तद् दृढमत्र काले ।
विदेहराशौ सधृतः करेण तत्संयुतैर्व्योमचरैस्तु संख्याम् ।।६७।।
तैलं वदेत्तत्र निशाकरेण वर्तिर्विलग्नादिति केचिदाहुः ।।६८।।

यदि जन्मलग्न चर राशि का हो तो दीप चर होगा, अर्थात् एक स्थान पर स्थित नहीं होगा तथा उसकी लौ भी झिल-मिलाती रहेगी। स्थिर लग्न होने पर दीपक एक ही जगह स्थित होना चाहिये तथा उसकी लौ (ज्वाला) भी स्थिर होगी। द्विस्वभाव लग्न होने पर दीपक किसी के हाथ में रहेगा। लग्न में जितने ग्रह बली हों, दीपक उतनी संख्या में होते हैं। उस समय चन्द्रमा की स्थिति के अनुसार दीपक में तेल की मात्रा होती है। पूर्ण चन्द्र होने पर दीपक तेल से लबा़लब रहता है। अर्ध चन्द्र होने पर दीपक में आधा तेल होता है और अधिक चन्द्रमा क्षीण होने पर दीपक में उसी अनुपात में तेल कम होता है। पापग्रह से युक्त चन्द्रमा के कारण दीपक का प्रकाश कम होगा। शुभ ग्रहयुक्त चन्द्रमा से प्रकाश स्वच्छ रहेगा तथा लग्न के अंशों के अनुसार दीपक की बत्ती का कथन करना चाहिये। यदि लग्न प्रारम्भ के अंशों पर है तो दीपक की बत्ती थोड़ी जली होगी तथा अधिक शेष रहेगी। पन्द्रह अंशो पर बत्ती आधी ही रहती है तथा अधिक अंश होने पर बत्ती और अधिक कम हो जाती है।।६७-६८।।

आधुनिक सन्दर्भ में विशेष— दीपक का तेल जानने के लिये श्रीभट्टोत्पल के अनुसार चन्द्रमा यदि राशि के प्रारम्भ में हो तो तेल अधिक, मध्य में हो तो आधा तथा अन्तिम अंशों में हो तो कम होता है।

प्राचीन काल में बिजली नहीं थी, किन्तु आजकल जिन स्थानों पर विद्युत् प्रकाश होता है, वहाँ दीपक के तेल का विचार निष्प्रयोजनीय है। अस्तु, वहाँ पर तेल के स्थान पर टॉर्च आदि के सेलों की शक्ति, जेनरेटर्स के तैल की मात्रा, बैटरी की क्षीणता या पूर्णता तथा बिजली के वोल्टेज का विचार करना चाहिये। अत: चरलग्न में कम तथा अधिक होने वाला प्रकाश, टार्च की रोशनी आदि समझना चाहिये। स्थिर लग्न में बल्ब अपने होल्डर में दृढ़ता से कसा रहता है। द्विस्वभाव में उसे पकड़कर फोकस किया जाता है। दीपक की बत्ती के स्थान पर बल्ब के भीतर के फिलामेण्ट की जीर्णता आदि का विचार आज के युग के लिए समीचीन है।

◆

अथ तनुभावविचारः

तत्रादौ देहसौख्यकथनम्

लग्नेशे स्वोच्चमित्रांशे स्वनवांशगतेऽपि वा ।
शुभग्रहयुते दृष्टे देहसौख्यं विनिर्दिशेत् ।।६९।।

जन्मकुण्डली में यदि लग्नेश अपनी राशि, उच्च राशि, स्वनवांश या उच्चनवांश में हो तथा शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो उस जातक को शरीर का सुख होता है।।६९।।

लग्नेशे बलसंयुक्ते केन्द्रकोणगते शुभे ।
पापग्रहैरसन्दृष्टे देहसौख्यं वदेद् बुधः ।।७०।।

यदि लग्नेश लग्न में ही बैठा हो अथवा बली होकर केन्द्र या त्रिकोण स्थानों में बैठा हो, पापग्रहों की युति-दृष्टि से रहित हो तब भी उस जातक को देहसौख्य प्राप्त होता है।।७०।।

सत्कीर्तियोग:

देवलोकांशगे सूर्ये लग्नेशे बलसंयुते ।
भाग्येशे स्वोच्चराशिस्थे बहुसद्भाग्यकीर्तिमान् ।।७१।।

यदि सूर्य देवलोकांश (सात वर्गों में श्रेष्ठ स्थिति वाला) में हो तथा बली हो और भाग्येश अपनी उच्च राशि या स्वराशि में हो तो तातक बहुत ही श्रेष्ठ भाग्य वाला तथा कीर्तिमान होता है।।७१।।

समृद्धिकथनम्

लग्नाधिपोऽतिबलवाञ्छुभवर्गयुक्त:
स्वोच्चे सुहृद्ग्रहयुत: स्वनवांशके वा ।
लग्नाधिनाथसहिते यदि केन्द्रनाथे
सद्भाग्यकीर्तिधनधान्यचिरायुरेति ।।७२।।

यदि लग्नेश अतिबली होकर शुभ ग्रहों के वर्गों में हो, अपनी स्वराशि या उच्च राशि, किंवा मित्रराशि में अथवा स्वनवांशकादि में हो अथवा लग्नेश तथा केन्द्रेश की युति हो तो उस जातक को उत्तम भाग्य (ऐश्वर्य), कीर्ति, धन और अन्न की समृद्धि प्राप्त होती है।।७२।।

सौख्यादिहानिकथनम्

लग्नेश्वर: क्रूरसमन्वितश्चेद्देहस्य सौख्यादिविनाशमाहु: ।
तादृक्फलं नाशगतोऽपि तस्य शुभेक्षितश्चेत्फलमन्यथा स्यात् ।।७३।।

यदि लग्नेश क्रूर ग्रह से युत हो तो शरीर का सुख नष्ट होता है। इसी भाँति जब लग्नेश अष्टम भाव में होता है तो भी शरीरसुख की हानि होती है; परन्तु जब उसी लग्नेश पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो अशुभ फल में न्यूनता होती है।।७३।।

दु:स्थानपेनापि युते विलग्ननाथे विलग्ने सति रोगभाक् स्यात् ।
बलैर्विहीने सति लग्ननाथे केन्द्रत्रिकोणे न तु रोगभाक्स्यात् ।।७४।।

यदि लग्नेश दु:स्थानपतियों (३-६-८-११ के स्वामियों) के साथ हो अथवा दु:स्थानपति लग्न में हो तो जातक रोगी होता है। लग्नेश यदि बलहीन हो तो भी मनुष्य रोगी होता है; परन्तु लग्नेश बलहीन होने पर भी यदि केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो तो मनुष्य रोगी नहीं होता।।७४।।

लग्नेश्वराधिष्ठितराशिनाथो दुःस्थानगो दुर्बलदेहभाक्स्यात् ।
लग्नादिभावेश्वरराशिनाथैः दुःस्थैर्विलग्नादिविनाशमाहुः ।।७५।।

यदि लग्नेश जिस भाव में बैठा हो उस स्थान का स्वामी दुष्ट स्थान में बैठा हो तो उस जातक के शरीर में दुर्बलता-कृशता आदि रहती है। अन्य भावों के स्वामी भी यदि दुःस्थान (६-८-१२) में बैठते हैं तो उन भावों के फल का विनाश होता है।।७५।।

चौरभयकथनम्

पापैर्विलग्ने गुलिके त्रिकोणे लग्नेऽहिनाथे गुलिकेन युक्ते ।
लग्नेश्वरे पापयुतेऽथ लग्ने राहौ यदा वञ्चनचोरभीतिः ।।७६।।

यदि पापग्रह लग्न में बैठे हों तथा गुलिक (मान्दि) त्रिकोण में हो अथवा राहु गुलिक के साथ हो अथवा लग्नेश पापग्रहों के साथ हों और लग्न में राहु हो तो चोरों, उचक्कों, डाकुओं, उठाईगीरों, जेबकतरों आदि से भय रहता है।।७६।।

पुनश्चौरादिभयकथनं बृहद्बीजकथनञ्च

शनेस्तु योगात्प्रविलोकनाद्वा भीतिर्ध्रुवा वञ्चनचोरभूपैः ।
राहौ विलग्ने सकुजेऽर्कपुत्रे राहौ बृहद्बीजमिहाहुरार्याः ।।७७।।

लग्नेश्वरे मृत्युगते सराहौ रन्ध्रे समान्दौ तु तथैव वाच्यः ।
लग्ने सराहौ गुलिके त्रिकोणे रन्ध्रे कुजे मान्दियुते तथैव ।।७८।।

यदि लग्नेश शनि से युत अथवा दृष्ट हो तो सुनिश्चित रूप से ठग, चोर तथा राजा ऽआदि (पुलिस) से भय होता है। यदि राहु, शनि एवं मङ्गल से युत हो तब भी चौरादि का भय होता है। मङ्गल, शनि तथा राहु की युति को आचार्य 'बृहद्बीज' कहते हैं। लग्नेश यदि अष्टम भाव में राहु के साथ बैठा हो अथवा मान्दि (गुलिक) के साथ बैठा हो तो भी चौर भय, राजभय होता है। इसी प्रकार यदि लग्न में राहु हो तथा त्रिकोण स्थान में गुलिक हो अथवा आठवें घर में मङ्गल तथा गुलिक की युति हो तब भी चौरादि का भय होता है।।७७-७८।।

बृहद्बीज— श्लोक ७७ में 'बृहद्बीज' शब्द का प्रयोग किया गया है। मङ्गल तथा शनि के साथ राहु की युति बृहद्बीज कहलाती है। बृहत् का अर्थ है— विशाल, लम्बा-चौड़ा, दीर्घकालीन, सुदृढ़, प्रशस्त आदि। ये तीनों ग्रह एक साथ जिस भाव को प्रभावित करते हैं, उस भाव से सम्बन्धित फल में बड़े प्रमाण में हानि होती है। लग्न में होने पर ये चोर, डाकू, युद्ध आदि से हानि के सूचक होते हैं। इतना ही नहीं; प्रश्नलग्न में ये ग्रह एक साथ में बैठे हों या इनके साथ सूर्य-चन्द्र दोनों अथवा एक हो तब युद्ध का प्रश्न होने पर आक्रमणकारी के द्वारा स्थायी देश, राजा, सेनापति तथा सेना को भारी पराजय का सामना करना पड़ता है। यदि ये सप्तम भाव में हों तो स्थायी की जीत होती है तथा यायी की पराजय एवं मृत्यु होती है। बड़ी मात्रा में नरसंहार होता है। जैसा कि

प्रश्नवैष्णव (५.१३) में कहा गया है—

> सूर्येन्दुभौमाऽर्कजसैंहिकेयः सर्वैश्चतुर्भिः त्रिभिरेव लग्नगैः ।
> हन्यात्तदा स्थायिनमाशु यायी द्यूनस्थितैर्यायि नृपं नरेश्वरः ॥

दैवज्ञवल्लभा (७.१०) में भी इसी प्रकार का घातक फल शनि एवं मङ्गल की दृष्टि का कहा गया है।

यदि शनि, मङ्गल, राहु का प्रभाव जन्मकुण्डली में सप्तम तथा अष्टम भावों पर हो तब उस जातक के अण्डकोष-शिराकुटिलता या जल की वृद्धि से बढ़ जाते हैं; अतः वहाँ बृहद्बीज का अर्थ बड़े अण्डकोशों वाला भी होता है।

परन्तु इतना सब होने पर भी प्रायः सभी आचार्यों ने बहुमत से इस बृहद्बीज ग्रहयोग की स्थिति ३-६-११ भावों में होने पर इन भावों के लिये शुभकारी बताया है।

पुनश्च चौरादिभयकथनम्

लग्नेश्वराक्रान्ततदंशनाथो राह्वारमान्द्यादिभिरन्वितश्चेत् ।
तस्मिन् बृहद्बीजमिहाष्टमेशसंयुक्तराश्यंशपतिः सराहुः ।।७९।।

लग्नेश जिस राशि तथा नवांश में स्थित हो, उस राशि या नवांश में राहु, केतु, मङ्गल, शनि में से कोई हो अथवा तीनों हों (बृहद्बीज हो) तब या फिर अष्टमेशस्थित राशि या नवांश का स्वामी बृहद्बीज से युक्त हो तो भी चौरादि का भय होता है॥७९॥

शिरोव्रणयोगाः

लग्नेश्वरे भूमिसुते तनुस्थे पापान्विते पापविलोकिते वा ।
शिलाप्रहारैर्व्रणमुत्तमाङ्गे खड्गादिभिर्वा कथयन्ति तज्ज्ञाः ।।८०।।

शनिस्तथा चेद् व्रणमुत्तमाङ्गे वाताग्निशस्त्रैः पतनेन वापि ।
यदा भवेत्पञ्चघटीविलग्ने तदा बृहत्को न तदर्धलग्ने ।।८१।।

यदि लग्नेश भौम लग्न में स्थित होकर पापग्रहों से युत अथवा दृष्ट हो तो जातक के शिर पर पत्थर के प्रहार से या धारदार हथियार से व्रण बनेगा— ऐसा शास्त्रवेत्ताओं का मत है। यदि लग्नेश होकर शनि लग्न में बैठा हो तथा किसी पापग्रह से युत अथवा दृष्ट हो तब अग्नि, शस्त्र अथवा गिरने के कारण चोट से शिर में व्रण बनता है। बड़े लग्नों में जिनका उदयमान पाँच घटी (तीन सौ पल) से अधिक हो; यथा— सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक तो इनमें शिर बड़ा होता है। कम उदयमान वाले लग्नों में जन्म होने पर शिर बड़ा न होकर छोटा होता है॥८०-८१॥

लघुशीर्षनिर्बलशरीरकथनञ्च

आहुर्बृहत्कं मुनयस्तदूनं लग्ने शिरः सङ्कुचितं तु तज्ज्ञाः ।
शुष्के खगे लग्नगते विलग्ने शुष्के यदा देहकृशत्वमाहुः ।।८२।।

जैसा कि पूर्व में पञ्चघट्यात्मक लग्नों में शिर का आकार बड़ा होना बताया है, वैसा ही छोटे लग्नों में छोटा शिर होता है। यदि शुष्क राशि का लग्न हो और उसमें शुष्क ग्रह बैठा हो तो शरीर निश्चय ही कृश होता है॥८२॥

लग्नेश्वरे शुष्कयुते तथैव शुष्कग्रहाणां भवनस्थिते वा ।
लग्नाधिपे नाशगते तु शुष्कराशौ तनौ शुष्कमतीव कष्टम् ।।८३।।

लग्नेश यदि शुष्क ग्रहों से युत हो अथवा शुष्क ग्रहों की राशि में हो अथवा लग्नेश अष्टम भाव में शुष्क राशि के साथ हो तब शरीर कष्ट के कारण सूखा रहता है एवं अन्य स्थितियों में स्वाभाविक ही कृश शरीर होता है॥८३॥

लग्नाधिपस्थांशपराशिनाथः शुष्कग्रहस्थस्तनुशुष्कमाहुः ।
शुष्के विलग्ने बहुपापयुक्ते तत्रापि देहस्य कृशत्वमाहुः ।।८४।।

लग्नेश जिस ग्रह की राशि या नवांश में है, वह ग्रह शुष्क ग्रह हो अथवा शुष्क राशिनवांश में बैठा हो, तब शरीर कृश होता है । निर्बल लग्न पापग्रहों से युक्त हो तब भी शरीर में कृशता रहती है॥८४॥

शरीरस्य स्थौल्यकथनम्

लग्ने जलर्क्षे शुभखेचरेन्द्रैर्युक्ते तनुस्थौल्यमुदाहरन्ति ।
लग्नाधिपस्तोयखगो बलाढ्यः सौम्यान्वितश्चेत्तनुपुष्टिमाहुः ।।८५।।

लग्नाधिपश्चेज्जलराशिसंस्थः शुभान्वितस्तोयखगेन दृष्टः ।
लग्ने शुभक्षेत्रगतेऽपि चैवं लग्नेश्वरस्यांशपतौ जलर्क्षे ।।८६।।

पापग्रहाणाञ्च दृशा विहीने लग्ने शुभक्षेत्रगतेऽपि चैवम् ।
लग्ने गुरौ तेन निरीक्षिते वा जलर्क्षगेणापि जले विलग्ने ।।८७।।

(१) लग्न में जलराशि (कर्क, वृश्चिक, मीन, मकर) हो और उसमें शुभ ग्रह बैठे हों तो जातक स्थूल होता है। (२) यदि लग्नेश जलतत्त्व वाला ग्रह (चन्द्र या शुक्र) हो और बलवान होकर शुभग्रह से युक्त हो तब भी पुष्ट शरीर होता है। (३) यदि लग्नेश जल राशि में बैठा हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त हो तथा जलग्रह से दृष्ट हो तब भी शरीर पुष्ट होता है। (४) लग्न शुभ ग्रह की राशि का हो तथा लग्नेश जिस राशि में हो उसका स्वामी या लग्नेश की नवांश राशि का स्वामी यदि जलराशि में हो तो भी शरीर पुष्ट होता है। (५) यदि लग्न शुभ ग्रह की राशि में हो और उस पर पापग्रहों की दृष्टि न हो, तब भी यही फल होता है। (६) लग्न पर बृहस्पति की दृष्टि हो तब भी अथवा जलराशि लग्न को जलराशिगत गुरु देखे तब भी अतिस्थूलता होती है॥८५-८७॥

अतिस्थौल्ययोगः पिशाचपीडाकथनञ्च

सौम्यान्विते शोभनखेचरेन्द्रैर्दृष्टे त्वतिस्थौल्यमुदाहरन्ति ।
लग्ने शनौ राहुयुतेऽथ वा स्यात् पिशाचबाधा प्रवदन्ति सन्तः ।।८८।।

लग्न में शुभ ग्रह बैठे हों तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि भी हो तो शरीर अतिस्थूल होता है। लग्न में शनि, राहु की युति हो अथवा दोनों में से कोई बैठा हो अथवा लग्नस्थ राहु पर शनि की दृष्टि हो तो भूत-प्रेत-पिशाचादि की पीड़ा होती है— ऐसा विद्वानों का मत है॥८८॥

शारीरिक गठन— ऊपर के श्लोकों में आचार्य ने कृशता (दुबला) के योग, स्थूलता (मध्यम शरीर) के योग तथा अतिस्थूलता (थुलथुलेपन) के योग— इस प्रकार तीन प्रकार के योग दिये हैं। इनको इस प्रकार समझना चाहिये—

१. कृश शरीर— आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार एक्टोमार्फी या इक्टोमॉर्फी शरीर की संरचना का वह प्रकार है, जिसनें शरीर का निर्माण भ्रूण की त्वचा के इक्टोडर्म के पूर्वनिर्धारित ऊतकों से होता है, जिसके कारण शरीर विलकुल इकहरा रहता है और अस्थियाँ, नसें आदि स्पष्टत: दिखती रहती हैं।

२. मध्यम शरीर— पालि में इसे मज्झिमोरूपं कहते हैं। इसमें पतले की अपेक्षा कुछ स्थूलता रहती है। इसे अंग्रेजी में मिजोमार्फ या मसोमार्फ कहते हैं। मिज़ो का अर्थ मध्यम या मझोला होता है। श्लोक ८५ से ८७ के पूर्वार्ध तक इसी प्रकार के शरीर के योगों का वर्णन स्थूल के नाम से किया गया है।

३. स्थूल शरीर— यह अधिक मोटा शरीर होता है। इसके कारण समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसके शरीर में वसा की मात्रा अत्यधिक होती है।

विविधरोगादिकथनम्

लग्ने रविर्भूमिसुतेन दृष्टः श्वासं क्षयं विद्रधिगुल्मभाजम् ।
भौमे विलग्ने शनिसूर्यदृष्टे खड्गादिभिः पीडितदेहभाक्स्यात् ।।८९।।

जब जन्मलग्न सूर्य द्वारा दृष्ट हो तब जातक को श्वासरोग, क्षय, विद्रधि तथा गुल्म (वायु-गोला आदि) रोग होते हैं। जब लग्न में मङ्गल हो तथा उस पर शनि एवं सूर्य की दृष्टि हो तो जातक को तलवार आदि धारदार हथियारों से शरीर में व्रण एवं क्षत की पीड़ा होती है॥८९॥

पिशाचादिभयभ्रमणमन्तयोगश्च

केतौ विलग्ने बहुपापदृष्टे पिशाचचौरैर्भवति ध्रुवं भीः ।
लग्ने चरे तद्भवनेश्वरे वा चरस्थिते सञ्चरति प्रजातः ।।९०।।

जब लग्न में केतु हो और उस पर बहुत से पापग्रहों की दृष्टि हो तब चोरों एवं भूत-प्रेतादि का भय होता है। यहाँ 'पिशाच' शब्द से डाकू तथा हत्यारे समझना चाहिये। यदि लग्न में चर राशि हो अथवा लग्नेश चर राशियों में हो, तो वह जातक घुमक्कड़ होता है, वह सदैव यात्रा-प्रवास में रहता है। यदि चर लग्न तथा चर में ही लग्नेश स्थित हो अर्थात् दोनों योग एक ही साथ हों तो वह अधिक भ्रमणशील होता है। घूमने-फिरने

के शौकीन लोगों को जर्मन भाषा में वाण्डरलस्ट कहते हैं। अंग्रेजी का वाण्डर शब्द वास्तव में संस्कृत के 'वानधरः' का ही अपभ्रंश है।

विदेशे भाग्योदयकथनम्

सञ्चारशीलश्चरभे विलग्ने लग्नांशके चैवमुदाहरन्ति ।
विदेशभाग्यं चरभे विलग्ने चरे तदीशे चरखेटदृष्टे ।।९१।।

जिस प्रकार का चरराशि का फल कहा गया है, उसी भाँति चरनवांश का भी फल होता है। चरराशि तथा चरनवांश होने पर जातक की सञ्चरणशीलता (घुमक्कड़ी) अत्यधिक बढ़ी हुई होती है। जब कुण्डली में चरलग्न से उसका स्वामी भी चर में बैठा हो तथा चरराशियों में बैठे ग्रहों की दृष्टि लग्न तथा लग्नेश दोनों पर हो, तब विदेश में (जन्म स्थान से दूर) ही भाग्योदय होता है। ऐसा ही विचार नवांशकुण्डली से भी करना चाहिये तथा तारतम्य से फलकथन करना चाहिये॥९१॥

पुनरपि भाग्योदयकथनम्

स्थिरे स्वदेशे बहुभाग्ययुक्तः स्थिरग्रहैर्भूरिधनान्वितः स्यात् ।
मिश्रग्रहैर्मिश्रितभाग्यकीर्तिः नानाप्रदेशे प्रचरन् कुमार्गी ।।९२।।

जब स्थिर लग्न एवं नवांश हो तथा उसके स्वामी स्थिर राशि नवांशों में बैठे हों तब उस जातक का भाग्योदय स्वदेश में ही होता है और वह आर्थिक दृष्टि से पर्याप्त सम्पन्न होता है। स्थिर राशियों में जब स्थिर ग्रह (सूर्य-गुरु-शनि) होते हैं, तब भी जातक के पास पर्याप्त धन होता है। चर और स्थिर (मिश्रित) ग्रहों के होने से भाग्य और कीर्ति भी मिश्रित रूप में ही प्राप्त होती है और वह अनेक देशों में घूमता रहता है तथा वह कुमार्गी भी होता है॥९२॥

लग्नेश्वरे वीर्ययुते स्वतुङ्गे गम्भीरगामी पुरुषोऽन्यथा स्यात् ।
हीने तदीशे स जडः शुभैस्तु दृष्टे युते वा न तथाविधे तत् ।।९३।।

जब लग्नेश बलवान हो, स्वराशि उच्चराशि में हो तो जातक गम्भीरतापूर्वक गमन करता है। यदि लग्नेश दुर्बल हुआ तो अन्यथा (विपरीत) प्रभाव होता है अर्थात् वह परदेशभ्रमण में मूर्खतायें करता है। यदि लग्नेश पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तब वह मूर्खतायें नहीं करता॥९३॥

विशेष— उपर्युक्त दोनों श्लोकों में कुमार्गी तथा जड— इन दो शब्दों के साथ एक और विशेष शब्द 'गम्भीरगामी' का प्रयोग हुआ है। इनका तात्पर्य समझना अति आवश्यक है—

कुमार्गी— कुमार्ग (बुरे मार्ग) पर चलने वाले को 'कुमार्गी' कहते हैं। कुमार्ग क्या है? इस प्रसङ्ग में यह जानना आवश्यक है कि कुमार्ग का अर्थ बहुत व्यापक है। प्रथम तो यह कि वह व्यक्ति सीधे और सरल मार्ग से यात्रा नहीं करता, बल्कि जोखिमभरे मार्ग

से यात्रा करता है। दूसरा यह कि यात्राप्रवास में वह जो व्यवसाय जीविकोपार्जन के लिये करता है, उसमें अन्याय का आश्रय लेता है और दूरगामी परिणामों की चिन्ता न कर तस्करी आदि में संलग्न रहता है, जिसके कारण कष्टम विभाग द्वारा पकड़े जाने तथा न्यायालय से दण्डित होने का भय रहता है। तीसरा यह कि वह सोच-समझकर व्यवसाय नहीं करता, अपितु धन के लोभ में वह ऐसे व्यापारिक सौदे करता है, जिनमें उसे घाटा उठाना पड़ सकता है। चौथा यह कि वह व्यभिचार आदि में लिप्त होकर अपना धन, धर्म तथा शरीर तीनों ही गवाँ बैठता है और कभी-कभी वह अपने धाम (जन्मस्थान) से भी सदैव के लिये बिछुड़ जाता है। ग्रहयोगों के अनुसार विचार कर ज्योतिषी को सटीक फल कहना चाहिये।

गम्भीरगामी— यह कुमार्गगामी के विपरीत अर्थ देने वाला है, अर्थात् गम्भीरगामी वह व्यक्ति होता है जो यात्रा के उद्देश्य और भले-बुरे, नैतिकता-अनैतिकता आदि पर गम्भीर पर्यालोचन कर अपना काम करता है और सफल तथा प्रसन्न रहता है।

जड— किंकर्त्तव्यविमूढ़ व्यक्ति को जड़ कहते हैं, वह इतना दुविधाग्रस्त रहता है कि उचित निर्णय ही नहीं ले पाता।

बालाद्यवस्थायां सुख-दुःखकथनम्

लग्ने शुभे शोभनदृष्टियुक्ते बाल्यात्सुखं तन्न हि पापयोगात् ।
दुःखी भवेत्पापबहुत्वयोगे लग्ने तु बाल्यान्मरणान्तकालम् ।।९४।।

यदि लग्न में शुभग्रह हो तथा शुभग्रह लग्न को देखतें हों तब उस जातक को बाल्यावस्था से ही सुख की प्राप्ति होती है एवं यदि पापराशि का लग्न हो तथा उसको पापग्रह देखते हों तो बाल्यावस्था से ही सुख का अभाव होता है। यदि लग्न पर बहुत पापग्रहों की दृष्टि हो, पापग्रह लग्न में भी और द्रष्टा ग्रह पाप राशियों में ही बैठकर देखते हैं, तो जातक को बाल्यकाल से ही बहुत दुःख उठाना पड़ता है और वह दुःख अन्त समय तक बना ही रहता है।।९४।।

वर्गोत्तमांशे यदि लग्ननाथे स्वोच्चांशके वा स्वसुहृद्दृकाणे ।
शुभान्विते वा शुभदृष्टिपाते नरो भवेदामरणान्तसौख्यः ।।९५।।

यदि लग्न का स्वामी वर्गोत्तम नवांश में हो अथवा उच्च नवांश में हो अथवा स्वयं के या मित्र के द्रेष्काण में शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो जातक को मृत्युकालपर्यन्त सुख प्राप्त होता रहता है।।९५।।

बाँल्ये यौवने च सुखकथनम्

लग्नान्त्यलाभे शुभखेचरेन्द्रे लग्नेश्वरे केन्द्रगते बलाढ्ये ।
सिंहासनांशे यदि देवपूज्ये जातो भवेदादिममध्यसौख्यः ।।९६।।

यदि लग्न, द्वादश तथा लाभभाव में शुभ ग्रह स्थित हों और लग्नेश बलवान होकर केन्द्र में स्थित हो तथा गुरु सिंहासनांश (दशवर्गों में पाँच ग्रह श्रेष्ठ होने पर) में हो तो जातक को जीवन के आदि तथा मध्य भाग में सुख मिलता है॥९६॥

लग्नार्थसोत्थे शुभदृष्टियोगे लग्नेश्वरे शोभनखेचरेन्द्रे ।
पारावतांशे यदि दानवेज्ये जातो भवेदादिममध्यसौख्यः ।।९७।।

लग्न, अर्थ (धनभाव) तथा सोत्थ (तृतीय) भाव में शुभ ग्रह बैठे हों अथवा इनको शुभ ग्रह देखते हों, स्वयं लग्नेश शुभग्रह हो तथा शुक्र ग्रह पारावतांश में हो तो जीवन के प्रथम भाग तथा मध्य भाग में सुख होता है॥९७॥

पुनरपि बाल्यावस्थायां सुखपूर्वकं यौवने सुखयोगम्

बाल्ये सुखी स्यात् त्रिदशेन्द्रपूज्ये केन्द्रे यदा लग्नपतिर्बलाढ्यः ।
पारावतांशे यदि लग्ननाथे स्त्रीपुत्रमित्रार्थसुखान्वितोऽयम् ।।९८।।

यदि देवगुरु बृहस्पति केन्द्र में हों तथा लग्नेश बली हो तो जातक बाल्यावस्था में सुखी होता है। यदि लग्नेश पारावतांश में हो तो यौवन में भी जातक स्त्री, पुत्र, मित्र, धन आदि से सुखी रहता है॥९८॥

अन्त्यावस्थायां सुखयोगकथनम्

देवलोकांशगे शुक्रे लग्नेशे गोपुरांशके ।
लग्ने शुभग्रहैर्दृष्टे मध्यान्ते सुखमाप्नुयात् ।।९९।।

जब शुक्र देवलोकांश में तथा लग्नेश गोपुरांश में हो तथा लग्न पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो जातक को जीवन के मध्य भाग (युवावस्था) तथा अन्त्य भाग (बुढ़ापे) में सुख प्राप्त होता है॥९९॥

विशेष— दश वर्गों में छः वर्ग का ग्रह पारावतांश, सात वाला देवलोकांश तथा चार वाला गोपुरांश में कहलाता है (देखिये— अध्याय १२, श्लोक-२७)।

आदौ दुःखमन्ते सुखकथनम्

लग्ने शुभे धने पापे केन्द्रे पापसमन्विते ।
लग्नेश्वरे तूत्तमांशे आदौ दुःखं ततः सुखम् ।।१००।।

जब लग्न में शुभ ग्रह तथा धन भाव में पापग्रह बैठा हो, केन्द्रों में पापग्रह बैठा हो; साथ ही लग्नेश्वर उत्तमांश (तीन वर्गों से युक्त) में हो तब जातक को बाल्यकाल में दु:ख, फिर सुख मिलता है॥१००॥

बाल्यकाले सुखयोगकथनम्

लग्ने पापे धने सौम्ये भाग्ये कश्चिच्छुभग्रहः ।
लग्नेशे देवलोकस्थे बाल्ये सौख्यमतेऽन्यथा ।।१०१।।

जब लग्न में पापग्रह हो एवं धन भाव में तथा नवम भाव में शुभ ग्रह स्थित हों; साथ ही लग्नेश देवलोकांश में स्थित हो, तभी बाल्यावस्था में जातक को सुख प्राप्त होता है; अन्यथा नहीं॥१०१॥

सत्कीर्तियोगः

लग्नेश्वरे कर्मगते दिनेशे लग्नान्विते शोभनखेचरेन्द्रैः ।
योगे प्रदिष्टे तनुपे स्वतुङ्गे सत्कीर्तिमाहुर्मुनयोऽत्र तज्ज्ञाः ।।१०२।।

यदि लग्नेश दशम भाव में हो, सूर्य शुभ ग्रहों के साथ में लग्न में हो तथा लग्नेश उच्च राशि में स्थित हो तब उस व्यक्ति को सत्कीर्ति प्राप्त होती है— ऐसा मुनियों का कथन है॥१०२॥

विशेष— सत्कीर्तियोग में उत्पन्न जातक अपने श्रेष्ठ कर्मों से लोकप्रिय तथा लोकविख्यात होता है।

असत्कीर्तियोगः

पापे विलग्नेशपतौ सराहौ केन्द्रस्थिते कर्मणि पापखेटे ।
नीचग्रहे लग्नगतेऽर्कदृष्टे दुष्कीर्तियुक्तः स भवेत्तदानीम् ।।१०३।।

जब लग्न में पापग्रह स्थित हो तथा लग्नपति राहु के साथ केन्द्र में बैठा हो, साथ ही लग्न में नीच ग्रह सूर्य से दृष्ट हो, तब उस योग में जातक की दुष्कीर्ति होती है॥१०३॥

विशेष— दुष्कीर्तियोग में व्यक्ति बुरे कामों के लिये प्रसिद्ध होता है, अर्थात् वह कुख्यात होता है।

सत्कीर्तियोग

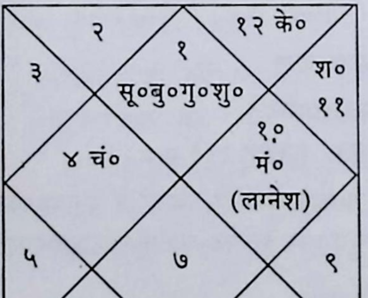
२
१२ के०
१
३
श०
सू०बु०गु०शु०
११
१०
४ चं०
मं०
(लग्नेश)
५
७
९
६ रा०
८

दुष्कीर्तियोग

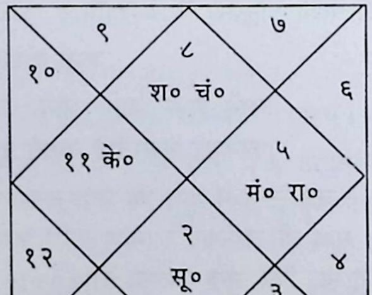
९
७
८
१०
श० चं०
६
११ के०
५
मं० रा०
२
१२
४
सू०
३
१ शु०
बु०गु०

पुनश्च सत्कीर्तियोगकथनम्

आरोहवीर्ये तु विलग्ननाथे भाग्याधिपे तादृशवीर्ययुक्ते ।
विख्यातकीर्तिः प्रभवो नरस्तु शुभग्रहेणापि समन्विते स्यात् ।।१०४।।

जब लग्न में आरोहवीर्य ग्रह (उच्च राशि के समीप उच्चाभिलाषी) हो, नवमेश भी आरोही ग्रह हो, भाग्येश के साथ कोई शुभ ग्रह भी बैठा हो तो उस जातक की कीर्ति विख्यात होती है।।१०४।।

पूर्वार्धे सौख्यमपरार्धे दुःखयोगकथनम्

आदौ वयसि पूर्वार्धे सौख्यं लग्ने भृगोः सुते ।
दुःखन्तु परभागे च बन्धौ पापे सुते तथा ।।१०५।।

यदि लग्न में शुक्र स्थित हो तो जीवन के पूर्वार्ध में सुख रहता है। यदि चतुर्थ एवं पञ्चम भाव में पापग्रह हो तो उत्तरार्ध में दुःख होता है।।१०५।।

विशेष— इस श्लोक में दो प्रकार के योग का सङ्केत है। एक वह, जिसमें पूर्वार्ध में सुख मिलता है तथा दूसरा वह, जिसके कारण उत्तरार्ध में दुःख होता है । यदि केवल लग्न में शुक्र हो तथा चतुर्थ-पञ्चम भाव पापप्रभाव से रहित हों तब बाल्यावस्था सुखी तथा जीवन का उत्तरार्ध मध्यम होगा, लेकिन यदि चतुर्थ एवं पञ्चम भाव पापपीड़ित होंगे तो उत्तरार्ध में दुःख ही प्राप्त होगा।

सत्कीर्तिसहदीर्घायुयोगः

लग्नाधिपे शुभयुते यदि तुङ्गभागे
केन्द्रत्रिकोणसहिते शुभदृष्टियुक्ते ।
कर्माधिपेन सहिते यदि वा स्वगेहे
सद्भाग्यकीर्तिधनधान्यचिरायुरेति ।।१०६।।

यदि लग्नेश उच्च राशि का होकर शुभ ग्रहों के साथ केन्द्र में हो या त्रिकोण में हो तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो अथवा कर्मेश के साथ स्वराशि का हो तब जातक को श्रेष्ठ भाग्य, सत्कीर्ति, धन-धान्य तथा दीर्घायु की प्राप्ति होती है।।१०६।।

पुनश्च शुभफलप्रदयोगः

लग्नाधिपोऽतिबलवानशुभैरदृष्टः
केन्द्रस्थितः शुभखगैरवलोक्यमानः ।
मृत्युं विधूय विदधाति सुदीर्घमायुः
सार्धं गुणैर्बहुभिरूर्जितया च लक्ष्म्या ।।१०७।।

जब लग्नेश अत्यन्त बलवान हो, उस पर पापग्रहों की दृष्टि न हो, वह केन्द्र में स्थित हो तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तब यह योग मृत्यु को हटाकर दीर्घायु प्रदान करता है तथा जातक को बहुत गुण, ऊर्जा तथा लक्ष्मी से युक्त बनाता है।।१०७।।

शतायुयोगः

केन्द्रत्रिकोणनिधनेषु न यस्य पापा
लग्नाधिपः सुरगुरुश्च चतुष्टयस्थौ ।
भुक्त्वा सुखानि विविधानि सुपुण्यकर्मा
जीवेच्च वत्सरशतं स विमुक्तरोगः ।।१०८।।

जिस कुण्डली में केन्द्र (१-४-७-१०) तथा त्रिकोण (९-५) स्थानों में पापग्रह न हों तथा लग्नेश एवं गुरु केन्द्र में बैठे हों, तब वह जातक विविध सुखों को भोगकर पुण्य कर्मों को करते हुए रोगरहित शरीर से सौ वर्षों तक जीवित रहता है।।१०८।।

सन्दिग्धायुकथनम्

लग्नेश्वरादतिबली निधनेश्वरोऽसौ
केन्द्रस्थितैर्निधनरिष्फगतैश्च पापैः ।
तस्यायुरल्पमथ वा यदि मध्यमायु-
रुत्साहसङ्कटवशात् परमायुरेति ।।१०९।।

यह श्लोक आयु के सम्बन्ध में अनिश्चित स्थिति का सङ्केत देता है । इसके अनुसार यदि लग्नेश की अपेक्षा अष्टमेश अधिक बलवान हो तथा पापग्रह केन्द्रस्थानों तथा ८-१२ स्थानों में हों तो प्रथम तो अल्पायु या मध्यमायु ही प्राप्त होती है । यदि मृत्यु न हुई हो तो जीवन में भीषण संकटों का सामना करना पड़ता है । जातक ने यदि उत्साहपूर्वक उन सङ्कटों को सहने का अभ्यास बना लिया तो उसे परमायु भी प्राप्त हो जाती है।।१०९।।

शतायुयोग

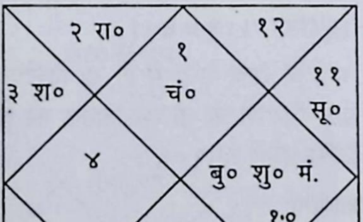
२ रा०
१२
१
चं०
३ श०
११
सू०
४
बु० शु० मं.
१०
७
गु०
५
९
६
८
के०

सन्दिग्धायुयोग

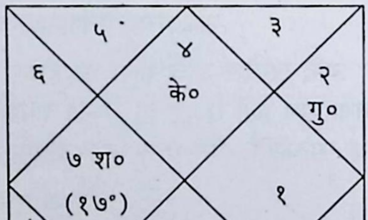
५
४
के०
३
६
२
गु०
७ श०
(१७°)
१
८
चं०
(१७°)
१०
रा०
१२
शु०
११
बु०सू०
९ मं०

अमितायुयोगः

एकांशकस्था बुधशुक्रमन्दा धर्मे स्थिता लग्नमुपागता वा ।
षष्ठाष्टमे वा हिमगुश्च यस्य सहस्त्रवर्षद्वयमस्य जन्तोः ।।११०।।

यदि नवम भाव में अथवा लग्न में एक ही नवांश में बुध-शुक्र-शनि स्थित हो तथा चन्द्रमा छठे या आठवें भाव में हो तो उस जातक की दो हजार वर्ष आयु होती है।।११०।।

विशेष— बुध ग्रह युवा तथा चञ्चल बनाये रखता है। शुक्र ग्रह शरीर में वीर्य की पुष्टि करता है। शनि दीर्घायु का कारक होता है एवं वृद्ध ग्रह है। ये तीनों ग्रह परस्पर मित्र हैं। ये एक ही नवांश में तब होंगे जब वे तीन अंश बीस कला वाले विभाग में ही स्थित हों। चन्द्रमा मन का कारक है, छठे चन्द्र में ताम्रपाद तथा आठवें चन्द्र में लौहपाद होने से ऐसे जातक में जीवनसंघर्ष की क्षमता अधिक होती है। इसी कारण इस योग में इतनी अधिक आयु सम्भव है।

रमतेरामयोगः

जीवांशकस्थाः सकला ग्रहेन्द्राः केन्द्राश्रिता धर्मधनाश्रिता वा ।
जातो नरः प्रव्रजितः स बाल्ये युगान्तमाहुर्बहुशास्त्रकर्ता ।।१११।।

यदि सभी ग्रह बृहस्पति के नवांश (धनु तथा मीन के नवांशों) में होकर केन्द्र तथा त्रिकोण धनभाव में बैठे हों तो वह मनुष्य बाल्यकाल से ही सन्यासी होकर युगान्त आयु को प्राप्त करता है तथा बहुत से शास्त्रों का कर्त्ता एवं ज्ञाता होता है।।१११।।

विशेष— यहाँ युगान्त से तात्पर्य बहुत वर्षों का समय ग्रहण करना चाहिये, जो कि १२० वर्ष से कम न हो।

सलक्ष्मीयुगान्तमायुर्योगः

मन्दांशकस्थाः रविभौमजीवाः कर्माश्रिता धर्मयुता बलाढ्याः ।
राशेः समाप्तौ हिमगौ विलग्ने युगान्तमायुः श्रियमादधाति ।।११२।।

जब शनि के नवांश में होकर रवि, गुरु, मङ्गल बलवान होकर नवम या दशम (अथवा दोनों में) बैठे हों तथा चन्द्रमा राशि के अन्तिम भाग में (२६°।४०' से अधिक) लग्न में स्थित हो तो जातक को अमितायु या युगान्तायु तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।।११२।।

युगपुरुषयोगः (मुनियोगः)

धर्मेश्वरे धर्मगते च यस्य भौमांशकस्थे हिमगौ च दृष्टे ।
मुनीश्वरोऽयं मुनियोगजातः शास्त्रार्थकर्त्ता युगमादधाति ।।११३।।

जिस जातक के नवम भाव में स्थित नवमेश पर मङ्गल के नवांश (मेष-वृश्चिक-नवांश) में बैठे हुए चन्द्रमा की दृष्टि हो तो मुनियोग होता है। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति युगपरिवर्तन की क्षमता रखने वाला तथा शास्त्रों का व्याख्याता एवं रचयिता होता है।।११३।।

विंशतिवर्षमितवयोपरन्ते सुखप्राप्तियोगः

लग्नेशे धनराशिस्थे लग्नेशस्थांशपेऽपि वा ।
तथास्थिते लाभनाथे विंशद्वर्षात्परं सुखम् ।।११४।।

यदि लग्नेश धन भाव में बैठा हो अथवा लग्नेशस्थित नवांश का स्वामी द्वितीय (धन) भाव में बैठा हो और इसी प्रकार लाभेश की स्थिति हो अर्थात् लाभेश भी धन-भाव में बैठा हो अथवा लाभेश जिस नवांश में है वह नवांशेश ही धनभाव में बैठा हो, तब इस प्रकार की ग्रहस्थिति में बीस वर्ष की आयु के उपरान्त ही सुख प्राप्त होता है।।११४।।

त्रिंशद्वर्षोपरान्तसुखयोगः

लग्नेशास्थांशनाथे तु केन्द्रकोणोच्चसंयुते ।
लाभेशे वा तथा युक्ते त्रिंशद्वर्षात्परं सुखम् ।।११५।।

लग्नेश अथवा लग्नेशस्थित नवांश का स्वामी केन्द्र, त्रिकोण अथवा उच्च राशि में बैठा हो अथवा इसी प्रकार लाभेश केन्द्र, त्रिकोण अथवा उच्च राशि का हो अथवा लाभेश जिस नवांश में बैठा है, वह नवांशेश केन्द्र, त्रिकोण अथवा उच्च राशिगत हो तो इस योग में तीस वर्ष की आयु होने के पश्चात् ही सुख की प्राप्ति होती है।।११५।।

षोडशाब्दात्परं सुखप्राप्तियोगः

लग्नेशे शुभराशिस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते ।
गोपुरांशगते वापि षोडशाब्दात्परं सुखम् ।।११६।।

यदि लग्नेश शुभग्रह की राशि में हो तथा उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो अथवा लग्नेश गोपुरांश में हो तो सोलह वर्ष की अवस्था के पश्चात् ही जातक को सुख प्राप्त होता है।।११६।।

अध्यायोपसंहार

ग्रहयोगेक्षणाभ्यान्तु बलाबलवशादपि ।
लग्नस्यैवं फलं प्रोक्तं श्रीमद्व्यङ्कटशर्मणा ।।११७।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ लग्नफलवर्णनो नाम द्वितीयोऽध्यायः ।।२।।

ग्रहों की युति-दृष्टि, बलाबल के आधार पर लग्नभाव का फल श्रीमद्वेङ्कटशर्मा द्वारा (ग्रन्थकर्त्ता) द्वारा कहा गया है।।११७।।

इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौडविरचित
'सर्वार्थबोधिनी' टीका हिन्दी में द्वितीय अध्याय पूर्ण हुआ।।

* * *

अथ तृतीयोऽध्याय:

धनभावफलविचाराध्याय:

द्वितीयस्थानाद्विचारणीयविषया:

कौटुम्बाद्भर्त्तव्यान्मुखं च वाग्दक्षिणाक्षिपूर्वार्थान् ।
विद्याभुक्तिविशेषान् दासान् मित्राणि च प्रवदेत् ।।१।।

द्वितीय भाव से भर्त्तव्य (जिनका भरण-पोषण करना जातक का कर्त्तव्य है, वे पारि-वारिक जन) मुख, वाणी, दाहिनी आँख, पूर्व जन्म का धन, विद्या, विशेष भोग-सामग्री, नौकर-चाकर, मित्रादि का विचार किया जाना चाहिये।।१।।

अस्थिहानिनक्तान्ध्यकरयोगश्च

लग्नेश्वरेण सहिते यदि वित्तनाथे दुस्थेऽस्थिनाशनमथास्फुजिदिन्दुयुक्ते ।
नेत्रेश्वरे तनुगते यदि नैशिकान्ध: स्वोच्चे शुभग्रहयुते न तथा वदन्ति ।।२।।

जब द्वितीय भाव का स्वामी लग्नेश के साथ ६।८।१२ भावों में हो तब अस्थि-भग्न होता है या अस्थिसम्बन्धी अन्य बीमारी होती है। यदि लग्न में द्वितीयेश शुक्र तथा चन्द्रमा के साथ बैठा हो, तो ऐसे जातक को रतौन्धी होती है; परन्तु यदि द्वितीयेश उच्च राशि का होकर अन्य शुभग्रहों (गुरु-बुध) से युक्त हो तो नक्तान्ध्य नहीं होता।।२।।

अन्धकाणयोगश्च

भान्वच्छलग्नपतिभि: सहिते तदीशे
जात्यन्धको भवति रन्ध्रव्रणान्त्यगेऽपि ।
रिष्फे धरासुतगते नयनं हि वामं
नाशं तदा व्रजति सूर्यसुते तदन्यत् ।।३।।

यदि द्वितीय भाव का स्वामी सूर्य-शुक्र तथा लग्नेश के साथ हो तब जातक अन्धा होता है अर्थात् जन्मान्ध होता है। यदि द्वितीयेश की स्थिति ६-८-१२ में होती है, तब जातक को जन्मजात दृष्टिदौर्बल्य होता है, अर्थात् उसे बहुत कम दिखता है। यदि बारहवें भाव में मङ्गल बैठा हो तो बाँयें नेत्र की हानि होती है एवं यदि बारहवें भाव में शनि बैठा हो तो दाहिने नेत्र की हानि होती है।।३।।

अन्योऽपि नेत्रनाशकथनम्

चन्द्राऽर्कसंयुक्तहरौ विलग्ने शन्यारदृष्टेऽक्षिविनाशमाहु: ।
शुभाशुभैर्बुद्बुदलोचन: स्याच्छुभैर्न दोष: सहितेक्षणाभ्याम् ।।४।।

यदि कुण्डली में सिंह लग्न हो और सूर्य-चन्द्र-मङ्गल— ये तीनों लग्न में बैठकर शनि से दृष्ट हों, तो नेत्रनाश होता है। यदि इन पर (लग्नगत ग्रहों पर) शुभाशुभ दोनों प्रकार के ग्रहों की दृष्टि हो तो बुद्-बुद् लोचन (आँखों के ढेलों का इधर-उधर भटकना) होता है। केवल शुभग्रहों की दृष्टि से नेत्रहानि या विकार नहीं होते हैं।।४।।

निमीलिताक्षयोगः

निमीलिताक्षश्च धनेशपापे तदीश्वरे शोभनदृष्टियुक्ते ।
लग्नाधिपे पापबहुत्वयोगे यमेन दृष्टे स तु रोगिनेत्रः ।।५।।

यदि द्वितीय भाव में पापग्रह बैठा हो तथा द्वितीयेश पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो जातक के नेत्र निमीलित रहते हैं। इस रोग को आधुनिक चिकित्सक टोसिस कहते हैं। यदि लग्नेश बहुत से पापग्रहों के साथ हो तथा उस पर यम (शनि) की दृष्टि हो तो नेत्रों में विकार रहता है।।५।।

विशालदृष्टिकथनम्

नेत्रे शुभे तद्भवनेश्वरे वा सौम्यान्विते कारकखेचरेन्द्रे ।
लग्नेश्वरेणापि युतेऽथ दृष्टे विशालदृष्टिः स नरो विशेषात् ।।६।।

द्वितीय भाव में शुभ ग्रह हो और द्वितीयेश भी शुभ ग्रह होकर शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तथा लग्नेश से भी युत अथवा दृष्ट हो तो उस जातक की विशेष रूप से विशाल दृष्टि होती है अर्थात् उसे बहुत दूर तक तथा स्पष्ट दिखायी पड़ता है।।६।।

पुनश्च नेत्ररोगयोगाः

शन्यारयोगे गुलिकेन युक्ते नेत्रेश्वरे तत्र तु नेत्ररोगः ।
नेत्रे यदा पापबहुत्वयोगे यमेन दृष्टे सति रुग्णनेत्रः ।।७।।

जब द्वितीयेश शनि तथा मङ्गल के साथ ही गुलिक से भी युक्त हो, तब नेत्ररोग होता है। यदि नेत्रस्थान (द्वितीय) में बहुत पापग्रह हों तथा उन पर शनि की दृष्टि हो तो भी नेत्ररोग होता है।।७।।

पित्तप्रकोपेन नेत्ररुक्कथनम्

नेत्रेश्वरस्यांशपतौ सपापे पापग्रहक्षेत्रगते तथैव ।
नेत्राधिपे वासरनायके तु धरासुते वा गुलिकार्कदृष्टे ।।८।।
उष्णोद्भवेनाप्यथ पित्तकोपैर्नेत्रस्य रोगो भवति प्रमादैः ।
अव्याजरोगैर्नयनस्य रोगस्तत्स्थानपे दुःस्थगते ससौम्ये ।।९।।

द्वितीयेश जिस नवांश में हो, उसका स्वामी पापग्रह के साथ हो तथा पापग्रह की राशि में हो अथवा द्वितीयेश सूर्य (कर्क लग्न में) या मङ्गल (मीन तथा तुला लग्नों में) हो तथा गुलिक पर सूर्य की दृष्टि हो तो इन परिस्थितियों में उष्णता के कारण अथवा पित्तप्रकोप से प्रमादवश (असावधानी बरतने से) नेत्ररोग हो जाता है। यदि द्वितीयेश

६-८-१२ भावों में शुभ ग्रहों से युक्त हो तो सामान्य कारकों से नेत्ररोग होता है॥८-९॥

लग्नेतरभावात्सम्बन्धीनां रोगविचारकथनम्

सहोदरादात्मोद्भवशत्रुगेहे कलत्रमित्रादि लभेत्तथैव ।
रव्यारयुक्ते सति नेत्रनाथे दृष्टे तु ताभ्यां नयनान्तरक्तः।।१०।।

इस श्लोक में ग्रन्थकार सर्वप्रथम यह बताते हैं कि जातक की जन्मकुण्डली से ही उसके अन्य सम्बन्धियों के नेत्रों का विचार भी किया जा सकता है। यथा— कुण्डली के तृतीय भाव को लग्न मानकर उसके द्वितीय भाव (अर्थात् जातक की कुण्डली के चतुर्थ भाव) से पूर्वकथित योगों के अनुसार नेत्रादि का विचार करें। जातक की कुण्डली के पुत्रस्थान (पञ्चम भाव) को लग्न मानकर उससे पूर्व की भाँति पुत्र-पुत्री के नेत्रों का कष्ट विचार करें। इसी प्रकार छठे भाव को लग्न मानकर शत्रु के नेत्ररोग, सप्तम से पत्नी या पति के नेत्ररोग कहना चाहिये। तात्पर्य यह है कि इसी भाँति चतुर्थ से माता के, दशम से पिता के नेत्ररोगों का विचार भी किया जा सकता है।

पुन: श्लोक के उत्तरार्ध में कहते हैं कि यदि द्वितीयेश सूर्य तथा मङ्गल के साथ बैठा हो अथवा उनसे दृष्ट हो तो नेत्रों के किनारे लाल रहते हैं॥१०॥

कारकैरपि नेत्ररोगविचाराणा

सौम्यग्रहौ कारकभावनाथौ स्यातां शुभा दृष्टिरसौम्यता तु ।
पापग्रहैर्वीक्षणयोगतश्च पित्रादिकानां फलमेवमाहुः।।११।।

यदि कुण्डली में पित्रादि सम्बन्धियों का कारक तथा उन भावों के स्वामी दोनों ही ग्रह सौम्य ग्रह हों तथा उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो एवं शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो उन सम्बन्धियों को भी ग्रहों की दृष्टि से उत्पन्न फल नेत्ररोगादि, शारीरिक सुख-दु:ख आदि के सम्बन्ध में प्राप्त होता है।

तात्पर्य यह है कि भावेश के साथ कारक का विचार करके जातक के सम्बन्धियों का भी भविष्य कथन किया जाता है॥११॥

कुटुम्बसंरक्षणादिकथनम्

कुटुम्बराशेरधिपे ससौम्ये केन्द्रस्थिते स्वोच्चसुहृद्गृहे वा ।
सौम्यर्क्षयुक्ते यदि जातपुण्यः कुटुम्बसंरक्षणवाग्विलासः।।१२।।

यदि द्वितीय भाव का स्वामी शुभ ग्रह के साथ केन्द्र में बैठा हो अथवा अपनी उच्च राशि, स्वराशि अथवा मित्रराशि में हो या शुभ ग्रह की राशि में बैठा हो तो वह पुण्यशाली, मधुरभाषी तथा अपने कुटुम्ब का पालन सम्यक् रूप से करने वाला होता है॥१२॥

परोपकारियोग:

स्वोच्चस्थिते शोभनखेचरेन्द्रे कुटुम्बराशौ शुभवीक्षिते वा ।
अनेकसंरक्षणजातपुण्यो लग्नेश्वरे वीर्ययुते स्वतुङ्गे ।।१३।।

यदि द्वितीय भाव में कोई शुभ ग्रह स्वराशि, उच्च राशि का होकर शुभ ग्रहों से वीक्षित होकर बैठा हो, तब भी पूर्व श्लोक बारहवें की भाँति जातक स्व-कुटुम्ब की रक्षा में तत्पर रहता है। यदि लग्नेश बली होकर स्वराशि या उच्च राशिगत हो तब जातक अनेकों का संरक्षण करने वाला पुण्यशाली होता है॥१३॥

गुरौ कुटुम्बे स्वपतौ यदि स्याद् भृगौ बुधे तादृशभावनाथे ।
स्वोच्चे सुहृत्क्षेत्रगतेऽथ बन्धौ परोपकारी जनरक्षकः स्यात् ।।१४।।

यदि द्वितीय भाव में बृहस्पति स्थित हो अथवा द्वितीयेश के साथ बुध एवं शुक्र स्थित हों अथवा गुरु चतुर्थ भाव में स्वक्षेत्री, उच्च राशि या मित्रराशि का हो अथवा बुध शुक्र इसी प्रकार की स्थिति में चतुर्थ स्थानगत हों तो जातक परोपकारी तथा जनरक्षक होता है॥१४॥

असहाययोगः

पापे तु तद्राशिपतौ तदानीं पापेक्षिते पापयुते स्वतुङ्गे ।
लग्नेश्वरे हीनबले सपापे स्वजीवनोपायसहायको न ।।१५।।

यदि द्वितीयेश पापग्रह की राशि में हो, पापग्रह से युत-दृष्ट हो तथा उच्च राशि में हो एवं लग्नेश हीन बली होकर पापयुक्त हो तो उस जातक को जीवन में कोई सहायक या मित्र नहीं मिलता। उसे अपने जीवन की गाड़ी को स्वयं ही खींचना पड़ता है (उसके वृद्धावस्था में निराश्रित होने की सम्भावना प्रबल होती है)॥१५॥

विशेष— यह योग तुला राशि, मीन राशि, कर्क राशि के लग्नों में ही सम्भव है; क्योंकि तभी द्वितीयेश मङ्गल अपनी उच्च राशि तथा पापग्रह की राशि में हो सकता है। इसी प्रकार कर्क में द्वितीयेश सूर्य अपनी उच्च राशि, जो कि पापग्रह की राशि है, उसमें बैठ सकता है।

असहाययोग

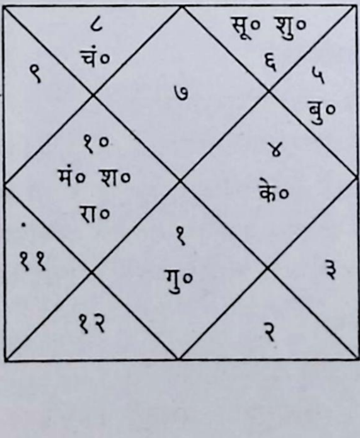

निराश्रययोगः

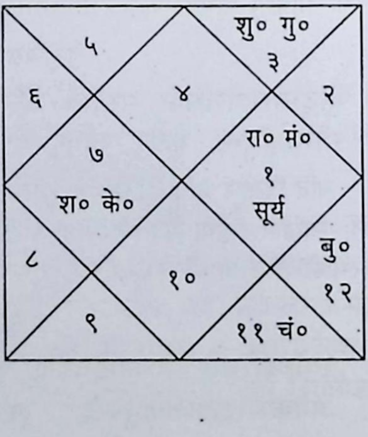

सुखहीनयोगः

पापे बहुत्वे स्वकुटुम्बराशौ पापेक्षिते हीनबले तदीशे ।
दुःस्थे विलग्नाधिपतौ सपापे स्वजीवनं नास्ति सुखेन तस्य ।।१६।।

यदि द्वितीय भाव में पापग्रहों की बहुलता हो, द्वितीयेश हीनबली होकर पापग्रहों से वीक्षित हो, लग्नेश दुःस्थानगत होकर पापग्रहों से युक्त हो, तब ऐसे जातक का जीवन सुखपूर्वक नहीं व्यतीत होता अर्थात् उसे जीवन में कष्टों का सामना बहुलता से करना पड़ता है॥१६॥

राजयोगः

पत्यौ कुटुम्बस्य तृतीयराशौ स्थिते यदा पुंग्रहसौम्यदृष्टे ।
शुभस्थिते खेचरनायके स्यात् स्वतुङ्गगे सर्वजनावनीशः ।।१७।।

जब द्वितीयेश तृतीय भाव में पुरुष ग्रहों तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो और शुभ ग्रह की राशि में सूर्य बैठा हो तो जातक पृथ्वी का स्वामी होता है॥१७॥

विशेष— इस योग में द्वितीयेश तथा सूर्य— इन दो की शुभ स्थिति से राजयोग कहा गया है। 'शुभस्थिते खेचरनायके स्यात्' का अर्थ यह है कि खेचरनायक (सूर्य) शुभ ग्रह की राशि के साथ ही शुभ स्थान तथा शुभ स्थिति में हो; क्योंकि तुलाराशि शुभ ग्रह शुक्र की राशि है, परन्तु सूर्य की नीच राशि होने से सूर्य अशुभ स्थिति में हो गया तथैव सूर्य को दिग्बल से हीन तथा ६-८-१२ भावों में भी नहीं होना चाहिये, वह पापग्रहों से युत-दृष्ट भी न हो। यहाँ इस राजयोग का अर्थ वह जातक केन्द्र या राज्य सरकारों में महत्त्वपूर्ण पद पर होगा— ऐसा ग्रहण करना चाहिये॥

पञ्चाशज्जनरक्षकयोगः

तन्नाथे गोपुरांशस्थे कुटुम्बेशांशपे शुभे ।
सिंहासनांशके वापि पञ्चाशज्जनरक्षकः ।।१८।।

जब द्वितीय भाव का स्वामी गोपुरांशक में हो अथवा द्वितीयेश जिस ग्रह के नवांश में हो, वह शुभ ग्रह होकर सिंहासनांश में स्थित हो तो वह जातक पचास व्यक्तियों की रक्षा करता है॥१८॥

विशेष— यहाँ 'पचास लोगों की रक्षा करने वाला' यह अर्थ बड़ा व्यापक है। इसका भाव यह है कि कभी आवश्यकता पड़ने पर वह पचास लोगों के प्राण बचाता है अथवा वह अपने प्रतिष्ठान में पचास लोगों को रोजगार या नौकरी देता है, अथवा उसके परिवार में पचास लोग रहते हैं। यानी वह बड़े संयुक्त परिवार का स्वामी होता है अथवा वह व्यक्ति ऐसे पद पर काम करता है, जहाँ उसके अधीन पचास व्यक्ति कार्यरत रहते हैं।

पुनः राजयोगः

स्वोच्चत्रिकोणायगते कुटुम्बराशेः पतौ लग्नपते बलाढ्ये ।
कुटुम्बनाथस्थितराशिनाथे केन्द्रस्थिते सर्वजनावनीशः ।।१९।।

यदि द्वितीयेश स्वराशि या उच्च राशि या मूल त्रिकोण राशि का होकर ५-९ तथा लाभभाव में बैठा हो तथा द्वितीयेश जिस राशि में बैठा हो, उसका स्वामी केन्द्रगत हो तो वह जातक सब लोगों का राजा होता है।।१९।।

दुर्घटजीविकायोगः

द्वितीये पापसंयुक्ते कुटुम्बेशे तथास्थिते ।
पापग्रहेण सन्दृष्टे दुर्घटे भावनं लभेत् ।।२०।।

यदि द्वितीय भाव में पापग्रह बैठा हो तथा द्वितीयेश भी पापयुत या पापदृष्ट हो तब वह व्यक्ति बचपन में कठिनाइयों में पलकर बड़ा होता है और जीवन में अकल्पित बाधाओं का सामना करते हुए अपनी जीविका चलाता है।।२०।।

इस श्लोक में 'दुर्घटभाविनं' वाक्यांश का प्रयोग है, जिसमें दुर्घट का अर्थ कठिन तथा असम्भव होता है। 'भाविन' का अर्थ होनहार है, अत: ऊपर वर्णित व्यक्ति के जीवन में कुछ अनहोनी घटनायें घटती हैं— इस अर्थ की ओर भी संकेत है। ऐसी घटनायें; जिनके कारण व्यक्ति आजीविका हेतु कुछ कर न सके और जैसे-तैसे कुछ करे भी तो आया हुआ धन अचानक आयी विपत्तियों में खर्च होता जाय।

विंशतिजनानां पालकयोगः

आविंशते रक्षकः स्यात् कुटुम्बेशे शुभैर्युते ।
पारावतांशके तस्मिन् धने चन्द्रसमन्विते ।।२१।।

जब द्वितीयेश शुभ ग्रहयुक्त होकर पारावतांशक में हो तथा द्वितीय में चन्द्रमा हो तो वह जातक बीस मनुष्यों का पालक होता है।।२१।।

शतत्रयजनानां नायकयोगः

स्वोच्चे सुहृद्भे स्वगृहे तदीशे सिंहासने तद्भवनेश्वरे वा ।
पारावतांशे गुरुदृष्टियुक्ते शतत्रयं शास्ति च जातपुण्यः ।।२२।।

जब द्वितीयेश उच्च राशि में, मित्र राशि में या स्वराशि में स्थित हो अथवा सिंहासनांश में हो तथा जिस भाव में बैठा हो उस राशि का स्वामी पारावतांश में होकर गुरु से दृष्ट हो तो वह पुण्यशाली जन तीन सौ लोगों पर शासन करता है।।२२।।

सहस्रजनानां पालकयोगः

कुटुम्बनाथे परमोच्चयुक्ते देवेन्द्रपूज्येन समीक्षिते वा ।
तथाविधे तद्भवनेऽपि जातः सहस्ररक्षो भवति प्रतापैः ।।२३।।

यदि द्वितीयेश अपने परमोच्च में स्थित होकर गुरु से दृष्ट हो अथवा द्वितीयेश अपने घर में (द्वितीय भाव में) ही सिंहासनांश में हो, तो वह जातक एक सहस्त्र लोगों को संभालता है। अपने प्रताप से उनका नेता या अधिकारी होता है॥२३॥

असङ्ख्यजनपालकयोग:

सिंहासनांशे त्रिदशेशपूज्ये शुक्रे पुनर्गोपुरसंयुते तु ।
ऐरावतांशे धनपे बलाढ्ये जातस्त्वसंख्यातनृरक्षक: स्यात् ।।२४।।

यदि बृहस्पति सिंहासनांश में तथा शुक्र गोपुरांश में हो, साथ ही धनेश बलवान होकर ऐरावतांश में बैठा हो तो जातक लोगों का नायक होता है॥२४॥

विशेष— यह योग जनपदाध्यक्ष, विधायक, सांसद आदि के पद का सूचक है अथवा ऐसा व्यक्ति उच्च प्रशासनिक अधिकारी होता है।

सुमुखयोग:

मुखेशे केन्द्रभावस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते ।
मुखे सौम्ययुते वापि सुमुख: स नरो भवेत् ।।२५।।

यदि द्वितीयेश केन्द्र में बैठा हो तथा शुभ ग्रहों से वीक्षित हो; साथ ही द्वितीय भाव में शुभ ग्रह बैठे हों तो जातक सुन्दर मुख वाला तथा सुन्दर मधुर वाणी बोलने वाला होता है॥२५॥

प्रफुल्लवदनयोग:

प्रफुल्लवदन: श्रीमान् केन्द्रे मुखपतौ यदा ।
स्वोच्चमित्रस्ववर्गस्थे तन्नाथे गोपुरांशके ।।२६।।

जब द्वितीयेश केन्द्र में बैठा हो, साथ ही उच्च राशि, मित्रराशि तथा अपने वर्ग में हो तब अथवा द्वितीयेश गोपुरांश में हो तो वह जातक प्रसन्नवदन तथा कान्तिमान होता है॥२६॥

दुर्मुखयोग:

पापैर्युते मुखस्थाने तन्नाथे पापसंयुते ।
नीचराशिगते वापि दुर्मुख: पापवीक्षिते ।।२७।।

जब मुखस्थान द्वितीय में पापग्रह हों, द्वितीय भाव का स्वामी पापग्रहों के साथ या नीच राशिगत हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हो तो वह जातक दुर्मुख (कुरूप चेहरे वाला तथा बुरी वाणी बोलने वाला) होता है (गाली-गलौज तथा अशुभ वचन बोलने वाला दुर्मुख कहलाता है)। अमङ्गलकारी वचन, दूसरे के नाशसूचक वचन, अकारण बोलना दुर्मुख होने का लक्षण है॥२७॥

क्रुद्धमुखयोग:

क्रोधयुक् स नरः पापी तदीशे गुलिकान्विते ।
पापयोगबहुत्वेऽस्मिन् नीचशत्रुवशं गतः ।।२८।।

जब द्वितीयेश गुलिक (मान्दि) के साथ बैठा हो, द्वितीय भाव में बहुत से पापग्रह एकत्रित बैठे हों, द्वितीयेश नीच राशि तथा शत्रुग्रहों के साथ हो तो इस योग वाला जातक सदैव क्रोधयुक्त रहता है। उसके मुखमण्डल पर क्रोध की आभा सदैव झलकती रहती है।।२८।।

वाग्मीयोग:

वाक्स्थानपे सौम्ययुते त्रिकोणे केन्द्रस्थिते तुङ्गसमन्विते वा ।
शुभेक्षिते पुङ्ग्रहयोगयुक्ते वाग्मी भवेद्युक्तिसमन्वितोऽसौ ।।२९।।

जब वाणीस्थान (द्वितीय) का स्वामी सौम्य ग्रहों के साथ अथवा उच्च का होकर केन्द्र अथवा त्रिकोण में बैठा हो, उसके साथ पुरुषग्रह हों तथा वह शुभ ग्रहों से वीक्षित हो तो ऐसा जातक वाग्मी होता है।।२९।।

विशेष— इस श्लोक में वाग्मी (वाग्मिन्) शब्द का प्रयोग है, जिसका अर्थ वाक्पटु, वार्तालाप-कुशल, अच्छा भाषण देने वाला, सुवक्ता या प्रवक्ता होता है। देवगुरु बृहस्पति को भी वाग्मी कहा जाता है। जो वाणी तथा वक्तृता अर्थात् सम्भाषण तथा भाषण दोनों में पटु हो, वह वाग्मी कहलाता है।

मूकयोग:

वाक्स्थानपे देवपुरोहितेन युक्ते यदा नाशगतेऽत्र मूकः ।
पित्रादिकानां इयमेव रीतिरुक्ता मुनीन्द्रैः बहुशास्त्रविद्भिः ।।३०।।

जब कुण्डली में द्वितीय भाव का स्वामी देवगुरु बृहस्पति के साथ होकर अष्टम भाव में बैठा हो, तब जातक मूक होता है अर्थात् वह गूंगा होने के कारण बोल नहीं पाता।।३०।।

विशेष— देवगुरु बृहस्पति ज्ञान एवं समझदारी के कारक होते हैं; अत: द्वितीयेश तथा गुरु का सम्बन्ध जब नाशस्थान में होगा तो वाणी नष्ट रहेगी, परन्तु भीतर ज्ञानशक्ति अधिक होने से उसमें समझदारी खूब होगी; वह इशारों से अपनी बात समझाने में कुशल होता है। प्राय: जो लोग गूंगे होते हैं, वे बहिरे भी हुआ करते हैं। परन्तु सदैव ऐसी स्थिति नहीं होती। बहुत गूंगे सुनते तो हैं, परन्तु बोल नहीं पाते; उन्हें मूक-बधिर कहा जाता है। अंग्रेजी में गूंगे को डम्ब तथा म्यूट् कहते हैं। यह म्यूट् शब्द लैटिन का म्यूटस् है, जो कि संस्कृत भाषा के मूक: का अपभ्रंश है । यहाँ 'क' वर्ण के स्थान पर 'ट' वर्ण हो गया है।

इस श्लोक के अनुसार पिता इत्यादि सम्बन्धियों की मूकता भी दशमादि भावों को लग्न मानकर जानी जा सकती है।

वाचालयोगः

वाचालकः केन्द्रगते तदीशे पारावतांशे परमोच्चभागे ।
सिंहासने देवगुरौ भृगौ वा वर्गोत्तमे सोमसुतेन युक्ते ।।३१।।

जब द्वितीयेश केन्द्र में बैठा हो, पारावतांश में होकर परमोच्च का भी हो, साथ ही या तो गुरु सिंहासनांश में हो या शुक्र बुध के साथ वर्गोत्तम में हो तो जातक वाचाल (बातूनी) या बहुत बोलने वाला होता है॥३१॥

पटुतरवाग्मीयोगः

वागीशस्यांशपे सौम्ये स्वोच्चे शुभसमन्विते ।
गोपुरांशगते वापि वाग्मी पटुतरो भवेत् ।।३२।।

द्वितीयेश जिस ग्रह के नवांश में में शुभ ग्रह हो तथा अपनी उच्च राशि में शुभ ग्रहों से युक्त-दृष्ट बैठा हो अथवा द्वितीयेश गोपुरांश में स्थित हो तो जातक पटुतर वाग्मी होता है अर्थात् बोल-चाल में चतुर तथा मुग्ध करने वाला होता है॥३२॥

वाज्मीयोगः

वागीशोऽपि बलान्वितः शुभयुतो वर्गोत्तमांशेऽपि वा
वाज्जमीस्याद्भवनेश्वरो गुरुयुतः पारावतांशेऽपि वा ।
तन्नाथो भृगुणा बुधेन सहितस्त्वैरावतांशे तथा
स्वोच्चे स्वे सुहृदाङ्गृहे धनपतौ वाक्स्थानकोलाहलः ।।३३।।

(१) जब वाणी स्थान का स्वामी (द्वितीय भावेश) बलवान तथा शुभ ग्रह से युक्त होकर वर्गोत्तम हो तो जातक उच्च स्वर में बोलने वाला होता है। (२) यदि द्वितीयेश गुरु के साथ पारावतांश में हो, (३) यदि द्वितीयेश बुध एवं शुक्र के साथ ऐरावतांश में हो अथवा यदि (४) द्वितीयेश उच्च राशि, स्वराशि या मित्रराशि में हो तो इन योगों में जातक जिस स्थान पर रहता है वहाँ उसके बोलने से कोलाहल होता रहता है॥३३॥

विशेष— बुलन्द आवाज तथा ऊँचे स्वर में बोलने वालों को संस्कृत में वाज्मी या वाज्जमी कहते हैं, क्योंकि 'वाज:' का अर्थ ध्वनि या आवाज होता है। जिसकी आवाज ऊँची या बुलन्द हो वह वाज्मी होता है। ऐसे जातक यदि कहीं वार्तालाप कर रहे हैं तो जो अपरिचित होंगे वह समझेंगे कि कहीं लड़ाई-झगड़ा हो रहा है।

सभाजडयोगः

सभाजडो वागधिपः सपापः कर्मस्थितो नीचगतोऽर्कयुक्तः ।
मान्द्यन्विते वाग्भवनेऽर्कयुक्ते पापैस्तु दृष्टे स जडोऽत्र जातः ।।३४।।

कुछ लोग अपरचितों के बीच, सभा, मण्डली, समारोह आदि में वार्तालाप नहीं कर पाते; किन्तु अपने घर तथा परिचितों में खूब बोलते रहते हैं। ऐसे व्यक्ति को सभाजड़ कहा जाता है। यदि कुण्डली में द्वितीयेश पापग्रहों के साथ दशम भाव में नीच राशिगत तथा सूर्य के साथ अस्तङ्गत हो अथवा द्वितीय भाव में द्वितीयेश गुलिक या सूर्ययुक्त होकर पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक सभाजड़ होता है।।३४।।

विशेष— दशम में आत्मकारक सूर्य जब दिग्बली होकर द्वितीयेश को अस्त करेगा अथवा द्वितीय भाव में यही स्थिति बनती है, तो आत्मविश्वास की कमी के कारण जातक को सार्वजनिक रूप में बोलने में असमर्थता होती है।

उत्तमज्योतिर्विदयोगः

केन्द्रे बुधे वागधिपे बलाढ्ये शुक्रे धनभ्रातृगते ससौम्ये ।
स्वोच्चे धने दानवपूजिते वा ज्योतिर्विदां श्रेष्ठतमो नरः स्यात् ।।३५।।

जन्मकुण्डली में बुध केन्द्र में बैठा हो, द्वितीयेश बलवान हो, शुभ ग्रहों से युक्त शुक्र उच्च राशि या स्वराशि का होकर द्वितीय भाव में बैठा हो तो जातक श्रेष्ठ ज्योतिषी बनता है।।३५।।

गणितज्ञयोगः

गणितज्ञो भवेज्जातो वाग्भावे भूमिनन्दने ।
ससोमे बुधसन्दृष्टे केन्द्रे वा सोमनन्दने ।।३६।।

यदि द्वितीय भाव में मङ्गल चन्द्रमा के साथ बुध से दृष्ट होकर बैठा हो अथवा द्वितीयस्थ चन्द्र मङ्गल के होते हुए बुध केन्द्र में बैठा हो तो जातक गणितज्ञ होता है।।३६।।

पुनः गणितज्ञयोगः

वाग्भावपे बुधे स्वोच्चे लग्ने देवेन्द्रपूजिते ।
शनावष्टमसंयुक्ते गणितज्ञो भवेन्नरः ।।३७।।

यदि बुध द्वितीयेश होकर स्वराशि या उच्च राशि में हो, लग्न में गुरु स्थित हो तथा शनि अष्टम में हो तो उस योग में जन्म लेने वाला जातक गणितज्ञ होता है।।३७।।

पुनरपि गणितज्ञयोगः

केन्द्रत्रिकोणगे जीवे शुक्रे स्वोच्चगते सति ।
वाग्भावपेन्दुपुत्रे वा गणितज्ञो भवेन्नरः ।।३८।।

जब कुण्डली में गुरु केन्द्र या त्रिकोण भावों में, शुक्र स्वक्षेत्री या उच्च हो तथा द्वितीय में चन्द्रपुत्र (बुध) बैठा हो तो इस योग का जातक गणितज्ञ होता है।।३८।।

युक्तिपरायणयोगः

वाग्भावपे रवौ भौमे गुरुशुक्रनिरीक्षिते ।
पारावतांशगे सौम्ये तत्तद्युक्तिपरायणः ।।३९।।

जब द्वितीयेश सूर्य (कर्क लग्न होने पर) तथा मङ्गल (मीन या तुला लग्न होने पर) द्वितीयेश हों तथा इन पर गुरु-शुक्र की दृष्टि हो और बुध पारावतांश में हो तब जातक युक्तिपरायण होता है।।३९।।

विशेष— इस श्लोक में दिया हुआ शब्द 'युक्तिपरायण' मेरी समझ में कूटनीतिज्ञ होने का योग है, क्योंकि सूर्य तथा मङ्गल दोनों क्षत्रिय एवं राजकर्म से सम्बन्धित ग्रह हैं।

न्यायशास्त्रज्ञयोगः

गुरुशुक्रौ धनेशौ चेद्रविभौमनिरीक्षितौ ।
मूलत्रिकोणतुङ्गे वा तर्कशास्त्रविदां वरः ।।४०।।

जब गुरु, शुक्र तथा द्वितीयेश मूल त्रिकोण या उच्च राशिस्थ हों तथा उन पर सूर्य एवं मङ्गल की दृष्टि हो तो जातक तर्कशास्त्री होता है।।४०।।

वैयाकरणयोगः

सम्पूर्णबलसंयुक्ते गुरौ तद्भवनेश्वरे ।
दिनेशभृगुसन्दृष्टे शाब्दिकोऽयं नरो भवेत् ।।४१।।

जब गुरु द्वितीयेश होकर पूर्ण बली हो तथा उस पर सूर्य एवं शुक्र की दृष्टि हो तो मनुष्य वैयाकरण (शब्दशास्त्री) होता है।।४१।।

विशेष— वैयाकरण, भाषाविज्ञानी, निरुक्तवेत्ता आदि इस योग में उत्पन्न होते हैं।

वेदान्तज्ञयोगः

वाग्भावपे बुधे स्वोच्चे गोपुरांशगते शनौ ।
सिंहासने गुरौ वापि वेदान्तज्ञो भवेन्नरः ।।४२।।

यदि द्वितीयेश होकर बुध अपनी राशि या उच्च राशि में हो, शनि गोपुरांश में तथा गुरु सिंहासनांशक में हो तो जातक वेदान्त शास्त्र को जानने वाला होता है।।४२।।

वेदान्तपरिशीलः स्यात् केन्द्रकोणे गुरौ सति ।
बुधेन गुरुणा दृष्टे शनौ पारावतांशके ।।४३।।

यदि गुरु केन्द्र या त्रिकोण में हो तथा उसकी दृष्टि बुध एवं सूर्य पर हो और शनि पारावतांश में हो तो भी जातक वेदान्त शास्त्र का अध्येता होता है।।४३।।

उत्तमांशे भृगौ लग्ने केन्द्रे वा तद्विधे भृगौ ।
देवलोकगते चन्द्रे वेदान्तज्ञानपारगः ।।४४।।

यदि शुक्र उत्तमांश का होकर लग्न में अथवा केन्द्रस्थानों में हो, चन्द्रमा देवलोकांश में हो, तब वह जातक वेदान्तशास्त्र में पारङ्गत होता है।।४४।।

षट्शास्त्रीयोगः

षट्शास्त्रवल्लभो केन्द्रे जीवे दानवपूजिते ।
सिंहासने गोपुरांशे वाग्भावस्थांशके बुधे ।।४५।।

यदि गुरु केन्द्र में एवं शुक्र सिंहासनांश में हो तथा द्वितीय भाव के नवांश का स्वामी बुध गोपुरांश में हो तो ऐसा जातक षड् दर्शनों (सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा तथा वेदान्त = छः शास्त्र) का ज्ञाता होता है।।४५।।

विप्रलम्भी योगः

विप्रलम्भो धनेशस्य राशीशस्थांशपे शनौ ।
सपापे केन्द्रकोणे वा भौमेऽप्येवं विनिर्दिशेत् ।।४६।।

यदि कुण्डली में धनेश जिस राशि में बैठा हो उसका नवांशेश शनि हो तथा वह पापग्रहों से युक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण में बैठा हो अथवा इसी प्रकार धनेशस्थित राशि का नवांशेश मङ्गल हो और वह पापग्रहों से युक्त होकर केन्द्र कोणस्थ हो तो इस प्रकार के योगों में जन्म लेने वाला जातक विप्रलम्भी होता है।।४६।।

विशेष— वादा करके मुकर जाने वाले को विप्रलम्भ कहते हैं। झाँसा देना भी विप्रलम्भ ही है। विप्रलम्भ का अर्थ— धोखा, छल, चालाकी, मिथ्या या झूठे वादों से छलना आदि होता है।

परिहासकरयोगः

परिहासकरो नित्यं भानुस्थितनवांशपे ।
वाग्भावस्थे बलाढ्ये तु तस्मिन् वैशेषिकांशके ।।४७।।

जन्माङ्ग में सूर्य जिस राशि में स्थित हो उसका नवांशेश यदि वैशेषिकांश में होकर द्वितीय भावगत हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक परिहासक (हंसी-ठिठोली करने वाला, मसखरा, विदूषक या जोकर आदि) होता है।।४७।।

वेदशास्त्रविद्यायोगः

गुरौ बलाढ्ये धनराशियुक्ते तदीश्वराक्रान्तनवांशनाथे ।
केन्द्रत्रिकोणे शुभवीक्षिते वा क्रमान्तविच्छास्त्रपरायणश्च ।।४८।।

बलवान गुरु धनभाव की राशि में बैठा हो तथा धनेश जिस नवांश में हो, उस

नवांश का स्वामी केन्द्र या त्रिकोणस्थान में बैठकर शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो क्रमशः चारो वेद-उपवेद, षडङ्ग तथा दर्शनों का ज्ञाता होता है।।४८।।

पुनरपि वेदवेदान्तज्ञयोगः

लग्नेश्वरे धनस्थे लग्ने वा सौम्यसंयुते तुङ्गे ।
पारावते तदीशे जातो निगमान्तविद्व्यये शुक्रे ।।४९।।

लग्नेश धनभाव में अथवा लग्न में ही बैठा हो तथा शुभ ग्रहों के साथ अपनी उच्च राशि में ही बैठा हो और लग्नेश का नवांशेश पारावतांश में हो तथा शुक्र व्ययभाव में हो तो जातक वेद-वेदान्तों में निपुण होता है।।४९।।

बहुत्वे धनलाभयोगः

लग्नेश्वरस्यांशपतिस्थराशिनाथस्थितांशाधिपतौ बलाढ्ये ।
वैशेषिकांशे शुभदृष्टियुक्ते योगे बहुत्वे धनलाभमाहुः ।।५०।।

लग्नेश जिस ग्रह के नवांश में हो वह ग्रह जिस राशि में बैठा हो, उसका नवांश बली तथा वैशेषिकांश में हो और शुभ ग्रहों से युत एवं दृष्ट हो तो इस योग में प्रचुर धन लाभ होता है।।५०।।

विशेष— मान लीजिये कि लग्नेश मङ्गल है और वह शुक्र के नवांश में (मिथुन राशि में) अवस्थित है। अब शुक्र जिस राशि (मकर) में अवस्थित हो, उसका नवांश कन्याराशि का है; अतः उसका स्वामी बुध यदि बली तथा वैशेषिकांश में हो तब यह योग घटित होगा।

पुनश्च बहुत्वेन धनलाभयोगः

वित्तेश्वरेण सहिते भवराशिनाथे कर्माधिपस्थनवभावपदृष्टियुक्ते ।
वैशिषिकांशकयुते परमोच्चभागे योगे बहुत्वधनलाभमिहाहुरार्याः ।।५१।।

यदि ग्यारहवें भाग का स्वामी वित्तेश्वर (धनेश) के साथ हो तथा उस पर कर्मेश (दशमेश) जिस नवांश में बैठा हो, उस नवांश का स्वामी परमोच्चांश में होकर वैशेषिकांश में हो तो इस योग में जन्म ग्रहण करने वाले जातक को प्रचुर मात्रा में धनलाभ होता है।।५१।।

बाल्यकाले धनलाभयोगः

धर्माधिपेन सहिते धनराशिनाथे
लग्नेश्वरस्थितनवांशपतीश्वरेण ।
दृष्टे चतुष्टयगते शुभदृष्टियोगे
जातस्तु भूरिधनलाभमुपैति बाल्ये ।।५२।।

यदि केन्द्र में द्वितीयेश तथा नवमेश की युति हो और वह युति लग्नेशस्थित

नवांश राशि के स्वामी द्वारा दृष्ट हो तो ऐसे जातक को बचपन में ही प्रचुर धनलाभ होता है॥५२॥

पुनर्बाल्ये धनाप्तियोगः

लग्नार्थलाभभवने शुभखेचरेन्द्रे
स्वोच्चे सुहृद्गृहगतेऽत्र विशेषितांशे ।
तुङ्गांशके धनपतिस्थनवांशनाथ-
दृष्टेऽथ भूरि धनलाभमुपैति बाल्ये ।।५३।।

लग्न, द्वितीय तथा लाभभावों में शुभ ग्रह स्वराशि, उच्च राशि या मित्रराशि के होकर वैशेषिकांश या उच्चांशक में हों; साथ ही वे शुभ ग्रह द्वितीयेश जहाँ बैठा है; उस नवांश के स्वामी द्वारा दृष्ट हों तो भी जातक को बाल्यकाल में प्रचुर धन लाभ होता है॥५३॥

विशेष— यहाँ द्वितीयेश स्थित नवांशनाथ से एकाध स्थान पर ही दृष्टि अभिप्रेत है, क्योंकि १।२।११ सभी भावों में एक साथ दृष्टि सम्भव नहीं है ।

बहुनिध्यादियोगः

लग्नेशे धनराशिस्थे धनेशे लाभराशिगे ।
लाभेशे वापि लग्नस्थे बहुनिध्यादिकं भवेत् ।।५४।।

यदि लग्नेश धनभाव में तथा लाभेश धनभाव में हो अथवा लाभेश लग्न में हो तो बहुत प्रकार के निधि (खजाने) आदि का लाभ उस जातक को होता है॥५४॥

पराक्रमेण धनलाभयोगाः

सर्वग्रहादतिबली यदि लग्ननाथः
केन्द्रे स्थितस्त्रिदशपूजितसंयुतश्च ।
वैशेषिकांशकयुते धनराशिनाथे
वित्तं स्ववीर्यबलतोर्जितमाहुरार्याः ।।५५।।

यदि लग्नेश सब ग्रहों की अपेक्षा बलवान होकर केन्द्र में गुरु के साथ स्थित हो; साथ ही धनभाव का स्वामी वैशेषिकांशक में हो तो जातक अपने बाहुबल एवं पराक्रम से धन कमाता है॥५५॥

लग्नेशसंयुतनवांशपतिस्थराशि-
नाथो बलेन सहितो धनपस्य मित्रम् ।
केन्द्रत्रिकोणसहितः स्वगृहेऽथ यद्वा
जातः स्ववीर्यधनमेति बहुप्रकारैः ।।५६।।

जिस नवांश में लग्नेश स्थित हो, उसका स्वामी जिस राशि में बैठा हो, उस राशि

का स्वामी बलवान होकर धनेश का मित्र होकर केन्द्र, त्रिकोण अथवा स्वराशि में बैठा हो तो जातक को अपने सामर्थ्य से धन की प्राप्ति होती है॥५६॥

मध्यावस्थायां धनलाभयोगः

वित्तेश्वरो लाभविलग्नपाभ्यां युक्तस्त्रिकोणे यदि केन्द्रराशौ ।
शुभेक्षितः कालबलान्वितश्च जातः स्ववीर्याद्धनमेति मध्ये ।।५७।।

यदि धनेश की युति केन्द्र या त्रिकोण में लग्नेश तथा लाभेश के साथ हो तथा उस युति पर कालबल से युक्त शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो जातक जीवन के मध्य भाग (युवावस्था) में स्वपराक्रम से धनार्जन करता है॥५७॥

वृद्धावस्थायां धनलाभयोगः

अन्ते धनं याति धनेशयुक्तः राशौ विलग्नेशयुते ससौम्ये ।
तदीश्वरे लग्नगते बलाढ्ये लाभेश्वरादेवमुदाहरन्ति ।।५८।।

द्वितीय भाव का स्वामी जिस भाव में बैठा हो, उसी में लग्नेश तथा बुध भी बैठे हों तथा द्वितीयस्थित राशि का स्वामी लग्न में बलवान होकर स्थित हो तो वृद्धावस्था में धन की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार लाभेश जिस राशि में बैठा हो, उसी में यदि लग्नेश तथा बुध बैठे हों और उस राशि का स्वामी बलवान होकर लग्न में बैठा हो तो भी धनलाभ जीवन के अन्तिम भाग में ही होता है॥५८॥

भ्रातृतो धनप्राप्तियोगः

तृतीयराशौ धनलग्ननाथौ बलान्वितौ पुंग्रहदृष्टियुक्तौ ।
तदीश्वरेणापि युतौ प्रदृष्टौ भ्रातुर्धनं याति विशेषितांशे ।।५९।।

यदि धनेश तथा लग्नेश बली होकर तृतीय भाव में पुरुष ग्रहों (सूर्य-मङ्गल-गुरु) से दृष्ट हों तथा तृतीय से भी युत या दृष्ट हों एवं वैशेषिकांश में हों तो भाई से धनलाभ होता है॥५९॥

पुनश्च भ्रातृतो धनाप्तियोगः

तृतीयभावाधिपतौ धनस्थे तत्र स्थिते कारकखेचरेन्द्रे ।
दृष्टे युते वा तनुपेन जातो भ्रातुर्धनं यान्ति विशेषितांशे ।।६०।।

तृतीयेश वैशेषिकांश का होकर धनभाव में धन के कारक ग्रहों (गुरु) तथा लग्नेश के साथ बैठा हो अथवा उस पर कारक ग्रहों तथा लग्नेश की दृष्टि हो तो इस योग में भी भाई से धनलाभ में सहयोग मिलता है॥६०॥

बहुप्रकारेण धनागमः

परस्परं वित्तपलग्ननाथौ निरीक्षितौ केन्द्रयुतौ शुभांशे ।
निरीक्षितौ कर्मशुभेश्वराभ्यां जातो धनं याति बहुप्रकारः ।।६१।।

यदि लग्नेश तथा धनेश केन्द्र में शुभांशकों में बैठे हों तथा परस्पर दृष्ट भी हों एवं उन पर कर्मेश तथा लग्नेश की दृष्टि हो तो इस योग में जातक को बहुत प्रकार से धन की प्राप्ति होती है॥६१॥

स्वबलेन धनाप्तियोग:

वित्तेश्वरं पश्यति लग्ननाथे युते स्ववीर्याद्धनमेति मर्त्त्यः ।
तृतीयभावाधिपकारकाभ्यां दृष्टे युते तादृशमेति वित्तम् ।।६२।।

यदि लग्नेश धनेश को देखता हो तो जातक अपने सामर्थ्य से धन कमाता है। यदि धनेश पर तृतीय भाव के स्वामी तथा कारक ग्रह (मङ्गल) की दृष्टि या युति हो तो भी जातक स्वयं के सामर्थ्य से धन कमाता है॥६२॥

बान्धवाद्धनाप्ति योगमाह

दृष्टे युते वित्तपतौ बलाढ्ये सुखेस्वरेणापि धनं जनन्याः ।
बन्धोः सकाशादथ वा कृषेश्च धनं प्रयात्यत्र विशेषितांशे ।।६३।।

धनस्थान का स्वामी बलवान व वैशेषिकांश में होकर चतुर्थेश से युक्त हो तो जातक को अपनी जाति, बान्धवादि अथवा कृषि से धन की प्राप्ति होती है॥६३॥

दृष्टे युते वित्तपतौ धनस्थे तत्र स्थिते कारकखेचरेन्द्रे ।
दृष्टे युते वा तनुपेन जातो भ्रातुर्धनं याति विशेषितांशे ।।६४।।

वैशेषिकांश में होकर धनेश या तो धनभाव में कारक ग्रहों (धनकारक ग्रह) के साथ हो या दृष्ट हो या धनेश की स्थित कारक ग्रह पर दृष्टि हो अथवा लग्नेश से युत- दृष्ट द्वितीयेश हो तो भी जातक को भ्रातृ आदि से धन प्राप्त होता है॥६४॥

पुत्राद्धनाप्तियोगाः शत्रुतोऽपि

पुत्रेशतत्कारकखेचराभ्यां तथाविधे वित्तपतौ बलाढ्ये ।
दृष्टे युते लग्नपतौ बलाढ्ये वैशेषिकांशे सुततो धनं स्यात् ।।६५।।
वैशेषिकांशे यदि लग्ननाथे जातः स्वपुत्रार्जितमेव वित्तम् ।
षष्ठेशतत्कारकखेचराभ्यां तथाविधे वित्तपतौ बलाढ्ये ।।६६।।

जब वैशेषिकांश और बल से युक्त धनेश पुत्रकारक ग्रह तथा पञ्चमेश से युत या दृष्ट हो तो जातक को पुत्र से धन प्राप्त होता है। इसी प्रकार जब धनेश लग्नेश से युत-दृष्ट हो तब भी पुत्र से ही धन प्राप्त होता है। लग्नेश यदि वैशेषिकांश में हो तब भी पुत्र से ही धन की प्राप्ति होती है। 'आत्मा वै जायते सूनु:' अर्थात् आत्मा ही पुत्र के रूप में उत्पन्न होती है; अत: लग्नेश की युति-दृष्टि आदि में पुत्र से धन की प्राप्ति कही गई है। आजकल तो पुत्रियाँ भी कमाती हैं और बहुत से पिता धर्म को तिलाञ्जलि देकर उनकी कमाई भी खाने लगे हैं; अत: यहाँ पुत्र से सन्तति समझना चाहिये ।

यदि बलवान धनेश षष्ठेश तथा शत्रुकारक ग्रहों से युक्त हो तो शत्रु से धन की प्राप्ति होती है।।६५-६६।।

कारकमीमांसा— इस ग्रन्थ में 'कारक' शब्द का प्रयोग भावफलकथन में हुआ है। इस अध्याय में भी इस शब्द का उल्लेख पुनः-पुनः हो रहा है; अतः 'कारक' शब्द की मीमांसा आवश्यक है; जिससे ज्योतिष के सामान्य पाठक को भावफलकथन में किसी भ्रान्ति तथा अनिश्चय का सामना न करना पड़े। 'कारक' संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ— करने वाला, बनाने वाला, रचने वाला, सम्पादन करने वाला, कर्ता आदि होता है। यह विशेषण जो कि 'कृ' धातु में 'ण्वुल्' प्रत्यय जुड़ने से बनता है। ज्योतिष ग्रन्थों में कारक शब्द चार प्रकार से प्रयुक्त हुआ है। अर्थात् ग्रह चार रूपों में कारक हुआ करते हैं। कौन-कौन से चार रूपों में वे प्रयुक्त होते हैं, यह अग्राङ्कित है—

स्थिरकारक— स्थिर रूप से ग्रह अनेक विषयों के कारक होते हैं, जैसे कि सूर्य आत्मा, पिता, शैवकार्य, राजसेवा, यज्ञ आदि का कारक है। चन्द्र मन, आत्मा, स्त्री, समुद्रस्नान आदि का कारक है। मङ्गल सहोदरों, उत्साह, सत्त्व, शत्रु आदि का कारक है। बुध भानजा, वाणी, पाण्डित्य, वैष्णवकार्य, मामा आदि का कारक है। गुरु गुरु, ज्ञान, पुत्र, परामर्श, पौरोहित्य-शास्त्रज्ञान आदि का कारक है। शुक्र स्त्री, ललित कलायें, सङ्गीत, वस्त्राभूषण, शृङ्गार, रति आदि का कारक है। शनि दुःख, मृत्यु, आयु, दास, लोहा, कृषि, श्रम, श्रमिक कर्म, तैल आदि का कारक है।

चरकारक— जैमिनि के मत से ये सात होते हैं, जिनमें सर्वाधिक अंशों वाला आत्मकारक, उससे कम अंशों वाला अमात्यकारक, उससे कम अंशों वाला भ्रातृकारक, फिर उससे न्यून अंशों वाला मातृकारक, फिर पुत्रकारक, फिर ज्ञातिकारक और सबसे कम अंश वाला दाराकारक होता है। इसमें सूर्यादि सात ग्रह ही लिये जाते हैं; राहु-केतु को नहीं लिया जाता।

योगकारक— ये लघुपाराशरी तथा बृहत्पाराशरहोराशास्त्र के अनुसार प्रत्येक लग्न के लिये अलग-अलग होते हैं। एक लग्न के जातक के लिये जो ग्रह कारक होता है, वही दूसरी राशि का लग्न होने पर अकारक हो सकता है। इसी प्रकार अन्य तीसरे लग्न में वह मारक भी हो सकता है। यह कारकत्व केन्द्रेश एवं कोणेश के सम्बन्ध पर आधारित होता है। भले ही वह ग्रह नैसर्गिक रूप से शुभ या अशुभ कैसे भी क्यों न हो। जैसा कि लघुपराशरी (१४.१५) में कहा भी है—

केन्द्रत्रिकोणपतयः सम्बन्धेन परस्परम् ।
इतरैरप्रसक्तश्चेद् विशेषफलदायकाः ।।
केन्द्रत्रिकोणनेतारौ दोषयुक्तावपि स्वयम् ।
सम्बन्धमात्राद्बलिनौ भवेतां योगकारकौ ।।

इस सिद्धान्त के अनुसार मेष लग्न में सूर्य तथा मङ्गल या सूर्य तथा चन्द्र का

सम्बन्ध होने पर योग कारक होता है। वृष लग्न में शनि अकेला योगकारक होता है; क्योंकि वह नवमेश (त्रिकोणेश) तथा दशमेश (केन्द्रेश) होता है। शनि-बुध तथा सूर्य-बुध के परस्पर सम्बन्ध भी योगकारक होते है। मिथुन लग्न में बुध-शुक्र का सम्बन्ध योगकारक होता है। इसी तरह अन्य लग्नों में भी है। ये सम्बन्ध ग्रहों की युति, परस्पर दृष्टि, व्यत्यय तथा एकतर दृष्टिसम्बन्ध से बनते हैं।

भावकारक— यह ग्रहों का चौथा रूप है, जिसमें वे कारक होते हैं। जहाँ भी भावकारक शब्द का प्रयोग हो या भावफल में कारक शब्द प्रयुक्त हो, तब उसे भावकारक ही समझना चाहिये। इस ग्रन्थ के इस अध्याय में कारक शब्द से भावकारक ही प्रयोजनीय है। इन भावकारकों के विषय में दो मत हैं एक मत महर्षि पराशर का है जो कि बृहत्पाराशरहोराशास्त्र (कारकाध्याय-३९) में मिलता है । इसके अनुसार—

सूर्यो गुरुः कुजः सोमो गुरुर्भौमः सितः शनिः ।
गुरुश्चन्द्रसुतो जीवो मन्दश्च भावकारकाः ॥

इस मत में सूर्य लग्न का, गुरु द्वितीय का, मङ्गल तृतीय का, चन्द्र चतुर्थ का, गुरु पञ्चम का, मङ्गल षष्ठ का, शुक्र सप्तम का, शनि अष्टम का, गुरु नवम का, बुध दशम का, गुरु ग्यारहवें का तथा शनि बारहवें भाव का कारक होता है। आगे की कुण्डली में पराशरमत से कारक दिये हैं—

पाराशरमत से द्वादश भावों के कारक

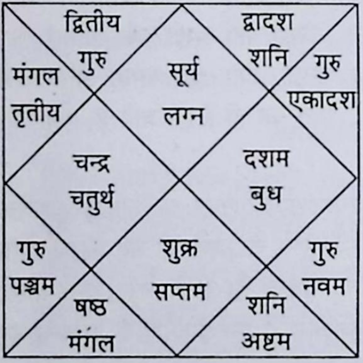

पाराशरीय मत से प्रत्येक भाव का एक ही ग्रह कारक है। परन्तु परवर्ती आचार्यों (जिनमें श्री वैद्यनाथ दीक्षित तथा श्री मन्त्रेश्वर प्रमुख हैं) ने किसी-किसी भाव के एक से अधिक कारक भी दिये हैं और यही मत सर्वार्थचिन्तामणिकार श्री वेङ्कटेश को भी मान्य है, क्योंकि उन्होंने भाव फल के विवेचन में बहुवचन का प्रयोग किया है—

द्युमणिरमरमन्त्री भूसुतः सोमसौम्यौ
गुरुरिनतनयारौ भार्गवौ भानुपुत्रः ।
दिनकररविजेज्यौ जीवभानुज्ञमन्दाः
सुरगुरुरिनसूनुः कारकाः स्युर्विलग्नात् ॥

(जा०पा०-२।५१, फ०दी०-१५।१७)

अन्य मत से भावकारकों का चक्र

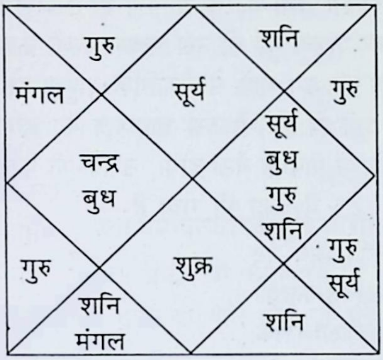

भावफलकथन में भाव-भावेश तथा भावकारक का समान महत्त्व— भावों का फल कहने में भाव के साथ ही उस भाव का स्वामी जितना महत्त्वपूर्ण है, उतना ही उस भाव का कारक भी होता है। यही कारण है कि ग्रन्थकार ने द्वितीय भाव के फलकथन में द्वितीयेश के साथ द्वितीय के कारक से भी युति एवं दृष्टि को महत्त्वपूर्ण माना है और तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम आदि सभी भावों के फलकथन भी में यही सिद्धान्त अपनाया गया है। महर्षि पराशर, वैद्यनाथ दीक्षित, मन्त्रेश्वर तथा कालिदास का भी यही अभिमत है। श्री कालिदास ने तो उत्तरकालामृत में ग्रहभावफल-खण्ड के श्लोक बारह में स्पष्ट रूप से इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हुए कहा है—

भावो भावपतिश्च कारकखगस्ते पापमध्यस्थिताः
पापैः शक्तिभिरन्विताश्च विबलाः सौम्यैरयुग्वीक्षिताः ।
तेषां भाग्यसुखाष्टधीव्ययगताः पापास्तदंशर्क्षपाः
तद्भावे रिपुनीचमूढविजिताश्चेद्भावहानिं वदेत् ।।

अर्थात् जो कोई-सा भी भाव, भावपति तथा भावकारक ग्रह यदि पापग्रहों के मध्य (पापकर्तरी में) स्थित हों, प्रबल पापग्रहों से युक्त हों, निर्बल हों, उन पर शुभग्रहों की युति-दृष्टि न हो— इन तीनों (भाव-भावेश-भावकारक) से नवम, चतुर्थ, अष्टम, पञ्चम तथा द्वादश भावों में पापग्रह स्थित हों। उन तीनों के नवांशेश (भावनवांशेश, भावेश-स्थित नवांश का स्वामी, तथा भावकारक नवांशेश) भी शत्रुराशिस्थ, नीचराशिस्थ, अस्तङ्गत अथवा ग्रहयुद्ध में पराजित हों तो उस भाव से सम्बन्धित फल की हानि होती है।

इसके विपरीत यदि भाव, भावेश तथा भावकारक तीनों ही बली हों, तब उस भाव का पूर्ण फल होता है। जैसा कि पं० जीवनाथ शर्मा ने भावप्रकाश में लिखा है—

भवन्ति भावभावेशकारकाबलसंयुताः ।
तदा पूर्णफलं द्वाभ्यामेकेनाल्पफलं वदेत् ।।

तात्पर्य यह है कि ये तीनों यदि बली हों तो पूर्ण फल, इनमें से दो बलवान हों तो आधा फल ही होगा एवं यदि इन तीनों में से एक ही बलवान तथा दो निर्बल हों तो अत्यल्प फल ही (उस भाव का) प्राप्त होता है— ऐसा समझना चाहिये।

लाभ के पूर्ण फल हेतु लाभेश तथा लाभकारक में मैत्री आवश्यक — किसी भी भाव के पूर्ण फल हेतु उस भाव के स्वामी तथा कारक में मैत्री होना जरूरी है, अन्यथा यदि दोनों में नैसर्गिक मैत्री के अनुसार शत्रुता हुई तो उस भावसम्बन्धी फल का नाश होगा यद्यपि किसी भाव एवं भावकारक को इन अर्थों में नैसर्गिक शत्रुता हो, तो फिर [illegible] [illegible] तथा [illegible] के स्वामी हो तो भी उस भावफल का ह्रास होता है किन्तु भावकारक के [illegible] [illegible] [illegible] में [illegible] [illegible] होगा, उसके भी फल की हानि होती है। जैसा कि उत्तरकालामृत (४.१४) में कहा भी गया है —

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] च
[illegible] तथा [illegible] ।
तथा [illegible]
[illegible] [illegible] फलं [illegible] ॥

भावफल को प्रभावित करने वाले आठ तत्त्व — ऊपर भाव के फल को प्रभावित करने वाले तीन मुख्य तत्त्वों का प्रतिपादन किया है; परन्तु 'जातकादेश-मार्ग' ग्रन्थ में आचार्य सोमयाजी ने पाँच गौण तत्त्वों सहित कुल आठ तत्त्वों का वर्णन किया है —

सर्वत्र [illegible] [illegible] [illegible] ।
चिन्त्यानि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥

अर्थात् किसी भावफल पर विचार करते समय [illegible] अथवा [illegible] से इन आठ तत्त्वों का विचार करना चाहिये — भाव, भावेश, भावकारक (ये तीन मुख्य हैं), भावेशस्थ ग्रह, भावदृष्टा ग्रह, भावेश के साथी ग्रह, भावेशदृष्टा ग्रह तथा भावकारक के ग्रह (ये पाँच गौण हैं)।

धनेशः [illegible] फलविवरणम्

धनेशः [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] हि [illegible] ॥६७॥

यदि धनेश [illegible] में [illegible] होकर (पूर्व श्लोक के द्वितीयेश की भाँति) शत्रुकारक ग्रह ([illegible]) तथा [illegible] से युति या दृष्टि प्राप्त करे तो भी शत्रु से धन प्राप्त होता है।

इसी प्रकार यदि द्वितीयेश की युति लग्नेश तथा [illegible] ग्रह के साथ युत या दृष्ट हो तो धनी से धनलाभ होता है॥६७॥

मित्र- पुत्रः [illegible] फलविवरणम्

[illegible] [illegible] पुत्रः [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥६८॥

यदि धनेश दशम भाव के स्वामी एवं कारक से युत-दृष्ट हो तो पिता या राजा से धन प्राप्त होता है (क्योंकि दशम भाव दोनों का कारक है)। यदि वही द्वितीयेश नवमेश या नवम के कारक (गुरु) से दृष्ट या युत हो तो गुरु की कृपा से धन की प्राप्ति होती है। इन योगों में अपनी ज्योति से ज्ञान तथा पुरुषार्थ आदि से भी धन की प्राप्ति होती है। गुरुकृपा से जब विद्या फलती है तो धन एवं कीर्ति सब कुछ मिलता है॥६८॥

लाभेशयोगफलकथनम्

लाभेशलाभकारकयुतिदृष्टियोगैर्ज्येष्ठात् धनं बहुलम् ॥६९॥

पूर्वोक्त प्रकार से लाभस्थान के स्वामी के साथ एकादशेश तथा एकादश कारक (गुरु) की दृष्टि या युति होने पर बड़े भाई से धन प्राप्त होता है॥६९॥

धनवृद्धिनाशयोगकथनम्

धने पापग्रहाः प्रोक्ता बलाढ्यास्ते धनं ददुः ।
नीचारिमूढभावस्थदुर्योगात्   धनं हरन्ति ॥७०॥
सहजाद्यादिभावेषु विनाशस्त्वनुमन्यते   वदेत् ।
सबलैश्चेत्तु वृद्धिर्विबलैस्तु   ह्रासः ॥७१॥

यदि धनभाव में बलवान पापी ग्रह हों तो फल शोभन होता है अर्थात् भले ही ग्रह पापी हों, परन्तु बलवान होने से अच्छा बताया है, परन्तु यदि वे ग्रह नीच शत्रुगत, अस्तङ्गत अर्थात् निर्बल होकर द्वितीय भाव में बैठें या द्वितीय को देखें तो वे धन का नाश करते हैं। यही बात तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ तथा सप्तम आदि भावों के सम्बन्ध में भी लागू होती है। यदि ये भाव बलवान पापी ग्रहों से युत-दृष्ट होते हैं, तो उनके फल में वृद्धि और यदि वे निर्बल ग्रहों से युत-दृष्ट होते हैं तो उन भावों के फलों में ह्रास होता है॥७०-७१॥

राजदण्डधननाशयोगः

लग्नाधिपे नीचगते सपापे रिष्फे धनेशे दिननाथयुक्ते ।
नीचस्थिते वाऽशुभखेटदृष्टे धनस्य नित्यं हरति क्षितीशः ॥७२॥

जब लग्नेश नीचस्थ होकर पापग्रहों से युक्त हो तथा धनेश व्ययभाव में सूर्य के साथ हो अथवा धनेश नीच राशिगत हो अथवा अशुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक का धन राजशासन द्वारा हरण कर लिया जाता है॥७२॥

लग्नेशे धनभावस्थे रिष्फस्थे लाभनायके ।
दुःस्थे धनेशे नीचे वा राजदण्डाद् धनक्षयः ॥७३॥

यदि लग्नेश धनभाव में हो, लाभेश व्यय में हो, धनेश दुःस्थान (६-८-१२) में अथवा नीच राशिगत हो तो राजदण्ड (जुर्माना) से धननाश होता है॥७३॥

धनेशे नाशराशिस्थे सपापे नीचराशिगे ।
राजकारकसंयुक्ते राजदण्डाद् धनक्षयः ।।७४।।

यदि धनेश अष्टम भाव में नीच का होकर पाप ग्रहों तथा राजकारक ग्रह (सूर्य-बुध-गुरु-शनि में से कोई) ये युक्त हो तो भी राजदण्ड से वित्तनाश होता है।।७४।।

पुनश्च राजकोपाद्धननाशयोगाः

धनव्ययेशौ व्ययवित्तसंस्थौ लग्नेश्वरेणापि निरीक्षितौ चेत् ।
लग्नाधिपे नाशगते सपापे राज्ञां प्रकोपाद्धननाशमाहुः ।।७५।।

यदि धनेश एवं व्ययेश क्रमशः व्यय तथा धनभाव में बैठे हों अर्थात् उनमें व्यत्यय हो, उनको लग्नेश पापग्रहों के साथ अष्टम भाव में बैठकर देखता हो तो राजा के कोप से (जातक द्वारा किए गए अपराध के कारण) धनहानि होती है।।७५।।

कर्मेश्वरे लाभगते विलग्ननाथेन युक्ते यमकण्टकांशे ।
दंष्ट्राकरालांशगतेऽथ वाऽपि राज्ञां प्रकोपाद् धननाशमाहुः ।।७६।।

यदि दशमेश लाभस्थान में लग्नेश के साथ यमकण्टकांश या दंष्ट्राकरालांश में बैठा हो तो भी राजकोष से धननाश होता है।।७६।।

व्यत्यय– जब दो ग्रह परस्पर एक-दूसरे की राशि में बैठते हैं, तब उसे परस्पर राशिपरिवर्तन, विनिमय, स्थानव्यत्यय तथा परस्पर स्थानसम्बन्ध भी कहते हैं। पं० वेतालशास्त्री लघुपाराशरी (२.१) की टीका में लिखते हैं—

परस्परस्थानसम्बन्धः तृतीयः सम्बन्धः। एकस्यान्यतरस्वामिकराशावन्यतरस्य तत्स्वामिकराशावस्थितिरेव परस्परस्थानसम्बन्धः। परस्पराश्रितत्वेनात्र व्यवहारसिद्धिः। यथा मेषलग्ने सिंहे चन्द्रः कर्के रविरिति चतुर्थेशपञ्चमेशयोः परस्परस्थानसम्बन्धः।

मान लीजिये मेष लग्न है और द्वितीयेश शुक्र व्ययभाव (मीन राशि) में बैठा हो तथा व्ययेश गुरु वृष में बैठा हो तो यह धनेश व्ययेश का व्यत्यय कहलायेगा। श्लोक ७५ का योग केवल मङ्गल तथा गुरु की लग्नों में ही सम्भव है, अन्य लग्नों में नहीं।

यमकण्टकांश— विषम राशि में छत्तीसवाँ तथा सम राशि में पच्चीसवाँ षष्ट्यंश 'यमकण्टकांश' कहलाता है।

दंष्ट्राकरालांश— विषम राशियों में अड़तालीसवाँ तथा सम राशियों में तेरहवाँ षष्ट्यंश दंष्ट्राकरालांश होता है (इसी ग्रन्थ के प्रथमाध्याय में षष्टि अंश का चक्र देखिये)। एक षष्ट्यंश आधे अंश का होता है—

धननाशयोग

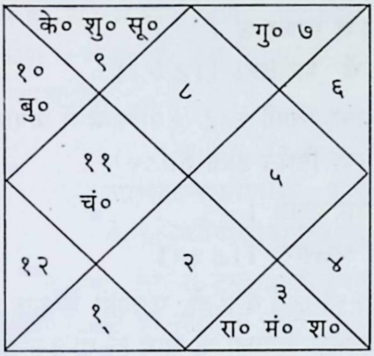

धननाशयोग

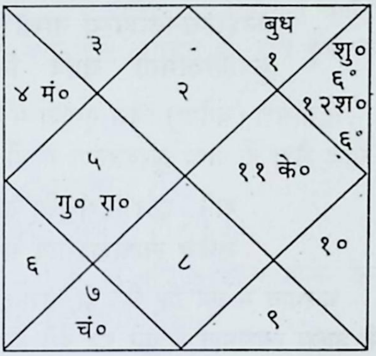

चौराग्निभूपैः धननाशयोगाः

धनायपौ भूमिजदृष्टियुक्तौ क्रूरांशगौ हीनबलौ सपापौ ।
चौरादिभावाधिपदृष्टियुक्तौ चौराग्निभूपैर्धननाशमेति ।।७७।।

जिस जातक की कुण्डली में द्वितीयेश तथा एकादशेश दोनों ही क्रूरांश (क्रूरषष्ट्यंश) में हीनबली होकर पापग्रहों के साथ बैठे हों तथा उन पर मङ्गल की दृष्टि हो तो चोर-डाकू, अग्निकाण्ड तथा राज्यशासन द्वारा धन नष्ट होता है।।७७।।

वित्तेशसंयुक्तनवांशनाथयुक्तांशकस्थानपतौ सपापे ।
दुःस्थे विलग्नेश्वरदृष्टियुक्ते चौराग्निभूपैर्धननाशमेति ।।७८।।

धनेश जिस नवांश में हो, उसके स्वामी का नवांशेश पापग्रहों के साथ ६-८-१२ भावों में बैठा हो तथा उस पर लग्नेश की दृष्टि हो तब भी चोर, अग्नि तथा राजा से धननाश होता है।।७८।।

लोकापवादाद्धननाशयोगः

कर्मेश्वरे नाशगते सपापे क्रूरादिषष्ट्यंशगते विशेषात् ।
धनायपाभ्यां सहिते तदानीं लोकापवादाद्धननाशमाहुः ।।७९।।

यदि दशमेश पापग्रहों के साथ अष्टम भाव में बैठा हो तब लोकापवाद से धननाश होता है। यदि कर्मेश, धनेश तथा लाभेश के साथ अष्टम भाव में क्रूर षष्ट्यंश में बैठा हो, तब विशेष रूप से झूठे कलङ्क लगने से धननाश होता है।।७९।।

विशेष—अपयश, कलङ्क, निन्दा आदि को लोकापवाद कहते हैं। प्रायः ऐसे योग में जातक पर मुकदमे चल जाते हैं; जिसमें धन व्यय हो जाता है। यदि वह शासकीय सेवक हुआ तो उसके विरुद्ध विभागीय पूछ-ताछ या जाँच होती है अथवा आधिकारिक जाँच या पूछताछ बैठती है।

निर्धनयोगाः

धनेशस्थनवांशस्य नाथो दुस्थोऽथ पापयुक् ।
क्रूरांशकगतो वापि निर्धनोऽयं भवेन्नरः ।।८०।।

द्वितीयेश (धनेश) जिस नवांश में हो, उसका स्वामी ६-८-१२ भावों में पापग्रहों के साथ बैठा हो तथा क्रूरषष्ट्यंश में हो तो मनुष्य निर्धन होता है।।८०।।

धने क्रूरादिसंयुक्ते तदीशे पापसंयुते ।
तथैव लाभराशीशे धनहीनो भवेन्नरः ।।८१।।

धनभाव में क्रूर ग्रह बैठे हो, उसका स्वामी भी जहाँ बैठा हो, पापग्रहों के साथ ही उसी प्रकार लाभभाव में क्रूर ग्रह बैठे हों तथा लाभेश पापग्रहों के साथ हो तो इस योग में भी मनुष्य धनहीन होता है।।८१।।

व्ययेशसंयुक्तनवांशनाथो युक्तो धनेशेन निरीक्षितो वा ।
नीचाऽर्कगो हीनबलः सपापः केन्द्रस्थितश्चेदपि निर्धनः स्यात् ।।८२।।

व्ययेश जिस नवांश में हो उस नवांश का स्वामी नीच, अस्त, बलहीन, पापयुक्त होकर धनेश के साथ या तो केन्द्रस्थान में बैठे अथवा केन्द्र में बैठे धनेश को दूसरे केन्द्र-स्थान में बैठकर देखे तो जातक धनहीन होता है।।८२।।

धनेशाश्रितराशीशसंयुक्तांशपतिर्यदि ।
कालदण्डाद्यंशयुक्ते निर्धनोऽयं भवेन्नरः ।।८३।।

धनेश जिस राशि में बैठा हो, उस राशि का स्वामी जिस नवांश में स्थित हो, उस नवांश का स्वामी यदि कालदण्ड (काल, कालरूप तथा दण्डायुध नामक तीन षष्ट्यंशों) अंशक से युक्त हो तो जातक को निर्धन बनाता है।।८३।।

अल्पधनयोगाः

यत्किञ्चिद्धनसंयुक्तो धनेशे केन्द्रकोणगे ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ते नीचस्थेऽर्कयुतेऽपि वा ।।८४।।

यदि धनेश केन्द्र या त्रिकोण स्थानों में क्रूर षष्ट्यंश में हो; साथ ही नीच राशि तथा अस्तंगत हो तब यत्किञ्चित् धन की प्राप्ति होती है अर्थात् स्वल्प मात्रा में धन आता है।।८४।।

यत्किञ्चिद्वित्तमायाति लाभेशस्थांशराशिपे ।
गुरुणा भृगुणा दृष्टे क्रूरषष्ट्यंशसंयुते ।।८५।।

लाभेश जिस नवांश में हो, उसका स्वामी क्रूरषष्ट्यंश में होकर गुरु तथा शुक्र से दृष्ट हो तब भी थोड़ा धन ही प्राप्त होता है।।८५।।

विशेष— इस योग में गुरु-शुक्र की शुभ दृष्टि से क्रूर षष्ट्यंश का दोष कुछ कम हो जाने से थोड़ी मात्रा में धन आने लगता है। जबकि श्लोक ८४ से धनेश केन्द्र या त्रिकोण में बैठता है, उस शुभता से क्रूरषष्ट्यंश तथा नीच असङ्गत का दोष कुछ कम हो जाता है।।

धनिकयोगः

लाभलग्नधनेशानां युक्तांशाः क्रूरसंज्ञकाः ।
केन्द्रत्रिकोणयुक्तानामुत्पन्नो धनिको भवेत् ।।८६।।

लाभेश, लग्नेश तथा धनेश जिन षष्ट्यंशों में हों, वे यदि क्रूरसंज्ञक होकर केन्द्र त्रिकोण में बैठे हों तो ऐसा जातक सामान्य धनी होता है।।८६।।

सर्वनाशयोगः

वैशेषिकांशे धनपे स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ते लाभेशे सर्वनाशभाक् ।।८७।।

यदि धनेश स्वराशि, मूल त्रिकोण का होकर वैशेषिकांश में हो, परन्तु वह लाभेश यदि क्रूर षष्ट्यंश से युक्त हो तो उस जातक का सम्पूर्ण धन ही नष्ट हो जाता है।।८७।।

विशेष—इस योग में धनेश की स्थिति तो अच्छी होती है, परन्तु उसकी उपलब्धियों को क्रूर षष्ट्यंशयुक्त एकादशेश सर्वनाश में परिवर्तित कर देता है।

धनवानयोगाः

उत्पन्नो धनिको लग्ने नाथे वैशेषिकांशके ।
धनेशे क्रूरषष्ट्यंशे चोक्तौ केन्द्रगतौ तथा ।।८८।।

यदि लग्न तथा उसका स्वोमी वैशेषिकांश में हो तथा धनेश क्रूरष्ट्यंश में होकर दोनों ही केन्द्रगत हों तो जातक धनिक उत्पन्न होता है।।८८।।

विशेष— इस योग में क्रूर उपायों से धन-सञ्चय होता है।

तत्कालधनयोगौ

सद्यो धनी धनेशेन कर्मनाथो युतो यदि ।
कर्मेशस्थांशपतिना लाभनाथस्तथा विदुः ।।८९।।

यदि धनेश तथा कर्मेश की युति हो तो जातक तत्काल धनी होता है। यदि दशमेश स्थित नवांशेश के साथ लाभेश की युति हो, तब भी सद्यः धनी होता है।।८९।।

विशेष— इस योग में सद्यः धनी का तात्पर्य यह है कि जन्म के तुरन्त बाद ही धनागम होने लगता है।

नामतो धनिकयोगः

लग्नेशे धनराशिस्थे लाभेशे कर्मसंयुते ।
धनेशस्यांशपे सौम्ये धनिको नामतो भवेत् ।।९०।।

यदि लग्नेश धनभाव में तथा लाभेश कर्मभाव में बैठा हो तथा धनेश शुभग्रह के नवांश में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक नाममात्र से धनी होता है, परन्तु उसके पास धन का सञ्चय नहीं होता । वह जितना कर्म करता है उतना ही कामचलाऊ धन उसे प्राप्त होता है॥९०॥

सहस्रनिष्कभर्तायोगः

सहस्रनिष्कभर्त्ता स्याल्लग्नेशस्थनवांशपे ।
धनेशस्यांशपे सौम्ये गुरुणा वा निरीक्षिते ।।९१।।

यदि लग्नेश तथा धनेश जिन नवांशों में हों, वे शुभग्रहों के नवांश हों अथवा इन दोनों को गुरु देखता हो, तो जातक के पास एक सहस्र निष्कों का स्वामित्व होता है॥९१॥

लग्नेशे धनराशिस्थे लाभेशे कर्मसंयुते ।
लाभाधिपेन सन्दृष्टे गुरुणा वा निरीक्षिते ।।९२।।

जब लग्नेश धनभाव में तथा लाभेश दशम भाव में हो तथा वहाँ से धनस्थ लग्नेश को देखता हो अथवा गुरु की दृष्टि द्वितीय स्थल लग्नेश पर हो तब भी जातक सहस्र निष्क का स्वामी होता है॥९२॥

सहस्रनिष्कभर्ता स्याल्लग्नेशस्थनवांशपे ।
गोपुरांशगते कर्मनाथेन सति वीक्षिते ।।९३।।

जिस नवांश में लग्नेश बैठा हो, उस नवांश का स्वामी यदि गोपुरांश में कर्मेश के द्वारा दृष्ट हो, तब भी जातक एक सहस्र निष्क का स्वामी होता है॥९३॥

निष्क— संस्कृत में निष्कः (पुल्लिङ्ग) तथा निष्कम् (नपुंसक लिङ्ग) का अर्थ स्वर्णमुद्राविशेष है। यह शब्द 'निष्क' धातु (जिसका अर्थ मापना या तौलना होता है) में 'अच्' प्रत्यय जुड़ने से बनता है। यह प्राचीन भारत में अलग-अलग प्रदेशों में भिन्न-भिन्न मूल्य तथा भार की हुआ करती थी; परन्तु इसकी मानक तौल सोलह माष (माशा) के बराबर मानी जाती थी। यह भार आजकल की मीट्रिक तौल के अनुसार सोलह ग्राम से थोड़ा कम होता था। संस्कृत में निष्क का दूसरा अर्थ स्वर्णधातु तथा तीसरा अर्थ कण्ठ में पहना जाने वाला स्वर्णाभूषण भी होता है। परन्तु इस प्रसङ्ग में निष्क का अर्थ सोने का सिक्का ही है।

सहस्रद्वयनिष्कभर्त्तायोगः

कर्मेशसंयुक्तनवांशनाथसंयुक्तसप्तांशपतौ बलाढ्ये ।
शुक्रेण देवेन्द्रपुरोहितेन दृष्टे सहस्रद्वयनिष्कभर्त्ता ।।९४।।

कर्मेश जिस ग्रह के नवांश में बैठा हो वह ग्रह जिस (अन्य) ग्रह के सप्तांश वह ग्रह (सप्तांशपति) (बलाढ्य हो तथा शुक्र एवं गुरु से दृष्ट हो, तब इस योग में उत्पन्न होने वाला ज़ातक दो सहस्र = दो हजार निष्कों का स्वामी होता है।।९४।।

सहस्त्रत्रयनिष्कभर्त्तायोगः

सौम्यषष्ट्यंशसंयुक्ते धनलाभे बलान्विते ।
तदीशेऽपि तथायुक्ते सहस्त्रत्रयनिष्कयुक् ।।९५।।

दशमेश स्थित नवांश स्वामी का सप्तमांशेश यदि सौम्य षष्ट्यंश का होकर धनभाव या लाभभाव में बैठा हो तथा जिस राशि में बैठा है; उस राशि का ईश (स्वामी) भी सौम्य षष्ट्यंशगत हो तो जातक तीन हजार निष्क से सम्पन्न होता है।।९५।।

वैशेषिकांशगे वित्तनाथे गुर्विन्दुभास्करे ।
तथाविधो भवेशोऽपि बलवांश्चेत्तथा धनी ।।९६।।

यदि धनेश गुरु, चन्द्र, सूर्य में से कोई भी ग्रह वैशेषिकांश में हो तथा बलवान हो, इसी प्रकार लाभेश भी बलवान हो तो जातक पूर्ववत् धनी (तीन सहस्र निष्क का स्वामी) होता है ।।९६।।

अष्टसाहस्रयुग्योगः

धनेशस्थदृकाणेशसंयुक्तनवभागपः ।
सर्वोत्तमबलोपेतस्त्वष्टसाहस्रनिष्कयुक् ।।९७।।

धनेश जिस द्रेष्काण में स्थित हो, उस द्रेष्काण का स्वामी तथा वह द्रेष्काणेश जिस नवांश में बैठा हो, वह भी सर्वोत्तम बल से युक्त हो, तब जातक आठ हजार निष्क का स्वामी होता है।।९७।।

अयुतनिष्कप्राप्तियोगः

लग्नेशस्थदृकाणेशसंयुक्तमुनिभागपः ।
वैशेषिकांशकगतस्त्वयुतं धनमाप्नुयात् ।।९८।।

लग्नेश जिस द्रेष्काण में बैठा हो, उस द्रेष्काणेश के साथ ही लग्नेशस्थित सप्तमांश का स्वामी भी यदि वैशेषिकांश में होकर बैठा हो, तब इस योग में जन्म लेने वाला जातक अयुत (दस हजार) निष्कों का स्वामी होता है।।९८।।

अयुताधिकधनप्राप्तियोगः

व्यये शुक्रे धने जीवे स्वांशे वैशेषिकांशके ।
लग्नेशेऽपि तथा युक्ते तदूर्ध्वमुपयाति सः ।।९९।।

यदि कुण्डली में बारहवें भाव में शुक्र, द्वितीय में गुरु स्वनवांश तथा वैशेषिकांश में हो और उनमें से किसी के साथ लग्नेश युक्त हो तो जातक को पूर्वकथित से अधिक (दश हजार निष्क से अधिक) धन प्राप्त होता है।।९९।।

गुरौ लग्नेशसंयुक्ते धने वैशेषिकांशके ।
केन्द्रत्रिकोणगे वापि तदूर्ध्वं वित्तमश्नुते ।।१००।।

बृहस्पति यदि वैशेषिकांश में लग्नेश के साथ द्वितीय भाव में अथवा केन्द्र (१-४-७-१०) या त्रिकोण (९।५) में हो तो भी जातक दस हजार निष्क से अधिक धन का स्वामी होता है।।१००।।

लक्षाधीशयोगः

कर्मेशस्थदृकाणस्य नाथसंयुक्तसप्तपः ।
ऐरावतांशसंयुक्तो धनलक्षं समश्नुते ।।१०१।।

कर्मेश जिस राशि में बैठा हो, उसके द्रेष्काण का स्वामी तथा उसके सप्तमांश का स्वामी यदि एक साथ ऐरावतांश में बैठा हो तो जातक एक लाख स्वर्णमुद्राओं का स्वामी होता है।।१०१।।

द्विलक्षपतियोगः

लक्षद्वयं धनं याति चतुष्केन्द्रे शुभान्विते ।
सिंहासने धनेशेऽपि सति पारावतांशके ।।१०२।।

जिस जातक के चारो केन्द्रों में शुभग्रह बैठे हों तथा धनेश सिंहाशनांश अथवा पारावतांश में हो तो वह जातक दो लाख स्वर्णनिष्क का स्वामी होता है।।१०३।।

त्रिलक्षपतियोगः

लक्षत्रयाधिकारी स्याल्लाभलग्नधनाधिपे ।
वैशेषिकांशकगते मृद्वंशादियुतेऽथ वा ।।१०३।।

यदि लाभेश, लग्नेश या धनेश— ये तीनों वैशेषिकांशक में अथवा मृद्वंश नामक षष्ट्यंश में हों तो इसमें जन्म लेने वाला जातक तीन लाख स्वर्णमुद्राओं का स्वामी होता है।।१०३।।

त्रिलक्षाधिकधनयोगः

तदूर्ध्वं वित्तपः स्यात्तु धनलाभपती यदा ।
वृद्धिकेन्द्रगतौ तौ चेद्बिलनौ भाग्यपस्तथा ।।१०४।।

यदि धनेश तथा लाभेश दोनों ग्रह वृद्धिगत (वर्धमान) तथा भाग्येश बलवान होकर केन्द्रस्थानों में बैठे हों तो ऐसा जातक तीन लाख से भी अधिक धन का स्वामी होता है॥१०४॥

वृद्धि— ज्योतिषशास्त्र में ग्रह की वृद्धि दो प्रकार से मानी गयी है। प्रथम, जब कोई ग्रह सूर्य से अस्त होने के अनन्तर जब पुन: उदित होता है तो उसकी कान्ति बढ़ती है। जब ग्रह सूर्य से अधिकतम दूरी पर होता है, तब उसकी कान्ति अधिक बढ़ी होती है; अत: ऐसा ग्रह जब तक सूर्य से दूर होता चलता है, तब तक वृद्धिगत होना माना जाता है।

दूसरे, आरोही ग्रहों को वृद्धिगत कहते हैं। जब ग्रह अपने नीच से उच्च की ओर जाता है, तब वह आरोही होता है। चन्द्रमा जब अमावस्या के बाद उदित होता है, तब वह पूर्णिमापर्यन्त वृद्धिगत माना जाता है। ऐसा चन्द्र प्रशस्त होता है। ज्योतिष में ही नहीं; बल्कि साहित्य में भी ऐसे चन्द्र की प्रशंसा की गयी है—

> पुपोष वृद्धिं हरिदश्वदीधितेरनुप्रवेशादिव बालचन्द्रमा: । (रघु०- ३.२२)
> पर्यायपीतस्य सुरैर्हिमांशो: कलाक्षय: श्लाघ्यतरो हि वृद्धे । (रघु०- ५.१६)

प्रयुतधनाधीशयोग:

केन्द्रत्रिकोणभे वीर्यस्त्वथ वा भवनाथयुक् ।
वैशेषिकांशगश्चेत्तु दशलक्षं समश्नुते ।।१०५।।

जब भाग्येश केन्द्रत्रिकोण में एकादशेश के साथ बली होकर वैशेषिकांश में हो तो जातक प्रयुत (दश लक्ष) धन का स्वामी होता है॥१०५॥

कोटीश्वरयोग:

लग्नांशनाथभाग्येशा: परमोच्चांशसंयुता: ।
वैशेषिकांशे लाभेशे तदा कोटीश्वरो भवेत् ।।१०६।।

लग्नेश, लग्ननवांशेश तथा भाग्येश यदि परमोच्चांश में तथा लाभेश वैशेषिकांश में हो तो जातक करोड़पति होता है॥१०६॥

ऋणप्रदातायोगा:

ऋणप्रदो विलग्नेशसंयुक्तनवभागप: ।
दृष्टो देवेन्द्रगुरुणा मृद्वंशादिसमन्वित: ।।१०७।।

जिस नवांश में लग्नेश है, उस नवांश के स्वामी पर यदि गुरु की दृष्टि हो तथा वह मृद्वंश नामक षष्ट्यंश में हो तो वह जातक ऋणप्रदाता (साहूकार) होता है॥१०७॥

वित्तलाभपसंयुक्तत्र्यंशकेशनवांशप: ।
वैशेषिक: केन्द्रकोणे ऋणदाता भवेन्नर: ।।१०८।।

धनेश तथा लाभेश जिन-जिन त्र्यंशकों (द्रेष्काणों) में हों, उन त्र्यंशकों के स्वामी जिन नवांशों में उनके स्वामी (नवांशेष) वैशेषिकांशों में होकर केन्द्र या कोणस्थानों में बैठे हों तो भी वह जातक ऋणदाता होता है।।१०८।।

विशेष— ऋणदाता या ऋणप्रदाता का अर्थ साहूकार या वित्तदाता होता है। इन्हें बैंकर भी कह सकते हैं। बैंकों के अंशधारक भी इसी शब्द के अन्तर्गत आते हैं; अत: इस योग के होने पर दैवज्ञ को देशकाल एवं परिस्थिति के अनुसार ही फलकथन करना चाहिये।

ऋणग्रस्तयोगा:

ऋणग्रस्तो धने पापे लग्नेशे व्ययसंयुते ।
कर्मेशे लाभनाथेन युते दृष्टे विशेषत: ।।१०९।।

यदि कुण्डली में धनभाव में पापग्रह हो, लग्नेश व्यय में बैठा हो तथा दशमेश एवं एकादशेश से युत या दृष्ट हो तो जातक ऋणग्रस्त रहता है।।१०९।।

दिनेशकरलुप्तस्तु धनेशो नीचराशिग: ।
पापान्विते धने रन्ध्रे ऋणग्रस्तो भवेन्नर: ।।११०।।

धनेश सूर्य के साथ कालांशों के भीतर होकर अस्त हो तथा नीच राशि में बैठा हो, धनभाव तथा अष्टम भाव में पाप ग्रह बैठे हों तो भी जातक ऋणग्रस्त (कर्जदार) होता है।।११०।।

धनेशे नीचराशिस्थे क्रूरषष्ट्यंशसंयुते ।
लाभेशेऽपि तथायुक्ते ऋणग्रस्तो भवेन्नर: ।।१११।।

यदि धनेश नीच राशि में क्रूर षष्ट्यंश में हो तथा लाभेश नीच राशिगत होकर क्रूरषष्ट्यंश में हो, तब भी जातक ऋणग्रस्त बना रहता है।।१११।।

लाभेशस्थितभांशेशनाथे दु:स्थे शुभान्विते ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ते ऋणग्रस्तो भवेन्नर: ।।११२।।

लाभेश जिस भांश (सप्तविंशांश) में है, उसका स्वामी यदि क्रूरषष्ट्यंश में हो तो भी जातक ऋणग्रस्त रहता है।।११२।।

भांश— एक राशि के सत्ताईस भागों को भांश कहते हैं; प्रत्येक भांश अंशादि १°।६'।४०" का होता है। यह षोडश वर्गों के अन्तर्गत आता है। कुछ टीकाकारों ने भांश का अर्थ नवांश किया है, जो कि समीचीन नहीं है।

दन्तरोगयोगा:

वाक्स्थानपे षष्ठगते सराहौ राहुस्थितर्क्षाधिपसंयुते वा ।
दन्तस्य रोगं पतनं च तेषां भुक्तौ तयोर्वा प्रवदन्ति तज्ज्ञा: ।।११३।।

यदि द्वितीय भाव का पति छठे भाव में राहु के साथ बैठा हो अथवा जिस राशि में राहु बैठा है, उस राशि के स्वामी से युक्त हो तो इन ग्रहों की दशान्तर्दशाओं में जातक के दाँतों में रोग होता है तथा उसके दाँत गिर जाते हैं।।११३।।

वाक्स्थानपेनापि युतोऽरिनाथस्तद्भावपस्थांशपयुक्तनाथः ।
षष्ठेश्वरेणापि युतः स्वभुक्तौ दन्तादिरोगाः पतनञ्च तेषाम् ।।११४।।

यदि द्वितीयेश के साथ षष्ठेश जिस भाव में है, उसका नवांशेश भी इन दोनों में षष्ठेश के समीप अंश-युति में हो तो इन ग्रहों की अन्तर्दशाओं में जातक को दन्तरोग होता है तथा उसके दाँत गिर जाते हैं (पायरिया आदि में दाँत गिर जाते हैं या दाँत खराब होकर टूटने लगते हैं)।।११४।।

उन्मादरोगयोगः

वाक्स्थानपेनापि युतोऽर्कपुत्रः पापैर्युतो वातभयात् प्रमादः ।
सूर्यस्तु कोपाद्भवति प्रमादो राज्ञां कुजे चोष्णभयात् प्रमादः ।।११५।।

जब द्वितीयेश शनि ग्रह तथा अन्य ग्रहों से युक्त हो तो वात-विकारजन्य उन्माद (पागलपन) होता है। यदि द्वितीयेश सूर्य से युक्त हो तथा इस पर अन्य ग्रहों का प्रभाव हो तो राजा के प्रकोप से उन्मादरोग होता है। उसी प्रकार द्वितीयेश की मङ्गल ग्रह से युति वित्त तथा उष्णता के प्रकोप से उन्माद उत्पन्न करती है। यह प्रभाव इन ग्रहों की दशान्तर्दशाओं में होता है।।११५।।

विशेष— वातज उन्माद के लक्षण माधवनिदान में निम्न प्रकार हैं—

अस्थानहासस्मितनृत्यगीतवागङ्गविक्षेपणरोदनानि ।
पारुष्यकार्श्यारुणवर्णताश्च जीर्णे बलं चानिलजस्य रूपम् ।।

पित्तज उन्माद के लक्षण—

अमर्षसंरम्भविनग्नभावाः सन्तर्जनातिद्रवणौष्णरोषाः ।
प्रच्छायशीतान्नजलाभिलाषः पीता च भाः पित्तकृतस्य लिङ्गम् ।।

राजा के कोप से उन्माद— राज्यशासन से दण्डित होने के भय से भी व्यक्ति को उन्माद हो जाता है। ऐसे व्यक्ति, जिन्होंने धन का गबन किया हो अथवा धोखे से कोई घपला हो गया हो, वे सजा होने, नौकरी जाने तथा बदनामी के कारण पागल हो जाते हैं। आयुर्वेद में इसे मनोविघातजन्य उन्माद कहा गया है। माधवनिदान में उन्माद रोग के इस भेद का वर्णन (अध्याय २०, श्लोक १४) 'मनोविघातजोन्माद' नाम से हुआ है—

चौरैः नरेन्द्रपुरुषैररिभिस्तथान्यैः वित्रासितस्य धनबान्धवसंक्षयाद्वा ।
गाढं क्षते मनसि च प्रियया रिरंसोर्जायेत चोत्कटतमो मनसो विकारः।।

अर्थात् चोरों, राजा या राज्याधिकारियों, शत्रुओं आदि के द्वारा वित्रासित होने पर

तथा बन्धु-परिवार-धनादि के नष्ट होने पर अथवा अभीप्सित स्त्री के प्रति कामुक आकर्षण के कारण रिंरसा बनी रहने से तथा पूर्ण न होने से मन के ऊपर बहुत चोट लगती है (गाढं क्षते मनसि), तब उन्माद हो जाता है। आगे उसके लक्षणों का वर्णन करते हुए कहते हैं—

चित्रं ब्रवीति च मनोऽनुगतं विसंज्ञो गायत्यथो हसति रोदति चापि मूढः ।

अर्थात् इस प्रकार का पागल व्यक्ति विचित्र बातें करता है, गुप्त बातें कहता है, कभी हँसता है, कभी रोता तथा कभी गाने लगता है। इस प्रकार के पागलों का सम्बन्ध उन्हीं घटनाओं से रहता है, जिनसे उसके मन को आघात लगकर उन्माद पैदा होता है।

तालुरोगोत्पत्तियोगः

तदीश्वरेणापि युतेन्दुपुत्रे सराहुकेतावरिभावयुक्ते ।
राहुस्थितर्क्षाधिपसंयुते वा भुक्तौ तदा तालुभवः स रोगः ।।११६।।

जब द्वितीयेश के साथ छठे भाव में बुध या राहु अथवा केतु की युति हो तथा राहु अधिष्ठित राशीश से भी युति हो तो तालु में रोग होता है। तालु रोगों में कण्ठ-शुण्डी अथवा तुण्डिकेरी, अध्रुष, तालकच्छप, ताल्वर्बुद, तालुपुप्पुट, मांससंघात (इनमें तालुपुप्पुट को छोड़कर शेष तीनों कैंसर ही होते हैं), तालुशोष, तालुपाक आदि का वर्णन आयुर्वेदीय ग्रन्थों में उपलब्ध है।।११६।।

नेत्रोत्पाटनयोगः

राजारिनाथौ तनुभावयुक्तौ साच्छाक्षिपौ भूमिपतेः प्रकोपात् ।
उत्पाटनं नेत्रमुशन्ति तज्ज्ञा नीचांशगौ पापयुतौ तथैव ।।११७।।

लग्न में जब दशमेश तथा षष्ठेश, अच्छ (शुक्र), अक्षिपौ (द्वितीयेश तथा द्वादशेश)— ये सब एकत्रित हों, तब राजाज्ञा से आँखें निकाल ली जाती हैं। इसी प्रकार द्वितीयेश, द्वादशेश नीचराशिगत तथा नीच नवांश में हों, तब भी नेत्रोत्पाटन होता है। षष्ठेश दशमेश में नीचादि में होना चाहिये।।११७।।

नयनप्रमादयोगः

राजारिनाथस्थितभांशकेशौ दुःस्थौ विलग्नेशयुतौ तथैव ।
साच्छाक्षिपौ नाशगतौ तथैव शुभैर्न दृष्टौ नयनप्रमादः ।।११८।।

दशमेश तथा षष्ठेश जिन ग्रहों के नवांशों में हों, वे ग्रह यदि दुःस्थानों (६-८-१२) में बैठे हों, साथ ही शुक्र-द्वितीयेश-द्वादशेश अष्टम भाव में हों तथा उन पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो नेत्रों में प्रमाद रहता है।।११८।।

विशेष— इस श्लोक में 'नयनप्रमाद' का अर्थ व्यापक है। इसका अर्थ नेत्रों का चञ्चल रहना, असावधान रहना, एक जगह दृष्टि स्थिर करने की क्षमता नहीं होना आदि है।

पित्रादिकानां नेत्ररोगकथनविधिः

तद्भावपाभ्यामथ कारकाभ्यां पित्रादिकानां फलमेवमाहुः ।।११९।।

जिस प्रकार जातक के लग्न से नेत्ररोगादि का विचार किया गया है; उसी भाँति जातक की कुण्डली के दशम भाव, दशम भावेश तथा पितृकारक से पिता का, जातक के चतुर्थ भाव को लग्न मानकर चतुर्थेश तथा मातृकारक से माता का तथा सप्तम भाव को लग्न मानकर उसके स्वामी तथा स्त्रीकारक से पत्नी के नेत्ररोगादि का विचार भी जातक की कुण्डली से किया जा सकता है।।११९।।

कर्णविच्छेदनयोगाः

कर्णस्य विच्छेदनमाहुरार्याः सौरे सभौमे धनपे विलग्ने ।
रोगाधिपे वित्तपतौ विलग्ने नाशस्थिते मन्दसुतारयुक्ते ।।१२०।।

जब द्वितीयेश लग्न में शनि-मङ्गल के साथ हो, तब कर्णविच्छेदन (कानों का कटना या फटना या ऑपरेशन) होता है। इसी प्रकार षष्ठेश तथा द्वितीयेश दोनों ही लग्न में हों तथा शनि-मङ्गल अष्टम भाव में बैठे हों तब भी कर्णच्छेदन होता है।।१२०।।

पित्रादिकानां फलमेवमूह्यं तत्स्थाननाथग्रहकारकेभ्यः ।

पिता आदि के कर्णरोगों का फलादेश दशम भाव आदि को लग्न मानकर भाव-स्वामी तथा भावकारक के अनुसार विचारना चाहिये।।

रौप्यपात्रयोगः

भुक्तीश्वरे ह्यच्छनिशाकराभ्यां केन्द्रे युते राजतमत्र पात्रम् ।।१२१।।

जब धनेश चन्द्रमा तथा शुक्र के साथ युत होकर केन्द्र में बैठता है तो जातक को भोजनार्थ चाँदी का पात्र प्राप्त होता है।।१२१।।

स्वर्णपात्रयोगः

सचन्द्रपुत्रामरनाथपूज्ये केन्द्रस्थिते स्वर्णमयं हि पात्रम् ।
तदीश्वरे कोणचतुष्टये वा वैशेषिकांशे यदि तादृशं तत् ।।१२२।।

यदि जातक की कुण्डली में बुध तथा गुरु एक साथ केन्द्र में बैठे हों तो उसे स्वर्णमय पात्र उपलब्ध होते हैं। यदि धनेश केन्द्र कोण वैशेषिकांश में होकर बैठे हों तब भी स्वर्ण-पात्र प्रदान करते हैं।।१२२।।

मृद्वंशके वा परमोच्चभांशे स्थिते तदीशे यदि तादृशं तत् ।
स्वांशादिकानां परमोच्चराशौ शशाङ्कजीवाच्छविदां यदंशे ।।१२३।।
विर्यान्वितो भुक्तिपतिस्तदंशे भुक्तेस्तु पात्रं सदृशं हिरण्यम् ।।१२४।।

यदि धनस्थान का स्वामी मृद्वंशक नामक षष्ट्यंश में बैठा हो अथवा परमोच्च

वैशेषिकांश में हो तो भी हिरण्यपात्र मिलते हैं। इसी प्रकार यदि चन्द्रमा, गुरु, शुक्र, बुध स्वनवांशों या परमोच्चांश में हों तो इन ग्रहों में से जिसके नवांशों में धनेश हो, उस ग्रह के अनुसार स्वर्णादि (गुरु से सोने के, चन्द्र-बुध-शुक्र से चाँदी के) पात्र होंगे। इनकी प्राप्ति बली ग्रह की अन्तर्दशा में होगी॥१२३-१२४॥

भोजनकाले बहुपात्रयोगाः

मृद्वंशके भुक्तिपतौ विशेषात् पारावतादौ बलपूर्णयुक्ते ।
केन्द्रस्थिते मित्रशुभेक्षिते स्यात् शंसन्ति पात्रं बहु भुक्तिकाले ।।१२५।।

यदि अन्तर्दशेश मृद्वंशक षष्ट्यंश में विशेष रूप से पारावतादि अंशकों में पूर्ण बलाढ्य होकर केन्द्र में स्थित हो तथा शुभ मित्र ग्रहों से दृष्ट हो तब इस योग में भोजनकाल में बहुत-से पात्र उपलब्ध होते हैं॥१२५॥

विचित्रपात्रं प्रवदन्ति तज्ज्ञा भुक्तीश्वरे केन्द्रगते बलाढ्ये ।
शुक्रामरेज्येन्दुसुता बलाढ्यास्तैरेव युक्तेऽत्र विशेषितांशे ।।१२६।।

अन्तर्दशानाथ केन्द्र में बली होकर बैठा हो तथा शुक्र, गुरु, बुध— ये बलवान हों, इनके साथ भी भुक्तीश्वर (अन्तर्दशेश) की युति हो तो भोजनकाल में विचित्र प्रकार के पात्र (जिन पर चित्रकारी आदि हो) उपलब्ध होते हैं॥१२६॥

लौहपात्रयोगाः

लग्नेश्वरेण सहितौ यदि भुक्तिनाथौ
षष्ठस्थितौ यदि तदा प्रवदन्ति लौहम् ।
पात्रं तदीश्वरयुतौ यदि वा विनाश-
स्थानर्क्षगौ सुदृढमत्र सुलौहपात्रम् ।।१२७।।

यदि महादशा स्वामी तथा अन्तर्दशा स्वामी लग्नेश के साथ छठे भाव में बैठे हों अथवा यह तीनों ग्रह षष्ठेश के साथ ही आठवें या बारहवें भाव में बैठे हों तो जातक को सुदृढ़ लौहपात्र की प्राप्ति होती है॥१२७॥

विशेष— वर्तमान समय में स्टील के पात्र ही सर्वत्र सुलभ हैं।

कांस्यपात्रयोगः

कांस्यं वदन्ति किल भुक्तिपतौ बलाढ्ये
वैशेषिकांशसहिते यदि सौम्यदृष्टे ।
भुक्तीश्वरस्थितनवांशपतिर्यदंशे
तद्राशिपः शुभयुतोऽपि तथैवमाहुः ।।१२८।।

यदि दशानाथ बलाढ्य तथा वैशेषिकांश संयुक्त होकर सौम्य ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक को कांस्य पात्रों की प्राप्ति होती है। जिसके नवांश में दशानाथ बैठा हो, वह ग्रह

जिस अन्य ग्रह के नवांश में है, वह ग्रह शुभ ग्रह की दृष्टि से युक्त हो तो भी कांस्यपात्रों की प्राप्ति होती है॥१२८॥

अदृढपात्रयोगः

पापग्रहेण सहिते यदि भुक्तिराशौ
तद्राशिनाथयुतभागपतौ तदंशे ।
तद्राशिपे गतबले च शुभैरदृष्टे
भुक्तौ कृतौ समदृढं कथयन्ति तज्ज्ञाः ।।१२९।।

धनभाव में पापग्रह बैठे हों, धनभाव के स्वामी का नवांश उसका स्वामी द्वितीय भाव के स्वामी के नवांश में हो तथा धनेश बलहीन होकर शुभग्रहों की दृष्टि से रहित हो तो भोजन के समय अदृढ़ पात्र (कच्चे या कमजोर) होते हैं॥१२९॥

अदृढ़ पात्र— मिट्टी के पात्र, चीनी-मिट्टी के पात्र, काँचपात्र तथा प्लास्टिक आदि के पात्रों को भी अदृढ़ पात्र मानना चाहिये। क्रॉकरी के पात्र अदृढ़ पात्र ही होते हैं।

भुक्तिनाथा— भुक्तिस्थान दूसरे भाव को कहते हैं; अतः इसका अर्थ द्वितीयेश तथा अन्तर्दशानाथ दोनों ही होता है।

धातुद्वयपात्रकथनम्

धातुद्वययुतं पात्रं भुक्त्यंशे नाथराशिगे ।
पापग्रहेण सन्दृष्टे कालके बलवर्जिते ।।१३०।।

भुक्तिस्थान (द्वितीय भाव) का नवांश वर्गोत्तम हो, परन्तु कालसंज्ञक षष्ट्यंश में हो, निर्बल पापग्रह से दृष्ट हो तो दो धातुओं के अलग-अलग पात्र भोजन के लिये उपलब्ध रहते हैं— ऐसा समझना चाहिये॥१३०॥

बह्वाशनस्य योगायोगकथनम्

बह्वाशनं भुक्तिपतौ सपापे दावाग्निदण्डायुधकालभागे ।
नीचांशके पापनिरीक्षिते वा शुभैर्न दोषः सहितेक्षणाभ्याम् ।।१३१।।

यदि भुक्तिपति पापग्रह से युक्त होकर दण्डायुध या दावाग्नि या काल नामक षष्ट्यंशों में हो तो ऐसा जातक बहुत भोजन करता है अर्थात् वह पेटू होता है। यदि भुक्तिपति नीच नवांश में हो तो भी जातक बहुत भोजन करने वाला होता है, परन्तु द्वितीयेश पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो यह फल नहीं होता अर्थात् अधिक भोजन करने वाला नहीं होता॥१३१॥

सुखभोजनयोगाः

भुक्तिस्थाने शुभयुते तदीशे शुभसंयुते ।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे सुखभुक्स नरो भवेत् ।।१३२।।

भुक्तिस्थान (द्वितीय) में शुभ ग्रह बैठे हों, भुक्तिस्थान का स्वामी भी शुभ ग्रहों से युक्त हो तथा द्वितीय और द्वितीयेश शुभदृष्ट हों, तब वह जातक सुखपूर्वक भोजन करने वाला होता है॥१३२॥

भुक्तिसौख्ययुत: श्रीमांस्तदीशे बलसंयुते ।
विशेषितांशके वापि गुरुशुक्रनिरीक्षिते ।।१३३।।

यदि द्वितीयेश बलवान शुभ ग्रह होकर वैशेषिकांश में होकर गुरु-शुक्र से दृष्ट हो, तब भी जातक सुखभोजी होता है॥१३३॥

भुक्तिसौख्य— सुख-चैन से विना किसी हड़बड़ी के भोजन करने को भुक्तिसौख्य कहते हैं।

भुक्तौ स्वोच्चे त्रिकोणे वा तदीशेऽपि बलान्विते ।
कारकेऽपि विशेषांशे शुभदृष्टे सुखाशनी ।।१३४।।

द्वितीय भाव में बैठा ग्रह स्वराशि, उच्चराशि, मूल, त्रिकोणादि में हो, द्वितीयेश बलवान हो तथा द्वितीय का कारक ग्रह वैशेषिकांश में हो तो भी व्यक्ति सुखाशनी होता है॥१३४॥

हितभुग्योग:

कालोचिताशनी भुक्तिनाथे देहेशवीक्षिते ।
पापग्रहे वा दृष्टे नीचांशादियुते न तु ।।१३५।।

द्वितीयेश यदि लग्नेश से देखा जाता हो तो जातक देश-काल के अनुसार हितकर भोजन करता है; परन्तु यदि द्वितीयेश पापग्रह से दृष्ट हो अथवा नीच राशि नवांशादि में हो तो उसका भोजन हितकर नहीं रहता, देश-काल के प्रतिकूल होता है॥१३५॥

अन्नदातायोगा:

अन्नप्रदो द्वितीयेंऽशे गुरुसौम्ययुतेक्षिते ।
वैशेषिकांशकयुते मृद्वंशादियुतेऽपि वा ।।१३६।।

जब द्वितीय भाव का नवांश गुरु एवं बुध से युत या दृष्ट हो तथा वैशेषिकांश या मृद्वंश में हो तो जातक अन्नदाता होता है॥१३६॥

गुरुशुक्रयुते भुक्तौ नाथे सौम्यनिरीक्षिते ।
वैशेषिकांशकयुते अन्नदाता नरो भवेत् ।।१३७।।

जब द्वितीय भाव में गुरु-शुक्र बैठे हों या द्वितीयेश पर सौम्यग्रह की दृष्टि हो तथा वह वैशेषिकांशक में हो, तब वह जातक अन्नदाता होता है॥१३७॥

भुक्तितराशिपतौ वीर्ये केन्द्रे तूपचयेऽपि वा ।
बलयुक्तै: शुभैर्दृष्टे त्वन्नदाता भवेन्नर: ।।१३८।।

भुक्ति राशि का स्वामी बलवान हो या बलवान शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो ऐसा जातक अन्न का दान करने वाला होता है॥१३८॥

सौम्ये स्वोच्चगते भुक्तौ मित्रसौम्यनिरीक्षिते ।
नाथे वैशेषिकांशे वा सुखभुक्तिप्रदो भवेत् ।।१३९।।

जब उच्च राशि या स्वराशिगत बुध द्वितीय भाव में बैठा हो तथा सौम्य मित्र ग्रहों द्वारा वीक्षित हो अथवा द्वितीयेश वैशेषिकांश में बैठा हो तो ऐसा जातक सुखपूर्वक भोजन बाँटता है॥१३९॥

विशेष— भारतीय संस्कृति में अन्नदान तथा भोजनदान अतिश्रेष्ठ तथा पुण्य माना जाता है। अतः वैदिक काल से ही इस देश में धनिकों एवं राजाओं द्वारा अन्नवितरण तथा आहारदान का कार्य सम्पन्न होता रहा है। इसे अन्नक्षेत्र सञ्चालित करना या सदाव्रत लगाना कहते हैं। तीर्थस्थानों एवं महानगरों में यह प्रथा अभी तक जीवित है और कुछेक स्थानों पर वर्ष भर अबाध गति से चलती रहती है। कुम्भ मेलों में भी यह कार्यक्रम आयोजित होते रहते हैं। जब भोजन करने वालों को उनकी इच्छानुसार, कच्चा-पक्का, सिद्धान्न, फल या दूध विना कष्ट के दिये जाते हैं तो ऐसे दाता को 'सुखभुक्तिप्रद' कहते हैं।

अल्पाशी-रुचिराशीयोगौ

अल्पाशी रुचिकामः स्याद्भुक्तिनाथे शुभग्रहे ।
स्वोच्चे वा शुभसन्दृष्टे मृद्वंशादिसमन्विते ।।१४०।।

जब द्वितीयेश शुभ ग्रह होकर स्वराशि, उच्च राशि में मृद्वंश से समन्वित होकर बैठा हो तथा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो जातक स्वल्पभोजी तथा रुचिरभोजी होता है॥१४०॥

परान्नभक्षणभोजनदूषणयोगश्चाह

परान्नभुक्तदीशे तु क्रूरषष्ट्यंशसंयुते ।
नीचखेचरसन्दृष्टे तद्दूषणपरो नरः ।।१४१।।

जब द्वितीयेश क्रूर षष्ट्यंश में नीचगत ग्रहों से सन्दृष्ट हो तो जातक परान्नभक्षण करता है अर्थात् स्वयं कमाकर नहीं खाता। साथ ही भोजन में मीन-मेख निकालता रहता है॥१४१॥

विशेष— कुछ टीकाकारों ने इस श्लोक में दो योग अलग-अलग माने हैं। प्रथम में द्वितीयेश का क्रूरषष्ट्यंश में बैठने से जातक परान्नभोक्ता तथा जब नीच ग्रहों से दृष्ट हो तो अन्नदूषक होता है। अस्तु; दोनों ही अर्थ ग्रहण किये जा सकते हैं।

श्राद्धभुग्योगमाह

भुक्तिस्थानाधिपे मन्दे तदीशे मन्दसंयुते ।
नीचेऽर्कसूनुना दृष्टे श्राद्धभुक् सततं नरः ।।१४२।।

जब द्वितीयेश शनि हो अथवा द्वितीयेश शनि से युत हो अथवा नीच राशि का द्वितीयेश शनि के द्वारा दृष्ट हो, इन तीनों योगों में से कोई भी हो, तो ऐसा जातक श्राद्ध-भोक्ता होता है अर्थात् वह अन्त्येष्टि संस्कार (तेरहवीं आदि) तथा महालय श्राद्ध (आश्विन कृष्ण पक्ष में) एवं अन्य श्राद्ध के अवसरों पर दूसरों के यहाँ भोजन करता है॥१४२॥

कुभोक्तायोगमाह

कुभोजी भुक्तिनाथे तु शन्यारगुलिकान्विते ।
नीचशत्रुयमांशादौ शुभदृष्टिविवर्जिते ।।१४३।।

जब द्वितीयेश शनि, मङ्गल या गुलिक में से किसी से अथवा दो या तीनों से युक्त हो अथवा नीच राशि, शत्रुराशि या यमांश कामक षष्ट्यंश में शुभ ग्रह की दृष्टि से रहित होकर बैठा हो तो ऐसी ग्रहस्थिति वाला जातक कुभोक्ता होता है। कुभोजन का अर्थ सड़ा-गला, बासी, अपवित्र, मांस-मछली, अण्डादि का भोजन होता है, जिसे खाने वाला कुभोक्ता कहलाता है॥१४३॥

शीघ्रभुग्योगमाह

तदीशे शुभसंयुक्ते शीघ्रभुग्बलसंयुते ।
द्वितीये शुभराशौ वा शुभखेचरसंयुते ।।१४४।।

यदि द्वितीयेश शुभ ग्रहों से संयुक्त हो तथा बलवान हो तो ऐसा जातक जल्दी-जल्दी भोजन कर थोड़ी देर में ही तृप्त हो जाता है अथवा द्वितीय में शुभ ग्रह की राशि में शुभ ग्रह बैठने पर भी वह जातक शीघ्रभुक् होता है॥१४४॥

चिरभुग्योगमाह

तदीशे चरराशौ वा भुक्तौ वा तादृशे ग्रहे ।
तादृशे पापसम्बन्ध्ये चिरभोक्ता तु दूषकः ।।१४५।।

भुक्तीश यदि चर राशि में या चर ग्रहभुक्ति स्थान में बैठा हो तथा पापग्रह से युत वा दृष्ट हो तो जातक भोजन में दोष निकालने वाला तथा देर तक भोजन करने वाला होता है। अतः उसे चिरभोक्ता कहा जाता है॥१४५॥

विस्फोटकादियोगः

विलग्नसप्ताष्टमवित्तराशौ दिनेशयुक्ते क्षितिसूनुदृष्टे ।
भौमेऽथ वा वासरनाथदृष्टे स्फोटाग्निभीतिं प्रवदेत् खलाद्वा ।।१४६।।

यदि लग्न, सप्तम, अष्टम तथा द्वितीय भाव में (वह द्वितीयेश) सूर्य से युक्त होकर

मङ्गल से दृष्ट हो अथवा मङ्गल से युत होकर सूर्य से दृष्ट बैठा हो तो फोड़े-फुंसी, अग्नि, विद्युत् तथा बारुद आदि से जातक को भय होता है॥१४६॥

त्वाच्यरुधिररोगयोग:

लग्नान्त्यशत्रुमदने सति भूमिपुत्रे
मान्द्यन्विते कमलबन्धुनिरीक्षिते वा ।
मूढारिनीचभवने यदि वा क्षितीजे
त्वाच्यासृगादिसहितः स भवेत्तदानीम् ।।१४७।।

यदि जातक की कुण्डली में मङ्गल लग्न, द्वादश, षष्ठ, सप्तम— इन भावों में से किसी में मान्दि से युक्त तथा सूर्य से दृष्ट होकर अस्तंगत, शत्रु राशिगत, नीच राशिगत (किसी भी स्थिति) में हो तो उस जातक को त्वाच्यासृक् (त्वचा से खून बहने का) रोग होता है॥१४७॥

त्वाच्यासृक्— इस श्लोक में 'त्वाच्यासृक्' शब्द का प्रयोग हुआ है। यह त्वचागत रक्तपित्त नामक रोग होता है। आधुनिक दृष्टि से इस रोग में दो बीमारियों का समावेश है—

(१) नीलोहा— इस रोग में त्वचा के भीतर रक्तस्राव होकर एकत्रित होता है, जिसके कारण नीले धब्बे, चकत्ते या रेखायें बनती हैं। कभी-कभी मस्तिष्क, आँत्र, आमाशय आदि से भी रक्तस्राव होता है।

(२) शोणितप्रियता— इसमें त्वचा पर जरा-सी खरोंच लगने पर भी खून बहने लगता है।

पुनश्च त्वाच्यरक्तपित्तरोगयोग:

मन्दात्मजेन सहिते यदि भूमिपुत्रे
वित्तेऽथ वा निधनराशिमुपागते वा ।
तेनैव वीक्षितयुते धनभावनाथे
त्वाज्यस्पृशादिनियतं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।।१४८।।

यदि मङ्गल शनि के साथ द्वितीय भाव में या अष्टम भाव में बैठा हो तथा धनेश भी मङ्गल से युत या दृष्ट हो तो त्वचा में स्पर्शमात्र से रक्तस्राव होने लगता है— ऐसा विद्वानों का मत है॥१४८॥

शुनकभीतियोग:

पापेक्षिते रविसुते धनराशियुक्ते
पापान्विते शुनकभीतिमुपैति मर्त्यः ।
तद्भावनाथसहिते दिननाथपुत्रे
दृष्टेऽथ वा शुनकभीतिमुपैति मर्त्यः ।।१४९।।

यदि धनस्थान में पापदृष्ट-युत शनि हो तो कुत्ते से भय होता है। इसी प्रकार यदि द्वितीयेश शनि से युक्त-दृष्ट हो तब भी कुत्ते से भय होता है ।।१४९।।

सर्पभयं कदन्नभुग्योगश्च

राहौ द्वितीये गुलिकेन दृष्टे युक्तेऽथ वा सर्पभयं वदन्ति ।
कदन्नभुक् भूमिसुतेन युक्ते पित्रादिकानां फलमेवमाहुः ।।१५०।।

यदि द्वितीय भाव में राहु गुलिक से युत-दृष्ट हो तो सर्पभय होता है। यदि वही द्वितीय का राहु मङ्गल के साथ युत-दृष्ट हो तो जातक कदन्नभोजी (साँवां, कोदों, ककुनी, कूरी, मडुआ, खेसारी आदि) का भोजन करता है।।१५०।।

विशेष— ग्रन्थकार ने यहाँ गुलिक की दृष्टि का उल्लेख किया है; परन्तु उसका स्पष्टीकरण नहीं दिया है कि किन स्थानों में गुलिक की दृष्टि होती है। अतः केवल युति का उपयोग ही समीचीन है अथवा फिर शनि की ३-७-१० स्थानों पर दृष्टि की भाँति गुलिक की दृष्टि भी मानी जा सकती है; क्योंकि गुलिक (मान्दि) शनि का पुत्र है। इसी प्रकार से पिता आदि के लिये भी इन बातों का विचार करना चाहिये, ऐसा ग्रन्थकार कहते हैं।

वाक्चलनमाह

लग्नेश्वरे शोभनखेचरेन्द्रे निध्यादिलाभं धनभावयुक्ते ।
सौम्ये द्वितीये यदि सत्त्वहीने पापेक्षिते वाक् चलनं तदाहुः ।।१५१।।

यदि शुभ ग्रह लग्नेश होकर धनभाव में बैठा हो तो जातक को निधि आदि का लाभ होता है। यदि वाणी का कारक बुध द्वितीय भाव में निर्बल होकर बैठा हो तथा पाप ग्रहों से वीक्षित हो तो जातक को वाक् चलन (हकलाहट) रहता है।।१५१।।

पुनश्च वाक्चलनयोगः

वाक्स्थानपेन्द्रौ यदि सत्त्वहीनौ क्रूरांशगौ वाक् पवनार्दितः स्यात् ।
वाक्स्थानपे धीरतया विहीने पापेक्षिते वाक्चलनं तदाहुः ।।१५२।।

यदि द्वितीयेश तथा लग्नेश बलहीन होकर क्रूर षष्ट्यंश में हों तो वातप्रकोप से वाणी में हकलाहट होती है। यदि द्वितीयेश निर्बल तथा पापदृष्ट हो तो भी वाणी में हकलाहट होती है।।१५२।।

विषप्रयोगाद्वञ्चनयोगमाह

पापे धने पापनिरीक्षिते वा क्रूरांशगे पापयुते विशेषात् ।
तत्स्थानपे पापनिरीक्षितेऽपि विषप्रयोगः खलु वञ्चनादेः ।।१५३।।

यदि धनभाव पापग्रह से युत-दृष्ट क्रूरांश (षष्ट्यंश) में हो तथा यदि द्वितीयेश पापयुत पापनिरीक्षित हो तो विशेष रूप से ऐसा जातक विषाक्त पदार्थ से बेहोश करके ठग लिया जाता है।।१५३।।

मित्रादीनां कृते फलकथनमाह

मित्रादिस्थानपवशादेवं तेषां फलं वदेत् ।
नाथकारकभावानां बलाबलवशात्तथा ।।१५४।।

इस प्रकार जो योग ऊपर कहे गए है, उनको मित्रादि भावों, उनके भावेशों, भावकारकों एवं तत्सम्बन्धी ग्रहों आदि के अनुसार कहना चाहिये। ग्रहों के बलाबल आदि का भी विचार अवश्य करना चाहिये॥१५४॥

अप्रकाशकग्रहाणां संज्ञा उच्चादिकथनचक्रम्

धूम	पात	परिधि	इन्द्रचाप	उपकेतु	अप्रकाशग्रह
धूम्र	व्यतिपात अणु	परिवेष परिघ	इन्द्रधनु शक्रचाप	ध्वज भोगी	पर्यायवाची
सिंह	कुम्भ	मिथुन	धनु	वृश्चिक	उच्चराशि
कुम्भ	सिंह	धनु	मिथुन	वृष	नीचराशि
कर्क	सिंह	कर्क	सिंह		स्वराशि

अप्रकाश ग्रहों के ये उच्च-नीच प्रश्नज्ञानप्रदीप ग्रन्थ (१.१०,१४-१६) में दिये हैं—

सूर्येन्द्वो: परिधे जीवे धूमज्ञशनिभोगिनाम् ।
शुक्रचापकुजोऽणूनां शुक्रस्योच्चास्त्वजादय: ॥
रवेर्वणिगलीस्त्विन्दो: कुलीरोऽङ्गारकस्य च ।
ज्ञस्य मीनमज: सौरे: कन्याशुक्रस्य कथ्यते ॥
सुराचार्या मकरस्त्वेतेषां नीचराशय: ॥
राहोर्वृषो युगञ्चेन्द्रधनुषोणोर्मृगेश्वर: ।
परिवेषस्य कोदण्ड: कुम्भो धूमस्य नीचभू: ॥

अध्यायस्योपसंहार:

सर्वेषामुपकारार्थं रहस्यार्थप्रकाशक: ।
धनभावफलाध्यायो वर्णितोऽव्ययसूनुना ।।१५५।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ धनभावफलनिरूपणो नाम तृतीयोऽध्याय: ।।३।।

'अव्य के सूनु वेङ्कटेश ने सबके उपकार के लिये रहस्य तथा अर्थ को प्रकट करने वाला धनभाव का फलाध्याय वर्णन किया॥१५५॥

॥ इस प्रकार 'सर्वार्थचिन्तामणि' ग्रन्थ की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़कृत
'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका में तृतीय अध्याय पूर्ण हुआ ॥

◆

अथ चतुर्थोऽध्याय:

तृतीयचतुर्थभावफलविचाराध्याय:

तृतीयभावाद्विचारणीयविषयानाह

सहजेन सहजविक्रमौषधसहायान् गलोरस्थानम् ।
विद्याद्दक्षिणकर्णं भक्ष्यविशेषांश्च मूलादीन् ।।१।।

तृतीय भाव से भाई, पराक्रम, औषधि, सहायता, गला, उरस् (वक्ष:स्थल) दक्षिण कर्ण, विशेष भक्ष्य पदार्थ (कन्द, मूल, फल, मेवे आदि) का विचार किया जाता है।।१।।

सोदरविनाशयोग:

नाशस्थितौ सोदरनाथभौमौ पापेक्षितौ सोदरनाशमाहु: ।
पापर्क्षगौ पापसमागमौ वा भ्रातॄन् समासाद्य विनाशहेतु: ।।२।।

तृतीय भाव का अधीश्वर और मङ्गल— दोनों ही व्यय (द्वादश) भाव में स्थित होकर पापग्रह द्वारा देखे जाते हों तो भ्रातृनाश होता है अथवा ये दोनों ही (तृतीयेश और मङ्गल) पापग्रह की राशि में बैठकर पापग्रहों से ही युत हों तो भी भाइयों का जन्म के पश्चात् नाश हो जाता है।।२।।

नीचर्क्षगौ सोदरकारकाख्यौ नीचांशगौ पापसमागमौ वा ।
क्रूरादिषष्ट्यंशयुतौ तदानीं भ्रातॄन् समासाद्य विनाशमाहु: ।।३।।

तृतीय का अधिपति और भ्रातृकारक ग्रह नीच राशि या नीच नवांश में हो अथवा पापग्रह से युति कर रहा हो तथा क्रूरादि षष्ट्यंश में स्थित हो तो भी जातक को भ्रातृनाश होता है।।३।।

पापग्रहे सोदरभावयुक्ते सोत्थेऽथ वा पापनिरीक्षिते स्यात् ।
तदीश्वरे पापखगान्तरस्थे सहोदराणां कथयन्ति नाशम् ।।४।।

तीसरे भाव में पापग्रह बैठे हों अथवा तृतीय भाव को पापग्रह देखते हों अथवा तृतीयेश पापग्रहों के मध्य में (पापकर्त्तरी ग्रस्त) हो तो ज्योतिषाचार्य इस योग का फल भ्रातृनाश कहते हैं।।४।।

पापान्तरे पापनिरीक्षिते वा पापान्विते नीचगृहान्विते वा ।
तृतीयभावे शुभखेचरेन्द्रैर्न वीक्षते सोदरनाशमाहु: ।।५।।

तृतीय भाव भी यदि पापग्रहों के मध्य या पापग्रहों से दृष्ट अथवा पापयुत होकर शुभग्रहों से न देखा जाता हो तो भ्रातृनाश होता है; ऐसा दैवज्ञगण कहते हैं।।५।।

भ्रातृस्थानाधिपस्यांशराशीशे नाशराशिगे ।
नीचारातिगते मूढे त्वाहुः सोदरनाशनम् ।।६।।

भातृभाव का स्वामी जिस ग्रह के नवांश में हो, वह नवांशेश यदि द्वादश भावगत हो, नीच राशिस्थ या शत्रु राशिगत हो या अस्त हो तो भी भ्रातृनाश होता है।।६।।

शनिमान्दिसमायुक्ते पापखेचरवीक्षिते ।
तदीशे नीचराशिस्थे सोदराणां विनाशनम् ।।७।।

शनि, गुलिक (मान्दि) से युक्त होकर पापग्रह से देखा जाता हो तथा तृतीय भावेश नीच राशि में हो तो भाइयों का विनाश जानना चाहिये।।७।।

पापान्तरे तदीशे तु कारके वा तथाविधे ।
तथैव तद्भावनाथे सोदराणां विनाशनम् ।।८।।

तृतीयेश पापग्रहों के मध्य हो, भ्रातृकारक ग्रह भी पापमध्यत्व में हो तथा वह जिस भाव में स्थित है; उसका अधिपति भी यदि पापमध्यत्व को प्राप्त हो, तो भाइयों का विनाश होता है।।८।।

पापैर्हि वीक्षिते भावे भावेशे भावसंस्थिते ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि सोदराणां विनाशनम् ।।९।।

तृतीयाधिपति तृतीयस्थ होने पर भी पापग्रह से वीक्षित हो अथवा वह क्रूरादि षष्ट्यंश में हो तो भी भाइयों का नाश करता है।।९।।

भ्रातृस्थानाधिपस्थांशराशीशो यन्नवांशके ।
तन्नाथे नीचमूढारिभावे सोदरनाशनम् ।।१०।।

जिस ग्रह के नवांश में तृतीयाधिपति स्थित है, वह ग्रह भी जिसके नवांश में स्थित है, वह यदि नीच, शत्रु या अस्तंगत हो तो भ्रातृहानि होती है।।१०।।

भ्रातृस्थानाधिपे दुःस्थे कारके वा तथाविधे ।
पापेक्षिते पापयुते स्वोच्चे वा सोदरक्षयः ।।११।।

तृतीय का स्वामी दुष्ट भाव में अथवा भ्रातृकारक ग्रह दुष्ट स्थान में पापग्रहों से अवलोकित या पापयुत हो तो उच्चस्थ होने पर भी भ्रातृनाश होता है।।११।।

सोत्थेशयुक्तराश्यंशनाथे यत्र नवांशके ।
तन्नाथे नीचमूढारिभावे सोदरनाशनम् ।।१२।।

तृतीय का स्वामी जिस ग्रह के नवांश में हो, वह भी जिस ग्रह के अंश से सम्बद्ध हो, वह नीचस्थ, शत्रुराशिस्थ अथवा अस्तंगत हो तो सहोदरों का क्षय होता है।।१२।।

अतिक्रूरसमायुक्ते भावे वा कारकेऽपि वा ।
तद्भावनायके वाऽपि बाल्ये सोदरनाशनम् ।।१३।।

तीसरा भाव अथवा उसका कारक अत्यन्त क्रूर से सम्बद्ध हो और तीसरे स्थान का स्वामी भी क्रूर से युत हो तो बाल्यावस्था में भ्रातृनाश होता है।।१३।।

सहोदरक्षयश्चिन्तनमाह

यत्किञ्चित्क्रूरसंयोगे तन्नाशश्चिरकालतः ।
बलहीनवशादेवं सोदरक्षयचिन्तनम् ।।१४।।

यदि तृतीय भाव से सम्बन्धित कोई पापप्रभाव है, तब उसकी हानि पर्याप्त विलम्ब से होती है। तृतीय भाव और तृतीय के स्वामी के हीनबल को आधार मानकर भाइयों के क्षय पर विचार करना चाहिये।।१४।।

भ्रातृलाभयोगानाह

भ्रातृस्थाने शुभैर्युक्ते शोभनग्रहवीक्षिते ।
भावनाथे बलाढ्ये तु भ्रातृलाभमुदीरयेत् ।।१५।।

तृतीय भाव शुभग्रहों से युक्त अथवा शुभ खेचरों से देखा जाता हो अथवा तृतीय स्थान का स्वामी बलवान हो तो भ्रातृलाभ होता है।।१५।।

भ्रातृपे कारके वाऽपि शुभयोगनिरीक्षिते ।
भावे वा बलसम्पूर्णे भ्रातृणां वर्धनम्भवेत् ।।१६।।

तृतीय भाव अथवा तृतीय भाव का कारक शुभ ग्रहों से युक्त या अवलोकित हो तथा तृतीय भाव बली हो तो भाइयों की वृद्धि होती है।।१६।।

केन्द्रत्रिकोणगे वाऽपि स्वोच्चमित्रस्ववर्गगे ।
नाथे वा कारके वाऽपि भ्रातृलाभमुदीरयेत् ।।१७।।

तृतीय स्थान का अधिपति अथवा तृतीय का कारक किसी भी केन्द्र में या त्रिकोण में (नवम-पञ्चम) या उच्चस्थ या मित्रस्थ अपने राश्यंशादि में स्थित हो तो भ्रातृलाभ कराता है।।१७।।

अन्यभ्रातृवृद्धियोगानाह

सौम्यग्रहान्विते वाऽपि सौम्यानामंशके यदि ।
नाथे वा कारके वाऽपि भावे सोदरवर्द्धनम् ।।१८।।

तृतीय स्वामी सौम्य ग्रहों से युक्त अथवा सौम्य ग्रहांश में स्थित हो अथवा तृतीय स्थान का कारक भी उपर्युक्त स्थितियों में हो तो भ्रातृवृद्धिकारक होता है।।१८।।

सोत्थेश्वरे गोपुरभागयुक्ते सिंहासने कारकखेचरेन्द्रे ।
सौम्यग्रहे तद्भवनाधिपे स्याद्भ्रात्रादिलाभं कथयन्ति तज्ज्ञाः ।।१९।।

तृतीय स्थान का स्वामी गोपुरांश में तथा तृतीय का कारक सिंहासनांश में स्थित हो और तृतीयेश सौम्य ग्रह हो तो दैवज्ञ भाइयों का लाभ कहते हैं।।१९।।

सहोदराणां बाहुल्ययोगः

पारावतांशे यदि केन्द्रराशौ भावेश्वरे शोभनखेटयुक्ते ।
सौम्यांशके सौम्यग्रहे तदीशे सोत्थादिबाहुल्यमुदीरयन्ति ।।२०।।

तृतीय भावेश शुभग्रह के साथ हो, पारावतांश केन्द्र में बैठा हो, जिस राशि में तृतीयाधिपति है, उस राशि का स्वामी शुभ राशि या शुभ नवांशादि में हो तो सहोदरों की बहुलता होती है।।२०।।

अनुजसम्भवयोगानाह

भ्रातृभावे स्वतुङ्गे वा स्वर्क्षे मूलत्रिकोणगे ।
बलाढ्ये भावनाथे तु सोदरोत्पत्तिमादिशेत् ।।२१।।

तृतीय भावाधिपति तृतीय में, उच्च राशि में, मूल त्रिकोण में या स्वराशि में स्थित हों तो उस जातक के पीछे (अनुज) भाई होते हैं।।२१।।

मृद्वंशादिसमायुक्ते भावनाथे शुभैर्युते ।
शुभेक्षिते वा भावेशे सोदरोत्पत्तिमादिशेत् ।।२२।।

तृतीय का अधीश्वर यदि मृद्वंशादि से युक्त हो, शुभ ग्रह से युत या वीक्षित हो तो भी उपर्युक्त फल ही आचार्यों को बताना चाहिए।।२२।।

पुनः भ्रातृवर्द्धनयोगमाह

वैशेषिकांशे भावेशे ह्यथवा शुभवीक्षिते ।
मृद्वंशादियुते वाऽपि भ्रातृवर्द्धनमेव तु ।।२३।।

तृतीय का स्वामी वैशेषिकांश में हो अथवा शुभ ग्रहों द्वारा अवलोकित हो अथवा मृद्वंशादि में हो तो सहोदरों की वृद्धि होती है।।२३।।

सहोदरैः सह मित्रता-शत्रुतायोगानाह

लग्ननाथस्तु सोत्थेशमित्रञ्चेन्मित्रता भवेत् ।
भ्राता शत्रुर्भवेच्छत्रावेवं सर्वत्र युज्यते ।।२४।।

लग्न का स्वामी यदि सहजेश का मित्र हो तो भाइयों के साथ मित्रता होती है। यदि लग्नेश शत्रु है तो शत्रुता जाननी चाहिये, उक्त विचार पित्रादि भावों के सन्दर्भ में भी करना चाहिये।।२४।।

सहजानां विषये लिङ्गनिर्धारणमाह

अयुग्मभांशे यदि कारकेशौ गुर्वर्कभूसूनुनिरीक्षितौ चेत् ।
ओजे ग्रहे स्युर्यदि विक्रमाख्ये पुंभ्रातरस्तस्य वदन्ति तज्ज्ञाः ।।२५।।

तृतीयाधिपति तथा सहजभावकारक गुरु, सूर्य, भौम से देखे जाते हुए विषम राशि में या तृतीय स्थान में स्थित हो तो सहोदर (पुरुष) होते हैं; अर्थात् भाइयों का जन्म दैवज्ञ को कहना चाहिए।।२५।।

युग्मांशके युग्मगृहे तदीशे भावे तथा कारकखेचरेन्द्रे ।
सहोदरीलाभमिहाहुरार्या नपुंसकांशे किल तत्तथैव ।।२६।।

तृतीय भावेश तथा उस भाव का कारक ग्रह समराशि, समनवांश, समभाव में हों तथा स्त्री ग्रह (चन्द्र, शुक्र) उन्हें देखें तो बहिन उत्पन्न होती है। तृतीयेश तथा तृतीय भाव का कारक ग्रह यदि नपुंसकांश में नपुंसक ग्रहों (बुध, शनि) से दृष्ट हो तो भाई नपुंसक उत्पन्न होगा ।।२६।।

सहोदराणां संख्यानिर्धारणमाह

भ्रातृराश्यंशकवशाद् भ्रातृसंख्या विनिर्दिशेत् ।
नाथकारकसंयुक्तराश्यंशाद्वा भवेत्तथा ।।२७।।

तृतीय भाव की राशि के अंशक के आधार पर सहोदरों की संख्या बतानी चाहिये अथवा तृतीयेश्वर तृतीय भावकारकयुक्त राशि अंशक के समान संख्या होती है।।२७।।

भ्रातृराशिसमायुक्तखेचरस्यांशकाद् वदेत् ।
सोत्थेशयुक्तराश्यंशात् कारकान्वितभावतः ।।२८।।

तृतीय स्थान में जो ग्रह स्थित हो, उसके अंशक से या तृतीयाधीश-युक्त राशि या कारक युक्त भाव से भी संख्या का निर्धारण होता है।।२८।।

तयोः संयुक्तखेटस्य राश्यंशाद्वा तथा भवेत् ।
एतयो रश्मिमानाद्वा पापयोगाद्विनाशनम् ।।२९।।

तृतीयाधिपति तृतीय भावकारक ग्रह के साथ जो ग्रह है, उसके अंशक के समान सहोत्थों की संख्या होती है। इनमें जो अधिक बलवान उत्तम अंशों पर हो, वह ग्रह फल देता है अथवा उन दोनों के रश्मिप्रमाण से फल प्रकट करना चाहिये। इसी प्रकार पापयुक्त कालांशों पर स्थित ग्रहों से सहोत्थों की हानि बतलानी चाहिये।।२९।।

संवादे विविधे प्राप्ते तत्कर्मबलतो भवेत् ।
कारकाद्विक्रमेशाद्वा विक्रान्तस्य विनिर्दिशेत् ।।३०।।

अनेक योगों के एक साथ उपस्थित होने पर बलकारक ग्रह से या तृतीयाधिपति से जो अधिक बलवान पारावतांशादि में हो, उस ग्रह के आधार पर सहोदरों की संख्या बतानी चाहिये।।३०।।

पराक्रमादिफलकथनम्

शौर्याधिपे तुङ्गयुते बलाढ्ये केन्द्रत्रिकोणे यदि सौम्यदृष्टे ।
मूलत्रिकोणे स्वगृहेष्टगेहे वैशेषिकांशे पुरुषः स धीरः ।।३१।।

यदि तृतीय भाव का स्वामी अर्थात् तृतीयेश उच्च राशि का बलवान होकर शुभग्रहों से वीक्षित होकर केन्द्र (१,४,७,१०भाव) अथवा त्रिकोण (लग्न, पञ्चम, नवम भाव) में स्थित हो अथवा यदि तृतीयेश अपनी मूलत्रिकोण में हो, स्वराशि में स्थित हो, मित्रराशि में हो, वैशेषिकांश में हो तो वह जातक धैर्यवान एवं विद्वान् होता है।।३१।।

धीरो भवेद्विक्रमराशिनाथे सौम्ये गृहांशे शुभखेटयुक्ते ।
तथैव तत्कारकखेचरेन्द्रे सौम्यग्रहाणां भवने तु शूरः ।।३२।।

यदि तृतीयेश शुभ ग्रह के नवांश में स्थित होकर शुभ ग्रह से युक्त हो तो वह व्यक्ति धीरज रखने वाला होता है। तृतीय भाव के कारक ग्रह भी इसी प्रकार शुभ ग्रह के नवांश में स्थित हों तो इस स्थिति में जन्म लेने वाला जातक पराक्रमी होता है।।३२।।

कलहप्रवीणयोगमाह

धैर्यान्वितो विक्रमराशिनाथसंयुक्तराश्यंशपतौ यदंशे ।
तदंशनाथे स्वगृहादिवर्गे युद्धे विदग्धः कलहप्रवीणः ।।३३।।

तृतीय भाव का स्वामी ग्रह जिस ग्रह के राश्यंश (नवांश) में है, यदि वह ग्रह स्वगृहादिवर्ग में स्थित हो तो जातक धैर्यवान्, युद्ध में प्रवीण तथा कलह करने एवं करवाने में प्रवीण होता है।।३३।।

विशेष— इस प्रकार का योग प्रायः उन लोगों की कुण्डलियों में प्राप्त होता है, जिसका कार्य लोगों को परस्पर लड़वाना अथवा एक-दूसरे के विरुद्ध उकसाना होता है।

ब्रिटेन के भू० पू० प्रधानमन्त्री श्री चर्चिल की कुण्डली में यह योग द्रष्टव्य है। इस योग में जन्म लेने वाले जातक षडयन्त्र रचने में भी कुशल होते हैं।

युद्धे पराजययोगमाह

विक्रमाधिपतौ स्वोच्चे नाशस्थे पापसंयुते ।
चरभे चरराश्यंशे युद्धात्पूर्वं दृढो भवेत् ।।३४।।

सहजेश अपनी उच्च राशि का होकर पापयुक्त हो अथवा त्रिक भाव (६,८,१२) में चरराशि (१,४,७,१० राशि) में हो तो व्यक्ति युद्ध के पूर्व भले ही बलवान प्रतीत हो, किन्तु युद्ध प्रारम्भ होने के पश्चात् कायर हो जाता है।।३४।।

पापग्रहाणां भवने विक्रमे पापसंयुते ।
तथाविधे तदीशेऽपि युद्धात्पूर्वं दृढो भवेत् ।।३५।।

तृतीय भाव में पापग्रह पापराशि में स्थित हो तथा तृतीयेश भी पापराशि में स्थित होकर पापग्रह के साथ बैठा हो, तब भी जातक युद्ध के पूर्व भले ही दृढ़ दिखे, लेकिन युद्ध के पश्चात् कायर हो जाता है॥३५॥

क्रूरषष्ट्यंशगे वापि तदीशे नीचराशिगे ।
पापयुक्तेऽथ वा दृष्टे युद्धजाड्यो भवेन्नरः ।।३६।।

तृतीयेश क्रूर षष्ट्यंश में अथवा नीच राशि में पापग्रह से युत हो अथवा पापग्रह के द्वारा देखा जाता हो तो इस योग में उत्पन्न जातक युद्धकर्म से अज्ञात होता है॥३६॥

युद्धे पराजितः स्वोच्चे विक्रमेशे विनाशभे ।
कारके बलहीने वा क्रूरषष्ट्यंशसंयुते ।।३७।।

तृतीयेश अपनी उच्च राशि का होकर द्वादश भाव में स्थित हो तथा तृतीय भाव का कारक ग्रह बलहीन होकर क्रूर षष्ट्यंश में स्थित हो तो युद्ध में उस व्यक्ति को पराजय का मुख देखना पड़ता है॥३७॥

विशेष— इन योगों को राष्ट्राध्यक्षों एवं सेनानायकों, सैनिकों आदि की कुण्डलियों में देखना चाहिये।

युद्धे प्रवीणाऽप्रवीणयोगमाह

सिंहासनांशे यदि विक्रमेशे पारावते गोपुरभागयुक्ते ।
मृद्वंशके वा शुभदृष्टियोगे चित्तोत्सवो युद्धविशारदः स्यात् ।।३८।।

यदि तृतीय भाव का स्वामी ग्रह सिंहासनांश, पारावतांश, गोपुरांशयुक्त अथवा मृद्वंशयुक्त हो तथा शुभग्रह से वीक्षित हो अथवा युत हो तो ऐसा जातक मानसिक रूप से प्रसन्न अर्थात् प्रसन्नचित्त तथा युद्ध में प्रवीण होता है॥३८॥

युद्धाभिलाषी समरप्रवीणो वीर्येश्वरे सौम्ययुते स्वतुङ्गे ।
वैशेषिकांशे बलपूर्णयुक्ते मृद्वंशगे वा विपरीतमन्यत् ।।३९।।

यदि तृतीयेश बुध के साथ उच्च राशि में स्थित हो, वैशेषिकांश में पूर्ण बलयुक्त हो अथवा मृद्वंशक में स्थित हो तो जातक युद्धाभिलाषी होता है। इसके साथ ही जातक को युद्ध में कुशलता भी प्राप्त होती है। यदि विपरीत स्थान में तृतीयेश ग्रह स्थित हो तो फलों में भी वैपरीत्य होता है॥३९॥

चतुर्थेशेन ग्रहयुतिफलमाह

शौर्याधिपे भानुयुतेऽत्र धीरश्चन्द्रान्विते मानसधैर्ययुक्तः ।
कृष्णो जडो भौमयुते प्रकोपी सौम्यान्विते सात्त्विकबुद्धियुक्तः ।।४०।।
जीवान्विते धीरतया समेतः
सर्वार्थशास्त्रार्थविशारदः स्यात् ।

कामातुरस्त्वास्फुजिदन्विते स्यात्
तन्मूलकोपात् कलहप्रवीणः ।४१।।
जडो भवेद्वासरनाथपुत्र-
युक्ते फणीनामधिपेन युक्ते ।
बहिर्दृढो हृद्गतजाड्ययुक्तः
केत्वन्विते मान्दियुते तथैव ।।४२।।

अब इन तीन श्लोकों में ग्रन्थकार ने चतुर्थेश के साथ विभिन्न ग्रहों की युति का फल कहा है—

१. यदि चतुर्थेश सूर्य के साथ युति में हो तो जातक धीर होता है (क्योंकि सूर्य आत्मा का कारक है, उसकी चतुर्थेश से युति आत्मबल प्रदान करती है)।
२. यदि चतुर्थेश चन्द्रमा के साथ हो तो जातक मन से धैर्यशाली होता है। (चन्द्रमा मन का कारक है, जब चतुर्थेश की युति चन्द्र से होती है तो मन में स्थिरता रहती है, चञ्चलता नहीं होती)।
३. यदि चतुर्थेश मङ्गल के साथ हो तो जातक कृष्णमति (चालाक), क्रोधी तथा मूर्ख होता है।
४. चतुर्थेश के बुध के साथ होने पर जातक सात्त्विक बुद्धि वाला होता है।
५. गुरु से युक्त चतुर्थेश जातक को सम्पूर्ण शास्त्रों में विशारद बनाता है।
६. शुक्र से युत चतुर्थेश होने पर जातक अधिक कामुक होता है तथा कामाधिक्य के कारण वह खूब लड़ता-झगड़ता है। 'कामात्क्रोधाभिजायते' (गीता)।
७. शनि से युत चतुर्थेश जातक को मूर्ख बनाता है।
८. जब चतुर्थेश राहु से युति करता है, तब जातक भीतर से जड़ तथा बाहर से दृढ़ होता है।
९. केतु से युक्त होने पर अथवा मान्दि (गुलिक) से युक्त चतुर्थेश का फल राहु के समान ही होता है।।४०-४२।।

चतुर्थेश की विभिन्न ग्रहों से युति का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	राहु केतु मांदि	चतुर्थेश से युति कारक ग्रह
आत्म-धैर्ययुक्त	मानस-धैर्ययुक्त	क्रोधी-जड़-कुटिल	सात्त्विक बुद्धि	सर्वशास्त्र-विशारद	अति कामुक	बाहर से दृढ़ किन्तु भीतर से जड़	युतिफल

विविधभीतियोगान् प्रमादयोगाश्चाह

लग्ने गुरौ विक्रमनाथयुक्ते चतुष्पदानां प्रवदन्ति भीतिम् ।
गवां भयं वा जलराशिलग्ने जलप्रमादो ब्रुवते ध्रुवं स्यात् ।।४३।।
वीर्याधिपे राहुसमेतराशीनाथान्विते राहुयुते विलग्ने ।
सर्पाद्भयं विक्रमराशिनाथे बुधेन युक्ते गलरोगमत्र ।।४४।।
नीचे तृतीयेऽरिगृहे विमूढे पापेक्षिते तद् गरलप्रमादः ।
विषप्रयोगाद्विषभक्षणाद्वा तेषामभावेऽत्र विनिश्चयार्थः ।।४५।।

इन तीन श्लोकों में विविध प्रकार की भीति वर्णित है—

चतुष्पदभीति— यदि लग्न में गुरु तृतीयेश के साथ बैठा हो तो चौपायों या गवादि पशुओं (गाय-बैल-भैंस-भैंसा) आदि से भय रहता है।

जलभीति— लग्न में जलराशि लग्न हो तथा उसमें जलीय ग्रह बैठे हों तो प्रमाद (असावधानी) के कारण जल से भय रहता है।

सर्पभीति— जब तृतीयेश राहु के साथ लग्न में हो अथवा राहु अधिष्ठित राशि स्वामी के साथ (कहीं भी) बैठा हो तो सर्प का भय होता है।

गलरोगभय— जब तृतीयेश बुध से युक्त होता है तो कण्ठ में रोग का भय होता है।

विषभय योग— यदि तीसरे भाव में बैठा हुआ कोई भी ग्रह नीच राशि में, शुत्रराशि में अस्तङ्गत या पापदृष्ट हो तो प्रमाद (असावधानी) के कारण विष का भय होता है (सर्प, विच्छू, रसायन, विषाक्त औषधि आदि से)। यदि उस ग्रह की स्थिति तृतीय भाव में इस प्रकार की स्थिति से विपरीत हो (उदित-उच्च राशि-मित्रराशि-स्वराशि या शुभ दृष्ट) हो तो विष का भय नहीं होता है।।४३-४५।।

विषप्रयोगयोग

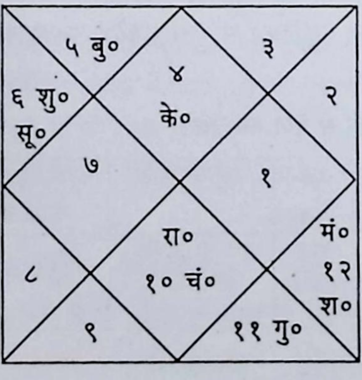

सर्पभययोग

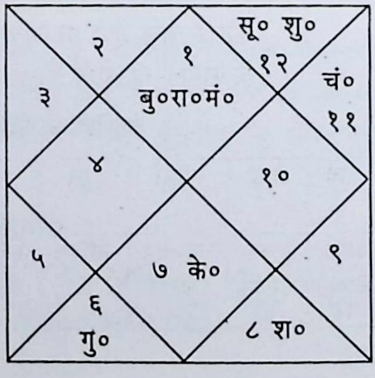

सुखभुक्तियोगः

शुक्रे बलाढ्ये यदि वा शशाङ्के सौम्येक्षिते शोभनखेटयुक्ते ।
सोत्थस्थिते स्वोच्चसुमित्रवर्गे सुपात्रभोक्ता सुखभुक्तिभाक्स्यात् ।।४६।।

तृतीय भाव में बलाढ्य शुक्र अथवा चन्द्रमा शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो अथवा उच्च राशि या मित्रवर्ग में हो तो इस योग में जन्म लेने वाले जातक उत्तम पात्रों में सुखपूर्वक भोजन करता है॥४६॥

विविधरोगाणां योगाः

पापे तृतीये गलरोगमत्र वदन्ति मान्द्यादियुते विशेषात् ।
भौमान्विते प्रेतपुरीषभागे तृतीयराशौ यदि कर्णरोगम् ।।४७।।

यदि तृतीय भाव में पापग्रह हो तथा मान्दि आदि (केतु-राहु आदि) से युत हो तो जातक को विशेष रूप से गलरोग (कण्ठरोग) होता है। यदि तृतीयेश मङ्गल के साथ प्रेतपुरीष नामक षष्ट्यंश में होकर तृतीय में हो तो कर्णरोग होता है॥४७॥

सोत्थे शनौ मान्दियुते तथैव वाताद्भयं सौम्यदृशा विहीने ।
तृतीयनाथस्थितराशिनाथसंयुक्तराश्यंशपतौ च केन्द्रे ।।४८।।
पापान्विते पापनिरीक्षिते वा वदन्ति कर्णोद्भवरोगमत्र ।
क्रूरादिषष्ट्यंशयुते तदीशे कर्णस्य रोगं कथयन्ति तज्ज्ञाः ।।४९।।

यदि तृतीय भाव में शनि मान्दि से युत तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तो जातक को वातरोग से भय होता है। यदि तृतीयेश जिस (नवांश) में है, वह ग्रह केन्द्र में बैठा हो और पापग्रह से युत अथवा दृष्ट हो तब कर्णरोग होता है। यदि तृतीयेश क्रूर षष्ट्यंश में हो तो भी कर्णरोग होता है॥४८-४९॥

कर्णाभूषणकथनम्

सौम्ययुक्ते तृतीये वा सौम्यखेचरवीक्षिते ।
तदीशे शुभसंयुक्ते कर्णयोर्भूषणं वदेत् ।।५०।।

तृतीय भाव में सौम्य ग्रह हों अथवा तृतीय भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो अथवा तृतीयेश शुभ ग्रहों से युक्त हो तो जातक के कानों में आभूषण होते हैं॥५०॥

शुक्रे तृतीये यदि मौक्तिकं तु जैवेऽतुलं त्वाभरणं वदन्ति ।
भानोस्तु सम्बन्धयुते तृतीये सद्रत्नमानीलमयं हि मान्द्ये ।।५१।।

यदि तीसरे भाव में शुक्र हो तो मोती के आभूषण होते हैं। तृतीय भाव में गुरु के होने पर कानों में अनुपम आभूषण होते हैं। यदि तृतीय में सूर्य हो अथवा तृतीयेश सूर्य के साथ हो तो उत्तम रत्नों (माणिक्यादि) के आभूषण तथा तृतीय में शनि के स्थित होने से नीलम के आभूषण होते हैं॥५१॥

चन्द्रे बहुत्वाभरणं तु सौम्ये श्यामं भवेत्तत्क्षितिसूनुराशौ ।
विचित्रमार्गाभरणं तथैव पापेक्षिते तल्लयमाहुरार्याः ।।५२।।

तृतीय भाव में चन्द्रमा के होने पर बहुत से आभूषण होते हैं। तृतीय में बुध के होने पर पन्ना के तथा मङ्गल के होने पर मूँगे आदि के या विचित्र मार्ग वाले (नई डिजाइन वाले) आभूषण होते हैं। परन्तु तृतीय भाव पर पापग्रहों की दृष्टि होने पर आचार्य इस फल का नाश कहते हैं।।५२।।

विशेष— आजकल पुरुषों में कर्णाभूषणों का प्रयोग कम होने लगा है; अत: महिला जातकों में इन योगों का विचार करना चाहिये।

सदसत्कर्णरुचिमाह

शुभग्रहाणां भवने तु तस्मिन् तृतीयराशौ श्रवणं कथानाम् ।
पुण्यादिकानां यदि पापराशौ क्रूरश्च तत्कर्णकुठारमाहुः ।।५३।।

यदि तृतीय भाव में शुभग्रहों की राशि से अथवा तृतीय भाव शुभप्रभाव से युक्त हो तो उस जातक के कानों को अच्छी कथायें सुनने को मिलती हैं। परन्तु यदि तृतीय भाव में पापग्रह की राशि हो तथा पापप्रभावयुक्त हो तो जातक को असत्कथायें सुनने को मिलते हैं तथा पापग्रह कर्णकुठार होते हैं।।५३।।

विशेष— तात्पर्य यह है कि पापप्रभाव तथा शुभप्रभाव के अनुसार तृतीय भाव से जातक की रुचि का विचार भी हो जाता है कि उसे अच्छी चर्चा में रुचि होती है या बुरी चर्चा में।

कर्णकुठार का अर्थ यह है कि पापप्रभावित तृतीय भाव अनेक कर्णरोगों को उत्पन्न करता है, जिनके कारण कान तथा उसके अवयवों को हानि पहुँचती है। श्रवण शक्ति नष्ट हो जाती है। कानों में अनेक बीमारियाँ भी उत्पन्न होती हैं। इतना ही नहीं; उस जातक को अपनी आलोचना भी बहुत सुनने को मिलती है, जो कि असह्य होती है। अप्रिय वृत्तान्त भी सुनने को मिलते हैं। उसे ऐसे गीत एवं संवाद भी सुनने को मिलते हैं, जो कि उसे पसन्द नहीं होते, परन्तु वह उन्हें विवशतापूर्वक सुनने के लिये बाध्य होता है।

परन्तु इसके विपरीत शुभ प्रभावयुक्त तृतीय भाव वाले जातक को कर्णप्रिय मधुर वार्तायें श्रवण करने को मिलती रहती हैं। यही इस श्लोक का अभिप्राय है।

सुवार्ताश्रवणयोग

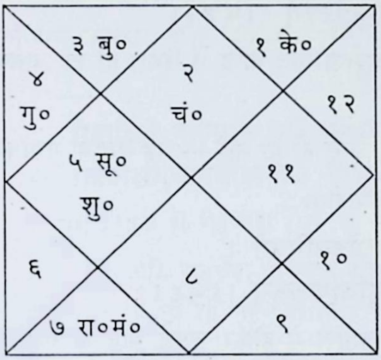
३ बु०
१ के०
४ गु०
२ चं०
१२
५ सू० शु०
११
६
८
१०
७ रा०मं०
९

कर्णकुठारयोग

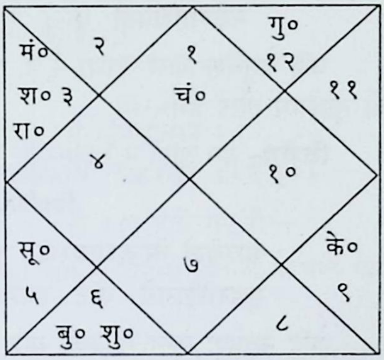
मं०
२
१ चं०
गु० १२
श० ३ रा०
११
४
१०
सू० ५
७
के० ९
६ बु० शु०
८

इति तृतीयभावफलम्

◆

अथ चतुर्थभावविचारः

तत्रादौ बन्धुभावाद्विचारणीयविषयानाह

बन्धुभवने बन्धून् गृहमातृजलात्मवृद्धिभोज्यादीन् ।
वाहनहृदयस्कन्धासनशयनसुखान्यधो जलं ब्रूयात् ।।५४।।

चतुर्थ भाव को बन्धुभाव कहते हैं। इससे बन्धु, भवन, माता, जल, स्वयं की उन्नति, भोज्य पदार्थ, वाहन, हृदयस्थान, स्कन्ध (कन्धे), आसन, शयन, सुख, पाताल, कूप (जलाशय आदि) का विचार करना चाहिये।।५४।।

सामान्यगृहलाभयोगः

लग्नेश्वरे लग्नगते सुखाङ्गनाथेन युक्ते यदि गेहलाभः ।
अयत्नतः स्याच्छुभदृष्टियोगात् स्वोच्चे स्वमित्रे स्वगृहे बलाढ्ये ।।५५।।

लग्नेश यदि लग्न में चतुर्थेश के साथ हो तो जातक को गृहलाभ होता है। यदि इन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो या ये अपनी उच्च राशि, मित्रराशि, स्वराशि में बलवान हों तो विना प्रयास के ही धनलाभ होता है।।५५।।

गेहाधिपे केन्द्रगते बलाढ्ये सौम्येक्षिते मन्दिरलाभमाहुः ।
वैशेषिकांशे परमोच्चभागे गेहेश्वरे मन्दिरलाभमाहुः ।।५६।।

यदि चतुर्थेश बलवान होकर केन्द्र में बैठा हो तथा सौम्य ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक को भवन की प्राप्ति होती है। यदि ग्रहेश (चतुर्थेश) वैशेषिकांश में परमोच्चांशों का हो तो भी गृहलाभ होता है।।५६।।

गृहस्थानाधिपस्यांशनाथसंयुक्तराशिपः ।
तदंशाधिपतौ केन्द्रे गृहलाभमुदीरयेत् ।।५७।।

यदि चतुर्थेश जिस नवांश में है, वह नवांशेश यदि केन्द्र में स्थित हो तो जातक को गृहलाभ होता है।।५७।।

विशेष– इन योगों में सामान्यतः आवास प्राप्त हो या नहीं— यह बताया गया है।

चित्रविचित्रगृहप्राप्तियोगः

भाग्येशे केन्द्रभावस्थे गृहेशे स्वोच्चमित्रगे ।
गृहराशिगते खेटे स्वोच्चे बहुविचित्रकम् ।।५८।।

यदि नवमेश केन्द्र में उच्च राशि या मित्रराशि में होकर चतुर्थ भाव में चतुर्थेश के साथ बैठा हो और वह भी स्वराशि या उच्च राशि का हो तो चित्र-विचित्र (अनोखी डिजाइन वाला) घर प्राप्त होता है।।५८।।

हर्म्यप्राकारमण्डितगृहयोगः

तृतीये सौम्यसंयुक्ते गृहेशे स्वबलान्विते ।
तदीशे बलसम्पूर्णे हर्म्यप्राकारमण्डितम् ।।५९।।

यदि तृतीयेश शुभ ग्रह के साथ हो तथा चतुर्थेश बलवान हो एवं तृतीयेश भी उसी प्रकार बली हो तो उस जातक को हर्म्य (अट्टालिका = बहुमञ्जिला) तथा प्राकार (आहाता) से युक्त भवन प्राप्त होता है।।५९।।

सौधमण्डितगृहयोगः

सिंहासनांशके वापि गृहेशे गोपुरांशके ।
मृद्वंशादियुते वापि तद्गृहं सौधमण्डितम् ।।६०।।

यदि चतुर्थेश सिंहासनांश में अथवा गोपुरांश में हो अथवा मृद्वंश नामक षष्ट्यंश में हो तो भवन सौधमण्डित (प्लास्टरयुक्त तथा पुता हुआ) यानी पक्का होता है।।६०।।

दैविकगृहयोगः

पारावतांशके गेहनाथे गुर्विन्दुवीक्षिते ।
गोपुराद्यंशके वापि दैविकं हर्म्यमादिशेत् ।।६१।।

यदि चतुर्थेश पारावतांश या गोपुरांश में होकर चन्द्रमा तथा गुरु से दृष्ट हो तो दैविक गृह (देवताओं के निवासयुक्त या देवताओं-जैसा) की प्राप्ति होती है।।६१।।

विचित्रसौधप्राकारगृहमण्डितयोगः

कर्माधिपेन सहिते नाथे केन्द्रेऽर्कसूनुना ।
विचित्रसौधप्राकारमण्डितं गृहमादिशेत् ।।६२।।

यदि चतुर्थेश दशमेश तथा शनि के साथ केन्द्र में बैठा हो तो बहुमञ्जिला, विचित्र वर्ण एवं आकार वाला पक्का मकान प्राप्त होता है॥६२॥

गृहनाशयोगः

गेहाधिपे नाशगते यदि स्यात् पापेक्षिते तद्गृहनाशमत्र ।
गेहेशसंयुक्तनवांशनाथे नाशस्थिते स्यादपि गेहनाशः ।।६३।।

इस श्लोक में गेहनाश (घर के नष्ट होने के) दो योग दिये गए हैं—

१. यदि चतुर्थेश पापयुक्त होकर बारहवें भाव में, अष्टम भाव में या षष्ठ भाव में हो तो गृहनाश होता है।
२. यदि जिस नवांश में चतुर्थेश बैठा है, उसका स्वामी नाशस्थान (६-८-१२) में बैठा हो तो गेहनाश होता है॥६३॥

नाशस्थान— इस श्लोक में नाशस्थान शब्द का प्रयोग किया गया है, जिसका अर्थ छठा, आठवाँ तथा बारहवाँ स्थान होता है। इसकी पुष्टि जातकपारिजात (१२.१४१) के निम्न वचनों से भी होती है—

गृहेशे व्ययगे लग्नादन्यगेहोऽन्यदेशगः ।
रन्ध्रे गृहाद्यभावो वा षष्ठज्ञात्यादिसंग्रहः ॥

गृहनाश का अर्थ— गृहनाश का अर्थ है— स्वयं का मकान नष्ट हो जाना या छिन जाना। इसमें जातक को स्वयं का घर छोड़कर अन्य मित्रों, रिश्तेदारों आदि के घर में या किराये के मकान में रहना पड़ता है । उसे किराये का मकान भी सम्मानपूर्वक नहीं मिलता। जब चतुर्थेश व्यय में हो, तब जातक को अपने घर से दूर रहना पड़ता है। जब वह अष्टम में हो तो गृह का अभाव ही रहता है तथा छठे भाव में होने पर रिश्तेदारों के यहाँ रहना पड़ता है, यह श्री वैद्यनाथ दीक्षित का मत है।

बन्धुपूज्ययोगः

बन्धुस्थानस्थिते सौम्ये सौम्यग्रहनिरीक्षिते ।
तत्कारकबलाढ्ये वा बन्धुपूज्यो भवेन्नरः ।।६४।।

जब चतुर्थ भाव सौम्य ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो और चतुर्थ का कारक भी बलाढ्य हो तब ऐसे योग में जातक अपने बन्धु-बान्धवों से पूज्य होता है॥६४॥

बन्धुश्रेष्ठयोगः

बन्धुस्थानगते जीवे तदीशे शुभसंयुते ।
गुरुदृष्टिसमायुक्ते बन्धुश्रेष्ठो भवेन्नरः ।।६५।।

जब गुरु चतुर्थ भाव में हो, चतुर्थेश शुभ ग्रह से युक्त हो, गुरु से दृष्ट हो तो जातक अपने बन्धुओं में श्रेष्ठ होता है॥६५॥

बन्धूपकर्त्तायोगा:

बन्धूपकर्त्ता तन्नाथे केन्द्रे कोणेऽथ संयुते ।
वैशेषिकांशसंयुक्ते पापदृग्योगवर्जिते ।।६६।।

चतुर्थेश केन्द्र त्रिकोण में (यदि) शुभ ग्रहों से युक्त होकर वैशेषिकांश में पापग्रहों की दृष्टि युति से रहित होकर बैठा हो तो जातक अपने बन्धुओं का उपकार करने वाला होता है।।६६।।

बन्धूनामुपकारी स्याद्बन्धौ गुर्वच्छसोमजा: ।
तेषां गृहे वा तैर्दृष्टे मृद्वंशादिसमन्विते ।।६७।।

यदि चतुर्थ भाव में गुरु-शुक्र-बुध बैठे हों अथवा इन ग्रहों की राशि चतुर्थ में हो और उसका स्वामी चतुर्थ को देखता हो तथा ये ग्रह मृद्वंश (षष्टि अंश का भेद) में हों तो भी जातक बन्धुओं का उपकार करने वाला होता है।।६७।।

बन्धुभि: त्यक्तयोग:

बन्धुभिस्त्यक्तपुरुषस्तदीशे पापसंयुते ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि नीचारातिगृहेऽपि वा ।।६८।।

जब चतुर्थेश पापग्रहों से युक्त होकर क्रूर षष्ट्यंश में अथवा नीच राशि या शत्रुराशि में हो तो ऐसा जातक अपने बन्धुवर्गों से त्याग दिया जाता है।।६८।।

बन्धुवर्गे निन्दितयोग:

बहुपापसमायुक्ते बन्धौ नाथे तथैव हि ।
तत्कारके तथैवात्र बन्धूनां कुत्सितं वदेत् ।।६९।।

यदि चतुर्थ भाव में बहुत से पापग्रह बैठे हों तथा चतुर्थेश एवं चतुर्थ का कारक भी पापयुत-दृष्ट हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक अपने बन्धुओं में सम्मानित नहीं होता है; वह नीच, तुच्छ तथा कुत्सित समझा जाता है।।६९।।

बन्धूनां भयकर्मकृद्योग:

नाथकारकसंयुक्तनवांशेशांशनायक: ।
नीचराशिगतो मूढो बन्धूनां भयकर्मकृत् ।।७०।।

चतुर्थेश या चतुर्थ का कारक जिस नवांशक में बैठे हों, उसका स्वामी नीच राशिगत अस्त हो तो ऐसा जातक उन कार्यों को करता है, जिनके कारण उसके बन्धु-बान्धवों को भय उत्पन्न होता है।।७०।।

विशेष— इस योग में जन्म लेने वाले जातक या तो स्वयं अपने बन्धुजनों को त्रास देते हैं अथवा ऐसे आपराधिक कर्म करते हैं, जिसके कारण उनके बन्धुजनों को पुलिस प्रशासन से कष्ट प्राप्त होता है तथा बदनामी प्राप्त होती है।

बन्धूपभोगी योगः

बन्धूपभोगी केन्द्रस्थे तदीशे शुभवीक्षिते ।
गोपुराद्यंशके वापि मृद्वंशादि समन्विते ।।७१।।

यदि चतुर्थेश शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर गोपुरांशक का होकर अथवा मृद्वंश नामक षष्ट्यंश में होकर बैठा हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक अपने बन्धुवर्ग से सुख प्राप्त करता है।।७१।।

पुनश्च बन्धूपकर्तायोगः

धने लाभे त्रिकोणस्थे तन्नाथे शुभवीक्षिते ।
सौम्यग्रहाणामंशे वा बन्धूनामुपकारकृत् ।।७२।।

यदि चतुर्थेश द्वितीय भाव में, एकादश भाव में या त्रिकोण (५-९) में शुभदृष्ट होकर बैठा हो या शुभ ग्रहों के नवांश में हो तो जातक बन्धुओं का उपकार करने वाला होता है।।७२।।

बन्धुद्वेषीयोगः

बन्धुद्वेषी भवेन्नित्यं पापाक्रान्ते ग्रहे यदा ।
नीचास्तखेटसंयुक्ते शुभदृग्योगवर्जिते ।।७३।।

यदि चतुर्थेश पापग्रहों से पीड़ित हो या नीच राशिगत, शत्रुक्षेत्री, अस्तङ्गत ग्रहों से युत हो तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि-युति से रहित हो तो जातक अपने बन्धुजनों से द्वेष करता है (यहाँ बन्धुजनों का अर्थ जाति-बिरादरी से है)।।७३।।

पुनश्च बन्धुपूज्योगः

कस्मिंश्चित् खेचरेन्द्रे वा बन्धौ स्वोच्चे स्वमित्रभे ।
गुरुणा दृष्टिसम्पाते बन्धुपूज्यो भवेन्नरः ।।७४।।

यदि चतुर्थ भाव में कोई भी ग्रह स्वराशि, उच्च राशि या मित्रराशि का होकर तथा गुरु से दृष्ट होकर बैठा हो तो वह जातक बन्धुओं में पूज्य होता है।।७४।।

बहुस्थाने गृहयोगः

गृहस्थाने चरे लग्ने तदीशे चरराशिगे ।
तथैव तत्कारकेऽपि बहुस्थाने गृहं भवेत् ।।७५।।

यदि चतुर्थ भाव में चरराशि हो तथा चतुर्थेश एवं चतुर्थ का कारक (चन्द्र-बुध) भी चरराशि में हो तो ऐसा जातक एक स्थान पर नहीं रहता। उसके रहने का स्थान बदलता रहता है।।७५।।

स्थिरनिवासयोगः

स्थिरे गृहे स्थिरगृहं नाथकारकयोरपि ।
षष्ट्यंशे शुभभागे वा तदीशे स्थैर्यतां व्रजेत् ।।७६।।

चतुर्थ भाव में स्थिर राशि हो, चतुर्थेश तथा चतुर्थ का कारक स्थिर राशि में हो तो जातक एक ही घर में स्थिर रूप से रहता है। इसी प्रकार यदि चतुर्थेश शुभ षष्ट्यंश में हो तो भी जातक एक ही घर में स्थिर रहता है।।७६।।

विशेष— यात्रा प्रवास पर जाना एक अलग बात है, परन्तु ऐसा जातक स्थायी रूप से एक ही घर में रहता है।

नष्टगेहानां संख्यामाह

अर्थव्ययगृहेशैस्तैर्यावन्तः पापसंयुताः ।
तावद् गेहादिनाशः स्याच्छुभदृष्टा न दोषदाः ।।७७।।

चतुर्थेश एवं चतुर्थ का कारक धनेश, व्ययेश जितने पापग्रहों से युत-दृष्ट होंगे, उतनी ही संख्या में गृहों का नाश होता है। यदि चतुर्थेश तथा चतुर्थ कारक पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो गृहों का नाश नहीं होता है।।७७।।

विशेष— जातकपारिजात (१२.१४३) में इन ग्रहों को तृतीय, षष्ठ, अष्टम या द्वादश में होने पर यह फल कहा गया है—

षट्त्रिव्ययाष्टमोपेता व्ययवित्तगृहाधिपाः ।
यावत्पापसमोपेता तावद्गृहविनाशदाः ।।

समीचीनगेहानां संख्यामाह

अर्थव्ययगृहेशास्तु केन्द्रकोणादिसंयुताः ।
तावद् गेहालयं सर्वं शोभनं तत्र निर्दिशेत् ।।७८।।

धनेश, व्ययेश, चतुर्थेश में से जितनी संख्या के ग्रह केन्द्र तथा त्रिकोण में बैठते हैं, उतने घर अच्छी हालत में एवं शुभफलदायक होते हैं।।७८।।

विशेष— जातकपारिजात (१२.१४४) के अनुसार इन ग्रहों का बली होना भी आवश्यक है—

लग्नत्रिकोणकेन्द्रस्था यावद्बलसमन्विताः ।
तावत्संख्याकगेहानां सामीचीन्यं वदेद्बुधः ।।

पराशर इन ग्रहों की शुभ ग्रहों के साथ केन्द्र त्रिकोण में युति आवश्यक मानते हैं—

केन्द्रत्रिकोणे च शुभग्रहेण युते समीचीनगृहाभिलब्धिः ।।

बहुक्षेत्रयोगाः

गृहेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे गेहमागते ।
बलयुक्ते धरासूनौ बहुक्षेत्रं विनिर्दिशेत् ।।७९।।

यदि गृहेश (चतुर्थेश) दशम भाव में हो तथा दशमेश चतुर्थ में स्थित हो; साथ ही मङ्गल (कृषिकारक या भूमिकारक) बलवान हो तो जातक के पास खेती करने के लिये बड़ी संख्या में जमीन होती है।।७९।।

बलाढ्ये कर्मराशीशे बन्धुस्थानाधिपे तथा ।
तयोर्मैत्री यदा तस्य बहुक्षेत्रं विनिर्दिशेत् ।।८०।।

यदि चतुर्थेश तथा दशमेश दोनों ही बलवान तथा परस्पर मित्र हों तो जातक के पास बहुत-सी खेती होती है।।८०।।

क्षेत्रस्थाने शुभैर्युक्ते तदीशे शुभसंयुते ।
तत्कारके तथा प्राप्ते बहुक्षेत्रधनैर्युतः ।।८१।।

यदि चतुर्थ भाव में शुभ ग्रह हों तथा चतुर्थेश अति शुभ ग्रहों से युक्त हो, चतुर्थ का कारक भी शुभ ग्रहों से युत-दृष्ट हो, तब भी जातक बहुत-सी कृषि, भूमि तथा धन से सम्पन्न होता है।।८१।।

विशेष— जातकपारिजात में यह श्लोक निम्न प्रकार है—

क्षेत्रस्थाने शुभक्षेत्रे तदीशे शुभसंयुते ।
तत्कारके तथा प्राप्ते बहुक्षेत्रधनान्वितः ।।

क्षेत्राधिपे पञ्चमस्थे गोपुरांशादिसंयुते ।
मृद्वंशादिगते वापि बहुक्षेत्रसमन्वितः ।।८२।।

यदि चतुर्थेश पञ्चम भाव में गोपुरांशक में अथवा मृद्वंश (षष्ट्यंश) में स्थित हो तो जातक बहुत खेती वाला होता है।।८२।।

भ्रातृक्षेत्रयोगः

भ्रातृकारकसंयुक्ते भ्रातृनाथेन संयुते ।
क्षेत्रे तदीश्वरे वापि भ्रातृक्षेत्रं विनिर्दिशेत् ।।८३।।

चतुर्थ भाव में यदि भ्रातृकारक ग्रह (मङ्गल) बैठा हो अथवा तृतीयेश बैठा हो और चतुर्थेश भी उसी में हो तो जातक के भाई के पास खेती होती है।।८३।।

विशेष— खेती में भाई से सहयोग मिलता है— यह अर्थ भी यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

पुनश्च भ्रातृधनादियोगः

क्षेत्रेशसंयुक्तनवांशनाथे केन्द्रस्थिते मित्रनिरीक्षिते वा ।
भौमान्विते भौमदृशा समेते भ्रातुर्धनं क्षेत्रमुदाहरन्ति ।।८४।।

चतुर्थेशस्थित नवांश का स्वामी केन्द्र में स्थित होकर मित्र ग्रहों से वीक्षित अथवा भौम से युक्त या भौमदृष्ट हो तो भाई के पास धन तथा खेती होती है (भाई का सहयोग मिलता है)।।८४।।

स्वबलेन क्षेत्राप्तियोगः

लग्नेश्वरे क्षेत्रगते बलाढ्ये लग्ने बलिष्ठे यदि क्षेत्रनाथे ।
शुभग्रहैर्दृष्टसमागमे वा क्षेत्रं स्वकीयेन बलेन याति ।।८५।।

यदि लग्नेश चतुर्थ स्थान में बली होकर बैठा हो तथा लग्न में बलवान चतुर्थेश शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो स्वयं के बल से धन तथा क्षेत्र प्राप्त होता है।।८५।।

कलत्रात्क्षेत्रयोगमाह

कलत्रकारके क्षेत्रे तदीशे वा कलत्रगे ।
तदीशयोस्तथा मैत्र्यां कलत्रात्क्षेत्रमादिशेत् ।।८६।।

चतुर्थ भाव में स्त्रीकारक ग्रह (शुक्र) अथवा चतुर्थेश सप्तम भाव में (स्त्रीभाव में) बैठा हो तथा सप्तमेश चतुर्थेश में मित्रता हो तो जातक को स्त्री से कृषियोग्य भूमि की प्राप्ति होती है।।८६।।

विशेष— यह ससुराल से भूमि-प्राप्ति का योग है।

शत्रुतो क्षेत्राप्तियोगमाह

षष्ठेश्वरे क्षेत्रगते बलाढ्ये षष्ठस्थिते वा गृहभावनाथे ।
षष्ठेश्वरात्क्षेत्रगते बलाढ्ये शत्रोः सकाशात्स धरामुपैति ।।८७।।

यदि षष्ठेश बलवान होकर चतुर्थ में बैठा हो अथवा चतुर्थेश बली होकर छठे भाव में बैठा हो या चतुर्थेश षष्ठेश से अधिक बली होकर चतुर्थ में बैठा हो तो जातक को शत्रु से धरती की प्राप्ति होतीं है।।८७।।

विशेष— यह प्राप्ति मुकदमे में जीत या जोर-जबर्दस्ती में सफलता के कारण होती है।

पुनः बहुक्षेत्रयोगमाह

पारावतांशे स्वगृहे बलाढ्ये क्षेत्रेश्वरे चोपचयं गते वा ।
आरोहभागे शुभदृष्टियुक्ते क्षेत्रस्य बाहुल्यमुदाहरन्ति ।।८८।।

यदि चतुर्थेश पारावतांश में स्वराशिस्थ होकर बली हो तथा उपचय (३।६।१०।११)

स्थानों में हो एवं उच्चाभिलाषी होकर शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक के पास खेतों का बाहुल्य होता है॥८८॥

बह्वर्थरूपं गृहयोगमाह

धनेशलाभेशसमन्विते वा क्षेत्रे तदीशेऽप्यथ कारके वा ।
वैशेषिकांशे शुभदृष्टियुक्ते बह्वर्थरूपं गृहमाहुरार्याः ।।८९।।

यदि द्वितीयेश एकादशेश के साथ चतुर्थ भाव में हो अथवा चतुर्थेश या चतुर्थ का कारक वैशेषिकांश में शुभदृष्टि से युक्त हो तो जातक को सोना-चाँदी धन से सम्पन्न घटों की प्राप्ति होती है॥८९॥

विशेष— इस श्लोक का भाव यह भी है कि जातक के पास अधिक घर होते हैं, जो अर्थरूप (धनदायक) होते हैं। घरों से या भूखण्डों के किराये से होने वाली आमदनी भी धनरूप या अर्थरूप होती है।

कृषिनाशयोगमाह

क्षेत्रेश्वरे नीचगते विमूढे पापान्तरे पापनिरीक्षिते वा ।
पापग्रहक्षेत्रगतेऽरिगेहे क्षेत्रादिनाशं कथयन्ति तज्ज्ञाः ।।९०।।

यदि चतुर्थेश नीच राशिस्थ, अस्त, पापपीड़ित, पापनिरीक्षित या पापग्रह की राशि या शत्रुराशि में स्थित हो तो इन स्थितियों में क्षेत्रादि (धन-खेती-भवन आदि) का नाश ज्योतिषी लोग कहते हैं॥९०॥

पुनश्च कृषिनाशयोगमाह

पापान्तरस्थे यदि भूमिपुत्रे पापान्विते पापनिरीक्षिते वा ।
पापग्रहक्षेत्रगतेऽथ वा स्यात् क्रूरांशके भूमिविनाशमाहुः ।।९१।।

यदि मङ्गल पापग्रहों के मध्य या पापग्रहों से युक्त या पापग्रहों से दृष्ट या पापग्रहों की राशि में हो अथवा क्रूर नवांश में हो तो भूमि का विनाश होता है॥९१॥

भौमेन भूमिविनाशयोगः

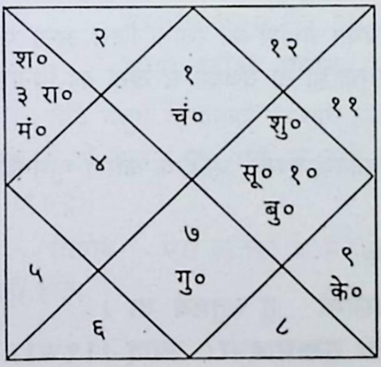

चतुर्थेशेन कृषिनाशयोगः

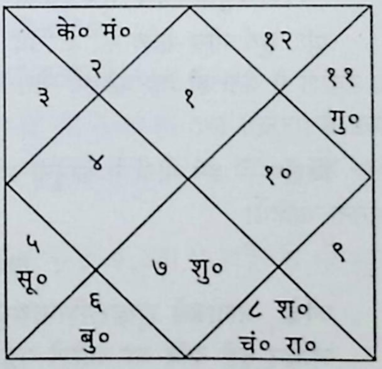

पुनरपि कृषिनाशकथनम्

क्रूरादिषष्ट्यंशगते तदीशे क्षेत्रे सपापे यदि नीचभे वा ।
दुःस्थेऽरिगेहे त्वतिभीषणांशे क्षेत्रादिनाशं कथयन्ति तज्ज्ञाः ।।९२।।

चतुर्थेश क्रूर षष्ट्यंशगत हो, चतुर्थ में पापग्रह हो अथवा चतुर्थेश दुःस्थान (६-८-१२) में, शत्रुराशि में या क्रूर नवांशक में हो तो उसके (ज्योतिषशास्त्र के) जानने वाले क्षेत्रादि की हानि कहते हैं।।९२।।

भूमिविक्रययोगः

क्षेत्रेश्वरे पापयुते धनस्थे नीचारिभे क्षेत्रविनाशमेति ।
स्वोच्चस्थिते तद्भवनेश्वरे तु पापान्विते विक्रयमेति भूमेः ।।९३।।

यदि धनभाव में नीच राशि का पापयुत चतुर्थेश बैठे, तब भूमि का नाश होता है, परन्तु चतुर्थेश उच्चराशि का होकर पापग्रहों से युक्त हो तो भूमि बिक जाती है।।९३।।

आज्ञाक्षयाद्भूमिविनाशयोगाः

आज्ञाक्षयात्क्षेत्रविनाशमाहुराज्येश्वरे क्षेत्रगते सपापे ।
क्रूरांशके मृत्युयमादिभागे कर्मेश्वरेणापि युते तथैव ।।९४।।

यदि दशमेश चतुर्थ भाव में पापग्रहों के साथ बैठा हो या क्रूर षष्ट्यंश में यमादि भाग में ही हो तो राजा की आज्ञा के उल्लङ्घन के कारण भूमि का विनाश होता है।।९४।।

आज्ञाक्षयाद्भूमिविनाशमेति राज्येशतत्कारकभूमिनाथे ।
क्रूरांशके वा त्ववरोहभागे नाशस्थिते मृत्युयमादिभागे ।।९५।।

यदि दशमेश, दशम का कारक (सूर्य), चतुर्थेश— ये तीनों क्रूरांशक (षष्ट्यंश) में होकर नीचाभिलाषी होकर ८-१२ भावों में मृत्यु यमादि षष्ट्यंशों में हों तो राजाज्ञा से भूमिनाश होता है।।९५।।

राजाज्ञया क्षेत्रविनाशमेति भानौ तदीशेन युतेऽपि निम्ने ।
धनेशसंयुक्तनवांशनाथयुक्तांशपेनापि युते सपापे ।।९६।।

यदि सूर्य नीच राशि का हो तथा धनेशस्थित नवांश का स्वामी जिस अन्य ग्रह के नवांश में बैठा हो वह ग्रह भी नीच या पापयुक्त हो तो राजाज्ञा से खेती का विनाश होता है ।।९६।।

विशेष— इन योगों में कानूनी सजा (वैधानिक दण्ड) आदि के कारण भूमिनाश जानना चाहिये।

मुख्यत्वयोगाः

जीवे बलाढ्ये सुखराशिनाथयुक्ते ससौम्ये तु चतुष्टये वा ।
जीवेन दृष्टे यदि वा तदीशे मृद्वंशके वा सुखभाङ्नरः स्यात् ।।९७।।

यदि बलवान गुरु चतुर्थेश तथा शुभ ग्रह के साथ हो अथवा केन्द्र में हो या फिर चतुर्थेश गुरु से दृष्ट हो या मृद्वंशक (षष्ट्यंश) में हो तो जातक सुखभोगी होता है।।९७।।

पुनश्च मुख्यत्वम्

जीवेन दृष्टे यदि वा तदीशे रम्ये गुरौ शोभनखेचरे वा ।
सौम्यान्तरे तद्भवने ससौम्ये सुखी भवेत् सर्वजनेषु मुख्यः ।।९८।।

चतुर्थेश यदि गुरु से दृष्ट हो अथवा बली गुरु अथवा अन्य शुभ ग्रह चतुर्थ में शुभ ग्रहों के मध्य में हो तो जातक लोगों में मुख्य होता है।।९८।।

पुनरपि मुख्यत्वम्

सुखे गुरौ शोभनखेचरे वा सौम्यान्तरे तद्भवने ससौम्ये ।
जीवे बलाढ्ये यदि लग्ननाथात् सुखी भवेत्सर्वजनेषु मुख्यः ।।९९।।

यदि चतुर्थ भाव में गुरु अथवा शुभ ग्रह हो अथवा चतुर्थ भाव शुभ ग्रहों के मध्य हो, चतुर्थ में सौम्य ग्रह हो अथवा गुरु लग्नेश की अपेक्षा अधिक बली हो तो जातक सुखी तथा श्रेष्ठ होता है।।९९।।

सुखयोगमाह

गोपुराद्यंशके वापि सुखपे देवपूजिते ।
धनायवृद्धिभावेषु तस्मिन् खेटे सुखी भवेत् ।।१००।।

जब चतुर्थेश होकर गुरु गोपुरांशक में होकर द्वितीय, एकादश तथा वृद्धि (चतुर्थ)— इन भावों में बैठा हो तो जातक सुखी होता है।।१००।।

दु:खयोगा:

सौम्येतरान्विते सौख्ये बलहीने गुरावपि ।
सपापे दुर्बले नाथे दुःखी स्यादर्थसंयुतः ।।१०१।।

यदि चतुर्थ भाव में सौम्येतर (पाप तथा क्रूर) ग्रह हों, गुरु निर्बल हो, चतुर्थेश पापग्रहों के सहित निर्बल हो तो जातक धनवान होते हुए भी दु:खी होता है।।१०१।।

पुत्रार्थबन्धुयुक्तश्चेद्दुःखी स्यान्नीचखेचरे ।
सुखी तदीशे पापेन युक्ते क्रूरांशसंयुते ।।१०२।।

यदि चतुर्थ में पापग्रह के साथ नीच का कोई ग्रह स्थित हो तथा सुखेश भी पापयुक्त हो तो जातक पुत्र, धन, बन्धुओं के सुख से सुखी होने पर भी सदा दु:खी रहता है।।१०२।।

विशेष— ऐसे जातकों के मन में विकलता रहती है तथा वे शरीर से भी सुखी नहीं होते।

रव्यारयुक्ते सुखभावनाथे क्रूरांशके सौम्यदृशा विहीने ।
आरोहभागेतरभागयुक्ते जातो नरो दुःखित एव नित्यम् ।।१०३।।

यदि सुखेश सूर्य एवं मङ्गल के साथ हो, क्रूरांशक (षष्ट्यंश या नवांश) में नीचाभिलाषी होकर शुभ ग्रहों की दृष्टि से रहित हो तो जातक नित्य ही दुःखी रहता है।।१०३।।

नीचारिभागे रविभूमिपुत्रे सुखस्थिते पापदृशा समेते ।
क्रूरांशके तद्भवनाधिनाथे गृहार्थहीनो भवति प्रमादात् ।।१०४।।

यदि चतुर्थ भाव में नीच राशि का सूर्य या मङ्गल पापग्रहों से दृष्ट होकर बैठा हो, चतुर्थेश क्रूरांशक में हो तो जातक स्वयं के प्रमाद से गृह तथा धन से हीन होता है।।१०४।।

पापकर्मायोगमाह

पापान्विते पापनिरीक्षिते वा पापान्तरे वा सुखभे तदीशे ।
क्रूरो हि षष्ट्यंशसमन्विते वा पापी नरः स्याच्छुभदृष्टियुक्ते ।।१०५।।

चतुर्थ भाव यदि पापग्रहों से युक्त हो या निरीक्षित हो या पापमध्य (पापकर्तरीयोग) हो तो मनुष्य पापकर्मा होता है अथवा उसका (चतुर्थ का) स्वामी क्रूर षष्ट्यंश-युक्त हो तो भी जातक पापी होता है।।१०५।।

पुनश्च पापकर्मायोगमाह

पापाधिकत्वे सुखराशियुक्ते तदीश्वरे चारिविमूढयाते ।
पापान्विते वा यमसूनुयुक्ते जातो बहुत्वं समुपैति पापम् ।।१०६।।

जब चतुर्थ भाव में पापग्रहों की अधिकता हो तथा चतुर्थेश शत्रुक्षेत्री या अस्त हो अथवा पापग्रहों से युक्त हो या शनियुक्त हो तो जातक अधिक पापी होता है।।१०६।।

विशेष— इस श्लोक में 'पापग्रहों अथवा शनि से युक्त हों' यह कहा गया है। इसका तात्पर्य है कि जितना दोष सूर्य, मङ्गल, राहु— इन तीन पापग्रहों के मिलने पर होता है, उतना दोष अकेले शनि के कारण होता है। पापी तथा पापकर्मा का अर्थ समाजविरोधी तथा न्यायविरोधी गतिविधियों में संलग्न रहना है।

भुक्तिभागी योगमाह

शुक्रेन्दुविद्देवपुरोहितानां क्षेत्रे सुखे पूर्णबलान्वितानाम् ।
शुभान्विते शोभनदृष्टिपाते जातो नरोऽयं भुवि भुक्तिभाक्स्यात् ।।१०७।।

जब चतुर्थ भाव में पूर्ण बली होकर शुक्र, चन्द्र, बुध, गुरु— इनमें से किसी की राशि हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि-युति हो तो ऐसा जातक इस पृथ्वी पर भुक्ति-भोगी होता है।।१०७।।

भुक्ति— इस श्लोक में 'भुक्ति' शब्द का प्रयोग हुआ है। भुक्ति का अर्थ— जागीर-मुआफी, सुख-सुविधा, करमुक्ति आदि होता है। शासन द्वारा मुफ्त में नाममात्र के शुल्क पर जो भूमि, भवन, सुरक्षा, विशेषाधिकार, विशेष थैली आदि किसी व्यक्ति को उपकृत करने के लिये दी जाती है, उसे भुक्ति कहते हैं। पेंशन भी एक प्रकार की भुक्ति ही है। यह किसी गुण या विशेषता के कारण दी जाती है।

पुण्यभागी योगमाह

बुधदृष्टे सिते सौख्ये सौम्यमध्यगतेऽपि वा ।
गोपुराद्यंशके वापि पुण्यभाक् सः नरो भवेत् ।।१०८।।

यदि चौथे भाव में बुध से दृष्ट शुक्र बैठा हो अथवा सौम्य ग्रहों के मध्य (शुभकर्तरी योग) बैठा हो या गोपुरांशक में हो तो वह व्यक्ति पुण्यशाली होता है।।१०८।।

कूपतटाम्बुराशौ पतनयोगः

नीचान्विते मौढ्ययुते सुखस्थे सपत्नभे वा जलराशिसंज्ञे ।
तदीश्वरे हीनबले तदानीं पतत्यसौ कूपतटाम्बुराशौ ।।१०९।।

यदि चतुर्थेश नीच राशि का अस्तङ्गत होकर या शत्रु राशि का होकर जलराशि में चतुर्थ भाव में बैठा हो तो ऐसा जातक कूप या तालाब की जलराशि में गिरता है (डूबता है)।।१०९।।

जलराशिमग्नयोगः

लग्नेश्वरे हीनबले सुखस्थे नीचेऽर्कयुक्ते यदि वा सपापे ।
जलग्रहेणापि युते सुखेशे बलेन हीने जलराशिमग्नः ।।११०।।

लग्नेश हीन बल होकर चौथे भाव में नीच राशि के सूर्य के साथ अथवा पापग्रहों के साथ बैठा हो तथा चतुर्थेश जलीय ग्रहों से युक्त होकर बलहीन हो तो जातक जल में डूबता है।।११०।।

तडागादिषु पतनयोगः

सरित्स्थानाधिपे लग्ननाथेन सहिते सुखे ।
कर्माधिपेन सन्दृष्टे नदीकूपतटादिषु ।।१११।।

यदि चतुर्थेश-लग्नेश की युति चतुर्थ स्थान में दशमेश से दृष्ट हो तो जातक का कूप, नदी तथा तालाब में पतन होता है (यहाँ कुछ टीकाकारों ने कूपादि के तट पर पतन कहा है, जो कि मेरे मत से समीचीन नहीं है)।।१११।।

पुनरपि कूपादिषु पतनयोगः

पतनं कूपनद्यादौ सुखेशस्थानराशिपः ।
सरित्स्थानेशसन्दृष्टे यदि वा सुखपेन युक् ।।११२।।

यदि सुखेश अधिष्ठित राशि का स्वामी सुखेश से दृष्ट हो या युत हो तो जातक कुआँ, नदी आदि में गिरता है।।११२।।

शिलाप्रहारयोगः

शिलाप्रहारस्तस्य स्याद् रविभौमान्विते सुखे ।
दृष्टे युगे कर्मपेन सरित्स्थानाधिपेन वा ।।११३।।

चतुर्थ भाव में सूर्य तथा मङ्गल दशमेश से युत अथवा दृष्ट हो अथवा चतुर्थेश से युत-दृष्ट हो तो जातक को शिलाप्रहार से चोट लगती है।।११३।।

पुनश्च शिलापीडनयोगः

सुखेशे राहुमन्दाभ्यां सहिते कुजवीक्षिते ।
शुभदृष्टिविहीने तु शिलाभिः पीडितो नरः ।।११४।।

यदि चतुर्थेश राहु तथा शनि के साथ (किसी स्थान में) भौम से दृष्ट तथा शुभ दृष्टि से वर्जित हो तो जातक पत्थरों से पीड़ित होता है।।११४।।

अगम्यागमनयोगानां कथनम्

केन्द्रस्थिते रात्रिकरे भृगौ वा पापान्विते पापनिरीक्षिते वा ।
क्रूरांशके वा त्ववरोहभागे सोऽयं जनन्या सह सङ्गमेति ।।११५।।

यदि चन्द्रमा या शुक्र पापयुक्त या दृष्ट होकर केन्द्र में बैठे हों तथा क्रूरांश में नीचाभिलाषी हो तो जातक मातृगामी होता है।।११५।।

पापेक्षिते पापयुते शशाङ्के दिवाकरे वा यदि केन्द्रराशौ ।
क्रूरे सुखे वा यदि पापदृष्टे जातो नरः स्यादिह मातृगामी ।।११६।।

चन्द्रमा पापदृष्ट हो, सूर्य केन्द्रस्थित हो, क्रूर ग्रह पापग्रहों से दृष्ट होकर चतुर्थ भाव में हों तो जातक मातृगामी होता है।।११६।।

पापेक्षिते वा सुखभावनाथे पापान्विते सौम्यदृशा विहीने ।
दारेश्वराल्लग्नपतौ विहीने जातो नरो मातृसमानगामी ।।११७।।

चतुर्थेश शुभ ग्रह की दृष्टि से रहित होकर पापयुत या पापदृष्ट हो तथा सप्तमेश हीन बली हो तो जातक मातृसमान स्त्रीगामी होता है।।११७।।

सहोदरी सङ्गममाहुरन्ये दारेश्वरे क्रूरयुते सुखस्थे ।
पापेक्षिते पापसमानमेव क्रूरादिषष्ट्यंशसमन्विते वा ।।११८।।

सप्तमेश पापयुक्त या दृष्ट होकर चतुर्थ भाव में हो अथवा क्रूर षष्ट्यंशयुक्त हो तो भी जातक मातृसमानगामी होता है। कई आचार्य इसका फल सहोदरी-गामी भी कहते हैं।।११८।।

सुखे शनौ पापनिरीक्षिते वा पापान्विते तादृशपापयुक्तः ।
पापग्रहाणां भवने सुखे तु क्रूरादिषष्ट्यंशयुते तथैव ।।११९।।

सुखभाव में शनि पापयुक्त या पापदृष्ट हो तथा चतुर्थ में पापराशि क्रूर षष्ट्यंशयुक्त हो, तब भी उपर्युक्त फल ही प्राप्त होता है॥११९॥

मातृचरित्रसूचकयोगानां कथनम्

षष्ठेशभूनन्दनसंयुतेऽब्जे सुखस्थिते पापनिरीक्षिते वा ।
चन्द्रांशसंयुक्तनवांशनाथे तथाविधे मातरि दोषमाहुः ।।१२०।।

यदि षष्ठेश, चन्द्रमा तथा मङ्गल— तीनों छठे भाव में हो अथवा चन्द्रमा पापदृष्ट हो तथा चन्द्रमास्थित नवांश का स्वामी भी इसी प्रकार की स्थिति में (पापदृष्ट या षष्ठेश एवं भौम के साथ) हो तो माता में वही दोष होता है (अर्थात् वह अगम्यगामिनी होती है)॥१२०॥

सुखेश्वरे राहुयुते सपापे शनैश्चरेणापि दिवाकरेण ।
मातान्यसक्ता सुखराशिनाथसंयुक्तभागाधिपतौ तथैव ।।१२१।।

यदि चतुर्थेश पापग्रहसहित होकर राहुयुक्त शनि एवं सूर्य से दृष्ट हो तो भी माता अगम्यगामिनी होती है॥१२१॥

सुखेश्वरे लग्नगते बलाढ्ये गुर्विन्दुसौम्यास्फुजिदर्कदृष्टे ।
वैशेषिकांशे शुभदृष्टियुक्ते पतिव्रता तस्य भवेत्सवित्री ।।१२२।।

यदि चतुर्थेश बलवान होकर लग्न में बैठा हो तथा उस पर गुरु, चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य में से किसी की दृष्टि हो तो अथवा वैशेषिकांश में होकर शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक की जननी पतिव्रता होती है॥१२२॥

तथाविधे शीतकरे सराहुकेतौ सवित्री यदि नीचसक्ता ।
मन्देन युक्ते सति शूद्रसक्ता वैश्येन सक्ता शशिसूनुयुक्ते ।।१२३।।
रव्यन्विते क्षत्रियजातिसक्ता शुक्रेज्ययुक्ते द्विजपुङ्गवेश्च ।
धरासुतेनापि तथाविधेन वक्तुं फलं तादृशमेव सत्यम् ।।१२४।।

इसी प्रकार यदि चन्द्रमा राहु, केतु के साथ चतुर्थ भाव में बैठे तो माता अन्य पुरुष में आसक्त होती है। यदि चन्द्र शनि से युत हो तो वह शूद्र में आसक्त होती है। बुध से युत होने पर वैश्य में आसक्त होती है, सूर्य से युक्त होने पर क्षत्रिय जाति के पुरुष में आसक्त होती है तथा यदि चन्द्र गुरु या शुक्र के साथ चतुर्थ में युत हो तो ब्राह्मण में आसक्त होती है। मङ्गल के साथ होने पर भी उसी प्रकार का फल (क्षत्रिय में आसक्ति) कहना चाहिये, यह फल सत्य है॥१२३-१२४॥

विशेष— इन श्लोकों के फल की पुष्टि श्रीवैद्यनाथ दीक्षित ने निम्न श्लोकों में की है—

सुखस्थे सारषष्ठेशे चन्द्रे माताऽन्यमैथुनी ।
व्यभिचारप्रदो मातुः सराहुर्दिननायकः ।।
शीतांशौ राहुकेतुभ्यां युक्ते नीचेन सङ्गमः ।
मन्दयुक्ते च शूद्रेण वैश्येन बुधयोगतः ।।
रवियुक्ते क्षत्रियेण मन्त्रिभ्यां द्विजसङ्गमः ।
एवं चन्द्रः कुजारीशयुक्तस्तत्फलदो भवेत् ।।

इसी प्रकार से सर्वार्थचिन्तामणि का श्लोक १२२ तो जातकरत्न में ज्यों का त्यों ही दिया गया है, अन्य श्लोक भी मिलते-जुलते ही हैं।

परजातादियोगानाह

षष्ठेश्वरेण सहिते सुखराशिनाथे
भाग्यस्थिते जनकमत्र विशं करोति ।
भाग्याधिपेन सहिते यदि मातृनाथे
सौख्यस्थिते जनकमत्र विशं करोति ।।१२५।।

यदि सुखराशि का स्वामी (चतुर्थेश) षष्ठेश के साथ भाग्य (नवम) भाव में स्थित हो तो जातक का पिता वैश्य होता है। इसी प्रकार यदि नवमेश चतुर्थेश के साथ चतुर्थ भाव में बैठा हो, तब भी जातक का पिता वैश्य होता है।।१२५।।

लग्नेशभाग्येशसुखेशयुक्ते षष्ठाधिपे स्यात्परजात एव ।
तदंशनाथेन युते तदीशे पापेक्षितः स्यात्परजात एव ।।१२६।।

यदि लग्नेश, नवमेश के साथ षष्ठेश की युति हो तो जातक अपने पिता के स्थान पर अन्य से उत्पन्न (परजात = जारज) होता है । यदि षष्ठेश जिसके नवांश में है, उसी ग्रह से युत होकर पापदृष्ट हो तब भी जातक परजात (दूसरे पिता से उत्पन्न) होता है।।१२६।।

पापान्तरे मातृगृहे तदीशे तत्कारके वा शुभदृष्टियुक्ते ।
लग्नेश्वराद् हीनबले शुभेशे जातस्तदानीं परजात एव ।।१२७।।

यदि चतुर्थ भाव पापकर्तरी योग में हो, चतुर्थेश या चतुर्थ का कारक (चन्द्र-बुध) शुभ ग्रह से दृष्ट-युत हो, चतुर्थेश लग्नेश की अपेक्षा हीन बली हो तो जातक परजात होता है।।१२७।।

न वीक्ष्यते तद्गुरुणा विलग्नं निशाकरो वा गुरुणा न दृष्टः ।
दिवाकरेणापि युते शशाङ्के सपापचन्द्रे रविणा तथैव ।।१२८।।

यदि लग्न पर गुरु की दृष्टि न हो अथवा चन्द्र पर गुरु की दृष्टि न हो अथवा चन्द्रमा सूर्य से युक्त या पापयुक्त हो तो भी जातक परजात होता है।।१२८।।

विशेष— प्रकृत श्लोक बृहज्जातक (५.६) तथा जातकपारिजात (३.५८) में निम्न रूप में पठित है—

न लग्नमिन्दुं च गुरुर्निरीक्षते न वा शशाङ्कं रविणा समागतम् ।
सपापकोऽर्केण युतोऽथ वा शशी परेण जातं प्रवदन्ति निश्चयात् ॥

बृहज्जातक में श्रीभट्टोत्पल ने जो संस्कृत टीका लिखी है, उसमें इस श्लोक का भाव यह है कि यदि लग्न या चन्द्र एक राशि या पृथक् राशियों में स्थित होकर गुरु के द्वारा दृष्ट न हों तथा गुरु के नवांश में भी न हों तो जातक परजात होता है। इसी प्रकार सूर्य से युक्त चन्द्रमा भी गुरु द्वारा दृष्ट न हो तब परजातयोग होता है।

बृहज्जातक के दूसरे टीकाकार श्रीरुद्रभट्ट कहते हैं कि सोच-विचार कर परजात कहना चाहिये, यानी कि यदि लग्न या चन्द्र जब गुरु की राशि द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश या त्रिंशांश में हो तब परजातयोग होता है। इस प्रकार यह अर्थ भट्टोत्पल से विपरीत है। रुद्रभट्ट ने इस योग में एक अन्य शर्त भी लगायी है। वह यह है कि चन्द्रमा की अंशात्मक युति मङ्गल या शनि से हो तथा वह सूर्य के साथ एक ही राशि में हो तो जारजात या परजात होता है!

मेरी सम्मति में श्रीभट्टोत्पल का मत ही समीचीन है; क्योंकि गुरु की दृष्टि या प्रभाव ही जारजयोग को समाप्त कर देते हैं।

पापे शुभे मातृगृहे सपापे लग्नेश्वरे हीनबले सपापे ।
परांशकादौ सुखभे तदानीं जातो नरः स्यात्परजात एव ।।१२९।।

यदि शुभ भाव (नवम भाव) में पापग्रह हों, चतुर्थ में भी पापग्रह हो, लग्नेश बलहीन तथा पापयुक्त होकर चतुर्थ भाव में, शत्रुनवांश में हो (या त्रिंशांश में हो) तो जातक परजात होता है॥१२९॥

विशेष— शम्भुहोराप्रकाश (५.१९-२०) में जारजातयोग के निम्न श्लोक दिये गये हैं—

न प्राग्विलग्नं च विधुं प्रपश्येज्जीवोऽर्कयुक्तं सितगुं च यद्वा ।
सार्के विधौ पापयुतेऽथवा चेत् स्याज्जारजातस्य तदा हि जन्म ॥
सुरेज्यदृष्टे तनुगेऽथवाब्जे देवेज्यवर्गोज्झित एष चन्द्रे ।
सपापकेऽर्केण युतेऽथ चन्द्रे स्याज्जारजातस्य तदा हि जन्म ॥
नीचोपगाः सूर्यसुरेज्यचन्द्राः कुर्वन्ति ते जन्मनि जारजातम् ।
यद्वा तनौ सूर्यसुतेन दृष्टाः शुभैश्च चन्द्रोदयभार्गवाख्याः ॥

इनमें अन्तिम श्लोक के अनुसार सूर्य तथा चन्द्र दोनों का एक साथ नीच राशियों (तुला तथा वृश्चिक) में होना जारजातयोग बनाता है। इसी प्रकार लग्न में शनि के होने पर यदि चन्द्र, लग्न तथा शुक्र शुभप्रभाव से रहित हों तो भी जारजात योग होता है। इस प्रकार यह संवेदनशील विषय है। इस विषय में दैवज्ञ को पर्याप्त समझदारी के साथ

उत्तर देना चाहिये। विना पूछे इन प्रश्नों का उत्तर भी नहीं देना चाहिये।

जनन्याः दीर्घायुष्ययोगानाह

मातृस्थाने शुभयुते कारके शुभसंयुते ।
सद्भावपे बलाढ्ये वा मातुरायुष्यमादिशेत् ।।१३०।।

यदि चतुर्थ भाव में शुभ ग्रह हो, चतुर्थ का कारक (चन्द्र) शुभयुक्त हो, सद्भाव नवम का स्वामी बलवान् हो तो माता दीर्घायु होती है।।१३०।।

चन्द्रे बलिष्ठे यदि वा भृगौ वा सौम्येक्षिते शोभनभागयुक्ते ।
चतुष्टये मातृगृहे शुभाग्रे मातुश्च दीर्घायुरुदाहरन्ति ।।१३१।।

यदि चन्द्रमा तथा शुक्र बलवान हों, शुभ अंशादि में हों, उन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो अथवा चतुर्थ से केन्द्र स्थानों में शुभग्रह स्थित हों तो माता दीर्घायु होती है।।१३१।।

विशेष— इस श्लोक में 'मातृगृहे शुभाग्रे' के स्थान पर 'मातृगृहाच्छुभाग्रे' पाठ भी मिलता है; परन्तु भावार्थ एक ही होता है। चन्द्र शुक्र का केन्द्र में स्थित होना माता के लिये शुभ होता है। यह श्लोक जातकपारिजात में निम्न रूप में लिखा है—

शुक्रे बलिष्ठे यदि वा शशाङ्के सौम्येक्षिते शोभनभागयुक्ते ।
चतुष्टये मातृगृहे बलाढ्ये मातुश्चिरायुष्यमुदाहरन्ति ॥

भावेशसंयुक्तनवांशनाथयुक्तांशपे केन्द्रयुते बलाढ्ये ।
तस्मिंच्छशाङ्काद्यदि केन्द्रयुक्ते मातुश्च दीर्घायुरुदाहरन्ति ।।१३२।।

यदि चतुर्थभाव का स्वामी जिस ग्रह के नवांश में है, वह नवांशेश जिस अन्य ग्रह के नवांश में है, वह नवांशेश यदि केन्द्र में बलवान हो तथा चन्द्रमा से भी वह ग्रह केन्द्र में हो तो भी माता दीर्घायु होती है।।१३२।।

विशेष— किसी भी भावेश के नवांशेश की शुभ स्थिति भी भाव को दृढ़ता प्रदान करती है।

मातृनाशकयोगानाह

पापान्तरे पापयुते शशाङ्के पापेक्षिते मातृगृहे विनाशः ।
शुक्रात्तथैवं प्रवदन्ति सन्तः तत्स्थानपाद्वा कथयन्ति शेषम् ।।१३३।।

यदि चन्द्रमा पापग्रहों के मध्य (पापकर्तरी में) या पापयुक्त-पापदृष्ट होकर चतुर्थ भाव में बैठा हो, शुक्र तथा चतुर्थेश भी इसी प्रकार की स्थिति में (पापकर्तरी, पापदृष्ट या पापयुत) हो तो भी माता का विनाश होता है।।१३३।।

विशेष— चन्द्रमा तो माता का कारक है ही, परन्तु चतुर्थ स्थान में चन्द्र तथा शुक्र भी दिग्बली होते हैं। इसलिये चन्द्र तथा शुक्र की शुभाशुभ स्थिति से माता के दीर्घायुष्य या अल्पायुष्य का कथन किया गया है।

निशाकरात्पापयुते स्मरे वा भृगोस्तथैवं जननीविनाशम् ।
सुखे शनौ मातृविनाशमेति पापेक्षिते चेदचिरेण नाशः ।।१३४।।

यदि चन्द्रमा से सप्तम भाव में पापग्रहों से युक्त शुक्र हो तो माता का विनाश होता है। यदि चतुर्थ में शनि पापग्रहों से युत या दृष्ट हो तो शीघ्र ही माता का नाश होता है।।१३४।।

शुभेक्षितश्चेच्चिरकालमृत्युमुदाहरन्त्यत्र महानुभावाः ।
पापग्रहाणां भवने शनौ तु पापान्विते मातृविनाशमेति ।।१३५।।

यदि चतुर्थ में स्थित शनि शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो माता की मृत्यु शीघ्र न होकर चिरकाल में होती है। यदि शनि पाप-प्रभाव में हो तो शीघ्र ही माता के लिये मारक होता है।।१३५।।

मातुः जीवनावधिज्ञानमाह

मातृस्थानाधिपस्यांशराशीशो यन्नवांशके ।
तदंशनाथकिरणान्मातृकालं विनिर्दिशेत् ।।१३६।।

मातृस्थान का स्वामी जिस नवांश में हो, उस नवांश का स्वामी जिस अन्य ग्रह के नवांशक में हो, उसकी राशियों के अनुसार माता की जीवनावधि कहनी चाहिए।।१३६।।

ग्रहरश्मियाँ— यहाँ पर चतुर्थेश के, नवांशेश के नवांशेश की रश्मियों के अनुसार माता की जीवनावधि का ज्ञान बताया गया है। ग्रहों की रश्मियों के विषय में ग्रन्थकारों में पर्याप्त मतान्तर है। यहाँ पर जातकपारिजात (५.२२) के अनुसार रश्मियाँ दी जा रही हैं—

दशगोशरबाणाद्रि वसुसायकरश्मयः ।
दिननायकमुख्येषु निजतुङ्गगतेषु च ॥

ग्रहों की उच्चरश्मि का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रहाः
१०	९	५	५	७	८	५	परमोच्च पर रश्मिसंख्या

कुण्डली के ग्रह की रश्मियों का ज्ञान— जिस ग्रह की रश्मियाँ निकालनी हो, उसके स्पष्ट राश्यंशादि में से उसके नीच राश्यंशादि को घटावें तथा जो राश्यादि बचें वे यदि छः राशि से अधिक हों तो उन्हें बारह राशि (राश्यादि ११।२९।५९।६०) में से घटा दे। इसे षड्भाल्प करना कहते हैं। यदि छः राशि से कम हो तो षड्भाल्प करने की आवश्यकता नहीं होती। अब इन घटे हुए राश्यादि को अभीष्ट ग्रह की रश्मिसंख्या से गुणा करें, गुणनफल में जो राश्यादि प्राप्त हों, उनमें छः का भाग देने से रश्मिसंख्या

प्राप्त होती है। ग्रह अपने परम नीच से जितना अधिक उच्च की ओर को होगा, उतनी ही अधिक रश्मिसंख्या प्राप्त होती है। यह अनुपात से द्वारा सरलता से जान सकते हैं। मान लीजिये कि सूर्यस्पष्टराश्यादि ३।१० हैं, तब यह अपने परम नीच से उच्च की ओर तीन राशि अधिक है तथा परमोच्च से तीन राशि नीचे की ओर है। अस्तु; यहाँ पर सूर्य की पूर्ण रश्मिसंख्या १० में से केवल पाँच ही प्राप्त होंगी।

अभिमुख रश्मि व पराङ्मुख रश्मि— जब ग्रह अपने परम नीच से उच्च की ओर बढ़ता है, तब उसे अभिमुख रश्मि कहते हैं; परन्तु जब ग्रह अपने परमोच्च से नीच के ओर जाता है, तब उसे पराङ्मुख रश्मि कहते हैं। उच्च तथा नीच के मध्य अनुपात से से रश्मिसंख्या जाननी चाहिये । सारावली के अनुसार—

अभिमुखरश्मिर्नीचाद्भ्रष्टः स्वोच्चाद् पराङ्मुखो ज्ञेयः ।
अन्तर्गतेऽनुपातो यथासम्भवं प्रवक्ष्यामि ।।
नीचविहीनश्चक्राच्छुद्धः षड्भवनतो यदाभ्यधिकः ।
आत्मीयरश्मिगुणितः षड्भक्ता रश्मयस्तस्मात् ।।

इस प्रकार रश्मियों का ज्ञान कर वक्री ग्रह होने पर दूना तथा अतिवक्र होने पर रश्मिसंख्या को तिगुना करना चाहिये।

परन्तु इस प्रकार से आयु आदि की विश्वसनीयता पर अभी वर्तमान ज्योतिषियों को पर्याप्त अनुसन्धान करके इसकी प्रामाणिकता का परीक्षण कर लेना अत्यावश्यक है।

नाथकारकराशीनां मध्ये यो बलवान् भवेत् ।
यावानंशस्तदंशे स्यान्मेषादौ तत्र मृत्युदः ।।१३७।।

चतुर्थेश (मातृस्थान का स्वामी), चतुर्थकारक तथा चतुर्थ की राशि— इन तीनों में जो अधिक बलवान हो, वह जितने अंशों (नवांशों) में हो, उस नवांशेश से मेषादि गणना से जितनी संख्या हो, उतने समय में माता की मृत्यु होती है।।१३७।।

वक्रे तु द्विगुणं प्रोक्तं त्रिगुणं त्वतिवक्रगे ।
चतुर्गुणं शुभैर्दृष्टे कालमेवं विनिर्दिशेत् ।।१३८।।

जो ग्रह वक्र हो, उसका समय दुगुना, अतिवक्र हो तो उसका समय तिगुना तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो चौगुना होता है।।१३८।।

विशेष— यह जीवनावधि वर्षों में होती है।

हृत्कापत्ययोगः

हृदये पापसंयुक्ते पापदृष्टे तदीश्वरे ।
पापान्तरे वा हृदये हृत्कापत्यं विनिर्दिशेत् ।।१३९।।

चतुर्थ भाव को हृदयस्थान भी कहते हैं, उसमें यदि पापग्रह बैठे हों या पापग्रहों

से दृष्ट हो, चतुर्थेश पापकर्तरी में हो तो इन दोनों स्थितियों में जातक का हृदय कपटी होता है॥१३९॥

विशेष— यदि दोनों स्थितियाँ एक-सी हों तो अतिमात्रा में कपटी होगा, ऐसा समझना चाहिये।

शन्याराराहुसंयुक्ते हृदये शुभवर्जिते।
तथैव तद्भावनाथे हृत्कापट्यं विनिर्दिशेत्॥१४०॥

यदि हृदयस्थान (चतुर्थ) में शनि, मङ्गल, राहु बैठे हों तथा शुभ ग्रहों की युति व दृष्टि से रहित हो अथवा उसी प्रकार की स्थिति चतुर्थेश की हो तो जातक के हृदय में कपटत्व होता है॥१४०॥

पापे कर्मेश्वरे सौख्ये कपटी पापवीक्षिते।
सपापे रन्ध्रपे सौख्ये कापट्यं पापसंयुते॥१४१॥

यदि दशमेश पापग्रह हो और वह चतुर्थ भाव में पापग्रहों से युत अथवा दृष्ट हो अथवा अष्टमेश पापयुत व दृष्ट होकर चतुर्थ में बैठा हो, तब भी जातक के हृदय में कपट होता है॥१४१॥

भानुना क्षीणचन्द्रेण सहिते हृदये यदा।
कपटी क्षणमात्रन्तु निष्कापट्यं तदूर्ध्वतः॥१४२॥

यदि अमावस्या के समीप का क्षीण चन्द्र चतुर्थ भाव में बैठा हो तो जातक क्षणमात्र के लिये कपटी और फिर बाद में निष्कपट होता है॥१४२॥

निष्कापट्ययोगानाह

हृदये शुभसंयुक्ते स्वोच्चमित्रगृहान्विते।
शुभग्रहाणां क्षेत्रे वा निष्कापट्यं विनिर्दिशेत्॥१४३॥

हृदयस्थान (चतुर्थ) में शुभ ग्रह, उच्च राशि या मित्रक्षेत्री हों अथवा शुभग्रह की राशि में हों तो जातक के हृदय में निष्कपटता रहती है॥१४३॥

विशुद्धहृदयः शान्तो हृदयेशे बलान्विते।
गोपुराद्यंशके वापि मृद्वंशादियुते तथा॥१४४॥

यदि चतुर्थेश बलवान हो, गोपुरांशादि में हो अथवा मृद्वंश (षष्ट्यंश का नाम) में हो तो जातक विशुद्ध हृदय वाला होता है॥१४४॥

लग्नेश्वरे हृद्गते वा शुभयुक्तेक्षितेऽपि वा।
पारावतादिभागस्थे निष्कापट्यं विनिर्दिशेत्॥१४५॥

यदि लग्नेश चतुर्थ भाव में शुभयुक्त वा दृष्ट हो अथवा पारावतादि भाग में हो तो जातक के हृदय में कपट नहीं होता है॥१४५॥

मिश्रितयोगाः

लग्ने गुरौ दानवपूजितेन युक्ते तदा तस्य विशुद्धचित्तम् ।
पापे सुखे तद्भवनाधिनाथे पापान्विते तस्य विरुद्धचित्तम् ।।१४६।।

यदि लग्न में गुरु शुक्र के साथ हो तो जातक विशुद्ध चित्त वाला होता है। यदि पापग्रह चतुर्थ में हों तथा चतुर्थेश पापयुत हो तो इसके विपरीत चित्त (कपटी चित्त) वाला होता है॥१४६॥

राहौ सुखे पापदृशा समेते बहिर्विशुद्धस्त्वति तत्र भाति ।
अन्तर्गतं तत्कपटं वदन्ति पापाधिकत्वे सुखराशियुक्ते ।।१४७।।

यदि चतुर्थ में राहु पापदृष्ट हो तो जातक बाहर से निष्कपट दिखता है, परन्तु भीतर से कपटी होता है। चतुर्थ में पापग्रहों की अधिकता होने पर जातक भीतर से कपटी होता है॥१४७॥

मातृस्नेहकथनम्

यदा लग्नसुखेशौ वा मित्रभूतौ परस्परम् ।
शुभेक्षितौ शुभैर्युक्तौ मातृस्नेहं विनिर्दिशेत् ।।१४८।।

जब लग्नेश चतुर्थेश मित्र हों तथा शुभ ग्रहों से युत-दृष्ट हों, तब जातक को माता का स्नेह प्राप्त होता है (यहाँ लग्नेश एवं चतुर्थेश दोनों को परस्पर मित्र होना कहा है)॥१४८॥

लग्नेश्वरेण सन्दृष्टे मातृनाथे चतुष्टये ।
शुभग्रहान्विते दृष्टे मातृस्नेहं विनिर्दिशेत् ।।१४९।।

यदि चतुर्थेश केन्द्र में लग्नेश से दृष्ट हो अथवा अन्य शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो भी जातक को माता का स्नेह प्राप्त होता है। यदि दोनों स्थितियाँ एक साथ हों तो अधिक स्नेह जानना चाहिये ॥१४९॥

मातृस्नेहन्यूनताकथनम्

शत्रुश्चेल्लग्ननाथस्य मातृलाभाधिपौ यदि ।
पापेक्षिते पापयुते तच्छत्रुत्वं विनिर्दिशेत् ।।१५०।।

यदि चतुर्थेश तथा लाभेश— ये दोनों लग्नेश के शत्रु हों तथा पापयुत-दृष्ट हों तो माता के साथ जातक की शत्रुता रहती है (उसे माता का स्नेह कम प्राप्त होता है)॥१५०॥

लग्नेशान्नाशराशिस्थे मातृस्थानाधिपे यदि ।
तथैव लग्नभावाद्वा तच्छत्रुत्वं विनिर्दिशेत् ।।१५१।।

यदि लग्नेश चतुर्थेश का षडष्टक या द्विर्द्वादश योग हो तो भी जातक की माता के साथ शत्रुता (स्नेह का अभाव) होती है।।१५१।।

वाहनयोगाः

वाहनेशे बलयुते वाहने शुभसंयुते ।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे वाहनादिफलम्भवेत् ।।१५२।।

चतुर्थ भाव से वाहन का भी विचार होता है। इसीलिये उसे वाहनस्थान भी कहा जाता है। यदि वाहनस्थान का स्वामी बलवान होकर शुभ ग्रहों से युत व दृष्ट हो तो वाहन का फल (प्राप्ति) होता है।।१५२।।

सुवर्णवस्त्राभरणादियानं शुक्राद्वदेत्तत्सुखराशितो वा ।
सेन्दौ चतुर्थाधिपतौ विलग्ने लग्नेश्वरेणापि युतेऽश्वलाभः ।।१५३।।

चतुर्थ राशि तथा शुक्र के बलाबल के अनुसार सुवर्णादि भूषण, वस्त्र, साज-सज्जा तथा वाहन का विचार करना चाहिये। यदि चतुर्थेश लग्न में लग्नेश के साथ बैठा हो तो अश्वलाभ होता है।।१५३।।

शुक्रेण युक्ते यदि वाहनेशे देहान्विते वा नरवाहनादि ।
देवेन्द्रपूज्येन युतेऽत्र लग्ने वदन्ति सन्तश्चतुरङ्गयानम् ।।१५४।।

यदि वाहनेश शुक्र के साथ लग्न में बैठा हो तो नरवाहनादि (पालकी इत्यादि) प्राप्त होते हैं। यदि लग्न में गुरु भी बैठा हो तो चतुरङ्ग यान (हाथी, घोड़ा, रथ, पालकी) अर्थात् चारो प्रकार की सवारियाँ प्राप्त होती हैं।।१५४।।

विशेष— आजकल इन वाहनों का प्रयोग समाप्त है; अत: नरयान का अर्थ चालकसहित वाहन समझना चाहिये। रथ का अर्थ बस आदि ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार चारो प्रकार या तीन प्रकार की सवारी में मोटरसाइकिल, स्कूटर, कार तथा विमान आदि को ग्रहण करना चाहिये तथा परिस्थिति को देखकर ज्योतिषी को फलकथन करना युक्ति-युक्त होगा।

चन्द्रामरेज्यामरशत्रुपूज्यैः युक्ते तनौ वा यदि वाहनेशे ।
प्रोक्तं त्रयं वाहनमाहुरार्या नीचारिमूढादिविहीनखेटैः ।।१५५।।

यदि चन्द्रमा गुरु-शुक्र से युक्त होकर लग्न में हो अथवा वाहनेश गुरु-शुक्र के साथ लग्न में नीच, शत्रु, अस्तादि दोषों से रहित होकर हो तो तीन प्रकार के वाहन प्राप्त होते हैं।।१५५।।

भाग्येशलग्नेशचतुर्थनाथाः कर्मस्थिता नीचविमूढहीनाः ।
कर्मेश्वरेणापि युते विलग्ने सिंहासनप्राप्तिमुदाहरन्ति ।।१५६।।

यदि दशम भाव में नवमेश, लग्नेश तथा चतुर्थेश नीचास्त दोषों से रहित होकर

बैठे हों अथवा यही तीनों ग्रह दशमेश के साथ दोषरहित होकर लग्न में बैठे हों तो जातक को सिंहासन (उच्च पद) की प्राप्ति होती है॥१५६॥

भाग्यस्थिते वाहनराशिनाथे सशुक्रजीवे सुखराशियुक्ते ।
भाग्याधिपे कोणचतुष्टये वा बह्वर्थदेशाभरणार्थयानम् ।।१५७।।

यदि चतुर्थेश नवम भाव में, गुरु-शुक्र चतुर्थ भाव में तथा भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में बैठा हो तो बहुत से देश-प्रदेशों में उत्पन्न वस्त्राभूषण तथा वाहन मिलते हैं (विदेशयात्रादि से भेंट आदि प्राप्त होती है)॥१५७॥

राजकीयसुविधाप्राप्तियोगानाह

भाग्याधिपेन सहिते यदि वाहनेशे जीवेक्षिते तनुगते बलपूर्णयुक्ते ।
स्वक्षेत्रतुङ्गसहिते यदि वा त्रिकोणे भूनाथमानववशाद्धनवाहनादि ।।१५८।।

यदि चतुर्थेश नवमेश से युक्त तथा गुरु से दृष्ट हो, पूर्ण बली या स्वोच्चादि का होकर त्रिकोणसंस्थित हो तो राज्यशासन से धन-वाहनादि की प्राप्ति होती है॥१५८॥

भाग्येश्वरेणापि युते सुखेशे यत्र स्थिते पश्यति वा निजर्क्षम् ।
वैशेषिकांशे यदि वा बलाढ्ये सर्वार्थभाग्यान्वितवाहनः स्यात् ।।१५९।।

यदि चतुर्थेश भाग्येश से युत होकर भाग्यस्थान को देखता हो तथा वैशेषिकांश में बलवान हो तो जातक को अनेक प्रकार के धन-वाहन-ऐश्वर्य के साधनों की प्राप्ति होती है॥१५९॥

दुःस्थे विमूढे यदि वाहनेशे भाग्येश्वरेणापि समीक्षिते वा ।
दुर्वाहिनी चञ्चलवाहिनी वा लाभाधिपेनापि समीक्षिते वा ।।१६०।।

यदि चतुर्थेश दुष्ट स्थान में, सूर्य सान्निध्य में अस्त हो, उस पर भाग्येश या लाभेश की दृष्टि होने पर दुष्ट सेना या गार्ड की प्राप्ति होती है॥१६०॥

विशेष— दुष्ट सेना से तात्पर्य लोगों को अकारण सताने वाले रक्षाव्यवस्था (पुलिस, गार्ड आदि) से है।

सौख्याधिपे शोभनखेचरेण भाग्येश्वरेणापि युतेऽथ वा स्यात् ।
सेनाबहुत्वं समुपैति जातो बहुत्वदेशाभरणानि यानम् ।।१६१।।

यदि चतुर्थ का स्वामी शुभ ग्रह तथा भाग्येश से युत हो तो जातक को बहुत सेना, बहुत देशों के आभरण, आभूषण तथा वाहनादि प्राप्त होते हैं॥१६१॥

भाग्येश्वराल्लाभगते विलग्ननाथे सुखेशे यदि भाग्यराशौ ।
सुखायभावे तनुनायके वा त्वसंख्ययानादियुतः प्रसिद्धः ।।१६२।।

यदि लग्नेश भाग्येश से ११वें भाव में (अर्थात् जहाँ भाग्येश बैठा हो, उस स्थान

में) तथा चतुर्थेश भाग्य भाव में बैठा हो अथवा लग्नेश चतुर्थ में या लाभ में बैठा हो तो जातक असंख्य वाहनों से युक्त तथा प्रसिद्ध होता है॥१६२॥

सुखेश्वरे केन्द्रगते तदीशे लग्नस्थिते वा बहुवाहनाढ्यः ।
कर्मेश्वरे लग्नगते तदीशे कर्मस्थिते वा बहुवाहनाढ्यः ।।१६३।।

यदि चतुर्थेश केन्द्र में हो तथा जिस राशि में सुखेश बैठा हो, उस राशि का स्वामी लग्न में बैठा हो तो जातक बहुत वाहन वाला होता है। इसी प्रकार दशमेश लग्न में तथा लग्नेश दशम में हो तो भी वह जातक अनेक वाहनों वाला होता है॥१६३॥

सिंहासनप्राप्तियोगानाह

सुखेश्वरे सौम्ययुते सुखस्थे शस्त्राश्वकोशाधिपतिर्भवेत्तु ।
क्षेत्रेश्वरे लाभगते बलाढ्ये बन्धौ भवे वा क्षितिसूनुयुक्ते ।।१६४।।

भूसूनुराशौ यदि वा सुखेशे राज्यार्थसौख्याभरणादियानम् ।
सौम्ये विलग्ने सबलं प्रयुक्ते धर्मान्विते शोभनखेचरेन्द्रे ।।१६५।।

स्वोच्चस्थिते वित्तपतौ च केन्द्रे सिंहासनप्राप्तिमुदाहरन्ति ।
सौम्येक्षिते धर्मगृहे तु केन्द्रे सवित्तपाः शोभनखेचरेन्द्राः ।।१६६।।

उच्चे ग्रहे वा धनराशियुक्ते सिंहासनप्राप्तिमुदाहरन्ति ।
केन्द्रे शुभाः पापखगास्त्रिषष्ठलाभस्थितास्तत्पदमाहुरार्याः ।।१६७।।

यदि चतुर्थेश चतुर्थ में शुभयुत-दृष्ट हो तो जातक को शस्त्र, अश्व और कोश की प्राप्ति होती है। यदि चतुर्थेश लाभ में बली हो अथवा चतुर्थेश लाभ भाव में भौमयुक्त हो अथवा चतुर्थेश भौम की राशि (१-८) में हो तो राज्य, धन, वस्त्राभूषण (सम्पन्नता) की प्राप्ति होती है। यदि लग्न तथा नवम में बली सौम्य ग्रह बैठे हों, धनेश उच्च का होकर केन्द्र में बैठा हो तो सिंहासन (उच्च पद) की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार यदि नवम भाव शुभग्रहों से दृष्ट हो, धनेश शुभग्रहों के साथ केन्द्र में बैठा हो अथवा उच्च राशि का ग्रह धनभाव में बैठा हो तो जातक को सिंहासन की प्राप्ति होती है। यदि केन्द्र में शुभ ग्रह हों तथा पापग्रह ३-६-११ भाव में हों तो भी जातकको सिंहासन (उच्च पद) की प्राप्ति होती है॥१६४-१६७॥

आत्मोन्नतियोगाः

गेहेशे व्ययराशिस्थे पित्राद्यन्यं विदेशगः ।
अष्टमस्थे गृहेशे वा स्वयं सम्पादयेद् गृहम् ।।१६८।।

यदि जातक की कुण्डली में चतुर्थेश द्वादश भाव में बैठा हो तो वह जातक पैतृक स्थान को छोड़कर विदेश (अन्य स्थान) में घर बनाता है। यदि अष्टम भाव में चतुर्थेश हो तो स्वयं ही अपने घर का निर्माण करता है॥१६८॥

विदेशे गृहयोगः

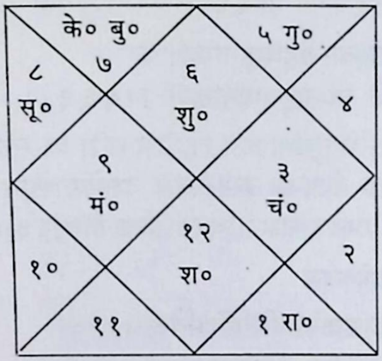
के० बु०
७
५ गु०
६
८
सू०
शु०
४
९
३
मं०
चं०
१२
१०
२
श०
११
१ रा०

विदेशे गृहयोगः

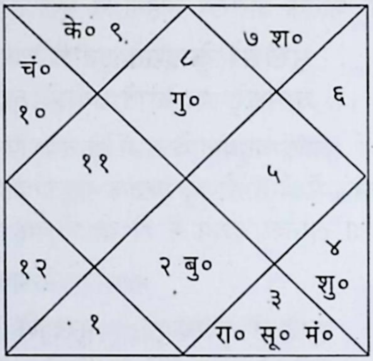
के० ९
८
७ श०
चं०
१०
गु०
६
११
५
४
१२
२ बु०
शु०
३
१
रा० सू० मं०

पुनश्च नानावाहनप्राप्तियोगानाह

धनेशे लग्नभावस्थे कर्मेशे धनमाश्रिते ।
वाहने स्वोच्चखेटस्थे वाहनाधिपतिर्भवेत् ।।१६९।।

यदि धनेश लग्न में तथा कर्मेश द्वितीय भाव में हो तथा चतुर्थ में उच्च राशि का ग्रह हो तो ऐसा जातक वाहनाधिपति होता है।।१६९।।

लग्नवाहनभाग्येशास्त्वन्योऽन्यं केन्द्रमाश्रिताः ।
लग्ननाथे बलाढ्ये वा वाहनाधिपतिर्भवेत् ।।१७०।।

यदि लग्नेश, चतुर्थेश तथा नवमेश परस्पर केन्द्र में बैठे हों, लग्नेश बली हो तो जातक वाहनाधिपति होता है।।१७०।।

गोपुराद्यंशके वापि वाहनेशे बलान्विते ।
लाभकर्मशुभाधीशैर्दृष्टे वाहनसंयुतः ।।१७१।।

यदि वाहनेश बली होकर गोपुरांशकादि में हो तथा लग्नेश, कर्मेश एवं धर्मस्थान के स्वामियों से दृष्ट हो तो जातक वाहनों से सम्पन्न होता है।।१७१।।

परमोच्चांशके युक्ते भाग्येशे केन्द्रमाश्रिते ।
ग्रहद्वये तुङ्गयुते बहुवाहनपुञ्जभाक् ।।१७२।।

यदि भाग्येश परमोच्चांशकों में होकर केन्द्र में बैठा हो तथा दो ग्रहोच्च राशि में हो तो जातक बहुत से वाहनों वाला होता है।।१७२।।

धनाधिपेन संयुक्ते व्ययेशे स्वोच्चराशिगे ।
भाग्याधिपेन सन्दृष्टे वाहनाधिपतिर्भवेत् ।।१७३।।

यदि व्ययेश उच्च राशि का होकर धनेश से युक्त होकर बैठा हो तथा भाग्येश से दृष्ट हो तो जातक वाहनों का अधिपति होता है।।१७३।।

विशेष— उपर्युक्त योगों वाला जातक किसी शासकीय विभाग या सेना में वाहनों का अधीक्षक होता है अथवा यातायात एवं परिवहन के सङ्घ, सङ्गठन या प्रतिष्ठान का अधिकारी, प्रबन्धक या निर्देशक होता है। रेल विभाग में स्टेशन मास्टरों, जोनल अधीक्षकों आदि की कुण्डलियों में इन योगों को देखना चाहिये।

इन योगों वाले जातक ट्रांसपोर्ट एवं ट्रेवलिङ्ग कम्पनियों का सञ्चालन करते हैं।

पुनश्च वाहनयोगानाह

कर्माधिपे चतुर्थस्थे लाभनाथेन संयुते ।
भाग्यनाथेन वा युक्ते बहुवाहनदेशभाक् ।।१७४।।

जब कर्मेश चतुर्थ भाव में लाभेश के साथ अथवा भाग्येश के साथ बैठा हो, तब जातक के पास बहुत से वाहन तथा देश होते हैं।।१७४।।

बहुवाहनयोगः (अ)

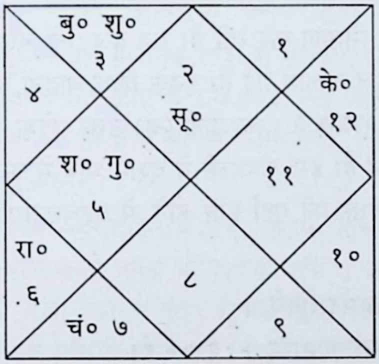
बु० शु०
३
१
२
४
के०
सू०
१२
श० गु०
११
५
रा०
१०
८
६
चं० ७
९

बहुवाहनयोगः (ब)

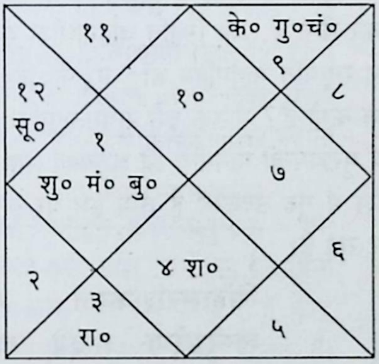
११
के० गु०चं०
९
१२
१०
८
सू०
१
शु० मं० बु०
७
४ श०
६
२
३
रा०
५

ऊपर दी गई वृष लग्न की कुण्डली में श्लोक संख्या १७४ (अ) के अनुसार कर्मेश शनि चतुर्थ भाव में लाभेश गुरु के साथ बैठकर बहुवाहन योग बना रहा है। दूसरी कुण्डली (ब) जो कि मकर लग्न की है, उसमें दशमेश शुक्र भाग्येश बुध के साथ 'बहुवाहन योग' निर्मित कर रहा है। यह कुण्डली जयपुर के एक सम्भ्रान्त होम्योपैथिक डॉक्टर की है।

उच्चाह्वये कर्मगते लग्नाथेन वीक्षिते ।
भाग्याधिपेन वा दृष्टे वाहनाधिपतिर्भवेत् ।।१७५।।

यदि दशम भाव में उच्च राशिस्थ ग्रह लग्नेश या भाग्येश से दृष्ट होकर बैठा हो, तब भी ऐसा जातक वाहनों का अधिपति होता है।।१७५।।

वाहनाधीशयोग: (अ)

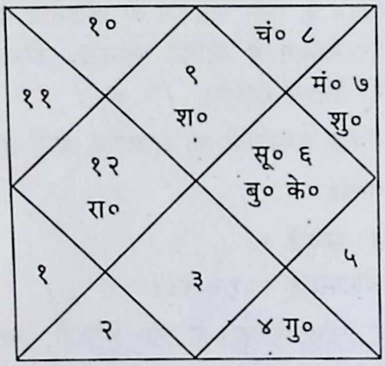

(भारतरत्न डॉ० अब्दुल कलाम)

वाहनाधीशयोग: (ब)

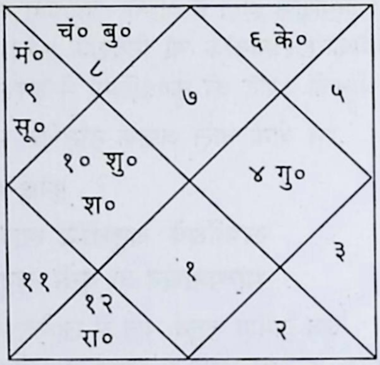

(पू० मु० मं० श्री कल्याण सिंह)

कुण्डली (अ) में दशम भाव में बुध उच्च राशिस्थ होकर भाग्येश सूर्य से युत होकर बैठा है, यह स्थिति वाहनाधीश योग का निर्माण कर रही है। यह कुण्डली भारत रत्न राष्ट्रपति महामहिम डॉ० ए०पी०जे० अब्दुल कलाम की है। इनके लिए वाहनों की क्या कमी है? पाठक इसे सुगमतापूर्वक समझ सकते हैं । कुण्डली (ब) उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमन्त्री माननीय श्री कल्याण सिंह जी की है। इस कुण्डली में दशम भाव में कर्क राशि में गुरु उच्चस्थ है तथा इस पर लग्नेश शुक्र की पूर्ण दृष्टि होने से बहुवाहनयोग बन रहा है।

सिंहासनांशकगते कर्मवाहनराशिपे ।
लग्नेश्वरेण सन्दृष्टे बहुवाहनदेशभाक् ।।१७६।।

यदि दशमेश तथा चतुर्थेश सिंहासनांशक में हों तथा उन पर लग्नेश की दृष्टि हो तो ऐसे जातक बहुत से वाहनों एवं देशों से युक्त होते हैं।।१७६।।

बहुवाहनदेशभाक्— इस पद का अर्थ 'बहुत से वाहन-देशों का भागीदार होना' है। इन योगों को बसमलिकों की कुण्डलियों में देखना चाहिये। उपर्युक्त योग जिन जातकों की कुण्डलियों में होते हैं, उन्हें अपने वाहनों के सञ्चालन के लिये अन्तर्राज्यीय अनुज्ञा-पत्र प्राप्त रहते हैं।

विभिन्न राज्यों में जो सरकारी परिवहन निगम कार्यरत हैं, उनके बड़े अधिकारियों की कुण्डलियों के अवलोकन से इन योगों की सत्यता प्रमाणित हो सकती है। इसी प्रकार से जो जलपोत चलाने वाली कम्पनियाँ अथवा विभिन्न देशों की निजी एवं सरकारी एयरलाइंस हैं, उनके कर्त्ता-धर्त्ता लोगों की कुण्डलियों में भी इस प्रकार के योग प्राप्त होंगे।

व्यक्तिगत रूप से विलासिता के लिये भी अनेक व्यक्ति अनेकों प्रकार के वाहन रखते हैं, उनकी कुण्डली में भी ये योग पाए जाते हैं।

पुनरपि वाहनाधीशयोगानाह

वाहनार्थतृतीयेषु भाग्यकर्मभवाधिपा: ।
स्थिता वात्यर्थमानादिसंयुक्ते निधने शुभे ।।१७७।।

यदि चतुर्थ, द्वितीय तथा तृतीय भाव में ९।१०।११ स्थानों के स्वामी बैठे हों तो ऐसी कुण्डली वाला जातक अत्यन्त सम्मान, धन आदि से युक्त होता है अथवा निर्धन (अष्टम भाव) में शुभग्रह बैठे हों तो यह योग होता है।।१७७।।

विशेष— अष्टम भावगड़े हुए धन, सट्टा, लॉटरी तथा रिश्वत आदि के धन का होता है; अत: शुभ ग्रहों की अष्टम में स्थिति धनप्रद मानी गयी है।

स्वोच्चे सुखेशे तन्नाथे केन्द्रकोणसमन्विते ।
वाहने तुङ्गसंयुक्ते व्यये शुद्धे त्रियानभाक् ।।१७८।।

चतुर्थेश अपनी उच्च राशि में हो अथवा चतुर्थेश का उच्चस्वामी (चतुर्थेश जिस राशि में उच्च का होता है उस राशि का स्वामी) केन्द्र या त्रिकोण में हो तथा चतुर्थ में उच्च का ग्रह हो तथा व्ययभाव ग्रहरहित (शुद्ध) हो तो जातक तीन वाहनों का स्वामी होता है।।१७८।।

विशेष— वर्तमान में ऐसे जातक को स्थलयान-जलयान तथा वायुयान— इन तीनों से यात्रा करने वाला भी बताना चाहिये। क्योंकि अब अधिकांश लोगों को इन तीनों प्रकार की यात्रा दिन-प्रतिदिन सुलभ होती जा रही है। लग्न एवं सप्तम ये दोनों केन्द्र पृथ्वी के पूर्व पश्चिमी छोरों का, चतुर्थ जलयात्रा का तथा दशम नभयात्रा का द्योतक है।

परमोच्चांशके शुक्रे कर्मेशे गृहसंयुते ।
सम्भवे तादृशे योगे वाद्यघोषादिभिर्युत: ।।१७९।।

शुक्र परमोच्चांश में तथा दशमेश स्वराशि में (अथवा चतुर्थ में) हो तो ऐसे योग में जातक वाद्यघोषादि युक्त वाहनों का स्वामी होता है।।१७९।।

वाद्यघोषादिभिर्युत:— इस वाक्य का अर्थ प्रकृत में केवल इतना ही लिया जा सकता है कि वह जातक वाद्यघोषादि से युक्त हो अथवा वाद्यघोषादि-युक्त वाहनों से समन्वित हो। मेरी दृष्टि में दोनों ही अर्थ समीचीन हैं। प्रथम अर्थ में उस जातक को सलामी (बैण्ड बाजे से) प्राप्त हो तथा दूसरे अर्थ में उसके वाहन पर साइरन लगा होना चाहिये; अत: लालबत्ती वाहन आदि का अर्थ भी इससे ग्रहण करना चाहिये।

शंखवादित्रघोषाद्यै: संयुक्ते भाग्यपे सुखे ।
केन्द्रोच्चकोणगे वापि कर्मेशे वाहनान्वित: ।।१८०।।

यदि नवमेश चतुर्थ में तथा कर्मेश केन्द्रकोण में उच्च राशि का हो तो जातक शंखवादित्र आदि घोषों से युक्त वाहनों वाला होता है॥१८०॥

पुनश्च शंखवादित्रयुक्तवाहनयोगाः

शनिना संयुते कर्मनाथे केन्द्रे शुभान्विते ।
लग्नेशे वृद्धिभं याते पणवादिरवैर्युतः ।।१८१।।

दशमेश शनि के साथ केन्द्र में शुभ ग्रह के साथ स्थित हो तथा लग्नेश उच्चाभिलाषी हो अथवा उदित हो अर्थात् लग्नेश अस्तङ्गत न हो तो जातक पणव (वाद्यविशेष) आदि के शब्द से युक्त वाहन का स्वामी होता है॥१८१॥

पणवादिरवैर्युतः— इस वाक्य से तात्पर्य अधुना युग में गाड़ियों में लगी रहने वाली सङ्गीत-संरचना, डेक, टी०वी०, सी०डी० प्लेयर इत्यादि से है।

कर्मभाग्यविलग्नेषु स्वोच्चे सौम्यग्रहाः स्थिताः ।
दृष्टेषु वा लग्नपेन यानान्ते दुःखमाप्नुयात् ।।१८२।।

नवम, दशम एवं लग्न में उच्च राशि के शुभ ग्रह स्थित हों तथा लग्नेश उन भावों (नवम, दशम तथा लग्न) को देखें, तो जातक वाहनाधीश तो होता है; किन्तु अन्त काल में वाहन के द्वारा ही उसे कष्ट की प्राप्ति होती है॥१८२॥

कर्मषट्सोदरसुखभाग्यलग्नव्ययेश्वराः ।
सुताधिपेन सहिता ह्यसंख्याढ्यात्मदेशिभाक् ।।१८३।।

दशम, षष्ठ, तृतीय, चतुर्थ, नवम, लग्न तथा व्यय— इन भावों के अधिपति पञ्चम भाव के स्वामी से युक्त हो तो जातक धनवान तथा अगणित वाहनों का उपभोग करने वाला होता है॥१८३॥

पुनरपि वाहनादिसौख्यमाह

सुखे शुभयुते नाथे केन्द्रकोणोच्चसंयुते ।
भाग्येशे परमोच्चांशे सुखयानादिलाभभाक् ।।१८४।।

सुखभाव शुभ ग्रह से युक्त हो, चतुर्थेश केन्द्र या त्रिकोण में उच्च राशि का होकर स्थित हो, नवमेश परमोच्चांश में हो तो जातक को सुख देने वाले वाहनों की प्राप्ति होती है॥१८४॥

मानेशे सुखराशिस्थे लाभे सौख्येशसंयुते ।
लग्ने शुभेन सन्दृष्टे बहुयानादिलाभभाक् ।।१८५।।

दशमेश और लाभेश सुखस्थान में हों तथा लग्न पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो जातक को बहुत प्रकार के वाहनों के द्वारा लाभ की प्राप्ति होती है॥१८५॥

मृदङ्गभेरीशंखादिकाहलादिरवैर्युतः ।
राजयोगे समुद्भूते कर्मपे सौख्यसंयुते ।।१८६।।

दशमेश चतुर्थ स्थान में हो तथा कुण्डली में राजयोग भी हो तो जातक को मृदंग, भेरी, काहल, शंखादि से युक्त वाहन की प्राप्ति होती है।।१८६।।

अध्यायोपसंहारः

बलाबलाच्छोभनदृष्टियोगात्प्रोक्तं तृतीयस्य फलं तु राशेः ।
चतुर्थराशेश्च फलं तथैव श्रीव्यङ्कटेशेन निरीक्ष्य सर्वम् ।।१८७।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ तृतीयचतुर्थभावफलविचारो
नाम चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।

अध्याय का उपसंहार करते हुए ग्रन्थकार कहते हैं कि मैं (व्यंकटेश) ने ग्रहभाव के बलाबल एवं शुभ ग्रह की दृष्टि एवं युति के अनुसार समस्त ग्रन्थों का अवलोकन कर तृतीय एवं चतुर्थ राशि के फलों को यहाँ कहा है ।।१८७।।

।। इस प्रकार 'सर्वार्थचिन्तामणि' ग्रन्थ की आचार्य पं० श्री गुरुप्रसाद गौड़रचित 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका में चतुर्थ अध्याय पूर्ण हुआ ।।

◆

अथ पञ्चमोऽध्यायः

पञ्चम-षष्ठभावफलविचाराध्यायः

तत्रादौ पञ्चमभावाद्विचारणीयविषयानाह

सुतभवनात् सुतबुद्धिमन्त्रिणामपि मन्त्रभोजनपितृभावान् ।
हृदयोदरप्रवेशं विवेकशक्तिञ्च निर्दिशेन्मतिमान् ।।१।।

पञ्चम भाव से पुत्र, बुद्धि, मन्त्रित्व (परामर्शदाता), मन्त्र (परामर्श), भोजन, पितृत्व (ज़ातक की प्रजनन क्षमतादि), हृदयोदरप्रवेश (मन की बात जानने की क्षमता तथा गर्भ की स्थिति का ज्ञान), विवेकशक्ति (ऊहापोह करने की क्षमता)— इन सबका विचार विद्वान् दैवज्ञ को करना चाहिये।।१।।

विशेष— पञ्चम भाव से अन्य भी बहुत से विचार किये जाते हैं। पाठकों की ज्ञानवृद्धि एवं सुविधा के लिये उत्तरक़ालामृत के अनुसार कारकत्व यहाँ दिया जा रहा है—

सन्तान, पिता के पुण्यकर्म, राजा, मन्त्री, सदाचार, शिल्प, मन, विद्या, गर्भ, छत्र, विवेक, धर्मकथा, कुशल समाचार, वस्त्र, नाना काम्य कर्मों के अनुष्ठान, पैतृक धन, दूरदर्शिता, स्त्रीसम्बन्धी वैभव, वाराङ्गनाओं की सङ्गति, गम्भीरता, दृढ़ता, गोपनीयता, नम्रता, वृत्तान्तलेखन (पत्रकारिता की क्षमता), क्षेम (साज सम्भाल या देखभाल), मैत्री, प्रबन्धकाव्य-रचना (निबन्ध, आलेख, कहानी आदि भी), कार्यारम्भ, उदर, मन्त्र-तन्त्र की उपासना, प्रसन्नतापूर्ण वैभव, अन्नदान, पाप-पुण्य की समझ, मन्त्रजप, समालोचना करने की प्रज्ञा, धनार्जन का ढङ्ग, मृदङ्गादि वाद्य, महान् सन्तुष्टि, पाण्डित्य (विद्वत्ता), परम्परागत मन्त्रिपद या परामर्शदाता का कार्य ये सभी पञ्चम भाव से विचारणीय विषय हैं—

सन्तानं पितृपुण्यराज्यसचिवा सौशील्यशिल्पे मनो
विद्यागर्भविवेकच्छत्रसुकथा माङ्गल्यपत्राम्बरे ।
नानाकाम्यमहाप्रयोगपितृवित्ते दूरचिन्ताक्रमात्,
कान्तामूलकलब्धभाग्यविभवो वाराङ्गनालिङ्गनम् ।।
गाम्भीर्यं घनता रहस्यविनया वृत्तान्तसंल्लेखनम्
क्षेमंस्नेहप्रबन्धकाव्यरचना कार्यप्रवेशोदराः ।
मन्त्रोपासनसुप्रसन्नविभवाश्चान्नप्रदानञ्च तत्
पुण्या सत्प्रविचारमन्त्रजपकाः प्रज्ञासमालोचने ।।

वित्तोपायमृदङ्गवाद्यसुमहत् सन्तोषपाण्डित्यकाः ।
पारम्पर्यसमागतं तु सचिवस्थानं भवेत्पञ्चमात् ।।

पुत्रादिविचारणा

नाथैः कलत्रात्मजधर्मभानां पुत्रादिचिन्तां कथयेत्सजीवैः ।
बुद्धिं तथा सोमसुतात्मजाभ्यां पितुस्तथैवात्मजभाग्यसूर्यैः ।।२।।

सप्तमेश, पञ्चमेश, नवमेश तथा गुरु से पुत्रादि का विचार करना चाहिये। बुद्धि का विचार बुध से तथा पञ्चम भाव से करना चाहिये। पिता का विचार नवम भाव, पञ्चम भाव तथा सूर्य से कना चाहिये।।२।।

विशेष— सप्तम भाव जातक की पत्नी तथा जातिका के पति का होता है; अतः विना जीवनसाथी के सन्तति की प्राप्ति सम्भव न होने के कारण सप्तमेश का विचार भी सन्तति के लिये करणीय है। नवमेश भाग्य तथा पूर्वजन्म के पुण्य का सूचक होता है। विना पूर्व-पुण्य के सन्तति प्राप्त नहीं होती; अतः नवमेश से भी विचार करना कहा गया है। इसी प्रकार गुरु के सन्तति का कारक होने से उससे भी विचार करते हैं। पञ्चम भाव के पिता का अष्टम (आयु) भाव होने से तथा नवम भाव के पिता का व्ययभाव होने से एवं सूर्य के पिता का कारक होने से इन तीनों का उपयोग भी पिता के विचार में किया जाता है।

विविधफलकथनम्

पितुर्धनं याति सुखे सभानौ पुत्रे शशाङ्के मरणञ्च मातुः ।
सुते शुभे शोभनदृष्टियोगे पुत्रं ददात्येव तदा तदीशे ।।३।।

यदि जातक की कुण्डली में चतुर्थ में सूर्य हो तो पिता का धन प्राप्त होता है। यदि पञ्चम भाव में चन्द्रमा हो तो माता का मरण होता है। यदि पञ्चम भाव में शुभ ग्रह हों एवं शुभ ग्रहों की दृष्टि हो, इसी प्रकार पञ्चमेश भी शुभयुक्त-दृष्ट हो तो पुत्र देता है।।३।।

पुत्रप्राप्तियोगाः

पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरौ वा शुभवीक्षिते ।
शुभेन सहिते वाऽपि पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।४।।

पुत्रभाव अथवा पुत्रेश अथवा गुरु (पुत्रकारक) यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट हों तथा शुभ ग्रहों से युक्त हों तो जातक को निःसन्देह पुत्र की प्राप्ति होती है।।४।।

लग्नेशे पुत्रभावस्थे पुत्रेशे बलसंयुते ।
परिपूर्णबले जीवे पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।५।।

यदि लग्नेश पञ्चम भाव में हो, पञ्चमेश बली हो तथा गुरु पूर्ण बली हो तो इस योग में निश्चित रूप से पुत्र की प्राप्ति होती है।।५।।

पुत्रस्थानाधिपे जीवे परिपूर्णबलान्विते ।
लग्नाधिपेन वा दृष्टे पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।६।।

पञ्चमेश होकर गुरु पूर्ण बली हो अथवा पञ्चमेश गुरु पर लग्नेश की दृष्टि हो तो असन्दिग्ध रूप से पुत्र की प्राप्ति होती है।।६।।

पुनश्च पुत्रप्राप्तियोगानाह

वैशेषिकांशके जीवे पुत्रेशेऽपि तथा स्थिते ।
शुभग्रहेण वा दृष्टे पुत्रप्राप्तिं समादिशेत् ।।७।।

गुरु वैशेषिकांश में हो तथा पञ्चमेश भी वैशेषिकांश में हो और ये दोनों शुभ ग्रहों से दृष्ट हों तो जातक को पुत्र की प्राप्ति कहनी चाहिये।।७।।

पुत्रस्थानगते वित्तनाथे पूर्णबलान्विते ।
दृष्टे देवेन्द्रगुरुणा पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।८।।

यदि पूर्ण बली होकर धनेश पञ्चम भाव में बैठा हो तथा गुरु से दृष्ट हो तो जातक को पुत्रप्राप्ति होने में संशय नहीं करना चाहिये।।८।।

लग्नपुत्राधिपौ युक्तावन्योऽन्यं वापि वीक्षितौ ।
क्षेत्रे परस्परस्थौ वा पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।९।।

यदि लग्नेश पञ्चमेश की युति या परस्पर दृष्टि से या दोनों में स्थानपरिवर्तन (व्यत्यय) हो तो जातक को पुत्रप्राप्ति सुनिश्चित है।।९।।

पुनरपि पुत्रप्राप्तियोगानां कथनम्

लग्नपुत्राधिपौ केन्द्रे शुभग्रहसमन्वितौ ।
कुटुम्बेशे बलाढ्ये तु पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।१०।।

यदि लग्नेश-पञ्चमेश केन्द्र में शुभ ग्रहों से युक्त हों तथा कुटुम्बेश (द्वितीयेश) बली हो तो जातक को निश्चित पुत्रप्राप्ति होती है।।१०।।

पुत्रस्थानाधिपस्यांशराशीशे शुभसंयुते ।
शुभेन वीक्षिते वाऽपि पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।११।।

पञ्चमेश जिस ग्रह के नवांश में हो, उसका स्वामी शुभ ग्रह से युत अथवा दृष्ट हो तो जातक को असन्दिग्ध रूप से पुत्र की प्राप्ति होती है।।११।।

लग्नेशे दारभावस्थे भाग्येशे दारसंयुते ।
द्वितीयेशे विलग्नस्थे पुत्रप्राप्तिर्न संशयः ।।१२।।

यदि लग्नेश सप्तम भाव में तथा भाग्येश भी उसी के साथ सप्तमस्थ हो एवं द्वितीयेश लग्न में हो तो निःसन्देह पुत्र होता है।।१२।।

दारेशग्रहसंयुक्तनवांशभवनाधिपे ।
भाग्यवित्तविलग्नेशैर्दृष्टे तत्प्राप्तिमादिशेत् ।।१३।।

सप्तमेश जिस ग्रह के नवांश में हो, उस नवांशेश को यदि नवमेश, द्वितीयेश तथा लग्नेश देखते हों तो भी सुनिश्चित रूप से पुत्र की प्राप्ति होती है।।१३।।

पुत्रहानिकरयोगाः

पापमध्ये तु यद्भावे तदीशेऽपि तथा स्थिते ।
कारके पापसंयुक्ते पुत्रनाशं वदेत्तदा ।।१४।।

जिस कुण्डली का पुत्रभाव तथा पुत्रेश पापग्रहों के मध्य हो, पुत्रकारक पापग्रहों से युक्त हो तो पुत्र का नाश कहना चाहिये।।१४।।

भाग्यपुत्रकलत्रेशसंयुक्तनवभागपाः ।
पापांशगाः पापयुताः पुत्रनाशं वदेत्तदा ।।१५।।

नवमेश, पञ्चमेश तथा सप्तमेशों के नवांशेश यदि पापग्रहों से युक्त या पापराशि के नवांशों में हों तो पुत्रनाश कहना चाहिये।।१५।।

क्रूरांशे पुत्रभावेशे नीचमूढसमन्विते ।
पापदृष्टेऽथ वा दुःस्थे पुत्रनाशं वदेत्तदा ।।१६।।

यदि पञ्चमेश क्रूर नवांशों में से किसी में नीच राशि, अस्तगत, पापयुत, पापदृष्ट हो अथवा ६-८-१२ भावों में हो तो पुत्र की हानि होती है।।१६।।

व्ययेशसंयुक्तांशेशत्र्यंशनाथसमन्विते ।
दृष्टे पुत्रेश्वरे तेन पुत्रार्तिं कथयन्ति हि ।।१७।।

व्ययेश का नवांशेश जिस ग्रह के द्रेष्काण में हो तथा पञ्चमेश उससे युत व दृष्ट हो तो पुत्र की हानि होती है।।१७।।

पुनश्च पुत्रपीडाकथनम्

पुत्रस्थानाधिपे दुःस्थे क्रूरषष्ट्यंशसंयुते ।
क्रूरग्रहेण वा दृष्टे पुत्रानाशं वदेत्तदा ।।१८।।

यदि पुत्रेश (पञ्चमेश) दुःस्थान (६-८-१२) में हो तथा क्रूर षष्ट्यंश से युक्त हो या फिर क्रूर ग्रह से दृष्ट हो तब ऐसे योग में पुत्रनाश कहना चाहिये।।१८।।

पुत्रप्राप्तिकरयोगाः

मृद्वंशादिसमायुक्ते पुत्रस्थानेश्वरे गृहे ।
गोपुराद्यंशके वाऽपि पुत्रसिद्धिर्न संशयः ।।१९।।

पञ्चमेश मृद्वंश नामक षष्ट्यंश से युक्त होकर या गोपुरांश में होकर स्वगृही हो तो निश्चित रूप से पुत्रप्राप्ति होती है॥१९॥

पुत्राधिपस्थांशपतौ विलग्ने लग्नेश्वरस्थांशपतौ सुतस्थे ।
गुरुस्थितांशाधिपतौ च केन्द्रे पुत्राप्तिमाहुर्मुनयो महान्तः ।।२०।।

पञ्चमेशस्थित नवांशेश लग्न में तथा लग्नेशस्थित नवांशेश पञ्चम भाव में हो; साथ ही गुरुस्थित नवांशेश केन्द्र में हो तो महान् मुनिजनों ने पुत्रप्राप्ति कही है॥२०॥

पारावतांशादियुते सुतेशे भाग्येश्वरे तादृशभावयुक्ते ।
लग्नेश्वरे शोभनदृष्टियुक्ते पुत्राप्तिमाहुर्मुनयो महान्तः ।।२१।।

पञ्चमेश तथा नवमेश दोनों ही पारावतांश में हों तथा लग्नेश पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो महान् मुनियों के अनुसार पुत्रप्राप्ति होती है॥२१॥

ज्यामितिक त्रिकोण

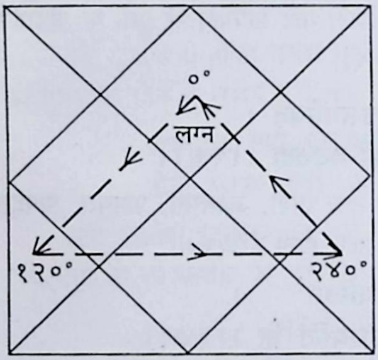

त्रिकालात्मक त्रिकोण

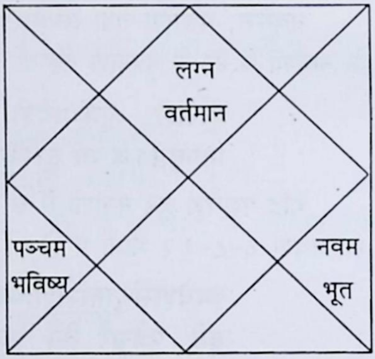

त्रिकोणों का महत्त्व— उपर्युक्त श्लोक २१ के अनुसार लग्न, पञ्चम तथा नवम के बलवान होने से पुत्रप्राप्ति कथित है, वह सर्वथा युक्तिसङ्गत है; क्योंकि प्रजनन एक अविच्छिन्न सतत् प्रक्रिया है, जो पीढ़ियों का निर्माण करती है। नवम भाव पञ्चम का पञ्चम होता है तथा जातक के पिछले जन्मों के सत्कर्मों (पुण्यों) का सूचक होता है। यह उसका भूतकाल होता है। किसी भी व्यक्ति का भूतकाल उसका पिता होता है। यही कारण है कि दक्षिण भारत के ज्योतिषी तथा दक्षिण भारतीय ज्योतिषग्रन्थ पिता का विचार नवम भाव से करते हैं। सिद्धान्ततः यह समीचीन भी है। लग्नस्थान उस व्यक्ति का वर्तमान काल होता है, अतः केवल लग्न से ही जातक के सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व को बताया जा सकता है। जातक स्वयं भी वर्तमान ही होता है। सन्तति ही किसी का भविष्य हुआ करती है, अतः सन्तति का विचार पञ्चम से होता है। परन्तु इन तीनों स्थानों का अविच्छिन्न सम्बन्ध ठीक वैसा ही है, जैसा कि तीनों कालों का। तीनों कालों को भी अलग-अलग केवल नाममात्र से माना गया है, वास्तव में तो तीनों एक ही हैं। वर्तमान का आधार भूतकाल होता है,

भविष्य का आधार वर्तमान होता है और भविष्य फिर भूत काल का आधार बन जाता है। जो अभी वर्तमान है, वह दूसरे ही क्षण भूत बन जाता है और भविष्य वर्तमान हो जाता है। इस प्रकार वास्तव में काल तो एक ही है।

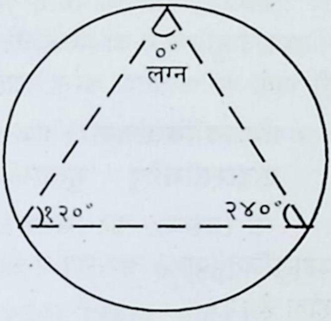

कालचक्र— काल वास्तव में चक्र की तरह घूमता है, कुण्डली के तीनों त्रिकोण अपनी अंशात्मक माप से उसे तीन भागों में बाँट देते हैं। एक वृत्त में तीन सौ साठ अंश होते हैं। उसमें एक सौ बीस अंशों के अन्तराल पर तीन त्रिकोणों का निर्माण होता है। यही कुण्डली के लग्न-पञ्चम तथा नवम स्थान हैं जो कि क्रमशः शून्य अंश, १२० अंश तथा दो सौ चालीस अंश पर होते हैं। भाव यद्यपि तीस अंश का विस्तार रखता है, परन्तु ये अंश उसके मध्यबिन्दु के सूचक होते हैं।

शुभस्थान— लग्न-पञ्चम-नवम— ये कुण्डली के परम शुभ स्थान माने गये हैं। इनकी शुभता सन्तति के सम्बन्ध में शुभ फल तो देती ही है; धन तथा बुद्धि के सम्बन्ध में भी शुभ फलप्रद होती है। इन तीनों की शुभता जातक की तीन पीढ़ियों (पिता-जातक-सन्तति) के लिये धनादि-प्रदायक होती है। मध्यपाराशरी (२.७, १.३, २.११) के अनुसार—

त्रिकोणस्थापि विख्यातास्त्रयो ज्योतिषवेदिभिः।
पञ्चमो नवमस्तत्र विशेषेण शुभप्रदौ॥
प्रथमं नवमञ्चैव धनमित्युच्यते बुधैः।
तपस्थानाधिपो मन्त्रे मन्त्रनाथोऽथ वा गुरौ।
उभावन्योऽन्यदृष्टौ वा चेज्जातः स्याद् बहुराज्यभाक्॥

त्रिकोण पर पापप्रभाव पुत्रसुख के अलावा धन तथा यश को भी नष्ट करता है।

व्यावहारिक अपवाद— पुत्रप्राप्ति के ये योग तभी विचार करने चाहिये, जबकि किसी जातक की पत्नी में निम्नाङ्कित आठ दोष न हों। यदि इनमें से कोई दोष विद्यमान हो तो ज्योतिषी का भविष्यकथन मिथ्या हो सकता है; जैसा कि श्री वैद्यनाथ दीक्षित (जा०पा०-१३.२३) का कथन है—

वन्ध्या वृद्धा कृशा बाला रोगिणी पुष्पवर्जिता।
कर्कशा स्थूलदेहाश्च नार्या अष्टौ विवर्जिता॥

वंशक्षयादियोगानां कथनम्

वंशक्षयादिसहिते यदि सत्यमेतच्छास्त्राधिपारगमना मुनयो वदन्ति ।
पुत्रादियोगमखिलं तदभावयोगं प्रोक्तं विलोक्य मनसा च वदेत्सुविद्वान् ।।२२।।

सर्वप्रथम दैवज्ञ के मन में यह श्रद्धा तथा विश्वास होना अति आवयक है कि शास्त्रों में पारङ्गत मुनियों ने जो वंशविच्छेदादि के योग वर्णित किये हैं, वे सत्य हैं। इसके पश्चात् ही भावों का फलादेश करना चाहिये।।२२।।

वंशस्य विच्छेदकरः प्रजातश्चन्द्रास्फुजित् पापखगाः क्रमेण ।
खंदारसौख्येषु युतास्तथैव लग्नेश्वरे चन्द्रसुतेन युक्ते ।।२३।।

खं (दशम), दार (सप्तम), सौख्य (चतुर्थ)— इन स्थानों में क्रम से चन्द्रमा, आस्फुजित् (शुक्र) तथा पापग्रह हों एवं लग्नेश बुध के साथ हो तो यह योग वंशविच्छेदक होता है।।२३।।

पापग्रहा रिष्फसुताष्टमस्था वंशविच्छेद करोऽर्थहीनः ।
निशाकरे लग्न गते सजीवे तत्सप्तमे भूमिसुते शनौ वा ।।२४।।

यदि पापग्रह, द्वादश, पञ्चम तथा अष्टम भावों में बैठे हों तो वंशविच्छेद तथा धनहीन बनाते हैं। इसी प्रकार यदि लग्न में चन्द्र-गुरु की युति हो तथा उनके सप्तम में मंगल एवं शनि की युति हो तो भी वंशक्षय होता है।।२४।।

पापग्रहा बन्धुगताश्च सर्वे वंशस्य विच्छेदकरोऽत्र जातः ।
लग्नान्त्यपुत्राष्टमराशियुक्तैः पापग्रहैर्वंशविनाशहेतुः ।।२५।।

यदि सभी पापग्रह चतुर्थ भाव में बैठे हों तो वंशविच्छेदकारक होते हैं। इसी प्रकार लग्न, द्वादश तथा पञ्चम के पापग्रह भी वंश-विनाश के हेतु होते हैं।।२५।।

विशेष— इस श्लोक में चौथे भाव के पापग्रह वंशविनाश के हेतु कहे गए हैं। इसका कारण यह है कि चतुर्थ भाव पञ्चम भाव का द्वादश (विनाशक = व्ययकारक) होता है। अत: जब सभी पापग्रह पञ्चम में होते हैं तो वंशविनाश (पञ्चम भाव का विनाश) होता है । अष्टम भाव माता के भाव से पञ्चम होता है तथा पितृभाव (नवम) का व्यय-स्थान होता है । जहाँ १-५-९ भाव रचनात्मक त्रिकोण हैं, वहीं १२-४-८— ये तीनों मिलकर विनाशात्मक त्रिकोण बनाते हैं।

शुभेतरा रन्ध्रविलग्नरिष्फे वंशस्य विच्छेदकरः सुतेऽब्जे ।
दारस्थिते सोमसुते सशुक्रे पापे सुखे देवगुरौ सुतस्थे ।।२६।।

आठवें लग्न तथा बारहवें भाव में पापग्रह हो एवं चन्द्रमा पञ्चम भाव में हो तो वंशविच्छेद होता है। इसी प्रकार सप्तम-भाव में बुध, शुक्र हो तथा सपाप गुरु पञ्चम में बैठा हो तो भी वही फल होता है।।२६।।

रन्ध्रे शशाङ्कात्सहिते तु पापैर्वंशस्य विच्छेदकरोऽत्र जातः ।
पापे विलग्ने सुखगे शशाङ्के लग्नेश्वरे पञ्चमराशियुक्ते ।।२७।।
बलैर्विहीने यदि पुत्रनाथे वंशस्य विच्छेदकरोऽत्र जातः ।

चन्द्रमा से अष्टम भाव में पापग्रह वंशविच्छेदक होते हैं। इसी प्रकार लग्न में पापग्रह, चतुर्थ में चन्द्रमा, लग्नेश का पञ्चम राशि में होना एवं बलहीन पञ्चमेश भी वंशविच्छेद का योग उत्पन्न करता है।

विशेष— चन्द्रमा भी लग्न होता है, अत: चन्द्रकुण्डली से भी सन्तति का विचार करना चाहिये।

पुत्रसुखहानिकराः योगाः

क्षीणे शशाङ्के तनुभावयुक्ते मूढान्विते मन्दगृहे सुरेज्ये ।।२८।।
त्रिकोणगैः पापखगैश्च सर्वैः प्रागेव पुत्रस्य सुखस्य नाशः ।
चन्द्रात्मजे पञ्चमराशियुक्ते लग्ने सुखे वा यदि पापयुक्ते ।।२९।।
शुभेतरैः पञ्चमभावयुक्तैर्न दृश्यते पुत्रसुखं हि तेन ।
जातो यदि स्यात् क्षितिसूनुलग्ने रन्ध्रे शनौ पञ्चमगे रवौ वा ।।३०।।
पुत्रादिलाभं मुनयो वदन्ति कालान्तरे शोभनदृष्टियोगात् ।
लग्ने शनौ देवगुरौ तु रन्ध्रे व्यये कुजे पुत्रजनिश्चिरेण ।।३१।।

यदि क्षीण चन्द्र लग्न में तथा गुरु अस्त होकर शनि की राशियों (मकर-कुम्भ) में बैठा हो एवं सभी पाप ग्रह त्रिकोण (१-५-९) में बैठे हों तो पूर्व से ही (विवाहित जीवन प्रारम्भ होने से ही) पुत्रसुख का अभाव रहता है। बुध पञ्चम, लग्न या चतुर्थ में से किसी भाव में बैठा हो तथा पापग्रहों के साथ हो अथवा पञ्चम भाव में शुभ ग्रहों को छोड़कर केवल पापग्रह बैठे हों तो ऐसा जातक पुत्र का सुख नहीं देखता। जिस जातक का जन्म मंगलयुक्त लग्न में हो, अष्टम में शनि तथा पञ्चम में सूर्य हों तो ऐसे योग में कालान्तर (कुछ समय पश्चात्) में पुत्रादि का लाभ होता है— ऐसा मुनियों का कथन है; लेकिन वह भी शुभ दृष्टि होने पर ही सम्भव होता है। इसी प्रकार लग्न में शनि, अष्टम में गुरु तथा व्ययभाव में मंगल होने पर भी चिरकाल में सन्तान की प्राप्त होती है।।२८-३१ ।।

बुद्धिप्रदान् योगानाह

बुद्धिस्थानाधिपे सौम्ये शुभदृष्टिसमन्विते ।
शुभग्रहाणां क्षेत्रे वा बुद्धिमान्नीतिमान् भवेत् ।।३२।।

पञ्चम भाव से बुद्धि का विचार होने से अब पञ्चमेश को बुद्धिनाथ या बुद्धीश्वर कहा जा रहा है। यदि बुद्धिनाथ शुभ ग्रहों की राशि में हो अथवा शुभदृष्ट हो तो जातक बुद्धिमान् तथा नीतिमान् होता है।।३२।।

विशेष— यहाँ 'बुद्धिमान्नीतिमान्' का तात्पर्य व्यावहारिक बुद्धि वाला है। अनेक जातक खूब पढ़े-लिखे होते हैं। परीक्षाओं में अच्छे अङ्क भी प्राप्त करते हैं। साक्षात्कार में भी सर्वाधिक अङ्क प्राप्त कर ख्याति अर्जित करते हैं; परन्तु ऐसे अनेक जातक लोक-व्यवहार में शून्य होने से जीवन में असफल भी रहते हैं। ऐसे जातक बुद्धिमान् तो कहे जा सकते हैं; परन्तु उन्हें 'बुद्धिमान्नीतिमान्' नहीं कह सकते। 'बुद्धिमान्नीतिमान्' गुण वाले जातक सफल उद्योगपति, प्रबन्धक, प्रशासक तथा राजनेता हुआ करते हैं।

बुद्धिमान्नीतिमान् योग

(पं. दीनदयाल उपाध्याय)

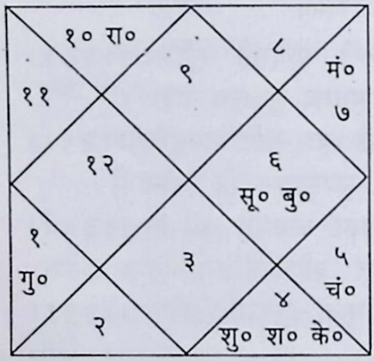

उदाहरणार्थ स्व० पं० दीनदयाल उपाध्याय की जन्मकुण्डली प्रस्तुत की गई है। इस कुण्डली में पञ्चमेश मंगल शुभ ग्रह शुक्र की राशि में स्थित होकर गुरु से दृष्ट होकर 'बुद्धिमान्नीतिमान् योग' बना रहा है। स्व० दीनदयाल जी ने अपनी बुद्धिमत्ता तथा नीतिमत्ता के बल पर आज की भारतीय जनता पार्टी के पूर्व रूप राजनैतिक दल 'जनसंघ' को उसके अध्यक्ष पद पर रहकर भारतीय राष्ट्रीय राजनीति में प्रतिष्ठित किया था। साथ ही सन् १९६७ में समाजवादी पार्टियों तथा अन्य विपक्षीं दलों को मिलाकर मध्य-प्रदेश, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में संविद सरकारों की स्थापना करवा कर कांग्रेस की एकछत्र पार्टी होने को चुनौती दे डाली थी। वह अजातशत्रु कहलाते थे और विपक्षियों के मन में भी उनके प्रति सदैव आदरभाव रहा था।

परमोच्चांशके बुद्धिस्थाने नाथेन वीक्षिते ।
शुभग्रहाणां मध्यस्थे तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ।।३३।।

यदि पञ्चम स्थान का राश्यधिपति परमोच्चांश में होकर पञ्चम में बैठा हो अथवा उसे देखता हो; साथ ही शुभ ग्रहों के मध्य में हो तो ऐसा जातक तीव्र बुद्धि वाला होता है।।३३।।

कारके बलसम्पूर्णे तदीशे शुभवीक्षिते ।
बुद्धिस्थानेऽथ वा सौम्ये तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ।।३४।।

बुद्धिस्थानाधिपस्यांशराशीशे शुभवीक्षिते ।
वैशेषिकांशके वाऽपि तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ।।३५।।

यदि पञ्चम भाव का कारक पूर्ण बली हो, पञ्चमेश शुभ ग्रहों से दृष्ट हो अथवा पञ्चम भाव में शुभ ग्रह बैठे हों तो जातक को तीव्र बुद्धि वाला बताना चाहिए। पञ्चमेश जिस ग्रह के नवांश में हो, वह ग्रह यदि शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा वैशेषिकांश में हो तो भी जातक तीव्र बुद्धि वाला होता है।।३४-३५।।

तीव्रबुद्धि योग (राजीव गान्धी)

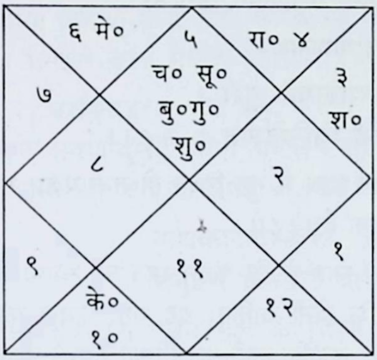
६ मे०
५
रा० ४
७
च० सू०
बु०गु०
शु०
३
श०
८
२
९
११
१
के०
१२
१०

प्रकृत कुण्डली भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी की है। इस कुण्डली में श्लोक संख्या ३४ का योग घटित हो रहा है। इनकी कुण्डली में पञ्चम भाव का कारक ग्रह गुरु पूर्ण बली होकर शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर **तीव्रबुद्धियोग** का निर्माण कर रहा है।

कारकस्थितराश्यंशनाथे केन्द्रत्रिकोणगे ।
बुद्धीश्वरेण सन्दृष्टे तीव्रबुद्धिं समादिशेत् ।।३६।।

पञ्चम भाव का कारक जिस ग्रह की राशिनवांश में हो, वह ग्रह यदि केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तब भी जातक को तीव्र बुद्धि वाला कहना चाहिए ।।३६।।

तीव्रबुद्धि योग (अमिताभ बच्चन)

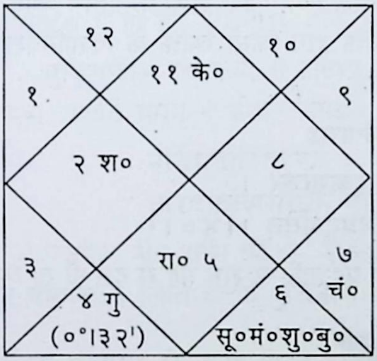
१२
१०
११ के०
१
९
२ श०
८
३
रा० ५
७
६
चं०
४ गु
(०°।३२')
सू०मं०शु०बु०

प्रकृत कुण्डली फिल्म जगत् के महानायक मिलेनियम स्टार अमिताभ बच्चन की है। इस कुण्डली में गुरु वर्गोत्तम है तथा जिस राशि में वह स्थित है, उसका अधिपति चन्द्र त्रिकोण में स्थित होकर तीव्रबुद्धि योग बना रहा है।

शुभग्रहाणां मध्यस्थे बुद्धिराशौ शुभान्विते ।
गुरौ केन्द्रत्रिकोणे वा बुद्धिमार्गविशारदः ।।३७।।

यदि पञ्चम भाव शुभ ग्रहों के मध्य में हो तथा शुभ ग्रह से युक्त हो; साथ ही बृहस्पति केन्द्र अथवा त्रिकोण में स्थित हो तो जातक बुद्धिमार्ग में निपुण होता है।।३७।।

बुद्धिमार्गविशारदः— मूल श्लोक में 'बुद्धिमार्गविशारदः' का प्रयोग हुआ है। मार्ग का अर्थ 'खोजना' होता है, अतः इस वाक्यांश का अर्थ बौद्धिक खोजों में अनवरत लगे रहने वाला होता है। ऐसे व्यक्ति प्रायः अनुसन्धानकर्त्ता हुआ करते हैं। ये अनेक

शोधकर्त्ता विद्यार्थियों के पथप्रदर्शक होते हैं तथा इनकी देख-रेख में शोधकार्य चलते हैं। बहुत से विद्यार्थी उनके दिशानिर्देशन में शोध-प्रबन्ध लिखते रहते हैं।

पुनरपि बुद्धिप्रदान् योगानाह

बुद्धिस्थानाधिपे सौम्ये बुद्धिराशिगते गुरौ ।
शुभग्रहाणां मध्यस्थे भावे बुद्धिं विनिर्दिशेत् ।।३८।।

पञ्चम स्थान का स्वामी ग्रह बुध हो, पञ्चम भाव में गुरु स्थित हो तथा पञ्चम भाव ग्रहों के मध्य स्थित हो तो व्यक्ति बुद्धिमान् होता है।।३८।।

बुद्धिस्थानाधिपे सौम्ये— इस वाक्य से स्पष्ट है कि पञ्चम भाव का स्वामी बुध हो अर्थात् पञ्चम भाव में मिथुन या कन्या राशि होनी चाहिए। यह योग केवल कुम्भ अथवा वृष लग्न की कुण्डलियों में ही सम्भव है, क्योंकि इन्हीं कुण्डलियों में बुध पञ्चम-स्थानाधिपति होगा; अन्य में नहीं ।

बुद्धिस्थानेश्वरे केन्द्रे शुभग्रहसमन्विते ।
उच्चग्रहसमायुक्ते ग्रहणादिपटुर्भवेत् ।।३९।।

पञ्चमेश केन्द्र में शुभ ग्रहों तथा उच्च राशिस्थ ग्रह के साथ बैठा हो तो व्यक्ति की बुद्धिक्षमता अच्छी होती है।।३९।।

ग्रहणादिपटुर्भवेत्— यहाँ पर व्यावहारिक रूप में इस शब्द से तात्पर्य व्यक्ति की ग्रहणक्षमता से है। ग्रहणक्षमता से तात्पर्य व्यक्ति द्वारा किसी व्यक्ति के दिशानिर्देश को न्यूनतम समय में समझ लेने की क्षमता से है।

धारणादियोगानाह

मृद्वंशादिसमायुक्ते नाथकारकखेचरे ।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे धारणादिपटुर्भवेत् ।।४०।।

पञ्चम भाव का अधिपति एवं कारक ग्रह मृद्वंशादि में शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो व्यक्ति धारणादि में पटु होता है।।४०।।

धारणादिपटुर्भवेत्— इस शब्द से तात्पर्य किसी शब्द को हृदयङ्गम करने की निपुणता से है। दीर्घ काल तक स्मृति में बातों को सुरक्षित रखने की निपुणता ही धारणा कहलाती है।

गोपुराद्यंशके वाऽपि धारणादिपटुर्भवेत् ।।४१।।

यदि ये ग्रह (पञ्चमेश और पञ्चम भाव का कारक ग्रह) गोपुर आदि अंशक में हों तब भी जातक को धारणादि में पटु कहना चाहिए।।४१।।

परेङ्गितज्ञो मेधावी कारकस्थितभागपे ।
केन्द्रत्रिकोणसंयुक्ते कारकग्रहवीक्षिते ।।४२।।

जिस स्थान में पञ्चम भाव का कारक ग्रह है, उसका (कारक ग्रह का) स्वामी केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तथा कारक ग्रह से दृष्ट हो तो वह जातक दूसरे व्यक्ति के इशारे को समझने वाला मेधावी होता है॥४२॥

परङ्गितज्ञः— इस शब्द में तीन शब्द जुड़े हुए हैं, पर + इङ्गित + ज्ञः। पर अर्थात् पराए अथवा दूसरे, इंगित अर्थात् इशारा, ज्ञः अर्थात् जानने वाला। जो व्यक्ति इशारों में ही दूसरे की बात को समझ ले, उसे 'परेङ्गितज्ञः' कहते हैं।

नाथकारकसंयुक्ते त्र्यंशभोगपतौ शुभे ।
चतुष्टये त्रिकोणे वा शुभदृष्टेङ्गितज्ञकृत् ।।४३।।

दृकाणेश पञ्चम भाव के स्वामी, कारक तथा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तथा केन्द्र अथवा त्रिकोण में शुभ ग्रह स्थित हों तो दूसरे व्यक्ति के इंगित (इशारे) से ही जानने वाला होता है॥४३॥

बुद्धिनाशकयोगाः

पञ्चमे पापसंयुक्ते तदीशे पापसंयुते ।
क्रूरषष्ट्यंशके वाऽपि बुद्धिनाशो भवेत्तदा ।।४४।।

पञ्चम भाव में पापग्रह स्थित हो तथा पञ्चमेश भी पापग्रह के साथ स्थित हो अथवा क्रूरषष्ट्यंश में हो तो 'बुद्धिनाश' होता है॥४४॥

बुद्धिनाश– इस शब्द से तात्पर्य उचित निर्णय लेने की शक्ति का नाश हो जाने अथवा आपत्ति समय में सोचने-समझने की क्षमता के नष्ट हो जाने से है।

नीचमूढारिगेहस्थे पापखेचरवीक्षिते ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ते बुद्धिनाशो भवेत्तदा ।।४५।।

पञ्चमेश नीच राशि का हो, अस्तङ्गत हो अथवा शत्रु की राशि में स्थित हो तथा क्रूर षष्ट्यंश में स्थित हो तो बुद्धिनाश हो जाता है॥४५॥

जड़बुद्धियोगमाह

पञ्चमे मन्दसंयुक्ते लग्नेशे मन्दवीक्षिते ।
तदीशे पापसंयुक्ते बुद्धिजाड्यं समादिशेत् ।।४६।।

पञ्चम भाव में शनि स्थित हो तथा लग्नेश पर शनि की दृष्टि हो और पञ्चम भाव का अधिपति ग्रह किसी पापग्रह के साथ स्थित हो तो ऐसा जातक जड़बुद्धि होगा— ऐसा कहना चाहिये॥४६॥

बुद्धिजाड्यं समादिशेत्— यहाँ पर पाठकों को बुद्धिजाड्य का तात्पर्य समझ लेना परमावश्यक है। आधुनिक मनोविज्ञानियों ने इस विषय पर पर्याप्त ऊहापोह किया है। सर्वाधिक बुद्धिमानों को उन्होंने १२० से अधिक बुद्धि उपलब्धि वाला

माना है। ऐसे लोगों को अंग्रेजी में जीनियस कहते हैं। इससे नीचे उत्तम बुद्धि, फिर उससे नीचे मध्यम बुद्धि और उससे भी नीचे अधम बुद्धि कहा जाता है। इनकी बुद्धि उपलब्धि ७० से कम होती है। इस वर्ग को तीन श्रेणियों में बाँटा गया है—

मूर्ख— इनकी बुद्धि उपलब्धि ५० से ६९ के मध्य रहती है। इन लोगों को विशेष प्रशिक्षण और देख-रेख की आवश्यकता होती है। इनकी बुद्धि सामान्य रूप से एक से ११ वर्षीय बालक के समान ही होती है।

मूढ़— इस श्रेणी में वे व्यक्ति आते हैं, जिनकी बुद्धि उपलब्धि २१ से ५० के बीच रहती है। ऐसे लोग प्रायः नंग-धड़ङ्ग भी घूमा करते हैं; क्योंकि इनकी बुद्धि ७ वर्ष के सामान्य बालक जितनी ही हो पाती है, इससे आगे नहीं होती। इनका शरीर तो यौवन और वृद्धत्व को प्राप्त कर लेता है; किन्तु ये बौद्धिक दृष्टि से मूढ़ ही बने रहते हैं।

जड़— जड़ता की इस अवस्था को अंग्रेजी में Idiocy कहते हैं। इन लोगों में बुद्धि उपलब्धि २१ से कम रहती है। श्रीमद्देवीभागवत में सत्यव्रत या सत्यतपा नाम के एक जड़-बुद्धि बालक की कथा आती है, जो बाद में देवी के सारस्वत बीजमन्त्र का जप करने से परम बुद्धिमान् हो गया था। जड़-बुद्धि लोगों की बुद्धि ढ़ाई वर्ष के सामान्य बालक जितनी ही रहती है। इसलिए माता-पिता या अभिभावकों को इनकी सतत् रक्षा करनी पड़ती है; अन्यथा वे जीवन तथा शरीर को हानि पहुँचाने वाले खतरों से भी अपनी रक्षा नहीं कर पाते हैं। इनके सम्बन्ध में Dorland's Pocket Medical Dictionary में Idiocy शब्द की व्याख्या में लिखा है—

Mental deficiency so severe as to sender, the patient incapable of guarding against common physical danger's, the inteligence quotient being less than 21.

इस प्रकार उपर्युक्त श्लोक में पठित बुद्धिजाड्य शब्द का अन्तर्भाव ऊपर बताए गए हीन बुद्धि के तीनों प्रकारों में करना चाहिए।

मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते पञ्चमे शुभवर्जिते ।
तदीशे पापसन्दृष्टे विस्मृतिः प्रायशो भवेत् ।।४७।।

पञ्चम भाव मन्द (शनि), मान्दि (गुलिक), अगु (राहु) से युक्त हो तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि या युति से रहित हो तथा पञ्चमेश पापग्रह से दृष्ट हो तो ऐसा जातक प्रायः विस्मृति से युक्त होता है।।४७।।

बुद्धिर्विस्मृतिपूर्वा स्यात्कारके शुभसंयुते ।
तदीशे पापसंयुक्ते क्रूरषष्ट्यंशकेऽपि वा ।।४८।।

यदि पञ्चम भाव का कारक शुभ ग्रह से युक्त हो तथा पञ्चमेश पापग्रहों से युक्त एवं क्रूरषट्यंश में हो तब भी बुद्धिविस्मृति होती है।।४८।।

विस्मृति— शीघ्र ही भूलने की प्रवृत्ति 'विस्मृति' कहलाती है। किसी के द्वारा कही गई बात अथवा दिशानिर्देश को समझकर उसे संरक्षित न कर पाना ही विस्मृति है। विस्मृति में व्यक्ति बात को समझकर कुछ देर में ही भूल जाता है।

परामर्शदातायोग:

सौम्ये तु बुद्धिभावस्थे गुरुशुक्रनिरीक्षिते ।
तादृशे बुद्धिनाथे वा सर्वेषां बुद्धिदो भवेत् ।।४९।।

पञ्चम भाव में स्थित बुध गुरु तथा शुक्र से देखा जाता हो और पञ्चमेश पर भी गुरु की दृष्टि हो तो इस प्रकार का जातक सभी को बुद्धि देने वाला अर्थात् परामर्शदाता होता है।।४९।।

ऊहापोहसमर्थः स्यात्तदीशे गोपुरांशके ।।५०।।

यदि पञ्चमेश गोपुरांशक में स्थित हो तो जातक ऊहापोह अर्थात् तर्क-वितर्क करने में कुशल होता है।।५०।।

कारकस्थितराशीशे लग्ननाथेन वीक्षिते ।
राजमन्त्री भवेद्दाता वाक्पतौ बलसंयुते ।।५१।।

पञ्चम भाव का कारक ग्रह जिसकी राशि में स्थित है, वह लग्नेश के द्वारा दृष्ट हो तथा गुरु बलवान हो तो ऐसा जातक राजमन्त्री तथा दाता भी होता है।।५१।।

त्रिकालज्ञयोगानाह

बुद्धीश्वरेण संयुक्ते गोपुराद्यंशकान्विते ।
आगामिसूचको मन्त्री कारके केन्द्रकोणगे ।।५२।।

पञ्चम भाव का कारक ग्रह तथा पञ्चमेश दोनों एक साथ केन्द्र अथवा त्रिकोण में हों अथवा गोपुरांशक में स्थित हों तो वह जातक दूरदर्शी अर्थात् भविष्य व भूत की बातों को समझकर निर्णय लेने वाला होता है।।५२।।

भृगौ सौम्यसमायुक्ते दृष्टे ताभ्यां शुभांशके ।
त्रिकालज्ञो भवेज्जीवे स्वांशे मृद्वंशसंयुते ।।५३।।

शुक्र एवं बुध परस्पर युक्त होकर बैठे हों तथा गुरु स्वनवांश में मृद्वंश में हो एवं बुध शुक्र के द्वारा दृष्ट हो तो ऐसा जातक भूत-वर्त्तमान-भविष्य तीनों कालों को जानने वाला होता है।।५३।।

सुपुत्रयोगानाह

गोपुराद्यंशके वाऽपि शुभांशे शुभवीक्षिते ।
पुंग्रहे पुंग्रहं प्राप्ते पुंभागे पुत्रनायके ।।
सुपुत्रजननं विद्यात्प्रथमं नाऽत्र संशयः ।।५४।।

पञ्चम भाव का अधिपति ग्रह गोपुरांशक में हो अथवा शुभ ग्रह के अंशक में शुभ ग्रह के द्वारा देखा जाता हो तथा पञ्चमेश पुरुष ग्रह हो और पुरुष ग्रह से ही युक्त हो तो जातक का प्रथम सन्तान सुपुत्र होगा, इस बात में कोई संशय नहीं करना चाहिये॥५४॥

कन्यादियोगानाह

स्त्रीराशौ स्त्रीग्रहे प्राप्ते स्त्रीभावे पुत्रनायके ।
दारिकां प्रथमं विद्यात्षण्ढांशे षण्ढमादिशेत् ।।५५।।

पञ्चम भाव का अधिपति स्त्रीग्रह के साथ स्त्रीराशि और स्त्रीनवांश में हो तो जातक को प्रथम सन्तान कन्या होगी। यदि वह ग्रह नपुंसक राश्यंश आदि में स्थित हो तो प्रथम सन्तान नपुंसक उत्पन्न होगी— यह कहना चाहिए॥५५॥

पुत्रादिसंख्याकथनम्

कारकस्थितराशेर्वा पञ्चमे बिन्दुसंख्यया ।
नीचारिमूढगेहानां बिन्दुं त्यक्त्वा सुतान्वदेत् ।।५६।।

कारक ग्रह जिस राशि में स्थित है अथवा पञ्चम भाव के बिन्दु की संख्या में नीच राशिगत, शत्रुराशिगत, अस्तंगत ग्रह की बिन्दुसंख्या को त्याग कर पुत्रों की संख्या कहनी चाहिए॥५६॥

पुत्रस्थानेशकिरणात्पुत्रभावांशकाद् वदेत् ।
रश्मिजालैर्गुरोर्वापि बलोत्कर्षाद् वदेत्तथा ।।५७।।

पञ्चमेश की रश्मिसंख्या अथवा पञ्चम भाव की अंशकसंख्या के द्वारा अथवा रश्मिसंख्या के द्वारा बृहस्पति के बलाबल के अनुसार पुत्रों की संख्या के सम्बन्ध में फलकथन करना चाहिए॥५७॥

पितापुत्रसौहार्द्रमाह

लग्नपुत्रेश्वराभ्यां तु मित्रत्वेनैव मित्रता ।
शत्रुत्वे शात्रवं प्रोक्तं समत्वे समता भवेत् ।।५८।।

लग्नाधीश तथा पञ्चमाधीश परस्पर मित्र हों तो पिता-पुत्र में परस्पर मित्रता रहती है। ये ग्रह परस्पर शत्रु हों तो पिता-पुत्र में शत्रुता रहती है तथा यदि इनमें समता हो तो पिता-पुत्र में समता स्थापित रहती है॥५८॥

लग्नपुत्रेश्वरौ खेटौ परस्परनिरीक्षितौ ।
परस्परगृहांशस्थौ शुश्रूषां कारयेत्सुतः ।।५९।।

लग्नेश और पञ्चमेश की परस्पर दृष्टि हो अथवा एक-दूसरे की राशियों अथवा

एक-दूसरे के अंशकों में स्थित हों तो पिता पुत्र से अपनी शुश्रूषा कराता है अर्थात् पुत्र को पिता की सेवा करनी पड़ती है॥५९॥

लग्नं पश्यति वा पुत्रनाथे लग्नान्विते यदि ।
लग्नेश्वरे सुतर्क्षे वा पुत्रो वाक्यवशानुगः ।।६०।।

पञ्चमेश लग्न को देखता हो अथवा पञ्चमेश लग्न में स्थित हो अथवा पञ्चम भाव में लग्नेश बैठा हो तो पुत्र पिता के वश में रहता है अर्थात् पुत्र पिता का आज्ञाकारी होता है॥६०॥

पितृद्वेषीयोगमाह

पुत्रस्थानेश्वरे दुःस्थे लग्नेशेनापि वीक्षिते ।
सन्दृष्टे कुजराहुभ्यां नित्यं पितृविदूषकः ।।६१।।

पञ्चम भावाधिपति दु:स्थान (षष्ठ, अष्टम तथा द्वादश भाव) में हो, लग्नेश के द्वारा दृष्ट हो तथा मंगल व राहु भी उसे देखें तो ऐसा जातक प्रतिदिन पिता से द्वेष रखने वाला होता है॥६१॥

नित्यं पितृविदूषकः— इस वाक्यांश का साधारणतया अर्थ नित्य प्रति पिता की हँसी करने वाला या उसकी आज्ञा को मजाक में टाल देने वाला अथवा पिता के कथन को महत्त्व न देने वाला होता है। स्पष्ट रूप से ऐसे जातक का अपने पिता से वैचारिक मतभेद हुआ करता है।

आज्ञादायकयोगः

पञ्चमे गुरुशुक्राभ्यां सवित्रा सहितेऽथ वा ।
एतेषां भवने वाऽपि सोऽयं योजयिता भवेत् ।।६२।।

वही पञ्चमेश पञ्चम भाव में गुरु, शुक्र अथवा सूर्य के साथ बैठा हो अथवा इन ग्रहों की राशि में हो तो ऐसा जातक अपनी योजना से कार्य करता है (और पिता भी उनकी योजनानुसार चलता है)॥६२॥

तृतीयेशे तृतीयस्थे पञ्चमेशे सुखं गते ।
शुभोच्चखेटसंयुक्ते जातो योजयिता भवेत् ।।६३।।

यदि तृतीयेश तृतीय में तथा पञ्चमेश सुखभाव में शुभ ग्रह या उच्च राशिगत ग्रह के साथ हो तो भी जातक स्वयं की योजना से कार्य करने वाला होता है॥६३॥

अन्नदानकर्त्तायोगः

अन्नदानपरो नित्यं पञ्चमेशे शुभङ्गते ।
शुभग्रहैः समायुक्ते मुक्तीशे शुभसंयुते ।।६४।।

पञ्चमाधिपति शुभ स्थान में शुभ ग्रह के साथ स्थित हो तथा मुक्तीश [मुक्ति (नवम) + ईश (स्वामी)] अर्थात् नवमेश शुभ ग्रह से युक्त हो तो जातक अन्नदान करने में परायण होता है॥६४॥

उदरादिरोगमाह

हृदये पापसंयुक्ते तदीशे पापसंयुते ।
पापग्रहाणां मध्यस्थे हृद्गतं रोगमादिशेत् ।।६५।।

हृदयस्थान पापग्रह से युक्त हो और उसका अधिपति पापग्रह से युक्त या पापग्रहों के मध्य हो तो जातक को हृद्रोग कहना चाहिए॥६५॥

तदीशस्थांशराशीशे क्रूरषष्ट्यंशसंयुते ।
क्रूरग्रहेण सन्दृष्टे हृद्गतं शल्यमादिशेत् ।।६६।।

पञ्चम भाव का अधिपति जिसके नवांश में स्थित हो वह क्रूरषष्ट्यंश में हो तथा क्रूर ग्रह के द्वारा देखा जाता हो तो जातक के हृदयस्थान में शल्य होगा— ऐसा कहना चाहिए॥६६॥

तन्नाथे नाशभावस्थे नाशस्थानेषु संयुते ।
नीचारिमूढभावे वा हृद्गतं रोगमादिशेत् ।।६७।।

पञ्चम स्थान का स्वामी नाशस्थान (अष्टम भाव) में हो तथा अष्टमेश से युत हो अथवा नीचस्थान में, शत्रुस्थान में या अस्तंगत हो तो जातक को होने वाले हृद्रोग का कथन करना चाहिए॥६७॥

इति सुतभावविचार:

◆

अथ षष्ठभावविचार:

उपदंशकथनम्

अरिभवनादरिचौरक्षतविघ्नक्लेशनाभ्युदरदेशान् ।
मधुरादिषडुपदंशान् ग्रहराश्युदितान् वदेत् प्राज्ञः ।।६८।।

छठे भाव से शत्रु, चोर, घाव, बाधा, कष्ट, नाभिस्थान तथा उदरदेश के रोग और मधुर आदि छ: प्रकार के उपदंश ग्रहराशियों के अनुसार विचार करके विद्वानों द्वारा फल कहे गए हैं॥६८॥

व्रणादिकथनम्

षष्ठेश्वरे क्रूरयुते विलग्ने रन्ध्रस्थिते वा व्रणदः शरीरे ।
कर्मस्थिते तादृशखेचरेन्द्रे व्रणप्रदोऽङ्गे शुभदृष्टियुक्ते ।।६९।।

षष्ठेश क्रूर ग्रहयुक्त होकर लग्न अथवा अष्टम भाव में बैठा हो तो शरीर में फोड़े, फुंसी आदि होते हैं अर्थात् शरीर में व्रण अधिक रहते हैं। यदि इसी प्रकार का ग्रह कर्म-स्थान में हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो उस अंग (जिसका कि वह प्रतिनिधित्व करता है) में व्रण उत्पन्न करता है॥६९॥

पित्रादिभावादपि योजनीयं भावेशतत्कारकदृष्टियोगात् ।
बलाबलेनापि विकल्प्य सर्वं तेषां व्रणं तत्कथयन्ति तज्ज्ञाः ।।७०।।

उपर्युक्त विधि से ही पितृ आदि सभी भावों का भी विचार करना चाहिए। भावेश, भाव के ग्रह और ग्रह के दृष्टियोगानुसार तथा बलाबल के अनुसार विचारपूर्वक पितृ आदि को भी व्रण कहना चाहिए॥७०॥

भावानुसारेणाङ्गविभागमाह

शिरोऽर्कादेर्मुखं कण्ठं श्रोत्रनासा च गुह्यकम् ।
पाणी पार्श्वौ दृशौ पादौ प्रपदौ कुक्षिमादिशेत् ।।७१।।

षष्ठ भाव के अनुसार रोग का विचार होता है। इसके अनुसार ग्रहादि योग से किस अङ्ग में रोग होगा— यह जानने के लिए यहाँ भावानुसार अङ्गविभाग प्रस्तुत किया गया है। प्रथम भाव से सिर, द्वितीय से मुख, तृतीय से कण्ठ, चतुर्थ से कान, नाक का विचार पञ्चम भाव से, गुदा षष्ठ से, सप्तम से हाथ, अष्टम से पार्श्व, नवम भाव से नेत्र, दशम भाव से पैर, पैरों के तलवों का विचार एकादश से और कुक्षि का विचार द्वादश भाव से किया जाता है॥७१॥

अङ्गविभागचक्रम्

भाव	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पञ्चम	षष्ठ	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश
अंग	शिर	मुख	कण्ठ	कर्ण	नासिका	गुदा	हस्त	पार्श्व	नेत्र	पाद	पादतल	कुक्षि

अपानरोगकथनम्

लग्नेशभूपुत्रशशाङ्कपुत्राः सहस्थिताः सौख्यगृहे व्यये वा ।
अपानरोगं त्वथ वा पवित्रं पश्यन्ति षष्ठं मुनयो वदन्ति ।।७२।।

लग्नेश भौम तथा बुध के साथ चतुर्थ भाव अथवा द्वादश भाव में इकट्ठे बैठे हों तो जातक में अपान वायुजनित रोग उत्पन्न होते हैं॥७२॥

अपान वायुजनित रोग

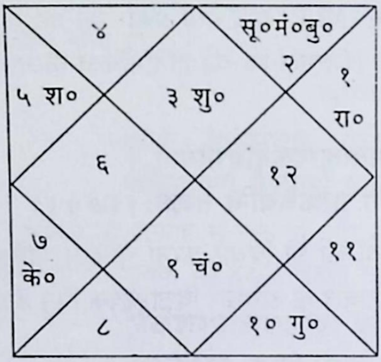

यह कुण्डली एक लेखक की है, जो कि अपान वायुजनित रोगों से त्रस्त रहता है। इनकी कुण्डली में लग्नेश स्वयं बुध है, जो कि मंगल के साथ द्वादश भाव में स्थित होकर इस रोग की सृष्टि कर रहा है।

कुष्ठयोगानाह

शशाङ्कतत्पुत्रविलग्ननाथाः सराहवः केतुयुतास्तदङ्गे ।
श्वैत्यं तु कुष्ठं मुनयो वदन्ति शुभेक्षितास्तत्र भवेत्तदानीम् ।।७३।।

चन्द्र, बुध तथा लग्नेश राहु अथवा केतु से युक्त होकर छठे भाव में स्थित हों तो जातक को श्वेत कुष्ठ होता है। यदि इन ग्रहों पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कुष्ठ षष्ठ भावस्थ राशितुल्य अङ्ग में जानना चाहिए।।७३।।

विना विलग्नाधिपतिं ग्रहेषु लग्नस्थिते त्वत्र तु कुष्ठभाक् स्यात् ।
पित्रादिकानां फलमेवमाहुर्मुनीश्वराः कारकभावनाथैः ।।७४।।

यदि विना लग्नाधिपति के उपर्युक्त ग्रह लग्न में स्थित हो तो जातक को कुष्ठ रोग होता है। पितृ आदि भावों के कारकों तथा उनके अधिपतियों से भी ये ग्रह इन भावों में हों तो पिता इत्यादि सम्बन्ध में भी मुनीश्वर इन्हीं फलों को कथनीय मानते हैं।।७४।।

पैत्र्यं तु कुष्ठं कुजसंयुतेषु शैत्यं भवेन्मन्दसमन्वितेषु ।
रक्तं तदा सूर्यसमन्वितेषु ग्रहोक्तदेशे नियतं तदाहुः ।।७५।।

उपर्युक्त ग्रहों के साथ यदि मंगल भी स्थित हो तो आनुवंशिकता के क्रम से पिता द्वारा आया हुआ कुष्ठ जानना चाहिए। शनियुक्त हो तो शीत द्वारा उत्पन्न जानना चाहिए एवं सूर्य के साथ स्थित होने पर रुधिर द्वारा उत्पन्न कुष्ठ उक्त ग्रह के स्थान पर जानना चाहिए।।७५।।

विविधरोगानाह

लग्नेशषष्ठाधिपती दिनेशयुक्तौ ज्वरं चन्द्रसमन्वितौ चेत् ।
जलेन गण्डं क्षितिसूनुयुक्ते युद्धेन वा स्फोटकराशिभिर्वा ।।७६।।

चैत्तेन रोगेन बुधेन युक्तौ निर्व्याधिकौ जीवसमन्वितौ चेत् ।
शुक्रेण भार्याविपदं वदन्ति मन्देन नीचानिलरोगमाहुः ।।७७।।
सराहुकेतुर्यदि सर्पपीडा चौराग्निभीर्वातभयात्प्रमादः ।

यदि लग्नेश तथा षष्ठेश सूर्यसहित हों तो जातक को ज्वर होता है। यदि ये दोनों ग्रह चन्द्र के साथ हों तो जल से अथवा गण्डरोग से पीड़ा होती है। मंगल के साथ लग्नेश-षष्ठेश होने पर युद्ध या विस्फोटकादि से कष्ट होता है। बुध के साथ लग्नेश षष्ठेश की युति होने पर मनोविकार होता है। परन्तु इन दोनों के साथ गुरु की युति होने पर जातक निरोग रहता है। इसी प्रकार शुक्र के साथ लग्नेश-षष्ठेश की युति जातक की भार्या को रोगी बनाता है तथा शनि से युति होने पर जातक को वातरोगों पीड़ा होती है। राहु-केतु से सर्प, चौर तथा अग्नि के कारण पीड़ा होती है।।७६-७७।।

लिङ्गादिरोगकथनमाह

षष्ठेश्वरश्चन्द्रसुतेन युक्तः सागुर्विलग्ने स्वयमत्र शिश्नम् ।।७८।।

षष्ठेश बुध तथा राहु से युक्त होकर यदि लग्न में स्थित हो तो व्यक्ति स्वयं का शिश्नच्छेदन कर लेता है।।७८।।

छिनत्त्यसौ सौम्यदृशा विहीनः सभूमिपुत्रो यदि लिङ्गरोगात् ।
कामेश्वरः शुक्रयुतो रिपुस्थः कलत्रषण्ढत्वमुदीरयन्ति ।।७९।।

यदि उपर्युक्त ग्रह मंगल के साथ हो और उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तो रोग द्वारा लिंगच्छेदन होता है तथा सप्तमस्थ ग्रह शुक्र के साथ षष्ठ भाव में बैठा हो तो ऐसा जातक स्त्री-नपुंसक होता है।।७९।।

बन्धनयोगानाह

षष्ठेशलग्नाधिपती समन्दौ केन्द्रत्रिकोणे यदि बन्धनं स्यात् ।
सराहुकेतुर्यदि केन्द्रकोणे वदन्ति तज्ज्ञा निगडं तदानीम् ।।८०।।

षष्ठेश लग्नाधिपति तथा शनि के साथ केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तो जातक को बन्धन (कैद) कहना चाहिए। यदि ये राहु अथवा केतु के साथ केन्द्र या त्रिकोण में हों तो भी यही फल-कथन करना चाहिए।।८०।।

पित्रादितत्कारकभावनाथैः पित्रादिकानां फलमाहुरन्ये ।
तत्तद्ग्रहाणां परिपाककाले त्वन्तर्दशायामथ वा वदन्ति ।।८१।।

इसी प्रकार के योग पितृ आदि भावकारक अथवा भावेश से हो तो पिता इत्यादि को भी यही फल ग्रहों की दशा-अन्तर्दशा में कहना चाहिए।।८१।।

बन्धनयोग

(महाराज श्री शिवाजी राजे)

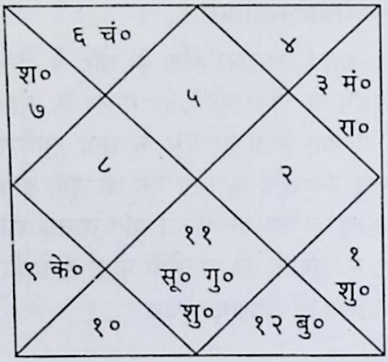

प्रस्तुत उदाहरण कुण्डली श्री शिवाजी महाराज की है, इनकी कुण्डली में लग्नेश और षष्ठेश दोनों ही केन्द्रस्थापित होकर बन्धनयोग की शर्त्तों को पूरा कर रहे हैं। गौरतलब है कि शिवाजी महाराज को भी औरंगजेब ने छल द्वारा बन्दी बना लिया था।

अङ्गच्छेदनयोगाः

धर्मे शनौ वा सगुरौ तृतीये करच्छिदोऽर्के निधने व्यये वा ।
विधौ कलत्रे निधनान्वितो वा कुजेन युक्ते यदि वा सजीवे ।।८२।।

यदि नवम या तृतीय भावों में से किसी में शनि गुरु के साथ हो अथवा अष्टम या व्ययभावों में सूर्य शनि एवं गुरु के साथ बैठा हो तो इस योग में जन्म लेने वाले जातक के हाथ कट जाते हैं। यदि मंगल के साथ चन्द्रमा सातवें या आठवें भाव में हो अथवा गुरु से युक्त हो तो भी वही फल होता है (हाथ कटते हैं)॥८२॥

कर्मस्थिताश्चेद्यदि राहुमन्दसौम्याः पदच्छेदयुतोऽत्र जातः ।
शुक्रेज्यदृष्टे दिवसाधिनाथे सारे शनौ वा फणिनाथयुक्ते ।।८३।।

क्रूरादिषष्ट्यंशसमन्विते वा विच्छेदनं तच्छिरसो वदन्ति ।
मन्दे विलग्ने मदने सराहौ कर्मान्विते भार्गवनन्दने च ।।८४।।

यदि दशम भाव में राहु, शनि तथा बुध हो तो इस योग में पदच्छेद होता है अर्थात् पैर कटते हैं। यदि सूर्य गुरु एवं शुक्र से दृष्ट हो या मंगल, शनि, राहु— इन तीनों की युति के साथ सूर्य की युति हो अथवा क्रूरादि षष्ट्यंश में हो तो शिर कटता है। शनि लग्न या सप्तम में राहु के साथ हो तथा दशम भाव में शुक्र हो तो भी यही फल होता है॥८३-८४॥

कृष्णे शशाङ्के मदराशियुक्ते विच्छिन्नहस्तः स भवेत्पदेन ।
भूसूनुलग्ने यदि वा तदंशे सूर्यान्विते कृष्णनिशाकरे तु ।।८५।।
फणीन्द्रचन्द्रात्मजसंयुतेऽर्करश्म्याभिभूते ह्युदरस्य भेदः ।
मन्दोदये सौम्यदृशा विहिने सर्पाऽर्कयुक्ते यदि कृष्णचन्द्रे ।।८६।।

शस्त्रेण कुक्षेर्दलनं वदन्ति जातस्य दर्शे मुनयो महान्तः ।
दशासु रुग्णादिरुजं वदन्ति शास्त्रानुसारेण फलं विचार्य ।।८७।।

यदि कृष्ण पक्ष का चन्द्र सप्तम भाव में हो तो हाथ एवं पैर दोनों कटते हैं। यदि लग्न में मंगल हो या मंगल का नवांश हो (या मंगल की राशि का लग्न हो) तथा अमावस्या का चन्द्र सूर्य के साथ हो तो इस योग में शस्त्र से कुक्षिभेदन होता है अर्थात् या तो शस्त्राघात से पेट फटता है या पेट का शस्त्रकर्म (ऑपरेशन) होता है। इसी प्रकार राहु के बुध से युक्त होने पर या सूर्य के साथ राहु के होने पर भी यही फल प्राप्त होता है। यदि लग्न में शनि हो, उस पर शुक्र ग्रह की दृष्टि न हो अथवा कृष्ण पक्ष का चन्द्रमा राहु-सूर्य से युक्त हो तो भी उदर का भेदन शस्त्रादि से होता है। ये सभी फल ग्रहों की महादशाओं तथा अन्तर्दशाओं में होते प्राप्त हैं। यह मुनियों द्वारा उपदिष्ट योग हैं। शास्त्रानुसार इनका फल विचारपूर्वक कहना चाहिये।।८५-८७।।

शिरश्छेदनातिह्रस्वकाययोगश्च

क्षीणे शशाङ्के फणिनाथदृष्टे सौरौ शिरस्यास्य निकृन्तनं स्यात् ।
लग्ने शनौ सोमसुते स्वगेहे सौर्ये चतुर्थे सबुधेऽतिह्रस्वः ।।८८।।

यदि चन्द्रमा क्षीण हो तथा शनि पर राहु की दृष्टि हो तो जातक का शिरश्छेदन होता है। यदि लग्न में शनि हो, बुध अपनी राशि का हो या शनि चतुर्थ में बुध के साथ हो तो जातक का शरीर ह्रस्व होता है अर्थात् वह छोटे कद वाला होता है।।८८।।

विशेष— इस श्लोक में राहु की दृष्टि है; अत: पराशर के अनुसार 'सुतमदननवान्ते पूर्णदृष्टि: तमस्य' श्लोक के अनुसार पञ्चम, सप्तम, नवम तथा द्वादश पर राहु की दृष्टि माननी चाहिये।

दुर्मरणयोगाः

षष्ठाष्टमव्यये चन्द्रे लग्ननाथेन वीक्षिते ।
मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते तस्य दुर्मरणं भवेत् ।।८९।।

यदि चन्द्रमा लग्न से छठे, आठवें या बारहवें घर में बैठा हो तथा लग्नेश की उस पर दृष्टि हो एवं शनि गुलिक या राहु से युक्त हो तो जातक का दुर्मरण होता है।।८९।।

नीचारातिविमूढांशे मन्दे पापान्वितेक्षिते ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ते तस्य दुर्मरणं भवेत् ।।९०।।

यदि शनि पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो; नीच, अराति (शत्रु) गृह या अस्तंगत हो या क्रूर षष्ट्यंश में हो तो भी जातक का दुर्मरण होता है।।९०।।

दुर्मरण— सर्प, विष, गोली, बन्दूक, जल में डूबने से, हिंसक पशु के द्वारा जब मृत्यु होती है तो उसे दुर्मरण कहा जाता है।।

रन्ध्रेश्वरस्थितत्र्यंशे पाशसर्पादिसंज्ञके ।
दृकाणे मरणं व्याधिरुद्बन्धान्मरणं वदेत् ।।९१।।

अष्टमेश जिस त्र्यंश (द्रेष्काण) में बैठा हो, वह पाश, सर्प आदि नामों वाला द्रेष्काण हो तो उस द्रेष्काणेश (त्र्यंशेश) की दशा में जातक की रोग आदि से या बन्धक से मृत्यु होती है॥९१॥

सर्पादिद्रेष्काण— सर्प-पाशादि द्रेष्काणों का वर्णन पूर्व में संज्ञाध्यायादि में किया गया है।

मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते रन्ध्रेशस्थत्रिभागपे ।
तथाविधेऽर्कपुत्रे वा ह्युद्बन्धान्मरणं वदेत् ।।९२।।

अष्टमेश जिस द्रेष्काण में स्थित हो वह द्रेष्काण शनि, राहु या केतु के सहित हो अथवा शनि, राहु आदि के साथ हो; तो उद्बन्धन (फाँसी) आदि से जातक की मृत्यु होती है॥९२॥

युद्धे मरणयोगानाह

षष्ठाष्टमेशे भौमे वा विक्रमेशसमन्विते ।
मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते क्रूरांशे युद्धतो मृतिः ।।९३।।

यदि षष्ठेश, अष्टमेश अथवा भौम पराक्रमेश से युत हों या फिर शनि, राहु, गुलिक से संयुत हों तो युद्ध, लड़ाई-झगड़ों में जातक की मृत्यु होती है॥९३॥

युद्धेन मरणं ब्रूयाच्छनियुक्तत्रिभागपे ।
कुजेन वीक्षिते युक्ते भौमक्षेत्रे तदंशके ।।९४।।

यदि शनि का द्रेष्काणेश मंगल से दृष्ट या युत हो या शनि मंगल के नवांश में हो तब भी युद्धादि से जातक का मरण कहना चाहिये॥९४॥

रविभौमौ यदाऽन्योऽन्यं परस्परनिरीक्षितौ ।
परस्परग्रहांशस्थौ द्वन्द्वयुद्धान्मृतिं वदेत् ।।९५।।

यदि सूर्य-मंगल एक-दूसरे को देखते हों या एक-दूसरे के नवांश में स्थित हों तो जातक की द्वन्द्वयुद्ध में मृत्यु होती है॥९५॥

विशेष— मुक्केबाजी या मल्लयुद्ध को द्वन्द्वयुद्ध कहते हैं।

सद्योमरणयोगाः

अष्टमे बहवः पापा भौमराशिगतांशकाः ।
क्रूरषष्ट्यंशकयुताः सद्यस्तन्मरणं वदेत् ।।९६।।

यदि जातक के अष्टम भाव में बहुत से पापग्रह मंगल की राशि या नवांश के होकर

बैठे हों; साथ ही क्रूर षष्ट्यंशों में हों तो शीघ्र ही (तत्काल) जातक की मृत्यु होती है अर्थात् सद्योमरण होता है।।९६।।

नीचमूढारिगेहस्थाः सौम्याः सर्वे पराजिताः ।
पापांशस्थाः पापयुताः सद्यस्तस्य मृतिं वदेत् ।।९७।।

यदि किसी कुण्डली में सभी शुभ ग्रह नीच राशिगत या अस्तंगत या शत्रुक्षेत्री, गृहयुद्ध में पराजित, पापनवांशों में या पापग्रहों से युक्त हों तो जातक का सद्योमरण होता है।।९७।।

सद्यः स्यान्मरणं तस्य शनिराहुदिनाधिपाः ।
रन्ध्रेशवीक्षिताः सर्वे क्रूरांशान्मूढसंयुताः ।।९८।।

यदि शनि, राहु तथा सूर्य— ये तीनों अष्टमेश से दृष्ट या युत हों तथा सभी क्रूर नवांशों में हों या अस्त हों तो जातक का सद्योमरण होता है।।९८।।

सद्योमरण का तात्पर्य— उपर्युक्त तीन श्लोकों में 'सद्योमरण' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका शब्दार्थ शीघ्र मृत्यु है। शीघ्र मृत्यु क्या? शीघ्र मृत्यु या सद्योमृति का भावार्थ यह है कि जातक के प्राण-पखेरु तत्काल उड़ जायँ, उसकी मृत्यु अचानक हो जाय, उसमें विलम्ब न लगे। इन योगों में मृत्यु तो बालारिष्ट, अल्पायु, मध्यमायु या दीर्घायु के अनुसार अपने समय पर ही होती है, परन्तु प्राणान्त शीघ्रता से होता है। मृत्यु के समय प्राय: कष्ट भी नहीं होता है। ऐसी मृत्यु प्राय: हृदयावसाद के कारण हुआ करती है। यह अकस्मात् मृत्यु होती है।

मृत्यु के आयुर्वेदीय कारण— आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान के अनुसार रोग, आघात आदि के प्रभाव से शरीर के तीन अङ्गों में से कोई भी यदि दुष्प्रभावित होता है तो उसके कार्य की असफलता से ही व्यक्ति की मृत्यु होती है। ये तीन कारण हैं—

१. मस्तिष्कगत रक्तस्राव— इसमें रोगादि या आघात से मस्तिष्क के भीतर रक्तस्राव होने लगता है, जिसके कारण मस्तिष्क का कार्य अवरुद्ध हो जाता है। फलत: हृदय-फेफड़े भी प्रभावित हो जाते हैं और मृत्यु हो जाती है। इससे भी अनेक बार बाल्यावस्था में अप्रत्याशित मृत्यु हो जाती है। नेल्सन्स टेक्स्ट बुक ऑफ पीडियाट्रिक्स में कहा गया है—

Haemorrhage into variors sites especially into the brain.... may result in sudden unexpected death.

२. श्वासावरोध— इसमें श्वास नली में अवरोध होने से मृत्यु होती है। बालकों में इसके कारण अचानक मृत्यु हो जाया करती है। धूलिकण, गैस, कफ, पानी आदि से सांस रुक जाती है या श्वास नली पर दबाव होने से भी ऐसा होता है। धुआँ आदि भी इसमें कारक होते हैं—

Aspiration of foreign bodies conceivably might cause complete obstruction of the larynx or trachea with resultant sudden death.

३. हत्कार्यावरोध— इसमें हृदय के कार्य में रुकावट आने से मृत्यु होती है।

आकस्मिक मृत्यु— उक्त सद्योमरण के योगों से तात्पर्य यह है कि इन योगों वाला व्यक्ति विना अधिक समय बीमार हुये पीड़ित हुये मृत्यु को प्राप्त होता है। इसमें क्षतिकारक कारण इतना प्रबल होता है कि (पीड़ित) व्यक्ति तत्काल ही दम-तोड़ देता है, उसे कुछ भी कहने-सुनने या करने का अवसर नहीं मिलता।

पैत्तिकव्रणयोगमाह

रोगस्थानगते सूर्ये तद्भावे पापसंयुते ।
पापदृष्टियुते नाभौ पैत्तिकाद् व्रणमादिशेत् ।।९९।।

यदि रोग स्थान (छठे भाव) में सूर्य पापग्रह के साथ हो या पापदृष्ट हो तो नाभिस्थल में पैत्तिक व्रण (घाव या फोड़ा) होता है।।९९।।

वातविकारस्य रक्तपित्तस्य च योगमाह

तथाभूते निशानाथे क्रूरदृष्टे तदंशके ।
वातार्दितो भवेज्जातो रक्तपित्तार्दितः कुजे ।।१००।।

यदि षष्ठ स्थान में सपाप चन्द्र पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो जातक वातरोग से पीड़ित होता है। यदि सपाप एवं पापदृष्ट मंगल हो तो जातक को रक्त-पित्त से पीड़ा होती है।।१००।।

वातकफविद्रधिरोगश्चाह

श्लेष्मवातार्दिते सौम्ये तथाभूते विशेषतः ।
जीवे तु विद्रधिर्वाच्यः शुक्रे मूलातिसाररुक् ।।१०१।।

यदि सपाप एवं पापदृष्ट बुध षष्ठ भाव में हो तो जातक को कफ एवं वात का मिश्रित रोग होता है। इसी स्थिति में गुरु हो तब विद्रधि का कष्ट तथा शुक्र होने पर मूल व्याधि (बवासीर) या अतिसार (दस्त-पेचिश) का कष्ट होता है (यहाँ विद्रधि बाहर या भीतर कहीं भी हो सकतीं है)।।१०१।।

गुल्मरोगो भूतादिबाधाश्चाह

तथाभूते शनौ गुल्मरोगो वाऽत्र विशेषतः ।
राहुकेतुसमायुक्ते बाधा पैशाचिकी स्मृता ।। १०२।।

यदि षष्ठ भाव में सपाप एवं पापदृष्ट शनि हो तो वह जातक गुल्म रोग (वायुगोला आदि) से पीड़ित रहता है। तथैव राहु-केतु की स्थिति से पैशाचिकी बाधा (भूत तथा प्रेत बाधा) रहती है।।१०२।।

विविधरोगानां योगाः

चन्द्रे षष्ठे कुजयुते भ्रान्तिपाण्ड्वादिरोगभाक् ।
सारे चन्द्रे रवियुते शूलवैसर्परोगभाक् ।।१०३।।

यदि छठे भाव में चन्द्र मंगल की युति हो तो भ्रान्ति (चक्कर आना) तथा पाण्डुरोग होता है। यदि चन्द्र, मंगल, सूर्य— इन तीनों की युति षष्ठ भाव में हो तो शूल तथा विसर्प होते हैं।।१०३।।

षष्ठे कुजे बुधयुते भृगुचन्द्रनिरीक्षिते ।
क्रूरांशकसमायुक्ते क्षयरोगं वदन्ति हि ।।१०४।।

यदि छठे भाव में मंगल-बुध की युति चन्द्र के साथ हो या उस युति पर चन्द्र की दृष्टि हो तथा चन्द्र क्रूरनवांश में हो तो जातक को क्षयरोग होता है।।१०४।।

शन्यारसहिते षष्ठे रविराहुनिरीक्षिते ।
लग्नेश्वरे हीनबले दीर्घरोगी भवेन्नरः ।।१०५।।

जब छठे भाव में स्थित शनि-मंगल की युति पर सूर्य तथा राहु की दृष्टि हो, साथ ही लग्नेश निर्बल हो तो जातक दीर्घरोगी होता है।।१०५।।

विशेष— यहाँ दीर्घरोगी का तात्पर्य यह है कि उसे ऐसी बीमारी होती है, जो लम्बे समय तक चलती-रहती है और मुश्किल से ठीक होती है। अतः इस शब्द का अर्थ पुरानी बीमारी समझना चाहिये। राहु की दृष्टि से वह रोग रहस्यात्मक भी हो सकता है, जिसके निदान में चिकित्सकों को भी कठिनाई होती है। सूर्य अस्थियों का कारक है, अतः बीमारी अस्थियों को भी प्रभावित कर सकती है। इसमें अस्थिमज्जा नामक पदार्थ के अनुपात में कमी आ सकती है।

षष्ठे शनौ सगुलिके रव्यारफणिवीक्षिते ।
शुभैर्न दृष्टे युक्ते वा श्वासकासक्षयादियुक् ।।१०६।।

यदि षष्ठ भाव में शनि + गुलिक की युति हो, उस पर सूर्य, मंगल तथा राहु की दृष्टि हो, साथ ही शुभ ग्रहों की दृष्टि-युति न हो तब जातक को श्वास-कास तथा क्षय आदि रोग होते हैं।।१०६।।

जलराशिगते चन्द्रे षष्ठे तद्भवनाधिपे ।
जलर्क्षस्थविदा दृष्टे मूत्रकृच्छ्रादिकम्भवेत् ।।१०७।।

यदि षष्ठ भावगत चन्द्रमा जलचर राशियों (कर्क-वृश्चिक-कुम्भ-मीन) में से किसी में हो तथा षष्ठेश भी जलचर राशि में होकर बुध से दृष्ट हो तो जातक को मूत्रकृच्छ्र आदि रोग होते हैं।।१०७।।

विशेष— इस श्लोक में मूत्रकृच्छ्रादिक शब्द का प्रयोग हुआ है। मूत्रकृच्छ्र का अर्थ कष्ट के साथ पेशाब आना होता है। अत: 'आदि' शब्द से निम्नलिखित विकार समझना चाहिये—

मूत्रकृच्छ्र— इस रोग में पेशाब में जलन तथा दर्द होता है । यह एक लक्षण है, जो कि मूत्रनलिकाप्रदाह या मूत्रनलिकाशोथ के कारण होता है।

अष्ठीलाग्रन्थिशोथ (पौरुषग्रन्थिप्रदाह)— इस व्याधि में भी मूत्रत्याग में पीड़ा होती है।

मूत्राशयप्रदाह— इस रोग में मूत्रत्याग करने के तुरन्त बाद पीड़ा प्रारम्भ होती है, जो कुछ देर तक बनी रहती है।

मूत्रप्रवाहिका— इसमें धीरे-धीरे, रुक-रुक कर कष्ट के साथ मूत्र उतरता है। यह बिन्दुमूत्रता भी कहलाता है।

सुजाक— इस रोग में प्रस्राव के साथ में पूय (पीव) आता है।

वृक्क प्रदाह— गुर्दे की सूजन में भी पेशाब का कष्ट हो सकता है।

मूत्राघात— इसमें पेशाब रुक जाता है।

मूत्रक्षय— इसमें पेशाब कम बनता है।

मूत्रसाद— इसमें मूत्र गाढ़ा होता है।

रक्तमेह—इसमें रक्तमिश्रित प्रस्राव (पेशाब) आता है।

अन्य मूत्ररोगों के लक्षण भी इस ग्रहस्थिति में प्रकट हो सकते हैं।

षष्ठे चन्द्रे शनौ रन्ध्रे व्यये पापे विलग्नपे ।
पापांशकसमायुक्ते पीनसं रोगमादिशेत् ।।१०८।।

यदि छठे भाव में चन्द्रमा, अष्टमभाव में शनि, द्वादशभाव में कोई भी पापग्रह तथा लग्नेश पाप नवांश में हो तो इस योग में पीनस रोग होता है।।१०८।।

पीनसरोग— इसे अपीनस भी कहते हैं। यह नाक की बीमारी है। इसके पुराना पड़ने पर नाक से दुर्गन्ध आने लगती है। पुराने जुकाम के बाद यह रोग होता है; अत: इस रोग से आजकल की निम्न बीमारियों का अर्थ प्रकट होता है— अपीनस, पूतिनस्य, नासापाक, पूयरक्त, क्षवथु, भ्रंशथु, नासादीप्ति तथा कृमिज प्रतिश्याय ।

बलहीनेऽरिनाथे वा लग्नस्थे वा धरासुते ।
मूर्धार्तिर्मुखरोगो वा गुल्मविद्रधिभाग्भवेत् ।।१०९।।

यदि षष्ठेश निर्बल होकर लग्न में हो अथवा मंगल लग्न में हो तब शिर में पीड़ा, मुखरोग, गुल्म तथा विद्रधि आदि रोग होते हैं।।१०९।।

मूर्धार्ति— इसका अर्थ शिरोरोग से है, शिरोरोग ग्यारह प्रकार के होते हैं—

शिरोरोगास्तु जायन्ते वातपित्तकफैस्त्रिभिः ।
सन्निपातेन रक्तेन क्षयेण कृमिभिस्तथा ।।
सूर्यावर्तानन्तवाताऽर्धावभेदकशंखकैः ।

(माधव-निदान- ६०.१)

मुखरोग— मुखरोगों के अन्तर्गत ओष्ठरोग, दन्तवेष्टगत रोग (शीताद, प्रशीताद, दन्तपुप्पुट, सौषिर, दन्तवेष्ट, उपकुथ, दन्तनाडी, दन्तशूल, क्रिमिदन्त, दन्तहर्ष, दन्तशर्करा, जिह्वाशोथ, कण्ठशुण्ठी, अध्रुष, तालुपाक, रोहिणी, कण्ठशालूक, गलौघ, स्वरघन मुखपाक आदि रोग आते हैं।

गुल्म— माधव-निदान (२८.१-२) के अनुसार गुल्मरोग का लक्षण एवं भेद निम्न हैं—

हृन्नाभ्योरन्तरे ग्रन्थिः सञ्चारी यदि वाऽचलः ।
वृत्तश्रयापचयवान् स गुल्म इति कीर्तितः ।।
सव्यस्तैः जायते दोषैः समस्तैरपि चोच्छ्रितैः ।
पुरुषाणां तथा स्त्रीणां ज्ञेयो रक्तेन चापरः ।।

अर्थात् हृदय एवं नाभि के मध्य चल अथवा अचल घटने-बढ़ने वाली गोल गाँठ 'गुल्म' कहलाती है। यह पुरुषों तथा स्त्रियों में वातज गुल्म, पित्तज गुल्म, कफज गुल्म तथा त्रिदोषज गुल्म के रूप में चार प्रकार का होता है। स्त्रियों में एक रक्तज गुल्म विशेष होता है।

वातज गुल्म को वायगोला अथवा बावगोला भी कहते हैं। यह मिथ्यार्बुद होता है। अन्य प्रकार के गुल्मों को आधुनिक चिकित्सक कोषार्बुद कहते हैं। ये कई प्रकार के हुआ करते हैं।

विद्रधि— अस्थि में या त्वचा, रक्त, माँस एवं मेद को दूषित करके धीरे-धीरे अधिक उभांर वाले, बड़ी गहराई तक जमे हुए पीड़ाकारक गोल सूजन को विद्रधि कहते हैं। यह छः प्रकार की होती है— वातज, पित्तज, कफज, त्रिदोषज, क्षतज तथा रक्तज।

त्वक्-रक्त-मांस-मेदांसि सन्दूष्यास्थिसमाश्रिताः ।
दोषाः शोथं शनैर्घोरं जनयन्त्युच्छ्रिता भृशम् ।।
महामूलं रुजावन्तं वृत्तं वाऽप्यथवाऽऽयतम् ।
सविद्रधिरिति ख्यातो विज्ञेयः षड्विधश्च सः ।।
पृथग्दोषैः समस्तैश्च क्षतेनाप्यसृजा तथा ।
षण्णामपि हि तेषां तु लक्षणं सम्प्रवक्ष्यते ।।

(माधवनिदान- ४०.१-३)

षष्ठेश्वरस्थितांशेशे रव्यादौ हि तथा भवेत् ।
फलं पूर्वोक्तमप्यत्र क्रमात्तस्य विनिर्दिशेत् ।।११०।।

षष्ठेश अधिष्ठित नवांश का स्वामी रव्यादि ग्रहों में से जो भी हो, उस ग्रह की वातादि प्रकृति के अनुसार लक्षणों वाला रोग (श्लोक १०९ के अनुसार) होता है॥११०॥

शत्रुपीडाकरयोगाः

शत्रुस्थानाधिपे केन्द्रे पापग्रहनिरीक्षिते ।
षष्ठे वा पापबाहुल्ये शत्रुपीडां विनिर्दिशेत् ।।१११।।

यदि शत्रुस्थान का स्वामी (षष्ठेश) केन्द्र में बैठा हो तथा उस पर पापग्रहों की दृष्टि हो अथवा षष्ठेश षष्ठ भाव में ही बहुत से (दो से अधिक) पापग्रहों के साथ बैठा हो तो भी जातक को शत्रु के द्वारा पीड़ा होती है॥१११॥

लग्नेशे शत्रुराशिस्थे तदीशे लग्नमाश्रिते ।
मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते शत्रुपीडां विनिर्दिशेत् ।।११२।।

यदि लग्नेश शत्रुस्थान की राशि में बैठा हो (छठे भाव में हो) तथा षष्ठेश लग्न में बैठा हो अर्थात् लग्नेश तथा षष्ठेश का आपस में स्थानविपर्यय (व्यत्यय) हो और उनमें से कोई भी अथवा दोनों ही शनि, गुलिक एवं राहु से युक्त हों तो जातक को शत्रुपीड़ा कहनी चाहिये॥११२॥

पापग्रहेण सन्दृष्टे बलहीनेऽरिनायके ।
पापान्तरगते वाऽपि शत्रुपीडां विनिर्दिशेत् ।।११३।।

यदि अरिनायक (षष्ठेश) पापग्रहों से युक्त होकर बलहीन हो या पापग्रहों के बीच में हो तो इन दोनों ही स्थितियों में जातक को शत्रुपीड़ा होती है— ऐसा निर्देश करना चाहिये॥११३॥

पापान्तरगत— जब किसी ग्रह या भाव के आगे (द्वितीय भाव में) तथा पीछे (द्वादश भाव में) कोई पापग्रह बैठते हैं, तब उसे पापमध्यत्व या पापकर्तरी कहते हैं। इस योग में यदि आगे वाला ग्रह वक्री तथा पीछे वाला मार्गी हो तो फल अधिक उग्र होता है।

शत्रुनाशनयोगाः

शत्रुस्थानाधिपे दुःस्थे नीचमूढारिसंयुते ।
लग्नेशे बलसंयुक्ते शत्रुनाशं वदेद्बुधः ।।११४।।

यदि षष्ठेश दुष्ट स्थान में नीच राशिगत, अस्तंगत या शत्रुग्रहों से युक्त हो तथा

लग्नेश बलवान हो तो शत्रु का नाश होता है। अर्थात् जातक के शत्रु नष्ट-भ्रष्ट तथा पराजित होते हैं॥११४॥

शुभग्रहेण सन्दृष्टे शत्रुस्थानाधिपे यदा ।
शुभान्विते शुभक्षेत्रे तेन मैत्रीं वदेद्बुधः ।।११५।।

जब षष्ठेश शुभ ग्रह से दृष्ट हो या शुभ ग्रहों से युक्त हो तथा शुभ भाव में (केन्द्र-त्रिकोण में) बैठा हो तब शत्रु जातक से मैत्री कर लेगा अर्थात् शत्रु से सन्धि (राजीनामा) हो जायेगा— ऐसा बताना चाहिये॥११५॥

लग्नेशाद् बलहीने तु शत्रुस्थानाधिपे यदा ।
शुभान्विते शुभैर्दृष्टे शत्रूणां मैत्रमादिशेत् ।।११६।।

इसी प्रकार जब लग्नेश से षष्ठेश निर्बल हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तब भी ऐसे योग में जातक के शत्रुगण शत्रुता को छोड़कर मैत्रीभाव अपना लेते हैं— ऐसा बताना चाहिये। इस प्रकार के योग में जातक के शत्रु शान्त रहते हैं॥११६॥

ज्ञातिपीडामाह

लग्नेशेऽष्टमभावस्थे षष्ठेशेन निरीक्षिते ।
तौ वा विलग्नभावस्थौ ज्ञातिपीडां विनिर्दिशेत् ।।११७।।

यदि लग्नेश आठवें भाव में बैठा हो तथा षष्ठेश की दृष्टि उस पर हो तो ज्ञातिपीड़ा (निकट के लोगों, विरादरी के लोगों से मतभेद आदि) होती है। यदि लग्नेश एवं षष्ठेश दोनों ही लग्न में बैठे हों तो भी जाति वालों, नाते-रिश्तेदारों से अनबन रहती है॥११७॥

गुरुशुक्रौ विलग्नस्थौ षष्ठभावेश्वरान्वितौ ।
शन्यारफणिसन्दृष्टौ ज्ञातिपीडां विनिर्दिशेत् ।।११८।।

यदि गुरु तथा शुक्र दोनों ही लग्न में षष्ठेश के साथ बैठे हों, उन पर शनि-मंगल तथा राहु की दृष्टि हो तो इस प्रकार के योग में ज्ञातिसुख नहीं मिलता । जातक तथा उसकी विरादरी दोनों ही एक-दूसरे से अप्रसन्न रहते हैं॥११८॥

ज्ञातिसौख्ययोगः

लग्नाधिपे शुभयुते षष्ठे चन्द्रेऽथ वा शुभे ।
केन्द्रत्रिकोणगे सौम्ये ज्ञातिभिः सह जीवनम् ।।११९।।

यदि लग्नेश शुभ ग्रहों से युक्त हो तथा छठे भाव में चन्द्रमा बैठा हो अथवा कोई शुभ ग्रह बैठा हो, साथ ही बुध केन्द्र या त्रिकोण स्थानों में कहीं पर भी बैठा हो तो बिरादरी वालों के साथ सहजीवन होता है अर्थात् जातक मेल-मिलाप से रहता है॥११९॥

ज्ञातिबाहुल्यमाह

ज्ञातयो बहवः सन्ति षष्ठेशे देवपूजिते ।
शुभान्विते शुभैर्दृष्टे मृद्वंशादिसमन्विते ।।१२०।।

यदि गुरु षष्ठेश होकर शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो तथा मृद्वंशादि शुभ षष्ट्यंश में हो तो जातक के ज्ञाति की बहुलता होती है अर्थात् नाते-रिश्तेदारों की संख्या अधिक होती है॥१२०॥

ज्ञातिक्षययोगमाह

ज्ञातिक्षयं विजानीयात् षष्ठेशे पापसंयुते ।
क्रूरांशनीचमूढादौ शुभदृग्योगवर्जिते ।। १२१।।

षष्ठेश पापयुक्त होकर क्रूरांशक में हो तथा नीच, अस्त आदि दोषों से युक्त हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तब ज्ञातिक्षय होता है अर्थात् नाते-रिश्तेदारों, बिरादरी आदि की हानि होती है॥१२१॥

ज्ञात्युत्कर्षमाह

पारावतादिभागस्थे लग्नेशे शुभवीक्षिते ।
ज्ञातीशे बलहीने वा तस्मादुत्कर्षतां व्रजेत् ।।१२२।।

यदि लग्नेश शुभयुक्त या दृष्ट होकर पारावतादि भागों में हो तथा ज्ञातीश (चतुर्थेश) निर्बल हो तो ज्ञाति (बिरादरी) की उत्कर्षता (उन्नति) होती है॥१२२॥

चौराग्निभययोगः

भाग्येशे षष्ठराशिस्थे षष्ठेशेन निरीक्षिते ।
षष्ठेशे मन्दभौमाभ्यां युते चौराग्निपीडनम् ।।१२३।।

यदि नवमेश षष्ठ भाव में अवस्थित हो और उस पर षष्ठेश की दृष्टि हो तथा षष्ठेश की युति शनि तथा मंगल के साथ हो तब जातक को चोर (डाकू-तस्कर-जेबकतरे) तथा अग्नि (बिजली आदि) से पीड़ा होती है॥१२३॥

ज्ञात्युपकारकयोगः

तदीशे गोपुरांशादौ दिवसेशेन वीक्षिते ।
लग्नेशे बलसम्पूर्णे ज्ञातीनामुपकारकृत् ।।१२४।।

यदि षष्ठेश गोपुरांशादि में सूर्य से दृष्ट हो तथा लग्नेश पूर्ण बलवान हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक अपनी ज्ञाति का अत्यधिक उपकार (कल्याण) करने वाला होता है॥१२४॥

उपदंशप्रिययोगः

षष्ठे सौम्ये शुभैर्दृष्टे तदीशे शुभसंयुते ।
पापग्रहाणां मध्यस्थे सूपदंशप्रियो भवेत् ।।१२५।।

यदि छठे भाव में बुध शुभ ग्रह से दृष्ट हो तथा षष्ठेश शुभ ग्रहों से युक्त हो; साथ ही उस पर पापकर्त्तरी योग भी बनता हो तो इस योग में उत्पन्न जातक की रुचि उपदंश खाने में अधिक होती है।।१२५।।

उपदंशप्रियो नित्यं षष्ठे जीवे शशाङ्कजे ।
क्षेत्रे तयोर्वा सम्प्राप्ते मृद्वंशादिसमन्विते ।।१२६।।

यदि छठे भाव में बुध तथा गुरु बैठे हों अथवा षष्ठेश उनकी राशि में होकर मृद्वंशादि में हो तब भी जातक उपदंशप्रिय होता है।।१२६।।

उपदंश— अचार, चटनी, गरम मसाला आदि रुचिकारक पदार्थों को उपदंश कहते हैं। जिस जातक की इनके सेवन में अधिक रुचि होती है, उसे उपदंशप्रिय कहा गया है। उपदंश का अर्थ 'स्वाद' भी होता है।

मधुरादिप्रिययोगाः

देवेज्ये षष्ठभावेशे शुक्रे वा तस्य नायके ।
मधुरादिप्रियो नित्यं गोपुराद्यंशकान्विते ।।१२७।।

यदि गुरु षष्ठेश होकर अथवा शुक्र षष्ठेश होकर गोपुरांशादि में स्थित हों तो जातक मिष्टान्नप्रिय होता है।।१२७।।

शुक्रे षष्ठे ससौम्ये वा शुभदृष्टे शुभांशके ।
बलान्विते शुभांशस्थे नित्यं मधुरभाग्भवेत् ।।१२८।।

यदि षष्ठ भाव में शुक्र बुध के साथ बैठा हो अथवा शुभ ग्रहों के नवांश में या बलवान होकर पारावतांशादि में हो तो जातक नित्य-प्रति मधुर भोजन (मीठे पदार्थ) करने वाला होता है।।१२८।।

विशेष— गुरु तथा शुक्र दोनों मधुर भोजी ग्रह हैं; अतः उनका षष्ठ से सम्बन्ध जातक को मधुरप्रिय बनाता है।

अम्लप्रिययोगाः

पापग्रहेण सन्दृष्टे बुधे मधुरवर्जितम् ।
बुधेन युक्ते शुक्रेऽरौ त्वम्लभाक् स नरो भवेत् ।।१२९।।

यदि बुध पापग्रहों से दृष्ट (छठे घर में बैठा हुआ) हो तो जातक की मधुर भोजन में रुचि नहीं होती है। यदि बुध-शुक्र की युति हो तो जातक को अम्ल भोजन (खट्टा) अच्छा लगता है।।१२९।।

षष्ठे शुक्रे भौमदृष्टे भौमे शुक्रे तदन्विते ।
दिवसेशेन वा दृष्टे त्वम्लभाक् स नरो भवेत् ।।१३०।।

यदि छठे भाव में बैठा शुक्र मंगल से दृष्ट हो अथवा युत हो अथवा षष्ठगत शुक्र पर सूर्य की दृष्टि हो तो भी जातक अम्ल पदार्थों का शौकीन होता है।।१३०।।

विप्रलम्भयोगाः

षष्ठेशे भौमसन्दृष्टे राहुकेतुनिरीक्षिते ।
भौमक्षेत्रगते वापि विप्रलम्भादि चौर्यभाक् ।।१३१।।

यदिं षष्ठेश पर मंगल की दृष्टि के साथ राहु, केतु की भी दृष्टि हो अथवा षष्ठेश मंगल की राशि में हो तो इन स्थितियों में जातक विप्रलम्भी होता है। वह दूसरों को परेशान करने में रुचि लेता है।।१३१।।

पुत्रादिभावानां रोगादिफलकथनम्

पुत्रादीनामिदं योज्यं तत्तद् भावप्रकारकैः ।
नास्तिकाय न वक्तव्यं वक्तव्यं सुजनाय वै ।। १३२।।

इसी प्रकार से रोग, शत्रु, ऋण आदि का भी विचार पुत्रादि अन्य भावों से करना चाहिये और उन सम्बन्धियों के बारे में फल कहना चाहिये; परन्तु यह फलादेश केवल सज्जनों को ही बताना चाहिये; नास्तिकादि को नहीं।।१३२।।

षष्ठभाव का व्यापक कारकत्व

इस अध्याय के ६८वें श्लोक में षष्ठ भाव का कारकत्व संक्षिप्त में वर्णित है। नीचे इस भाव से व्यापक विचार हेतु कारकत्व दिया जा रहा है; जिसका उपयोग फलादेश में करना चाहिये—

रोग, विघ्न, झगड़ा, मामा (माता का भाई), कफ, शरीर के अङ्गों की गाँठें, उग्र कर्म, उन्माद, फोड़ा-फुंसी, शत्रु, शत्रुता, कञ्जूसी, रोग, उपदंश (फिरंग) का व्रण, अन्न, श्रम्, ऋण, बदनामी, अपयश, शत्रु का सन्तोष, क्षयरोग, उष्णता, व्रण, मानसिक चिन्ता, बहुतों से द्वेष, जीर्ण नेत्ररोग, भिक्षाटन, विकाल-भोजन, कलाभ्रष्टता, सपिण्डों की शत्रुता, लाभ, परिश्रम, विष, अतिशूल, पैरों की निगड़ (बेड़ी), अपने सम्मान की रक्षा, मूत्ररोग, अतिसार, षड्रस भोजन, विशेष निन्दा, दास, चोरी, विपत्ति, कारागार, सहोदरादि से कलह— इन सबका विचार छठे भाव से करणीय है। जैसा कि उत्तरकालामृत-(१.५.१-१२) में कहा गया है—

रोगो विघ्नरणाप्तिमातुलकफग्रन्थ्युग्रकर्मणि ।
चोन्मादस्फोटशत्रुवैरकृपणत्वास्वास्थ्यमेहव्रणाः ।।

अन्नायासऋणापवादरिपुसन्तोषक्षयोष्णक्षता:
चित्तक्लेशबहुव्यथे बहुजनद्वेषोऽनिशं नेत्ररुक् ।
भिक्षादानमकालभोजनकलाभ्रंशा: सपिण्डारिभि:
लाभायासविषार्तिशूलनिगडा: स्वीयं यशोरक्षणम् ।।
मूत्रव्याध्यतिसारषड्रसविनिन्दादासचोरविपत् ।
कारागेहसहोदरादिकलहा: स्यु: षष्ठभावादिमे ।।

अध्यायोपसंहारः

अध्यायः पञ्चमः प्रोक्तः पञ्चषड्भाववाचकः ।
विचित्रार्थसमायुक्तो वेङ्कटेशेन धीमता ।।१३३।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ पञ्चमषष्ठभावफलविचारो
नाम पञ्चमोऽध्यायः ।।५।।

श्री वेङ्कटेश द्वारा इस पञ्चम अध्याय में पाँचवें एवं छठे भाव का फल विचित्र अर्थ-गाम्भीर्ययुक्त शैली में कहा गया है।।१३३।।

इस प्रकार आचार्य पं गुरुप्रसाद गौड़कृत सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ की
सर्वार्थबोधिनी हिन्दी टीका में पाँचवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।५।।

◆

अथ षष्ठोऽध्याय:

सप्तमभावफलविचाराध्याय:

तत्रादौ सप्तमभावाद्विचारणीयान्. विषयानाह

युवतिपदादुद्वाहं भार्यापतिसूपदधिगुडक्षीरम् ।
आगमगमनमदार्तिं ब्रूयान्मूत्राशयं च नष्टधनम् ।।१।।

सप्तम भाव से विवाह, पति, पत्नी, सूप (पकी हुई दाल), दही, गुड, दूध. आना-जाना, कामेच्छा, मूत्राशय तथा नष्ट धन (चोरी आदि में गया या खोया हुआ) का विचार करना चाहिये।।१।।

सूप- - संस्कृत भाषा का 'सूप' शब्द ऐसे अर्ध ठोस पेय पदार्थ के लिये प्रयुक्त होता है; जिसमें लवण, अम्ल, कटु रसों का स्वाद होता है। सुखपूर्वक जिसे पी लिया जाय, उसे सूप कहा जाता है। इसकी व्याख्या शब्दकोशों में इस प्रकार है—

सुखेन पीयत इति सूप: = (सु + पा + घञर्थे क— वृषोदरादिगण)।

अत: पकी हुई पतली दाल, कढ़ी तथा सब्जी— ये सभी सूप कहलाते हैं। सूप मांस से भी निर्मित होता है। यह शब्द अंग्रेजी तथा यूरोप की अन्य भाषाओं में ज्यों का त्यों प्रचलित है। इसे Soup लिखा जाता है। पालि भाषा में भी इसे सूप ही लिखते हैं। प्राकृत तथा अपभ्रंश में इसे क्रमश: सूब तथा सूअ कहते हैं।

सप्तम भाव का विस्तृत कारकत्व— उत्तरकालामृत तन्त्र में सप्तम भाव का कारकत्व विस्तार से वर्णित है—

उद्वाहव्यभिचारकामुकजयानष्टाङ्गना द्वेषता
मार्गभ्रंशसुगन्धगीतकुसुमा मृष्टान्नपानादिकम् ।।
तामबूलञ्च प्रयाणभङ्गदधिविस्मृत्यम्बराद्यागमो
रेतोभर्तृपवित्रदारयुगलं गुह्यं च मूत्रं गुद: ।
वाणिज्यञ्च तथा पयोमधुरसौध:सूपैकाज्याशनम्
दानं शौर्यविनष्टशत्रुविजयास्थानान्तरस्थं धनम् ।।
वादो मैथुनदत्तपुत्रघृतजा स्वीयान्यदेशे तथा ।
जाया मन्मथजं रहस्यमखिलं चौर्यं वदेत्सप्तमात् ।।

सप्तमस्थग्रहाणां फलम्

शुक्रे कलत्रे त्वतिकामुकः स्याद्बुधेऽन्ययोषानिरतो गुरौ तु ।
स्वदारसक्तो दिननाथपुत्रे कुदाररम्यः सुपतौ सुदारः ।।२।।

यदि सप्तम भाव मे शुक्र हो तो जातक अतिकामुक होता है। यदि बुध सप्तमस्थ हो तो जातक परस्त्रीनिरत रहता है। गुरु हो तो अपनी पत्नी में आसक्त रहता है। यदि शनि सप्तम भाव में बैठा हो तो जातक कुदार (दुश्चरित्र स्त्री) में आसक्त होता है; परन्तु यदि सप्तमेश शुभ ग्रह हो तो वह सदाचार वाली स्त्री होती है।।२।।

कुजे बहुस्त्रीषु रतः कुलघ्नो भानौ कुटुम्बी बहुदारसक्तः ।

यदि सप्तम में मंगल हो तो जातक बहुत-सी पत्नियों का पति होकर भी कुलघ्नकारी स्त्री में आसक्त होता है। यदि सप्तम में सूर्य हो तो बड़े कुटुम्ब वाला तथा अनेक स्त्रियों में आसक्त होता है।

व्यभिचारयोगाः

लग्नस्थिता वित्तकलत्रशत्रुनाथाः सशुक्रा यदि पापयुक्ताः ।।३।।

यदि लग्न में द्वितीयेश, सप्तमेश, षष्ठेश तथा शुक्र पापग्रहों के साथ अवस्थित हों तो जातक परस्त्रीरत तथा कुमार्गगामी होता है (जातकपारिजात में इन ग्रहों को लग्न में बैठने की शर्त नहीं लिखी गई है। उसके अनुसार वे कहीं भी पापयुत हों— इतना ही काफी है)।।३।।

जातः परस्त्रीषु रतः कुमार्गी शुभेक्षितश्चेन्न तथा भवेच्च ।
लग्नारिपौ पापयुतौ यदि स्याज्जातः परस्त्रीषु रतः कुमार्गी ।।४।।

यदि लग्नपति तथा अरिप (षष्ठेश) दोनों ही पापयुत हों तो भी जातक परदाररत तथा कुमार्गी होता है।।४।।

लग्नेश्वरे शत्रुकुटुम्बनाथे पापैर्युते वा यदि दारराशौ ।
सौरो सपापे यदि दारनाथे जातः परस्त्रीषु रतः कुटुम्बे ।।५।।

यदि लग्नेश्वर, शत्रुस्थानपति तथा कुटुम्बेश (द्वितीयेश) पापग्रहों से युक्त होकर सप्तम भाव में स्थित हों अथवा यदि सप्तमेश तथा शनि पापग्रहों से युक्त हों तो जातक परदाररत होता है।।५।।

सराहुकेतौ यदि दारनाथे पापेक्षिते वा व्यभिचारयोगः ।
कर्मेशवित्तेशकलत्रनाथा मानस्थिता जारमुदाहरन्ति ।।६।।

यदि कुटुम्बस्थान में (द्वितीय में) सप्तमेश राहु या केतु के साथ बैठा हो, पापग्रहों से दृष्ट हो तो व्यभिचार योग होता है। इसी प्रकार यदि दशमेश, द्वितीयेश, सप्तमेश दशम में हों तो ऐसा जातक जार (व्यभिचारी) होता है।।६।।

पुनश्च परदाररतयोगमाह

एको ग्रहस्तेषु चतुर्थराशौ जातः परस्त्रीगमनं प्रयाति ।

यदि पूर्व में कथित द्वितीयेश, सप्तमेश तथा दशमेश में से एक भी ग्रह चतुर्थ भाव में हो तो जातक परस्त्रीगामी होता है।

विशेष— द्वितीयेश धन का स्वामी, सप्तमेश कामशक्ति का प्रतीक तथा दशमेश मान-सम्मान-अधिकार का द्योतक होता है। चतुर्थ स्थान जनता का होता है; अतः इनका सम्बन्ध यदि चतुर्थ से होता है तो जातक व्यभिचारी हो जाता है।।

अनपत्ययोग-जारपुत्रयोगाँश्चाह

पुत्रेश्वरे जारपतौ बलाढ्ये दृष्टे युते वा त्वरिनायकेन ।।७।।
जातोऽनपत्यो यदि तत्कलत्रे जारात्सुतः स्याच्छुभखेटदृष्टे ।
दारेश्वरे पापयुते कुटुम्बे भौमेन दृष्टे यदि जारपुत्रः ।।८।।

यदि पञ्चमेश तथा सप्तमेश बलाढ्य हों तथा षष्ठेश से दृष्ट वा युत हों तो जातक निःसन्तान होता है। यदि ये ग्रह सप्तम में स्थित हों तथा उन पर शुभ दृष्टि भी हो तो जार से सन्तति उत्पन्न होती है। यदि सप्तमेश किसी पापग्रह के साथ द्वितीय भाव में स्थित हो तथा उस पर मंगल की दृष्टि भी हो तो भी जार से सन्तति उत्पन्न होती है।।७-८।।

बहुदारयुतेऽप्यपुत्रयोगः

धीधर्मनाथौ सकलत्रनाथौ दुःस्थानगौ हीनबलौ शुभैर्न ।
दृष्टे सुते दारबहुत्वयोगे त्वपुत्रयोगं मुनयो वदन्ति ।।९।।

यदि पञ्चमेश, नवमेश तथा सप्तमेश— ये तीनों दुःस्थान में स्थित हों, निर्बल होकर शुभ ग्रहों से दृष्ट न हों तो इस योग में जातक के बहुत-सी स्त्रियों को होते हुए भी पुत्र का अभाव होता है। ऐसा मुनिजनों का कथन है।।९।।

विशेष— ६-८-१२ स्थान दुःस्थान कहलाते हैं।

पुनश्च परस्त्रीरतयोगाः

क्षीणे शशाङ्के यदि पापयुक्ते दारस्थिते त्वन्यकलत्रगामी ।
लग्ने सपापे यदि दारनाथे जातः परस्त्रीषु रतः कुमार्गी ।।१०।।

इस श्लोक में दो योग बताए गए हैं—

१. यदि क्षीण चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त होकर सप्तम भाव में स्थित हो तो जातक परस्त्रीगामी होता है।

२. यदि सप्तमेश पापग्रहों के साथ लग्न में हो तो भी जातक परस्त्रीरत होता है तथा कुमार्गी होता है।।१०।।

भार्यामृतिकथनम्

सुतेशे दारभं याते तदीशे पापसंयुते ।
शुक्रो बलविहीनश्चेद् गर्भेण स्त्रीमृतिर्भवेत् ।।११।।

यदि पञ्चमेश सप्तम भाव में बैठा हो तथा सप्तमेश पापग्रहों से युत हो, शुक्र निर्बल हो तो ऐसे योग में जन्म लेने वाले जातक की पत्नी की मृत्यु गर्भावस्था या प्रसूतावस्था में हो जाती है।।११।।

नीचे भृगौ वा यदि वा शशाङ्के नीचस्थितेऽत्राम्बुनि दारहानिः ।
उद्बन्धनात् तन्मरणं वदन्ति दारेश्वरे पाशभुजङ्गमाख्ये ।।१२।।
द्रेष्काणभागे विषभक्षणाद्वा मान्द्यन्विते दारपतौ सराहौ ।

यदि शुक्र नीच राशिस्थ (कन्या में) हो या फिर चन्द्रमा नीच राशि (वृश्चिक) में स्थित हो तो जातक की पत्नी की मृत्यु जल में डूबने से होती है।

यदि सप्तमेश पापद्रेष्काण, भुजङ्गद्रेष्काण में हो तो उसकी पत्नी का मरण उद्बन्धन (फाँसी लगाकर मरना) से होता है अथवा सप्तमेश राहु तथा मान्दि के साथ हो तो पत्नी की मृत्यु विषभक्षण से होती है।।१२।।

विशेष— चन्द्र तथा शुक्र दोनों ही स्त्री-कारक तथा जल-कारक ग्रह हैं।

स्त्रीसंख्याकथनम्

स्वर्क्षे कुटुम्बाधिपतौ कलत्रनाथे यदा त्वेककलत्रभाक् स्यात् ।।१३।।

यदि द्वितीयेश तथा सप्तमेश दोनों ही स्वराशियों (स्व-गृहों) में हों तो जातक की एक पत्नी होती है।।१३।।

ताभ्यां समेतैर्ग्रहनायकैर्वा कलत्रसंख्याम्प्रवदन्ति सन्तः ।
कलत्रनाथस्थितराशिनाथसंयुक्तखेटैरपि वाच्यमेतत् ।।१४।।

द्वितीयेश, सप्तमेश के साथ जितने ग्रह हों, उनके बलानुसार स्त्रीसंख्या विद्वान् लोग कहते हैं। अथवा सप्तमेश जिस ग्रह की राशि में हो, उसके साथ जितने ग्रह हों, उनसे भी स्त्री-संख्या बतानी चाहिये।।१४।।

बहुभार्यायोगः

कलत्रेशे बहुगुणे तुङ्गवक्रादिहेतुभिः ।
बहुभार्यं नरं विद्यादुदयर्क्षगतेऽपि वा ।।१५।।

यदि सप्तमेश उच्च, वक्रादि बहुत से गुणों से युक्त हो (अर्थात् दिग्बली, स्थानबली आदि हो) तो जातक की बहुत-सी स्त्रियाँ होंगी। सप्तमेश के लग्न में स्थित होने पर भी बहुभार्या योग होता है।।१५।।

द्विभार्यायोग:

भार्याद्वयं वदेत्तत्र लग्नेशे नाशराशिगे ।
कलत्रे पापसंयुक्ते कुटुम्बेशे तथाविधे ।।१६।।

यदि लग्नेश अष्टम में या द्वादश में हो तथा सप्तम एवं द्वितीय में पापग्रह हो तो जातक की दो भार्या होती है। इसी प्रकार द्वितीयेश भी नाशराशि (८-१२) में बैठा हो तो भी द्विभार्या योग होता है।।१६।।

स्त्रीमरणयोग:

शन्यारफणिसंयुक्ते कलत्रेशो यदा भवेत् ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि कलत्रमरणं वदेत् ।।१७।।

यदि सप्तमेश शनि एवं मंगल के साथ हो अथवा क्रूरषष्ट्यंश में हो तो जातक की पत्नी का मरण होता है।।१७।।

विवाहद्वययोगमाह

शुभग्रहेण संयुक्तः कलत्रेशेऽरिनीचगे ।
पापे कलत्रराशिस्थे विवाहद्वयमादिशेत् ।।१८।।

यदि सप्तमेश (कलत्रेश) शत्रुराशि एवं नीच राशि का होकर शुभ ग्रह से युक्त हो, सप्तम में पापग्रह हो तो जातक का दो विवाह कहना चाहिये ।।१८।।

विशेष— इस योग में जातक की दो स्त्रियाँ होती हैं।

पुनश्च विवाहद्वययोगमाह

कारके पापसंयुक्ते नीचराश्यंशकेऽपि वा ।
पापग्रहेण सन्दृष्टे विवाहद्वयमादिशेत् ।।१९।।

सप्तम भाव का कारक ग्रह पापग्रहों से युत हो अथवा नीच राशि, नीचनवांश में होकर पापग्रहों में दृष्ट हों तो जातक के दो विवाह होते हैं।।१९।।।

विवाहस्वरूपनिरूपणम्

कलत्रकारकश्चन्द्रो ज्ञो गुरुर्वाथ वा भृगुः ।
मध्ये बलिष्ठो यस्तेषां तस्मात्सर्वं निरूपयेत् ।।२०।।

सप्तम भाव का कारक चन्द्रमा, बुध, गुरु या शुक्र— इनमें जो सर्वाधिक बली हो, उसी से विवाह का स्वरूप निरूपित करना चाहिये।।२०।।

कलत्रान्तरयोगा:

कलत्रे वा कुटुम्बे वा पापदृग्योगसम्भवे ।
तदीशे बलहीने तु कलत्रान्तरभाग्भवेत् ।।२१।।

यदि सप्तम में या द्वितीय भाव में पापग्रहों की दृष्टि या योग हो, उन स्थानों के स्वामी निर्बल हों तो जातक दूसरी स्त्री वाला होता है॥२१॥

सप्तमे चाष्टमे पापे व्यये भूसुतसंयुते ।
अदृश्ये यदि नाथेन कलत्रान्तरभाग्भवेत् ।।२२।।

यदि सप्तम भाव तथा अष्टम भाव में पापग्रह हों एवं बारहवें में मंगल बैठा हो तथा इन भावों पर इनके स्वामियों की दृष्टि न हो तो द्वितीय पत्नी प्राप्त होती है॥२२॥

त्रिभार्यायोगा:

वित्ते पापबहुत्वे तु कलत्रे वा तथाविधे ।
तदीशे पापसन्दृष्टे कलत्रत्रयभाग्भवेत् ।।२३।।

यदि द्वितीय भाव में बहुत से पापग्रह हों या सप्तम में भी यही स्थिति हो, सप्तमेश पापग्रहों से युक्त-दृष्ट हो तथैव द्वितीयेश भी पापग्रहयुत-दृष्ट हो तो इस प्रकार की ग्रह-स्थिति में तीन विवाह होते हैं या तीन पत्नियाँ होती हैं॥२३॥

विशेष— यहाँ द्वितीय तथा सप्तम में पापबहुत्व का अर्थ दो पापग्रह होता है।

लग्ने कुटुम्बे दारे वा पापखेचरसंयुते ।
दारेशे नीचमूढादौ कलत्रत्रयभाग्भवेत् ।।२४।।

यदि लग्न द्वितीय तथा सप्तम भावों में पापग्रह बैठे हों तथा सप्तमेश नीच राशि में अस्तादि दोषयुक्त हो तो इस योग में जातक की तीन पत्नियाँ होती हैं॥२४॥

विशेष— इसमें एक की मृत्यु के बाद दूसरा विवाह सम्भव है।

पुनश्च कलत्रान्तरयोगा:

नीचमूढारिभावस्थे लग्नेशे दारपेऽथ वा ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि कलत्रान्तरभाग्भवेत् ।।२५।।

जब लग्नेश या सप्तमेश नीच राशि, अस्तंगत या क्रूर षष्ट्यंश में होता है तब अन्य स्त्री की प्राप्ति होती है॥२५॥

दारेशस्थनवांशेशे नीचमूढारिभांशके ।
पापान्तरे पापदृष्टे कलत्रान्तरभाग्भवेत् ।।२६।।

जब सप्तमेशस्थित नवांशेश नीच, मूढ़ या शत्रुनवांश में होकर पापग्रहों के मध्य तथा पापदृष्ट हो तो अन्य पत्नी की प्राप्ति होती है॥२६॥

कलत्रहायोग:

एवं कुटुम्बनाथेन कारकस्थांशपेन वा ।
पापान्तरे दारगृहे तन्नाथेऽपि कलत्रहा ।।२७।।

इसी प्रकार से द्वितीयेश तथा सप्तम स्थान के कारक के नवांशस्वामी से भी फल कहना चाहिये। यदि सप्तम भाव तथा सप्तमेश पापग्रहों के मध्य हों तो कलत्रहा (पत्नी-हन्ता) योग होता है। इस योग में जातक की पत्नी का निधन हो जाता है॥२७॥

पुनश्च बहुभार्यायोगः

लग्नेश्वरात् कर्मगते सोमपुत्रे बलान्विते ।
दारेशाद्विक्रमे चन्द्रे बहुस्त्रीसहितो भवेत् ।।२८।।

यदि लग्नेश की अपेक्षा अधिक बली होकर बुध कर्मस्थान (दशम भाव) में बैठा हो; सप्तमेश से तृतीय भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो वह जातक बहुत पत्नियों वाला होता है॥२८॥

पुनरपि बहुभार्यायोगानाह

व्ययार्थेशौ तृतीयस्थौ गुरुणा च निरीक्षितौ ।
भाग्यनाथेन वा दृष्टौ बहुस्त्रीसहितो भवेत् ।।२९।।

द्वितीयेश तथा द्वादशेश यदि तृतीय भाव में बैठकर गुरु द्वारा दृष्ट हो अथवा भाग्येश के द्वारा दृष्ट हो तो जातक बहुत स्त्रियों से युक्त होता है॥२९॥

केन्द्रत्रिकोणे दारेशे स्वोच्चमित्रस्ववर्गगे ।
कर्माधिपेन वा युक्ते बहुस्त्रीसहितो भवेत् ।।३०।।

यदि सप्तमेश केन्द्र या त्रिकोण में अपनी स्वराशि, उच्च राशि, मित्रराशि या स्वनवांश में हो या दशमेश से युक्त हो तो जातक बहुत स्त्रियों वाला होता है॥३०॥

लाभदारेश्वरौ युक्तौ परस्परनिरीक्षितौ ।
बलाढ्यौ वा त्रिकोणस्थौ बहुस्त्रीसहितो भवेत् ।।३१।।

यदि एकादशेश तथा सप्तमेश एक साथ हों अथवा परस्पर दृष्ट हों, बलवान हों या त्रिकोण में हों तो जातक बहुत स्त्रियों से समन्वित होता है॥३१॥

भाग्येशे दारराशिस्थे दारेशे सुखभं गते ।
भावेशे लाभनाथे वा केन्द्रे बहुकलत्रभाक् ।।३२।।

यदि नवमेश सप्तम भाव में हो, सप्तमेश सुखभाव में (चतुर्थ भाव में) हो, चतुर्थेश तथा एकादशेश केन्द्र में हों तो भी जातक बहुत स्त्रियों से युक्त होता है॥३२॥

शतस्त्रीयोगमाह

दारेशसंयुक्तनवांशनाथयुक्तांशनाथे सति सौम्ययुक्ते ।
पारावतांशादिगते बलाढ्ये जातः शतस्त्रीसहितो नरः स्यात् ।।३३।।

सप्तमेश जिस ग्रह के नवांश में हो, वह ग्रह शुभयुक्त शुभ नवांश में सौम्य ग्रहों

से युक्त होकर पारावतांशादिगत होकर बलाढ्य हो तो इस योग में उत्पन्न जातक सौ स्त्रियों वाला होता है॥३३॥

द्विशतस्त्रीयोगः

कुटुम्बनाथस्थितराशिनाथसंयुक्तषष्ट्यंशपतौ बलाढ्ये ।
मृद्वंशके गोपुरभागयुक्ते जातः शतस्त्रीद्विगुणेन युक्तः ।।३४।।

द्वितीयेश जिस ग्रह की राशि में बैठा हो, उसके षष्ट्यंश का स्वामी बलवान होकर उस ग्रह के साथ बैठा हो तथा मृद्वंशादि शुभ षष्ट्यंश में तथा गोपुर भाग में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक दो सौ स्त्रियों से युक्त होता है॥३४॥

शतत्रयस्त्रीयोगः

तत्कारकस्थांशपयुक्तराशिनाथस्थितांशाधिपतौ च केन्द्रे ।
मृद्वंशके गोपुरभागयुक्ते जातस्य वाच्या त्रिशती वधूनाम् ।।३५।।

सप्तम स्थान का कारक जिसके नवांश में हो, वह ग्रह भी जिसकी राशि में बैठा हो, वह ग्रह जिस नवांश में हो, वह केन्द्र में मृद्वंशक (षष्ट्यंश) या गोपुरांश में हो तो जातक तीन सौ स्त्रियों (वधुओं) से युक्त होता है॥३५॥

विशेष— इन योगों में भावेश के अनुसार भी इसी प्रकार का फल कहना चाहिये।

दशस्त्रीयोगः

दारेशे गोपुरांशस्थे कर्मेशे दारराशिगे ।
तथाविधे कुटुम्बेशे दशसंख्यकलत्रभाक् ।।३६।।

जब सप्तमेश गोपुरांशक में, दशमेश सप्तम भाव में एवं द्वितीयेश भी गोपुरांशक में हो तो दश स्त्रियाँ होती हैं॥३६॥

पुनः स्त्रीसंख्याकथनविधिः

एवं पुत्रादिभावानां कलत्रादिकमादिशेत् ।
दारेशे पापसंयुक्ते दारे वा पापसंयुते ।।३७।।

इसी प्रकार जातक के पुत्रादि भावों से सप्तम स्थानानुसार स्त्रियों की संख्या का कथन करना चाहिये॥३७॥

कुस्त्रीकयोगः

दारेशस्थांशपे पापे कुस्त्रीभाक् स नरो भवेत् ।
क्रूरषष्ट्यंशके दारनाथे कुस्त्रीयुतो भवेत् ।।३८।।

इस श्लोक में दो योग बताये गये हैं—

(१) यदि दारेश (सप्तमेश) का नवांशेश पापग्रह हो तो वह जातक कुस्त्रीक (बुरी पत्नी वाला) होता है।

(२) यदि सप्तमेश क्रूर षष्ट्यंश में हो तो भी जातक बुरी स्त्री वाला होता है।।३८।।

कुस्त्रीक— जिसकी पत्नी अवगुणों से युक्त दुष्ट स्वभाव की होती है, उस पति को कुस्त्रीक कहते हैं, वही कुदारभाक् तथा कुदारवान् होता है।

पुनश्च कुस्त्रीयुतो योग:

नीचांशे नीचसंयुक्ते दारनाथे च कारके ।
कुस्त्रीयुतो भवेज्जात: शुभदृष्टिविवर्जिते ।।३९।।

यदि सप्तमेश तथा सप्तम का कारक दोनों ही नीच राशि या नीचांश (अथवा दोनों में) हों, उन पर शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तो जातक कुस्त्रीयुत होता है।।३९।।

विशेष— इस प्रकार के योगों में तारतम्य के अनुसार फल होता है। यथा दारेश (सप्तमेश) तथा सप्तम कारक यदि दोनों ही बुरी स्थिति में होंगे तो जातक की पत्नी बहुत अधिक दुष्ट होगी। परन्तु यदि इन दोनों में कोई एक ही दु:स्थिति में हो तो वह कुछ कम बुरी होगी।

सत्कलत्रयोगा:

दारेशे शुभसंयुक्ते शुभखेचरवीक्षिते ।
शुभग्रहाणां मध्यस्थे सत्कलत्रादिभाग्भवेत् ।।४०।।

यदि सप्तमेश शुभ ग्रह से युक्त, शुभ ग्रहों के बीच तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तब जातक सत्कलत्र (श्रेष्ठ पत्नी) वाला होता है।।४०।।

दारेशे शुभराश्यंशे कारके वा तथाविधे ।
कर्मेशे बलसंयुक्ते सत्कलत्रसमन्वित: ।।४१।।

इसी प्रकार सप्तमेश तथा सप्तम भाव का कारक यदि शुभ ग्रहों की राश्यंश में हो तथा दशमेश बलवान हो तो भी जातक सत्कलत्र से समन्वित (श्रेष्ठ पत्नी वाला) होता है।।४१।।

स्वोच्चे मित्रे स्ववर्गे वा गोपुराद्यंशके भृगौ ।
षष्ट्यंशे मृदुभागस्थे सत्कलत्रसमन्वित: ।।४२।।

यदि शुक्र उच्च राशि (मीन में) मित्र राशि, स्ववर्ग (अपने होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवांशादि में) या गोपुरादि अंशकों में हो या मृद्वंश नामक षष्ट्यंश (शुभ षष्ट्यंश) में हो तो भी जातक श्रेष्ठ पत्नी वाला होता है।।४२।।

मृद्वंश— यह एक षष्ट्यंश का नाम है; परन्तु जितने शुभ षष्ट्यंश हैं, उन सबको भी मृदु + अंश = मृद्वंश समझना चाहिये।

पतिव्रतायोगाः

गुरुणा सहिते दृष्टे दारनाथे बलान्विते ।
कारके वा तथा भावे पत्नी व्रतपरायणा ।।४३।।

यदि सप्तमेश बली होकर गुरु से दृष्ट हो, इसी प्रकार सप्तम का कारक भी बली होकर गुरुदृष्ट या शुभदृष्ट हो तो जातक की पत्नी व्रतपरायणा (पतिव्रता) होती है।।४३।।

कलत्रेशे रवौ वापि भृगौ सौम्यनिरीक्षिते ।
गुरुयुते कलत्रे वा धर्मशीला पतिव्रता ।।४४।।

यदि सप्तमेश या सूर्य तथा शुक्र बुध से दृष्ट हों अथवा अन्य शुभ ग्रह से दृष्ट हों अथवा सप्तम भाव में गुरु हो तो पत्नी धर्मशीला तथा पतिव्रता होती है।।४४।।

कलत्राधिपतौ केन्द्रे शुभग्रहनिरीक्षिते ।
शुभांशे शुभराशौ वा पातिव्रतपरायणा ।।४५।।

यदि सप्तम भाव का स्वामी केन्द्र में बैठकर शुभ ग्रहों से दृष्ट हो, शुभ राशि, शुभांश (नवांश या षष्ट्यंश) में हो तो भी पत्नी व्रतपरायणा (पतिव्रता) होती है।।४५।।

व्रतपरायणा— व्रतपरायणा का अर्थ व्रतोपवास आदि में लगी रहने वाली भी होता है।

पापपरायणस्त्रीयोगः

कलत्रेशे रवौ वापि पापराश्यंशसंयुते ।
पापान्विते पापदृष्टे पत्नी पापपरायणा ।।४६।।

सप्तम भाव का स्वामी अथवा सूर्य पापग्रह की राशि पापनवांश में होकर पापदृष्ट तथा पापयुत हो तो पत्नी पापपरायणा (बुरे कर्मों में लगी रहने वाली) होती है।।४६।।

पतिभक्तियुक्तायोगः

भानौ कलत्राधिपतौ बलाढ्ये शुभान्विते शोभनराशिभागे ।
शुभग्रहेणापि निरीक्षिते वा लग्नेशमित्रे पतिभक्तियुक्ता ।।४७।।

यदि सूर्य व सप्तमेश दोनों बलवान हों, शुभ ग्रहों के साथ शुभ राशि शुभांशक में हो अथवा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो अथवा लग्नेश सप्तमेश में मैत्री हो तो पत्नी पति की भक्त होती है।।४७।।

विशेष— यहाँ पञ्चधा मैत्री ग्रहण करनी चाहिये।

कठिनापराधायोगः

दारेश्वरे वा कुमुदात्मबन्धौ पापान्विते पापनिरीक्षिते वा ।
पापांशके पापग्रहान्तरस्थे कुमार्गचारी कठिनापराधा ।।४८।।

यदि सप्तमेश या चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त, पापग्रहों से दृष्ट या पापांशक में अथवा पापमध्य में हो तो उस जातक की स्त्री कुमार्गी एवं कठिन अपराध करने वाली (क्रूरकर्मा) होती है॥४८॥

चरित्रवतीयोगः

सौम्यांशके सौम्यग्रहान्विते वा मित्रोच्चगेहे मृदुभागयुक्ते ।
चन्द्रे कलत्राधिपतौ च शुक्रे पुण्या सुशीला सुचरित्रयुक्ता ।।४९।।

यदि चन्द्रमा, कलत्राधिपति (सप्तमेश) तथा शुक्र— ये तीनों शुभ ग्रहों के राशि या अंश में मित्रक्षेत्री, उच्चक्षेत्री या शुभ षष्ट्यंश में हों तब जातक की पत्नी पुण्य कर्म करने वाली, सुशीला (मृदु व्यवहार वाली) तथा सच्चरित्रा होती है॥४९॥

विशेष— ऐसी पत्नी भाग्यशाली भी होती है। उसके आते ही घर की काया पलट जाती है तथा घर में धन-धर्म दोनों की वृद्धि होती है॥

कर्कशायोगः

दाराधिपे हीनबले धराजे क्रूरादिषष्ट्यंशसमन्विते वा ।
निम्नारिमूढे विहगारिभावे दुष्टान्यसक्ता पतिकर्कशा वा ।।५०।।

यदि सप्तमेश निर्बल हो, धराज (मंगल) क्रूर षष्ट्यंश में हो अथवा नीच, शत्रु, अस्तंगत दशम (विहग) या अरि (षष्ठ) भाव में हो तो पत्नी अन्य पुरुष में आसक्त अथवा कर्कशा होती है॥५०॥

क्रूराऽपि पतिभक्तायोगः

मित्रोच्चवर्गे यदि दारनाथे शुभान्विते सौम्यदृशा समेते ।
परावतांशादिगते बलाढ्ये क्रूरापि पत्युर्गुणमार्गयुक्ता ।।५१।।

जब सप्तमेश मित्र वर्ग, उच्च वर्ग का होकर शुभ ग्रहों से युक्त, शुभदृष्ट, बली होकर पारावतांशदि में हो तो पत्नी यदि क्रूर स्वभाव की हो तो भी पति के अनुसार आचरण करने वाली होती है।५१॥

पतिघ्नी योगः

दाराधिपे सोमसुते सपापे नीचारिमूढे यदि नाशभावे ।
पापान्तरे पापदृशा समेते जाता पतिघ्नी कुलनाशकारी ।।५२।।

यदि सप्तमेश तथा बुध दोनों पापग्रहों के साथ नीच राशि, शत्रुक्षेत्र या अस्त होकर आठवें या बारहवें भाव में हों पापग्रहों के मध्य या पाप-दृष्ट हों तो इस योग में उत्पन्न कन्या पति को मारने वाली तथा कुल में कलंक लगाने वाली होती है॥५२॥

विशेष— पुरुष की कुण्डली में ऐसा योग होने पर उसकी पत्नी कुलकलंकिनी होती है— ऐसा कहना चाहिये। सप्तमेश की बुध से युति, सप्तमेश पर बुध की दृष्टि

या सप्तमेश का बुध के नवांश में स्थित होना जातक को कामुक व चञ्चल बनाता है एवं उसकी पत्नी भी कामुका होती है। शम्भुहोराप्रकाश (६.१५८) में कहा भी गया है—

सौम्यांशे वा द्यूनपे सौम्यदृष्टे वेश्या तुल्या कामिनी स्यान्नरस्य ।

बहुपत्नी योगों के सम्बन्ध में विचार— जिस समय यह ग्रन्थ लिखा गया था, उस समय आज की तरह एक से अधिक विवाह करने पर कोई विधिक (कानूनी) प्रतिबन्ध नहीं था; अतः सामर्थ्यवान् पुरुष एक से अधिक विवाह करते थे। इसके अतिरिक्त उनकी रक्षिता पत्नियाँ (रखैलें) भी हुआ करती थीं। आज के समय में मुसलमानों के लिये एक साथ चार विवाह करना विधिसम्मत है तथा हिन्दू के लिये केवल एक। अतः ऐसे में इन योगों पर भली-भाँति विचार कर ही उत्तर देना चाहिये। जिन जातकों की कुण्डली में अनेक पत्नियों के योग हों तो उनके पूछने पर ही बताना उचित होगा; अन्यथा नहीं। स्त्री-पुरुषों के चरित्र के सम्बन्ध में दैवज्ञ को सम्भल कर ही बोलना ठीक है; क्योंकि ज्योतिषी बताये भी तो अपनी दुश्चरित्रता हर व्यक्ति स्वीकार नहीं करेगा।

अतः बहुपत्नी योग में जातक से इस प्रकार कहना चाहिये— 'आपके महिलामित्रों की संख्या अधिक होगी' तो अधिक व्यावहारिक होगा।

धर्मशीलायोगः

सुपुत्रसौख्यान्वितधर्मशीला व्रतोपवासादिविशुद्धदेहा ।
सौम्ये कलत्राधिपतौ बलाढ्ये मित्रोच्चवर्गे यदि गोपुरांशे ।।५३।।

यदि सप्तमेश बली शुभ ग्रह होकर मित्रवर्ग, उच्चवर्ग या गोपुरांश में हो तो उस जातक की पत्नी धर्माचरण करने वाली, व्रतोपवासादि से देश को शुद्ध करने वाली तथा सुपुत्रों के सुख से युक्त होती है।।५३।।

वेश्यासमानयोगः

भृगोः सुते दारपतौ सपापे नीचांशके नीचभमूढगेहे ।
क्रूरादिषष्ट्यंशसमन्विते वा वेश्यासमाना कठिना हि चौरा ।।५४।।

यदि शुक्र एवं सप्तमेश पापग्रहों के साथ नीच राशि में, नीच नवांश में अस्तंगत या क्रूर षष्ट्यंश से युक्त हो तो उस जातक की स्त्री वेश्या के समान कठोर स्वभाव वाली तथा चोरी करने वाली होती है।।५४।।

वाचालिकायोगः

शुक्रे कलत्राधिपतौ बलाढ्ये शुभान्विते शोभनखेचरांशे ।
मित्रोच्चवर्गे स्वगृहे मृदुस्थे वाचालिका पुत्रवती गुणाढ्या ।।५५।।

यदि शुक्र तथा सप्तमेश शुभ ग्रहों के अंशक में, मित्र वर्गों या उच्च वर्गों में,

स्वराशि में, मृद्वंशकों में हो तो जातक की पत्नी वाचाल (अधिक बोलने वाली), पुत्रवती तथा गुणसम्पन्ना होती है॥५५॥

जरातिदुष्टायोगः

जरातिदुष्टा कुलदूषणा स्यान्मन्दे कलत्राधिपतौ सपापे ।
नीचांशके नीचगृहेऽरिगेहे पापेक्षिते पापवियच्चरांशे ।।५६।।

यदि सप्तमेश होकर शनि अथवा शनि एवं सप्तमेश दो पापयुक्त, नीच राशि नवांश में शत्रुक्षेत्री, पापदृष्ट या पापग्रहों के नवांश में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक की पत्नी देखने में बूढ़ी-सी लगती है, वह दुष्ट स्वभाव की तथा कुलकलंकिनी होती है॥५६॥

ब्रह्मवादिनीयोगः

परोपकारी द्विजदेवभक्ता स्त्री ब्रह्मवादी गुरुदृष्टियुक्ते ।
शुभेक्षिते धर्मरता सुशीला मन्दे कलत्राधिपतौ बलाढ्या ।।५७।।

सप्तमेश शनि बली शुभदृष्ट या विशेष रूप से गुरु से दृष्ट हो तो ऐसे जातक की पत्नी परोपकार करने वाली, साधुओं, ब्राह्मणों, देवताओं की भक्त, धर्मशीला तथा सुशीला होती है॥५७॥

कुशीलायोगः

सराहुकेतौ मदनेऽन्यसक्ता पापेक्षिते पापरता कुशीला ।
क्रूरांशके भर्तृविषप्रदा स्याल्लोकापवादान्वितकर्कशा स्यात् ।।५८।।

यदि सप्तम भाव में राहु या केतु हों तो उस जातक की पत्नी अन्य पुरुष पर आसक्त होती है। यदि सप्तम भाव पर पापदृष्टि भी हो तो भी यही फल होता है। यदि सप्तम में क्रूरांशक (नवांश या षष्ट्यंश) हो तो पत्नी पति को विष देने वाली, बदनाम तथा कर्कशा होती है। (सप्तमेश की स्थिति यदि इसी प्रकार की होगी तब भी यही फल होगा)॥५८॥

विशेष— सप्सम भाव के पापदृष्ट-पापयुक्त राहु का फल श्री पुञ्जराज आचार्य ने शम्भुहोराप्रकाश-६.१५४ में निम्न प्रकार बताया है—

स्वर्भानौ चेद्यूनगे पापदृष्टे पापैर्युक्ते नैव पत्नी युतिः स्यात् ।

बाल्यावस्थायां विवाहयोगः

दारेश्वरे सन्निहिते विलग्ने नाथस्य बाल्ये परिणीतमाहुः ।
लग्नात्कलत्राच्छुभखेचरेन्द्रे समीपराशौ यदि तत्तथैव ।।५९।।

यदि लग्नेश तथा सप्तमेश एक ही साथ लग्न में सन्निहित (पास-पास) बैठे हों तो जातक का विवाह बाल्यावस्था में ही हो जाता है। यदि लग्न तथा सप्तम भावों से

शुभ ग्रह समीप राशियों में हो तो भी विवाह बाल्यावस्था में हो जाता है।।५९।।

विशेष— समीपराशि से तात्पर्य यह है कि लग्नेश द्वितीय तथा द्वादश में हो एवं सप्तमेश षष्ठ तथा अष्टम भाव में हो; क्योंकि ये ही क्रमशः लग्न तथा सप्तम की समीपवर्ती (पड़ोसी) राशियाँ होती हैं।

लग्ने कुटुम्बे यदि दारभावे शुभान्विते शोभनवर्गयुक्ते ।
तदीश्वरे शोभनदृष्टयुक्ते बाल्ये विवाहादिकमाहुरार्याः ।।६०।।

यदि लग्न, द्वितीय तथा सप्तम स्थानों में शुभ ग्रह बैठे हों, शुभ ग्रहों के वर्ग हों, उन ग्रहों के स्वामी भी शुभयुक्त-दृष्ट हों तो भी जातक का बाल्यकाल में ही विवाह होता है— ऐसा विद्वानों का कथन है।।६०।।

पारावतांशादिगते कलत्रनाथे कुटुम्बाधिपतौ बलाढ्ये ।
मृद्वाख्यभागे तनुभावनाथे बाल्ये विवाहं मुनयो वदन्ति ।।६१।।

यदि सप्तमाधिपति, द्वितीयाधिपति तथा तनुभावनाथ (लग्नेश) बलवान हों, पारावतांश तथा मृदु षष्ट्यंश में हों तो इस योग में मुनिजन बाल्यकाल में विवाह होता है— ऐसा कहते हैं।।६१।।

विशेष— इस श्लोक का दूसरा भावार्थ यह भी है कि द्वितीयेश-सप्तमेश बली होकर पारावतांश में तथा लग्नेश मृद्वंश में हो तब जातक का बाल्यकाल में विवाह होता है। दोनों प्रकार से कोई भी योग होना चाहिये।

लग्नेश विवाह की शारीरिक सामर्थ्य का, धनेश (द्वितीयेश) आर्थिक क्षमता का तथा सप्तमेश रतिक्षमता का प्रतीक होता है; अतः इन तीनों के बली हुए विना विवाह नहीं होता।

विवाहोपरान्तभाग्योदययोगः

भाग्यं विवाहात्परतो वदन्ति शुक्रेऽस्तगे चोपचयान्विते वा ।
कुटुम्बमेतादृशभावयुक्ते लग्नेश्वरे वा शुभदृष्टियोगे ।।६२।।

यदि शुक्र अस्तभाव (सप्तम) में या उपचय स्थानों में (३-६-१०-११में) अथवा द्वितीय में हो और इसी प्रकार के स्थानों में लग्नेश शुभदृष्ट-युक्त बैठा हो तो विवाह के उपरान्त भाग्योदय होता है— ऐसा मुनिजन कहते हैं।।६२।।

विवाहोपरान्तभाग्यहानियोगः

तत्कारके दारपतौ कुटुम्बनाथे विलग्नाधिपतौ च दुःस्थे ।
नीचारिमूढांशगते सपापे भाग्यं विवाहात्प्रविनाशमेति ।।६३।।

सप्तम भाव का कारक, सप्तमेश, कुटुम्बनाथ (द्वितीय) तथा लग्नेश— ये दुःस्थान (६-८-१२) में हों तो विवाह हो जाने पर भाग्य नष्ट हो जाता है।।६३।।

विशेष— दाम्पत्य जीवन में यह त्रासदी अनेक बार देखने में आती है कि विवाह के पूर्व तक जातक की आजीविका तथा कारोबार सब कुछ व्यवस्थित चलता है; परन्तु विवाह के कुछ दिनों पश्चात् बहुत गड़बड़ हो जाती है। व्यावसायिक हानि, अप्रतिष्ठा, कलह आदि होने लगते हैं। ऐसे में पतिगृह के लोग वेचारी वधू पर दोषारोपण करने लगते हैं कि जिस दिन से इस बहू का पैर इस घर में पड़ा है, उसी दिन से बुरे दिन शुरु हो गए हैं। ज्योतिषी को ऐसे प्रसङ्ग के सामने आने पर पति-पत्नी दोनों की कुण्डली में इस योग को देखना चाहिये। यदि यह योग दोनों की कुण्डली में उपस्थित होगा तो हानि अधिक होती है। यदि केवल एक की ही कुण्डली में यह योग हो तो हानि कम होती है। ऐसे में दुर्भाग्यशमन हेतु शास्त्रोक्त उपाय भी बताना चाहिये।

भाग्यनाशोपरान्ते पुनः भाग्यप्राप्तियोगः

क्रूरादिषष्ट्यंशसमन्वितेऽपि तत्कारके तादृशखेचरेन्द्रे ।
शुभान्विते शोभनदृष्टिपाते नाशात्परं भाग्यमुपैति जातः ।।६४।।

यदि सप्तम भाव का कारक क्रूरषष्ट्यंश में हो या तादृश ग्रह (द्वितीयेश, सप्तमेश तथा लग्नेश) भी इसी प्रकार के होकर शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर बैठे हों तो विवाहोपरान्त भाग्य नष्ट होकर पुनः कुछ दिनोपरान्त भाग्योन्नति हो जाती है और पूर्ववत् ऐश्वर्य प्राप्त हो जाता है।।६४।।

विवाहोपरान्ते नष्टभाग्यस्य बहुदिनोपरान्ते पुनराप्तियोगाः

क्रूरे कलत्रेशयुते त्रिकोणे तत्कारके पापसमन्विते वा ।
कुटुम्बराशौ यदि वाऽत्र माने दूरे विवाहात्कथयन्ति सन्तः ।।६५।।

यदि सप्तमेश पापग्रहयुक्त होकर त्रिकोण में हो अथवा सप्तम का कारक पापग्रहों से समन्वित होकर द्वितीय भाव अथवा मानभाव (दशम) में बैठा हो तो विवाहसमय से बहुत बाद (बहुत दिनोपरान्त) भाग्योदय होता है— ऐसा विद्वान् कहते हैं।।६५।।

माने सपापे यदि वा कुटुम्बे भाग्येऽथ वा पापयुते कलत्रे ।
क्रूरांशके क्रूरनिरीक्षिते वा दूरे विवाहात्कथयन्ति सन्तः ।।६६।।

यदि दशम भाव में, द्वितीय में, नवम में या सप्तम में पापग्रह बैठे हों, क्रूरांशक में हों और ये भाव क्रूर ग्रहों द्वारा दृष्ट हों तब भी बहुत दिनोपरान्त भाग्योदय कहना चाहिये।।६६।।

पुत्रादिलाभेष्वयमेव मार्गस्तं चिन्तयित्वा प्रवदेत्सुतादीन् ।।६७।।

इसी प्रकार से विवाहोपरान्त कितने दिनों बाद पुत्रादि लाभ होगा— इसका विचार पुत्रस्थान को लग्न मान कर करना चाहिये और ग्रहस्थिति के अनुसार शीघ्र या देर बतानी चाहिये।।६७।।

हीनजातिपत्नीप्राप्तियोगः

लग्नेश्वराद् हीनबले कलत्रनाथेऽरिभागांशयुते विमूढे ।
नीचांशके नीचसमन्विते वा निकृष्टजातौ हि कलत्रलाभः ।।६८।।

यदि सप्तमेश लग्नेश से हीन बली हो, शत्रु राशि या शत्रुनवांश में हो, अस्तंगत या नीच राशि नवांशक में हो तो जातक की पत्नी या तो हीन जाति की होती है अथवा जातक के सामाजिक आर्थिक स्तर की अपेक्षा निम्न स्तर के परिवार से प्राप्त होती है। लग्नेश से जातक का स्तर तथा सप्तमेश से उसके पति या पत्नी का स्तर सूचित होता है।।६८।।

उत्कृष्टजातिकलत्रलाभयोगाः

लग्नेश्वरात्पूर्णबले कलत्रनाथे शुभांशे शुभदृष्टियुक्ते ।
वैशेषिकांशे परमोच्चभागे उत्कृष्टजातौ हि कलत्रलाभः ।।६९।।

यदि लग्नेश की अपेक्षा सप्तमेश अधिक बली हो (पूर्ण बलवान हो) तथा शुभ नवांश हो, शुभ ग्रहों से दृष्ट तथा युत हो, वैशेषिकांश में या परमोच्चांशों में हो तो जातक की अपेक्षा पत्नी उच्च जाति तथा स्तर की होती है।।६९।।

विशेष— स्त्री की कुण्डली में ऐसा योग होने पर उसका पति उच्च जाति तथा स्तर का होता है।

लग्नेश्वरे हीनबले कलत्रनाथात्सपापे यदि नीचभागे ।
नाशस्थिते वान्ववरोहभागे कलत्रजाते स्वयमत्र हीनः ।।७०।।

यदि लग्नेश सप्तमेश की अपेक्षा न्यून बली हो तथा पापग्रहों के साथ ८-१२ भाव में बैठा हो अथवा लग्नेश अवरोही (नीचाभिलाषी) हो तो भी जातक की स्त्री उससे अच्छे कुल तथा गुणों वाली होती है और जातक स्वयं पत्नी से हीन होता है।।७०।।

अपकृष्टजातिकलत्रलाभयोगः

तस्माद्बलाढ्ये तु विलग्ननाथे त्वारोहभागे परमोच्चभांशे ।
केन्द्रत्रिकोणे यदि वा ससौम्ये श्रेष्ठः कलत्रात्स्वयमेव जातः ।।७१।।

यदि सप्तमेश से लग्नेश बली हो, आरोही (उच्चाभिलाषी) होकर परमोच्चांश के समीप हो तथा शुभग्रह के साथ केन्द्र वा त्रिकोण में बैठा हो तो जातक अपनी पत्नी से कुलादि तथा गुणादि में श्रेष्ठ होता है।।७१।।

समजातियोगः पतिभक्तायोगश्च

कलत्रनाथे यदि वा कलत्रराशेः कुटुम्बाधिपतेर्वदेद्वा ।
बलेन साम्ये समजातिमाहुः स्त्रियं सुशीलां पतिभक्तिचित्ताम् ।।७२।।

सप्तमेश से या सप्तम भाव से अथवा द्वितीयेश से बलाबल देखकर फलकथन करना चाहिये। यदि लग्नेश तथा सप्तमेश समान बली हों तब पति-पत्नी दोनों की कुल, जाति, राय आदि की स्थिति समान होती है तथा पत्नी सुशीला एवं पतिपरायणा होती है॥७२॥

श्वशुरालये मित्रामित्रमाह

लग्नेश्वरस्यापि कलत्रनाथे शत्रौ तदीयस्त्विह शत्रुभूतः ।
मित्राणि ते तस्य कुलोद्भवाश्च मित्रे विलग्नाधिपतेस्तदानीम् ।।७३।।

यदि लग्नेश का सप्तमेश (पञ्चधा मैत्री में) शत्रु हो तो जातक की ससुराल वालों से शत्रुता होती है। यदि सप्तमेश मित्र हो तो मित्रता होती है॥७३॥

दारेश्वरस्यापि विलग्ननाथे शत्रौ तदीयास्त्वरयस्ततोऽन्ये ।।७४।।

इसी प्रकार यदि सप्तमेश का लग्नेश शत्रु हो तो जातक एवं परिवार वालों से ससुराल वाले (पत्नी पक्ष) के लोग शत्रुता मानते हैं। इसके विपरीत यदि सप्तमेश का लग्नेश मित्र हो तो वरपक्ष से ससुराल वाले मैत्रीभाव रखते हैं॥७४॥

पत्नीवर्णकथनम्

कलत्राधिपतेर्वर्णं राशेर्वा कारकस्य च ।
सर्वोत्तमबलस्यैव तेषां मध्ये विनिर्दिशेत् ।।७५।।

स्त्री का रंग-रूप, नाक-नक्शा आदि सप्तमेश के वर्ण आदि के अनुसार, सप्तम राशि के वर्णानुसार तथा सप्तम कारक के बलानुसार बताना चाहिये अर्थात् इनमें जो सर्वाधिक बली हो, उसी के अनुसार ही पत्नी का वर्ण तथा रूप आदि बताना चाहिये॥७५॥

सप्तमादिषु दृष्टियुतिफलम्

सगुणा रूपसम्पन्ना तस्मिन् गुर्वच्छवीक्षिते ।
पापेक्षिते पापयुते कुरूपा दुर्गुणा भवेत् ।।७६।।

यदि पूर्वोक्त सप्तमेश, सप्तम भावादि गुरु तथा शुक्र से युत या दृष्ट हो तब पत्नी सुन्दरी तथा गुणवती होती है। यदि उक्त सप्तमेशादि पापयुत-पापदृष्ट हों तब जातक की पत्नी कुरूपा तथा दुर्गुणा होती है॥७६॥

पुत्रादिकथनमाह

कलत्रनाथस्थितभं तदीयं राशिं कलत्रस्य विदुर्महान्तः ।
तस्योच्चनीचं यदि वा कलत्रराशिं तदंशत्रितयं तदीयम् ।।७७।।

कलत्र राशियाँ— (१) सप्तमेश स्थित राशि (२) सप्तमेश की स्वराशि तथा (३) सप्तमेश जिन राशियों में उच्च-नीच होता है, वे राशियाँ— ये तीन प्रकार की राशियाँ

जातक की कुण्डली में कलत्रराशियाँ कहलाती हैं। इन तीन प्रकार की राशियों के बलाबल से पत्नी का विचार करना विद्वान् लोग बतलाते हैं।।७७।।

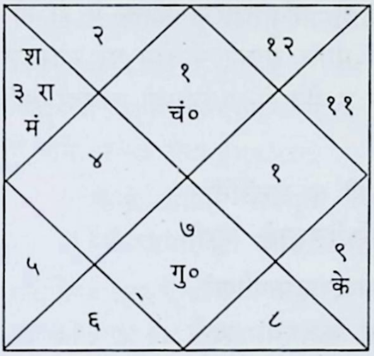

उदाहरण— मान लीजिये पार्श्वाङ्कित कुण्डली में कलत्रराशियों का विचार करना है तो इसमें श्लोक ७७ के अनुसार कलत्रनाथ चन्द्र है; अत: उसकी स्थिति सिंह में होने से प्रथम प्रकार से कलत्र राशि सिंह है। चन्द्रमा कर्क राशि का स्वामी है; अत: सप्तमेश की स्वराशि कर्क हुई । यह दूसरे प्रकार से कलत्र राशि है। चन्द्रमा सप्तमेश है, उसकी उच्च राशि वृष तथा नीच राशि वृश्चिक होने से— ये दोनों तीसरे प्रकार से कलत्रराशियाँ हुईं, इस प्रकार उदाहरण की कुण्डली में सिंह, कर्क, वृष तथा वृश्चिक— ये चार राशियाँ कलत्र राशियाँ हैं। इनके बलाबल से स्त्री का विचार किया जायेगा।

कलत्रराशित्रितयेऽथ वा स्यात्तदीशसंयुक्तभकोणराशौ ।
कलत्रराशिं समुदाहरन्ति प्रोक्तान्यराशौ यदि नास्ति पुत्रः ।।७८।।

उक्त तीनों प्रकार की कलत्र राशियाँ अपने स्वामी से युत हो अथवा स्वामी से त्रिकोण राशियों में स्थित हो अथवा इन तीनों प्रकार के राशियों में व्यत्यय हो अथवा सप्तमेश जिस राशि में हो, उससे ९।५ राशि को भी कलत्रराशि कहा जाता है। इनमें बली ग्रह होने पर पुत्र होते हैं; अन्यथा नहीं होते ।।७८।।

गोसिंहकन्यादिषु जन्मराशिः स्त्रीणाम्भवेज्जन्मनि वाल्पपुत्राः ।
शुभग्रहैराक्रमितेषु तेषु सुतान्वदेत् तत्र बहून् गुणाढ्यान् ।।७९।।

यदि उक्त स्थानों में वृष, सिंह, कन्या राशि हों अथवा ये स्त्री की जन्मराशियाँ हों तो कन्यायें अधिक होती हैं, पुत्र कम होते हैं। यही राशियाँ शुक्र ग्रहयुक्त हों तो बहुत से गुणवान् पुत्र होते हैं।।७९।।

सप्तमस्थग्रहानुसारेण स्त्रीसङ्गमाह

वन्ध्यासङ्गो मदे भानौ चन्द्रे दासीसमाश्रयः ।
कुजे रजस्वलासङ्गो वन्ध्यासङ्गश्च कीर्तितः ।।८०।।

अब इन तीन श्लोकों द्वारा सप्तम स्थान में स्थित ग्रहों के अनुसार जातक का कैसी स्त्री से सङ्ग होगा— यह बताया जा रहा है। वह स्त्री स्वकीया या परकीया भी हो सकती है। इसका विचार प्रश्नकुण्डली से करना चाहिये।

यदि सप्तम भाव में सूर्य हो तो बन्ध्या स्त्री से सङ्ग होता है। बन्ध्या का तात्पर्य यह है कि जिसके सन्तान न होती हो अथवा जिसकी डिम्बनली का शस्त्रकर्म हो गया हो अथवा जिसका गर्भाशय निकाल दिया गया हो। यदि चन्द्रमा सप्तम में हो तो दासी (नौकरानी, महिरी आदि) से सङ्ग होता है। मंगल सप्तम में होने पर रजस्वला स्त्री (जिसके रजोधर्म के एक सप्ताह या चार दिन न बीते हों या जिसको रक्तप्रदर आदि हो) से सङ्ग होता है॥८०॥

बुधे वेश्यार्थहीना वा वणिक् स्त्री वा प्रकीर्तिता ।
गुरौ ब्राह्मणभार्या स्याद् गर्भिणीसङ्गमो भृगौ ।।८१।।
हीना वा पुष्पिता वा स्यान्मन्दराहुफणीश्वरैः ।
राहौ च गर्भिणीसङ्गः कृष्णया कुब्जया शनौ ।। ८२।।

बुध के सप्तम में होने पर वेश्या, निर्धन या वणिक् स्त्री (बनिया जाति की अथवा दुकानदार महिला अथवा किसी भी प्रकार से धन कमाने वाली स्त्री) से सङ्ग होता है। यदि गुरु सप्तम में हो तो ब्राह्मण जाति की स्त्री तथा शुक्र के सप्तम में होने पर गर्भिणी स्त्री से सङ्ग होता है। यदि शनि, राहु, केतु में से कोई ग्रह हो तो नीच जाति की या निम्न स्तर की रजस्वला दोष से युक्त स्त्री से सङ्ग होता है। उसमें भी राहु से गर्भिणी तथा शनि से कुबड़ी स्त्री हो सकती है। जातक में इन योगों को लागू नहीं किया जा सकता॥८१-८२॥

एवं सुखस्थितैरेतैरीदृक् स्त्रीसङ्ग ऊह्यताम् ।

इसी प्रकार चतुर्थ भाव में स्थित ग्रहों से भी स्त्रीसङ्ग कहना चाहिये।

वाहनादिकथनम्

सूर्याद्यैः सुखगैर्वाच्यं वाहनं गृहनिर्णयः ।।८३।।
वनं गृहञ्च कुड्यं स्याद्विहारो देवतालयम् ।
जलं हरिगजस्थानमिति स्थाननिरूपणम् ।।८४।।

चतुर्थ में सूर्यादि ग्रहों की स्थिति के अनुसार वाहन तथा भवन का निर्णय कहना चाहिये। सूर्य से वन में, चन्द्रमा से गृह में, मंगल से कुड्य (जिसकी दीवालें हों, परन्तु छत छप्पर या खपरैल या टिन शैड की हो), बुध से विहारस्थान (फार्म हाउस, बगीचा, आदि), गुरु से देवालय, शुक्र से जलस्थान के समीप, शनि से हरिस्थान (सिंह, बाघ आदि के रहने की जगह) तथा राहु से गजस्थान बताना चाहिये॥८३-८४॥

विशेष— इन्हीं स्थानों में मैथुन भी कहना चाहिये।

चतुष्पादमैथुनयोगाः

पापैर्युक्ते चतुष्केन्द्रे चतुष्पान्मैथुनं वदेत् ।
पापैर्दृष्टेषु सर्वेषु केन्द्रेष्वेवं विनिर्दिशेत् ।।८५।।

यदि चारो केन्द्रों में पापग्रह हों तब जातक पशुओं के साथ मैथुन करने वाला अथवा मैथुन में पशुवत् आचरण करने वाला होता है। यही फल चारो केन्द्रों में पापग्रहों की दृष्टि होने पर भी होता है।।८५।।

केन्द्रे कोणे पापयुते पशुवन्मैथुनं वदेत् ।
मदे पापान्विते वापि समान्दौ तादृशं वदेत् ।।८६।।

यदि केन्द्र तथा त्रिकोणों में पापग्रह हों तो भी पशु के समान मैथुन होता है— ऐसा कहना चाहिये। यदि मद (सप्तम) अकेले में ही पापग्रह (गुलिकसहित) हों तो भी वही फल होता है।।८६।।

प्रकृत श्लोक में किसी-किसी प्रति में 'मदे पापान्विते वापि' के स्थान पर 'मन्दे पापान्विते' यह पाठ दिया है, जो कि मेरी दृष्टि में समीचीन नहीं है; क्योंकि पापग्रहों में जब शनि का भी ग्रहण हो जाता है, तब पृथक् से शनि का उल्लेख करने का क्या हेतु है? हाँ; मन्द के स्थान पर मद होने से अर्थ सप्तम भाव होता है। सप्तम भाव स्त्रीस्थान है। यदि चारो केन्द्रों की बजाय केवल सप्तम में ही गुलिकसहित सभी पापग्रह बैठे हों तो भी यही फल होगा— ऐसा अभिप्राय ग्रन्थकार का है।

पुनश्च पशुव-मैथुन योगः

मदे सूर्ये सुखे भौमे पशुवन्मैथुनं वदेत् ।
राहौ कलत्रे भौमे वा सुखे तादृशमैथुनम् ।।८७।।

यदि मदभाव (सप्तम) में सूर्य तथा चतुर्थ में भौम हो तो पशुवत् मैथुन कहना चाहिये। इसी प्रकार सप्तम भाव में राहु तथा चतुर्थ में मंगल हो तब भी उसी प्रकार से मैथुन होता है।।८७।।

विशेष— इस श्लोक में भी 'मन्दे' के स्थान पर 'मदे' पाठ रखना ही समीचीन है।

भगचुम्बनयोगाः

मदेशे भृगुसन्दृष्टे भौमक्षेत्रगतेऽथ वा ।
भृगुणा सहिते वाऽपि भगचुम्बनभाग्भवेत् ।।८८।।

यदि सप्तमेश पर शुक्र की दृष्टि हो अथवा सप्तमेश मंगल की राशि (मेष, वृश्चिक) में हो अथवा सप्तमेश शुक्र से युत हो तो जातक भगचुम्बन करने वाला होता है।।८८।।

विशेष— प्रकृति श्लोक में 'मन्देशे' के स्थान पर 'मदेशे' पाठ ही शुद्ध है,

क्योंकि श्लोक ८९ में (एवं कुटुम्बनाथेन) शब्द भी इसकी पुष्टि करता है। वैद्यनाथ दीक्षित के अनुसार—

> जात: समेति भगचुम्बनमस्तनाथे शुक्रेण वीक्षितयुते भृगुमन्दिरे वा ।
> एवं कुटुम्बभवनाधिपतौ तथा स्याद् दारर्क्षगे दशमपे ससिते तथैव ।।

एवं कुटुम्बनाथेन भगचुम्बनभाग्भवेत् ।।८९।।

इसी प्रकार द्वितीयेश यदि शुक्र से युत, दृष्ट अथवा भौमक्षेत्री हो तो भी भगचुम्बन योग होता है।।८९।।

कर्मेशे मन्दसन्दृष्टे भौमक्षेत्रगतेऽथ वा ।
भृगुणा सहिते वापि भगचुम्बनभाग्भवेत् ।।९०।।

यदि कर्मेश (दशमेश) शनि से दृष्ट हो अथवा मंगल की राशियों में या शुक्र के साथ हो तो भी जातक भगचुम्बनभाक् होता है।।९०।।

लग्नेशे नीचराश्यादौ स्थिते तादृशचुम्बनम् ।
एवं कुटुम्बनाथेन भगचुम्बनभाग्भवेत् ।।९१।।

यदि लग्नेश नीच राशि या नीचांशक में हो तब भी भगचुम्बन योग होता है। इसी प्रकार का फल द्वितीयेश (कुटुम्बनाथ) से भी कहना चाहिये।।९१।।

सप्तमस्थग्रहस्थितिवशान्नारीस्तनस्वरूपमाह

कुजे कृशस्तनी मदे राह्वादौ लम्बनस्तनी ।
काठिन्योर्ध्वकुचा भानौ शेषैः स्थूलोत्तमस्तनी ।।९२।।

यदि मदस्थान (सप्तम भाव) में पुरुष जातक की कुण्डली में मंगल हो तो उसकी पत्नी के स्तन सूखे होते हैं। यदि राहु आदि (राहु-केतु-शनि तथा गुलिक) सप्तम में हों तो उसकी स्त्री लम्बे स्तनों वाली होती है। सूर्य सप्तम में स्थित हो तो कठिन एवं ऊर्ध्व कुच (ऊपर को उठे हुए) होते हैं। शेष ग्रहों (चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र) में उत्तम स्तनों वाली स्त्री होती है।।९२।।

पापान्यैकेन सहिते विलक्षणकुचा भवेत् ।
दारेशे पापखेटे वा शुभे वा तादृशस्तनी ।।९३।।

यदि अन्य पापग्रहों (धूम, पात, परिधि, इन्द्रचाप, काल, मृत्यु) में से कोई एक भी ग्रह सप्तम भाव में हो तो विलक्षण (विषम) कुचों वाली स्त्री हुआ करती है। यदि सप्तमेश पापग्रहों के साथ हो या दृष्ट हो तो उन ग्रहों के अनुसार ही स्त्री के स्तन होंगे। यदि सप्तमेश शुभ ग्रहों के अनुसार है तो स्तन उनके अनुरूप होंगे, शुभ पापग्रहों के अनुपात में विषमता से भी विषम स्तन होते हैं। ऐसा विचार कर कहना चाहिये। एक बड़ा एक छोटा स्तन विषम कहलाता है।।९३।।

शुभद्वयेन सहिते दारेशेऽपि तथाविधे ।
समस्तनी भवेत्पत्नी पापयोगेऽन्यथा भवेत् ।।९४।।

यदि सप्तम भाव में दो शुभ ग्रह हों तथा दो शुभ ग्रह सप्तमेश के साथ भी हों तो स्त्री समस्तनी होती है। परन्तु उनके साथ पापग्रहों की दृष्टि-युति होने पर फल में विपर्यय हो जाता है।।९४।।

अतिस्थूलस्तनी पत्नी सशुभे दारनायके ।
जलगेहे जलर्क्षस्थे गुरुणापि निरीक्षिते ।।९५।।

यदि सप्तमेश अकेला ही शुभ ग्रहों के साथ हो तो पत्नी अतिस्थूल स्तनों वाली होती है। यदि चतुर्थ भाव में जलराशि (कर्क-वृश्चिक-मकर-कुम्भ) हो तथा गुरु की भी दृष्टि उस पर हो तो भी पत्नी अतिस्थूल स्तनों वाली होती है।। ९५।।

विशेष— इन योगों में स्तनों के साथ ही स्त्रियों की ऊरु (रानों) का विचार भी श्री वैद्यनाथ दीक्षित ने जातकपारिजात (१४.३८) में किया है—

काठिन्योरु कुचा मदे दिनकरे कामाधिपे केन्द्रगे
जीवेन्दुज्ञसितान्विते गुरुकुचा शुष्कस्तना भूमिजे ।
लम्बा पीनपयोधरा सगुलिकच्छायासुताहिध्वजे
धूमादौ विषमाकृति स्तनवती दुःस्थेऽथवा कामपे ।।

स्त्रीभगविचारमाह

रवौ वा भूमिपुत्रे वा मन्दमान्द्यगुसंयुते ।
दाराधिपे पापभागे भगदैर्घ्यं विनिर्दिशेत् ।।९६।।

अब इन श्लोकों में पुरुष की कुण्डली के अनुसार उसकी स्त्री की भग का स्वरूप बताया गया है—

यदि सप्तम भाव में सूर्य या मंगल के साथ शनि, गुलिक एवं राहु या केतु हो तो भग बड़ी होती है। सप्तमेश यदि पापांशक में हो तब भी भग बड़ी होती है।।९६।।

तदीशौ गुरुशुक्रौ वा शुभांशसहितौ यदा ।
समं भगं भवेत्तस्याः पापयुक्ते तु दीर्घकम् ।।९७।।

यदि सप्तमेश गुरु या शुक्र हो अथवा सप्तमेश शुभ ग्रहों के साथ या शुभ नवांश या षष्ट्यंश में हो तो भग सम होती है। पापांशक में होने पर बड़ी होती है।।९७।।

शनिचन्द्रविदां मध्ये यत्रैकस्मिन्मदेश्वरे ।
ह्रस्वं भगं समादिष्टं स्त्रियामेवं विनिर्दिशेत् ।।९८।।

यदि शनि, चन्द्र या बुध में से कोई भी सप्तमेश हो तो स्त्री की भग छोटी होती है। यह योग स्त्री की कुण्डली में भी देखा जा सकता है।।९८।।

कलत्रेशे जलर्क्षस्थे कारके वा तथाविधे ।
जलर्क्षे दारभावे वा पूर्णचन्द्रनिरीक्षिते ।।९९।।

आगे के श्लोकों में आर्द्र भग का कथन किया गया है। इसमें गुह्याङ्ग में नमी कुछ अधिक होती है। यह चिकित्सकों के अनुसार बार्थोलिन ग्रन्थियों की सक्रियता के कारण होता है। कभी-कभी यह गीलापन इन ग्रन्थियों की सूजन के कारण भी होता है। 'बार्थोलिन' डेनमार्क का एक सुप्रसिद्ध शरीर-रचना वैज्ञानिक था, जिसके नाम पर इन ग्रन्थियों को अंग्रेजी में 'बार्थोलिन डक्ट्स' कहते हैं। योनि की आर्द्रता का कारण स्थानीय तथा सर्व शरीरगत भी हुआ करता है।

जब सप्तमेश जलराशि में या सप्तम का कारक जलराशि में हो अथवा सप्तम भाव में जलराशि हो और उस पर पूर्ण चन्द्र की दृष्टि हो तो भग आर्द्र (गीली) रहती है।।९९।।

चन्द्रे जलर्क्षदारस्थे जलस्थभृगुवीक्षिते ।
जलर्क्षस्थविदा दृष्टे स्त्रीगुह्यस्यार्द्रता भवेत् ।।१००।।

यदि सप्तम में जलराशिगत चन्द्र पर जलराशि में बैठे हुए शुक्र की दृष्टि हो अथवा जलराशि में बैठे हुए वित्त (बुध) की दृष्टि हो तो स्त्री के गुह्यस्थान (शर्मगाह) में आर्द्रता होती है।।१००।।

पूर्णे शशाङ्के दारस्थे जलराश्यंशकेऽपि वा ।
जलस्थगुरुसन्दृष्टे सततन्त्वार्द्रता भवेत् ।।१०१।।

यदि सप्तम भावस्थ जलराशिगत, जलनवांशगत पूर्ण चन्द्र पर जलराशिगत गुरु की दृष्टि हो तो स्त्रीयोनि में निरन्तर आर्द्रता रहती है।।१०१।।

परमोच्चांशके शुक्रे जलराशिगतेऽपि वा ।
भानुना संयुते वापि मैथुनादेव तादृशम् ।।१०२।।

यदि शुक्र परमोच्चांशों में हो अथवा जलराशि में अथवा सूर्य से युक्त हो (तो ऐसा शुक्र सप्तम में स्थित होने पर) तो मैथुन के समय आर्द्रता अधिक होती है।।१०२।।

दारेशे शुष्कराशिस्थे दारे वा शुष्कसंज्ञके ।
शुष्कग्रहेण संयुक्ते त्वनार्द्रं गुह्यमादिशेत् ।।१०३।।

अब आगे के दो श्लोकों में शुष्क भग के योग बताये गये हैं—

यदि सप्तम भाव का स्वामी शुष्क राशियों में से किसी में बैठा हो अथवा सप्तम में शुष्क राशि हो अथवा सप्तमेश शुष्क ग्रह के साथ हो तो गुह्य (भग) अनार्द्र (सामान्य शुष्क) रहती है।।१०३।।

पापक्षेत्रे पापमध्ये दारेशेऽपि तथाविधे ।
पापदृग्योगसम्पाते त्वनार्द्रं गुह्यमादिशेत् ।।१०४।।

यदि सप्तमेश पापराशिगत, पापमध्यस्थ, पापदृष्ट या पापयुत हो तब भी भग शुष्क होती है॥१०४॥

वातला योनि— इस प्रकार की भग को आयुर्वेदीय ग्रन्थों में वातला योनि कहा गया है। यह कर्कश, रूक्ष, शीतल, स्तब्ध, पिपीलिकासृति (मानो योनि में चींटियाँ रेंग रही हों— ऐसा अनुभव होना) से युक्त होती है। माधवनिदान (६२.४) में कहा गया है—

वातला कर्कशा स्तब्धा शूलनिस्तोद पीडिता ।

श्री चरकाचार्य (चरकसंहिता, चि०स्था०- ३०.७-८) के अनुसार यह लक्षण वात प्रकृति तथा वातल आहार-विहार करने वाली नारियों में होता है—

वातलाहारचेष्टायाः वातलायाः समीरणः
विवृद्धो योनिमाश्रित्य योनेस्तोदं सवेदनम् ।
स्तम्भं पिपीलिकासृप्तिमिव कर्कशतां तथा
करोति सुप्तिमायासं वातजांश्चापरान् गदान् ॥

सूपदध्याज्य प्राप्तियोगाः

सप्तमेशे बुधे दृष्टे गुरुणा बलसंयुते ।
भुक्तीशेनापि सन्दृष्टे सूपदध्याज्यभाग्भवेत् ॥१०५॥

इन श्लोकों में सूप (दाल-साग), दही तथा घी के साथ भोजन-प्राप्ति के योग बताये गये हैं—

यदि सप्तमेश बुध हो, बलवान होकर गुरु तथा द्वितीयेश से दृष्ट हो तो जातक को दाल, साग, दही एवं घृतसहित भोजन मिलता है॥१०५॥

सप्तमेशे गुरौ दृष्टे शोभनांशसमन्विते ।
सौम्यांशसौम्यसन्दृष्टे सूपदध्याज्यभाग्भवेत् ॥१०६॥

यदि सप्तमेश होकर गुरु शुभ नवांश में या बुध के नवांश (मिथुन-कन्यानवांश) में हो, बुध से दृष्ट हो तो भी जातक को दाल-साग-दही-घी सहित भोज्य पदार्थ प्राप्त होते हैं॥१०६॥

दारस्थे भृगुपुत्रे वा पूर्णचन्द्रनिरीक्षिते ।
पापैरयुक्ते दृष्टे वा सूपदध्याज्यभाग्भवेत् ॥१०७॥

यदि सप्तम भाव में शुक्र स्थित हो और उस पर पूर्ण चन्द्र की दृष्टि हो तथा पापग्रहों की दृष्टि या युति सर्वथा न हो तो भी इस योग में उत्पन्न जातक दाल-घी-दही आदि के साथ भोजन करता है॥१०७॥

रवौ वा भूमिपुत्रे वा सप्तमेशे शुभेक्षिते ।
भुक्तिस्थानगते वापि कदाचिद् दधिसूपभाक् ।।१०८।।

यदि सूर्य या मंगल सप्तमेश हों और शुभ ग्रहों से दृष्ट हों अथवा ये दोनों ग्रह द्वितीय भाव में बैठे हों तो इस योग में जातक को साग-दाल-फल-दही-घी आदि खाने को मिलते हैं।।१०८।।

घृतसूपादिरहितभोजनयोगमाह

पापे सप्तमभावस्थे तदीशे पापसंयुते ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि घृतसूपादिहीनभाक् ।।१०९।।

यदि सप्तम भाव में पापग्रह हों, सप्तमेश पापग्रहों से युत हो अथवा क्रूर षष्ट्यंश में हो तो जातक घी-दाल आदि से रहित भोजन करता है। अर्थात् रूखी रोटी खाता है।।१०९।।

विशेष— इस योग में रूखे भोजन की प्राप्ति का कारण अर्थाभाव हो सकता है अथवा किसी रोग के कारण जातक चिकना भोजन नहीं कर सकता है।

क्षीरपानादियोगमाह

चन्द्रे गुरौ वा दारेशे जलराश्यंशसम्भवे ।
जलग्रहेण वा दृष्टे क्षीरपानादिभाग्भवेत् ।।११०।।

यदि चन्द्रमा या गुरु सप्तमेश होकर जलराशि या जलराशि के नवांश में हो अथवा जलीय ग्रह की दृष्टि सप्तम पर हो तो जातक को दूध आदि पीने को मिलता है।।११०।।

विशेष— यहाँ क्षीरपानादि से तात्पर्य यह है कि जातक को प्रोटीन तथा स्निग्धता प्रदान करने वाले भोज्य पदार्थ, जिनमें फल तथा मेवे भी शामिल हों अर्थात् प्राप्त होते हैं।

गुडक्षीरादिपानभाग्योगः

सप्तमेशस्थितांशेशे शुभदृष्टिसमन्विते ।
शुभग्रहांशके वापि गुडक्षीरादिपानभाक् ।।१११।।

सप्तमेश जिस ग्रह के नवांश में बैंठा हो, वह नवांशेश ग्रह यदि शुभ-दृष्ट, शुभयुक्त तथा शुभ ग्रहों के नवांश में बैठा हो तो ऐसा जातक गुड़, दूध, घी आदि का भोजन करता है।।१११।।

मूत्रकृच्छ्रयोगमाह

बहवः सप्तमे पापाः षष्ठे वा रन्ध्रभेऽपि वा ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ता मूत्रकृच्छ्रं विनिर्दिशेत् ।।११२।।

यदि सप्तम स्थान में बहुत से पापग्रह हों अथवा उसके आगे-पीछे के स्थानों (छठे-आठवें) में पापग्रह हों तथा क्रूरषष्ट्यंशों में हों तो जातक को मूत्रकृच्छ्र होता है॥११२॥

विशेष— इस श्लोक से यह भी निर्दिष्ट है कि ६-७-८ इन तीनों स्थानों में स्थित पापग्रह मूत्रकृच्छ्र, वृक्करोग, बस्तिरोग आदि के सूचक होते हैं।

अध्यायोपसंहारः

इति सप्तमभावस्थनिश्चितार्थविचारयुक् ।
षष्ठाध्यायो मया प्रोक्तो व्यङ्कटेशेन धीमतो ।।११३।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ सप्तमभावफलविचारो
नाम षष्ठोऽध्यायः।।६।।

इस प्रकार से मुझ धीमान् वेङ्कटेश के द्वारा सप्तम भाव के निर्णय से युक्त छठा अध्याय पूर्ण किया गया॥११३॥

इस प्रकार आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़कृत सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ के छठे
अध्याय की 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥

◆

अथ सप्तमोऽध्यायः

आयुर्धर्मभावफलविचाराध्यायः

अष्टमभावाद्विचारणीयान् विषयानाह

मरणाज्जीवितमरणं गुह्यस्थानञ्च मरणहेतुञ्च ।
अन्नसुखं भृतिदंशं परिभवमपि चिन्तयेत्प्राज्ञः ।।१।।

मरणभाव (अष्टम भाव) से जीवन-मरण, गुप्तेन्द्रिय, मृत्य का कारण, अन्नसुख, भृति (भरणपोषण), दंश (डंक आदि लगना) तथा पराजय का विचार करना चाहिये।।१।।

विशेष— अष्टम भाव से अन्य विद्वानों के अनुसार बीमे, घूस, लॉटरी आदि से प्राप्त धन, झगड़ा, अज्ञान, भाई के शत्रु, पत्नी का शारीरिक कष्ट, कलाप (शृंगार किये बालों का जूड़ा), शत्रु का किला, मानसिक कष्ट, आलस्य, राजदण्ड, भय, वस्तुओं का नाश, ऋण देना, अज्ञात रूप से प्राप्त धन, लेनदारी की वसूली, दुष्ट लोगों से भेंट, पाप, जीवहत्या, अंगहीनता (विकलांगता), शिरश्छेद, उग्र दुःखों की प्राप्ति आदि का भी विचार करते हैं।

अल्पायुयोगः

रन्ध्रेश्वरे पापयुतेऽन्त्यराशावल्पायुरस्येति वदन्ति षष्ठे ।
तत्रापि लग्नेश्वरयोगजातः स्वल्पायुरस्येति वदन्ति सन्तः ।।२।।

यदि अष्टमेश पापग्रहों के साथ अन्त्य राशि (या बारहवें भाव) में या छठे भाव में हो तो उसे अल्पायु योग कहते हैं। यदि इस योग में लग्नेश भी अष्टमेश के साथ बैठा हो तो स्वल्पायु (अल्पायु से भी कम आयु) होती है।।२।।

विशेष— जातकपारिजात (१४.४८) में दूसरे योग में अष्टमेश को बलहीन होकर लग्नेश के साथ होना कहा गया है—

अल्पायुर्व्ययगेऽथ वा रिपुगते पापान्विते रन्ध्रपे ।
लग्नेशेन युते तु तत्र विबले जातोऽल्पजीवी नरः ॥

दीर्घायुयोगाः

स्वक्षेत्रसंस्थे यदि रन्ध्रनाथे दीर्घायुराहुर्मुनयो महान्तः ।
मन्देन वाचिन्त्यविशेषमायुः स्वक्षेत्रमित्रोच्चगृहस्थितेन ।।३।।

यदि अष्टमेश अष्टम में बैठा हो तो मुनि लोग जातक को दीर्घायु कहते हैं। इसी प्रकार अष्टम में मन्द (शनि) के स्वराशि, मित्रराशि या उच्च राशि का होकर बैठने से विशेष रूप से दीर्घायु प्राप्त होती है।।३।।

रन्ध्रेश्वरेणापि विलग्ननाथे युते रिपौ वा व्ययराशियुक्ते ।
षष्ठान्त्यपे वा यदि लग्नयुक्ते दीर्घायुरस्येति शुभेक्षितश्चेत् ।।४।।

यदि अष्टमेश के साथ लग्नेश की युति छठे या बारहवें भाव में हो अथवा षष्ठेश व्ययेश दोनों की युति लग्न में हो और इन योगों में शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो दीर्घायु होती है।।४।।

कर्मेश्वरेणापि विचिन्त्यमायुर्दीर्घं सुहृत्स्वोच्चयुतेन तेन ।
केन्द्रस्थितैः कर्मविलग्नरन्ध्रनाथैस्तथैवायुरुदाहरन्ति ।।५।।

इसी प्रकार दशमेश से भी आयु का विचार करना चाहिये। यदि दशमेश, लग्नेश तथा अष्टमेश केन्द्र में बैठे हों तो दीर्घायु योग होता है।।५।।

प्रोक्तं ग्रहैर्व्योमचरैस्त्रिभिर्वा सभानुजैः केन्द्रगतैस्तथैव ।
स्वक्षेत्रकोणादिगतैर्विशेषाद्वदन्ति दीर्घायुरुदारचित्ताः ।।६।।

यदि पूर्वोक्त ग्रह दशम में हों अथवा अन्य केन्द्रों में साथ बैठने पर इसके साथ शनि हो तो दीर्घायु होती है या ये ग्रह स्वक्षेत्री, मित्रक्षेत्री या उच्चगत होकर केन्द्र में हों तो विशेष रूप से दीर्घायु होती है— ऐसा उदारचेता ऋषियों का कथन है।।६।।

केन्द्रान्विते विलग्नेशे गुरुशुक्रसमन्विते ।
ताभ्यां निरीक्षिते वापि दीर्घमायुर्विनिर्दिशेत् ।।७।।

यदि लग्नेश गुरु एवं शुक्र के साथ केन्द्र में बैठा हो या गुरु-शुक्र से दृष्ट हो तो भी दीर्घायु होती है।।७।।

पूर्णायुयोगाः

चतुरस्रे शुभैर्युक्ते लग्नेशे शुभसंयुते ।
गुरुणा दृष्टिसंयोगे पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत् ।।८।।

यदि केद्रों में शुभ ग्रह बैठे हों तथा लग्नेश भी शुभ ग्रहों के साथ हो एवं बृहस्पति द्वारा दृष्ट हो तब पूर्णायु होती है।।८।।

त्रिषडाय गताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः ।
लग्नेशे बलसंयुक्ते पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत् ।।९।।

यदि पापग्रह त्रिषडाय में हो शुभ ग्रह केन्द्र तथा त्रिकोण में हों तथा लग्नेश बली हो तब भी पूर्णायु होती है।।९।।

षट्सप्तरन्ध्रभावेषु शुभेषु सहितेषु च ।
त्रिषडायेषु पापेषु पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत् ।।१०।।

यदि छः-सात-आठ— इन भावों में शुभ ग्रह बैठे हो तथा त्रिषडाय में पापग्रह हों तो पूर्णायु होती है।।१०।।

विशेष— योग में षष्ठ भाव में शुभ तथा पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो जायेंगे। षष्ठ भाव तथा अष्टम भाव के शुभ ग्रह अपनी दृष्टि से लग्न को शुभ मध्यता प्रदान करते हैं तथा सातवें भाव का शुभ ग्रह लग्न पर सीधे शुभ दृष्टि डालता है। जैसे किसी भाव को शुभ मध्यत्व से बल मिलता है, उसी प्रकार यदि उस भाव के दोनों पार्श्व में शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो भी उस भाव को बल मिलता है। यहाँ लग्न के बली होने से पूर्णायु कहा गया है।

पुनश्च दीर्घायुयोगाः

रन्ध्राधिपे विलग्नस्थे गुरुशुक्रयुतेक्षिते ।
लग्नेशे केन्द्रभावे वा दीर्घमायुर्विनिर्दिशेत् ।।११।।

यदि अष्टमेश लग्न में गुरु या शुक्र से दृष्ट हो अथवा लग्नेश केन्द्र में हो तो जातक को दीर्घायु कहना चाहिये।।११।।

उच्चाश्रितैः त्रिभिः खेटैः लग्ने रन्ध्रेशसंयुते ।
रन्ध्रे पापविहीने तु दीर्घमायुर्विनिर्दिशेत् ।।१२।।

यदि तीन ग्रह उच्च के हों, लग्न में अष्टमेश बैठा हो एवं अष्टम भाव पापग्रहों से रहित हो तो भी दीर्घायु कहना चाहिये।।१२।।

रन्ध्रस्थितैः त्रिभिः खेटैः स्वोच्चमित्रस्वगेहगैः ।
लग्नेशे बलसंयुक्ते दीर्घमायुर्विनिर्दिशेत् ।।१३।।

यदि अष्टम भाव में तीन ग्रह स्वराशि मित्रराशि तथा उच्च राशि के होकर बैठे हों तथा लग्नेश बली हो तो दीर्घायु बताना चाहिये ।।१३।।

पुनश्च पूर्णायुयोगमाह

पारावतादिभागस्थाः पापाः सर्वे शुभास्तथा ।
केन्द्रत्रिकोणनिलयाः पूर्णमायुर्विनिर्दिशेत् ।।१४।।

यदि सभी पापग्रह एवं शुभ ग्रह पारावतांश में होकर केन्द्र-त्रिकोण भावों में स्थित हों तो पूर्णायु होती है।।१४।।

पुनश्चाल्पायुयोगानां कथनम्

षष्टाष्ठमे व्यये पापे लग्नेशे दुर्बले यदि ।
अल्पायुरनपत्यो वा शुभदृग्योगवर्जिते ।।१५।।

यदि छठे, आठवें तथा बारहवें भाव में पापग्रह स्थित हों तथा लग्नेश दुर्बल हो, इसमें शुभ ग्रहों की दृष्टि-युति का अभाव हो तो जातक अल्पायु तथा सन्ततिहीन होता है॥१५॥

यदि मन्दो भवेल्लग्ने शुभदृग्योगवर्जिते ।
अस्मिन्योगे तु सञ्जातो अल्पायुः कुलनाशनः ।।१६।।

यदि शनि लग्न में हो और उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि या युति न हो तो जातक अल्पायु तथा कुल की हानि करने वाला होता है॥१६॥

चतुष्टयगते पापे शुभदृष्टिविवर्जिते ।
बलहीने विलग्नेशे त्वल्पमायुर्विनिर्दिशेत् ।।१७।।

यदि चारो केन्द्रों में पापग्रह हों, उन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो एवं लग्नेश निर्बल हो तब अल्पायु कहना चाहिये॥१७॥

व्ययार्थौ पापसंयुक्तौ शुभदृष्टिविवर्जितौ ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि स्वल्पमायुर्विनिर्दिशेत् ।।१८।।

यदि बारहवें (व्यय-भाव) तथा द्वितीय (धन-भाव) में पापग्रह हों और शुभ दृष्टि से रहित हों अथवा इन भावों का भावस्पष्ट राश्यादि क्रूर षष्ट्यंश में पड़ता हो तो भी अल्पायु होती है॥१८॥

विशेष— यहाँ लग्न का पापमध्य में होना अल्पायु का कारण है।

त्रिधाऽयुर्योगकथनपूर्वकमल्पायुयोगः

आयुर्योगास्त्रिधा प्रोक्ताः स्वल्पमध्यचिरायुषः ।
द्वात्रिंशत् पूर्वमल्पायुः मध्यमायुर्विनिर्दिशेत् ।।१९।।
सप्तत्याः प्राक्तः पूर्णमायुरत्र वदन्ति हि ।
अल्पायुर्दिननाथस्य शत्रुर्लग्नाधिपो यदि ।।२०।।

आयुर्योग तीन प्रकार के होते हैं— स्वल्पायु, मध्यमायु एवं चिरायु। बत्तीस वर्षों के पूर्वा अऽल्पायु, सत्तर वर्ष तक मध्यमायु और इसके पश्चात् दीर्घायु होती है। यदि लग्नेश सूर्य का शत्रु हो तो अल्पायु होती है॥१९-२०॥

दीर्घायुमध्यमायुकथनम्

समत्वे मध्यमायुः स्यान्मित्रे दीर्घायुरादिशेत् ।
बलहीने विलग्नेशे जीवे केन्द्रत्रिकोणगे ।।२१।।

षष्ठाष्टमव्यये पापे मध्यमायुरुदाहृतम् ।
शुभे केन्द्रत्रिकोणस्थे शनौ बलसमन्विते ।।२२।।

षष्ठे वाऽप्यष्टमे पापे मध्यममायुरुदाहृतम् ।
लग्ने त्रिकोणे केन्द्रे वा मध्यममायुश्च मिश्रिते ।।२३।।

यदि लग्नेश सूर्य का सम हो तो मध्यमायु होती है। इसी प्रकार यदि लग्नेश-सूर्य मित्र हो तो दीर्घायु कहनी चाहिये। यदि लग्नेश निर्बल हो, गुरु केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो, साथ ही षष्ठ, अष्टम और बारहवें भावों में पापग्रह हो तो मध्यमायु होती है। यदि शुभ ग्रह केन्द्र-त्रिकोण में हों, शनि बलवान हो; साथ ही छठे-आठवें पापग्रह हों तो मध्यमायु होती है। इसी प्रकार लग्न, त्रिकोण तथा केन्द्र में पापग्रह और शेष भावों (६-८-१२) में भी पापग्रह अथवा मिश्रित ग्रह होने पर भी मध्यमायु होती है।।२१-२३।।

मृत्युदायकविंशोत्तरीदशाकालकथनम्

अल्पायुर्योगजातानां विपत्पाको मृतिप्रदः ।
मध्यमे प्रत्यरिदशा मृतिं दद्याद्विशेषतः ।।२४।।
वधभेशदशा कष्टा पूर्णायुर्योगसंज्ञके ।
योगायुरिति निश्चित्य जातस्यैवं वदेद्बुधः ।।२५।।

पूर्वोक्त योगानुसार जिनका जन्म अल्पायु योग में हुआ हो, उनकी विंशोत्तरी में विपत्तारा (विपत्कर नक्षत्र = जन्मनक्षत्र से तीसरे नक्षत्र के स्वामी ग्रह की दशा में) की पाक (दशा) में मृत्यु होती है। जिनका मध्यमायु योग होता है, उनकी मृत्यु प्रत्यरि तारा (नक्षत्र) की दशा में होती है। (जन्मनक्षत्र से पाँचवाँ नक्षत्र प्रत्यरि तारा होता है, उसके स्वामी की विंशोत्तरी दशा में) जिनका दीर्घायु योग हो, उनकी मृत्यु वध तारा या वध नक्षत्र की दशा (जन्मनक्षत्र से सातवाँ तारा) में होती है। इस प्रकार विद्वानों को योगानुसार निश्चय करके आयु का कथन करना चाहिये।।२४-२५।।

जन्मनक्षत्र से नवताराज्ञान का चक्र

जन्म	सम्पत्	विपत्	क्षेम	प्रत्यरि	साधक	वध	मित्र	अतिमित्र	तारा का नाम
प्रथम	दूसरा	तीसरा	चौथा	पाँचवाँ	छठाँ	सातवाँ	आठवाँ	नवाँ	जन्म नक्षत्र के क्रमांक
दशम	ग्यारहवाँ	बारहवाँ	तेरहवाँ	चौदहवाँ	पन्द्रहवाँ	सोलहवाँ	सत्रहवाँ	अट्ठारहवाँ	
उन्नींसवाँ	बीसवाँ	इक्कीसवाँ	बाइसवाँ	तेईसवाँ	चौबीसवाँ	पच्चीसवाँ	छब्बीसवाँ	सताइसवाँ	

ताराविचार— इस ग्रन्थ में ताराओं के ज्ञान की विधि नहीं दी गयी है; अतः ग्रन्थान्तर से उसे पाठकों के लाभार्थ दिया जा रहा है—

जन्मादिनभं यावद् गणयेत्क्रमतो बुधः ।
हरेद् भागं ग्रहेणैव शेषं तारा भवेदिति ।।१।।

जन्मसम्पद्विपत् क्षेमः प्रत्यरिः साधको वधः ।
मित्रं परममैत्रञ्च भवेत्संज्ञास्तु कर्मणाम् ।।२।।

अर्थात् जन्मनक्षत्र से अभीष्ट नक्षत्र तक गिनने पर जो संख्या हो, उसको नौ से भाग देने से क्रमश: जन्मादि तारा होते हैं, जिनका चक्र पूर्व में दिया जा चुका है॥

शस्त्रेण मरणयोगद्वयमाह

आयुर्विलग्नाधिपती बलेन हीनौ धरासूनुव्रणेशयुक्तौ ।
युद्धे मृतिं तस्य वदन्ति तज्ज्ञाः शस्त्रेण वा तन्मरणं विशेषात् ।।२६।।

यदि अष्टमाधिपति तथा लग्नाधिपति निर्बल होकर षष्ठेश तथा मङ्गल के साथ हों तो विद्वान् ऐसे जातक की मृत्यु युद्ध या लड़ाई-झगड़े में शस्त्रघातादि से होना बताते हैं॥२६॥

रन्ध्राङ्गनाथौ यदि वा रिपुस्थौ राह्वन्वितौ केतुयुतौ समन्दौ ।
तद्भुक्तिकालेऽप्यथ वाऽपि पाके शस्त्रेण चौरैर्मरणं प्रयाति ।।२७।।

यदि अष्टमेश तथा लग्नेश दोनों छठे भाव में बैठे हों; साथ में राहु, केतु या शनि हो तो लग्नेश-अष्टमेश की दशा-अन्तर्दशा में जातक की मृत्यु शस्त्र या चोर-डाकुओं से होती है॥२७॥

मृत्युकारणकथनम्

रन्ध्राङ्गपौ वाहननाथयुक्तौ तस्मान् मृतिं तस्य वदन्ति तज्ज्ञाः ।
मृतिं त्वजीर्णाद् गुरुसंयुतौ तौ देहेशजीवौ रिपुगावजीर्णात् ।।२८।।

यदि अष्टमेश तथा लग्नेश दोनों चतुर्थेश के साथ हों तो जातक की मृत्यु वाहन से ही कही जाती है। यदि वही लग्नेशाष्टमेश गुरु से युत या दृष्ट हो तो अजीर्ण रोग (अपचन) से मृत्यु होती है। यदि लग्नेश तथा गुरु छठे भाव में बैठे हों तो भी अजीर्ण से ही जातक की मृत्यु होती है॥२८॥

लग्नेश्वरे वाहननाथयुक्ते वागीश्वरेणापि युते त्वजीर्णात् ।
देहेश्वरे वाहनवित्तभावनाथान्विते वा मरणं त्वजीर्णात् ।।२९।।

यदि लग्नेश, चतुर्थेश एवं गुरु की युति हो तो भी जातक की अजीर्ण से ही मृत्यु होती है एवं यदि लग्नेश + चतुर्थेश + द्वितीयेश की युति हो तो भी अजीर्ण से ही जातक की मृत्यु होती है॥२९॥

रन्ध्रेशयोगान्मरणं दशायामन्तर्दशायामथवा वदन्ति ।
पित्रादिभावाधिपयोगदृष्ट्या पित्रादिकानां मरणं तथैव ।।३०।।

अष्टमेश के योग से उसकी दशान्तर्दशा में मृत्यु होती है। इसी प्रकार से पित्रादि के भावों (दशमेश) से या पितृभाव (दशम) को लग्न मानकर विचार करने से पिता आदि की मृत्यु किस प्रकार से होगी— यह ज्ञात हो जाता है॥३०॥

पुनश्च मृत्यु हेतूनाह

भुक्त्यङ्गपौ भानुसुतेन युक्तौ दुःस्थानगौ वा विषभक्षणेन ।
राहुध्वजाभ्यां सहितौ च दुःस्थावुद्बन्धनात्तस्य मृतिं वदन्ति ।।३१।।

यदि दशमेश तथा लग्नेश दु:स्थान में शनि के साथ बैठे हों तो विषभक्षण से जातक की मृत्यु होती है। यदि ये गृह, राहु या केतु के साथ दु:स्थानों में हों तो फाँसी से मृत्यु होती है।।३१।।

षष्ठेश्वरे भानुसुते सराहौ केतौ मृगाद्भीतिमुदाहरन्ति ।
जीवेन युक्ते गजभीतिमस्य जातस्य चन्द्रेण युतेऽश्वभीतिम् ।।३२।।

यदि षष्ठेश शनि, राहु या केतु से युक्त हो तो मृगादि पशुओं से भय होता है। यदि गुरु से युक्त हो तो हाथी (या बुलडोजर, रोडरोलर आदि) से तथा षष्ठेश के चन्द्रमा से युक्त होने पर घोड़े (या मोटरसाइकल) से भय कहते हैं।।३२।।

सूर्यान्विते तादृशभानुपुत्रे गृगात् सशृङ्गाच्छुनकात्सभौमे ।
षष्ठस्थिते भानुसुतेऽपि चैवं विना स्वतुङ्गस्वगृहञ्च खेटे ।।३३।।

यदि शनि सूर्यसहित हो तो श्रृंगी पशुओं से एवं भौमसहित शनि हो तो कुत्ते से भय होता है। छठे भाव में शनि हो तो भी कुत्ते से भय होता है। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि इन योगों में योगकर्त्ता ग्रह स्वराशि, उच्च राशि के न हों।।३३।।

मातासहपितृमरणयोग:

सुखेशभाग्येशविलग्ननाथाः त्रिकोणगाः केन्द्रगताश्च सर्वे ।
भुक्तौ यदा तत्परिपाककाले पित्रा सहैवानुमृतिं च मातुः ।।३४।।

जब सुखेश, भाग्येश तथा लग्नेश त्रिकोण अथवा केन्द्र में हों तो उनकी महादशा तथा अन्तर्दशा में पिता के साथ-साथ माता की भी मृत्यु होती है।।३४।।

सापस्मारपिशाचपीडायोग:

रन्ध्रे शशाङ्के फणिनाथयुक्ते हीने त्वपस्मारयुतः समन्दे ।
तत्र स्थिते हीनबले शशाङ्के पिशाचपीडा जलजा च पीडा ।।३५।।

यदि अष्टम भाव में चन्द्र फणिनाथ (राहु) के साथ निर्बल होकर बैठा हो तो अपस्मार (मिरगी) रोग होता है। यदि निर्बल चन्द्रमा शनि के साथ अष्टम में हो तो पिशाच (भूत-प्रेत-मशान आदि) से पीड़ा या जल में डूबने का भय होता है।।३५।।

भौमादिमन्दान्यतमेन युक्ते क्षीणे शशाङ्के निधनस्थितेऽपि ।
दुःस्थे त्वपस्मारभयान्मृतिः स्यात् पिशाचबाधा त्वथ वा मृतिः स्यात् ।।३६।।

इसी प्रकार से निर्बल चन्द्रमा अष्टम भाव में मंगल, राहु या अन्यतम (दूसरे वाला राहु = केतु) के साथ बैठा हो तो जलजन्य पीड़ा होती है। यदि इन्हीं ग्रहों के साथ छठे

या बारहवें भाव में हो तब पिशाचबाधा तथा अपस्मार आदि रोग होते हैं अथवा मृत्यु भी होना सम्भव है। मृत्यु आठ प्रकार की होती है— यह ध्यान रखना चाहिए।।३६।।

चातुर्थिकज्वरपीडायोगः

रन्ध्रे सराहौ यदि वा सकेतौ चातुर्थिकात्पीडनमाहुरस्य ।
रन्ध्रेश्वरेणापि युते तथैंकं क्रूरादिषष्ट्यंशयुतेऽति सत्यम् ।।३७।।

यदि अष्टम भाव में चन्द्र राहुसहित हो तो चातुर्थिक ज्वर (चौथे दिन आने वाला मलेरिया) से भी पीड़ा होती है। यदि अष्टमेश की युति राहु से हो तो भी चातुर्थिक ज्वर होता है। यदि अष्टमेश क्रूर षष्ट्यंश में हो तो सुनिश्चित ही चातुर्थिक ज्वर से पीड़ा होती है।।३७।।

राजपीड़ा पितृमारणयोगश्च

नीचस्थिते वासरनायके वा षष्ठाष्टमस्थे यदि पापदृष्टे ।
राज्ञां प्रकोपान्मरणं पितुश्च तत्पीडया वित्तविनाशमेति ।।३८।।

यदि सूर्य नीच राशि (तुला में) स्थित हो अथवा छठे या आठवें भाव में बैठा हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हो तो राजा का प्रकोप (सरकार की ओर से दण्डात्मक या निषेधात्मक कार्यवाही) तथा पिता की मृत्यु और इन्हीं कारणों से धन की हानि भी होती है।।३८।।

केचिदरिष्टयोगाः

लग्नाच्छुभे कर्मणि भूमिपुत्रे पापेक्षिते मातुलमृत्युमाहुः ।
मन्देन युक्ते यदि पुत्रमृत्युं चन्द्रे हि तन्मातृमृतिं सपापे ।।३९।।

यदि लग्न से शुभभाव (नवम) में या दशम भाव में मंगल हो और उस पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो माता की मृत्यु होती है। यदि उक्त स्थानों में से किसी में वही मंगल-शनि दृष्ट हो तो मामा की मृत्यु होती है। यदि चन्द्र के साथ उक्त मंगल अन्य पापग्रह के साथ हो तो माता की मृत्यु होती है।।३९।।

पितुर्मृतिः वासरनायकेऽत्र नसंशयः पापदृशा समेते ।
पापद्वयेनापि युतौ विलग्ननिशाकरौ मृत्युमुपैति बालः ।।४०।।

इन्हीं भावों में (नवम या दशम में) वासरनायक (सूर्य) हो तो असन्दिग्ध रूप से पिता की मृत्यु होती है। यदि चन्द्रमा तथा लग्नेश दोनों दो-दो पापग्रहों से युत हों तो जातक की मृत्यु बाल्यकाल में ही हो जाती है।।४०।।

ग्रस्ते शशाङ्के परिवेषयुक्ते पापेक्षिते वा मरणञ्च सद्यः ।
त्वष्टार्यतोयेषु विलग्नचन्द्रे जातः सवित्रीसुतमातुलांश्च ।।४१।।

यदि चन्द्रमा के साथ कुण्डली में अप्रकाशक परिवेष नामक ग्रह हो, साथ ही उस

पर पापग्रह की दृष्टि हो तो बालक की शीघ्र ही मृत्यु होती है। यदि चन्द्रमा चित्रा, उत्तर-फाल्गुनी, पूर्वाषाढा नक्षत्र में होने पर परिवेषयुक्त हो तो जातक के भाई तथा मामा की मृत्यु होती है।।४१।।

पादाक्रमेणापि निहन्ति तांस्तु शुभैस्त दृष्टे सहिते न दोषः ।
लाभे शुभे वा यदि मन्दभौमौ फणीन्द्रयुक्तौ पितुरस्त्यपायः ।।४२।।

पूर्व श्लोक में कथित योग में भाई तथा माता को जातक अपने पादाक्रमण (पैर की ठोकर) से भी मारता है, परन्तु यदि उक्त चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि होती है, तब वह उनको पैरों से नहीं मारता। यदि ग्यारहवें या नवें भाव में शनि, मंगल, राहु की युति हो तो जातक के पिता का वियोग होता है।।४२।।

पापेक्षिते भूमिसुते कलत्रे जातः स मृत्युं समुपैति रन्ध्रे ।
सोत्थे धरासूनुयुते सपापे पापेक्षिते सोदरनाशमाहुः ।।४३।।

यदि पापदृष्ट मंगल सप्तम भाव में बैठा हो तो स्वयं जातक की मृत्यु बाल्यकाल में हो सकती है (अथवा पिता की मृत्यु बचपन में ही हो जाती है)। यदि मंगल पापग्रहों के साथ अष्टम भाव या तृतीय में हो तो जातक को सहोदरों का नाश होता है या वियोग होता है।।४३।।

अस्ते शशाङ्के यदि मातृमृत्युं पापान्विते पापदृशा समेते ।
भानौ पितुर्मृत्युमुदाहरन्ति मन्दारशुक्रैः सहिते सुतस्य ।।४४।।

यदि पापान्वित या पापदृष्ट चन्द्रमा सप्तम भाव में बैठा हो तो जातक के माता की मृत्यु होती है। यदि सूर्य पापयुक्त होकर सप्तम में हो तो पिता की मृत्यु कहते हैं। यदि शुक्र शनि-मंगल के साथ सप्तम में हो तो पुत्र की मृत्यु होती है।।४४।।

तृतीयषष्ठस्थितखेचरेन्द्रैः पापग्रहैरन्त्यगतैश्च सौम्यैः ।
शिशोर्मृतिं वा कुमुदात्मबन्धौ चतुर्थरन्ध्रस्थितपापखेटैः ।।४५।।

यदि तीसरे तथा छठे भाव में पापग्रह बैठा हो तथा बारहवें भाव में शुभ ग्रह बैठे हो अथवा सपाप चन्द्रमा चतुर्थ या अष्टम भाव में बैठा हो तो शिशु की मृत्यु होती है।।४५।।

पुत्रमृत्युयोगः

लग्नेऽर्कचन्द्रौ व्ययगास्तु पापाः शिशोर्मृतिं शोभनदृष्ट्यभावे ।
अस्ते रवौ चन्द्रयुते विलग्ने पापान्विते तत्सुतमृत्युमाहुः ।।४६।।

यदि लग्न में सूर्य एवं चन्द्रमा हों तथा बारहवें भाव में पापग्रह बैठे हों तो जातक के शिशु की मृत्यु होती है; परन्तु शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तब यह योग घटित होता है। इसी प्रकार सातवें भाव में सूर्य + चन्द्र की युति अन्य पापग्रहों के साथ हो तब भी उसके बालक (या उस बालक) की मृत्यु होती है।।४६।।

विशेष— यह योग केवल कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी, अमावस्या या शुक्ल प्रतिपदा तक ही घटित हो सकता है; अन्य तिथियों में नहीं।

नेत्रनाशयोगाः

दिनेशचन्द्रौ व्ययगौ तदानीमन्धो भवेत्सौम्यदृशा विहीनौ ।
युक्ते तयोरन्यतरेण रिष्फे काणो भवेत्सौम्यदृशा विहीने ।।४७।।

यदि सूर्य एवं चन्द्र शुभदृष्टि से रहित होकर बारहवें भाव में बैठें तो जातक अन्धा होता है। यदि उनमें से कोई एक पापदृष्ट होकर बारहवें भाव में अवस्थित हो तो जातक काना होता है ।।४७।।

देहविनाशयोगः पितृमातृनिधनयोगश्च

दिनेशचन्द्रौ व्ययगौ तदीशे लग्नस्थिते देहविनाशमाहुः ।
सुरेश्वरे रन्ध्रगते व्यये वा पापान्विते पापदृशा समेते ।।४८।।

लग्नाधिपे पूर्णबले सुखेशभाग्येश्वरौ नाशगतौ विहीनौ ।
जातस्य जन्मावसरे तदानीं पितुश्च मातुर्निधनं वदन्ति ।।४९।।

यदि सूर्य-चन्द्रमा बारहवें भाव में तथा द्वादशेश लग्न में बैठा हो तो जातक का शरीर नष्ट होता है। यदि जातक के जन्मसमय में गुरु आठवें या बारहवें भाव में पापग्रहों से युत अथवा दृष्ट हो तथा लग्नेश पूर्ण बली हो; चतुर्थेश, नवमेश अष्टम भाव में निर्बल होकर बैठे हों तो (जातक) के जन्मसमय में ही उसके माता-पिता का निधन होता है।।४८-४९।।

मातृदुग्धाभावयोगः पुत्रसुखहानियोगश्च

दुःस्थे तृतीयाधिपतौ सचन्द्रे स्तन्यं परस्त्रीषु पिबेत्स बालः ।
तातेशतत्कारकखेचरेन्द्रौ दुःस्थौ तयोः पुत्रसुखं न दृष्टम् ।।५०।।

यदि तृतीयेश तथा चन्द्र दोनों दुःस्थान (६-८-१२) में हों तो इस योग में जन्म लेने वाला बालक अपनी माता का दूध नहीं पीता है। बल्कि उसे अन्य स्त्री का दूध मिलता है। यदि दशमेश तथा दशम का कारक ग्रह दुःस्थान में हो तो जातक के माता-पिता को पुत्र का सुख नहीं मिलता।।५०।।

मिश्रितयोगाः

केन्द्रे त्रिकोणे यदि तौ विहङ्गौ वदेत्तयोः पुत्रसुखं त्वभीष्टम् ।
पितुर्निशायां मरणं वदन्ति भाग्येशसूर्याऽर्कसुताः क्षतस्थाः ।।५१।।

षष्ठेश्वरेणापि युतास्तथैव चन्द्रेण हीनास्तु दिवा मृतिः स्यात् ।
सुखस्थितैः खेचरनायकैर्वा मातृमृतिः स्यादयने तु तस्मिन् ।।५२।।

यदि पूर्वोक्त ग्रह केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो तो उन माता-पिता को पुत्रसुख प्राप्त होता है। यदि नवमेश, शनि तथा सूर्य— ये तीनों क्षतस्थान (अष्टम) में बैठे हों तो जातक के पिता की मृत्यु रात में होती है। इसी प्रकार यदि नवमेश शनि एवं सूर्य षष्ठेश से युत हो तथा चन्द्रमा से युत न हो तो दिन में मृत्यु होती है। यदि खेचर नामक सूर्य चतुर्थ भाव में हो तो माता की मृत्यु मार्ग में होती है॥५१-५२॥

अन्यथायोगे मातृमृत्युकथनम्

नो चेत्तदीशान्वितराशिकाले मातुर्मृतिः स्यादयने च तस्मिन् ।
द्वित्र्यादियोगादयनं हि तत्र व्यत्यासतो वा प्रवदन्ति सन्तः ।।५३।।

उक्त योग के अभाव में चतुर्थेश जिस राशि में हो, उस राशि में सूर्य के होने पर (अयन करने पर) माता की मृत्यु होती है। दो या तीन योग होने पर फल में विपरीतता होती है। ऐसा सज्जनों का कथन है॥५३॥

मृत्युसमये पिता दूरे समीपे वेत्याह

नाशे चरे वा पितृभावनाथे दूरस्थितस्तज्जनकोऽपि वाच्यः ।
स्थिरोभयस्थे पितृभावनाथे समीपतस्तज्जनकः स्थितः स्यात् ।।५४।।

यदि दशमेश अष्टम भाव में या चरराशि में हो तो मृत्यु के समय पिता दूर होता है। यदि स्थिर राशि या द्विस्वभाव राशि में दशमेश हो तो पिता समीप रहता है॥५४॥

मातापित्रोः विकालदहनयोगमाह

केन्द्रे चरेऽर्के यदि वा शशाङ्के सुतो दहेत्तत्पितरौ न तत्र ।
द्विदेहराशौ यदि तौ च केन्द्रे तयोर्मृतिं वा दहने विकाले ।।५५।।

यदि सूर्य तथा चन्द्रमा चर राशियों में केन्द्र में हो तो जातक अपने पिता का दाह संस्कार करता है; यदि चर राशियों में न हो (स्थिर में हो) तो नहीं करता। यदि सूर्य तथा चन्द्रमा द्विस्वभाव राशियों में हो तो दाहसंस्कार कुसमय में होता है॥५५॥

विशेष— मूल में 'विकाले' शब्द का प्रयोग है। इसका अर्थ सन्ध्याकाल या रात्रिकाल होता है अथवा दूसरा अर्थ 'विलम्ब' होता है।

मातृसङ्कटयोगः

बलेन युक्ते पितृभावनाथे शशाङ्कदेहेशचतुर्थनाथाः ।
बलेन हीना यदि तज्जनन्यां गाढां विपत्तिं समुदाहरन्ति ।।५६।।

यदि दशमेश बली हो तथा चन्द्रमा, लग्नेश एवं चतुर्थेश निर्बल हों तो जातक की माता को घोर सङ्कट उत्पन्न होता है॥५६॥

गुह्यरोगयोगः

रन्ध्रे तु पापबाहुल्ये गुह्यरोगं विनिर्दिशेत् ।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे न दोषं तत्र निर्दिशेत् ।।५७।।

यदि अष्टम भाव में पापग्रहों की बहुलता हो तो जातक को गुह्य रोग (भगन्दर, बवासीर, अण्डकोश रोगादि) होते हैं; परन्तु शुभ ग्रहों की दृष्टि भी यदि उन पर हो तो वह दोष नहीं होता अथवा न्यून हो जाता है।।५७।।

सुखान्नयोगः

रन्ध्रे शुभेक्षिते तेन संयुते चेत्सुखं भवेत् ।
स्थूलान्नं पापसम्बन्धे मृद्वन्नं शुभसंयुते ।।५८।।

यदि अष्टम भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि या योग हो तो जातक सुखी होता है। पाप ग्रह होने पर मोटा अनाज खाने को मिलता है एवं शुभ ग्रहों के होने पर मृदु अन्न की प्राप्ति होती है।।५८।।

पराभवयोगः

रन्ध्रेशे पापसंयुक्ते पापदृष्टे तदन्तरे ।
पापक्षेत्रेऽथ वा रन्ध्रे जातः परिभवान्वितः ।।५९।।

यदि अष्टमेश पापग्रहों से युक्त अथवा पापमध्य में अथवा पापग्रह की राशि में अथवा अष्टम में ही होता है तो जातक परिभव (पराजय) को प्राप्त होता है।।५९।।

विशेष— परिभव का अर्थ यह है कि ऐसे जातक को कठिन संघर्ष में अनेक बार निराशा हाथ लगती है।

अपराभवयोगः

शुभग्रहाणां सम्बन्धे रन्ध्रे परिभवो न हि ।

यदि अष्टम भाव का सम्बन्ध शुभ ग्रहों से होता है तो जातक का परिभव नहीं होता। अष्टम भाव कठिन संघर्षों का भाव है; अतः उसका शुभ होना संघर्ष में विजय देता है।

दूरदेशे मरणयोगः

चरे रन्ध्रे मृतिर्दूरे तदीशे चरराशिगे ।।६०।।
शनौ वा चरराशिस्थे चरांशस्थे तथा भवेत् ।

यदि अष्टम में चर राशि हो तथा अष्टमेश भी चर राशि में हो तो दूर देश में जातक की मृत्यु होती है। यदि शनि चर राशि या दूर नवांश में हो तो भी जातक का मरण दूर देश में होता है।।६०।।

स्वस्थाने मरणयोग:

स्थिरे रन्ध्रे तदीशेऽपि स्थिरराशौ तदंशके ।।६१।।
शनौ वा स्थिरराश्यंशे स्वगृहे मरणं भवेत् ।
रन्ध्रे द्विदेहराश्यादौ मार्गे मरणमादिशेत् ।।६२।।

यदि अष्टम भाव में स्थिर राशि हो तथा अष्टमेश भी स्थिर राशि में हो तो अपने स्थान पर जातक की मृत्यु होती है। इसी प्रकार यदि अष्टम भाव में द्विस्वभाव राशि है तथा अष्टमेश भी द्विस्वभाव राशि में हो तो मार्ग में मरण होता है।।६१-६२।।

विशेष— अष्टम भाव किसी जातक के निवास से दूरवर्ती एवं भीषण, दुर्गम स्थलों का सूचक होता है। साहसिक अभियानों का विचार इसी स्थान से होता है। अस्तु; अष्टम भाव की राशि, राशीश एवं शनि (अष्टम का कारण)— इन तीनों की स्थिति का विचार इस भाव से करते हैं। चरराशि दूर का, स्थिर राशि उसी स्थान का तथा द्विस्वभाव राशि स्वस्थान से थोड़ी दूरी का संकेत देती है।

इत्यष्टमभावविचार:

◆

अथ नवमभावविचार:

तत्रादौ नवमभावाद्विचारणीयविषयानाह

शुभभवनाद्गुरुभाग्यं पितृपौत्रदयातपः प्राप्तिम् ।
ऊरुस्थानं स्वान्तं सहभोक्तॄन्दानयोगमपि विद्यात् ।।६३।।
चिन्तनीया गुरुस्वामिपितृभाग्यादिमातुलाः ।
नवमे स्वामिसौम्याढ्ये शुभा एतेऽन्यथाशुभाः ।।६४।।

नवम भाव से गुरु, भाग्य, पिता, पौत्र, दया, तप, लाभ, ऊरुस्थान (कमर से घुटने तक पैर का भाग), अन्तःकरण, साथ-साथ भोजन करने वाले लोग, दान, योग-साधना, गुरुजन (आदरणीय एवं पूजनीय लोग), पिता, भाग्य, मामा— इन सबका विचार करना चाहिये। यदि नवम भाव अपने स्वामी या सौम्य ग्रहों से युक्त हो तो उसका फल इन विचारणीय विषयों के लिये शुभ होता है अथवा अशुभ होता है।।६३-६४।।

विशेष— दक्षिण भारत में पिता का विचार नवम भाव से होता है, जबकि उत्तर भारत में दशम भाव से पिता का विचार किया जाता है, परन्तु प्रकृत ग्रन्थ की यह विशेषता है कि इसमें नवम तथा दशम दोनों ही भावों से पिता का विचार किया गया है। इस प्रकार इस ग्रन्थ में उत्तर तथा दक्षिण भारतीय चिन्तन परम्परा में सामञ्जस्य स्थापित किया गया है।

गुरुदारगामीयोगः

चन्द्रे सपापे यदि धर्मराशौ भृगोः सुते वा गुरुदारगामी ।
धर्माधिपे तादृशखेचरेण युते सपापे गुरुदारगामी ।।६५।।

यदि धर्म-भाव में पाप-युक्त चन्द्रमा बैठा हो तो जातक गुरुतल्पगमन करता है। यदि धर्मेश पापग्रह के साथ हो तो भी वही फल होता है, अर्थात् जातक गुरुदारगामी होता है।।६५।।

धर्माधिपस्थांशपतौ तथैव युक्ते तदा तादृशदारगामी ।
धर्माधिपे नीचगते तदंशे शुक्रेण युक्ते गुरुदारगामी ।।६६।।

यदि नवमेश अधिष्ठित नवांश का स्वामी पापग्रह से युक्त हो तो जातक गुरुतल्पगामी होता है। यदि नवमेश नीच राशि या नवांश में हो और उस नवांश में शुक्र हो तो भी जातक गुरुतल्पगामी होता है।।६६।।

क्षीणे निशीशे त्वथ वा तदंशे शुक्रे तथैवं गुरुदारगामी ।।६७।।

यदि चन्द्रमा क्षीण होकर अथवा चन्द्र के नवांश में शुक्र हो तो जातक गुरुदारगामी होता है।।६७।।

विशेष— गुरुदार का अर्थ पूज्य स्त्री (जो माता के तुल्य होती है) होता है।

धर्मशीलयोगाः

धर्मेश्वरे सौम्ययुते तदंशे वैशेषिकांशे त्वथ वा तदीशे ।
क्रूरादिषष्ट्यंशविवर्जिते स्यातज्जातस्तु धर्मे दृढबुद्धियुक्तः ।।६८।।

यदि नवमेश तथा नवम भावेश वैशेषिकांशक में हों तथा क्रूरादि षष्ट्यंश से रहित हों तो जातक की धर्म में दृढ़बुद्धि होती है।।६८।।

गुरौ वा भृगुपुत्रे वा स्वोच्चमित्रांशके शुभे ।
धर्माधिपे बलयुते धर्माध्यक्षो नरो भवेत् ।।६९।।

यदि गुरु या शुक्र स्वराशि, मित्रराशि, उच्चराशि अथवा इनके नवांशों के हों और नवम भाव में बैठे हों, साथ ही नवमेश बली हो तो जातक धर्माध्यक्ष (सम्प्रदाय या पन्थ का आचार्य, महन्त, मण्डलेश्वर आदि) होता है।।६९।।

गुरुशुक्रबुधांशस्थे धर्मनाथे शुभेक्षिते ।
शुभग्रहाणां मध्यस्थे धर्मभाक्स नरो भवेत् ।।७०।।

यदि धर्मनाथ (नवमेश) गुरु, शुक्र या बुध के नवांशों में तथा शुभ ग्रहों के मध्य हो तो वह जातक धर्मभागी होता है; अर्थात् धर्मकार्य में संलग्न होता है।।७०।।

सौम्यान्विते धर्मगृहे तस्मिन् पापांशसंयुते ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि दम्भाद् धर्मपरिग्रहः ।।७१।।

यदि नवम भाव शुभ ग्रहों से युक्त हो, किन्तु उसमें पापनवांश या क्रूर षष्ट्यंश भी हो तो जातक दम्भात्मक धर्म वाला होता है।।७१।।

दम्भ— जो गुण अपने में नहीं है, उसको प्रदर्शन करना दम्भ होता है। जब कोई व्यक्ति सुन्दर न होने पर भी सुन्दर होने का प्रदर्शन करता है या बलवान न होने पर भी स्वयं को बली प्रदर्शित करता है, धनी न होने पर धनी होने का दिखावा करता है तो उसे दम्भी कहा जाता है।

पाखण्ड— प्रायः दम्भ तथा पाखण्ड को पर्याय के रूप में व्यवहृत किया जाता है; परन्तु इन दोनों में सूक्ष्म अन्तर है। दम्भी व्यक्ति स्वयं को मानता भी है और प्रदर्शित भी करता है; परन्तु पाखण्डी को अपना खोखलापन विदित रहता है और उसे वह मन ही मन स्वीकार भी करता है; किन्तु बाहर उसे प्रदर्शित करके अपने को धनी, गुणी, कृती आदि प्रदर्शित करता रहता है।

नाथकारकभावानामंशे शुभसमन्विते ।
शुभांशे शुभसन्दृष्टे शुचितो धर्मसंयुतः ।।७२।।

यदि नवमेश नवम के कारक ग्रह के नवांश (गुरु के नवांश धनु या मीन) में हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त हो या शुभ ग्रहों के नवांश में शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक पवित्रता के साथ धर्मकार्य करता है।।७२।।

शुचितो धर्मसंयुतः— इसका अर्थ यह है कि ऐसा जातक दम्भी या पाखण्डी न होकर अन्तःकरण की पवित्रता के साथ धार्मिक होता है।

क्रूरकर्मयोगाः

धर्मे पापे पापभाक्स्यात्तदीशे पापसंयुते ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि पापमध्यगतेऽथ वा ।।७३।।

यदि नवम भाव में पापग्रह हों या नवमेश पापाक्रान्त हो अथवा क्रूर षष्ट्यंश में हो अथवा पापग्रहों के मध्य हो तो जातक क्रूर कर्म करने वाला होता है।।७३।।

राहुमन्दयुते धर्मे क्रूरांशे गुलिकेक्षिते ।
तदीशे क्रूरराश्यंशे त्वतिक्रूरादिकृद् भवेत् ।।७४।।

यदि नवम-भाव में शनि-राहु की युति हो, नवम भाव में क्रूर नवांश हो, उस पर गुलिक की दृष्टि हो, नवमेश क्रूर राश्यंश में हो तो जातक 'अति क्रूर कर्म करने वाला होता है।।७४।।

गुलि के क्षिते— इस वाक्यांश से गुलिक की दृष्टि का संकेत है। अब प्रश्न यह उठता है कि गुलिक की दृष्टि का विचार किस स्थान पर हो? तो स्वाभाविक है कि अपने स्थान से सप्तम पर ही गुलिक की दृष्टि का प्रभाव मानना होगा।

पितृसौख्ययोगाः

पितृस्थानेश्वरे सौम्ये कारके शुभसंयुते ।
भावे वा शुभसंयुक्ते पितृसौख्यं विनिर्दिशेत् ।।७५।।

यदि पितृस्थान का स्वामी (नवमेश) शुभ ग्रह हो या पितृकारक ग्रह शुभ ग्रह से युक्त हो, नवम भाव भी शुभ ग्रह से युक्त हो तो जातक को पितृसौख्य होता है।।७५।।

पारावतादिभागस्थे नाथे वा कारकेऽपि वा ।
स्वोच्चमित्रांशके वाऽपि पितृसौख्यं विनिर्दिशेत् ।।७६।।

यदि पितृभावेश या पितृकारक स्वराशि, उच्च राशि, पारावतांश, मित्रराशि या नवांशक में हो तो जातक को पितृसौख्य होता है।।७६।।

सौम्यान्तरस्थे तन्नाथे गुरुशुक्रयुतेक्षिते ।
तेषामेकेन संयुक्ते पितृसौख्यं विनिर्दिशेत् ।।७७।।

यदि पितृभाव का स्वामी शुभ ग्रहों के बीच में हो तथा गुरु-शुक्र से युत या दृष्ट हो अथवा गुरु या शुक्र में से किसी एक से युत हो तो पितृसौख्य कहना चाहिये।।७७।।

गोपुराद्यंशसंयुक्ते कारके नाथवीक्षिते ।
पापैरवीक्षिते युक्ते पितृसौख्यं विनिर्दिशेत् ।।७८।।

यदि पितृकारक ग्रह गोपुरांशकादि में हो तथा पितृस्थान के स्वामी से वीक्षित हो; साथ ही उस पर किसी पापग्रह की युति या दृष्टि न हो तो जातक को पितृसौख्य कहना चाहिये।।७८।।

पितृदुःखयोगाः

पापदृष्टे सपापे वा कारके भावनायके ।
पापान्तरगते वाऽपि पितृदुःखं विनिर्दिशेत् ।।७९।।

पितृभावकारक अथवा पितृभावेश पापग्रहों के मध्य या पापग्रहों से दृष्ट या पापग्रहों से युक्त हों तो पितृदु:ख कहना चाहिये।।७९।।

क्रूरनीचांशकस्थे वा भावनाथे च कारके ।
मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते पितृदुःखं विनिर्दिशेत् ।।८०।।

यदि पितृभावेश या पितृभावकारक ग्रह क्रूरनवांश या नीचनवांश में हों या शनि गुलिक, राहु से युक्त हों तब पितृदु:ख कहना चाहिये।।८०।।

सौम्ये तदीश्वरे वापि नीचशत्रुसमन्विते ।
क्रूरषष्ट्यंशके वापि पितृदु:खं विनिर्दिशेत् ।।८१।।

पितृभावेश भले ही शुभ ग्रह हो; परन्तु यदि वह नीच राशि या शत्रुराशि में हो या नीच ग्रह या शत्रु ग्रह से युक्त हो अथवा क्रूर षष्ट्यंश में हो तो जातक को पितृदु:ख कहना चाहिये।।८१।।

पितृस्थानेश्वरांशेशसंयुक्तनवभागप: ।
क्रूरनीचारिभागस्थपितृदु:खं विनिर्दिशेत् ।।८२।।

पितृभाव का स्वामी ग्रह जिस ग्रह के नवांश में है, वह जिसके नवांशक में है, वह यदि क्रूर, नीच या शत्रुनवांश में स्थित हो तो भी पितृदु:ख कहना चाहिये।।८२।।

पितृवशानुगयोग:

लग्नेशात्पितृभावेशे सम्पूर्णबलसंयुते ।
कारकैर्वा शुभैर्दृष्टे जात: पितृवशानुग: ।। ८३।।

यदि लग्न से पितृभाव का स्वामी सम्पूर्ण रूप से बलवान हो तथा पितृकारक ग्रह शुभ ग्रहों के द्वारा दृष्ट हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक पिता का आज्ञाकारी होता है तथा पिता की हर बात को मानता है।।८३।।

पितृकर्मसमापनयोग:

पितुर्जन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेऽपि वा ।
तेनैव पितृकार्याणि कर्मशेषं समापयेत् ।। ८४।।

पिता की जन्मकुण्डली में जो जन्मलग्न हो, उस लग्न से आठवाँ यदि जातक का जन्मलग्न हो तो उसी के स्वामी ग्रह की दशा में जातक अपने पिता के अन्त्य कर्म को समाप्त करता है अथवा पिता की कुण्डली का अष्टमेश यदि जातक के जन्मलग्न में हो तो भी यहीं फल प्राप्त होता है।।८४।।

पितृतुल्यगुणान्वितयोग: पितृधनाश्रितयोगश्च

पितृकर्मगृहे जात: पितृतुल्यगुणान्वित: ।
पितृजन्मतदीयर्क्षे जात: पितृधनाश्रित: ।।८५।।

यदि पिता के जन्मलग्न से जातक का जन्मलग्न दशमस्थ हो तो जातक पिता के तुल्य गुण वाला हो जाता है। यदि पिता की जन्मराशि या लग्न या नक्षत्र में ही जातक का भी जन्म हो तो जातक पिता के धन पर आश्रित होता है।।८५।।

मिश्रितयोगा:

पितु: षष्ठाष्टमे जात: पित्रो: शत्रुर्भवेन्नर: ।
पितुर्धर्मायवित्तेषु जात: पितृवशो भवेत् ।।८६।।

जिस जातक का जन्म पिता की राशि या लग्न से अष्टम राशि या लग्न में होता है, वह जातक पिता का शत्रु होता है (परन्तु यदि उन राशियों का स्वामी एक ही ग्रह हो तो शत्रुता नहीं होती; अपितु वैचारिक मतभेद होते हैं; जैसे कि वृष-तुला-मेष-वृश्चिक, वृष-तुला— इन राशियों के षडष्टक मित्रषडष्टक होते हैं)। जिसका जन्म पिता की नवीं, ग्यारहवीं या दूसरी राशि या लग्न में होता है, वह जातक अपने पिता का वशवर्ती (आज्ञाकारी) होता है।।८६।।

पित्रष्टमेशनक्षत्रत्रितये यस्तु जायते ।
स करोति पितुर्दुःखं पुत्रपौत्रसमन्वितः ।।८७।।

जिसका जन्म पिता की राशि या लग्न से अष्टम राशि के स्वामी के तीन नक्षत्रों में से किसी में हो तो वह जातक पिता के लिए पुत्र-पौत्र समन्वित होते हुए भी दुःखदायक होता है।।८७।।

विशेष— मान लीजिये कि किसी का जन्मलग्न मिथुन है तो उसकी अष्टम राशि मकर हुई। मकर का स्वामी शनि है। शनि के तीन नक्षत्र विंशोत्तरी के अनुसार पुष्य, अनुराधा तथा उत्तराभाद्र हैं। इनमें से किसी में भी यदि उसके पुत्र का जन्म होगा तो वह पिता के लिये दुःखदायक होगा।

पितुर्जन्मान्त्यभेशर्क्षत्रितये यस्तु जायते ।
स करोति पितुर्दुःखं दूरदेशगतो भवेत् ।।८८।।

इसी प्रकार यदि पिता की जन्मराशि या जन्मलग्न में किसी का जन्म उसके बारहवीं राशि के स्वामी के तीन नक्षत्रों में होगा तो वह भी अपने पिता के लिये दुःखदायक होगा तथा पिता को छोड़कर दूर चला जायेगा।।८८।।

विशेष— यहाँ भी स्वामी ग्रह के अधिकार वाले विंशोत्तरी नक्षत्रों को ग्रहण करना चाहिये।

श्रेष्ठजनयोगः

भाग्याधिपे विलग्नेशे दुश्चिक्ये धर्मगेऽपि वा ।
बलवान् स्वोच्चभे वापि येषां ते श्रेष्ठमानवाः ।।८९।।

जिन जातकों की कुण्डली में भाग्येश तथा लग्नेश तृतीय भाव या नवम भाव में अथवा बली, स्वक्षेत्री या उच्च राशि के होकर बैठते हैं, वे श्रेष्ट मनुष्य होते हैं।।८९।।

विशेष— तात्पर्य यह है कि जब भाग्येश भाग्य में बैठेगा तब वह स्वक्षेत्री होगा ही। यदि तृतीय भाव में बैठेगा तब उसकी पूर्ण दृष्टि नवम (भाग्य) पर होगी ही तथा यदि वे अन्यत्र भी स्व-राशि या उच्च राशि के या अन्य प्रकार से बली होकर बैठें तो भी भाग्य के लिये शुभ फल देने वाले होते हैं।

बहुभाग्य योगाः

त्रिकोणकेन्द्रे यदि भाग्यनाथे सौम्येक्षिते सौम्ययुते बलाढ्ये ।
पारावतांशादिगते शुभांशे जातो धनाढ्ये बहुभाग्ययुक्तः ।।९०।।

यदि भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में बली होकर सौम्य ग्रहों से युत अथवा दृष्ट हो अथवा पारावतांश में हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक धनाढ्य तथा बहुत भाग्य से युक्त होता है।।९०।।

धनाधिपे लाभगते तदीशे भाग्यस्थिते तद्भवनाधिपेऽर्थे ।
कर्माधिपेनापि युतेऽथ दृष्टे जातो महाभाग्ययुतो नरः स्यात् ।।९१।।

इसी प्रकार यदि धनेश (द्वितीयेश) एकादश भाव में बैठा हो तथा एकादशेश (लाभेश) धर्मभाव (नवम भाव) में हो तथा नवमेश (भाग्येश) द्वितीय भाव में हो; साथ ही वह भाग्येश कर्मेश (दशमेश) से युत या दृष्ट भी हो तो भी जातक महाभाग्य से युक्त होता है।।९१।।

भ्रातुर्धनाद्भाग्याप्ति योगः

तृतीयराशेरधिपेन युक्ते भाग्याधिपे सौम्यदृशा समेते ।
शुभान्विते शोभनखेचरांशे भ्रातुर्धनाद्भाग्यमुपैति जातः ।।९२।।

यदि भाग्येश तथा तृतीयेश की युति हो और उन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि या युति हो अथवा नवमेश शुभ ग्रहों के नवांश में हो तो जातक भाई के धन से भाग्यशाली होता है।।९२।।

पुत्राद्भाग्यवृद्धियोगः

पुत्रेश्वरे वा यदि भाग्यराशौ भाग्याधिपेनाथ युतेऽपि दृष्टे ।
तत्कारके वा यदि पुत्रभावे जातः सुताद्भाग्यमुपैति वित्तम् ।।९३।।

यदि पञ्चमेश नवम भाव में भाग्येश के साथ हो अथवा नवम में बैठकर भाग्येश से दृष्ट हो अथवा नवम भाव का कारक ग्रह पञ्चम भाव में बैठा हो तो जातक अपने पुत्र से भाग्य तथा धन प्राप्त करता है।।९३।।

ज्ञातिभिरैश्वर्यप्राप्तियोगः

ज्ञातिस्थानाधिपे भाग्ये भाग्येशे ज्ञातिसङ्गते ।
ज्ञातिकारकसंयुक्ते ज्ञातिभाग्यमुपैति सः ।।९४।।

जब चतुर्थेश नवम भाव में तथा नवमेश चतुर्थ में बैठा हो (अर्थात् चतुर्थेश तथा भाग्येश में व्यत्यय हो तथा ज्ञातिकारक से भाग्येश की युति हो तब जाति (बिरादरी) अर्थात् बन्धु-बान्धवों से भाग्योदय होता है।।९४।।

कलत्राद् शत्रुतो भाग्यवृद्धि योगाः

कलत्रकारकादेवं तत्स्थानेशाद्वदेत्तथा ।
भाग्याधिपस्य शत्रुश्च शत्रुराशिपतिस्तथा ।।९५।।
तदीशे भाग्यसम्बन्धे शत्रुभाग्यमुपैति सः ।
षष्ठाष्टमान्त्यनाथेन युक्ते नाथेऽत्र तत्फलम् ।।९६।।

इसी प्रकार स्त्रीकारक ग्रह तथा सप्तमेश से भी फल कहना चाहिये अर्थात् यदि सप्तमेश तथा भाग्येश में स्थानपरिवर्तन हो तथा कलत्रकारक की युति भाग्येश से हो तो पत्नी से वित्त की प्राप्ति तथा भाग्योदय होता है। यदि नवमेश तथा षष्ठेश का व्यत्यय हो अथवा दोनों में दृष्टिसम्बन्ध या युतिसम्बन्ध हो तो शत्रु के कारण जातक का भाग्योदय होता है। इसी प्रकार यदि भाग्य छठे, आठवें तथा बारहवें भाव के स्वामियों से युति, दृष्टि या व्यत्यय का सम्बन्ध बनाता हो तो भी शत्रु आदि से ही जातक की भाग्यवृद्धि होती है।।९५-९६।।

भाग्यहीनयोगाः

भाग्याधिपे विनाशस्थे शत्रुनीचनिरीक्षिते ।
क्रूरांशे नीचराश्यादौ भाग्यहीनो भवेन्नरः ।।९७।।

यदि भाग्येश अन्त्य भाव (८-१२) में हो तथा शत्रुग्रह अर्थात् चरराशिस्थ ग्रह द्वारा देखा जाता हो अथवा नीच राशि या अंशों में हो तो व्यक्ति भाग्यहीन होता है ।।९७।।

बहुपापसमायोगे भाग्ये हीने तदीश्वरे ।
लग्नेशे बलहीने वा भाग्यहीनो भवेन्नरः ।।९८।।

यदि भाग्य भाव में बहुत से पापग्रह एकत्रित हों तथा भाग्येश बलहीन हो अथवा लग्नेश बलहीन हो तो भी जातक भाग्यहीन होता है।।९८।।

भाग्यस्य पुनराप्तियोगः

गुरुशुक्रेक्षिते युक्ते भाग्ये तन्नायकेऽपि वा ।
लग्नेशार्थपतौ धीरे भाग्यप्राप्तिर्पुनर्भवेत् ।।९९।।

यदि नवम भाव तथा नवमेश पर गुरु, शुक्र की दृष्टि हो अथवा युति हो तथा लग्नेश एवं द्वितीयेश धीर (बलवान) हों तो जातक की भाग्यहानि होकर पुनः भाग्य प्राप्ति हो जाती है।।९९।।

पुनश्च भाग्यनाशयोगः

क्रूरराश्यंशके भाग्यनाथे शुक्रेज्यवीक्षिते ।
भाग्यलग्नेशसन्दृष्टे भाग्यनाशं करोति सः ।।१००।।

यदि भाग्येश क्रूर नवांश में तथा गुरु शुक्र से दृष्ट हो एवं भाग्यभाव पर लग्नेश की दृष्टि हो तो भाग्यनाश होता है॥१००॥

विशेष— मेरी सम्मति में तो इस योग में पुनः भाग्यप्राप्ति होनी चाहिये । इस स्थान पर आधा श्लोक नष्ट है प्राप्त नहीं है, ऐसा प्रतीत होता है।

भाग्यपुनराप्तियोग:

लग्नेशे भाग्यराशिस्थे भाग्येशे लग्नमाश्रिते ।
लाभे भाग्येशसंयुक्ते पुनर्भाग्यं लभेत्खलु ।।१०१।।

यदि लग्नेश भाग्यस्थान में हो तथा भाग्येश लग्न में हो एवं लाभस्थान में भाग्येश बैठा हो तो पुनः भाग्य प्राप्त होता है॥१०१॥

लाभभाग्येशसंयुक्तभाग्यपेऽर्थः पुनर्भवेत् ।।१०२।।

यदि लाभेश तथा भाग्येश की युति हो अथवा लाभेश-भाग्येश एक-दूसरे की राशि में अवस्थित हों तो भी पुनः अर्थाप्ति होती है॥१०२॥

ब्रह्मनिष्ठयोगा:

कर्मेशे भाग्यराशिस्थे भाग्येशे बलसंयुते ।
गुरुशुक्रयुते दृष्टे जपध्यानसमाधिमान् ।।१०३।।

यदि दशमेश नवम भाव में बैठा हो तथा नवमेश बली हो एवं गुरु-शुक्र से युत या दृष्ट हो तो इस योग में जातक ब्रह्म का ध्यान करने वाला तथा समाधि लगाने वाला होता है॥१०३॥

कर्मेशयुक्तराश्यंशराशीशे बलसंयुते ।
तदीशे भाग्यसम्बन्धे जपध्यानसमाधिमान् ।।१०४।।

कर्मेश जिस राशि में तथा जिस नवांश में हो उनके स्वामी यदि बली हों और उन राशि या नवांशेश का सम्बन्ध नवम भाव या नवमेश से हो तो जातक ध्यान-समाधि लगाने वाला होता है॥१०४॥

देवलोकांशकस्थे वा कर्मेशे भाग्यपेऽथ वा ।
पारावतांशके सौम्ये दृष्टे सुब्रह्मनिष्ठता ।।१०५।।

यदि नवमेश तथा दशमेश देवलोकांश में हों अथवा पारावतांश में हों तथा शुभ-दृष्ट हों तो जातक सम्यक् रूप से ब्रह्मनिष्ठ होता है॥१०५॥

विशेष— योगियों एवं साधु-सन्तों की कुण्डलियों में इन योगों को खोजना चाहिये।

दानशीलयोगाः

दानस्थानाधिपे स्वोच्चे शुभग्रहनिरीक्षिते ।
तत्स्थाने शुभसंयुक्ते दानकृत्स नरो भवेत् ।।१०६।।

यदि दानस्थान का स्वामी (नवमेश) उच्च का होकर शुभ ग्रह से दृष्ट हो तथा दानस्थान (नवम भाव) में शुभ ग्रह हो तो वह जातक दान करने वाला होता है।।१०६।।

पारावतादिभागस्थे दानेशे गुरुवीक्षिते ।
लग्नेशे भृगुसन्दृष्टे महादानकरो भवेत् ।।१०७।।

यदि नवमेश पारावतादि भागों में होकर गुरु से दृष्ट हो, लग्नेश शुक्र से दृष्ट हो तो जातक महादान (बड़े-बड़े दान) करने वाला अर्थात् महादानी होता है।।१०७।।

दानाधिपेन सन्दृष्टे लग्ने तन्नायकेऽपि वा ।
तस्मिन् केन्द्रत्रिकोणस्थे महादानकरो भवेत् ।।१०८।।

यदि लग्न तथा लग्नेश— इन दोनों पर नवमेश की दृष्टि हो तथा नवमेंश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो जातक महादानी होता है।।१०८।।

सिंहासनांशके दाननाथे लग्नेशवीक्षिते ।
कर्मेशेनापि सन्दृष्टे महादानकरो भवेत् ।।१०९।।

यदि नवमेंश सिंहासनांशक में हो और उस पर लग्नेश तथा दशमेश की दृष्टि हो तो जातक महादानी होता है।।१०९।।

दानशीलयोगेषु विशेषमाह

भाग्ययोगे तु सम्प्राप्ते दानयोगे तथा भवेत् ।
राजयोगेऽथ वा प्राप्ते नेतरेषां तथा भवेत् ।। ११०।।

भाग्ययोग में जब दानयोग होता है तभी दानशीलता का फल होता है भाग्ययोग न हो तथा केवल दानयोग हो तो फल नहीं प्राप्त होता।।११०।।

इतरेषां तु सम्पाते दानयोगे कथम्भवेत् ।
भाग्ययोगे नरो जातो दानस्य तु सहायकृत् ।।१११।।

यदि इन भाग्ययोग-दानयोग के साथ रेका योग, राजभङ्ग योगादि कुयोग भी हो तो दानयोग का फल प्राप्त होता है। भाग्ययोग में यदि दानयोग है तो भाग्य ही दानहेतु सहयोग करता है।।१११।।

जातः पुरोहितो वाऽथ ब्रह्मवंशसमुद्भवः ।
दानाध्यक्षोऽथ जातः स्यात् वर्णभेदविकल्पनात् ।।११२।।

यदि किसी ब्राह्मण की कुण्डली में भाग्ययोग तथा दानयोग हो तो वह स्वयं दानी

न होकर किसी राजा या सेठ के यहाँ दानाध्यक्ष होता है अथवा वर्तमान समय में वह व्यक्ति शासकीय सेवा में हो तो शासन की ओर से दी जाने वाली आर्थिक सहायता स्वीकार करने वाला उच्चस्तरीय अधिकारी होगा। इस प्रकार वर्ण, आश्रम, देश-काल एवं परिस्थिति के अनुसार फल कहना चाहिये॥११२॥

पुनश्च दानयोगौ

चतुर्थे दानभावेशे कर्मेशे केन्द्रमाश्रिते ।
व्ययेशे गुरुसन्दृष्टे महादानकरो भवेत् ।।११३।।

यदि चतुर्थ भाव में नवमेश तथा कर्मेश केन्द्र में हो; साथ ही व्ययेश (द्वादशेश) पर गुरु की दृष्टि हो तो जातक महादानी होता है॥११३॥

भाग्येशेनापि सन्दृष्टे स्वोच्चस्थे सोमनन्दने ।
लाभेशे केन्द्रभावस्थे महादानकरो भवेत् ।।११४।।

यदि बुध उच्च राशि (कन्या) का होकर भाग्येश के द्वारा दृष्ट हो तथा एकादशेश केन्द्र में हो तो भी जातक महादानकर्त्ता होता है॥११४॥

प्रतिग्रहीता (प्रतिग्रहकर्त्ता) योगा:

लग्नेशे लाभराशिस्थे कर्मेशे बलसंयुते ।
लग्नेशेनापि सन्दृष्टे दानग्रहणमिष्यते ।।११५।।

यदि लग्नेश ग्यारहवें भाव में हो, दशमेश बली हो, उस दशमेश पर लग्नेश की दृष्टि भी हो तो जातक को दान प्राप्त होता है॥११५॥

सुतेशे भाग्यराशिस्थे कर्मभाग्यपसंयुते ।
लग्नेशेनापि सन्दृष्टे दानप्राप्तिर्न संशयः ।।११६।।

यदि पञ्चमेश की युति नवमेश-दशमेश के साथ नवम भाव में हो तथा इस युति पर लग्नेश की दृष्टि हो तो वह जातक दान लेता है अथवा उसे दान मिलता है ॥११६॥

भाग्येशे कर्मनाथेन दृष्टे केन्द्रत्रिकोणगे ।
परमोच्चांशके वापि दानप्राप्तिर्न संशयः ।।११७।।

यदि भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में होकर नवमेश तथा दशमेश के द्वारा दृष्ट हो अथवा परमोच्चांशों में हो तो नि:सन्देह दानप्राप्ति होती है॥११७॥

विशेष— विद्वानों, शोधकर्त्ताओं तथा धर्मार्थ एवं लोककल्याणकारी न्यासों के अध्यक्षों की कुण्डलियों में इन योगों को देखना चाहिये। शासन द्वारा प्राप्त अनुदान भी दान की श्रेणी में ही आते हैं।

गुरुभक्तियोगद्वयमाह

गुरुस्थानेशसंयुक्तनवांशाधिपतौ यदा ।
गुरुशुक्रेक्षिते वापि गुरुभक्तियुतो भवेत् ।।११८।।

गुरु जिस राशि में हो, उसके स्वामी का नवांशेश यदि गुरु एवं शुक्र से दृष्ट हो तो जातक गुरुभक्ति वाला होता है।।११८।।

गुरुस्थाने सौम्ययुते गुरुसम्बन्धसंयुते ।
तदीशे मृदुभावस्थे गुरुभक्तियुतो भवेत् ।।११९।।

यदि नवम भाव शुभ ग्रहों से युक्त हो तथा गुरु से सम्बन्ध रखता हो एवं उसका (नवम भाव का) स्वामी मृदुभाव (केन्द्रत्रिकोण) में हो तो भी जातक गुरुभक्ति वाला होता है।।११९।।

अध्यायस्योपसंहारः

अध्यायः सप्तमः प्रोक्तश्चायुर्धर्माधिवाचकः ।
नानार्थसारसंयुक्तो व्यङ्कटेश्वरशर्मणा ।।१२०।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणावष्टमनवमभावफलविचारो
नाम सप्तमोऽध्यायः।।७।।

श्री व्यंकटेश्वर शर्मा द्वारा नाना प्रकार के सारगर्भित अर्थ से संयुक्त आयु एवं धर्म-भाव का वर्णन करने वाला यह सातवाँ अध्याय कहा गया ।।१२०।।

इस प्रकार आचार्य गुरुप्रसाद गौड़कृत सर्वार्थचिन्तामणि की 'सर्वार्थबोधिनी'
हिन्दी टीका में सातवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।।७।।

◆

अथाऽष्टमोऽध्यायः

दशमभावविचाराध्यायः

तत्रादौ दशमभावाद्विचारणीयविषयानाह

दशमात्प्रवृत्तिमाज्ञां कीर्त्तिंवृष्टिं प्रवासपूर्तादीन् ।
मानं कर्माजीवं जानुस्थानं च निर्दिशेद्दासान् ।।१।।

दशम भाव से कर्म की प्रवृत्ति, शासन-प्रशासन, यश, वर्षा, प्रवास, पूर्तकार्यादि, मान-सम्मान एवं पदप्राप्ति, जीविकोपार्जन का साधन, जानुस्थान (घुटने) तथा दासादि (नौकर-चाकर) का विचार होता है।।१।।

प्रवृत्ति— किसी व्यक्ति की जिस कार्य में स्वाभाविक रुचि होती है और जो कार्य उसके मनोनुकूल होता है, उसी में उसकी प्रवृत्ति (लगन) होती है।

पूर्त— जनकल्याण के कार्य, वाबडी, कूप, तालाब, हैण्डपम्प, प्याऊ, धर्मशाला, अन्नक्षेत्र, विद्यालय, अस्पताल आदि पूर्तकार्य हैं। इन्हें अंग्रेजी में चैरीटेबल कहते हैं। बोल-चाल की हिन्दी में इन्हें धर्मार्थ कहा जाता है।

कर्मविकलतायोगः

कर्माधिपे हीनबले सपापे कर्मादिवैकल्यमुशन्ति तज्ज्ञाः ।

यदि दशमेश निर्बल तथा पापग्रहों से युक्त हो तो कर्मवैकल्य होता है।

विशेष— कर्मवैकल्य का तात्पर्य है— कार्य का पूरा न होना अर्थात् हर कर्म का अधूरा छूट जाना। इसमें कार्य करने में निरन्तर बाधायें आती हैं।

यज्ञकर्त्तायोगा:

कर्मेशवागीशशशाङ्कपुत्रा वीर्यान्विता यज्ञकरा भवन्ति ।।२।।

दशमेश, गुरु तथा बुध— यदि ये तीनों बली हों तो जातक यज्ञ करने वाला होता है।।२।।

शुभग्रहैर्दृष्टिसमन्वितास्ते वीर्यान्विता यज्ञविशेषमाहुः ।
दुःस्थाः शशाङ्कात्मजजीवशुक्राः पापेक्षिताः कर्मविनाशमाहुः ।।३।।

यदि उक्त तीनों शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हों तथा बली हों तो विशेष प्रकार के यज्ञ का अनुष्ठान होता है। यदि बुध, गुरु, शुक्र— ये दुःस्थान में हों तथा दृष्ट हों तो किया हुआ कर्म निष्फल हो जाता है।।३।।

नाशस्थितास्तत्र तदंशनाथास्तद्युक्तराशेरधिपाश्च नाशम् ।

उपर्युक्त बुध, गुरु, शुक्र तथा उनके नवांशेश यदि नाशस्थान में हों तो भी किये गये कर्म का नाश हो जाता है।

गङ्गास्नानादियोगाः

राहौ च माने यदि वा दिनेशे भागीरथीस्नानमुशन्ति तज्ज्ञाः ।।४।।

यदि दशम भाव में सूर्य, राहु की युति हो तो जातक गंगास्नान का फल प्राप्त करता है।।४।।

माने च मीने यदि वा ससौम्ये भौमान्विते वा भविता च मुक्तिः ।
जलर्क्षगे पूर्णशशाङ्कजीवे मानस्थिते गाङ्गजलादिपूतः ।।५।।

यदि दशम भाव में मीन राशि हो और उसमें कोई शुभ ग्रह अथवा मंगल बैठा हो तो जातक जीवन्मुक्त हो जाता है। यदि दशम में जलचर राशि हो और उसमें पूर्ण चन्द्र अथवा गुरु बैठा हो तब भी जातक गंगाजल से पवित्र होता है अर्थात् गंगास्नान का लाभ करता है।।५।।

माने गुरौ शुक्रयुते च केन्द्रे स्वोच्चस्थिते तादृशतोयपूतः ।
माने धने शुक्रयुते सजीवे केन्द्रोच्चगे तादृशतोयपूतः ।।६।।

यदि मानस्थान (दशम) में गुरु + शुक्र + चन्द्र की युति हो अथवा गुरु उच्च राशि, स्वराशि आदि का होकर केन्द्र में हो तो भी उसी प्रकार के पवित्र जल में (गोदावरी, नर्मदा, सिन्धु आदि से) स्नान करता है। यदि दशम भाव में या द्वितीय भाव में गुरु + शुक्र की युति हो या फिर उच्चादि राशिगत होकर केन्द्र हों तो भी जातक को उसी प्रकार के पवित्र जल में स्नान का लाभ प्राप्त होता है।।६।।

बुधे व्यये वा यदि वा तदीशे स्वोच्चान्विते तादृशपुण्यभाक्स्यात् ।
चन्द्रे तृतीये जलराशियुक्ते सौम्यान्विते तादृशपुण्यभाक्स्यात् ।।७।।

यदि बुध व्ययभाव में हो अथवा व्ययेश स्वराशि या उच्च राशि में बैठा हो तो भी जातक गंगास्नान-जैसे ही पुण्य का भागी होता है। यदि चन्द्रमा तृतीय भाव में जलराशि में हो तथा सौम्य ग्रह से युक्त हो तो भी उसी प्रकार का पुण्य-लाभ होता है।।७।।

शुभेश्वरे केन्द्रयुते जलर्क्षे सौम्येक्षिते तादृशतोयपूतः ।

यदि शुभ स्थान (नवम) का स्वामी जलचर राशि में केन्द्र में हो तथा सौम्य ग्रह के द्वारा निरीक्षित हो तो भी गंगाजल के समान पवित्र स्नान का लाभ मिलता है।

जीर्णोद्धारकृद्योगाः

बुधे सजीवे यदि वा सभौमे प्राकारकृन्मण्डपगोपुरादीन् ।।८।।

बुध + गुरु या बुध + मंगल की युति हो तो जातक प्राकार (परकोटा), मण्डप, गोपुरादि का निर्माण कराता है॥८॥

मानस्थिते तद्गृहनाथयुक्ते करोति जीर्णोद्धरणादि तत्र ।।९।।

यदि वही बुध दशम भाव में दशमेश के साथ हो तो वह जातक देवालयादि का जीर्णोद्धार कराता है॥९॥

करोति कूपादितटाकभूमिं कर्मेश्वरे गोपुरभागयुक्ते ।
मृद्वंशके वा शुभदृष्टियुक्ते भाग्येश्वरेणापि निरीक्षिते वा ।।१०।।

जीर्णोद्धार, बावडी, कूप, तालाब आदि का भी हो सकता है। यदि दशमेश गोपुरांशक में हो तो जातक कूप-तडाग आदि का निर्माण कराता है। यदि मृद्वंश में दशमेश हो और शुभदृष्टि से युक्त हो, भाग्येश से भी दृष्ट हो तो भी जातक कूपादि का निर्माण कराता है॥१०॥

यज्ञकर्त्तायोगाः

चन्द्रात्मजे कर्मगते तदीशे भाग्यस्थिते पापविवर्जितेऽस्मिन् ।
सौम्येक्षिते शोभनभावयुक्ते यज्ञस्य कर्त्ता स भवेत्तदानीम् ।।११।।

यदि बुध दशम भाव में तथा दशमेश नवम भाव में पापग्रह से रहित होकर बैठा हो, शुभ राशि में शुभदृष्टि-युक्त हो तो जातक यज्ञकर्त्ता होता है॥११॥

कर्माधिपेऽस्मिन्यदि सोमपुत्रे स्वोच्चस्थिते वा यदि धर्मराशौ ।
विवर्जितः स्याच्छिखिराहुपापैः यज्ञस्य कर्ता स भवेत्तदानीम् ।।१२।।

यदि बुध दशमेश होकर अपने उच्च स्थान में या नवम भाव में बैठा हो और उसके साथ राहु, केतु (गुलिक भी) तथा अन्य पापग्रह न हों तो वह जातक यज्ञकर्त्ता होता है॥१२॥

कर्माधिपे स्वोच्चगते सपापे नीचांशगे नाशगतेऽपि तस्मिन् ।
विघ्नो भवत्येव मखस्य तस्य क्रूरादिषष्ट्यंशगतेऽपि चैवम् ।।१३।।

यदि दशमेश उच्च राशि में हो परन्तु नवांश में नीच का होकर बारहवें हो तो उसके यज्ञ में विघ्न अवश्य होता है। यदि दशमेश क्रूर षष्ट्यंश में हो तो भी विघ्न होता है॥१३॥

विशेष— जब कोई ग्रह उच्च राशि में हो; परन्तु साथ ही उसका नवांश चरराशि का हो तो उस उच्च राशि के फल में नीच नवांश के कारण बाधा होती है और उस ग्रह के शुभ फल में विघ्न होते हैं।

तुङ्गस्थिते सोमसुते तदीशे स्वोच्चान्विते सोमसुतेन दृष्टे ।
शुभक्षिते वा सबुधे स्वराशौ यज्ञस्य कर्त्ता स भवेत्तदानीम् ।।१४।।

यदि बुध दशम भाव में (तुंग में) बैठा हो और दशमेश अपनी उच्च राशि में बुध के द्वारा दृष्ट हो या दशमेश स्वराशि में बुध के साथ बैठकर शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो जातक यज्ञ का कर्त्ता होता है॥१४॥

विशेष— इस श्लोक में तुङ्ग का अर्थ दशम भाव है।

आज्ञाधिपयोगाः

आज्ञास्थानाधिपे सौम्ये शुभदृष्टयुतेऽपि वा ।
शोभनांशगते वापि जातस्त्वाज्ञाधिपो भवेत् ।।१५।।

दशम भाव को आज्ञास्थान भी कहते हैं; अतः यदि दशमेश सौम्य ग्रह होकर शुभ-दृष्ट या युत हो अथवा शुभनवांश में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक आज्ञाधिप (अधिकारी = प्रशासनिक अफसर आदि) होता है॥१५॥

आज्ञास्थानगते सूर्ये भूमिपुत्रेन वा युते ।
केन्द्रान्विते तदीशेऽपि क्रूरामाज्ञाङ्करोति सः ।।१६।।

यदि दशम भाव में सूर्य या मंगल अथवा दोनों हों, दशमेश केन्द्रस्थान में हो तो जातक की आज्ञा क्रूर होती है॥१६॥

विशेष— क्रूर आज्ञा का अर्थ यह है कि जातक अफसर होकर अधीनस्थों से कठिन कार्य कराता है और न मानने पर उन्हें निलम्बित या पदमुक्त भी कर देता है।

आज्ञाधिपे मन्दयुते रन्ध्रनाथेन संयुते ।
क्रूरांशे केन्द्रराशौ वा क्रूरामाज्ञाङ्करोति सः ।।१७।।

यदि दशमेश शनि के साथ तथा अष्टमेश के साथ हो, क्रूरनवांश में अथवा केन्द्र में हो तो भी जातक क्रूर आज्ञा देने वाला होता है॥१७॥

मानाधिपे केन्द्रयुते शुभयुक्तेक्षितेऽपि वा ।
शरषष्ट्यंशसंयुक्ते सौम्यामाज्ञाङ्करोति सः ।।१८।।

यदि दशमेश केन्द्र में शुभ ग्रह से दृष्ट या युत हो तथा पाँचवें षष्ट्यंश में हों तब जातक सौम्य आज्ञा देता है॥१८॥

पुनश्च क्रूराज्ञाकरयोगः

राहुमान्दियुते माने रन्ध्रे राहौ ध्वजेऽपि वा ।
नीचस्थे धर्मभावेशे क्रूरामाज्ञाङ्करोति सः ।।१९।।

यदि दशम भाव में राहु तथा गुलिक हो अथवा राहु-केतु अष्टम भाव में हो एवं नवमेश नीच राशिगत हो तो जातक क्रूराज्ञा करता है॥१९॥

सत्कीर्तियोगाः

शशाङ्के कर्किसंयुक्ते गुरुशुक्रनिरीक्षिते ।
पारावतादिभागस्थे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२०।।

यदि कर्क राशि का चन्द्रमा गुरु तथा शुक्र से दृष्ट हो, पारावतादि भागों में हो तो जातक सत्कीर्ति वाला होता है।।२०।।

तदीशे शुभसंयुक्ते शुभमध्यगतेऽपि वा ।
शुभग्रहाणामंशे वा सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२१।।

चन्द्रराशीश शुभ ग्रहों से युक्त या शुभ ग्रहों से दृष्ट हो अथवा शुभ ग्रहों के मध्य हो अथवा शुभ ग्रहों के नवांश में हो तो जातक सत्कीर्ति वाला होता है।।२१।।

कान्तिस्थानाधिपे सौम्ये स्वोच्चमित्रस्ववर्गगे ।
सौम्यषष्ट्यंशके वापि सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२२।।

यदि दशम में शुभ ग्रह अपनी राशि, मित्र राशि या उच्च राशि का हो या इन नवांशों में या मित्रनवांश आदि में हो अथवा सौम्य षष्ट्यंश हो तो जातक सत्कीर्तियुक्त होता है।।२२।।

तदीशे देवलोकस्थे सिंहांशे शुभनायके ।
बलपूर्णे विलग्नेशे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२३।।

दशमेश देवलोकांश में हो और नवमेश सिंहासनांशक में हो एवं लग्नेश पूर्ण बली हो तो जातक सत्कीर्ति से समन्वित होता है।।२३।।

पापग्रहाणां सम्बन्धे माननाथे बलक्षये ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ते सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२४।।

यदि दशमेश बलरहित होकर पापग्रहों से सम्बन्ध बनाता हो या क्रूर षष्ट्यंश में हो तो जातक सत्कीर्ति से युक्त होता है।।२४।।

विशेष— जिसकी ख्याति अच्छे कार्यों से होती है, उसे ही सत्कीर्ति कहते हैं।।२४।।

अपकीर्तियोग:

अपकीर्तियुतो जातः कर्मस्थे च रवौ शनौ ।
पापांशके पापदृष्टे पापमध्यगतेऽपि तत् ।।२५।।

यदि जातक के दशम भाव में सूर्य एवं शनि हो अथवा ये पापनवांश में पापदृष्ट या पापमध्य हों तो जातक की अपकीर्ति होती है।।२५।।

दृढव्रतयोगाः

शुभग्रहाणां सम्बन्धे मानतन्नायकेऽपि वा ।
स्वोच्चे वा स्वगृहे वापि जातो मानी दृढव्रतः ।।२६।।

यदि दशमेश तथा दशम भाव का सम्बन्ध शुभ ग्रहों से हो अथवा दशमेश उच्च-मित्र या स्वक्षेत्री हो तो जातक मानी (स्वाभिमानी) तथा दृढ़व्रती (कार्य को पूरा करने वाला) होता है।।२६।।

इङ्गितज्ञयोगः

इङ्गितज्ञोऽपि मानी स्यान्माने जीवेऽथ वा शुभे ।
तदीशे शुभसम्बन्धे शुभमध्यगतेऽपि वा ।।२७।।

यदि दशम भाव में गुरु अथवा अन्य कोई शुभ ग्रह हो तथा दशमेश का भी सम्बन्ध शुभ ग्रहों से हो या दशमेश एवं दशम भाव शुभ ग्रहों के मध्य हो तो जातक इङ्गितज्ञ (दूसरों के मन की बात को भाँपने वाला) होता है।।२७।।

विशेष— बाहरी अंग-चेष्टाओं के द्वारा व्यक्ति के आन्तरिक मनोभावों की व्याख्या करने में कुशल व्यक्ति को 'इङ्गितज्ञ' या 'इङ्गितकोविद' कहते हैं।

मानहीनयोगः

पापे माने पापदृष्टे तदीशे नीचराशिगे ।
पापराश्यंशके वापि मानहीनो भवेन्नरः ।।१८।।

यदि दशम में पापग्रह हो या उस पर पापदृष्टि हो और उसका स्वामी नीच राशि, पाप-राशि या पापनवांशादि में हो तो जातक मानहीन होता है।।२८।।

सञ्चारी-मृगयात्री योगश्च

मानाधिपे चरांशस्थे सञ्चारसहितो भवेत् ।
स्थिरांशे स्थैर्यमुद्दिष्टं मृगयात्रा द्विदेहगे ।।२९।।

इस श्लोक में तीन योग हैं— १. यदि दशमेश चरनवांश में हो तो जातक सञ्चार-सहित (घुमक्कड) होता है। २. यदि दशमेश स्थिर नवांश में हो तो जातक एक ही जगह स्थिर रहता है, उसे घूमने-फिरने में रुचि नहीं होती। ३. यदि दशमेश द्विस्वभाव राशि में हो तो जातक मृगयात्रा करने वाला होता है।।२९।।

मृगयात्रा— जिस प्रकार सभी पशु (जंगली) अपने स्थान से घूमने-चरने के लिये निकल जाते हैं और फिर वापिस अपने स्थान पर आते हैं, उसी प्रकार जिसका कर्मेश द्विस्वभाव राशि के नवांश में होता है, वह जीविकोपार्जन हेतु प्रातः अपने घर से निकलता है और सायंकाल सामान बेचकर, फेरी लगाकर या अपना काम करके घर लौटता है, उसी को मृगयात्रा कहा जाता है।

दास-दासीबाहुल्ययोगाः

षष्ठेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे मन्दसंयुते ।
केन्द्रत्रिकोणगे वापि दासीदासान् विनिर्दिशेत् ।।३०।।

यदि षष्ठेश दशम भाव में दशमेश एवं शनि के साथ बैठा हो अथवा केन्द्र त्रिकोण में बैठा हो तो उसके दास-दासियों की बहुलता होती है अर्थात् नौकर-नौकरानियाँ बहुत होते हैं।।३०।।

कर्माधिपस्थानपतौ शनिसम्बन्धसंयुते ।
षष्ठाधिपस्य सम्बन्धे बहुदासान् विनिर्दिशेत् ।।३१।।

यदि दशमेश का सम्बन्ध शनि तथा षष्ठेश दोनों से हो तो जातक के बहुत से नौकर-चाकर होते हैं।।३१।।

शुभग्रहेण सन्दृष्टे कर्मराशौ तदीश्वरे ।
भानुपुत्रेण वा युक्ते बहुदासान्विनिर्दिशेत् ।।३२।।

यदि दशम भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो अथवा दशमेश शनि से युक्त या दृष्ट हो तो जातक के बहुत से नौकर होते हैं।।३२।।

भुक्तिविचारजानुदौर्बल्यञ्चाह

कर्मनाथेन वा भुक्तिप्रश्ने पूर्तिं विनिर्दिशेत् ।
तत्र पापसमायोगे जानुदौर्बल्यमादिशेत् ।।३३।।

दशम भाव के स्वामी से भुक्तिप्रश्न (आजीविका तथा दाल-रोटी चलने का प्रश्न) कहना चाहिये। यदि दशम में पापग्रह हों तो जातक के घुटने कमजोर होते हैं।।३३।।

इति दशमभावविचार:

◆

अथ प्रव्रज्यायोगाः

ग्रहैश्चतुर्भिः सहितैस्तदीशे त्रिकोणगे केन्द्रगतैस्तु मुक्तः ।
चतुर्ग्रहैः केन्द्रगतैः प्रव्रज्यामाप्नोति जातः कथितो मुनीन्द्रैः ।।३४।।

यदि किसी कुण्डली में चार ग्रह उस स्थान के स्वामी सहित बैठे हों तथा केन्द्र या त्रिकोण में हों तो वह जातक मुक्त हो जाता है। यदि कोई भी चार ग्रह केन्द्र में बैठे हों तो जातक प्रव्रज्या प्राप्त करता है— ऐसा मुनियों का कथन है।।३४।।

विशेष— इस योग से संन्यास एवं वैराग्य की पुष्टि होने की बात श्री पु०ना० ओक ने अपनी पुस्तक 'फलज्योतिष' में कही है। मेरा भी अनुभव इसी प्रकार का है। इस योग की पुष्टि में कुछ उदाहरण कुण्डलियाँ पाठकों के लाभार्थ दी जा रहीं हैं।

श्री सन्त रविशंकर जी महाराज

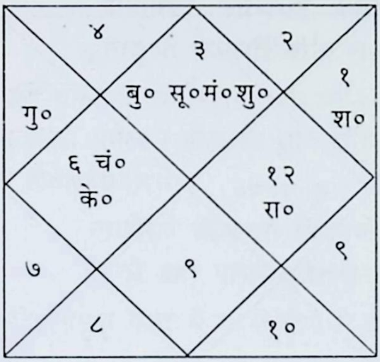
४
३
२
१
बु० सू०मं०शु०
गु०
श०
६ चं०
के०
१२
रा०
७
९
९
८
१०

श्री भक्त नामदेवजी महाराज

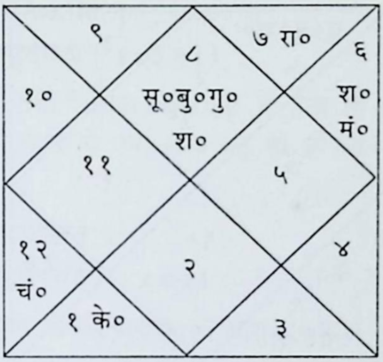
९
८
७ रा०
६
१०
सू०बु०गु०
श०
श०
मं०
११
५
१२
चं०
२
४
१ के०
३

इन कुण्डलियों में प्रथम कुण्डली सुप्रसिद्ध सन्त रावतपुरा सरकार की है। इसमें लग्नेश बुध के साथ सूर्य, मंगल तथा शुक्र बैठे हैं। इनसे उपर्युक्त श्लोक की पूर्वार्ध की शर्त पूर्ण हो रही है। इसमें मुक्तियोग है। दूसरी कुण्डली महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध भक्त सन्त श्री नामदेवजी की है, जिसमें लग्न में एक साथ चार ग्रह बैठे हैं। लग्न केन्द्र तथा त्रिकोण दोनों ही होता है।

न वीक्षितश्चेदितरग्रहेन्द्रैः लग्नाधिपः पश्यति भानुपुत्रम् ।
लग्नाधिपं वा यदि भानुपुत्रः संन्यासयोगो हि बलेन हीनः ।।३५।।

यदि लग्नेश पर अन्य ग्रहों की दृष्टि हो और इस स्थिति में वह केवल शनि को देखता हो तथा शनि लग्नेश को देखता हो तब जातक संन्यास ग्रहण करता है ।।३५।।

शनेर्दृकाणे कुमुदात्मबन्धौ मन्देक्षिते तादृशयोगमाहुः ।
मन्दांशके भूमिसुतांशके वा मन्देक्षिते चन्द्रयुते तथैव ।।३६।।

यदि चन्द्रमा शनि के द्रेष्काण में हो और शनि की उस पर दृष्टि हो तो संन्यास योग होता है अथवा शनि के नवांश या मंगल के नवांश में चन्द्रमा बैठा हो तथा शनि से दृष्ट हो या चन्द्र-शनि की युति हो तो भी संन्यास योग होता है।।३६।।

योगिराज अरविन्द घोष की कुण्डली में शनि की युति गुरु की राशि धनु में है जो कि संन्यास योग है। गुरु नानकदेवजी की कुण्डली में भी शनि-चन्द्र-युति दशम भाव में है।

योगिराज अरविन्द घोष

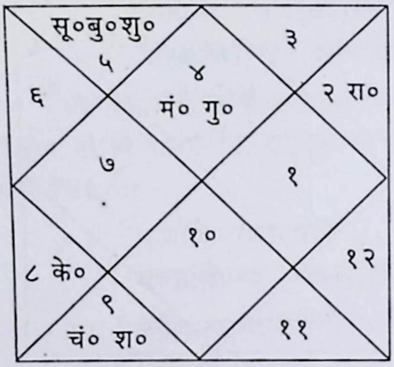
सू० बु० शु०
५
३
४
मं० गु०
६
२ रा०
७
१
१०
१२
८ के०
९
चं० श०
११

गुरु नानक देवजी

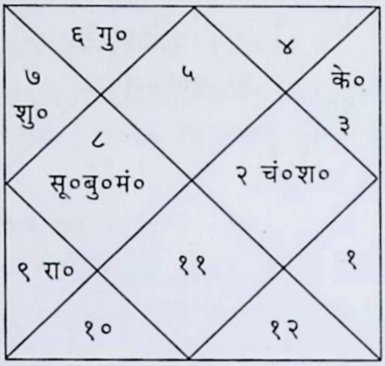
६ गु०
४
५
७
शु०
के०
३
८
सू० बु० मं०
२ चं० श०
९ रा०
११
१
१०
१२

संन्यासयोगाधिपतौ सराहौ क्रूरांशके वा गुलिकेन युक्ते ।
संन्यासवैकल्यमुदाहरन्ति भङ्गो भवेत्तस्य शुभैर्विहीने ।।३७।।

यदि जिस स्थान में संन्यास योग है, उसका स्वामी राहुयुक्त हो अथवा क्रूरांशक में हो या गुलिकसहित हो तो संन्यासवैकल्य (संन्यासभंग) होता है।।३७।।

चतुर्ग्रही योग से संन्यास— जब केन्द्र में चतुर्ग्रही योग होता है तो संन्यास योग होता है। इसका समर्थन फलदीपिका (२६.१ एवं २७.८) तथा जातकपारिजात (१५.१५) से भी होता है—

ग्रहैश्चतुर्भिः सहिते स्वनाथे त्रिकोणगैः केन्द्रगतैस्तु मुक्तः ।
जातः पञ्चचतुर्वियच्चरवरैः केन्द्रत्रिकोणस्थितैः ।
एकस्थैर्बलिभिः प्रधानबलवत् खेटा श्रमस्थो भवेत् ।।
चत्वारो द्युचराः खनाथसहिताः केन्द्रे त्रिकोणेऽथवा ।
सुस्थाने बलिनस्त्रयो यदि तदा संन्यासिसिद्धिर्भवेत् ।।

इति प्रव्रज्यायोगाः

◆

अथ लाभभावविचारः

तत्रादावेकादशभावाद्विचारणीयविषयानाह

आयेनार्थावाप्तिं पादावपि वामकर्णचिन्ताञ्च ।
जातावपि कचकुब्जाञ्ज्येष्ठान्ब्रूयाद्धनान्यासाम् ।।३८।।

एकादश भाव से धन की प्राप्ति, दोनों पैर, बाँयां कान इनका विचार किया जाता है; साथ ही केश, कुबड़ापन, ज्येष्ठ भाई-बहिनों के धन का विचार भी एकादश करना भाव से ही करना चाहिये।।३८।।

धनलाभयोगाः

धनाधिपे लाभगते लाभेशे धनमागते ।
तावुभौ केन्द्रगौ वापि धनलाभमुदीरयेत् ।।३९।।

यदि धन-भाव का स्वामी लाभस्थान में हो तथा लाभेश धन-भाव में बैठा हो तो जातक को धनलाभ होता है। यदि दोनों किसी केन्द्र में एक साथ बैठे हों तो भी धनलाभ होता है।।३९।।

लाभेश्वरे केन्द्रगते त्रिकोणे वा समन्विते ।
लाभे वा पापसंयुक्ते धनलाभमुदीरयेत् ।।४०।।

यदि लाभेश केन्द्र में या त्रिकोण में हो अथवा किसी पापग्रह के साथ एकादश (लाभ) में ही हो तो जातक को धनलाभ होता है।।४०।।

शुभमध्यगते लाभे तदीशे वा तथा स्थिते ।
पारावतादिभागस्थे धनलाभमुदीरयेत् ।।४१।।

यदि लाभ-भाव शुभ ग्रहों के मध्य में हो (द्वादश तथा दशम में शुभ ग्रह हों) अथवा लाभेश शुभमध्य में हो तथा पारावतादि भाग में हो तो धनलाभ होता है।।४१।।

लाभेशयुक्तराशीशे शुभग्रहनिरीक्षिते ।
शुभग्रहाणां मध्यस्थे धनलाभमुदीरयेत् ।।४२।।

लाभेश (एकादशेश) जिस राशि में बैठा हो, उस राशि का स्वामी ग्रह यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट तथा शुभमध्य में हो तो धनलाभ होता है।।४२।।

लाभनाथसमायुक्तनवांशाधिपतौ शुभे ।
वित्तनाथेन सन्दृष्टे धनलाभमुदीरयेत् ।।४३।।

लाभेश का जो नवांश है, उसका स्वामी यदि शुभ ग्रह होकर धनेश (द्वितीयेश) से दृष्ट हो तो धनलाभ कहना चाहिये।।४३।।

लाभाधिपसमायुक्तत्र्यंशभागपतौ शुभे ।
कर्मेश्वरेण सन्दृष्टे धनलाभमुदीरयेत् ।।४४।।

लाभेश जिस त्र्यंश (द्रेष्काण) में बैठा हो, उसका स्वामी शुभ ग्रह होकर यदि दशमेश के द्वारा दृष्ट हो तो इस योग में धन का लाभ कहना चाहिये।।४४।।

धनहानिकरयोगः लाभयोगश्च

पापग्रहाणां सम्बन्धे धनहानिं विनिर्दिशेत् ।
लाभेश्वरोक्तदिग्भाक्तु धनप्राप्तिं विनिर्दिशेत् ।।४५।।

यदि लाभ-भाव का सम्बन्ध पापग्रहों से हो तो जातक को धनहानि कहनी चाहिये।

लाभेश जो ग्रह हो, उस ग्रह की जो निर्धारित दिशा हो, उस दिशा से धनप्राप्ति होगी—ऐसा बताना चाहिये॥४५॥

लाभराश्युक्तदिग्भागात्सर्वोत्तमबलादपि ।
बलाबलवशेनैव द्रव्यलाभं विनिर्दिशेत् ।।४६।।

लाभस्थान में जो राशि हो, उसकी दिशा से या लाभस्थान में बैठे सर्वाधिक बली ग्रह की दिशा से धनलाभ कहना चाहिये॥४६॥

लाभे पापे तद् गृहे वा धनहानिं विनिर्दिशेत् ।
लाभेशे पापसम्बन्धे धननाशं विनिर्दिशेत् ।।४७।।

यदि लाभस्थान में पापग्रह हो या पापगृह (पापराशि) हो तो धनहानि कहनी चाहिये। यदि लाभेश का पापग्रहों से सम्बन्ध हो तो हानि बतानी चाहिये॥४७॥

कर्णसौख्ययोगाः कर्णहानिश्च

कर्णस्थानेश्वरे सौम्ये शुभदृष्टिसमन्विते ।
कर्णाधिपे बलवति कर्णाभरणमिष्यते ।।४८।।

एकादश भाव कर्णस्थान होता है। अस्तु; एकादश भाव का स्वामी यदि शुभ ग्रह हो या शुभदृष्ट हो, एकादशेश बली हो तो कानों में आभूषण होते हैं॥४८॥

पापग्रहाणां सम्बन्धे तन्नाशोऽत्र भविष्यति ।
लाभेशात्सोदरेशाद्वा कर्णसौख्यं विनिर्दिशेत् ।।४९।।

तदीशे शुभसम्बन्धे कर्णसौख्यं विनिर्दिशेत् ।
तदीशे पापसम्बन्धे कर्णरोगं विनिर्दिशेत् ।।५०।।

ब्रूयाज्ज्येष्ठांशलाभेन शुभपापवशादपि ।
शुभग्रहाणां सम्बन्धे दीर्घमायुर्विनिर्दिशेत् ।।५१।।

यदि एकादश भाव का सम्बन्ध पापग्रहों से हो तो जातक के कानों का नाश हो जाता है। कर्णनाश का तात्पर्य सुनने की शक्ति का नष्ट होना, बहरा हो जाना या कान को क्षति पहुँचना है। यदि एकादशेश का सम्बन्ध शुभ ग्रहों से हो तो कर्णसौख्य होता है अर्थात् कानों से सम्बन्धित कष्ट नहीं होता है। लाभेश तथा तृतीयेश से भी कर्णसौख्य बताना चाहिये; क्योंकि तृतीय भाव से दक्षिण कर्ण का विचार होता है। अतः इन स्थानों के स्वामियों का शुभ से सम्बन्धित होना कानों को निरोग रखता है तथा पापसम्बन्ध रखना कानों को हानि पहुँचाता है।

इस प्रकार कानों का विचार तृतीय तथा एकादश दोनों भावों से करना चाहिये। इनमें शुभ ग्रहों के सम्बन्ध से दीर्घायु की प्राप्ति होती है॥४९-५१॥

विशेष— श्लोक ५१ में पठित ज्येष्ठांश का अर्थ तृतीय भाव होता है।

पुनश्च हानिलाभयोगौ

पापान्विते पापदृष्टे तद्धानिं प्रवदन्ति हि ।
लाभराशेश्च दिग्भागे धनलाभमुदीरयेत् ।।५२।।
तद्राशिनाथदिग्भागाद् द्रव्यप्राप्तिमुदीरयेत् ।
लाभराशिवशादेवं चिन्तयेन्मतिमान्नरः ।।५३।।

यदि लाभ-भाव पापान्वित तथा पापदृष्ट हो तो लाभ-भाव में विचारणीय विषयों की हानि होगी। लाभस्थानगत राशि की दिशा से धनलाभ कहना चाहिये अथवा लाभेश की दिशा से द्रव्यलाभ कहना चाहिये। इस प्रकार बुद्धिमान् ज्योतिषी को एकादश भाव का विचार करना चाहिये।।५२-५३।।

विशेष— इन श्लोकों में पिछली बात ही दुहराई गई है, जिससे कि पाठकों को भली-भाँति हृदयङ्गम हो जाय। इसमें ग्रन्थकार का यही उद्देश्य है।

इत्यायभावविचारः

◆

अथ व्ययभावविचारः

तत्रादौ व्ययभावाद्विचारणीयविषयाः

व्ययभवनाद्व्ययमखिलं पतनं नरके च वैकल्यम् ।
वामाक्षिचरणयुगलं शयनस्थानं विनिर्दिशेत्प्राज्ञः ।।५४।।

बारहवें भाव से सभी प्रकार का व्यय, नरकवास, विकलता, वाम नेत्र, दोनों पैर, शयनस्थान का विचार करना चाहिये।।५४।।

शयनस्थान— शयनस्थान तथा शयनसुख का अर्थ स्त्रीसौख्य से है। वैवाहिक सुख का विचार द्वादश भाव से होता है।

विशेष विचार— बारहवें भाव से उत्तरकालामृत के अनुसार और भी बहुत-सी बातों का विचार किया जाता है; उनमें मुख्य निम्न हैं—

निद्राभङ्ग— नींद किस भी प्रकार की हो— गहरी नींद, स्वप्नयुक्त नींद या तन्द्रा— इन सबका विचार द्वादश में होता है।

बन्धन— कारावास तथा निरोध चाहे वह वैध हो या अवैध, उसका विचार बारहवें भाव से होता है।

पीड़ामुक्ति— पीड़ा, व्यथा एवं समस्याओं से मुक्ति का विचार भी व्यय-भाव से होता है।

यह व्यय-भाव है। व्यय का अर्थ इस सन्दर्भ में बृहुत् व्यापक है। धन का सद्व्यय, धन का अपव्यय, शरीर का सद्व्यय (अच्छे कार्य में उपयोग), शरीर का अपव्यय (बुरे

कार्य एवं व्यसन में उपयोग), त्याग, भोग, दान, पृथकता, छुटकारा आदि सभी व्यय के अन्तर्गत ही आते हैं।

विवाहनाश— विवाहनाश का अर्थ तलाक आदि है।

जारत्व— अपनी पत्नी या पति के अतिरिक्त सम्बन्ध रखना जारता कहलाता है। भले ही आज कल उसे मैत्री कहा जाता हो।

मृत्यु के बाद की गति— द्वादश भाव से ही मरणोत्तर लोकों का विचार करते हैं।

पापमूलाद्धनव्यययोगाः

व्यये पापसमायुक्ते तदीशे पापखेचरे ।
पापग्रहेण सन्दृष्टे पापमूलाद्धनव्ययः ।।५५।।

यदि व्यय-भाव में पापग्रह हो, व्ययेश पापग्रह हो तथा भाव एवं स्वामी पापग्रह से युत-दृष्ट हो तो पापकर्म में धन खर्च होता है।।५५।।

मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते व्यये वा तद् गृहाधिपे ।
क्रूरांशकसमायुक्ते पापमूलाद्धनव्ययः ।।५६।।

यदि व्ययेश शनि, गुलिक, राहु से युक्त हो या व्ययभाव में ये ग्रह हों अथवा व्यय-भाव तथा व्ययेश क्रूर नवांश में हों तो भी पापकार्य में धन खर्च होता है।।५६।।

धर्ममूलाद्धनव्यययोगाः

व्ययाधिपसमायुक्तनवभागपतौ शुभे ।
शुभांशे शुभमध्यस्थे धर्ममूलाद्धनव्ययः ।।५७।।

द्वादशेशस्थित नवांशपति यदि शुभ ग्रह हो या शुभ नवांश द्वादशेश स्थित हो या शुभ ग्रहों के मध्य में द्वादश भाव या फिर द्वादशेश हो अथवा दोनों हों तो धर्मकार्य में धन व्यय होता है।।५७।।

गुरुशुक्रौ व्यये वापि बुधचन्द्रौ शुभेक्षितौ ।
पारावतादिभागस्थौ धर्ममूलाद्धनव्ययः ।।५८।।

यदि व्यय-भाव में गुरु, शुक्र या चन्द्र, बुध अन्य शुभ ग्रहों से वीक्षित होकर पारावतादि भागों में बैठें हों तो धर्ममूल में धन व्यय होता है।।५८।।

विशेष— शुभ कार्य एवं कल्याणकारी कार्यों में किया गया खर्च धर्ममूल हेतु व्ययित कहा जाता है।

पुनश्च पापमूलाद्धनव्ययमाह

व्ययाधिपे त्रिकोणस्थे केन्द्रे पापनिरीक्षिते ।
परषष्ट्यंशके वापि पापमूलाद्धनव्ययः ।।५९।।

यदि व्ययेश त्रिकोण या केन्द्र में पापदृष्ट बैठा हो या क्रूर षष्ट्यंश में हो तो पापमूलक कार्य में धन का व्यय होता है॥५९॥

पापेन कर्मनाथेन व्ययेशे दृष्टिसंयुते ।
शत्रुनीचादिभागस्थे पापमूलाद्धनव्ययः ।।६०।।

यदि दशम भाव का स्वामी पापग्रह हो और उसकी व्ययेश पर दृष्टि हो अथवा शत्रु नीचादि राशिगत कर्मेश की व्ययेश पर दृष्टि हो तो पापकार्यों में धन व्यय होता है॥६०॥

पुनश्च धर्ममूलाद्धनव्ययोगः

शुभेन कर्मनाथेन दृष्टे युक्ते व्ययेश्वरे ।
स्वोच्चमित्रस्ववर्गस्थे धर्ममूलाद्धनव्ययः ।।६१।।

यदि कर्मेश शुभ ग्रह हो अथवा स्वोच्च, मित्र, स्ववर्गी होकर व्ययेश को देखता हो तो धर्मकार्य में धन व्यय होता है॥६१॥

शत्रुमूलाद्धनव्ययोगः

व्ययेशे बलहीने वा शत्रुनाथयुतेक्षिते ।
गुलिकादिसमायुक्ते शत्रुमूलाद्धनव्ययः ।।६२।।

व्ययेश निर्बल हो अथवा षष्ठेश के द्वारा दृष्ट हो या गुलिकादि (गुलिक, शनि, राहु, धूम आदि) से युक्त हो तो शत्रु के कारण धन खर्च होता है॥६२॥

स्त्रीमूलाद्धनव्ययोगः

व्ययेशे दारनाथेन बलहीनेन तेन तु ।
दृष्टे युते वा क्रूरांशे स्त्रीहेतोर्धननाशनम् ।।६३।।

यदि निर्बल सप्तमेश व्ययेश को देखता हो या युत हो या क्रूरांश में होकर व्ययेश को प्रभावित करता हो तो स्त्री के लिये धन खर्च होता है॥६३॥

भ्रातृमूलाद्धनक्षययोगः

तादृशे व्ययनाथेऽस्मिन् दृष्टे युक्तेऽथ वा भवेत् ।
तथाविधेन भौमेन भ्रातृमूलाद्धनक्षयः ।।६४।।

इस प्रकार व्ययेश को यदि निर्बल मंगल देखता हो अथवा युति करता हो तो भाई के कारण या भाइयों के कारण जातक की धन का नाश होता है (मंगल भ्रातृकारक होता है)॥६४॥

पुत्रमूलाद्धनव्ययोगः

पुत्रभावेश्वरेणापि बलहीनेन संयुते ।
दृष्टे व्ययेशे क्रूरांशे पुत्रमूलाद्धनव्ययः ।।६५।।

यदि निर्बल पञ्चमेश व्ययेश के साथ बैठा हा या क्रूरांशयुत पञ्चमेश की दृष्टि व्ययेश पर हो तो पुत्र के कारण धन व्यय होता है॥६५॥

पितृमूलाद्धनव्यययोगः

पितृस्थानेश्वरेणापि कारकेणापि वा युते ।
व्ययेशे दृष्टिसम्बन्धे पितृमूलाद्धनव्ययः ।।६६।।

इसी प्रकार दशमेश या दशम के कारण से व्ययेश का युति या दृष्टि द्वारा सम्बन्ध हो तो पिता के कारण धन व्यय होता है (पितृकारक सूर्य होता है)॥६६॥

मातृमूलाद्धनव्यययोगः

एवं मातृपयोगेन युते दृष्टे व्ययाधिपे ।
क्रूरान्विते क्रूरभावे मातृमूलाद्धनव्ययः ।।६७।।

इसी प्रकार मातृस्थान के स्वामी (चतुर्थेश) के क्रूरान्वित होकर या क्रूरभाव में व्ययेश युति-दृष्टि सम्बन्ध करे तो माता के कारण का धन व्यय होता है॥६७॥

देहवैकल्ययोगः

बलहीने तु रिष्फेशे क्रूरराश्यंशकेऽपि वा ।
नीचांशे नीचराशौ वा देहे वैकल्यमादिशेत् ।।६८।।

जब व्ययेश निर्बल हो या क्रूर राशि अंशादि में हो या नीच राशि नीच नवांश में हो तो जातक के शरीर में वैकल्य (पीड़ा, दुर्बलता, बेचैनी आदि) रहता है॥६८॥

बहुपापसमायोगे व्यये तद्भावनायके ।
मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते देहवैकल्यमादिशेत् ।।६९।।

यदि व्यय-भाव में अनेक पापग्रह बैठे हों, व्ययेश शनि, राहु, गुलिक आदि से युत हो तो भी देह में वैकल्य रहता है॥६९॥

नरकपातयोगाः

व्ययेशे पापराश्यंशे क्रूरांशे क्रूरसंयुते ।
पापग्रहेण सन्दृष्टे नरके निपतिष्यति ।।७०।।

द्वादशेश पापग्रह की राशि या क्रूर नवांश षष्ट्यंश में पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक मृत्यु के उपरान्त नरक को जाता है॥७०॥

नरके पतनं ब्रूयाद्राहुमान्दियुते व्यये ।
षष्ठाधिपेन सन्दृष्टे रन्ध्रनाथेन वा युते ।।७१।।

यदि व्यय-भाव में राहु तथा गुलिक हों तथा षष्ठेश से दृष्ट हों अथवा अष्टमेश से युत हों तो नरक में पतन होगा— ऐसा कहना चाहिये॥७१॥

व्ययेशयुक्तषष्ट्यंशे क्रूरभागादिसंज्ञके ।
क्रूरग्रहेण सन्दृष्टे नरकेपतनम्भवेत् ।।७२।।

यदि व्ययेश क्रूर षष्ट्यंश में हो तथा क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो तो भी मृत्यूपरान्त नरक में जाना पड़ता है।।७२।।

देवलोकादिज्ञानमाह

चन्द्राऽर्कयोर्यो बलवांस्तद्युक्तत्र्यंशनायकः ।
गुरुर्वा चन्द्रशुक्रौ वा सूर्यभौमौ ज्ञसूयजौ ।।७३।।

दैविकं पितृलोकन्तु तिर्यङ् नरकमेव च ।
तेषां वदेत्क्रमेणैव तल्लोकः श्रेष्ठ उच्यते ।।७४।।

चन्द्रमा तथा सूर्य— इनमें जो बली हो, वह जिस अन्य ग्रह के द्रेष्काण में स्थित हो, वह द्रेष्काणेश गुरु, चन्द्र, शुक्र, सूर्य, मंगल, बुध, शनि हों तो क्रमशः देवलोक, पितृलोक, तिर्यङ् लोक तथा नरक लोक क्रमशः जातक के लिये अनुकूल पड़ता है।।७३-७४।।

विशेष— भावार्थ यह है कि बली चन्द्र सूर्य का द्रेष्काणेश यदि गुरु होगा तो जातक को देवलोक में जाना पड़ेगा; चन्द्रमा हो तो पितृलोक में, शुक्र हो तो पितृलोक, सूर्य तथा मंगल से तिर्यक् लोक एवं बुध-शनि होने पर नरक में जाना पड़ेगा। पशु एवं पक्षी ही तिर्यङ् योनि या लोक होते हैं। रीछ-वानरादि भी इसी में आते हैं।

उच्चनीचादिफलम्

उच्चस्थे श्रेष्ठलोकः स्यान्नीचे नीचत्वमाप्नुयात् ।
समस्थिते समप्राप्तिरित्याहुश्च महर्षयः ।।७५।।

उक्त श्लोक ७३-७४ में कहा गया द्रेष्काणेश ग्रह यदि उच्च राशि का हो तो उच्च लोक की प्राप्ति होती है। यदि नीच राशिगत हो तो निम्न लोक की प्राप्ति तथा सम हो तो समलोक की प्राप्ति होती है— ऐसा महर्षियों का कथन है।।७५।।

स्वर्गप्राप्तियोगाः

शुभे स्वोच्चे व्यये वापि सौम्यखेचरवीक्षिते ।
देवलोकादिभागस्थे स्वर्गप्राप्तिर्भविष्यति ।।७६।।

यदि शुभ ग्रह उच्च राशि का होकर द्वादश भाव में बैठा हो तथा देवलोकादि भाग में होकर शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो मृत्यूपरान्त जातक को स्वर्ग की प्राप्ति होती है।।७६।।

देवेज्ये कर्मराशीशे व्ययराशिगतेऽपि वा ।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे स्वर्गप्राप्तिर्भविष्यति ।।७७।।

यदि गुरु दशमेश होकर व्यय-भाव में बैठा हो और उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो जातक को स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है।।७७।।

नेत्रस्य शुभाऽशुभकथनम्

नेत्रेशे शुभसंयुक्ते शोभनांशसमन्विते ।
शुभखेचरसम्बन्धे तन्नेत्रस्य शुभं वदेत् ।।७८।।

नेत्रेश (द्वादशेश) शुभ ग्रह से युक्त हो, शुभ षष्ट्यंश से समन्वित हो या शुभ ग्रह से सम्बन्ध रखता हो तो नेत्र का शुभ (कुशल, आरोग्य) कहना चाहिये।।७८।।

अन्यथा चेद्वदेन्नाशं पादयोरपि तत्तथा ।
तत्प्रपञ्चादिकं सर्वं धनभावे प्रदर्शितम् ।।७९।।

अन्यथा स्थिति होने पर अर्थात् द्वादशेश के पापयुक्त होने पर नेत्रों का नाश कहना चाहिये। पैरों का भी शुभाशुभ द्वादशेश की स्थिति के अनुसार कहना चाहिये। पैरों का विस्तृत फलविचार धनभाव के फलादेश में (पूर्व में) वर्णित किया जा चुका है।।७९।।

वाहनविचार:

गुरुशुक्रबुधास्तत्र वाहनं निर्दिशेद् बुधः ।
वाहनोक्तादिकं सर्वं तदिहात्र विचिन्तयेत् ।।८०।।

यदि जातक के व्यय-भाव में गुरु, शुक्र, बुध हों तो जातक को वाहनसुख प्राप्त होगा। पूर्व में चतुर्थ भाव से जिस प्रकार से वाहनसुख का विचार किया गया है, वह द्वादश भाव से भी विचारना चाहिये।।८०।।

शयनसुखविचार:

शुभग्रहाणां सम्बन्धे व्यये तद्भावनायके ।
दोलान्तु मञ्चम्प्रवदेच्छयनादिसुखन्तथा ।।८१।।

व्ययेश तथा व्यय-भाव के साथ शुभ ग्रहों का सम्बन्ध होने पर जातक को दोला (झूला-हिंडोला आदि) तथा शय्या पर शयन का सुख प्राप्त होता है।।८१।।

व्ययेशे स्वोच्चराशिस्थे शुभवर्गसमन्विते ।
शुभग्रहेण सन्दृष्टे पर्यङ्कशयनं वदेत् ।।८२।।

यदि द्वादशेश अपनी उच्च राशि में तथा शुभ वर्गो में हो एवं शुभ ग्रहों से वीक्षित हो तो जातक को पर्यङ्क (पलंग) का सुख प्राप्त होता है।।८२।।

विचित्रमञ्चशयनं व्ययेशे परमोच्चगे ।
भाग्यनाथेन वा दृष्टे मणिरत्नविभूषितम् ।।८३।।

यदि व्ययेश अपनी परमोच्च राशि में हो तो जातक को विचित्र (अनोखा) पलङ्ग उपलब्ध होता है। यदि व्ययेश पर भाग्येश की दृष्टि हो तो मणिरत्नविभूषित पलंग प्राप्त होता है॥८३॥

विशेष— आज के प्रसङ्ग में उत्कृष्ट इमारती लकड़ी या हाथीदाँत आदि से जडित आधुनिक सुख-सुविधायुक्त पलंग समझना चाहिये। उसमें प्लाष्टिक आदि का भी उपयोग हो सकता है।

पापग्रहाणां सम्बन्धे व्यये तद्भावनायके ।
क्रूरांशे क्रूरसन्दृष्टे शयनादिसुखं न हि ।।८४।।

यदि व्यय-भाव तथा व्ययेश के साथ पापग्रहों का सम्बन्ध हो या व्ययेश क्रूर नवांश, क्रूर षष्ट्यंश में हो या व्यय-भाव ऐसी स्थिति में हो तो जातक को शयन का सुख नहीं होता है॥८४॥

व्ययेशः पापखेटोऽपि स्वोच्चमित्रस्वराशिगः ।
तस्य नाथोऽपि तत्स्थाने शयनादिसुखं वदेत् ।।८५।।

यदि व्ययेश पापग्रह भी हो, किन्तु उच्च राशिगत, स्वराशिगत या मित्र राशिस्थ हो तथा व्ययेश अधिष्ठित राशि का स्वामी भी स्वराशि, उच्च राशि, मित्रराशि या नवांशादि गत हो तो जातक को शयनादि का सुख होता है॥८५॥

नीचे व्यये वा लग्नेशे शत्रुनाथेन वीक्षिते ।
मन्दमान्द्यगुसंयुक्ते शयनादिसुखं न हि ।।८६।।

यदि लग्नेश नीच राशिगत हो या व्यय-भाव में बैठा हो तथा षष्ठेश से युत या दृष्ट हो अथवा शनि, गुलिक या राहु से युत या वीक्षित हो तो शयनसुख नहीं होता है॥८६॥

देवोपासनाकथनम्

पञ्चमे भृगुसंयुक्ते चन्द्रेण सहिते तथा ।
ताभ्यां दृष्टेऽथ वा पुत्रे स्त्रीदेवोपास्तिमादिशेत् ।।८७।।

यदि पञ्चम भाव में शुक्र-चन्द्र की युति हो अथवा पञ्चम भाव शुक्र + चन्द्र से दृष्ट हो तो जातक स्त्रीदेवोपासक (शक्ति = दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि) होता है॥८७॥

पञ्चमे पुंग्रहयुते पुन्देवोपास्तिमादिशेत् ।
पञ्चमे भानुसम्बन्धे सूर्यशङ्करभाजनः ।।८८।।

पञ्चम में पुंग्रह (सूर्य-मंगल-गुरु) होने पर जातक पुरुष देवों की उपासना करता है तथा पञ्चम में सूर्य का सम्बन्ध हो तो जातक सूर्योपासक या शिवोपासक होता है॥८८॥

चन्द्रे तथाविधे जाते यक्षिणी देवता भवेत् ।
स्कन्दो वा भैरवो वाऽपि सौम्यसम्बन्धवीक्षिते ।।८९।।

यदि पञ्चम भाव में चन्द्रमा अवस्थित हो तो जातक यक्षिणी की उपासना करता है। बुध का सम्बन्ध यदि पञ्चम से हो तब जातक स्कन्दस्वामी कार्तिकेय की भक्ति करता है।।८९।।

उपास्या शारदा सौम्ये विष्णुर्वा सात्त्विको गुरौ ।
चामुण्डां पञ्चमे शुक्रसम्बन्धे तु विनिर्दिशेत् ।।९०।।

पञ्चम में बुध होने पर जातक सरस्वती का उपासक होता है तथा शुक्र की उपस्थिति चामुण्डा की भक्ति दर्शाती है।।९०।।

शनौ प्रेताशनी प्रोक्ता श्मशाननिलया भवेत् ।
राहुकेतुयुते तत्र परपीडनदेवता ।।९१।।

यदि शनि पञ्चम भाव में बैठा हो तो जातक प्रेताशनी देवी (जो कि श्मशान में रहती है) का भक्त होता है। यदि शनि के साथ पञ्चम में राहु-केतु में से कोई युत हो तो जातक परपीडाकारक देवों की उपासना करता है।।९१।।

परपीडनदेवता— मारण, उच्चाटन, मोहन आदि करने वाले तान्त्रिक इसी श्रेणी में आते हैं।

विवक्षा— इस प्रसङ्ग में पाठकों के मन में यह शंका हो सकती है कि यहाँ बारहवें भाव का विवेचन चल रहा है और श्लोक ८७ से ९१ तक पाँच श्लोक पञ्चम भाव से सम्बन्धित हैं। इनमें द्वादश भाव या भावेश का कोई उल्लेख नहीं है। उपासना के सारे योग पञ्चम भाव तथा पञ्चमेश पर ही आधारित हैं; फिर भी इस अध्याय में इनको क्यों दिया गया है?

शंका होना उचित है। इसका समाधान इस प्रकार है कि पञ्चमभाव 'मन्त्र विचार' का भी है; अत: मन्त्र-जप तथा उपासना दोनों का सम्बन्ध पञ्चम भाव से होने से यहाँ दिये गए श्लोक पञ्चम भाव के हैं; अत: उन्हें पञ्चम में देना ही समीचीन था; परन्तु जैमिनि-सूत्र तथा बृहत्पाराशरहोराशास्त्र के अनुसार बारहवें भाव से भी उपासना का विचार किया जा सकता है।

व्यय-भाव से उपासना का विचार— शारीरिक तथा मानसिक ऊर्जा का व्यय उपासना में होता है; अत: आत्मकारक कुण्डली (कारकांश) से द्वादश भाव में ग्रहों की स्थिति के अनुसार महर्षि जैमिनि एवं पराशर ने उपास्य देवों का कथन किया है। इसी प्रकार अमात्यकारक से द्वादश भाव के ग्रहानुसार भी उपासना कही गई है। यथा—

अमात्याद् द्वादशे राशौ पापर्क्षे पापसंयुते ।
तदापि क्षुद्रदेवस्य भक्तिर्भवति निश्चितम् ।।

स्वार्थे वा परार्थे उपासनामाह

उक्तेष्वेतेषु खेटेषु स्वोच्चमित्रांशकेषु च ।
तदेव भजनं स्वार्थं परार्थं त्वन्यथा भवेत् ।।९२।।

यदि उक्त ग्रहों में कोई मित्रनवांश, उच्चनवांश का हो तो देवता की उपासना जातक अपने लिये करता है; अन्यथा नीच शत्रु आदि के अंश में होने पर वह उपासना दूसरे के लिये होती है।।९२।।

सौम्यक्रूरोपासना वेत्याह

सौम्येक्षितेषु सर्वेषु मृद्वंशादिगतेषु च ।
तदेव सौम्यता वाच्या क्रूरांशे क्रूरता भवेत् ।।९३।।

यदि उपलिखित ग्रह सौम्य ग्रहों से दृष्ट हों या मृद्वंश में हों तो उपासना सौम्य प्रकार की होगी; लेकिन क्रूरांश से क्रूरता होगी।।९३।।

उपास्यदेवानां संख्यामैत्र्यादिकथनम्

द्वित्र्यादिग्रहयोगेन तद्देवभजनम्भवेत् ।
लग्नाधिपस्य मन्त्रेशे मित्रे तन्मित्रमादिशेत् ।।९४।।
शत्रुत्वे शत्रुभूतः स्यात्समत्वे समता भवेत् ।।९५।।

यदि पञ्चम भाव में दो, तीन या अधिक ग्रहों से उपासनायोग बनता हो तो उतनी संख्या में देवताओं की भक्ति कहनी चाहिये। यदि लग्नेश पञ्चमेश का मित्र हो तो वह देवता मित्र-भाव से रहेगा, शत्रु हो तो शत्रु-भावापन्न होगा। यदि सम होगा तो सम रहेगा।।९४-९५।।

अध्यायोपसंहारः

लग्नाद् द्वादशराशीनां फलं प्रोक्तं मयाधुना ।
संगृह्य सारमखिलमध्यायस्त्वष्टमो भवेत् ।।९६।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ दशमादिभावफलनिरूपणो नामाष्टमोऽध्यायः ।।८।।

यहाँ तक मैंने सम्पूर्ण सारसंग्रह करके बारहों भावों का फल कह दिया है (इस अध्याय में १०-११-१२ भावों का फल कहा गया है)।।९६।।

इस प्रकार आचार्य गुरुप्रसाद गौड़कृत सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ की 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका में आठवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।।

* * *

अथ नवमोऽध्याय:

राजयोगाध्याय:

तत्रादौ राजाधिराजयोग:

षड्भिर्ग्रहैरुच्चसमन्वितैः स्याद्राजाधिराजो बहुदेशभर्त्ता ।
उच्चस्थितैः पञ्चभिरत्र राजा शक्त्यान्वितो देवगुरौ विलग्ने ।।१।।

जब छ: ग्रह उच्च राशियों में स्थित हों तब उसमें उत्पन्न जातक राजाधिराज होता है। वह बहुत से प्रदेशों का शासक होता है । जब पाँच ग्रह उच्च के हों तथा बली गुरु लग्न में हो तब भी जातक शक्तिशाली राजा होता है ।।१।।

कुम्भे विलग्ने भृगुनन्दने वा स्वोच्चस्थिते भूमिपतिश्चतुर्भिः ।
उच्चस्थितैर्नीचवियुक्तभागैः क्रूरादिषष्ट्यंशविहीनभागैः ।।२।।

यदि कुम्भ राशि का लग्न हो तथा लग्न में शुक्र बैठा हो तथा चार ग्रह उच्च के हों तो जातक भूमिपति होता है; परन्तु सभी प्रकार के राजयोगों में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि उच्च ग्रहों को नीच नवांशों तथा क्रूर षष्ट्यंशकों में नहीं होना चाहिये।।२।।

नृपयोगाः

लग्ने वृषे तत्र गते शशाङ्के षड्भिर्ग्रहैरुच्चगतैः नृपः स्यात् ।
कस्मिन् गृहे स्वोच्चयुते तु सर्वैः स्वक्षेत्रगैर्भूपतितुल्यजातः ।।३।।

यदि वृष लग्न हो, उसमें चन्द्रमा बैठा हो तथा छ: ग्रह उच्च के हों तो जातक राजा होता है। ये किसी भी भाव में बैठे हों; परन्तु उच्च के हों। यदि स्वक्षेत्री हों तो जातक राजतुल्य होता है।।३।।

विशेष— जातकपारिजात (७.२४) में वृष लग्नस्थ चन्द्र के साथ हो और उस पर छ: अन्य ग्रहों की दृष्टि हो तो राजा होना कहा गया है—

चन्द्रे वृषोदयगते यदि षड्भिरन्यैर्दृष्टेऽतिबाल्यवयसि क्षितिनायकः स्यात् ।
तुङ्गस्थितैकखचरे निजमित्रयातैरन्यैः समेति नरपालसमानभोग्यम् ।।

इस प्रकार की ग्रहस्थिति भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र की कुण्डली में दिखाई देती है ।

भगवान् श्रीकृष्ण

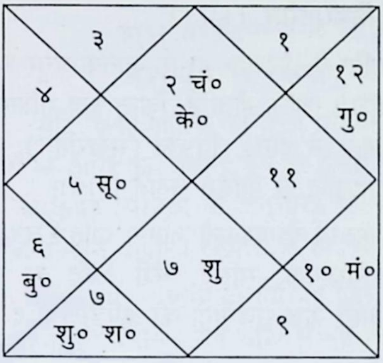

श्रीमद्भागवत महापुराण के संस्कृत टीकाकार ने अन्वितार्थप्रकाशिका टीका में दशम स्कन्ध पूर्वार्ध के तृतीय अध्याय में यह कुण्डली 'खमाणिक्य' नामक ज्योतिष ग्रन्थ के अनुसार उद्धृत की है । इसमें चन्द्रमा वृष लग्न में बैठकर उच्च का हो रहा है । सूर्य स्वराशि, मंगल उच्च, बुध उच्च, गुरु स्वराशि, शुक्र स्वराशि तथा शनि भी उच्च राशि का है । इस प्रकार चार ग्रह उच्च के तथा तीन स्वराशि के हैं; जो कि उच्चतुल्य ही है ।

खमाणिक्य के अनुसार—

उच्चस्थाः शशिभौमचान्द्रिशनयोर्लग्नं वृषो लाभगो
जीवः सिंहतुलालिसुक्रमवशात्पूषोशनो राहवः ।
नैशीथः समयोऽष्टमी बुधदिनं ब्रह्मर्क्षमैत्रक्षणे
श्रीकृष्णाभिधमम्बुजेक्षणमभूदाविः परं ब्रह्म तत् ॥

मूलत्रिकोणाङ्कितराशियुक्तैः मित्रर्क्षगैर्वा यदि वक्रयुक्तैः ।
कस्मिन् गृहे स्वोच्चयुतेऽत्र शेषैः नीचांशहीनैर्नृपतुल्यजातः ।।४।।

यदि ग्रह मूल त्रिकोण राशियों में, मित्र राशियों में वक्री हों तथा शेष कुछ उच्च राशि के हों; परन्तु नीचांश में न हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति राजा के तुल्य वैभव वाला होता है॥४॥

उत्तम नवांश— किसी भी राजयोग या शुभयोग में कोई भी ग्रह भले ही उच्चादि राशिगत हो; परन्तु उसका नवांश निकृष्ट नहीं होना चाहिये; क्योंकि राशि में उच्च होने पर भी यदि ग्रह नीच नवांश में है तो उसका उच्च होना सर्वथा निष्फल हो जाता है। यही ग्रन्थकार का आशय है, जिसे श्लोक २ तथा ४ में व्यक्त किया गया है। इसीलिये फलदीपिका (७.३) में ग्रह को शस्तांश में होना आवश्यक माना गया है—

यद्येकोऽपि विराजितांशुनिकरः सुस्थानवक्रगो
नीचस्थोऽपि करोति भूपसदृशं द्वौ वा त्रयो वा ग्रहाः ।
एवं चेज्जनयन्ति भूपतिममी शस्तांशराशिस्थिताः
तद्वच्चेद्वहवो नृपं समुकुटच्छत्रोल्लसच्चाम्बरम् ॥३॥

जनयति नृपमेकोऽप्युच्चगो मित्रदृष्टः
प्रचुरधनसमेतं मित्रयोगाच्च सिद्धम् ।

विवसुविसुखमूढव्याधितं बन्धतप्तं
वधदुरितसमेतं शत्रुनिम्नर्क्षगेषु ।।५।।

यदि एक भी ग्रह उच्च राशि में, मित्र राशि में, मित्रदृष्ट हो तो जातक प्रचुर धन-धान्य-वैभव से सम्पन्न मित्रमण्डली से युक्त विशिष्ट व्यक्ति होता है; किन्तु शत्रु राशिगत, नीच राशिगत ग्रह व्यक्ति को विवसु (घर-मकान से हीन), विसुख (सुखरहित), मूढ (नासमझ), रोगी, बन्धन से दु:खी, मारण-ताडनादि से पीड़ित बनाते हैं।।५।।

विशेष— आधुनिक समय में राजा का तात्पर्य वैभवशाली जानना चाहिये तथा जो राजनीति में परम्परागत रूप से हैं, उनको विधायक, सांसद, मंत्री आदि का योग कुण्डली की मीमांसा करके बताना चाहिये । आगे कुछ राजयोगों की कुण्डलियाँ दी जा रही हैं—

भगवान् श्री रामचन्द्र जी

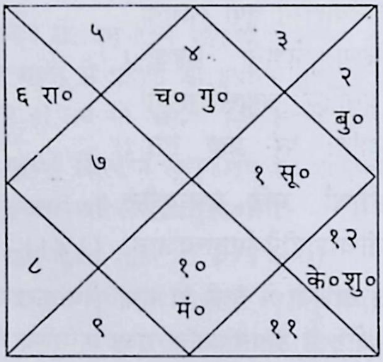
५
४
३
६ रा०
च० गु०
२
बु०
७
१ सू०
८
१०
१२
के०शु०
९
मं०
११

आदि शङ्कराचार्य

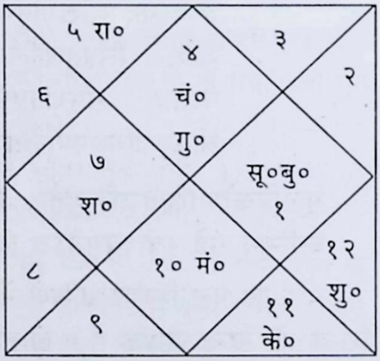
५ रा०
४
३
६
चं०
गु०
२
७
श०
सू०बु०
१
८
१० मं०
१२
शु०
९
११
के०

उन्तीसवें शङ्कराचार्य

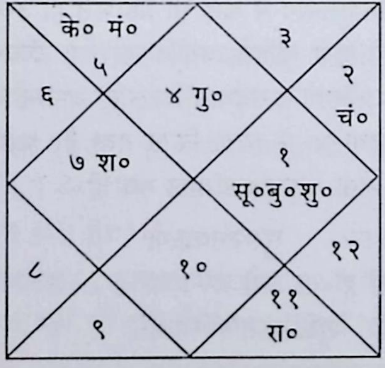
के० मं०
५
३
६
४ गु०
२
चं०
७ श०
१
सू०बु०शु०
८
१०
१२
९
११
रा०

श्री अटलबिहारी वाजपेयी

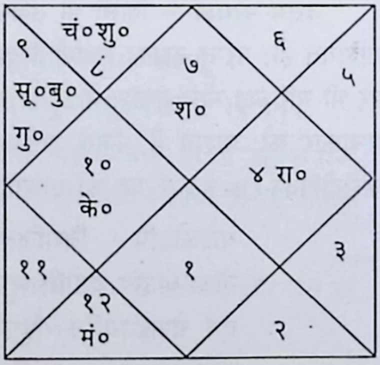
चं०शु०
९
८
सू०बु०
गु०
७
श०
६
५
१०
के०
४ रा०
११
१
३
१२
मं०
२

इन कुण्डलियों में ग्रहों की उच्चता स्पष्ट देखी जा सकती है।

विविधयोगाः

शुभं वर्गोत्तमे जन्म वेशिस्थाने च सद्गृहे ।
अशून्येषु च केन्द्रेषु कारकाख्यग्रहेषु च ।।६।।

यदि किसी जातक का जन्म वर्गोत्तम लग्न में हो तो शुभ होता है। यदि वेशि-स्थान (सूर्य के आगे का अर्थात् सूर्य से दूसरा स्थान) में शुभ ग्रह हो तो भी जन्म शुभ होता है। कारकग्रह (पराशर के अनुसार) या भावकारक शुभ स्थान में हो; लग्न तथा केन्द्र से केन्द्रस्थान अशून्य (खाली न हो) होना शुभ होता है।।६।।

वर्गोत्तम— लग्न अथवा ग्रह जिस राशि में हो, उसी नवांश में भी हो तो वर्गोत्तम कहलाता है। जैसे— मेष राशि में मेष का नवांश, वृष राशि में वृष का नवांश वर्गोत्तम होगा।

वर्गोत्तम चक्र

सम्पूर्ण राशि	वर्गोत्तम नवांश राशि	नवांश का क्रमांक	अंशकला से	अंशकला तक
मेष	मेष	प्रथम	०°-००'से	३°-२०'तक
वृष	वृष	पञ्चम	१३°-२०'से	१६°-४०'तक
मिथुन	मिथुन	नवम	२६°-४०'से	३०°-०'तक
कर्क	कर्क	प्रथम	०°-००'से	३°-२०'तक
सिंह	सिंह	पञ्चम	१३°-२०'से	१६°-४०'तक
कन्या	कन्या	नवम	२६°-४०'से	३०°-०'तक
तुला	तुला	प्रथम	०°-००'से	३°-२०'तक
वृश्चिक	वृश्चिक	पञ्चम	१३°-२०'से	१६°-४०'तक
धनु	धनु	नवम	२६°-४०'से	३०°०'तक
मकर	मकर	प्रथम	०°-००'से	३°-२०'तक
कुम्भ	कुम्भ	पञ्चम	१३°-२०'से	१६°-४०'तक
मीन	मीन	नवम	२६°-४०'से	३०°-०'तक

वेशि तथा वाशि— सूर्य से द्वितीय में ग्रह होने पर वेशियोग होता है शुभ-ग्रह होने पर शुभवेशि तथा पापग्रह होने पर पापवेशि होता है। इसी प्रकार सूर्य से बारहवें भाव में ग्रह होने पर वाशियोग होता है, जो कि शुभ तथा अशुभ दोनों प्रकार का होता है।

उभयचरी— यद्यपि इस स्थान पर केवल वेशियोग का ही उल्लेख है; परन्तु सूर्य का ही योग होने से इसे भी नये ज्योतिषियों की दृष्टि से समझाया जा रहा है। जब सूर्य के आगे-पीछे दोनों ओर ग्रह होते हैं तो उभयचरी योग बनता है। इसमें वेशि तथा वाशि दोनों योग एक साथ बनते हैं; अतः यह सूर्य को मध्य करने वाला योग होता है। इन योगों में शुभ वेशि ही महत्त्वपूर्ण है।

वेशि योग

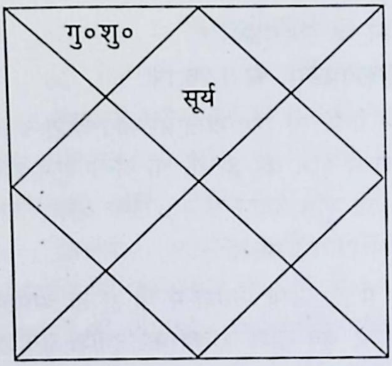

वाशि योग

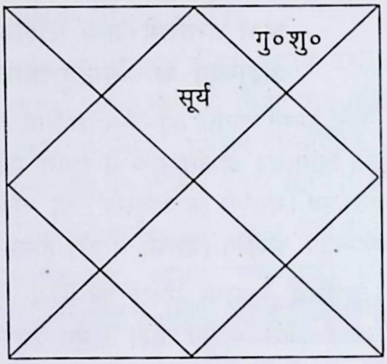

उभयचरी योग

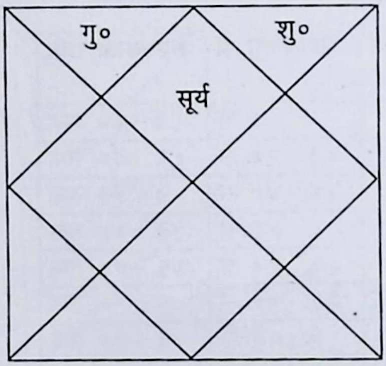

उभयचरी योग

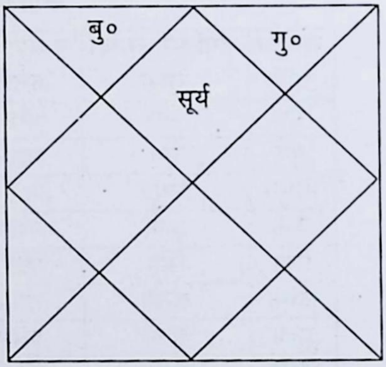

हित्वाऽर्कं सुनफाऽनफादुरुधराः स्वान्त्योभयस्थैर्ग्रहैः
शीतांशोः कथितोऽन्यथा तु बहुभिः केमद्रुमोऽन्यैस्त्वसौ ।
केन्द्रे शीतकरेऽथ वा ग्रहयुते केमद्रुमो नेष्यते
केचित्केन्द्रनवांशकेष्वपि वदन्त्युक्तिप्रसिद्धा न ते ।।७।।

सूर्य को छोड़कर चन्द्र से द्वितीय स्थान पर ग्रह होने पर सुनफा योग होता है। इसे सुनभा भी कहते हैं। इसी प्रकार चन्द्रमा से बारहवें भाव में सूर्य को छोड़कर कोई भी ग्रह होने पर अनफा योग होता है। चन्द्र से दोनों ही ओर द्वितीय तथा द्वादश में सूर्य को छोड़कर ग्रह होने पर दुरुधरा योग कहलाता है। यदि सुनफा, अनफा या दुरुधरा योगों में से कोई योग न हो तो उस कुण्डली में केमद्रुम योग होता है। यह केमद्रुम धन को नहीं टिकने देता। यदि चन्द्रमा केन्द्र में बैठा हो अथवा किसी ग्रह से युत हो तो केमद्रुम नहीं होता— ऐसा कहते हैं अर्थात् केमद्रुम का भङ्ग मानते हैं। कुछ आचार्य मानते हैं कि चन्द्र से चारो केन्द्रों में ग्रह हों तो केमद्रुम नहीं होता। कुछ आचार्यों का मानना है कि नवांश कुण्डली में चन्द्र से आगे-पीछे छः ग्रह हों तो केमद्रुम भङ्ग हो जाता है; परन्तु इस मत

को बहुमत का समर्थन प्राप्त नहीं है।।७।।

विशेष— केमद्रुम योग के लिये हिन्दी में निम्न दोहा प्रसिद्ध है—

आगे पीछे चन्द्र के जो न परै ग्रह कोया ।
केमद्रुम यह योग है सब धन डारै खोय ।।

सौम्ये स्मरारिनिधनेष्वधियोग इन्दोः
तस्मिंश्च भूपसचिवक्षितिपालजन्म ।
सम्पन्नसौख्यविभवा हतशत्रवश्च
दीर्घायुषो विगतरोगभयाश्च जाताः ।।८।।

अधियोग— यदि चन्द्रकुण्डली में चन्द्रमा से ६-७-८ स्थानों में शुभ ग्रह हों तो अधियोग होता है। इस योग में जन्म लेने वाला जातक सुख, वैभव, विलास से युक्त होता है। उसके शत्रु परास्त होते हैं। वह राजा का सलाहकार या राजातुल्य ही होता है। वह दीर्घायु तथा रोगादि भय से रहित होता है।।८।।

सुनफा योग

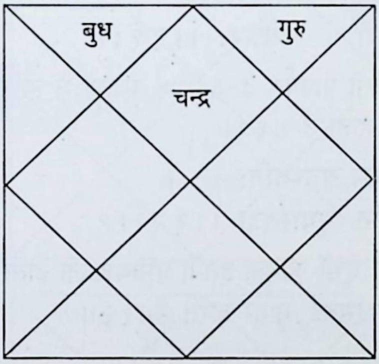

अनफा योग

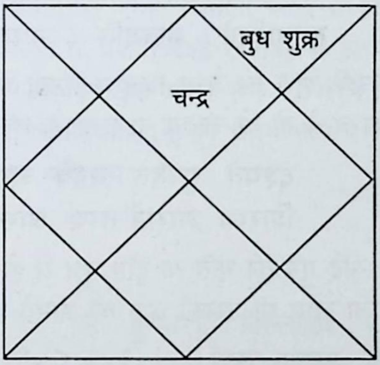

दुरुधरा योग (धुरन्धरा योग)

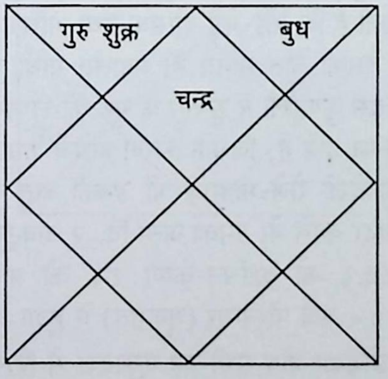
गुरु शुक्र
बुध
चन्द्र

अधियोग

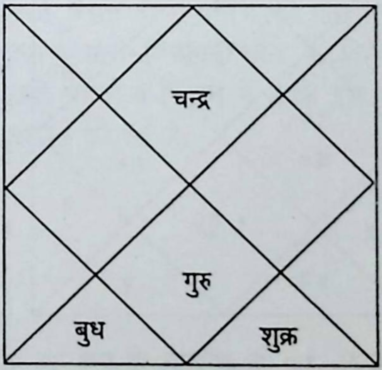
चन्द्र
गुरु
बुध
शुक्र

लग्नाधियोग— जिस प्रकार चन्द्रमा से ६-७-८ भावों में शुभ ग्रह होने पर अधियोग होता है, उसी प्रकार लग्न से भी इन स्थानों में शुभ ग्रह होने पर लग्नाधियोग होता है।

राजतुल्ययोगाः

लग्ने चन्द्रे गुरौ सौख्ये कर्मस्थे भृगुनन्दने ।
स्वोच्चस्वर्क्षस्थिते मन्दे नृपतुल्यो भवेन्नरः ।।९।।

यदि चन्द्रमा लग्न में हो, गुरु सुखस्थान में, शुक्र कर्म-भाव में एवं स्वराशि या उच्च राशि का शनि हो तो जातक राजा के समान होता है।।९।।

दशमैकादशे रिष्फलग्नवित्तसहोत्थभे ।
ग्रहास्तिष्ठन्ति चेत्सौम्या नृपतुल्यो भवेन्नरः ।।१०।।

यदि शुभ ग्रह दशम, एकादश, द्वादश, लग्न, वित्त (द्वितीय) तथा सहोत्थ (तृतीय में) बैठे हों तो जातक राजाओं के समान ही प्रभावशाली होता है ।।१०।।

केन्द्रत्रिकोणगाः सौम्या पापाः षड्लाभसोदराः ।
लग्नाधिपे बलवति नृपतुल्यो भवेन्नरः ।।११।।

यदि शुभ ग्रह केन्द्र-त्रिकोण स्थानों में तथा पापग्रह ३-६-११ स्थानों में हों तथा लग्नेश बली हो तो जातक राजाओं के तुल्य होता है ।।११।।

दृश्यते युज्यते वापि चन्द्रजेन बृहस्पतिः ।
शिरसा शासनं तस्य धारयन्ति नृपास्तदा ।।१२।।

यदि गुरु की युति या दृष्टि बुध से हो तो ऐसा जातक इतना प्रभावशाली होता है कि राजा लोग भी उसकी बात को मानते हैं, उसका आदर करते हैं।।१२।।

महात्मा गान्धी

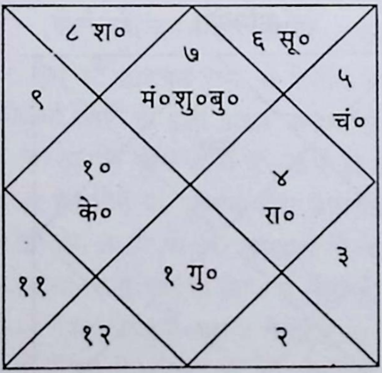

श्लोक १२ में गुरु तथा बुध की युति-दृष्टि होने पर जातक को इतना प्रभावशाली बनाती है कि बड़े-बड़े शासक तथा अधिकारी भी उसकी बात मानते हैं। महात्मा गांधी जी की इस कुण्डली में सप्तम के गुरु की लग्नस्थ बुध पर दृष्टि है, जिसके कारण अंग्रेज शासक तथा देशी राजे-महाराजे भी उनकी बात का समादर करते थे। उनका जन्म दि. २ अक्टूबर १८६९ को आश्विन-कृष्ण १३ को प्रातः ७/४५ बजे पोरबन्दर (गुजरात) में हुआ था। श्लोक सं. १० के अनुसार भी एक गुरु को छोड़कर शेष सभी ग्रह एकादश से द्वितीय

तक बैठे हैं, जो उस योग की अधिकांश शर्तों को पूरा करते हैं।

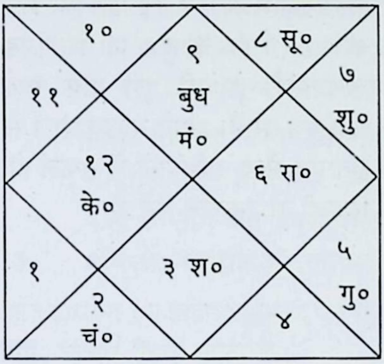
१०
९
८ सू०
११
बुध
मं०
७
शु०
१२
के०
६ रा०
१
३ श०
५
गु०
२
चं०
४

पार्श्व में दी गई यह कुण्डली भारतरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद (पूर्व राष्ट्रपति) की है। इसमें भी लग्न में बैठे बुध पर पञ्चमस्थ गुरु की पूर्ण दृष्टि है, जो कि श्लोकसंख्या १२ की शर्त को पूरा कर रही है। यही कारण है कि पं० जवाहर लाल नेहरू जैसे व्यक्ति को भी उनके सामने झुकना पड़ता था।

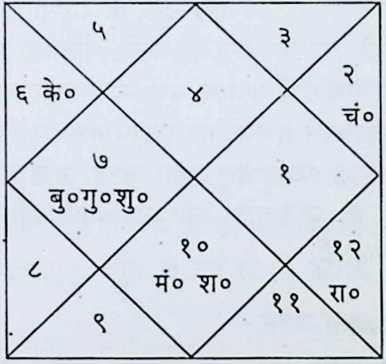
५
३
६ के०
४
२
चं०
७
बु०गु०शु०
१
१०
मं० श०
८
१२
रा०
११
९

यह कुण्डली लौहपुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल की है, जिन्होंने भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देशी राजाओं से अपनी बात मनवा कर उन्हें भारत-संघ में विलय के लिये तैयार किया था। इसमें चतुर्थ भाव में बुध-गुरु की युति स्पष्ट है।

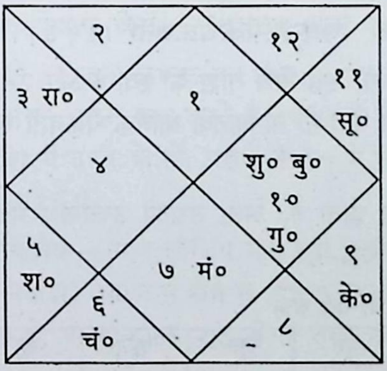
२
१२
३ रा०
१
११
सू०
४
शु० बु०
१०
गु०
५
श०
७ मं०
९
के०
६
चं०
८

यह कुण्डली दिल्लीश्वर पृथ्वीराज चौहान की है। इसमें बुध तथा गुरु की दशम भाव में युति उनकी सैन्य संगठन क्षमता को स्पष्ट करती है। पृथ्वीराज की बात पर योद्धा अपना प्राण निछावर करने के लिये तैयार रहते थे। सैन्य-विज्ञान में उनके इस गुण की प्रशंसा की गई है।

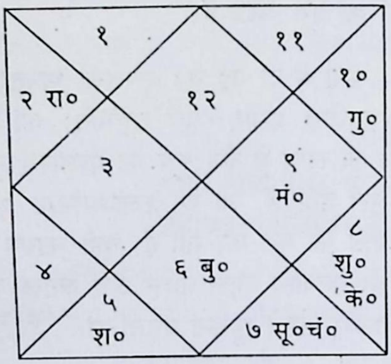

यह कुण्डली अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति श्री आइजनहावर की है, इनका जन्म १४ अक्टूबर १८९० ई० को हुआ था। इस कुण्डली में एकादशस्थ गुरु की पूर्ण दृष्टि स्वक्षेत्री सप्तमस्थ बुध पर है। अपने बुद्धिकौशल से ये राजनीति एवं सैन्य अभियानों में सफल होकर एक सिपाही से राष्ट्रपति बने थे।

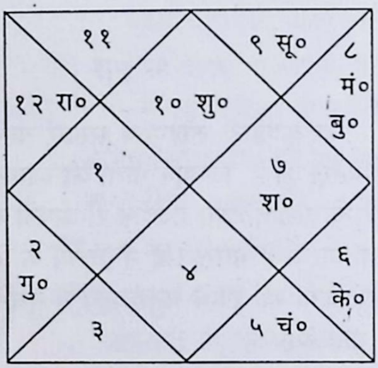

यह कुण्डली श्री माओत्से तुंग की है, जो चीन जैसे विशाल देश के राष्ट्रपति थे। इनकी इस कुण्डली में पञ्चम भाव के गुरु तथा एकादश भावस्थ बुध की परस्पर दृष्टि है। साथ ही दशम भाव (राज्यभाव) में शनि भी उच्च का है। इस प्रकार कुण्डली में बुध-गुरु की युति-दृष्टि अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नीचभङ्गराजयोग:

नीचस्थितो जन्मनि यो ग्रहः स्यात्तद्राशिनाथोऽथ तदुच्चनाथः ।
स चेद्विलग्नाद्यदि केन्द्रवर्ती राजा भवेद्धार्मिकचक्रवर्ती ।।१३।।

जन्मसमय जो ग्रह नीच राशि में स्थित हो, उस नीच राशि का स्वामी और उसका उच्चनाथ यदि जन्मलग्न (विलग्न) से केन्द्र में बैठा हो तो जातक धार्मिक चक्रवर्ती राजा होता है॥१३॥

तदुच्चनाथ:— सूर्य मेष में उच्च का होता है; अत: उसका उच्चनाथ मङ्गल चन्द्रमा वृष में उच्च का होता है। आगे चक्र देखें—

ग्रहों के उच्चनाथों का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रह
मंगल	शुक्र	शनि	बुध	चन्द्र	गुरु	शुक्र	उच्चनाथ

इस प्रकार श्लोक १३ के अनुसार उच्चनाश तथा नीच राशि का स्वामी— दोनों ही लग्न से केन्द्र में स्थित हों तब यह नीचभङ्ग राजयोग होता है।

विशेष— इस श्लोक में 'स चेद्विलग्नाद्यदि केन्द्रवर्त्ती' शब्द आया है, जबकि जातकपारिजात (७.१३) में 'स चन्द्रलग्नाद्यदि' केन्द्रवर्ती पाठ है। यही पाठ फलदीपिका (७.२६) में भी है। फलदीपिका ने अध्याय ७ श्लोक २९ में जन्मलग्न तथा चन्द्रलग्न दोनों से ही नीच भङ्ग राजयोग की बात कही है—

नीचे तिष्ठति यस्तदाश्रितगृहाधीशो विलग्नाद्यदा
चन्द्राद्वा यदि नीचगस्य विहस्योच्चर्क्षनाथोऽथ वा ।
केन्द्रे तिष्ठति चेत् प्रपूर्णविभव: स्याच्चक्रवर्ती नृपो
धर्मिष्ठोऽन्यमहीशवन्दितपदस्तेजो यशो भाग्यवान् ।।

जातकाभरण (राजयोगाध्याय-६५) के अनुसार भी यह योग लग्न से केन्द्रस्थिति के अनुसार विचार किया जाता हैं—

चेत्खेचरो नीचगृहं प्रयात: तदीश्वरश्चापि तदुच्चनाथ: ।
केन्द्रस्थितौ तौ भवत: प्रसूतौ प्रकीर्तितौ भूपतिसम्भवाय ।।

भूपतितुल्यभाग्ययोग:

निशाकरे केन्द्रगते विलग्नं त्यक्त्वा त्रिकोणे यदि जीवदृष्टे ।
शुक्रेण दृष्टे बलपूर्णयुक्ते जातो नरो भूपतितुल्यभाग्य: ।। १४।।

यदि चन्द्रमा लग्न के अतिरिक्त किसी भी केन्द्र में या त्रिकोण में बैठकर गुरु से दृष्ट हो अथवा बली शुक्र से दृष्ट हो तो जातक के भाग्य राजा के समान होते हैं।।१४।।

पुनश्च नीचभङ्गराजयोग:

नीचस्थिता जन्मनि ये ग्रहेन्द्रा: स्वोच्चांशगा राजसमानभाग्या: ।
उच्चस्थिता चेदपि नीचभागा ग्रहा न कुर्वन्ति तथैव भाग्यम् ।।१५।।

जो ग्रह जन्म-कुण्डली में नीच राशिगत हों; परन्तु नवांश कुण्डली में उच्च नवांश में हों तो वे अच्छा फल करते हैं तथा राजा के समान भाग्य देते हैं। इसके विपरीत यदि ग्रह राशि में उच्च के हों; परन्तु नवांश में नीच के हों तो वैसा उत्तम फल प्रदान नहीं करते हैं।।१५।।

विशेष— मान लीजिये यदि सूर्य तुला राशि के २१.४० अंश पर है तो यह मेष (उच्च नवांश) नवांश में होने से शुभ फल करेगा, परन्तु जन्म-कुण्डली में यदि सूर्य मेष राशि में है; परन्तु उसके २३° हैं तो तुला नवांश (नीचांश) का होने से वैसा फल नहीं करेगा।

ऐश्वर्यप्रदयोगा:

ग्रहा बलाढ्या यदि पूर्वषट्के स्वोच्चस्थिता: पूर्वदले नृप: स्यात् ।
तद्व्यत्ययं पश्चिमभाग्ययुक्ता मिश्रस्थिताश्चेदुभयत्र भाग्यम् ।।१६।।

यदि पूर्वषट्क (लग्न से छठे भाव तक) में बली ग्रह हों तो जातक को जीवन के पूर्वार्ध में ऐश्वर्य प्राप्त होता है। यदि जन्म-कुण्डली के उत्तरदल (सप्तम से द्वादश तक) में बली ग्रह स्थित हों तो जीवन के उत्तरार्ध में ऐश्वर्य प्राप्त होता है। यदि पूर्वदल तथा उत्तरदल दोनों में बली ग्रह हों तो जीवन के पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध दोनों में ऐश्वर्य रहता है॥१६॥

त्रेधा विभज्यन्तु वयःप्रमाणं खण्डत्रयं तत्र वदन्ति सन्तः ।
व्ययादिकं प्राथमिके च खण्डे शुभग्रहाः शोभनमत्र दद्युः ।।१७।।

खण्डे द्वितीये बहवश्च सौम्याः तथैव सौख्यं तु तृतीयखण्डे ।
खण्डे तु यस्मिन् बहवश्च पापा नीचांशगा मूढसमन्वितास्तु ।।१८।।

दुःखं भवेत्तत्र विशेषतस्तु राज्यात्पदभ्रंशमुदाहरन्ति ।
एवं भवेच्छोभनखेचरेन्द्रैः खण्डान्वितैः शोभनकालमाहुः ।।१९।।

आयु को तीन खण्डों में विभाजित कर जन्म-कुण्डली के द्वादश भावों में समायोजित करे। लग्न से चतुर्थ भाव तक प्रथम खण्ड, पञ्चम से अष्टम तक द्वितीय (मध्य) खण्ड तथा नवम से द्वादश तक तीसरा खण्ड होगा। प्रत्येक भाग में चार राशियाँ या एक सौ बीस अंश होंगे। अब प्रथम, द्वितीय या तृतीय जिस खण्ड में शुभ ग्रह होंगे वह आयुखण्ड सुख-ऐश्वर्ययुक्त रहता है। जिस खण्ड में पापग्रह हों, उसमें कष्ट, हानि तथा पतन होता है। नीच तथा अस्तंगत ग्रह भी दु:खदायक होते हैं, पदभ्रंश (अवनति) होता है। इस प्रकार शुभाशुभ ग्रहों से आयुखण्डों का विचार करना चाहिये॥१७-१९॥

विशेष— इस खण्डविभाजन में यदि मिश्रित ग्रह हों अर्थात् शुभाशुभ दोनों प्रकार के ग्रह हों तो दोनों प्रकार का फल प्राप्त होता है।

कुण्डली में आयु के त्रिखण्डों का बोधक चक्र

पूर्व खण्ड	मध्य खण्ड	तृतीय खण्ड
लग्न, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ	पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम	नवम, दशम, एकादश, द्वादश

पुनश्च नृपतुल्ययोगाः

लग्ने गुरौ बुधे केन्द्रे भाग्यनाथेन वीक्षिते ।
लग्नेशे वापि सन्दृष्टे नृपतुल्यो भवेन्नरः ।।२०।।

यदि लग्न में गुरु हो, बुध केन्द्र में होकर भाग्येश से दृष्ट हो तथा लग्नेश से भी दृष्ट हो तो जातक राजा के तुल्य होता है॥२०॥

सप्तमे जीवसंयुक्ते त्रिकोणे वा समन्विते ।
लग्नाधिपेन सन्दृष्टे नृपतुल्यो भवेन्नरः ।।२१।।

यदि सप्तम भाव में अथवा त्रिकोण में बैठा गुरु लग्नेश से दृष्ट हो तो भी जातक राजा के समान होता है।।२१।।

नृपमानसमन्वितयोगः

केन्द्रे शनौ त्रिकोणे वा स्वोच्चमूलत्रिकोणगे ।
राज्याधिपेन सन्दृष्टे नृपमानसमन्वितः ।।२२।।

यदि शनि केन्द्र या त्रिकोण में स्वराशि, मूल त्रिकोण या उच्च राशि का होकर बैठा हो और उस पर दशमेश की दृष्टि हो तो जातक को राजसत्ता से सम्मान प्राप्त रहता है।।२२।।

राजराजयोगः

कर्मेशे रन्ध्रभावस्थे स्वोच्चमित्रांशसंयुते ।
पारावतांशके वापि राजराजो भवेन्नरः ।।२३।।

यदि दशमेश अष्टम भाव में स्वराशि, मित्रराशि, उच्च राशि या नवांशादि का हो तथा पारावतांश में भी हो तो जातक राजाओं का राजा (राजराज) होता है।।२३।।

नीचे गुरौ विलग्नस्थे रन्ध्रस्थे वाऽथ धर्मपे ।
तथाविधांशसंयुक्ते राजराजो भवेन्नरः ।।२४।।

यदि नीच का गुरु (मकर का) लग्न में हो अथवा अष्टम भाव में हो तथा नवमेश तथाविध अंश (पूर्व श्लोक में कथित) अर्थात् पारावतांश में हो तो जातक 'राजराज' होता है।।२४।।

गुरौ व्यये शनौ लाभे रवौ वा विक्रमाधिपे ।
गुरौ व्यये विलग्नेशे राजराजो भवेन्नरः ।।२५।।

यदि गुरु द्वादश भाव में शनि एकादश में अथवा सूर्य एकादश भाव में हो गुरु तृतीयेश हो तथा लग्नेश व्यय-भाव में हो तो इन दो योगों में जातक राजाओं का राजा होता है।।२५।।

नृपतियोगाः

पञ्चमे जीवसंयुक्ते चन्द्रे केन्द्रे बृहस्पतौ ।
स्थिरलग्ने तदीशे तु राज्यस्थे नृपतिर्भवेत् ।।२६।।

यदि पञ्चम भाव में गुरु-चन्द्र की युति हो अथवा चन्द्र से केन्द्र में गुरु हो अथवा स्थिर लग्न का स्वामी दशम भाव में हो तो जातक इन योगों में नृपति (राजा) होता है।।२६।।

पूर्वषट्के ग्रहाः सर्वे यस्य तिष्ठन्ति जन्मनि ।
भाग्याधिपो धनस्थे वा सचन्द्रे नृपतिर्भवेत् ।।२७।।

जिसके जन्मसमय में सभी शुभाशुभ ग्रह लग्न से छठे भाव तक हों अथवा नवमेश धनस्थान में चन्द्र के साथ हो तब भी जातक राजा होता है॥२७॥

नृपश्रेष्ठयोगाः

चन्द्राधिष्ठितराश्यंशनाथे केन्द्रायकोणगे ।
बुधात्केन्द्रगते वापि राजराजो भवेन्नरः ।।२८।।

यदि चन्द्रमा का नवांशेश तथा राशीश केन्द्र तथा त्रिकोण में हो अथवा बुध से केन्द्र में तो जातक राजाओं में श्रेष्ठ होता है। राजराज का अर्थ राजाओं में श्रेष्ठ होना भी होता है॥२८॥

निशाकरः सभौमस्तु वित्ते वा विक्रमेऽपि वा ।
पञ्चमे राहुसंयुक्ते राजराजो भवेन्नरः ।।२९।।

यदि चन्द्रमा तथा मङ्गल द्वितीय या तृतीय भाव में बैठा हो, राहु पञ्चम में हो तो जातक राजाओं में श्रेष्ठ होता है॥२९॥

भाग्याधिपसमायुक्तनवांशाधिपतौ सुखे ।
पुत्रस्थानगते वापि नृपश्रेष्ठो भवेन्नरः ।।३०।।

यदि नवमेश का नवांशेश चतुर्थ भाव में हो अथवा पञ्चमस्थ हो तो जातक राजाओं में श्रेष्ठ होता है॥३०॥

क्रूरे सकर्मभावेशे ग्रहास्तिष्ठन्ति चेत्क्रमात् ।
लग्नादिपूर्वषट्केऽस्मिन् राजराजो भवेन्नरः ।।३१।।

दशमेश यदि पापयुक्त हो तथा सभी ग्रह कुण्डली के पूर्वषट्क में क्रमशः हों तो जातक राजाओं में श्रेष्ठ होता है॥३१॥

अन्यदेशे राजयोगः

लग्ने चरे तदीशेऽपि चरराश्यंशकान्विते ।
भाग्येशे चरराशिस्थे भूमिपालोऽन्यदेशगः ।।३२।।

यदि चरलग्न (मेष-कर्क-तुला-मकर) हो तथा लग्नेश भी इन्ही राशि अंशों (नवांशों) में हो, भाग्येश भी चरराशि में स्थित हो तो ऐसा जातक अन्य देश में जाकर राजा बनता है॥३२॥

विशेष— जब किसी कुण्डली में सुनिश्चित रूप से राजयोग हो, तब यदि श्लोक ३२ का यह योग भी विद्यमान हो तो उस जातक का भाग्योदय अपने जन्मस्थान से उत्तर स्थान में दूर जाकर होता है और वहाँ जाकर वह चल-अचल सम्पत्ति का स्वामी बनता है। चुनाव आदि में सफलता प्राप्त कर उच्च पद प्राप्त कर लेता है— ऐसा बताना चाहिये।

राजयोगों का तात्पर्य— जब यह ग्रन्थ लिखा गया था तब इस देश में छोटे-बड़े-मझोले हजारों राजा थे। किसी गाँव का जमीदार भी राजा कहलाता था। उन सब के पास अपने वैभव के अनुसार भूमि, राज्य, कोष तथा सेना भी होती थी। आज के सन्दर्भ में राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, उपप्रधानमंत्री, मंत्री, सचिव, परामर्शदाता, सभी वर्गों के न्यायाधीश, मुख्यमंत्री, उपमुख्यमंत्री, राज्यपाल, उपराज्यपाल, मन्त्रिपरिषद् के सदस्य, विभिन्न विभागों के केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सञ्चालक (डाइरेक्टर), लोकसभाध्यक्ष, लोकसभा उपाध्यक्ष, राज्यसभाध्यक्ष, राज्यसभा उपाध्यक्ष, प्रान्तीय विधानसभाओं के अध्यक्ष, विधानपरिषदों के अध्यक्ष, जिलों के कलेक्टर, उपजिलों के डिप्टी कलेक्टर, स्थानीय निकायों के निर्वाचित अध्यक्ष जन आदि तथा जनता के लोकप्रिय नेतागण सभी राजा हैं।

ज्योतिषी को विचारपूर्वक राजयोगों का फल कहना चाहिये और उसे देश-काल-परिस्थिति के अनुसार लागू करना चाहिये।

चन्द्रकुण्डली के योग— इसी प्रसङ्ग में पूर्व में चन्द्रकुण्डली के योग दिये गये हैं, उनके विषय में यह समझ लेना चाहिये कि उनमें सूर्य-राहु एवं केतु का ग्रहण नहीं होता। उनके होने तथा न होने से कोई अन्तर नहीं पड़ता। अनफा, सुनफा तथा दुरुधरा योगों के निर्माण में केवल पञ्चताराग्रहों की भूमिका रहती है। अतः केवल मंगल, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि— इन्हीं को चन्द्र के आगे-पीछे हैं या नहीं— यह विचारना चाहिये। दुरुधरा योग का शुद्ध संस्कृत नाम तो धुरन्धरा है। चन्द्रकुण्डली के इन योगों का फल तभी होता है, जब चन्द्रमा क्षीण न हो, साथ ही योगकारक ग्रह भी बली हो, तभी पूर्ण फल प्राप्त होता है; अन्यथा नहीं। चन्द्रमा यदि राहु-केतु के साथ हो या योगकारक ग्रह अस्तंगत या नीच राशि में हो तो फल मिला-जुला होता है। जातक-पारिजात (६.१०७) में कहा भी है—

चन्द्रः सराहुर्यदि वा सकेतुः चन्द्रादहिर्वा यदि रिफः यातः ।
नीचास्तगो वा यदि योगकर्ता जातस्य मिश्रं फलमाहुरार्याः ॥

चन्द्रमा के पक्ष-बल आदि का विचार भी कर लेना चाहिये। जातकपारिजात में इन चन्द्रयोगों के फल के सम्बन्ध में और भी विशेष कहा गया है। उनके अनुसार यदि ग्रह स्वराशि, उच्चराशि या मित्रराशि में हों तभी फल होता है, अन्यथा नहीं। इसी प्रकार स्वांश, उच्चनवांश तथा मित्रनवांश का भी फल होता है—

स्वोच्चस्वमित्रभवनोपगतेषु सर्वं प्राप्नोति जातमनुजो नियतं यदुक्तम् ।
स्वांशेषु वा निजसुहृद् गृहसंयुतेषु प्राहुस्तथैव फलमस्ति पराशराद्याः ॥

गजकेसरी योग— यद्यपि इस ग्रन्थ में गजकेसरी नाम से कोई योग नहीं दिया गया है; परन्तु उसकी ग्रहस्थिति को राजयोगकारक माना है। चन्द्रमा से यदि केन्द्र में गुरु

हो तो गजकेसरी योग बनता है। परन्तु इसमें चन्द्रमा नीच, अस्त नहीं होना चाहिये। जातकपारिजात के अनुसार—

केन्द्रस्थिते देवगुरौ मृगांकाद्योगस्तदाहुर्गजकेसरीति ।
दृष्टे सितार्येन्दुसुतैः शशाङ्के नीचास्तहीनैर्गजकेसरी स्यात् ।।
गजकेसरि सञ्जातः तेजस्वी धनधान्यवान् ।
मेधावी गुणसम्पन्नो राजप्रियकरो भवेत् ।।

इस प्रकार गजकेसरी भी चन्द्रयोगों में अति महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली योग है।

राजयोगेषु गुरुचन्द्रयोरुत्तमांशस्य महत्त्वम्

राजयोगादिसञ्जाते तथा वाच्योऽन्यथा न हि ।
उत्तमांशगते चन्द्रे गुरौ नीचांशवर्जिते ।।३३।।

पूर्वोक्त दूर देश में राजयोग का फल तभी कहना चाहिये, जब कुण्डली में राजयोग हों; अन्यथा नहीं। अब आगे के राजयोग हेतु कहते हैं कि यदि चन्द्रमा उत्तम नवांश में हो तथा गुरु नीच नवांश में न हो तभी राजयोग होता है।।३३।।

नृपतुल्ययोगः

शुभषष्ट्यंशके सूर्ये नृपतुल्यो भवेन्नरः ।

यदि चन्द्र गुरु के शुभनवांश के साथ सूर्य शुभ षष्ट्यंश में हो तो जातक राजा के समान वैभवशाली होता है।

धरापतियोगः

त्रयो वा द्वौ खगौ वापि चत्वारो नीचसंयुताः ।।३४।।
शुभषष्ट्यंशसंयुक्ताः स्वोच्चांशे वा धरापतिः ।।३५।।

यदि तीन या दो अथवा चार ग्रह नीच राशियों में हों; परन्तु शुभ षष्ट्यंशों में हों तथा स्वनवांश या उच्च नवांश में हों तो जातक धरापति (राजा) होता है।।३४-३५।।

विशेष— जातकपारिजात (७.१०) में इस योग में उत्पन्न को धार्मिक चक्रवर्ती कहा गया है। तात्पर्य यह है कि जातक कोई शंकराचार्य तुल्य महात्मा भी हो सकता है—

नीचङ्गता द्वित्रिचतुर्ग्रहेन्द्राः षष्ट्यंशके शोभनभागयुक्ता ।
स्वतुङ्गराश्यंशसमन्विता वा धरापतिर्धार्मिकश्चक्रवर्ती ।।

पुनश्च नृपयोगः

नीचस्थितांशनाथस्तु खेटः केन्द्रत्रिकोणगः ।
चरलग्ने तदीशे तु चरांशादौ नृपो भवेत् ।।३६।।

यदि नीचगत ग्रह का नवांशेश त्रिकोण में हो तथा चरलग्न का स्वामी चरराशि तथा चरनवांश में हो तो जातक राजा होता है।।३६।।

विशेष— जातकपारिजातकार इस योग में जन्म ग्रहण करने वाले जातक को प्रबल राजा कहते हैं। उनके अनुसार—

नीचस्थितग्रहनवांशपतौ त्रिकोणे केन्द्रेऽथवा चरग्रहे यदि जन्मलग्ने ।
तद्भावपे चरग्रहांशसमन्विते वा जातो महीपतिरतिप्रबलोऽथवा स्यात् ।।

नृपसमयोगः

माने राहौ भवे मन्दे भाग्यनाथेन वीक्षिते ।
लग्नेशे नीचखेटेन युते नृपसमो भवेत् ।।३७।।

यदि दशम भाव में राहु, एकादश में शनि भाग्येश से दृष्ट हो तथा लग्नेश नीचग्रह से युत हो तो जातक राजा के समान होता है।।३७।।

विशेष— श्री वैद्यनाथ दीक्षित (जातकपारिजात-७.१९) ने इस योग को निम्न शब्दों में दिया है—

राहो कर्मणि लाभगे रविसुते भाग्याधिपेनेक्षिते ।
लग्नेशे यदि नीचखेटरहिते पृथ्वीशतुल्यो भवेत् ।।

पुनश्च राजयोगमाहः

अंशतो भावतो वापि स्वोच्चमूलत्रिकोणगः ।
राजयोगास्तु निर्दिष्टस्तेषां योगे बहुत्वदाः ।।३८।।

यदि कोई ग्रह नवांश में या भाव में उच्च या मूलत्रिकोण राशि का हो तो भी राजयोग होता है। उक्त राजयोगों में ऐसी स्थिति बहुत्व (अधिकता) का फल प्रदान करती है।।३८।।

इति राजयोगाः

◆

अथ जातकभङ्गयोगाः

तत्रादौ चाण्डालयोगः

जीवे सकेतौ यदि वा सराहौ चाण्डालता पापनिरीक्षिते चेत् ।
नीचांशके नीचसमन्विते वा जीवे द्विजश्चेदपि तादृशः स्यात् ।।३९।।

यदि गुरु की युति केतु या राहु के साथ हो तथा उस युति पर पापग्रहों की दृष्टि हो अथवा कुण्डली में गुरु नीच राशिनवांश में हो तो जातक द्विजकुल में जन्म लेने पर भी चाण्डाल के समान आचार-विचार वाला होता है।।३९।।

विशेष— इस योग को ग्रन्थान्तरों में 'गुरुचाण्डाल योग' भी कहा गया है।

जातकभङ्ग योगों की परिभाषा— ऐसे योग जिनसे किसी का मानव जीवन अकारथ या व्यर्थ हो जाय, जातकभङ्ग योग कहलाते हैं। जातकपारिजात (६.१) ने ऐसे योगों को 'रेका' नामक दारिद्र्य योग, प्रेष्य योग तथा केमद्रुम योग— इन तीन श्रेणियों में बाँटा है। इन योगों की अधिकता से शुभ योगों का फल भी नहीं प्राप्त होता है। चौथे राजभङ्ग योग होते हैं। ये सब जातकभङ्गयोगों के अन्तर्गत आते हैं—

केचिद्योगाः राजयोगस्य भङ्गाः केचिद्रेका नाम दारिद्र्ययोगाः ।
केचित्प्रेष्याः के च केमद्रुमाख्याः ते चत्वारो जातकभङ्गकराः स्युः ॥

विप्रसमानयोगः

ध्वजाहिमन्दैः सहितेन्द्रपूज्ये शुक्रेक्षिते वा शशिसूनुदृष्टे ।
शूद्रोऽपि चेद्विप्रसमानमेति विद्याञ्च सर्वामधिगम्य जातः ।।४०।।

यदि केतु या राहु तथा शनि, इनसे युत गुरु पर शुक्र या बुध की दृष्टि हो तो शूद्र-कुल में जन्म लेकर भी वह जातक ब्राह्मण के समान विद्या पढ़कर विद्वान् हो जाता है (यह चाण्डालयोग को निष्प्रभावी करने वाला योग है)॥४०॥

विशेष— स्पष्ट है कि गुरु के ऊपर बुध, शुक्र की दृष्टि अति शुभ होती है।

लुब्धयोगः

मेषे शशाङ्के रविसूनुदृष्टे भिक्षाशनी भूमिसुतेन दृष्टे ।
निःश्रीर्विलग्नस्य निशाकरस्य लुब्धो दिनेशात्मजदृष्टियोगात् ।।४१।।

यदि मेष के चन्द्रमा पर शनि की दृष्टि हो तो जातक भिक्षा माँग कर खाता है। यदि चन्द्र पर मंगल की दृष्टि भी शनि के साथ हो तो जातक लक्ष्मीरहित होता है। यदि लग्न या चन्द्र शनि से युत या दृष्ट हो तो जातक लुब्ध (पराये धन को पाने की तृष्णा से युक्त) होता है॥४१॥

विशेष— लोभी, भिखारी तथा निःश्री— ये तीनों एक-जैसे ही होते हैं; क्योंकि इनको मानापमान का ध्यान नहीं होता।

उक्तयोगानामपवादः

शुभग्रहाणामंवलोकनेन हीनाद्भवेत्तत्र समन्विताद्वा ।
तत्कालहोराधिपतौ धराजे केन्द्रे शनौ चेद्यदि वा विलग्ने ।।४२।।
शुभग्रहाणामवलोकहीने दासस्तु भिक्षाशनदेहशीलः ।।४३।।

पूर्वकथित लुब्धादि योगों पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो उनका दुष्प्रभाव कम हो जाता है। युति का भी यही प्रभाव होता है। तत्काल होरापति (जन्म के समय जिस वार का होरा हो, उसका स्वामी) यदि मंगल से केन्द्र में हो, शनि केन्द्र में या लग्न में हो

तथा शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तो भी जातक दास तथा भिक्षाशनी होता है।।४२-४३।।

किसी-किसी विद्वान् ने 'तत्कालहोराधिपतौ' का अर्थ 'जन्मलग्नेश' किया है।

विविधरोगाणां योगाः

पापमध्यगते चन्द्रे सप्तमे मन्दसंयुते ।
श्वासक्षयप्लीहगुल्मविद्रधिं भजते नरः ।।४४।।

यदि चन्द्रमा पापग्रहों के मध्य तथा शनि सप्तम भाव में हो तो श्वास, क्षय, प्लीहा, गुल्म तथा विद्रधि आदि रोगों से मनुष्य पीड़ित होता है।।४४।।

वेशौ समन्दे दशमे सचन्द्रे वैकल्यमङ्गे क्षितिजे कलत्रे ।
परस्परक्षेत्रनवांशयुक्तौ शशाङ्कसूर्यौ तनुशोषणं स्यात् ।।४५।।

यदि सूर्य से वेशि स्थान (द्वितीय) में शनि हो एवं चन्द्र दशम भाव में तथा मंगल सप्तम भाव में हो तो अंगों में विकलता होती है। यदि चन्द्र तथा सूर्य एक-दूसरे की राशि या एक-दूसरे के नवांशों में हों तो जातक कृश शरीर वाला होता है अर्थात् उसका शरीर सूखा हुआ रहता है।।४५।।

विशेष— 'परस्परक्षेत्रनवांशयुक्तौ' के अनुसार सूर्य कर्क राशि में तथा चन्द्रमा सिंह राशि में अथवा सूर्य कर्कनवांश में तथा चन्द्र सिंहनवांश में होना चाहिये। कर्क राशि जलतत्त्व की राशि है। उसमें जब सूर्य बैठेगा तो उसके जलतत्त्व को सुखा देगा, क्योंकि सूर्य अग्नितत्त्व वाला ग्रह है। लेकिन जलतत्त्व वाला ग्रह चन्द्रमा अग्नितत्त्व की राशि सिंह में बैठेगा तो स्वयं ही सूख जायेगा। सूर्य चन्द्र दोनों ही लग्न की भाँति माने गये हैं; अतः इस योग में शरीर का सूखना कहा गया है। मानसागरी में सूर्य-चन्द्र के राशिपरिवर्तन योग को हठहन्ता योग कहा गया है; जिसमें जन्म लेने वाला जातक हठपूर्वक स्वयं को नष्ट करता है। चतुर्थ अध्याय के लालाटिकादि योगों में चौथे श्लोक में कहा है—

अर्कस्थानगते चन्द्रे चन्द्रस्थानगते रवौ ।
हठेन नाशो विज्ञेयः पापे लग्ने विशेषतः ॥

दिनेशचन्द्रौ रविराशियुक्तौ चन्द्रर्क्षगौ वा यदि शोषणं स्यात् ।
रन्ध्रारिवित्तान्त्यगता ग्रहेन्द्रा दिनेशचन्द्रारयमाः क्रमेण ।।४६।।
कुर्वन्ति जातं नयनेन हीनं तद्धातुकोपाद्बलसंयुतस्य ।
लग्ने गुरौ भूमिसुते कलत्रे उन्मादभाक्तत्र नरो हि जातः ।।४७।।

यदि सूर्य तथा चन्द्र दोनों एक साथ सूर्य की राशि (सिंह) में अथवा चन्द्रर्क्ष (कर्क राशि) में हों तो जातक का शरीर शुष्क होता है। यह योग आषाढ़ कृष्ण तथा श्रावण कृष्ण अमावस्या या एक दिन पूर्व या पश्चात् ही सम्भव हो सकता है। यदि क्रमशः अष्टम भाव में सूर्य, षष्ठ में चन्द्र, द्वितीय भाव में मंगल तथा बारहवें भाव में शनि बैठे हों तो

इस योग में उत्पन्न जातक को ग्रह के बलवान होने पर उसी के दोषप्रकोप से नेत्र-विहीन करते हैं। यदि लग्न में गुरु एवं सप्तम में मंगल हो तो जातक को उन्मादरोग (पागलपन) होता है।।४६-४७।।

तद्धातुकोपात्— इस शब्द का स्पष्टीकरण इस प्रकार है कि यदि सूर्य अष्टम भाव में होगा तो उसकी दृष्टि द्वितीय भाव (दक्षिण नेत्र) पर होगी। उसका धातु या दोष पित्त है; अत: पित्तविकार से नेत्र नष्ट होगा। यदि चन्द्रमा छठे भाव में होगा तो उसकी पूर्ण दृष्टि बारहवें भाव (वाम नेत्र पर) होगी; अत: कफविकार से वह नेत्र विकृत होगा। यदि वित्तभाव (द्वितीय भाव) में मंगल होगा तो चोट-आघात या रक्तविकार से दक्षिण नेत्र नष्ट होगा। यम (शनि) अन्त्य भाव (बारहवाँ) में बैठने पर वातविकार तथा शुष्कता से नेत्र को नष्ट करेगा। इसके कारण शुष्काक्षिपाक आदि विकार हो सकते हैं। यही ग्रन्थकार का आशय है।

उन्मादयोगा:

उन्मादयुग्भ्रंशयुतो विलग्ने शनौ कलत्रे सकुजे त्रिकोणे ।
लग्ने शनौ रिष्फगते दिनेशे चन्द्रे त्रिकोणे यदि वा धराजे ।।४८।।

यदि लग्न में शनि तथा सप्तम में मंगल हो अथवा त्रिकोण में शनि मंगल के साथ हो अथवा लग्न में शनि एवं द्वादश भाव में सूर्य हो अथवा त्रिकोण में चन्द्र-मंगल की युति हो तो जातक को उन्माद तथा स्मृतिभ्रंश आदि रहता है।।४८।।

विशेष— इस श्लोक में 'चन्द्रे त्रिकोणे यदि वा धराजे' में 'वा' अव्यय को 'च' अव्यय के अर्थ में समझना चाहिये; क्योंकि अकेले चन्द्र या मंगल त्रिकोणों में उन्मादरोग नहीं कर सकते। चन्द्र-मंगल की युति त्रिकोण स्थान या लग्न में हो तो मस्तिष्क पर अधिक गर्मी छाने से उन्मादरोग होता है।

उन्मादबुद्धिः सजडोऽथ वा स्याज्जातो हि चेच्चञ्चलबुद्धियुक्तः ।
लग्ने त्रिकोणे दिननाथचन्द्रौ सौर्य्ये गुरौ केन्द्रसमन्विते वा ।।४९।।

यदि सूर्य-चन्द्र की युति त्रिकोण में या शनि-गुरु की युति केन्द्र में हो तो उन्माद रोग, जड़ता अथवा चञ्चल बुद्धि होती है।।४९।।

उन्मादबुद्धिः स भवेत्तदानीं शन्यारवारो यदि जन्मकाले ।
केन्द्रस्थितौ सौम्यनिशाकरौ वा सौम्यांशहीनौ भ्रमसंयुतः स्यात् ।।५०।।

यदि जन्मसमय में मंगलवार या शनिवार तथा ऐसे में बुध एवं चन्द्र शुभ नवांशों से रहित होकर केन्द्र में हो तो जातक उन्माद बुद्धि वाला तथा भ्रमित रहने वाला होता है।।५०।।

परान्नभुग्दुष्कर्मकर्तायोगश्च

केन्द्रस्थिता मन्दनिशाकराऽर्का जडो भवेदन्यवसूपभोक्ता ।
भाग्येश्वरे रिष्फगते तदीशे वित्तस्थिते भ्रातृगतैश्च पापैः ।।५१।।
केमद्रुमेऽस्मिन् स भवेत्कुभोजी दुष्कर्मयुक्तोऽन्यकलत्रगामी ।।५२।।

यदि शनि, चन्द्रमा तथा सूर्य केन्द्र में हों तो जातक सीधा-साधा तथा दूसरे का दिया भोजन खाने वाला होता है। यदि नवमेश बारहवें भाव में तथा द्वादशेश धन में हो तथा तृतीय भाव में पापग्रह हो तब जातक कुभोज करने वाला तथा परस्त्रीगामी होता है।।५१-५२।।

कुलनाशकादियोगाः

नीचे विलग्नाधिपतौ तदंशे षष्ठाष्टमस्थैः यदि पापखेटैः ।।५३।।
मान्दौ विलग्ने कुलनाशकः स्यादल्पायुराहुः शुभदृष्टिहीनैः ।
सर्वग्रहैर्नीचसपत्नभोगैः कर्मान्यगैर्भिक्षुक एव जातः ।।५४।।

यदि लग्नेश नीच राशि तथा नीच नवांशक में हो, पापग्रह छठे या आठवें हों तथा मान्दि लग्न में हो तो जातक कुलनाशक होता है। यदि इस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो अल्पायु भी होता है। यदि सभी ग्रह नीच राशि, नीच नवांशों या शत्रुग्रहों के साथ या शत्रुराशियों में दशम भाव को छोड़कर अन्य स्थान में हों तो मनुष्य भिक्षा मांगकर खाने वाला होता है।।५३-५४।।

जातकभङ्गाध्याय में रोगों के वर्णन का प्रयोजन— अनेक रोगो का वर्णन इस ग्रन्थ में षष्ठ भाव के विवेचन में पूर्व में ही दिया जा चुका है, तब इस अध्याय में उनके देने का प्रयोजन क्या है? यह प्रश्न इस ग्रन्थ के अध्येताओं के मन में उठना स्वाभाविक है। इसका उत्तर यह है कि जिन रोगों से व्यक्ति का जीवन नाकारा और व्यर्थ हो जाता है, उनका उल्लेख यहाँ किया गया है। दूसरी बात यह कि ये आजीवन चलने वाले रोग हैं, जिनके कारण व्यक्ति जीवन में आगे बढ़ ही नहीं सकता; अत: जीवन की सार्थकता को प्रभावित करने वाले रोगों को यहाँ जातकभङ्गाध्याय में दिया गया है।

ध्यान रहे कि अनेक प्रबल योग ऐसे होते हैं, जिनके कारण जातकभङ्गयोग भी निष्प्रभावी हो जाया करते हैं। जैसे कि पं० जवाहर लाल नेहरू की कुण्डली में शकटयोग होने पर भी उसका कोई प्रभाव उनके जीवन पर नहीं दिखा। कालसर्प योग भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ सका। अत: कुण्डली का अध्ययन बहुत सावधानीपूर्वक ही करना चाहिये तथा अनिष्टकर योगों की भविष्यवाणी बहुत चुने हुए आशावादी शुभ वाक्यों में ही करना चाहिये एवं सदैव जन्मपत्री से कर्मपत्री भी प्रबल हो सकती है— इस तथ्य का ध्यान भी रखना चाहिये।

अभिशप्तादियोगा:

होरेश्वरे रिष्फगते तु माने क्रूरान्विते भौमयुते शशाङ्के ।
जातोऽभिशस्त: परदेशवासी भिक्षाशनी दु:खितदेहभाक्स्यात् ।।५५।।

अभिशप्त योग— यदि लग्नेश बारहवें भाव में हो, दशम भाव में क्रूर ग्रह हों तथा चन्द्र-मंगल की युति हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक परदेश में रहने वाला, अभिशप्त, दु:खित शरीर तथा भिक्षाशनी होता है।।५५।।

भौमयुते शशाङ्के— यद्यपि ज्योतिष के ग्रन्थों में सामान्यत: चन्द्र-मंगल की युति धनयोगकारक मानी गयी है, परन्तु इस योग में जो अन्य स्थितियाँ वर्णित हैं, उनके कारण चन्द्र-मंगल योग निष्फल हो जाता है— ऐसा मानना चाहिये। जातकपारिजात (८.२) के अनुसार चन्द्र + मंगल की युति वाला जातक शूर-वीर, सत्कुलोचित कर्म करने वाला, धनी तथा गुणवान होता है—

शूर: सत्कुलधर्मवित्तगुणवानिन्दौ धराजान्विते ।

मानसागरी ने भी चन्द्र-मंगल योग को अच्छा बताया है—

चन्द्रमंगलसंयोगे यस्य जन्मनि विद्यते ।
विमुञ्चति न तं लक्ष्मी लज्जाकुलवधूमिव ।।

आचार्य पृथुयशा ने इस युति के विषय में कहा है कि— यदि चन्द्र-मंगल युति नवम में हो तो जातक धनवान होता है। दशम भाव में हो तो विख्यात होता है। लग्न, पञ्चम, एकादश में हो तो शुभ होता है तथा अन्य स्थानों की युति से जातक धनहीन एवं बन्धुहीन होता है। आचार्य बलभद्र मिश्र ने होरारत्न के नवें अध्याय में वृद्धयवन के मत के अनुसार जो फल दिया है, वह केवल तृतीय, पञ्चम, नवम, दशम तथा एकादश भाव में ही उत्तम है, शेष में नहीं। उसे पाठकों की सुविधा के लिये यहाँ दिया जा रहा है—

तृतीयग: शीतकर: सभौमे नरं विधत्ते कृषिकर्मदक्षम् ।
मुदाविहीनं विनयप्रधानं स्त्रीणामभीष्टं सुतलालसञ्च ।।
चन्द्रान्वितो भूतनया: सुतस्थो नरं प्रसूते बहुसौख्ययुक्तम् ।
सम्प्राप्तविद्यं द्विजदेवतानां साधुप्रदत्तं श्रुतलालसञ्च ।।
भौमान्वित: शीतकरस्तु धर्मे नरं प्रसूते च श्रुतार्थयुक्तम् ।
महाधनं प्रीतिपरं प्रगल्भं मिष्टान्नपानान्वितभोजनाढ्यम् ।।
मेषूरणस्थो हिमगु: सभौमो नरं प्रसूते नृपमानभाजम् ।
जितारिवर्गं बहुकर्मभाजं कुसीदवादं द्रविणं सदैव ।।
लाभाश्रितो रात्रिपति: सभौमो नरं प्रसूते निजबन्धुयुक्तम् ।
सुबुद्धिभाजं पटुतासमेतं प्रधानमित्रं प्रियदर्शनञ्च ।।

अस्तु; मेरी समझ से तो यदि चन्द्र-मंगल की युति ३-५-९-१०-११ स्थानों को छोड़कर अन्य कहीं हो तभी श्लोक ५५ की अन्य शर्तें पूर्ण होने पर ही अभिशप्त योग होगा; अन्यथा नहीं।

षष्टाष्टमे भानुसुते सभौमे जातोऽप्यपस्मारयुतो नरः स्यात् ।
पापग्रहाः षड्व्ययरन्ध्रभेषु जीवे परिध्यान्वितकेन्द्रगे वा ।।५६।।

यदि शनि + मंगल की युति छठे या आठवें भाव में हो तो जातक को अपस्मार (मृगी) का रोग होता है अथवा पापग्रह ६-८-१२ स्थानों में हों तथा गुरु की युति केन्द्र में परिधि नामक अप्रकाशक ग्रह के साथ हों तो भी अपस्मार रोग होता है।।५६।।

रन्ध्रस्थिताः पापखगाश्च सर्वे निशाकराच्छौ यदि केन्द्रयुक्तौ ।
योगे गदाख्ये स भवेत्तदानीं जातोऽप्यपस्मारयुतः सुतप्तः ।।५७।।

यदि सभी पापग्रह अष्टम भाव में हों तथा चन्द्र एवं शुक्र केन्द्र में हों तो इस 'गद' नामक योग में उत्पन्न जातक को भी अपस्मार रोग होता है। साथ ही ऐसा जातक बहुत कष्ट सहन करता है।।५७।।

योगे गदाख्ये— इस श्लोक में प्रयुक्त 'योगे गदाख्ये' शब्द का अर्थ एक हिन्दी टीकाकार ने 'गदा' नामक योग किया है, जो कि समीचीन नहीं है। वास्तव में यह 'गद' नामक योग है। 'गद' का अर्थ 'रोग' या 'असाध्य रोग' होता है।

सत्कर्महीनयोगाः

समन्विताः सौम्यशशाङ्कशुक्राः केन्द्रस्थिता भोगिपतौ विलग्ने ।
चण्डालयोगः स भवेत्तदानीं जातो निजाचारसुकर्महीनः ।।५८।।

यदि बुध + चन्द्र की युति एवं शुक्र की युति किसी भी केन्द्र में हो तथा राहु लग्न में हो तो चाण्डाल योग होता है। इस योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति अपने सत्कुल के आचार से हीन होता है अर्थात् वह किसी प्रकार का सत्कर्म नहीं करता।।५८।।

विशेष— जातक पारिजात (६.१२) ने बुध-चन्द्र-शुक्र के अलग-अलग केन्द्र में होने पर भी यह योग कहा है।

जातः परिभ्रंशसमन्वितः स्यात् शुभैर्न युक्ता यदि दृष्टिहीनाः ।
माने स्थिता वा यदि वित्तराशौ पापास्तथा देवगुरौ च हीने ।।५९।।

यदि पापग्रह दशम भाव में या द्वितीय भाव में शुभग्रहों की दृष्टि-युति से रहित हो तथा गुरु नीच राशि, अस्त या क्रूर षष्ट्यंशादि में हो या अन्य प्रकार से निर्बल हो तो जातक परिभ्रष्ट (धर्म-कर्म से पतित) होता है।।५९।।

पुनश्च कुलघ्नादियोगः

भाग्येश्वरे चांशगते सपापे जन्मोदयेशे रविगे कुलघ्नः ।
विनष्टपुत्रार्थकलत्रभाक्स्यात् शुभैर्न युक्तौ यदि वीक्षितौ वा ।।६०।।

यदि भाग्येश पापग्रहों के साथ व्ययभाव में हो तथा जन्मलग्नेश सूर्य के सान्निध्य में अस्त हो तो जातक कुलघ्न होता है। यदि शुभ ग्रहों से युत-दृष्ट न हो तो उसके स्त्री-पुत्रादि भी नष्ट हो जाते हैं।।६०।।

विशेष— जातकपारिजात ने भी ऐसा ही कहा है—

होराजन्मपती न शोभनयुतावस्तङ्गतावन्त्यगे ।
भाग्येशे यदि नष्टदारतनयो जात: कुलध्वंसक: ।।

शुभाऽशुभैः केन्द्रगतैः शशाङ्को लग्नेश्वरेणापि निरीक्षितश्चेत् ।
सौरांशके वा यदि संयुतश्चेज्जातः कुलध्वंसकरो विदारः ।।६१।।

यदि शुभाशुभ सभी प्रकार के ग्रह केन्द्र में बैठे हों; साथ ही चन्द्र पर लग्नेश की दृष्टि हो, परन्तु चन्द्रमा शनियुत या शनि के नवांश में हो तो जातक कुलध्वंसी तथा विना स्त्री का होता है।।६१।।

विशेष— जातकपारिजात ने चन्द्र को केवल शनि के नवांश में होना आवश्यक माना है; शनि की युति का उल्लेख नहीं किया है—

सौम्याऽसौम्ययुतेषु केन्द्रभवनेष्विन्दौ तनुस्वामिना ।
दृष्टे मन्दनवांशके सति कुलध्वंसी विदारात्मज: ।।

गृहात्परिभ्रष्टविदारपुत्रो गुणेन हीनो यदि वा जडोऽसौ ।
केन्द्रे शनौ लग्नगते शशाङ्के जीवे व्यये भिक्षुक एव जातः ।।६२।।

यदि शनि केन्द्र में, चन्द्रमा लग्न में तथा गुरु व्ययभाव में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक स्त्री, पुत्र, गृहादि से हीन, नासमझ एवं गुणहीन होता है।।६२।।

विशेष— इसी बात को श्री वैद्यनाथ दीक्षित ने जातकपारिजात (६.५) में निम्न शब्दों में कहा है—

मन्दे केन्द्रगते विलग्नगृहगे चन्द्रेऽन्त्यभे वाक्पतौ ।
जातो भिक्षुक एव शोकजलधौ मग्नो विदेशङ्गत: ।।

आचार्य वराहमिहिर केवल मेष, वृष तथा कर्क राशि के चन्द्र को ही लग्न में शुभ मानते हैं; अन्य राशिगत चन्द्रमा यदि लग्न में हो तो जातक मूक, उन्मत्त, जड़, बधिर तथा प्रेष्य (दास) होता है—

मूकोन्मत्तजडान्धबधिरप्रेष्य: शशाङ्कोदये ।
स्वर्क्षाजोच्चगते धनी बहुसुत: सस्व: कुटुम्बी धनी ।।

गर्गाचार्य भी यही अभिमत प्रकट करते हैं—

गोमेषकर्कटे लग्ने चन्द्रस्थे रूपवान्धनी ।
जडता व्याधि दारिद्र्यं शेषर्क्षे कुरुते शशी ।।

श्वास कासो हि जातस्य तनौ वातभ्रमो भवेत् ।
अश्वादिपशुघातश्च हृदये राजचौरतः ॥

इसी प्रकार के अन्य विचार भी नीचे दिये जा रहे हैं—

दाक्षिण्यरूपधनभोगगुणैः प्रधानः चन्द्रे कुलीरवृषभाजगते विलग्ने ।
उन्मत्तनीचबधिरो विकलश्च मूकः शेषे नरो भवति कृष्णतनुर्विशेषात् ॥
(सारावली, जातकाभरणी)

मेषवृषभकर्कलग्ने चन्द्रे शास्त्रपरः । (भृगुसूत्र- २.३)

विधौ गोकुलीराजगः सन् वपुस्थो धनाध्यक्षलावण्यमानन्दपूर्णम् ।
विधत्ते धनं क्षीणदेहं दरिद्रं जडं श्रोत्रहीनं नरं शेषलग्ने ॥
(चमत्कारचिन्तामणि- २.१)

हेयवृत्तियोगः

चन्द्रात्सुतेऽर्थे यदि लग्ननाथे रन्ध्रस्थितैः सौम्यखगेतरैर्वा ।
मानस्थिते रात्रिकरे तदानीं जातस्तु जीवत्यपि हेयवृत्त्या ।।६३।।

यदि चन्द्रमा से सुतभाव (पञ्चम) में या अर्थ (द्वितीय) भाव में लग्नेश हो तथा आठवें भाव में पाप ग्रह बैठे हों, सौम्य ग्रह न हों, दशम भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो इस योग में उत्पन्न जातक अपने कुल आदि के अनुसार अपेक्षाकृत हेयवृत्ति से अपनी जीविका निर्वाह करने वाला होता है॥६३॥

भाग्यहीनयोगाः

लग्नाधिपान्मृत्युरिपुव्ययस्थैः पापैर्हि जातो जनिभूमिभ्रष्टः ।
नीचारिभांशे यदि देवपूज्ये तदंशके वासरनाथपुत्रे ।।६४।।
जातोऽतिदुःखी सुतदारहीनः कृच्छ्रादसौ जीवति भाग्यहीनः ।
उच्चस्थिते वासरनायके तु नीचांशयुक्ते यदि राजपुत्रः ।।६५।।
प्राप्नोति नीचत्वमिनोदये स्यात् पापेक्षिते वा यदि निश्चितार्थः ।।६६।।

यदि लग्नेश स्थितस्थान से ६-८-१२ भाव में पाप ग्रह हों तो जातक अपनी जन्मभूमि से भ्रष्ट होकर अन्यत्र मारा-मारा फिरता है। यदि गुरु नीच राशि के नवांश या शत्रुनवांश में हो तथा उसके (गुरु के) नवांश में शनि स्थित हो तो इस योग में जातक भाग्यहीन होकर बड़ी कठिनता से जीवन-यापन कर पाता है तथा दुःखी एवं पुत्र-स्त्री से रहित होता है। इसी प्रकार यदि सूर्य उच्च राशि (मेष) में हों; परन्तु नीचनवांश (तुलानवांश अंशादि २०°०'-००" से २३°-२०' में), हो तो यदि जातक राजपुत्र है या राजपरिवार में जन्मा है तब भी उस सूर्य पर पापग्रहों की दृष्टि होने पर निश्चित ही नीचता को प्राप्त होगा अर्थात् राज्यभ्रष्ट तथा श्रीभ्रष्ट होगा॥६४-६६॥

विशेष— उचस्थ सूर्य के नीच नवांश के विषय में श्री वैद्यनाथ दीक्षित ने तातकपारिजात (६.२) में कहा है—

नीचर्क्षे त्वतिनीचभागसहिते जातो दिवानायके ।
राजश्रेष्ठकुलाग्रजोऽपि विगतश्रीपुत्रदाराशनः ।।

परमनीचस्थितरवेः फलमाह

तुलायां दशमे भागे स्थितः पङ्कजबोधनः ।
सहस्रराजयोगानां फलं नीचत्वमाप्नुयात् ।।६७।।

यदि सूर्य तुला के दशवे अंश पर (परम नीच बिन्दु पर) स्थित हो तो जन्मकुण्डली में सहस्रों राजयोग होने पर भी राजयोग-भङ्ग का फल प्राप्त होता है।।६७।।

विशेष— तुलास्थ परमनीच के सूर्य को बहुत-से आचार्यों ने राजयोगों को भंग करने वाला माना है—

तुलायां दशमे भागे स्थितः कमलबोधनः ।
सहस्रं राजयोगानां नाशयत्याशु जन्मनि ।। (होरासार)

तुलायां दशमं भागमाश्रित्य यदि तिष्ठति ।
रवि भिक्षोपजीवी स्याद्राजयोगेषु सत्स्वपि ।। (स्कन्दहोरा)

तुलायां नलिनीनाथः परमं नीचमाश्रितः ।
निर्दिष्टराजयोगानां दलनोऽथ भवेद् ध्रुवम् ।। (जातकाभरण)

शुक्रेण राजयोगभङ्गः

भृगोः पुत्रोऽपि नीचस्थो राजयोगविनाशदः ।

यदि शुक्र नीच राशि में या नीचनवांश में हो तो राजयोग भंग करता है।

उल्कादिभिः राजयोगभङ्गः

उल्कापाताद्यप्रकाशे ग्रहे जातोऽपि भङ्गगः ।।६८।।

जन्म के समय यदि उल्कापात हो या धूमादि अप्रकाश ग्रह लग्न में हो तो भी राजयोग भङ्ग होता है।।६८।।

विशेष— श्रीढुण्ढिराज दैवज्ञ जातकाभरण ग्रन्थ के राजभङ्गयोगाध्याय में उल्कापात, निर्घात, धूमकेतु का उदय होने पर राजयोगों का भङ्ग कहते हैं। व्यतिपात योग को भी उन्होंने राजयोगभङ्गकर माना है—

उल्काव्यतीपातदिने तथैव नैर्घातके केतुसमुद्भवे वा ।
चेद्राजयोगेऽपि च यस्य सूतिर्नरो दरिद्रोऽतितरां भवेत्सः ।।

प्रेष्ययोगः

नीचे भृगौ मन्दनवांशके वा व्ययस्थिते चन्द्ररवी कलत्रे ।
निरीक्षितौ भानुसुतेन चात्र जातः परप्रैष्यमुपैति नित्यम् ।।६९।।

यदि भृगु (शुक्र) कन्या राशि का हो, नीचनवांश का या फिर शनि के नवांश में होकर बारहवें भाव में हो तथा सूर्य-चन्द्र सप्तम भाव में हो और उन पर शनि की दृष्टि हो तो जातक दूसरे की आज्ञा मानने वाला प्रेष्य या दास (गुलाम) होता है।।६९।।

प्रेष्य— बहुत ही छोटे दर्जे के नौकर को 'प्रेष्य' कहते हैं। श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (सुन्दरकाण्ड- ३९.३९) में सीता जी से जब श्री हनुमान् जी की मुलाकात होती है तो वे सीताजी से सुग्रीव की सेना के वानर वीरों का संक्षिप्त वर्णन करते हुए कहते हैं कि सुग्रीव की सेना में मुझसे भी बड़े और मेरे समान भी बल-पराक्रम से युक्त वनवासी सैनिक (वानर) हैं। मुझसे तो कोई भी कम नहीं है, उनमें से एक मैं यहाँ आ गया हूँ। अब आप समझ लें कि साधारण लोगों को ही प्रेष्य (सन्देशवाहक) बनाकर भेजा जाता है, विशिष्ट लोगों को नहीं (सुग्रीव के वीरों में कोई साधारण वानर है ही नहीं; जिसे प्रेष्य बनाकर भेजा जा सकता); अत: हे देवि ! आप अब चिन्ता न करें—

मद्विशिष्टाश्च तुल्याश्च सन्ति तत्र वनौकसः ।
मत्तः प्रत्यवरः कश्चिन्नास्ति सुग्रीवसन्निधौ ।।
अहं तावदिह प्राप्तः किं पुनस्ते महाबलः ।
न हि प्रकृष्टाः प्रेष्यन्ते प्रेष्यन्ते हीतरे जनाः ।।

प्रेष्य को तो प्रेषक की आज्ञा हर परिस्थिति में माननी ही पड़ती है; उसे आज्ञा मानने या न मानने का अधिकार ही नहीं होता।

बन्धनयोगः

क्षीणे शशाङ्के भृगुजे कलत्रे लग्ने शनौ भ्रंशदशान्वितः स्यात् ।
लग्ने शनौ कर्मगते शशाङ्के शुक्रेक्षिते वा यदि बन्धभोक्ता ।।७०।।

यदि चन्द्रमा क्षीण हो, शुक्र सप्तम भाव में तथा लग्न में शनि हो तो जातक भ्रंशान्वित होता है अर्थात् फटी-पुरानी हालत में रहता है। यदि लग्न में शनि एवं दशम में चन्द्रमा हो तथा उस पर शुक्र की दृष्टि हो तो जातक बन्धन (जेल आदि) भोगता है।।७०।।

बन्धभोक्ता— यहाँ 'बन्धभोक्ता' शब्द का अर्थ केवल कारागार आदि का बन्धन ही नहीं; अपितु बन्धुआ मज़दूर आदि भी जानना चाहिये। इसी प्रकार जो बड़े अधिकारी भी शासकीय या निजी प्रतिष्ठानों में बन्धपत्र की शर्तों पर नौकरी करते हैं, वे भी बन्धभोक्ता की श्रेणी में होते हैं।

नेत्ररोगीयोगाः

चन्द्रे व्यये वा यदि वा दिनेशे मन्दे त्रिकोणे मदरन्ध्रभेऽर्के ।
मन्दाक्षिरोगी स भवेत्तदानीं नीचारिशत्र्वंशगतास्तथैव ।।७१।।

(१) यदि चन्द्रमा द्वादश भाव में हो अथवा सूर्य व्यय में हो, (२) शनि त्रिकोण में तथा सूर्य ७-८ भाव में हो तो जातक की दृष्टि मन्द होती है। यदि ये ग्रह नीच राशि, शत्रु राशि या शत्रुनवांश में हों तब भी वही फल होता है।।७१।।

सुताम्बुगौ पापखगौ विशेषाच्चन्द्रेष्टरिष्फारिगतेऽन्धता स्यात् ।
शुभग्रहाणामवलोकहीने त्वन्धो भवत्येव शुभैर्न दोषः ।।७२।।

विशेष रूप से यदि पापग्रह पञ्चम तथा चतुर्थ में हो तथा चन्द्रमा आठवें, बारहवें या छठे भाव में हो एवं पापदृष्टि हो तो जातक अन्धा होता है। शुभ दृष्टि होने पर अन्धा नहीं होता।।७२।।

विकलाङ्गपतितयोगौ

माने शशाङ्के सबुधे कलत्रे शनौ द्वितीये विकलाङ्गमेति ।
जातिच्युतिर्नीचसपत्नभागसमन्वितास्तेऽपि विनिश्चितार्थः ।।७३।।

जब दशम भाव में चन्द्र, सप्तम भाव में बुध तथा द्वितीय भाव में शनि हो तो जातक विकलाङ्ग होता है। यदि उक्त ग्रह नीच राश्यंशों में या शत्रुराशिगत या ऐसे ग्रहों से युत हों तो जातक जाति से भ्रष्ट तथा बहिष्कृत होता है।।७३।।

कुष्ठादिचर्मरोगयोगाः

निशाकरे कार्मुकमध्यभागे मृगांशकर्कीवृषभागयुक्ते ।
मन्दारयुक्ते तदवेक्षणे वा कुष्ठी भवेत्सौम्यदृशा विहीने ।।७४।।

(१) यदि चन्द्रमा कार्मुक (धनु) राशि के मध्य नवांश (सिंहांश) में हो (२) अथवा चन्द्रमा अन्य राशियों में मकर, कर्क, वृष के नवांश का होकर शनि-मंगल से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभ दृष्टि से रहित हो तो जातक को कुष्ठादि चर्मरोग होते हैं। शुभ दृष्टि होने पर दाद, अकौतां आदि चर्मरोग हो सकते हैं।।७४।।

गुल्मदन्तकण्ठरोगी योगः

कुलीरकुम्भालिनवांशयुक्ते चन्द्रे समान्दौ यदि गुल्मरोगी ।
चन्द्रे सुखे तद्भवनांशयुक्ते पापान्विते स्याद् द्विजकण्ठरोगी ।।७५।।

(१) यदि चन्द्रमा गुलिक के साथ कर्क, कुम्भ के नवांशों में हो तो जातक गुल्मरोगी (बावगोला का रोगी) होता है। (२) यदि चन्द्रमा चतुर्थ भाव में कर्क, कुम्भ के नवांशों का होकर पापग्रहों से युक्त हो तो जातक को द्विज (दाँतों का) तथा कण्ठ का रोग होता है।।७५।।

क्रोधोन्मत्तयोगाः

चन्द्रे सपापे फणिनाथयुक्ते रिष्फे शुभे रन्ध्रगते तथापि ।
उन्मादभाक्तत्र सरोषता च जातस्तु नित्यं कलहप्रियः स्यात् ।।७६।।

यदि चन्द्रमा पापग्रहों तथा राहु के साथ बारहवें भाव में हो एवं शुभ ग्रह, अष्टम भाव में हों तो जातक नित्य कलह करने वाला होता है तथा कभी-कभी क्रोध में पागल भी हो जाता है।।७६।।

हृच्छूलभाग्यहीनयोगौ

चन्द्रे तु गोकर्कटराशियुक्ते पापान्विते तद्विपरीतयुक्ते ।
उन्मण्डलस्थौ शशिभौमसंज्ञौ पापान्वितौ सौम्यदृशा विहीनौ ।।७७।।
हृच्छूलभाग् जातनरस्तु नित्यं तथैव तौ सप्तमराशियुक्तौ ।
केन्द्रे शनौ जन्मनि येन दृष्टे जीवे शशाङ्के यदि वा दिनेशे ।।७८।।
विलग्नगे स्याद्यदि भाग्यहीनः प्राप्तार्थचौरो मुनयो वदन्ति ।।७९।।

यदि चन्द्रमा वृष या कर्क राशि में हो तथा पापग्रहों से युक्त या विपरीतयुक्त (दृष्ट) हो तो जातक को हृच्छूल (दिल का दर्द) होता है। यदि चन्द्र तथा मंगल पापग्रहों से युक्त होकर शुभदृष्टि से रहित होकर उन्मण्डल में स्थित हों तो भी नित्य हृच्छूल होता है। यदि केन्द्रस्थित शनि लग्न में बैठे हुए गुरु या चन्द्र या सूर्य को देखता हो तो जातक भाग्यहीन होता है। साथ ही प्राप्त धन का भी चोर माना जाता है। यदि चन्द्र-मंगल सप्तम भाव में हों तो भी हृदयशूल होता है।।७७-७९।।

तद्विपरीतयुक्ते— इस उपर्युक्त वाक्यांश का अर्थ 'वह पापग्रह चन्द्र से विपरीत स्थान में हो'— ऐसा जानना चाहिये। यह समसप्तक है। इसी को विपरीत युति भी कहते हैं। दो ग्रहों के परस्पर छः राशियों के अन्तर पर स्थित होने पर वे विपरीतयुक्ते कहलाते हैं।

उन्मण्डलस्थौ— इसका अर्थ है— उन्मण्डल में दोनों स्थित हों। उन्मण्डल क्या है? खगोलशास्त्र में स्वस्थान के पूर्व तथा पश्चिम स्वस्तिकों एवं दक्षिणोत्तर ध्रुवों में से जाने वाले वृत्त को स्वदेशीय उन्मण्डल कहते हैं। इस वृत्त को षट्घ्नण्टावादनवृत्त भी कहा जाता है; क्योंकि इस वृत्त पर जब सूर्यबिम्ब का केन्द्रबिन्दु आता है तब उस स्थान की सूर्यघड़ी में सदैव छः बजते हैं (यह समय प्रातः तथा सायंकाल का होता है)। इस आधार पर ये छः बजाने वाले बिन्दु यदि लग्न के अनुसार खोजे जायँ तो लग्न (उदयस्थान) तथा सप्तम भाव (अस्तस्थान) में ये दोनों ग्रह अर्थात् शशि = चन्द्र तथा मंगल स्थित हों। तब इसका अर्थ मेरी समझ में यह होगा कि एक लग्न में और दूसरा सप्तम में हो। इस प्रकार इस शब्द (उन्मण्डलस्थौ) का प्रयोग भी ग्रन्थकार ने समसप्तक के लिये ही किया है।

प्राप्तार्थचौरो— इसका अर्थ यह है कि वह जातक येन-केन प्रकारेण धनार्जन कर भी ले तो उस पर यह सन्देह किया जाता है कि इसके पास इतना धन कहाँ से आया? जरूर इसने किसी आपराधिक युक्ति से कमाया है। टैक्सचोर भी हो सकता है।

ज्ञानधनादिहीनः कलहप्रिययोगश्च:

व्यये शुभेशे यदि पापखेटे केन्द्रस्थिते ज्ञानधनादिहीनः ।
परान्नभुग्दुःखितदेहभाक् स्याच्छुभैर्न दृष्टे कलहप्रियो वा ।।८०।।

यदि शुभेश (नवमेश) व्यय भाव में हो तथा पाप ग्रह केन्द्र में हों तो जातक ज्ञान तथा धन इत्यादि से हीन होता है। यदि इस योग पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो जातक दूसरों का अन्न खाने वाला तथा दु:खित शरीर वाला होता है।।८०।।

संस्कारहानियोग:

केन्द्रे गुरौ तज्जनकेन काले न कर्मवेदोक्तमथास्ति नास्ति ।
पितुः सुतो वा यदि वा न कुर्यादूर्ध्वं तु तत्कर्म शुभैर्विहीने: ।।८१।।

यदि गुरु केन्द्र में स्थित हो तथा शुभ ग्रहों की युति-दृष्टि से रहित हो तो जातक के जातकर्मादि संस्कार अथवा उसके पिता का और्ध्वदैहिक कर्म समय पर नहीं होता।।८१।।

संवाहनाद्भीतियोग:

केन्द्रे शशाङ्के क्षितिसूनुयुक्ते रन्ध्रस्थितो वा यदि कश्चिदस्ति ।
संवाहनाद्भीतिमुशन्ति तज्ज्ञाः सुखस्थिते क्षीणनिशाकरे तु ।।८२।।

यदि चन्द्र-मंगल की युति केन्द्र में हो अथवा क्षीण चन्द्रमा अष्टम भाव या चतुर्थ भाव में बैठा हो तो ऐसे जातक को वाहन आदि से भय होता है।।८२।।

देहसौख्यं जले मृत्युयोगश्च

रवौ सुखे पापदृशा समेते देहोष्णतां सौख्यमथाहुरार्याः ।
रवेः शशाङ्के नवमस्थिते तु जले मृतिस्तस्य पितुश्च वाच्या ।।८३।।

यदि सुखभाव में सूर्य पापदृष्ट या पापयुत हो तो जातक के शरीर में उष्णता रहती है तथा सुख भी रहता है। यदि सूर्य से नवम भाव में चन्द्रमा हो तो जातक के पिता की मृत्यु जल के द्वारा होती है। सूर्य पितृकारक ग्रह है।।८३।।

विशेष— मेरे मत से सूर्य-चन्द्र की नवम भाव में युति हो तो जातक के पिता की जल में मृत्यु हो— ऐसा अर्थ ग्रहण करना अधिक समीचीन है; क्योंकि आगे के योग में भी सूर्यचन्द्रयुति का योग है।

मीने सूर्यचन्द्रयुतिफलम्

पापेक्षितै चन्द्ररवी झषस्थौ जले मृतिस्तस्य पितुश्च वाच्या ।
कुजाहियुक्ते दिवसेशपुत्रे सुखे शनौ वा भयमस्य वाच्यम् ।।८४।।

यदि चन्द्र-सूर्य दोनों मीन राशि में स्थित होकर पापदृष्ट हों तो जातक के पिता की मृत्यु जल में होती है। यदि शनि से साथ मंगल तथा राहु की युति हो अथवा शनि चतुर्थ भाव में हो तो स्वयं जातक जल से भयभीत रहता है— ऐसा कहना चाहिये।।८४।।

जीवादिघातकयोगाः

नीचे भृगौ धर्म्गते सपापे द्विजप्रहर्त्ता यदि पापदृष्टे ।
विकर्णतामेति फणीन्द्रयुक्ते माने तदा भौमयुतो शिशुघ्नः ।।८५।।
नीचे गुरौ वासरनायके वा केन्द्रस्थिते पापयुते शिशुघ्नः ।
केन्द्रे सपापे शुभदृष्टियुक्ते रन्ध्रे भृगौ गोमृगजातिहन्ता ।।८६।।

यदि नवम भाव में नीच का शुक्र (कन्या राशि का) पापग्रहों के साथ हो तथा पाप-दृष्टि हो तो जातक द्विजों (ब्राह्मण-साधु आदि) पर प्रहार करने वाला होता है अर्थात् जातक साधु-संन्यासियों, विद्वानों तथा धार्मिक लोगों से द्वेष करता है; उन पर वाणी, शस्त्र आदि से प्रहार करता है। यह योग मकर लग्न में ही सम्भव है।

यदि केन्द्र में गुरु नीच राशि का हो, पापयुक्त-दृष्ट हो अथवा नीच का सूर्य पाप-दृष्ट-युत हो तो जातक शिशुओं का हत्यारा होता है। यदि नीच का शुक्र तथा दशम भाव में राहु एवं मंगल के साथ पाप हो तो भी जातक शिशुघ्न होता है। यदि सूर्य या गुरु नीच के होकर अष्टम भाव में हों तो जातक नीलगाय, हिरन आदि का शिकार करने वाला होता है।।८५-८६।।

शशाङ्कसौम्यौ दशमस्थितौ वा पापेक्षितौ पापसमागमौ वा ।
नीचांशगौ सौम्यदृशा विहीनौ जातस्तु नित्यं खलु पक्षिहन्ता ।।८७।।

यदि चन्द्र तथा बुध पापयुक्त-दृष्ट होकर दशम भाव में बैठे हों अथवा नीच नवांश में सौम्य ग्रहों की दृष्टि-युति से रहित हो तो जातक नित्य ही पक्षियों का शिकार करने वाला होता है।।८७।।

गलान्तमृत्युनेत्रहानियोगश्च

रन्ध्रे गुरौ नीचसमन्विते वा गलान्तमृत्युं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।
चन्द्रे व्यये वा मदने सशुक्रे जातस्य वामं नयनं हिनस्ति ।।८८।।

यदि अष्टम भाव में गुरु नीच राशि का हो तो जातक की मृत्यु गला कटने या घुटने से होती है— ऐसा ज्योतिर्विदों का कथन है। यह योग मिथुन लग्न में ही सम्भव होता है; क्योंकि तभी गुरु मकर का होकर अष्टम में होता है। यदि चन्द्रमा व्ययभाव में अथवा सप्तम भाव में शुक्र हो तो जातक के वाम नेत्र की हानि होती है।।८८।।

जातकगृहे विविधजन्तूनां भयमाह

रन्ध्रे त्रिकोणे दिवसाधिनाथे जातस्य गेहे शिथिलीभयं स्यात् ।
तस्मिञ्छनौ वा यदि वा सकेतौ पतेत्तदानीं कृकलासजातिः ।।८९।।

कौल्यादिपातित्यमुशन्ति तज्ज्ञाः तत्रैव राहौ तु कुजे तु कौर्मम् ।
तत्र स्थिते सोमसुते तु दंशं शुक्रे तु निद्रायतनं स्त्रियाश्च ।।९०।।
तत्रैव मन्दे पतनं नराणां बलाबलं तत्र वदेद्विचिन्त्य ।।९१।।

इन उपर्युक्त श्लोकों में जातक को विभिन्न प्रकार के जन्तुओं की अधिकता से कष्ट पहुँचने की बात बताई गई है—

शिथिली भय— यदि चन्द्र तथा सूर्य त्रिकोण में हो तो जातक के घर में शिथिली (कुचलैंड़) की अधिकता रहने से भय होता है।

कृकलासभय— कृकलास का अर्थ गिरगि़ट होता है। जिस कुण्डली में त्रिकोण में शनि-केतु हो, उसे गिरगिट तथा छिपकलियों की अधिकता से परेशानी रहती है।

सूअर का भय— यदि त्रिकोण में राहु हो तो कुत्तों या सूअरों से कष्ट रहता है।

कछुवे का भय— त्रिकोण में मंगल होने पर होता है।

दंशभय— त्रिकोण में बुध होने पर दंश नामक मक्खी जिसे 'डांस' कहते हैं, उससे परेशानी होती है।

निद्रायतन— यदि त्रिकोण में शुक्र हो तो स्त्रियों की नींद के खर्राटों से परेशानी होती है। मलिनता होती है।

पतन— यदि उक्त स्थान पर शनि हो तो मनुष्यों के लेटने (भीड़ जुटने से) भय प्राप्त होता है।

यह फल ग्रहों के बल के अनुसार कहना चाहिये।।८९-९१।।

विशेष— श्लोक ८९ में किसी प्रति में 'रन्ध्रे त्रिकोणे' भी पाठ मिलता है, जिसका अर्थ यह होगा कि अकेला सूर्य अष्टम या त्रिकोण में स्थित हो।

सप्तमभावात् स्त्रीसङ्गमाह

वन्ध्यास्त्रियः सङ्गमनं रवौ स्यान्मन्दे शशाङ्के भवने समानम् ।
रजस्वलासङ्गमनं कुजे तु वन्ध्याङ्गनासङ्गमनं च वाच्यम् ।।९२।।
बुधे तु वेश्यागमनं मदस्थे हीनाङ्गनासङ्गमनं वणिग्जा ।
मदे गुरौ ब्राह्मणभार्यया वा भृगौ तु गर्भान्वितभामिनी वा ।।९३।।
सपुष्पिणी जातिविहीनिका वा गम्या भवेत्तेन शनिध्वजाद्यैः ।
राहौ मदे गर्भिणिसङ्गमः स्यात् कृष्णा च कुब्जा शनिना वदन्ति ।।९४।।

इन श्लोकों का प्रयोग प्रश्नकुण्डली के विचार में करना उपयुक्त है। यदि कुण्डली में सप्तम भाव में सूर्य बैठा है तो प्रश्न द्वारा उत्तर देने में ऐसी स्त्री से संगम् हुआ कहना चाहिये, जो गर्भनिरोधकों का उपयोग करती हो अथवा शस्त्रकर्मादि से वन्ध्या हो अथवा प्राकृतिक रूप से वन्ध्या हो। चन्द्रमा के सप्तम भाव में होने पर अपने समान आचार-व्यवहार वाली स्त्री से उसका सङ्गम कहना चाहिये। यदि सप्तम भाव में मंगल हो तो

रजस्वला स्त्री से संगम कहना चाहिये। इसी योग में वन्ध्या का संगम भी होता है। बुध से वेश्या या हीन जाति की स्त्री होती है या फिर वेश्या के समान व्यापारबुद्धि वाली होती है। सप्तम में गुरु होने पर ब्राह्मणभार्या तथा शुक्र होने पर गर्भिणी स्त्री होती है। शनि-राहु-केतु-मान्दि आदि के सप्तम में होने पर निम्न कोटि की विकलांग रजस्वलादि स्त्रियाँ होती हैं। कुबड़ी या काली अकेले शनि होने पर होती है।।९२-९४।।

विशेष— प्राचीन काल में राजा लोग ऐसे विचित्र प्रश्न ज्योतिषी की परीक्षा के लिये किया करते थे। ये फल शुभ-दृष्ट होने पर तथा नीच-शत्रु आदि गत होने से परिवर्तित होते रहते हैं।

सङ्गमस्थानान्याह

सुखस्थितैरीदृशसङ्गमस्तु वाच्यस्तदा व्योमचरैर्विशेषात् ।
सूर्यादिभिर्व्योमचरैः सुखस्थैर्वाच्या तयोः सङ्गमनस्य शाला ।।९५।।
वनं गृहं शून्यगृहं विहारस्थानं तु देवालयतोयभूमिः ।
हरीशजस्थानमतीवदुर्गस्थानं तु वा निर्जिततोयभूमिः ।।९६।।

अब स्त्रीसङ्गम के प्रश्न में स्थान या भवन कहते हैं। शुखभाव में स्थित ग्रहों के अनुसार ही इसे बताना चाहिये। सूर्य चतुर्थ में हो तो वन में, चन्द्रमा हो तो घर में, मंगल से निर्जन घर, बुध से विहारस्थल (सैर-सपाटे का स्थान), गुरु से देवस्थान, शुक्र से जलयुक्त स्थान या विष्णु आदि का स्थान, शनि से दुर्ग (किला) आदि को मैथुनस्थान बताना चाहिये। इसका विवरण पूर्व के षष्ठाध्याय के ८३-८४ श्लोक में भी दिया जा चुका है।।९५-९६।।

प्रकीर्णयोगाः

केन्द्रे चतुष्के यदि पापयुक्ते जातः पशूनां मिथुनं समेति ।
केन्द्रत्रिके पापयुते यदि स्यात् पश्वादिवन्मैथुनमेति जातः ।।९७।।

यदि चारो केन्द्रों में पापग्रह हों तो जातक पशु के समान मैथुन करता है। यदि केन्द्र तथा त्रिकस्थान में पापग्रह हों तो भी वही आदत होती है।।९७।।

कृशस्तना भूमिसुते मदस्थे लम्बस्तना मन्दफणीन्द्रकेतौ ।
काठिन्यतश्चोर्ध्वकुचा रवौ स्यात् शेषग्रहैरुत्तमकोमलाङ्गी ।।९८।।

यदि सप्तम भाव में मंगल हो तो स्त्री सूखे स्तनों वाली होती है। यदि शनि, राहु, केतु हों तो स्तन लम्बे होते हैं। सूर्य के होने पर स्तन कठिन तथा ऊर्ध्वाभिमुख होते हैं। शेष ग्रहों (चन्द्र, गुरु, शुक्र) के होने पर स्त्री कोमलाङ्गी होती है।।९८।।

गृहस्थितिकथनम्

चन्द्रे कृशाङ्गे परिजीर्णगेहं तस्मिन् बलिष्ठे सुदृढं नवीनम् ।
दुःस्थे यदि स्थाच्छनिराहुकेतौ दाहेन तप्तं नियमेन वाच्यम् ।।९९।।

यदि चन्द्रमा क्षीण हो तो घर पुराना होता है। चन्द्रमा बली हो तो नया होता है। यदि शनि-राहु-केतु दु:स्थानों में हों तो उस घर में गर्मी बहुत होती है।।९९।।

धनोपयोगमाह

धनायपौ लग्नपतेस्तु मित्रे धनं तदीयं द्विजदेवतार्थम् ।।१००।।

धनेश-लाभेश दोनों लग्नेश के मित्र हों तो जातक के धन का उपयोग द्विज, देवता तथा तीर्थ के लिये होता है। इसके विपरीत यदि धनेश लाभेश— ये दोनों लग्नेश के शत्रु हों तो जातक का धन पापकर्मों में खर्च होगा— ऐसा जानना चाहिये।।१००।।

विशेष— आज के सन्दर्भ में द्विजदेवतार्थ का अर्थ व्यापक रूप से समझना चाहिये अर्थात् ऐसा जातक बहुत सोच-समझकर अपने एक-एक पैसे का सदुपयोग धर्म-प्रचार, ज्ञान-प्रचार, विद्यालय, औषधालय, सार्वजनिक हित के कार्य आदि में करता है।

अध्यायोपसंहारः

इति चिन्ता मणौ प्रोक्तो राजयोगादिनिर्णयः ।
जातभङ्गादिकं चैव व्यङ्कटेशेन धीमता ।।१०१।।

।। इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ राजयोगजातभङ्गादिनिरूपणो
नाम नवमोऽध्यायः ।।९।।

इस प्रकार व्यङ्कटेश दैवज्ञ विद्वान् के द्वारा राजयोगों के निर्णय के साथ जातकभङ्ग-योगों को सर्वार्थचिन्तामणि के अन्तर्गत कहा गया।।१०१।।

इस प्रकार आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़ द्वारा सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ की
'सवार्थबोधिनी' हिन्दी टीका में नवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।९।।

◆

अथ दशमोऽध्यायः

अरिष्टाध्यायः

तत्रादौ योगप्रशंसामाह

केचिद्योगं प्रशंसन्ति दशां केचिद्वदन्ति हि ।
तद्विना चायुषं ज्ञातुं न शक्यं तु मनींषिभिः ।।१।।

आयु का ज्ञान विना योगों एवं दशाओं के नहीं किया जा सकता; अतः कुछ विद्वान् योग की प्रशंसा करते हैं तथा कुछ दशा की प्रशंसा करते हैं।।१।।

त्रिविधा आयुर्योगाः

त्रिविधाश्चायुषां योगाः स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमाः ।
द्वात्रिंशत्पूर्वमल्पं स्यात्तदूर्ध्वं मध्यमं भवेत् ।।२।।
आसप्ततेस्तदूर्ध्वं तु दीर्घायुरिति सम्मतम् ।
उत्तमायुः शतादूर्ध्वं इह शंसन्ति तद्विदः ।।३।।

आयु के योग तीन प्रकार के होते हैं— अल्पायु, मध्यम आयु, दीर्घायु। बत्तीस वर्ष से पूर्व अल्पायु कही जाती है। इसके ऊपर ७० वर्ष तक मध्यमायु होती है। तत्पश्चात् ७० वर्ष के ऊपर दीर्घायु तथा सौ वर्ष के उपरान्त उत्तमायु (पूर्णायु) होती है।।२-३।।

आद्वादशाब्दादायुनिर्णयोऽसम्भवमाह

आद्वादशाब्दाज्जन्तूनामायुर्ज्ञानं न शक्यते ।
जपहोमचिकित्साद्यैर्बालरक्षान्तु कारयेत् ।।४।।

जन्म से बारह वर्ष की आयुपर्यन्त आयु का निश्चय करना बड़ा कठिन है; अतः इस अवस्था तक जातक की जप, होम, चिकित्सा आदि के द्वारा रक्षा करनी चाहिये।।४।।

पित्रोर्दोषैः मृता केचित् केचिद्बालग्रहैरपि ।
अपरे रिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यवः ।।५।।

बारह वर्ष से पूर्व कुछ बालक पिता के दोष (पाप से) से एवं कुछ बालग्रहों (पूतनादि) से मर जाया करते हैं। कोई-कोई अरिष्ट (बालारिष्ट) योगों कारण भी मृत्यु को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार बालमृत्यु के ये तीन प्रकार हैं।।५।।

विशेष— श्रीवैद्यनाथ दीक्षित इस विषय में कहते हैं कि जन्म से चार वर्षों तक शिशु माता के पापों से, चार से आठ वर्ष तक पिता के पापों से तथा आठ से बारह वर्ष तक बालक अपने दोषों से नष्ट होता है (क्योंकि वह नासमझ होता है)। यही बात

फलदीपिका (१३.५) में श्री मन्त्रेश्वर महाराज ने भी कही है; वे उसकी शान्ति के लिये उपाय बताते हुए कहते हैं कि—

तद्दोषशान्त्यै प्रतिजन्मतारं आद्वादशाब्दं जपहोमपूर्वम् ।
आयुष्करं कर्म विधाय तातो बालं चिकित्सादिभिरेव रक्षेत् ॥

बालग्रह—उपर्युक्त श्लोक में बालग्रहों का उल्लेख है; परन्तु उनके सम्बन्ध में इस ग्रन्थ में या अन्य ज्योतिषग्रन्थों में कोई विवरण उपलब्ध नहीं होता; अत: आयुर्वेदीय ग्रन्थों के आधार पर यहाँ बालग्रहों का निदान एवं चिकित्सा दी जा रही है, जिससे कि इस ग्रन्थ के पाठक लाभान्वित हो सकें। सुश्रुतसंहिता-उत्तरतन्त्र के सत्ताईसवें अध्याय में भगवान् धन्वन्तरि सुश्रुत से कहते हैं कि हे सुश्रुत ! बालकों के ग्रहों की उत्पत्ति, कारण एवं लक्षण एकाग्र मन से सुनो—

स्कन्दग्रहस्तु प्रथम: स्कन्दापस्मार एव च ।
शकुनी रेवती चैव पूतना चान्धपूतना ॥
पूतना शीतनामा च तथैव मुखमण्डिका ।
नवमो नैगमेषश्च य: पितृग्रहसंज्ञित: ॥
धात्रीमात्रो प्राक् प्रदिष्टापचाराच्छौचभ्रष्टान्मङ्गलाचारहीनान् ।
त्रस्तान् हृष्टांस्तर्जितान् ताडितान् वा पूजाहेतोर्हिंस्युरेते कुमारान् ॥
ऐश्वर्यस्थास्ते न शक्या विशन्तो देहं द्रष्टुं मानुषैर्विश्वरूपा: ।
आप्तं वाक्यं तत्समीक्ष्याभिधास्ये लिङ्गान्येषां यानि देहे भवन्ति ॥

तात्पर्य यह है कि बच्चों का पालन-पोषण करने वाली धाय तथा माता के दुष्टाचरणों से (अर्थात् जो शारीरिक एवं मानसिक पवित्रता पर ध्यान नहीं देती, बच्चे को साफ-सुथरा नहीं रखतीं, बालक को दूध पिलाने के बाद अपने स्तन को पवित्र जल से नहीं धोती) तथा जिस घर में स्वस्तिवाचन, शान्तिपाठ, आयुष्यमन्त्रजप आदि कर्म नहीं होते, जहाँ बच्चों को ताड़ित किया जाता है, प्यार नहीं किया जाता; जिनके कुल में देवी, देवता, पितर, कुलदेवादि की पूजा नहीं होती; माता-पिता, पितामह, पितामही आदि वृद्ध पुरुषों की सेवा-सुश्रूषा नहीं होती; जहाँ वेदपाठी विप्र, धर्मप्रचारक साधु, महात्मा, भिक्षु आदि का सत्कार नहीं किया जाता; जो मनुष्य वेदविरुद्ध अमर्यादित आचरण रखते हैं; जिनके घरों में गुग्गुलु, घृत आदि से हवन तथा बलिवैश्वदेव आदि कर्म नहीं होते; जिस परिवार में भूखे, भिक्षुक, रोगी, अन्धे, पङ्गु, विकलाङ्ग आदि को अन्नदान नहीं दिया जाता; जिन घरों में फूटे काँसे के बर्तन तथा टूटी खाट रहती है, ऐसे घरों के बच्चों को ग्रह, बालग्रह, भूत-प्रेत-पिशाचादि कष्ट देते हैं और उचित व्यवस्था के अभाव में बालक के प्राणहरण भी कर लेते हैं।

बालग्रहों से पीड़ित बालकों के लक्षण— श्री भगवान् धन्वन्तरि ने सुश्रुत को निम्न बालग्रहों का उपदेश किया है, जिनके लक्षण निम्न प्रकार हैं—

१. स्कन्दग्रह— स्कन्दग्रह से पीड़ित शिशु की आँखें सूजी हुई होती हैं। उसके शरीर से रक्त के समान गन्ध आती है। उसका मुख टेढ़ा हो जाता है, वह दूध नहीं पीता एवं उसकी आँख का एक पलक चलता रहता है। वह जोर से मुट्ठी बाँधे रहता है, चिड़चिड़ाता है तथा उसका मल गाढ़ा रहता है। उसकी एक आँख में विकार दिखता है।

२. स्कन्दापस्मार— इस ग्रह से पीड़ित शिशु बेहोश हो जाता है और फिर थोड़ी ही देर में होश में भी आ जाता है। मीठी-सी आवाज में रोता हुआ तथा हाथ-पैर नचाता हुआ-सा मालूम पड़ता है। जम्भाई लेते समय उसके मुख से झाग निकलता है एवं वह अपान वायु की आवाज के साथ मल-मूत्र का त्याग करता है।

३. शकुनिग्रह— जो शिशु शकुनिग्रह से पीड़ित होता है, उसके अंग शिथिल हो जाते हैं। उसके चेहरे पर भय तथा घबराहट रहती है। उसके शरीर में मांसाहारी पक्षियों (कौवा, चील, गीध) या जलचर पक्षियों (बगुला आदि) के शरीर-जैसी ही दुर्गन्ध आती है। उसके पूरे शरीर पर मवाद वाले फोड़े हो जाते हैं, जिनमें जलन होती रहती है।

४. रेवतीग्रह— रेवती नामक बालग्रह से पीड़ित शिशु का मुख लाल, मल हरा, शरीर अति पाण्डुवर्ण या काले रंग का होता है। उसे ज्वर, मुखपाक तथा वेदना रहती है। वह निरन्तर कानों तथा नाक को मलता रहता है।

५. पूतनाग्रह— इससे पीड़ित शिशु के अङ्ग शिथिल रहते हैं; इससे ग्रसित बालक दिन में सुखपूर्वक सोता है, रात्रि में नहीं सोता। वह पतला मलत्याग करता है। उसके शरीर से कौवे के समान गन्ध आती है एवं वमन होता है। रोमाञ्च तथा प्यास की अधिकता रहती है।

६. अन्धपूतना— अन्धपूतना नामक ग्रह से पीड़ित शिशु स्तन से द्वेष करता है अर्थात् माता या धात्री का दूध नहीं पीता। वह अतिसार, कास, श्वास, हिक्का, वमन, ज्वर आदि से पीड़ित रहता है। वह औंधेमुह पेट के बल सोता है तथा उसके शरीर से खट्टी गन्ध आती है।

७. शीतपूतना— शीतपूतना से पीड़ित शिशु अतिशय बेचैन, वमनशील तथा रुदनशील होता है। वह खाट की पाटी पकड़कर सोता है। उसके आँतों में आवाज होती है, शरीर से दुर्गन्ध आती है तथा दस्त लगते हैं।

८. मुखमण्डिका— इस ग्रह से पीड़ित बच्चे के शरीर का मध्य भाग दुर्बल तथा हाथ, पैर, मुख सुन्दर एवं सुडौल दिखते हैं। वह बहुत खाता है और उसके पेट पर नीली नसें दिखती हैं तथा उसके शरीर से मूत्र के समान गन्ध आती है।

९. नैगमेषग्रह— नैगमेषग्रह से जो बालक पीड़ित होता है, उसके मुख से झाग निकलती है। वह शरीर के मध्य भाग से झुका हुआ-सा रहता है। वह बेचैन होकर ऊपर की ओर देखता हुआ रोता है। उसे सदैव थोड़ा-सा ज्वर बना रहता है। वह बेहोश हो

जाता है तथा उसके शरीर से वसा (चर्बी) के समान गन्ध आती है।

बालग्रहों से पीड़ित असाध्य बालक के लक्षण— बालकों को पीड़ा देने के कारण ये बालग्रह कहलाते हैं। इनकी चिकित्सा प्रारम्भ में ही करनी चाहिये; अन्यथा असाध्य होने पर निम्न लक्षण प्रकट होते हैं; जिनके दिखाई देने पर बालक की मृत्यु हो जाती है—

प्रस्तब्धो यो स्तनद्वेषी मुह्यते चाविशन्मुहुः ।
तं बालमचिराद् हन्ति ग्रहः सम्पूर्णलक्षणः ।।
विपरीतमतः साध्यं चिकित्सेदचिरार्दितम् ।।

बालग्रह-पीड़ित शिशु की चिकित्सा— सुश्रुत में प्रत्येक ग्रह की विस्तार से चिकित्सा दी गई है। यहाँ केवल सबके लिये सामान्य उपचार ही लिखा जा रहा है— वैद्य पवित्र होकर बालक का पुरातन घृत से अभ्यङ्ग करे। पवित्र स्थान पर पीली सरसों को चारो ओर बिखेर कर तैल का दीपक जलावे। बालक के समीप सुश्रुतसंहित उत्तरतन्त्र (२७.२१) में पठित एलादिगण की औषधियों को तिल-गेंहू-उड़द तथा सुगन्ध (चन्दन, राल, गुग्गुलु) आदि से हवन करे। बालक को गन्ध-माला से अलंकृत करे। अग्नि तथा कृत्तिका के लिये स्वाहासहित मन्त्र का उच्चारण करके आहुतियाँ प्रदान करें।

प्रार्थनामन्त्र— नमः स्कन्दाय देवाय ग्रहाधिपतये नमः ।
शिरसा त्वामभिवन्देऽहं प्रतिगृह्णीष्व मे बलिम् ।
नीरुजो निर्विकारश्च शिशुर्मे जायते द्रुतम् ।।

हवनमन्त्र— (१) अग्नये स्वाहा। (२) कृत्तिकायै स्वाहा।

सुरसादिगण— ऊपर सुरसादिगण का उल्लेख किया गया है; इसमें जो औषधियाँ पठित हैं, उनसे हवन करने के लिये कहा गया है; वे औषधियाँ निम्न हैं—

सुरसा (काले फूल की तुलसी), श्वेत सुरसा (सफेद फूल की तुलसी), फणिज्झक (मरुवा), अर्जक (बुबई), भूस्तृण (द्रोणपुष्पीगूमा), सुमुख (राई), कृष्णमल्लिका, कासमर्द (कसौंदी), क्षवक (नकछिकनी), खरपुष्प (जंगली बुवई), वायविडंग, कायफल, निर्गुण्डी, मुण्डी, मूषाकर्णी, भारंगी, मछेछी, काकमाची (मकोय), विषमुष्टि। इन औषधियों का समूह सुरसादिगण कहलाता है। यह गण कफनाशक, कृमिनाशक एवं प्रतिश्याय, अरुचि, श्वास, कास, पीनस का नाशक तथा व्रणशोधक है—

सुरसादिगणो ह्येष कफहृत् कृमिसूदनः ।
प्रतिश्यायारुचिश्वासकासघ्नो व्रणशोधनः ।।

दैनिक उपयोगार्थ बालरक्षामन्त्र— सुश्रुतसंहिता उत्तरतन्त्र (२८.१०-१४) में पठित इन मन्त्रों का इसका प्रयोग बालक के समीप प्रतिदिन स्नानादि से पवित्र होकर शुद्ध उच्चारण के साथ मोरपंख से झाड़ा लगाते हुए करना चाहिये—

रक्षामतः प्रवक्ष्यामि बालानां पापनाशिनीम् ।
अहन्यहनि कर्तव्या या भिषग्भिरतन्द्रितैः ।।
तपसान्तेजसाञ्चैव यशसां वपुसां तथा ।
निधानं योऽव्ययो देवः स ते स्कन्दः प्रसीदतु ।।
ग्रहसेनापतिर्देवो देवसेनापतिर्विभुः ।
देवदेवस्य महतः पावकस्य च यः सुतः ।।
गङ्गोमाकृत्तिकानां च स ते शर्म प्रयच्छतु ।।
रक्तमाल्याम्बरधरः श्रीमान् रक्तचन्दनभूषितः ।
रक्तदिव्यवपुर्देवः पातु त्वाङ्क्रौञ्चसूदनः ।।

प्रपुराण घृत (सौ वर्ष पुराना घी)— आयुर्वेद में दश वर्ष पुराने घी को पुराण घृत कहते हैं तथा सौ वर्ष पुराना घी प्रपुराण घृत कहलाता है। इसकी गन्ध अति-तीव्र हो जाती है। यह सर्वरोगनाशक होता है। ये दोनों प्रकार के घृत केवल मालिश (अभ्यंग) के काम आते हैं, इनको खाया (कदापि नहीं) जाता। यह बालग्रह दोष को शान्त करता है। सौ वर्ष पुराने घी की मालिश से तो ऐसा कोई असाध्य रोग ही नहीं है, जो ठीक न हो जाता हो। चरकसंहिता, चिकित्सास्थान अध्याय ९ में कहा भी गया है—

उग्रगन्धं पुराणं स्याद्दशवर्षस्थितं घृतम् ।
नासाध्यं नाम तस्यास्ति यः स्याद्वर्षशतं स्थितम् ।।
दृष्टस्पृष्टमथाघ्रातं तद्धि सर्वग्रहापहम् ।
अपस्मारग्रहोन्मादबलं शस्तं विशेषतः ।।

जन्मतः प्रबलेनैव बालानां पुष्टिवर्धनम् ।
कथयेदेव शेषन्तु तत्तद्योगानुरूपतः ।।६।।

बाल्यकाल में जन्म से ही बालक के लिये पुष्टिवर्धन के उपाय प्रबलतापूर्वक (तत्परतापूर्वक) करते रहना चाहिये। जैसा प्रबल योग हो, उसी के अनुरूप उपाय भी करना चाहिये।।६।।

जन्मलग्नेशसूर्ययोः सम्बन्धादायुकथनम्

अल्पायुर्लग्नपे भानोः शत्रौ मध्ये तु मध्यमम् ।
मित्रे लग्नेश्वरे तस्य दीर्घमायुरुदाहृतम् ।।७।।

यहाँ जन्मलग्नेश तथा सूर्य में कैसा मैत्री-सम्बन्ध है? इस आधार पर आयु का कथन किया गया है। यह मैत्री पञ्चधा मैत्री के आधार पर ग्रहण करनी चाहिये; अन्यथा फिर लग्नेश से नैसर्गिक मैत्री के आधार पर विचार करने पर मंगल के लग्नों (मेष वृश्चिक, चन्द्र का लग्न कर्क) तथा गुरु के लग्नों (धनु-मीन) में जन्मे जातक सदैव

दीर्घायु ही होंगे। यदि लग्नेश सूर्य का शत्रु हो तो अल्पायु, सम हो तो मध्यायु तथा मित्र हो तो दीर्घायु योग होता है॥७॥

मृत्युनक्षत्रमाह

अल्पायुर्योगजातस्य विपद्दाये मृतिं वदेत् ।
जातस्य मध्यमे योगे प्रत्यरौ तु मृतिं वदेत् ।।८।।

दीर्घायुर्योगजातानां वधभे तु मृतिं वदेत् ।
जातस्य मध्यमे योगे प्रत्येकं त्रिविधं भवेत् ।।९।।

उक्त प्रकार से जिसका अल्पायु योग प्राप्त हो, उसकी मृत्यु विपत् तारा (नक्षत्र) के स्वामी ग्रह की विंशोत्तरी दशा में होती है। जिसकी मध्यमायु का योग हो, उसकी मृत्यु प्रत्यरि तारा के स्वामी ग्रह की विंशोत्तरी दशा में होती है। इसी प्रकार जो दीर्घायु योग वाले हैं, उनकी मृत्यु वध तारा के ग्रह की दशान्तर्दशा में जाननी चाहिये। अन्य प्रकार से भी जातक की आयु तीन प्रकार की कही गई है॥८-९॥

जैमिनिमतेन आयुर्योगकथनम्

चरस्थिरेति सूत्रेण दीर्घमध्याल्पकायुषः ।
तयोरन्यतमं ज्ञात्वा चायुर्ज्ञानं प्रचक्षते ।।१०।।
अल्पायुरल्पमध्यन्तु पूर्णायुस्त्रिविधं स्मृतम् ।
मध्यमादल्पमध्यन्तु पूर्णायुस्त्रिविधं भवेत् ।।११।।
दीर्घायुषोऽल्पमध्यन्तु पूर्णायुस्त्रिविधं भवेत् ।
एवं नवविधः प्रोक्तश्चायुषां तु विनिर्णयः ।।१२।।

चर-स्थिर आदि का जो विचार जैमिनिसूत्र से किया जाता है, उसके अनुसार भी दीर्घ, मध्यम तथा अल्पायु योग होते हैं। इस प्रकार की आयु के भी प्रत्येक के तीन-तीन भेद होते हैं। अल्पायु के तीन भेद अल्प, मध्य तथा दीर्घ हैं। मध्यमायु के तीन भेद अल्प, मध्य तथा पूर्ण होते हैं। इसी प्रकार दीर्घायु के भी तीन भेद अल्प, मध्य एवं पूर्ण होते हैं। इस प्रकार नौ प्रकार से आयु का निर्णय किया जाता है॥१०-१२॥

स्पष्टीकरण— जैमिनिसूत्र में (१) जन्मलग्नेश तथा अष्टमेश के द्वारा, (२) यदि चन्द्रमा लग्न या सप्तम भाव में बैठा हो तो लग्न एवं चन्द्र के द्वारा, अन्यथा शनि एवं चन्द्र की राशिस्थिति द्वारा तथा (३) लग्न एवं होरालग्न के द्वारा— इन तीन प्रकार के आयुकारकों द्वारा उनकी चर, स्थिर या द्विस्वभाव राशियों में स्थितिवशात् आयु का विचार करते हैं।

होरालग्न— होरालग्न निकालने की दो पद्धतियाँ प्रचलित हैं—

(क) आर्ष पद्धति— इसके अनुसार इष्टकाल की घटियों एवं पलों को बारह से

गुणा करने पर अंशादि फल प्राप्त होता है (तात्पर्य यह है कि एक घटी में होरालग्न के बारह अंश बीतते हैं तथा एक घण्टे (२.१/२ घटी) में पूरे तीस अंश बीतते हैं)। इसको उस दिन के उदयकालीन सूर्यस्पष्ट में जोड़ देना चाहिये। सुविधा के लिये जो लोग जन्मसमय में से सूर्योदय का समय घटाकर इष्टकाल बनाते हैं, उन्हें शेष घण्टों के तुल्य राशियाँ तथा मिनटों के आधे के तुल्य अंशों को प्रात:कालीन सूर्यस्पष्ट में जोड़ना चाहिये। जैसे मान लो कि उस दिन सूर्यस्पष्ट राश्यादि ४।७।५३।३० है तथा सूर्योदय से जन्मसमय तक ५ घण्टा १७ मिनट व्यतीत हुआ है अर्थात् इष्टघट्यादि १३।१२।३० है तो ५ घण्टा = ५ राशि तथा १७ मिनट = ८ अंश एवं ३० कला— यह अंशादि फल प्राप्त हुआ। इसे सूर्यस्पष्ट में जोड़ने पर रा० ९।१६°।२३'।३०" यह होरालग्न आर्षमत से स्पष्ट होगा।

(ख) यवन-पद्धति— यह पद्धति बड़ी विचित्र है; परन्तु प्रचलित होने से उसे भी यहाँ दिया जा रहा है। इसमें पूर्वोक्त रीति से प्राप्त अंशादि फल को जन्मलग्न यदि विषम राशि (मेष-मिथुन-सिंह-तुला-धनु-कुम्भ) का है तो प्रात: सूर्यस्पष्ट में जोड़ते हैं और यदि सम राशि का लग्न हो तो जन्मलग्न में ही जोड़ देते हैं।

मेरी सम्मति से आर्षमत से ही होरालग्न निकालना तर्कसंगत है एवं फल भी ठीक मिलता है। अब तीनों जोड़ियों से आयु निकालना बताते हैं—

१. जन्मलग्नेश तथा अष्टमेश से— कुण्डली में देखिये कि लग्नेश तथा अष्टमेश जिन राशियों में बैठे हैं वे चर, स्थित या द्विस्वभाव में से किस श्रेणी की हैं।

२. (क) यदि कुण्डली में चन्द्रमा लग्न या सप्तम भाव में बैठा हो तो लग्न एवं चन्द्रमा की राशि चर-स्थिर एवं द्विस्वभाव इनमें से किसमें है? इस आधार पर विचार करना चाहिये।

(ख) शनि-चन्द्र से— यदि लग्न एवं सप्तम में चन्द्रमा न बैठकर शेष दस स्थानों में बैठा हो तो शनि एवं चन्द्र को देखें कि वे चर-स्थिर-द्विस्वभाव के अनुसार किस श्रेणी की राशि में बैठे हैं।

३. जन्मलग्न तथा होरालग्न से— जन्मलग्न तथा होरालग्न की चरादि स्थितिवशात् भी आयु-निर्णय करना चाहिये—

दीर्घायु— यदि लग्नेश-अष्टमेश दोनों ही चर राशि में हों अथवा एक स्थिर राशि में एवं दूसरा द्विस्वभाव में हो तो दीर्घायु योग होता है।

मध्यमायु— यदि लग्नेश-अष्टमेश दोनों द्विस्वभाव में हों तो मध्यमायु योग होता है या उनमें से एक चर में तथा दूसरा स्थिर में हो तो भी मध्यमायु योग होता है।

अल्पायु— यदि जन्मलग्नेश तथा अष्टमेश दोनों ही स्थिर राशियों में बैठे हों अथवा एक चर में एवं दूसरा द्विस्वभाव में हो तो भी अल्पायु योग होता है।

अब इसी प्रकार से लग्न एवं चन्द्रमा अथवा शनि-चन्द्रमा से विचार करें तथा लग्न एवं होरालग्न से भी देखें। आगे दिये गये चक्र से निर्णय करने में सुगमता होगी।

आयुस्सम्बन्धिनिर्णय:

(लग्नेश + अष्टमेश, शनि + चन्द्र, लग्न + होरालग्न)

अथ जन्मकालाद्दीर्घादि ३ भेदानामत्र चरादिराशिवशादायुर्बोधकचक्रमिदम्

दीर्घायु:	मध्यमायु:	अल्पायु:
चरभे १ लग्नेश: चरभे १ अष्टमेश:	चरभे १ लग्नेश: स्थिरभे २ अष्टमेश:	चरभे १ लग्नेश: द्विस्वभावभे ३ रन्ध्रेश:
दीर्घायु:	दीर्घायु:	अल्पायु:
स्थिरभे २ लग्नेश: द्विस्वभावभे ३ अष्टमेश:	स्थिरभे २ लग्नेश: चरभे १ रन्ध्रेश:	स्थिरभे २ लग्नेश: स्थिरभे २ रन्ध्रेश:
दीर्घायु:	मध्यमायु:	अल्पायु:
द्विदेहभे ३ लग्नेश: स्थिरभे २ अष्टमेश:	द्विस्वभावभे ३ लग्नेश: द्विस्वभावभे ३ रन्ध्रेश:	द्विस्वभावभे ३ लग्नेश: चरभे १ रन्ध्रेश:

ग्रहणीय आयु—

१. यदि तीनों प्रकार की जोड़ियों (लग्नेश + अष्टमेश, शनि + चन्द्र, लग्न + होरालग्न) से एक ही प्रकार की आयु आती हो तो उसी को ग्रहण करना चाहिये अर्थात् तीनों प्रकार से अल्पायु है तो अल्पायु, मध्यमायु है तो मध्यमायु या दीर्घायु है तो दीर्घायु मानना चाहिये।

२. यदि दो प्रकार से एक-सी आयु प्राप्त हो एवं तीसरे से भिन्न प्रकार की आयु प्राप्त हो तो बहुमत के कारण दो प्रकार से आयी हुई आयु को ग्रहण करना पड़ता है।

३. यदि तीनों जोड़ियों से अलग-अलग प्रकार की आयु हो तो लग्न एवं होरालग्न से जिस प्रकार की आयु आती हो, उसे ही ग्रहण करना चाहिये।

यहाँ तीन प्रकार से चर आदि द्वारा विचार करने से पुन: ३-३ भेद होकर आयु के कुल नौ भेद होते हैं—

आयु के भेद	तीन प्रकार से प्राप्ति	दो प्रकार से प्राप्ति	एक प्रकार से प्राप्ति
१-दीर्घायु	एक सौ बीस वर्ष	एक सौ आठ वर्ष	छियानवे वर्ष
२-मध्यमायु	अस्सी वर्ष	बहत्तर वर्ष	चौंसठ वर्ष

आयु के भेद	तीन प्रकार से प्राप्ति	दो प्रकार से प्राप्ति	एक प्रकार से प्राप्ति
३-अल्पायु	चालीस वर्ष	छत्तीस वर्ष	बत्तीस वर्ष
आयुखण्ड	४०	३६	३२

तारादशासु विशेषमाह

पञ्चम्यारदशामृत्युं दद्यात्षष्ठी गुरोर्दशा ।
शनेश्चतुर्थी मृत्युः स्याद् दशा राहोश्च सप्तमी ।।१३।।

पूर्वोक्त दशाओं में यदि मृत्यु मंगल की दशा में निश्चित हो तो वह पञ्चमी तिथि या पाँचवीं अन्तर्दशा में मृत्यु देती है। इसी प्रकार गुरु की दशा षष्ठी तिथि या अपने से छठी अन्तर्दशा में मृत्यु देती है। शनि की दशा चतुर्थी तिथि या चौथी दशा में मृत्यु देती है। राहु की दशा अपने से सप्तम में मृत्यु देती है॥१३॥

विशेष— तात्पर्य यह है कि जन्म की जो दशा होती है, यदि उससे चौथी शनि की दशा आती हो या मंगल की पाँचवीं दशा आती हो या छठी गुरु की दशा आती हो या राहु की सातवीं दशा आती हो तो जातक को सावधान रहना चाहिये।

विपत्पाकदशा कष्टा प्रत्यरीशदशा तथा ।
वधभेशदशा कष्टा पापा स्यादशुभेक्षिता ।।१४।।

विपत्तारा की दशा जातक को कष्ट देती है। इसी प्रकार प्रत्यरि तारा के स्वामीग्रह की दशा भी कष्ट देती है। तथैव वधभेश (वध नक्षत्र के स्वामी) की दशा भी पापदृष्ट होने पर कष्ट देती है॥१४॥

नीचारातिविमूढस्य विपत्प्रत्यरिनैधनाः ।
दशा दद्युर्मृतिं तस्य पापैर्युक्ता विशेषतः ।।१५।।

कुण्डली में विपत् तथा प्रत्यरि नक्षत्रों के स्वामी ग्रह या निधन (वध नक्षत्र) के स्वामीग्रह यदि नीच राशिगत, अस्तंगत या पापयुक्त हों तो इनकी दशा मृत्युकारक होती है॥१५॥

राशिसन्धिषु जन्मफलम्

राशिसन्धिषु ये जातास्ते बाला मृतजीवनाः ।
पापदृष्टा युता वापि निःसंशयमृतिः स्मृता ।।१६।।

किसी ग्रह का स्पष्ट यदि उन्तीस अंश, शून्य कला से लेकर उन्तीस अंश, उनसठ कला पर्यन्त हो तो वह राशिसन्धि में स्थित माना जायेगा। इसी प्रकार यदि जन्मलग्न

का राश्यादि स्पष्ट राशि के तीसवें अंश में है तो वह भी राशिसन्धि में स्थिति होगी। यदि इस सन्धि में स्थित लग्न या ग्रह पापदृष्ट है तो निःसन्देह बालक की मृत्यु होगी। 'मृतजीवनः' का अर्थ है— मरे हुए के समान जीवित रहने वाले अथवा मर कर पुनः जीवित होने वाले॥१६॥

विशेष—जातकपारिजात (१८.२७) में राशिसन्धि में स्थित ग्रहों की दशा शोक, रोग तथा पीड़ा देने वाली बताई गयी है—

राशिसन्धिगता ये तु शोकरोगादिपीडनम् ।
त्रिंशद्भागमनुक्रान्ता दशा मृत्युफलप्रदा ॥

गण्डान्ते जन्मफलम्

गण्डान्तेषूद्भवो मर्त्त्यः पितृमातृबलात्ततः ।
यदि जीवेत्स्वर्गपालो गजवाजिसमन्वितः ।।१७।।

जिसका जन्म गण्डान्त (रेवती, आश्लेषा, ज्येष्ठा के अन्त की घटी या अश्विनी, मघा, मूल के प्रारम्भ की घटी) में हो और वह बालक माता-पिता के उपायों से यदि जीवित बच जाय तो बड़ा ही पराक्रमी तथा ऐश्वर्य वाला होता है॥१७॥

विशेष—यह नक्षत्रगण्ड है। इसी प्रकार तिथिगण्ड भी होता है। जिसका जन्म रिक्ता तिथि की अन्तिम घटी या पूर्णा की प्रारम्भिक घटी में होता है, उसे तिथिगण्ड में जन्मा हुआ माना जाता है। जैसा कि कहा भी गया है—

गण्डान्तस्त्रिविधस्त्याज्यो नक्षत्रतिथिलग्नतः ।
नवपञ्चचतुर्थ्यन्ते द्व्येकार्धघटिकाः स्मृताः ॥

एकवर्षायुयोगः

तृतीयगौ भानुनिशाकरौ वा क्रूरर्क्षगौ क्रूरनिरीक्षितौ वा ।
व्याधिं नरस्यापि वदन्ति तज्ज्ञाः स्त्रीवर्षमात्रं त्वतिदुर्लभं तत् ।।१८।।

यदि तृतीय भाव में सूर्य तथा चन्द्रमा क्रूर राशि में क्रूर ग्रहों से युत या दृष्ट हो तो उसमें जन्म लेने वाला बालक रोगग्रस्त रहता है; परन्तु इस योग में जन्म लेने वाली बालिका एक वर्ष तक भी कठिनाई से ही जीवित रह पाती है॥१८॥

दशाहे मृतियोगः

चन्द्रात्स्मरे वासरनाथभौमौ कुजोदये वा मरणं दशाहात् ।।१९।।

यदि चन्द्रमा से सप्तम में सूर्य एवं मंगल स्थित हों अथवा चन्द्र से सप्तम में सूर्य हो तथा मंगल लग्न में बैठा हो तो जातक की दश दिन में मृत्यु होती है॥१९॥

विशेष— इस योग में चन्द्र पर अन्य पाप ग्रहों का भी प्रभाव होना आवश्यक है।

सद्योमृतियोगः

उद्यद्द्रेष्काणजामित्रे यस्य स्याद्दारुणो ग्रहः ।
क्षीणचन्द्रे विलग्नस्थे सद्यो हरति जीवनम् ।।२०।।

यदि जन्मसमय जामित्र (सप्तम भाव) में उद्यदायुध द्रेष्काण हो, उसमें पापग्रह बैठा हो और क्षीण चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तो तत्काल जन्म लेते ही जातक के प्राण हर लेता है। इस योग में शीघ्र मृत्यु होती है॥२०॥

उद्यद् द्रेष्काण— इसको 'उद्यदायुध' भी कहते हैं। इसमें चौरादि का स्वरूप जानने के लिये श्रीवराहमिहिरादि आचार्यों ने द्रेष्काण के जो स्वरूप बताए हैं, उनमें पाँच द्रेष्काण ऐसे हैं, जिनमें शस्त्रधारण किए हुए पुरुष की आकृति है। अतः इनका नाम उद्यत् + आयुध है अर्थात् शस्त्र धारण कर प्रहार हेतु तैयार व्यक्ति। ये द्रेष्काण क्रूर होते हैं। बृहज्जातक में वराहमिहिर ने जो स्वरूप द्रेष्काणों के बताए हैं, उनमें से जो उद्यदायुध हैं, उनका विवरण इस प्रकार है—

१- मेष का प्रथम द्रेष्काण— यह फर्साधारी है—

कट्यां सितवस्त्रवेष्टितः कृष्णः शक्त इवाभिरक्षितुम् ।
रौद्रः परशुसमुद्यतं धत्ते रक्तविलोचनः पुमान् ॥

२- मिथुन का दूसरा द्रेष्काण— यह कवच-धनुर्बाणधारी होता है—

उद्यानसंस्थः कवची धनुष्मान् शूरोऽस्त्रधारी गरुडाननश्च ।

३- सिंह का दूसरा द्रेष्काण— यह सिंहसदृश धनुर्धारी द्रेष्काण है—

दुरासदः सिंह इवात्तकार्मुको नताग्रनासो मृगराजमध्यमः ।

४- तुला का तीसरा द्रेष्काण— यह तूणीर-कवचधारी शिकारी द्रेष्काण है—

विभीषयंस्तिष्ठति रत्नचित्रितो वने मृगान् काञ्चनतूणवर्मभृत् ।

५- मकर का प्रथम द्रेष्काण— रौद्रमुख जाल-बन्धधारी है—

योक्त्रकः जालकबन्धधारी रौद्रमुखो मकरे प्रथमस्तु ॥

जो द्रेष्काण क्रूर प्रकृति के हैं, उन्हीं की गणना इसमें की गयी है। कुछ आचार्य कुम्भ के प्रथम द्रेष्काण को भी उद्यत् मानते हैं।

मृत्प्राययोगः

विलग्नाधिपतिर्नीचे निधने वाऽर्कसंयुते ।
कृच्छ्रेण जीवितं विद्यात् मृतप्रायो भविष्यति ।।२१।।

यदि लग्नेश नीच राशि का होकर सूर्य के साथ अष्टम भाव में हो तो जातक कठिनाई से जीवित रहता है और मृतप्राय (मरे हुए-सा) रहता है अर्थात् उसका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता॥२१॥

षण्मासायुयोग:

आपोक्लिमे स्थिता: सर्वे ग्रहा: बलविवर्जिता: ।
षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायु: समुदाहृतम् ।।२२।।

यदि सभी ग्रह आत्मोत्क्रम (आपोक्लिम) भावों में निर्बल होकर बैठे हों तो जातक को छ: मास या दो मास की आयु वाला कहा गया है।।२२।।

आपोक्लिम— शुद्ध शब्द 'आत्मोत्क्रम' है, उसी का भ्रष्ट रूप यवनों के प्रभाव से 'आपोक्लिम' हो गया है। लग्न-चतुर्थ-सप्तम तथा दशम— ये चार केन्द्र आत्मस्थान होते हैं, जो चार आत्मीयों के सूचक हैं। प्रथम आत्मीय अपना शरीर (लग्न), दूसरा आत्मीय माता (चतुर्थ), तीसरा आत्मीय पिता (दशम) तथा चौथा आत्मीय जीवन-साथी = पति या पत्नी (सप्तम)— इन चार स्थानों से उत्क्रम (उल्टे या पीछे) वाले स्थान आत्मोत्क्रम होते हैं। अत: ३-६-९-१२— ये भाव आत्मोत्क्रम कहलाते हैं।

दारुणवेलासु जन्मफलम्

केतोरुदय: पूर्वे पश्चादुल्काग्निपवननिर्घाता: ।
रौद्रे सति मौहूर्त्ते प्राणै: सन्त्यज्यते जन्तु: ।।२३।।

जिसके जन्मसमय में पूर्व दिशा में केतु (धूमकेतु = पुच्छल तारा) का उदय हो, पश्चिम दिशा में उल्कापात, पवनप्रवाह (आँधी), निर्घात (वायु की टकराहट) हो तथा रौद्रमुहूर्त (सूर्योदय तथा सूर्यास्त से लगभग दो घटियों के समय) में उत्पन्न जातक शीघ्र ही प्राण त्याग देता है।।२३।।

निर्घात— जब वायु से वायु टकराकर पृथ्वी पर गिरता है तो उसके टकराने से जो शब्द होता है, उसे निर्घात कहते हैं। बृहत्संहिता (३९.१) में कहा भी गया है—

पवन: पवनाभिहतो गगनादवनौ यदा समापतति ।
भवति तदा निर्घात: स च पापो दीप्तविहगरुत: ।।

यदान्तरिक्षे बलवान् मारुतो मारुताहत: ।
पतत्यध: स निर्घातो भवेदनिलसम्भव: ।। (गर्गसंहीता)

ग्रहणं परिवेषकाले जात: पापान्विते विलग्नस्थे ।
लग्नेशे बलहीने जीवति पक्षत्रयं त्रिमासं वा ।।२४।।

जिसका जन्म सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण के समय हो या जन्मसमय सूर्य या चन्द्र पर परिवेष (गोल घेरा) हो, पापग्रह लग्न में तथा लग्नेश निर्बल हो तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक तीन पक्ष या तीन मास तक जीवित रहता है।।२४।।

अंशाधिपतिर्जन्मपतिर्लग्नपतिश्चास्तमुपागता यस्य ।
जन्मवसानमरणं तस्य भवेत्कतिपयाहेन ।।२५।।

यदि लग्नेश नवांशेश, चन्द्रराशीश, जन्मलग्नेश— ये अस्त हों तो जातक कुछ ही दिनों में मृत्यु को प्राप्त होता है॥२५॥

सन्धिचतुष्टयकाले जातो मृत्युं समादिशेत्तज्ज्ञः ।
पापयुते वा दृष्टे शीघ्रं सौम्यैरदृष्टयुते ।।२६।।

जिसका जन्म सन्धिचतुष्टय काल में (सूर्योदय, मध्याह्न, सूर्यास्त तथा निशीथ काल की सन्धि में) हो तथा लग्न, चन्द्र पापयुत-दृष्ट हों, शुभ प्रभाव से रहित हों तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है॥२६॥

विशेष— ध्यान रहे कि किसी भी सन्ध्याकाल में जब तक अन्य दुर्योग नहीं हो तब तक अरिष्ट नहीं होता है।

पुनश्च शीघ्रमृतियोगानाह

राहौ केन्द्रे पापयुक्तेक्षिते वा क्षिप्रं नाशं याति सौम्यैरदृष्टे ।
पापः केन्द्रे वार्किलग्ने त्रिकोणे सौम्यैः षष्ठे चाष्टमेऽन्त्ये च बालः ।।२७।।

यदि पापयुक्त-दृष्ट राहु केन्द्र में हो तथा शुभ युति-दृष्टि से रहित हो तो शीघ्र प्राणनाशक होता है। यदि पाप ग्रह केन्द्र में हों अथवा शनि लग्न तथा त्रिकोण में हो और शुभ ग्रह ६-८-१२ भाव में हो तो भी शीघ्र मृत्यु होती है॥२७॥

जातः क्षीणे शीतगौ लग्नसंस्थे पापैर्दृष्टे नाशमाशु प्रयाति ।
उच्चक्षेत्रं मेषराशिं च हित्वा राहुर्युक्तस्तेष्वपि प्राणनाशः ।।२८।।

यदि लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक शीघ्र ही नाश को प्राप्त होता है। यदि पूर्वोक्त ६-८-१२ तथा लग्न में चन्द्रमा अपनी उच्च राशि (वृष), स्वराशि (कर्क) तथा मेष राशि को छोड़ कर राहु के साथ हो तो भी शीघ्र ही प्राणनाशक होता है॥२८॥

बाल्ये मृत्युयोगाः

लग्नात्स्वान्त्यौ पापयुक्तौ यदि स्तः सप्तस्वान्त्यौ वा विनश्येत्क्षणेन ।
लग्नाद्बालश्चाष्टमे पापचारैः सोमे क्षीणे त्वष्टमाब्दं च जीवेत् ।।२९।।

यदि लग्न से दूसरे, बारहवें भावों में पापग्रह बैठे हों अथवा सप्तम से दूसरे-बारहवें (अर्थात् छठे-आठवें में) पापग्रह हों तो बालक की तत्काल मृत्यु होती है। यदि लग्न से ५-८ भावों में पापग्रहयुक्त क्षीण चन्द्रमा हो तो बालक आठ वर्ष तक जीवित रहता है॥२९॥

केन्द्रे चन्द्रात्पापयुक्तैरसौम्यैः स्वर्गं याति प्रोच्यते वत्सरेण ।
जन्माधीशे लग्नगे क्रूरयुक्ते पश्यत्यार्किश्चाष्टमे जीववर्जे ।।३०।।

यदि चन्द्रमा से केन्द्र में पापग्रह बैठे हों, शुभ ग्रह न हों (शुभदृष्टि का भी अभाव

हो) तो जातक एक वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। यदि लग्नेश लग्न में बैठा हो तथा क्रूरयुक्त शनि से दृष्ट हो तो बालक आठ वर्ष तक जीवित रहता है। यदि पापग्रहों के साथ गुरु हो तो शुभ फल होता है।।३०।।

षष्ठे वर्षे द्वादशे वाष्टमे वा सन्धौ राशेर्जातको मृत्युमेति ।
षष्ठे रन्ध्रे शीतरश्मिश्च यस्य क्षीणे रिष्फे पापयुक्तेऽथ वापि ।।
सौम्यैर्दृष्टे त्वष्टमाब्दं च जीवेत् पापैः सौम्यैर्मिश्रितैस्तत्फलार्धम् ।।३१।।

यदि छठे, आठवें या बारहवें भाव में चन्द्रमा हो तथा राशिसन्धि (तीसवें अंश) में लग्न या चन्द्रमा हो तो बालक की मृत्यु हो जाती है; परन्तु यदि उसे शुभग्रह देखते हों तो जातक को आधा फल होता है अर्थात् चार वर्ष तक वह जीवित रहता है।।३१।।

जीवे विलग्ने मिथुने तुलायां शुक्रेण युक्ते शशिसूनुनापि ।
पापैर्दृष्टे मृत्युराशिस्थितैर्वा जीवेद्वर्षं चाष्टमञ्चैव बालः ।।३२।।

यदि मिथुन या तुला लग्न हो और गुरु उसमें बैठा हो, साथ में बुध या गुरु की युति हो, उस पर पापग्रहों की दृष्टि हो अथवा अष्टम भावस्थित ग्रह उसे देखते हों तो ज़ातक की आठ वर्ष में मृत्यु होती है।।३२।।

मातृसहितशिशुमरणयोगः

लग्ने क्षीणे शशिनि निधनं रन्ध्रकेन्द्रेषु पापैः
पापान्तःस्थैर्निधनहिबुकद्यूनसंस्थे च चन्द्रे ।
एवं लग्ने भवति मदनच्छिद्रसंस्थैश्च पापैः
मात्रा सार्धं यदि न च शुभैर्वीक्षितः शक्तिमद्भिः ।।३३।।

इस श्लोक में तीन योग बताये गये हैं— (१) यदि लग्न में क्षीण चन्द्रमा तथा (२) अष्टम भाव एवं केन्द्र में पाप ग्रहों के साथ चन्द्र हो तो बालक का निधन होता है। (३) यदि चन्द्रमा ८।४।७ भावों में पाप ग्रहों के साथ या पापमध्य में हो तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तो जातक के साथ ही माता का भी निधन होता है।।३३।।

शस्त्रपातेन मृत्युयोगः

राहुग्रस्ते शीतरश्मौ विलग्ने क्रूरैर्युक्ते चाष्टमे भूमिपुत्रे ।
मात्रा सार्धं चन्द्रवद्भास्करेऽपि शस्त्रैः पातेनाशु मृत्युं प्रयाति ।।३४।।

यदि राहुग्रस्त (ग्रहण लगा हुआ) चन्द्रमा लग्न में पापग्रहों के साथ हो तथा अष्टम भाव में मंगल हो तो बालक माता के सहित मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार यदि ग्रहणग्रस्त सूर्य लग्न में बैठा हो तथा अष्टम में मंगल हो तो बालक की शस्त्रपात से मृत्यु होती है।।३४।।

अन्ये च बालमृत्युयोगाः

अस्तङ्गते दिनपतौ रविजे विलग्ने
भौमेऽथ वा निधनगे व्रजति तृतीयात् ।
एवं स्थितेऽपि हिमगावशुभैरदृष्टे
राहुग्रहे च निधनं भवतीह चाष्टौ ।।३५।।

यदि सूर्य सप्तम भाव में, शनि लग्न में तथा मंगल अष्टम भाव में हो तो तीसरे वर्ष बालक की मृत्यु होती है। इसी प्रकार के योग में यदि सूर्य सप्तम में न होकर चन्द्रमा सप्तम भाव में बैठा हो और उस पर पापदृष्टि न हो और राहु पर भी पापदृष्टि न हो तो भी आठवें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।।३५।।

बृहस्पतिर्भौमग्रहेऽष्टमस्थः सूर्येन्दुभौमाऽर्कजदृष्टमूर्तिः ।
अब्दैस्त्रिभिर्भार्गवदृष्टिहीनो लोकान्तरं प्रापयति प्रसूतम् ।।३६।।

यदि गुरु मंगल की राशि (मेष या वृश्चिक) का हो; उस पर सूर्य, मंगल, चन्द्र तथा शनि की दृष्टि हो तथा शुक्र की दृष्टि न हो तो जातक तीन वर्ष में लोकान्तर (परलोक) को चला जाता है।।३६।।

वक्री शनिर्भौमगृहं प्रपन्नश्छिद्रे च षष्ठे च चतुष्टये वा ।
कुजेन सम्प्राप्तबलेन दृष्टो वर्षद्वयं जीवयति प्रजातम् ।।३७।।

यदि शनि वक्री होकर भौम की राशि (१-८) का होकर लग्न से छठे, आठवें, चतुर्थ या केन्द्र में हो तथा उस पर बली मंगल की दृष्टि हो तो बालक दो वर्ष तक जीवित रहता है।।३७।।

सौरे स्मरस्थे यदि वा विलग्ने जन्मस्थलग्ने शशिनि त्वलौ वा ।
सौम्येषु केन्द्रोपगतेषु सद्यो जातस्य मृत्युर्यवनोपदिष्टः ।।३८।।

यदि शनि सप्तम भाव में या लग्न में तथा चन्द्रमा जन्मलग्न या अलि (वृश्चिक) में हो, साथ ही सौम्य ग्रह केन्द्र में बैठे हों तो यवनाचार्य के मत से जातक क शीघ्र ही मृत्यु होती है।।३८।।

नीचस्थे देवपूज्ये तु भौमक्षेत्रगतेऽथ वा ।
सन्धित्रयेऽपि जातस्तु मासान्मृत्युं प्रगच्छति ।।३९।।

यदि नीच का गुरु हो अथवा मंगल की राशि (मेष, वृश्चिक) का हो, साथ ही सन्धित्रय (तिथिगण्ड, नक्षत्रगण्ड, राशिगण्ड) का जन्म हो तो जातक की एक मास में मृत्यु होती है।।३९।।

क्षेत्रस्य सन्धौ तिथिराशिसन्धौ एकत्रता तत्प्रसवस्त्रिधा स्यात् ।
जातस्तु मृत्युं समुपैति सद्यः शुक्रेऽह्नि जीवेदिति नन्दिकोक्तम् ।।४०।।

भाव या राशिसन्धि, तिथिसन्धि यदि जन्म के समय एक साथ हो तो बालक की मृत्यु होती है; परन्तु इस योग में शुक्रवार होने पर श्रीनन्दिकेश्वर के मत से मृत्यु नहीं होती।।४०।।

षष्ठ्यां जातश्चाऽर्कलग्ने कुजे वा गण्डान्ते वा मृत्युयोगेऽथ वापि ।
भौमो हन्ति प्राणिनं तत्क्षणेन जीवेक्षितश्चेन्न भवेत्प्रजातः ।।४१।।

यदि जन्मसमय षष्ठी तिथि हो, लग्न में सूर्य अथवा मंगल हो; साथ ही त्रिविध गण्डान्त अथवा मृत्युयोग हो तथा मंगलवार हो तो जातक की उसी क्षण मृत्यु होती है; परन्तु यदि गुरु की दृष्टि लग्न पर हो तो मृत्यु नहीं होती।।४१।।

षष्ठी तिथि— षष्ठी के स्वामी स्कन्द होते हैं और बालग्रह श्रीस्कन्द के अनुचर हैं; अतः इस तिथि में उनका प्रभाव बालक पर हो जाता है। षष्ठी के साथ लग्नस्थ मंगल एवं त्रिविधगण्डान्त मृत्यु का कारण हो जाता है।

मृत्युयोग— यह दो प्रकार से बनता है—

१. जब मंगलवार के दिन नन्दा तिथि (प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी) हो तब मृत्युयोग होता है।

२. जब रविवार को अनुराधा, सोमवार को उत्तराषाढ़ा, मंगलवार को आश्लेषा तथा शनिवार को हस्त नक्षत्र होता है तब भी मृत्युयोग होता है।

भौमोदये तद्दिवसे कृशेन्दौ होरास्वामी लग्नकेन्द्राद् बहिष्ठः ।
जातो योऽसौ क्षिप्रमेवैति मृत्युं भौमः सौरोऽप्येवमेवं विधत्ते ।।४२।।

यदि जन्मसमय मंगलवार हो तथा मंगल ही लग्न में बैठा हो, चन्द्रमा क्षीण हो, लग्नेश लग्न तथा केन्द्र को छोड़कर अन्य स्थान में बैठा हो तो जातक की मृत्यु होती है। शनि भी इसी प्रकार का फल प्रदान करता है।।४२।।

सौरोऽप्येवमेवं विधत्ते— इसका अर्थ यह है कि यदि शनिवार का जन्म हो तथा जन्मलग्न में शनि ही बैठा हो, चन्द्रमा क्षीण हो तथा लग्नेश लग्न या केन्द्र में न होकर उसके अतिरिक्त कहीं भी बैठा हो तो भी जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है।

पुनरपि बालमृत्युयोगाः

सुतमदननवान्त्यलग्नरन्ध्रेष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः ।
भृगुसुतशशिपुत्रदेवपूज्यैर्यदि बलिभिर्न विलोकितो युतो वा ।।४३।।

यदि पञ्चम, सप्तम, नवम, द्वादश, लग्न, अष्टम भाव में चन्द्रमा पापग्रहों के साथ हो तो मृत्युदायक होता है; परन्तु यह तभी होता है जब ऐसे चन्द्रमा पर शुक्र, बुध, गुरु— इन बलवान ग्रहों की दृष्टि अथवा युति न हो।।४३।।

होरास्ताष्टमगेष्वसत्सु हिमगौ क्षीणे तु जातः शिशुः
स्वर्गं गच्छति सौम्यकेन्द्ररहितो जीवो न चेद्वीक्षते ।
लग्नान्त्याष्टमधर्मभेषु सहिताश्चन्द्राऽर्कभौमार्कजाः
क्षिप्रं गच्छति जातकं सुरपतेर्मन्त्री न चेद्वीक्षते ।।४४।।

यदि पाप युक्त चन्द्रमा लग्न, सप्तम या अष्टम में क्षीण होकर बैठा हो तो जातक स्वर्ग जाता है। यदि केन्द्र में शुभ ग्रह न हों तथा चन्द्र पर गुरु की दृष्टि भी न हो या लग्न, द्वादश, अष्टम, नवम भावों में चन्द्रमा-सूर्य-मंगल-शनि गुरु की दृष्टि से रहित होकर बैठे हों तो भी बालक की मृत्यु होती है॥४४॥

लग्ने चन्द्रे भास्करे वा बलिष्ठे पापैः केन्द्रे नैधने च त्रिकोणे ।
शुक्रः सूर्यः शीतगुश्चैकसंस्था नाशं गच्छेद्योगमेवैति जातः ।।४५।।

यदि, लग्न, चन्द्र, सूर्य (ये तीनों ही लग्न हैं) अबलिष्ठ (निर्बल) हों, पापग्रह केन्द्र में, अष्टम तथा त्रिकोण में हो एवं शुक्र-सूर्य-चन्द्र एक साथ बैठे हों तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक शीघ्र ही नाश को प्राप्त होता है॥४५॥

विशेष— एक हिन्दी टीकाकार ने 'वाबलिष्ठे' का अर्थ बलिष्ठ किया है, जो समीचीन नहीं है। वस्तुतः यहाँ 'वाऽबलिष्ठे' पाठ है; जिसका अर्थ है— अबलिष्ठ = निर्बल; क्योंकि सूर्य-चन्द्र एवं लग्न के बली होने से बालक का नाश हो ही नहीं सकता।

चन्द्रस्य द्वादशराशीषु मृत्युभागानां कथनम्

निम्न पाँच श्लोकों द्वारा द्वादश राशियों में चन्द्र के मृत्युकारक भाग (अंश) बताये गये हैं—

मेषे विंशतिभागे स्यान्मृत्युं दद्यान्निशाकरः ।
एकविंशतिभागस्तु सिंहे तत्त्वैस्तु गोवृषे ।।४६।।

चन्द्रमा मेष के बीसवें अंश में मृत्यु देता है। इसी प्रकार सिंह के इक्कीसवें अंश में एवं वृष के पच्चीसवें अंश में चन्द्रमा मृत्युकारक होता है॥४६॥

वृश्चिके च तथा चन्द्रस्त्रयोविंशतिभागकः ।
द्वाविंशतिकुलीरे तु तुलायां वेदभागकः ।।४७।।

वृश्चिक के २३वें अंश का, कर्क के बाईसवें अंश का तथा तुला में चौथे अंश का चन्द्रमा मृत्युदायक होता है॥४७॥

विंशतिर्मकरे चन्द्रः कन्यायां प्रथमांशकः ।
धनुरष्टादशो भागो मीने दशमभागयुक् ।।४८।।
द्वाविंशतिर्नृयुग्मे तु चन्द्रोऽप्येवं मृतिप्रदः ।
कुम्भे पञ्चेन्दुभागे च मृत्युं दद्यात्तथैव च ।।४९।।

मकर में बीस, कन्या का प्रथम, धनु का अठारहवाँ, मीन का दशवाँ भाग, मिथुन का बाइसवाँ भाग चन्द्र मृत्युदायक होता है। कुम्भ के पन्द्रहवें अंश का चन्द्र मृत्युकारक होता है।।४८-४९।।

ये ये निशाकरांशास्तु मृत्युभाग व्यवस्थिता: ।
तावद्भिर्वत्सरैर्जातो मृत्यमेति न संशय: ।।५०।।

यहाँ चन्द्रमा के जो-जो अंश मृत्युदायक बताए गये हैं, उन-उन वर्षों में जातक को अरिष्टप्रद (मृत्युप्रद) होते हैं।।५०।।

चन्द्रमा के मृत्युभाग

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
२०	२५	२२	२२	२१	१	४	२३	१८	२०	१५	१०	मृत्युभाग

मतान्तर— सर्वार्थचिन्तामणि में जो चन्द्र के मृत्युभाग कहे गए हैं, उनमें तथा फलदीपिका एवं जातकादेशमार्ग[1] में दिये गये मृत्युभागों में अन्तर है; अत: पाठकों की सुविधा के लिये यहाँ पर फलदीपिका के मत से चन्द्र के मृत्युभाग तथा लग्न के भी मृत्युभाग दिये जा रहे हैं—

ग्रन्थान्तर से चन्द्रमा एवं लग्न के मृत्युभाग

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
२६	१२	१३	२५	२४	११	२६	१४	१३	२५	५	१२	चन्द्र के मृत्युभाग
८	९	२२	२२	२५	१४	४	२३	१८	२०	२१	१०	लग्न के मृत्युभाग

धातुदोषकथनम्

लग्नजन्मपयोर्यस्तु शत्रुर्लग्नगत: शुभ: ।
करोति मृत्युं जातस्य स्वस्य धातो: प्रभावत: ।।५१।।

लग्नराशि तथा चन्द्रराशि का शत्रुग्रह यदि शुभ ग्रह भी हो, परन्तु यदि वह लग्न या चन्द्रराशि में बैठेगा तो अपनी धातु (वातादि दोष) के प्रभाव से मृत्यु करेगा।।५१।।

मासद्वये मृत्युयोगौ

रन्ध्रे धरासूनुदिनेशसौरा जातस्तु मृत्युं समुपैति मासात् ।
केतुश्च यस्मिन्नुदितेऽत्र जातो मासद्वयेनैव यमं प्रयाति ।।५२।।

---

[1] जातकादेशमार्ग में कन्या लग्न के २, कुम्भ के २० तथा मीन के २४ भाग मृत्युकारक बताये गये हैं।

यदि अष्टम स्थान में मंगल, सूर्य तथा शनि एक साथ बैठे हों तो जातक एक महीने में मर जाता है। जिस लग्न में केतु (धूमकेतु) का उदय हो, उसमें जन्म लेने वाला बालक दो मास में यमराज के पास पहुँच जाता है॥५२॥

अतिप्रयोगेन मृत्युमाह

भूपालयोगाः यवनैः प्रदिष्टाः राज्ञः कुले जातनरे धरेशाः ।
तेऽतिप्रयोगास्तु तदन्यजाताः सद्यो यमं यान्ति नरास्तथैवम् ।।५३।।

यवनादि आचार्यों ने जो राजयोग बताये हैं, उनमें राजवंश में उत्पन्न जातक होते हैं या राजकीय पद प्राप्त करते हैं, परन्तु राजकुल एवं सम्पन्न परिवार से इतर परिवार में इतने उत्कृष्ट योगों में कोई बालक उत्पन्न होता है तो वह अतिप्रयोग के कारण तुरन्त मर जाता है॥५३॥

अतिप्रयोग— प्राय: यह देखने में आता है कि साधारण परिवारों में जन्मे शिशु की कुण्डली में यदि राजयोग हो तो वे जीवित नहीं बचते, मानों वे उसके पात्र ही न हों या विधि के विधान में कोई भूल हो गई हो। यही अतिप्रयोग कहलाता है।

दशमस्थपापदृष्टसूर्यफलम्

भानुर्नभस्थो यदि पापदृष्टो धरासुतर्क्षे शशिनश्च गेहे ।
जातस्तु मृत्युं समुपैति शीघ्रं शुभैर्न दृष्टो वियुतोऽपि चैवम् ।।५४।।

यदि पापदृष्ट सूर्य मंगल की राशि (मेष-वृश्चिक) या चन्द्र की राशि (कर्क) का होकर दशम भाव में पापग्रहों से दृष्ट एवं शुभ ग्रहों से अदृष्ट होकर बैठा हो या पापयुत हो, शुभयुत न हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है॥५४॥

सप्तपञ्चैकादशवर्षेषु मृत्युयोगाः

लग्ने ये द्रेष्काणा निरर्गला हि विहङ्गपाशधरसंज्ञाः ।
मरणाय सप्त वर्षैः क्रूरयुताश्चापि सन्दृष्टाः ।।५५।।

यदि लग्न में पक्षीद्रेष्काण, सर्पद्रेष्काण या पाशधरद्रेष्काण तथा निगलद्रेष्काण क्रूरग्रहों से युत-दृष्ट हों तो जातक की सात वर्ष में मृत्यु होती है॥५५॥

रविचन्द्रभौमगुरुभिः कुजगुरुसौरेन्दुभिस्तथैकस्थैः ।
रविशनिभौमशशाङ्कैर्मरणं खलु पञ्चभिर्वर्षैः ।।५६।।

यदि कुण्डली में सूर्य-चन्द्र-मङ्गल-गुरु की युति एक साथ किसी भाव में हो अथवा मंगल-शनि-चन्द्र एक स्थान पर हों अथवा सूर्य-शनि-मंगल-चन्द्र की युति एक साथ हो तो पाँच वर्ष के भीतर जातक का मरण होता है॥५६॥

रविणा युक्तः शशिजः सौम्यैर्दृष्टो विनाशयति नूनम् ।
एकादशभिर्वर्षैर्देवाङ्केऽपि स्थितं जातम् ।।५७।।

सूर्य से युक्त बुध शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो ग्यारहवें वर्ष में देवताओं की गोद में बैठा बालक भी नष्ट हो जाता है।।५७।।

निगलद्रेष्काण— इसी को निगड या निगड़द्रेष्काण भी कहते हैं। यहाँ जो ५७वाँ श्लोक है, वह जातकपारिजात के चतुर्थ अध्याय का ५०वाँ श्लोक है; परन्तु उसमें थोड़ा अन्तर है।

बुधादित्य योग पर शुभग्रहों की दृष्टि से अरिष्ट— बड़ा अटपटा लगता है कि सूर्य-बुध की युति पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो जातक की ग्यारह वर्ष में मृत्यु होती है। इस योग की प्रामाणिकता पर सन्देह है; क्योंकि बुधादित्य योग को केवल चन्द्र तथा गुरु दो ही ग्रह देख सकते हैं। शुक्र समीप होने से देख नहीं सकता। आगे कुछ कुण्डलियाँ दी जा रही हैं, जिसमें सूर्ययुक्त बुध पर गुरु की दृष्टि है; परन्तु वे सभी इतिहासपुरुष दीर्घायु हुये हैं—

स्व० लालबहादुरशास्त्री पूर्व प्र० मं०

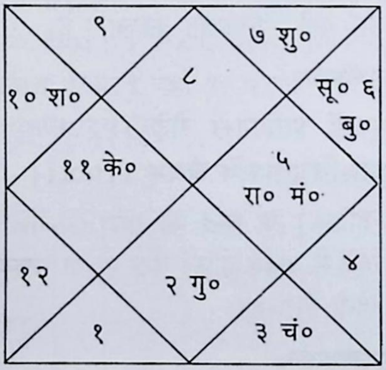

स्व० श्रीमती इन्दिरा गान्धी पू० प्र० मं०

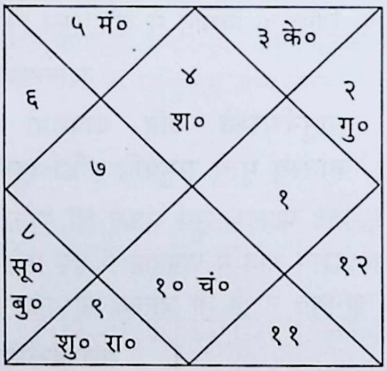

वर्तमान में भी अनेकों ऐसी कुण्डलियाँ हैं, जिनमें बुधादित्य योग पर गुरु की दृष्टि है; परन्तु वे व्यक्ति भी दीर्घायु पाए गए हैं। अभी भी बहुत-से योग ज्योतिषग्रन्थों में ऐसे हैं, जिन पर परीक्षण होना चाहिये। लिपिकारों की असावधानी से ज्योतिषग्रन्थों में अभी भी बहुत से श्लोक अशुद्ध या भ्रामक पाठ वाले उपलब्ध हैं।

सप्तचतुस्त्रिषु वर्षेषु मृत्युयोगाः

लग्ने रविशनिभौमैः शुक्रग्रहे वा शशि क्षीणः ।
दृष्टो न देवगुरुणा सप्तभिरब्दैः विनाशयति ।।५८।।

यदि जन्मलग्न में रवि, शनि, मंगल हों अथवा चन्द्रमा शुक्र की राशियों (वृष, तुला) में क्षीण होकर बैठा हो और उस पर गुरु की दृष्टि न हो तो सात वर्ष में जातक की मृत्यु हो जाती है।।५८।।

केन्द्रे रविमुषिततनुः क्षितिजो मन्दावलोकितोऽथ युतः ।
वर्षचतुष्केणाशु मारयति किमत्र गणितेन ।।५९।।

यदि लग्न या केन्द्र में सूर्य से मुषित (अस्त) मंगल शनि से दृष्ट अथवा युत हो तो चार वर्ष में जातक को मार देता है। इसमें गणित करने की कोई आवश्यकता नहीं है।।५९।।

लग्नाधिपतेश्चन्द्रो मरणपदस्थोऽपि कृष्णतां याति ।
क्रूरैः सकलैर्दृष्टो न शुभैर्वर्षैस्त्रिभिस्तु मारयति ।।६०।।

यदि लग्नेश से चन्द्रमा अष्टम भाव में बैठा हो, कृष्ण पक्ष का जन्म हो, शुभ ग्रहों से अदृष्ट तथा सभी पापग्रहों से दृष्ट हो तो तीन वर्षों में जातक को मार देता है।।६०।।

नववर्षे मृत्युयोगः

पापो विलग्नाधिपतिः शशाङ्कादन्त्यस्थितः क्रूरनिरीक्षितश्चेत् ।
चन्द्रांशकस्थो यदि वा तदीशो जातः शिशुः प्रेतपुरीं नवाब्दैः ।।६१।।

यदि लग्नेश पापग्रह होकर चन्द्रमा से बारहवें भाव में पापदृष्ट हो अथवा ऐसी स्थिति में चन्द्र राशि का स्वामी पापांशक में हो तो उत्पन्न शिशु नौ वर्ष की आयु में यमपुरी चला जाता है।।६१।।

पञ्चमवर्षे मृत्युयोगः

दृश्ये भागे संयुताः सौम्यखेटाः पापाः सर्वे यस्य जन्मन्यदृश्ये ।
राहौ लग्ने पापयुक्तेऽथ दृष्टे जातो मृत्युं याति पञ्चाब्दसंख्यैः ।।६२।।

जिसके जन्मसमय में शुभ ग्रह दृश्यार्द्ध (सप्तम से द्वादश भाव पर्यन्त) में बैठे हों और पापग्रह की स्थिति अदृश्यार्द्ध (लग्न से षष्ठभावपर्यन्त) में हो तो जातक पाँचवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।।६२।।

द्वादशे वर्षे मृत्युयोगः

राहुः सप्तमभवने शशिसूर्यनिरीक्षितो न शुभदृष्टः ।
दशभिर्द्वाभ्यां सहितैरब्दैर्जातं विनाशयति नूनम् ।।६३।।

सप्तम भाव में स्थित राहु सूर्य-चन्द्र से दृष्ट हो, साथ ही शुभ ग्रहों से वीक्षित न हो तो बालक की १२वें वर्ष में निश्चित ही मृत्यु हो जाती है।।६३।।

सप्तदशवर्षे मृत्युयोगः

घटालिसिंहे फणिनाथयुक्ते तस्मिन्विलग्ने सति पापदृष्टे ।
जातो यमं सप्तदशे प्रयाति वर्षेन्द्रपूज्येन युतो न दृष्टः ।।६४।।

कुम्भ, वृश्चिक या सिंह राशि का राहु लग्न में स्थित हो तथा पापग्रहों की उस पर

दृष्टि हो और वह गुरु द्वारा न देखा जाता हो तो उस बालक की मृत्यु १७वें वर्ष में हो जाती है॥६४॥

कतिपयदिने मृत्युयोगमाह

क्षीणेन्दुः पापसन्दृष्टे राहुदृष्टो विशेषतः ।
जातो यमपुरं याति दिनैः कतिपयैः किल ।।६५।।

क्षीण चन्द्रमा पापग्रहों द्वारा दृष्ट हो, विशेषत: राहु द्वारा हो तो निश्चित ही कुछेक दिनों में ही बालक की मृत्यु हो जाती है॥६५॥

द्वादशवर्षे मृत्युयोगमाह

जन्मेशलग्नाधिपती विलग्नात्षष्ठाष्टमान्त्येषु दिनेशयुक्तौ ।
जातो यमं द्वादशभिश्च वर्षैः प्रयाति सौम्येन युतौ न दृष्टौ ।।६६।।

लग्नाधिपति और चन्द्रराश्यधिपति लग्ने से षष्ठ, अष्टम या द्वादश भाव में सूर्य से युक्त हों तथा सौम्य ग्रहों द्वारा दृष्ट न हों तो बालक बारहवें वर्ष में यमपुर को प्राप्त होता है॥६६॥

मृत्युयोगमाह

होराधिपतिर्द्यूने पापजितो मरणमेव विदधाति ।
राशिं त्रिगुणीकृत्वा वर्षे मासे न सन्देहः ।।६७।।

लग्नेश सप्तम स्थान में पापजित हो तो जिस राशि में वह स्थित है, उस राशि के तिगुने करने के पश्चात् जितने अङ्क प्राप्त हों, उतने महीने या वर्ष में जातक नि:सन्देह मृत्यु को प्राप्त हो जाता है॥६७॥

नवमवर्षे मरणयोगकथनम्

तरणीन्दुकुजाः पुत्रस्थाने युक्ता न सौम्यगाः ।
जातो यमपुरं याति नवमेऽब्दे न संशयः ।।६८।।

सूर्य, चन्द्र तथा मङ्गल पञ्चम भाव में शुभ ग्रहों द्वारा दृष्ट हों अथवा शुभ ग्रहों के साथ बैठे हों तो जातक नवें वर्ष में यमलोक को प्राप्त होगा— ऐसा जानना चाहिए; इसमें कोई संशय नहीं है॥६८॥

चतुर्थमासे मृत्युयोगकथनम्

लग्नेश्वरे विलग्नस्थे पापैः सर्वैरदृश्यगैः ।
चतुर्थे मासि मरणं याति बालो न संशयः ।।६९।।

लग्नेश लग्न में स्थित हो तथा पापग्रह अदृश्य भाग में स्थित हों तो जातक का मरण चतुर्थ मास में होता है, इसमें संशय नहीं करना चाहिए॥६९॥

द्वादशवर्षे मृत्युयोगमाह

चन्द्रलग्नाधिपः सूर्यः स्वपुत्रेण समन्वितः ।
लग्नादष्टमराशिस्थो द्वादशाब्दे मृतिप्रदः ।।७०।।

चन्द्र राश्यधिपति सूर्य तथा शनि से युक्त होकर लग्न से अष्टम भाव में स्थित हो तो बालक की मृत्यु बारहवें वर्ष में जाननी चाहिए, इसमें कोई संशय नहीं है।।७०।।

षोडशवर्षे मरणयोगमाह

षष्ठाष्टमे पापयुते सौम्ये दृष्टिविवर्जिते ।
आपोक्लिमे विलग्नेशे षोडशे निधनं व्रजेत् ।।७१।।

(वही सूर्य) षष्ठ अथवा अष्टम भाव में पापग्रह से युक्त हो तथा सौम्य ग्रह की दृष्टि उस पर न हो; साथ ही लग्नेश आपोक्लिम (तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादश भाव) में स्थित हो तो जातक की मृत्यु सोलहवें वर्ष में होगी— यह कहना चाहिए।।७१।।

अष्टादशवर्षे मरणयोगमाह

परस्परक्षेत्रसमास्थितौ वा लग्नेशरन्ध्राधिपती न सौम्ये ।
रिष्फारिभे वागधिपेन युक्ते त्वष्टादशाब्दे निधनं प्रयाति ।।७२।।

यदि लग्नेश तथा अष्टमेश एक-दूसरे के स्थानों में बैठे हो तथा दोनों शुभ ग्रह न हों अर्थात् पापग्रह हों अथवा यही दोनों छठे एवं बारहवें भाव में पञ्चमेश से युक्त होकर बैठे हों तो जातक की अट्ठारहवें वर्ष में मृत्यु होती है।।७२।।

विंशतिवर्षे मृत्युयोगमाह

केन्द्रेषु पापेषु निशाकरेण सौम्यग्रहैर्वीक्षणवर्जितेषु ।
षष्ठाष्टमे वा यदि वा शशाङ्के जीवेच्छिशुर्विंशतिवर्षमात्रम् ।।७३।।

यदि केन्द्र में पापग्रहों से युक्त चन्द्रमा शुभग्रहों की दृष्टि से रहित हो अथवा पापयुक्त चन्द्रमा छठे-आठवें भाव में बैठा हो तो शिशु बीस वर्ष मात्र जीवित रहता है।।७३।।

द्वाविंशे मरणयोगौ

जीवेन सहितः सूर्यो लग्नस्थः कीटराशिगः ।
अष्टमाधिपतौ केन्द्रे द्वाविंशे मरणं ध्रुवम् ।।७४।।

यदि सूर्य तथा गुरु लग्न में कीट राशि (कर्क, वृश्चिक) का हो तथा अष्टमेश केन्द्र में हो तो जातक की बाईसवें वर्ष में मृत्यु होती है।।७४।।

राहुणा सहिते चन्द्रे जामित्रे चाष्टमेऽपि वा ।
देवेज्ये लग्नगेहेऽस्मिन् द्वाविंशे मरणं भवेत् ।।७५।।

यदि राहुसहित चन्द्र ७-८ भाव में बैठा हो या गुरु लग्न में हो तो भी बाईसवें वर्ष में जातक का मरण होता है॥७५॥

पञ्चविंशे मरणयोगः

पापद्वयान्तरस्थे तु होरानाथे न सौम्यगे ।
पितृजन्मनि जातस्तु पञ्चविंशे यमं व्रजेत् ।।७६।।

यदि शुभ ग्रहरहित लग्नेश दो पापग्रहों के मध्य में हो और जातक का जन्म उस लग्न में हो, जिसमें उसके पिता का जन्म हुआ था तो इस योग में जन्म लेने वाले जातक का मरण पच्चीसवें वर्ष में होता है॥७६॥

विशेष— जातक का जन्मलग्न तथा उसके माता या पिता का जन्मलग्न एक ही होना शुभ नहीं होता।

सप्तविंशे मरणयोगः

मन्दोदये शत्रुराशौ सौम्यैरापोक्लिमोपगैः ।
षड्विंशे सप्तविंशे वा मरणं भवति ध्रुवम् ।।७७।।

यदि शत्रुराशि का शनि लग्न में हो तथा शुभ ग्रह आत्मोत्क्रम (आपोक्लिम) में बैठे हों ता जातक की मृत्यु छब्बीसवें या सत्ताईसवें वर्ष में होती है॥७७॥

विशेष— ३।६।९।१२ आत्मोत्क्रम स्थान होते हैं।

एकोनत्रिंशद्वर्षे मृत्युयोगः

चन्द्रो मन्दसहायस्तु सूर्यश्चाष्टमसंयुतः ।
एकोनत्रिंशके वर्षे जातो यमपुरं व्रजेत् ।।७८।।

चन्द्रमा शनि का सहायक (सम्बन्धी) होकर सूर्य के साथ अष्टम भाव में बैठा हो तो उनतीसवें वर्ष में जातक यमपुर को जाता है॥७८॥

सम्बन्ध— यह चार प्रकार का होता है—

१. **युति**— दो ग्रह एक ही राशि में हों तो उनका यह सम्बन्ध 'युति' कहलाता है। इसी को सहावस्थान सम्बन्ध कहते हैं।
२. **व्यत्यय**— यदि दो ग्रह एक-दूसरे की राशि में बैठे होतें हैं तो उनका सम्बन्ध व्यत्यय या परस्पर राशिस्थिति या परस्पर स्थानसम्बन्ध कहलांता है।
३. **परस्पर दृष्टिसम्बन्ध**— यदि दो ग्रह एक-दूसरे को देखते हैं तो परस्पर दृष्टि-सम्बन्ध होता है। यह समसप्तक में होता है।
४. **अन्यतर दृष्टिसम्बन्ध**— इसमें एक ग्रह दूसरे को तो देखता है; परन्तु दूसरा पहले को नहीं देखता।

ये चार प्रकार के मुख्य सम्बन्ध होते हैं।

अष्टाविंशे मृतियोगः

पापा जन्माष्टमार्गस्थाः सौम्याः केन्द्रबहिस्थिताः ।
अस्मिन् योगे समुत्पन्ने त्वष्टाविंशे मृतिर्भवेत् ।।७९।।

यदि पापग्रह लग्न, अष्टम तथा मार्ग (सप्तम भाव) में हो एवं सौम्य ग्रह केन्द्र से बाहर (आपोक्लिम या पणफर में) हों तो उस जातक की मृत्यु अट्ठाईसवें वर्ष में होती है।।७९।।

त्रिंशद्वर्षे मृतियोगः

जन्मरन्ध्रपयोर्मध्ये निशानाथे व्यये गुरौ ।
सप्तविंशतिवर्षे वा त्रिंशद्वर्षेऽपि वा मृतिः ।।८०।।

यदि कुण्डली में चन्द्रमा लग्नेश तथा अष्टमेश के मध्य में बैठा हो तथा गुरु बारहवें भाव में हो तो २७वें या तीसवें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।।८०।।

अष्टाविंशे मृतियोगः

रन्ध्रेशे जीवसन्दृष्टे पापे पापनिरीक्षिते ।
रन्ध्रस्थे जन्मपे वापि अष्टाविंशे मृतिर्भवेत् ।।८१।।

अष्टमेश पर पापग्रह की दृष्टि हो तथा अष्टमेश पापग्रह होकर पापदृष्ट हो अथवा लग्नेश अष्टम भाव में हो तो अट्ठाईसवें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।।८१।।

त्रिंशद्वर्षे मृतियोगः

अष्टमाधिपतौ केन्द्रे लग्ने तु बलवत्तरे ।
त्रिंशद्वर्षाण्यसौ जीवेद् द्वात्रिंशद्वाथ जातकः ।।८२।।

यदि अष्टमाधिपति केन्द्र में या लग्न में बली होकर बैठा हो तो जातक तीस या बत्तीस वर्ष की आयु तक जीवित रहता है।।८२।।

पुनश्च त्रिंशद्वर्षे मृतियोगः

लग्नादष्टमराश्यंशे भानुपुत्रसमन्विते ।
पापे बलाधिके लग्ने केन्द्राद्वाह्ये शुभे तथा ।।८३।।
अन्योऽन्यसङ्गतौ क्रूरौ लग्नस्थौ पापवीक्षितौ ।
द्वादशे शीतरश्मौ च परमायुस्तथैव हि ।।८४।।

यदि लग्न से अष्टम भाव या अष्टम के नवांश में शनि हो तथा पापग्रह बली होकर लग्न में एवं शुभ ग्रह केन्द्र से बाहर बैठे हों, क्रूर ग्रहों में राशिपरिवर्तन (व्यत्यय) हो, पापग्रह पापदृष्ट लग्न में हों तथा चन्द्रमा बारहवें भाव में हो तो भी आयु उतनी ही (तीस, बत्तीस वर्ष) होती है।।८३-८४।।

पुनश्च द्वाविंशे मरणयोगः.

जन्माष्टगेशौ यदि केन्द्रयुक्तौ रन्ध्रे तु यः कश्चन खेचरेन्द्रः ।
द्वाविंशके तन्मरणं शुभैस्तु केन्द्रेषु हीनेष्वहितैर्ग्रहेन्द्रैः ।।८५।।

यदि लग्नेश तथां अष्टमेश केन्द्र में स्थित हों, युत हों, अष्टम भाव में कोई-सा भी ग्रह बैठा हो; साथ ही केन्द्र में कोई पापग्रह न हो तो बाईस वर्ष की आयु होती है।।८५।।

द्वात्रिंशे मरणयोगः

क्षीणे शशाङ्के दिवसेशयुक्ते रन्ध्राधिपे केन्द्रगतेऽष्टमेऽपि ।
पापान्विते लग्नगते विहीने द्वात्रिंशदब्दे निधनं प्रयाति ।।८६।।

यदि क्षीण चन्द्रमा सूर्य के साथ हो, अष्टमेश केन्द्र में या अष्टम भाव में पापभाव पापग्रह हो, लग्न बलहीन या पापुयुक्त हो तो बत्तीसवें वर्ष में मृत्यु होती है।।८६।।

विशेष— जातकपारिजात (४.६७) में केवल क्षीण चन्द्रमा से ही यह योग बताया गया है; उसमें 'दिवसे युक्ते' के स्थान पर 'पापयुक्ते' पाठ है—

क्षीणे शशाङ्के यदि पापयुक्ते रन्ध्राधिपे केन्द्रगतेऽष्टमे वा ।
पापान्विते हीनबले विलग्ने द्वात्रिंशदब्दे निधनं प्रयाति ।।

सप्तविंशे मरणयोगः

लग्नरन्ध्रपयोर्योगे स्फुटं तत्कृत्यसंयुतः ।
शुभैरयुक्तः पापश्चेन्मृत्युः स्यात्सप्तविंशतौ ।।८७।।

यदि लग्नेश तथा अष्टमेश के स्पष्ट राश्यंशादि का योग करने पर उस योगफल के तुल्य राशि अंशों पर कोई पापग्रह बैठा हो, शुभग्रह न हो और तो सत्ताईसवें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।।८७।।

विशेष— मान लीजिये कि लग्नेश के स्पष्ट राश्यादि १।८°।१३'।२७" तथा अष्टमेश के स्पष्ट राश्यादि ५।७°।२४'।१५" हों तो इनका योगफल राश्यादि ६।१५°।३७'।४२" यह स्फुट हुआ। यदि इस राशि अंश पर कोई पापग्रह (मंगल, शनि, राहु, मान्दि) आदि हो और कोई शुभ ग्रह न हो तब यह योग घटित होगा।

किसी टीकाकार ने लग्नेश + अष्टमेश की युति पापग्रह के साथ हो, शुभ ग्रह के साथ न हो तब यह योग घटित माना है; परन्तु इस श्लोक का भावार्थ ऊपर लिख दिया गया है और वही समीचीन भी है।

त्रिंशद्वर्षायुयोगः

लग्नाद् विलोमे ससुतश्च चन्द्रो रन्ध्रेश्वरे केन्द्रगते ससौम्यैः ।
दृष्टे युते वा परमायुरत्र त्रिंशत्परं नास्ति बलैर्विहीनः ।।८८।।

यदि लग्न से बारहवें भाव में (विलोम = उल्टे = पीछे) चन्द्रमा बुधयुक्त हो तथा

अष्टमेश केन्द्र स्थित हो तथा शुभदृष्ट-युत हो तो जातक की परमायु (अधिकतम आयु) तीस वर्ष से अधिक नहीं होती है॥८८॥

विशेष— यों तो परमायु का अर्थ एक सौ बीस वर्ष होता है, परन्तु अल्पायु; मध्यमायु में तो जितने वर्षों की गिनती लिखी हो, उतना ही मानना चाहिये। अतः यहाँ परमायु का अर्थ इसी प्रकार ग्रहण करना समीचीन है। श्लोक ८४ में भी परमायु का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है। वहाँ परमायु का अर्थ आयुसीमा है।

चतुर्विंशतिवर्षायुर्योगः

रन्ध्रेश्वरे भाग्यधनात्मयुक्ते लग्नाधिपे रन्ध्रयुते त्वसौम्यैः ।
जातश्चतुर्विंशतिवर्षमात्रं जीवत्यसौ शोभनदृष्टियुक्ते ।।८९।।

यदि अष्टमेश नवम, द्वितीय या प्रथम भाव में से किसी में हो तथा लग्नेष अष्टम भाव में पाप-शुभ ग्रहों की दृष्टि-युति के सहित बैठा हो तो चौबीस वर्ष तक की आयु होती है ॥८९॥

पुनश्च त्रिंशद्वर्षायुर्योगः

अष्टमाधिपतौ लग्ने लग्नेशे बलवर्जिते ।
त्रिंशद्वर्षाण्यसौ जीवेत् त्रिंशन्नातीव वर्तते ।।९०।।

यदि अष्टमेश लग्न में हो तथा लग्नेश बलहीन हो तो जातक मात्र तीस वर्ष ही जीवित रहता है; अधिक नहीं॥९०॥

आपोक्लिमगते चन्द्रे लग्नेशे च तथैव हि ।
पापेक्षिते बलैर्हीने जीवत्यायुस्तथैव च ।।९१।।

यदि चन्द्रमा आपोक्लिम (आत्मोत्क्रम) स्थानों में हो तथा लग्नेश भी उन्हीं में हो (क्योंकि चन्द्र भी लग्न होता है) तथा पापदृष्ट और निर्बल हो तो भी उतनी ही आयु (तीस वर्ष) पर्यन्त जातक जीवित रहता है॥९१॥

षट्त्रिंशद्वर्षायुर्योगः

गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ लग्नेशे पापसंयुते ।
आपोक्लिमस्थे सन्ध्यायामायुः षट्त्रिंशदेव हि ।।९२।।

यदि गुरु तथा शुक्र केन्द्र में हो एवं लग्नेश पापग्रह के साथ आत्मोत्क्रम (३-६-९-१२) भावों में हो तथा सन्ध्या समय का जन्म हो तो जातक की आयु छत्तीस वर्ष की होती है॥९२॥

पुनश्चषट्त्रिंशद्वर्षायुर्योगः

लग्नस्थिते वासरनायके तु पापान्तरे शत्रुगते विहीने ।
षट्त्रिंशदन्तं परमायुरस्य शुभैर्न दृष्टे सति सत्यमेतत् ।।९३।।

यदि वासरनायक (सूर्य) लग्न में पापग्रहों के मध्य शत्रु राशि में निर्बल होकर बैठा हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो उस जातक की आयु छत्तीस वर्ष ही होती है; यह सत्य है॥९३॥

भूसूनुचन्द्रौ तनुगौ शुभास्तु केन्द्राष्टमस्था न भवेयुरत्र ।
जातो यदा मान्द्युदये शिशुः स्यात् षट्त्रिंशकेऽब्दे निधनं प्रयाति ।।९४।।

यदि मंगल तथा चन्द्रमा लग्न में एवं शुभ ग्रह केन्द्रस्थानों में हो, अष्टम में कोई शुभ ग्रह न हो; साथ ही मान्दि (गुलिक) लग्न में हो तो जातक का निधन छत्तीसवें वर्ष में होता है॥९४॥

वक्तव्य— किसी हिन्दी टीकाकार ने 'मान्द्युदये' का अर्थ 'लग्न में केतु हो'— ऐसा किया है; जो समीचीन प्रतीत नहीं होता है; क्योंकि मान्दि का अर्थ स्पष्ट ही 'गुलिक' होता है। मन्द का अर्थ शनि है और गुलिक शनि का पुत्र होने से मान्दि या मान्द्य कहलाता है। लग्नस्थ गुलिक (मान्दि) के फल ग्रन्थों में अशुभ कहे गये हैं—

रोगार्त: सततं कामी पापात्माधिगत: शठ: ।
मूर्तिस्थे गुलिके मन्द: खलभावोऽतिदु:खित: ॥ (वृहत्पाराशरहोराशास्त्र)

सर्वेषामपि पापानां मान्दिर्दोषप्रदोऽधिकम् ।
सोऽतिदोषकरो योग: दृग्वर्गवशत: शने: ॥ (जातकादेशमार्ग- ५.१५)

फलदीपिका (२८.५) में लग्न में बैठने से जातक दीर्घायु नहीं होता; यह स्पष्ट कथन है—

चौर: क्रूरो विनयरहितो वेदशास्त्रार्थहीनो
नातिस्थूलो नयनविकृतो नातिधीर्नातिपुत्र: ।
नाल्पाहारी सुखविरहितो लम्पटो नातिजीवी
शूरो न स्यादपि जडमति: कोपनो मान्दिलग्ने ॥

अध्यायोपसंहारः

होराशास्त्राभ्यासबलात्सङ्गृह्य विदुषां भुदे ।
परं त्यक्त्वा त्वसारन्तु कृतं व्यङ्कटशर्मणा ।।९५।।

।। इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणावरिष्टयोगनिरूपणं नाम दशमोऽध्याय: ।।१०।।

श्री वेङ्कटेश शर्मा ने विद्वानों के आनन्द-हेतु होराशास्त्र के अभ्यास के बल से असार भाग छोड़कर केवल सारभाग का संग्रह किया है॥९५॥

इस प्रकार श्रीसर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़कृत
'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका में दशम अध्याय पूर्ण हुआ॥

◆

अथैकादशोऽध्यायः

अरिष्टभङ्गाध्यायः

तत्रादौ लग्नस्थगुरुफलम्

लग्नस्थितो देवगुरुर्विशेषात् खेटान्निहन्याद्विबलांस्तथैव ।
एकोऽपि बालेन्दुधरप्रणामः समस्तपापं शमयेत्तथैव ।।१।।

बृहस्पति की लग्न में स्थिति का बाल्यारिष्ट ग्रहों में विशेष स्थान है, यह निर्बल ग्रहों के फलों का उसी प्रकार नाश कर देता है, जिस प्रकार एक बार शिवजी को किया गया प्रणाम समस्त पापों का क्षय कर देता है।।१।।

दीर्घायुयोगकथनम्

अत्यन्तसत्त्वे यदि लग्ननाथे सौम्यान्विते तादृशदृष्टिमार्गे ।
केन्द्रस्थिते पापदृशा विहीने स भाग्यवान् जीवति दीर्घमायुः ।।२।।

यदि लग्नेश अतिबली हो, शुभग्रहों से दृष्ट होकर अथवा उनके साथ बैठकर केन्द्र में बैठा हो और पापदृष्टिरहित हो तो वह बालक भाग्यवान् और दीर्घायु होता है।।२।।

प्रयत्नेनारिष्टभङ्गयोगः

शशाङ्को रन्ध्रनाथस्तु सौम्यद्रेष्काणसंयुतः ।
जातं शिशुं प्रयत्नेन रक्षयेद्रात्रिवासरम् ।।३।।

चन्द्रमा तथा अष्टमेश सौम्य द्रेष्काण में युत हों तो जात शिशु की प्रयत्नपूर्वक एक अहोरात्र (दिन-रात) रक्षा करने पर शिशु बच जाता है।।३।।

चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोगः

चन्द्रः सम्पूर्णगात्रस्तु सौम्यक्षेत्रांशगोऽपि वा ।
सर्वारिष्टनिहन्ता स्याद्विशेषाच्छुक्रवीक्षितः ।।४।।

पूर्ण चन्द्र सौम्य ग्रह के राश्यंशक में हो तो समस्त प्रकार के बाल्यारिष्टों का नाश कर देता है, विशेषतः शुक्र से दृष्ट इस प्रकार का चन्द्र यह फल प्रदान करता है।।४।।

अरिष्टभङ्गयोगः

जीवभार्गवसौम्यानामेकः केन्द्रगतो बली ।
पापदृग्योगहीनश्चेत्सद्योरिष्टस्य भङ्गकृत् ।।५।।

गुरु, शुक्र अथवा बुध में से एक भी केन्द्र में बलवान हो और पापग्रहों से युक्त

दृष्ट न हो तो तत्काल अरिष्ट योगों को भंग करने वाला होता है।।५।।

चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोगः

चन्द्रोऽपि शत्रुराशिस्थो जीवशुक्रविदां यथा ।
द्रेष्काणं शमयत्येवारिष्टं पापं हरिर्यथा ।।६।।

चन्द्र शत्रुराशि में भी स्थित हो, किन्तु गुरु, शुक्र या बुध के द्रेष्काण में स्थित हो तो तत्काल अरिष्ट योगों को उसी प्रकार भङ्ग करता है, जैसे श्रीहरि पापों का शमन करते हैं।।६।।

शुक्लेऽपि पक्षे यदि रात्रिजन्म चन्द्रोऽपि षष्ठाष्टमराशियुक्तः ।
शुभेक्षितः सन्निह कृष्णपक्षे दृश्यः स पापैरवति प्रसूतम् ।।७।।

शुक्ल पक्ष में रात्रि का जन्म हो तथा कृष्ण पक्ष में दिन के समय में जन्म हो तो यदि चन्द्र षष्ठ भाव या अष्टम भाव में भी पापदृष्ट होकर बैठा हो तब भी बालक की रक्षा करता है।।७।।

निशाकरे शोभनखेचरांशे शुभेक्षिते पूरितदीप्तिजालः ।
जातस्य निःशेषमरिष्टमाशु यथा विषं हन्ति च वैनतेयः ।।८।।

चन्द्रमा शुभ ग्रह के अंशक में शुभ ग्रह से दृष्ट होकर दीप्त होकर बैठा हो तो जातक के अरिष्टों का उसी प्रकार से नाश कर देता है, जिस प्रकार कि वैनतेय (गरुड़) सर्पों का नाश कर देते हैं।।८।।

अरिष्टभङ्गयोगः

प्रकाशमानो गगनेन्द्रपूज्यः केन्द्रस्थितो रक्षति जातसूनुम् ।
सौम्यांशका जीवशशांकशुक्रसौम्या विनिघ्नन्ति समस्तदोषम् ।।९।।

बृहस्पति प्रकाशमान होकर केन्द्र में स्थित हो तो बालक की रक्षा करता है। गुरु, शुक्र, चन्द्र व बुध शुभांशकों में स्थित हों तब भी सम्पूर्ण अरिष्ट योगों के फल का नाश करते हैं।।९।।

जन्माधिपः केन्द्रगतः शुभश्चेज्जातं शिशुं रक्षति सौम्यदृष्टः ।
स्वांशस्थितैः शोभनखेचरेन्द्रैर्दृष्टस्तदान्यो विनिहन्त्यरिष्टम् ।।१०।।

जन्मलग्नेश शुभ ग्रह हो तथा केन्द्र में स्थित हो और शुभ ग्रहों द्वारा दृष्ट हो तो बालक की रक्षा करता है। लग्नेश शुभ ग्रह हो तथा उसे स्वांशक में स्थित शुभ ग्रह देखता हो तो वह भी अरिष्टहन्ता होता है।।१०।।

राहुकृदरिष्टभङ्गयोगः

लग्नात्तृतीयारिभवे च राहुः पापैर्विमुक्तः शुभदृश्यमानः ।
विनाशयत्याशु समस्तरिष्टं तूलं यथा वायुबलस्य वेगः ।।११।।

लग्न से तृतीय, षष्ठ या एकादश भाव में पापग्रहों से विमुक्त तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट राहु स्थित हो तो वह अरिष्ट फलों को उसी प्रकार छिन्न-भिन्न कर देता है, जिस प्रकार कि वायु रूई को छिन्न-भिन्न कर देता है॥११॥

चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोगः

शीर्षोदयस्थाः सकला ग्रहेन्द्रा रिष्टं हरन्त्याशु शुभांशकस्थाः ।
पूर्णेन्दुरन्यैर्वियुतः शुभैस्तु दृष्टो हरत्याशु समस्तरिष्टम् ।।१२।।

समस्त ग्रह शीर्षोदय राशियों (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मिथुन राशियाँ) में शुभ ग्रहों के अंशकों में स्थित हों अथवा पूर्ण चन्द्र पापग्रहरहित हो तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो सम्पूर्ण दोषों का हनन करता है॥१२॥

सर्वग्रहेन्द्रैः परिपूर्णचन्द्रो दृष्टो हरत्याशु समस्तदोषान् ।
नयैः स्वकीयैः प्रहरेत् क्षितीशो यथा तथा जन्मनि दोषजालम् ।।१३।।

पूर्ण चन्द्र पर पर सभी ग्रहों की दृष्टि हो तो वह सम्पूर्ण दोषों को उसी प्रकार दूर करता है, जिस प्रकार राजा अपने न्याय द्वारा प्रजा के दोषों को दूर करता है॥१३॥

अरिष्टभङ्गयोगः

सौम्यग्रहैरतिबलैर्विबलैश्च पापैर्लग्ने च सौम्यभवनं शुभदृष्टियुक्तम् ।
सर्वापदां विहरतो भवति प्रसूतिः पूजापरे खलु यथा पठनैर्ग्रहाणाम् ।।१४।।

शुभ ग्रह अतिबली हों तथा पापग्रह निर्बल हों एवं लग्न में शुभ ग्रह की राशि शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो ऐंसे समय में जन्म लेने वाला जातक सम्पूर्ण आपत्तियों से रहित होता है, जैसे कि ग्रहों की पूजा, स्तोत्रादि पाठ में तत्पर मनुष्यों की विपत्तियाँ दूर हो जाती हैं॥१४॥

अरिष्टभङ्गयोगः

उदयोऽगस्त्यमुनेः सप्तर्षीणां मरीचिपूर्वाणाम् ।
सर्वारिष्टं नश्यति तम इव सूर्योदये प्रबलम् ।।१५।।

जन्मसमय में अगस्त्य तारे का उदय हो तथा सप्तर्षि उदित हों तो सभी प्रकार के अरिष्टों का उसी प्रकार नाश हो जाता है, जिस प्रकार सूर्योदय से तम (अन्धकार) नष्ट हो जाता है॥१५॥

राहुकृदरिष्टभङ्गयोगः

अजवृषकर्किणि लग्ने रक्षति राहुः समस्तपीडाभ्यः ।
पृथिवीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम् ।।१६।।

मेष, वृष, कर्क राशि में लग्न में स्थित राहु उसी प्रकार जातक की रक्षा करता है, जिस प्रकार कि अपराधी पर प्रसन्न हुआ राजा उसकी रक्षा करता है॥१६॥

चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोगः

चन्द्रः शुभवर्गस्थः क्षीणोऽपि शुभेक्षितो हरति रिष्टम् ।
जलमिव हन्त्यतिसारं जातीफलवल्कलक्क्वथितम् ।।१७।।

चन्द्रमा क्षीण होने पर भी यदि शुभ ग्रहों के अंशक में हो तो अरिष्ट को उसी प्रकार हर लेता है, जिस प्रकार जातीफल के वल्कलों से पकाया गया जल अतिसार का हरण कर लेता है॥१७॥

सप्ताष्टमषष्ठस्थाः शशिनः सौम्या हरन्ति कष्टफलम् ।
युवतिजनस्य कटाक्षा ललिता यूनां यथा नूनम् ।।१८।।

चन्द्र से सप्तम, अष्टम एवं षष्ठ स्थान में स्थित शुभ ग्रह कष्टों का उसी प्रकार से कष्टफल हरण कर लेते हैं, जिस प्रकार से युवतियों के कटाक्ष से युवाजनों के कष्ट दूर हो जाते हैं॥१८॥

पुनरपि चन्द्रकृदरिष्टभङ्गयोगः

पापराशिगते चन्द्रे तदीशेन निरीक्षिते ।
सौम्यग्रहाणां वर्गस्थे कृपणेन धनं यथा ।।१९।।

चद्रमा पापग्रह की राशि में स्थित हो तथा चन्द्रराशि द्वारा चन्द्र निरीक्षित हो और सौम्य ग्रहों से भी दृष्ट हो तो ठीक उसी प्रकार बालक की रक्षा करता है, जिस प्रकार कि कृपण मनुष्य धन की रक्षा करता है॥१९॥

चन्द्राधिष्ठितराशीशे लग्नस्थे शुभवीक्षिते ।
भृगुणा वीक्षिते चन्द्रे स्वोच्चे रिष्टं हरेत्तदा ।।२०।।

चन्द्राधिष्ठित राशि का स्वामी लग्न में शुभ ग्रहों द्वारा दृष्ट हो तथा चन्द्र को उच्चराशिस्थ शुक्र देखता हो तो अरिष्ट फलों का हरण कर लेता है॥२०॥

स्वोच्चस्थे स्वग्रहेऽथ वापि सुहृदां वर्गे स्वकीयेऽथ वा
सम्पूर्णः शुभवीक्षितः शशिधरो वर्गेषु सौम्येषु वा ।
शत्रूणामवलोकनेन रहितः पापैरयुक्तेक्षितो
रिष्टं हन्ति सुदुस्तरं दिनमणिः प्रालेयनाशं यथा ।।२१।।

पूर्ण चन्द्र शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर उच्च राशि का हो, स्वराशि में स्थित हो अथवा मित्र के वर्ग में हो या स्ववर्ग में स्थित हो, शत्रुदृष्टि से रहित हो तथा पापग्रहों द्वारा भी न देखा जाता हो, तो कठिन अरिष्ट को भी ठीक उसी प्रकार दूर कर देता है, जैसे कि सूर्य हिम का नाश कर देता है॥२१॥

इस अध्याय की विशेषता— यद्यपि यह अध्याय इस ग्रन्थ का यह सबसे छोटा

अध्याय है; परन्तु इस छोटे अध्याय के मात्र बाईस श्लोकों में बहुत-सी ऐसी जानकारी उपलब्ध है, जो अन्य ज्योतिषग्रन्थों में नहीं मिलती। इस अध्याय में ग्रन्थकार ने उपमाओं तथा उत्प्रेक्षाओं का प्रयोग भी खूब किया है एवं अपनी लेखन शैली को मनोरञ्जक भी बना दिया है। वैद्यक ग्रन्थ 'वैद्यजीवनम्' में उसके रचयिता श्री लोलिम्बराज ने जिस शैली का प्रयोग किया है, वही शैली इस अध्याय में भी प्रयुक्त है; परन्तु इतना सब होने पर भी कुछ विवरण ऐसा है कि उसे बोधगम्य बनाने के लिये शब्दों की व्याख्या आवश्यक है, जो नीचे दी जा रही है—

अगत्य मुनि का उदय— इस अध्याय के पन्द्रहवें श्लोक में अगस्त्य मुनि के उदय से अरिष्ट-नाश की बात कही गयी है। इसको समझना जरूरी है। अगस्त्योदय का क्या अर्थ है? अगस्त्य ऋषि के नाम पर यह तारा आकाश में मिथुन के अन्त तथा कर्क के आदि भाग में स्थित है। सूर्यसिद्धान्त के अनुसार यह सिंह राशि के तीन अंश तथा बीस कला पर उदित होता है तथा वृष के २७°।४०' सूर्य के आने पर अस्त हो जाता है। तब क्या इतने समय में जन्मे बालक का अरिष्टभङ्ग होगा? मेरी समझ में तो इसका अर्थ इस प्रकार से ग्रहण करना चाहिये—

१. जन्मसमय रात्रि का होना चाहिये ।
२. अगस्त्य को लग्न (उदय) में होना चाहिये।

अब अगस्त्य लग्न में कब रहेगा? इसका उत्तर है कि अगस्त्य कोई ग्रह नहीं; अपितु तारा है। वह स्थिर है और उसकी स्थिति कर्क के प्रारम्भ में है। अस्तु; जब जन्म मिथुन लग्न के पच्चीस अंश से लेकर कर्क के पन्द्रह अंश के भीतर होगा तथा रात्रि में होगा तब अगस्त्य लग्न में माना जायेगा। अस्तु; यह स्थिति सितम्बर से दिसम्बर तक ही रहती है। इस समय में अगस्त्य की किरणें लंग्न पर पड़ती हैं। जैसा कि कहा गया भी है—

अशीतिभागैर्याम्यां अगस्त्यो मिथुनान्तग: ।
विंशे च मिथुनस्यांशे मृगव्याधो व्यवस्थित: ॥
विक्षेपो दक्षिणभागै: खार्णवै: स्वापदक्रमात् ।
हुतभुग् ब्रह्महृदयौ वृषे द्वाविंशभागगौ ॥
अष्टाभिस्त्रिंशता चैव विक्षिप्तावुत्तरेण तौ ।
गोलं बध्वा परीक्षेत विक्षेपं ध्रुवकं स्फुटम् ॥

नीचे सूर्यसिद्धान्तानुसार विशेष ताराओं की आकाशीय स्थिति प्रदर्शित की जा रही है—

श्रीसूर्यसिद्धान्तोक्ताः विशेषतारकध्रुवाः

प्रजापति	ब्रह्महृत्	अग्नि	अगस्ति	अपांवत्स	लुब्ध	संज्ञा
१	१	१	४	६	३	माद्यादय ध्रुवाः
११	९	१८	३	४	६	
१०	३०	४०	२०	२०	४०	
४	४	४	५	८	५	खमध्यध्रुवाः
२७	२२	२२	२२	२०	१९	
११	१६	१६	३८	०	४९	
२	२	१	१	६	२	अस्तध्रुवाः
१२	४	२५	२७	६	३	
५०	३०	२०	४०	४०	२०	
१	१	१	३	३	२	माद्या ध्रुवाः
२७	२२	२२	०	५	२०	
०	०	०	०	०	०	
४	४	१	१०	२	१	ग्रन्थान्तरे ध्रुवांशान्तरं
०	०	०	०	०	०	
०	०	०	२५	२५	०	
३८	३०	८	८०	४	४०	सरांशाः सदिशः
०	०	०	०	०	०	
उ	उ	उ	द	उ	द	
१	१		४	१		ग्रन्थान्तरे शरांशान्तरं
०	०		०	०		
			५	५		
३८	१०	८	८०	२९	३९	नतांशाः सदिशः
४६	२२	२३	२६	१८	१८	
उ	उ	उ	द	द	द	
१६	१६	१६	१६	१४	१६	दिनार्धानि
४१	३८	३८	३५	१५	४०	

यह सारिणी दीनानाथ मिश्रकृत सर्वसङ्ग्रह ग्रन्थ से उद्धृत की गयी है।

सप्तर्षियों का उदय— इसका अभिप्राय यह है कि निर्मल आकाश में यदि जन्म के समय सप्तर्षि दिखें तो अरिष्टभङ्ग करते हैं।

जातीफलवल्कलक्वथितम्— इसे हिन्दी में जायफल, अंग्रेजी में नटमेग तथा लैटिन में मिरिष्टिका फ्रेगरेंस कहते हैं। यह अपने ही जातिफलकुल की वनस्पति होती है। संसार में इसकी पचासी जातियाँ पाई जाती हैं। उनमें से भारत में लगभग तीस जातियाँ पाई जाती हैं। इसका फल ही जातिफल या जायफल कहलाता है। यह फल १-३ इंच लम्बे छोटे प्रायः तीन स्तरों से युक्त होते हैं। इसका प्रथम स्तर फलावरण का है; जो मोटा, मांसल, पकने पर पीला हो जाता है। यह बाहरी आवरण (छिलका) होता है और इसी को वल्कल कहा गया है। पकने पर यह आवरण दो भागों में विभक्त हो जाता है। इसका दूसरा स्तर पलासपुष्प के रंग-जैसा होता है। यह जालीदार तथा मांसल आवरण फल के अन्दर के बीज को घेरे रहता है। यह बीज सूख कर (पके फल से) स्वयं अलग हो जाता है, जिसे जायपत्री या जावित्री कहते हैं। इसका तृतीय स्तर बीज के ऊपर का कड़ा भाग होता है, इस आवरणसहित फल को ही जायफल कहते हैं। वास्तव में यह फल का बीज होता है।

जावित्री ही इसका वल्कल है, जो बच्चों तथा बड़ों दोनों के ही अतिसार में लाभप्रद है। अल्पायु योग के बालकों को जातिफल का सेवन नियमित रूप से करना चाहिये। यह भी ग्रन्थकार का आशय है।

अध्यायोपसंहारः

अध्यायोऽरिष्टभङ्गाख्यः प्रोक्तश्चिन्तामणौ मया ।
मधुवृत्त्या गृहीत्वा तु व्यङ्कटेश्वरशर्मणा ।।२२।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणावरिष्टभङ्गनिरूपणो नामैकादशोऽध्यायः ।।११।।

मुझ वेङ्कटेश शर्मा द्वारा मधुवृत्ति के द्वारा इस अरिष्टभङ्ग नामक अध्याय का संग्रह किया गया; जो कि इस सर्वार्थचिन्तामणि का ग्यारहवाँ अध्याय है।।२२।।

इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ के ग्यारहवें अध्याय की आचार्य पं० गुरु प्रसाद गौड़कृत 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।।११।।

* * *

अथ द्वादशोऽध्याय:

मध्यमायु-दीर्घायुर्योगविचाराध्याय:

मध्यमायुकालविचार:

द्वात्रिंशदूर्ध्वमर्वाक्तः सप्तत्या मध्यममायुर्योगान् ।
तावत्कालनियमितान् योगविशेषानहं वक्ष्ये ।।१।।

ग्रन्थकर्त्ता ने कहा है कि ३२ वर्ष से ऊपर और ७० वर्ष से नीचे का समय मध्यमायु का है। अत: अब इस आयु के भीतर के योगों का कथन करता हूँ।।१।।

त्रयस्त्रिंशद्वर्षे आयुर्योग:

चन्द्रे कुजर्क्षे तनुगे प्रदृष्टे क्रूरग्रहैः शोभनखेचरेन्द्रैः ।
केन्द्राद्वहिष्ठैर्निधनं प्रयाति वर्षैस्त्रयस्त्रिंशसमानकैस्तु ।।२।।

चन्द्र, मंगल की राशि का लग्न में पापग्रहों से दृष्ट हो तथा शुभ ग्रह केन्द्र में न हो तो जातक ३३ वर्ष की आयु को प्राप्त करता है।।२।।

पापग्रहे रन्ध्रपतौ सचन्द्रे केन्द्रस्थिते वा यदि वा त्रिकोणे ।
निरीक्षिते पापखगैर्नभस्थैः जातस्त्रयस्त्रिंशदुपैति वर्षम् ।।३।।

पापग्रह अष्टमेश और चन्द्रमा केन्द्र अथवा त्रिकोण में युत होकर बैठा हो तथा पापग्रह उसे दशम स्थान में बैठकर देखते हों तो मनुष्य की आयु ३३ वर्ष की होती है।।३।।

लग्ने शनौ रात्रिकरेण युक्ते भौमे घटस्थे सुरसंख्यवर्षैः ।
क्रूरान्तरे लग्नगते तदीशे युग्मस्थिते देवगुरौ पुरस्थे ।।४।।

लग्न में शनि एवं चन्द्र की युति हो तथा मंगल कुम्भ राशि में स्थित हो जातक की तो आयु ३३ वर्ष होती है। लग्न क्रूरान्तर्गत हो और लग्नेश युग्म (मिथुन) राशि में स्थित हो तथा देवगुरु बृहस्पति पुरस्थ (चतुर्थ भावस्थ) हो तब भी उपर्युक्त आयु ही जाननी चाहिए।।४।।

मध्यमायुर्योगानाह

जातस्तु मृत्युं मुनिवह्निवर्षैः प्रयाति शास्त्रप्रवरैः प्रदिष्टम् ।
सभूमिजे रन्ध्रपतौ विलग्ने राशौ स्थिरे वा यदि वा धराजे ।।५।।
रिष्फेऽष्टमे मृत्युमुपैति जातस्त्वब्दैः द्विपाथोधिसमानकैर्वा ।
केन्द्रे गुरौ कर्मणि सूर्यपुत्रे लग्ने चरे वेदयुगैः समानैः ।।६।।

जातक की आयु ३७ वर्ष होती है, ऐसा शास्त्रज्ञों ने कहा है। लग्न में भौमसहित अष्टमेश हो अथवा मंगल स्थिर राशि में अष्टम या द्वादश भाव में स्थित हो तो ४२वें वर्ष में जातक को मृत्यु प्राप्त होती है। यदि बृहस्पति केन्द्र में स्थित हो, दशम भाव में शनि स्थित हो तथा लग्न में चरराशि (मेष, कर्क, तुला, मकर राशि) हो तो जातक ४४ वर्ष की आयु को प्राप्त करता है।।५-६।।

षट्त्रिंशद्वर्षे आयुर्योगमाह

गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ लग्नेशे पापसंयुते ।
आपोक्लिमस्थे सन्ध्यायामायुः षट्त्रिंशदेव हि ।।७।।

गुरु तथा शुक्र केन्द्र में स्थित हो, लग्नेश पापग्रह से युक्त होकर आपोक्लिम (तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादश) स्थान में हो और सन्ध्याकाल का जन्म हो तो जातक ३६ वर्ष की आयु को प्राप्त करने वाला होता है।।७।।

चतुश्चत्वारिंशतवर्षेमरणयोगः

स्वोच्चे विलग्ने क्षितिनन्दने च जीवेऽस्तगे कर्मणि सूर्यपुत्रे ।
जातो धनाढ्यो बहुशास्त्रवेत्ता वेदाब्धिवर्षैर्निधनं प्रयाति ।।८।।

लग्न में स्वराशि या उच्च राशि का मंगल स्थित हो, सप्तम भाव में जीव (गुरु) स्थित हो तथा कर्मभाव (दशम भाव) में सूर्यपुत्र (शनि) स्थित हो तो ऐसा व्यक्ति धनवान, बहुत प्रकार के शास्त्रों को जानने वाला तथा ४४ वर्ष की आयु को प्राप्त करने वाला होता है।।८।।

लग्नेश्वरे रन्ध्रगते सपापे केन्द्राद्बहिष्ठे यदि सौम्यखेटे ।
चत्वारिंशद्वत्सरे मृत्युमेति जातः पुत्रो नान्यथा शास्त्रमेतत् ।।९।।

लग्नेश सपाप अष्टम स्थानगत हो, शुभ ग्रह केन्द्र में स्थित न हों तो ऐसे योग में जन्म लेने वाला बालक ४४ वर्ष की आयु को प्राप्त होता है। शास्त्रों का यह कथन अन्यथा नहीं है।।९।।

पञ्चचत्वारिंशद्वर्षे निधनयोगमाह

जन्माधिपे रन्ध्रगते सपापे पापान्विते रन्ध्रपतौ रिपुस्थे ।
बलान्विते वा शुभदृग्विमुक्ते पञ्चाब्धिवर्षैनिधनं प्रयाति ।।१०।।

जन्मलग्नेश पापयुक्त होकर अष्टम स्थान में स्थित हो, अष्टमेश सपाप होकर षष्ठो स्थान में स्थित हो तथा बल और शुभ दृष्टि से रहित हो तो ४५वें वर्ष में जातक का निधन होता है।।१०।।

अष्टचत्वारिंशद्वर्षे निधनयोगमाह

मेषे शशाङ्के तनुगे सुपूर्णे सौम्येक्षिते भूपतिरत्र जातः ।
पापग्रहाणां च दृशा विहीने नागाब्धिवर्षैर्निधनं प्रयाति ।।११।।

पूर्ण चन्द्र मेष राशि का होकर लग्न में स्थित हो और उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो ऐसे योग में उत्पन्न मनुष्य राजा होता है। यदि उस पर पापग्रहों की दृष्टि न हो तो जातक ४८वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है॥११॥

द्विपञ्चाशद्वर्षे मरणयोगमाह

शनैश्चरो लग्नगतः सहायः त्वन्येन चन्द्रो व्ययभेष्टमे वा ।
वेदान्तविज्ञानसुशीलवृत्तो जातस्तु मृत्युं नयनेषु वर्षे ।।१२।।

शनि किसी ग्रह से युत होकर लग्न में स्थित हो, चन्द्र अष्टम या द्वादश स्थान में स्थित हो तो जातक वेदान्त के ज्ञान से युक्त, उत्तम स्वभावयुक्त एवं चरित्रवान होता है और ५२ वर्ष की आयु को प्राप्त करता है॥१२॥

मध्यमायुयोगानाह

चापे गुरौ लग्नगतेऽष्टमस्थे भौमे सराहौ मुनिबाणवर्षे ।
रन्ध्रेश्वरे कामगते शशाङ्के पापान्विते षण्मृतिगेष्टबाणे ।।१३।।

धनु राशि का गुरु लग्न में स्थित हो, अष्टम स्थान में मंगल एवं राहु स्थित हों तो जातक की ५७ वर्ष की आयु होती है। अष्टमेश सप्तम स्थान में हो तथा चन्द्र पापयुक्त होकर षष्ठाष्टम स्थान में हो तो ५८ वर्ष की आयु होती है॥१३॥

सरन्ध्रपे देवगुरौ विलग्ने कुम्भे सपापे यदि केन्द्रराशौ ।
शास्त्रार्थवेत्ता खलु पुण्यवांश्च जातस्तु षष्ट्या निधनं प्रयाति ।।१४।।

अष्टमेश के साथ देवगुरु लग्न में हों अथवा कुम्भ राशिस्थ गुरु पापग्रहसहित केन्द्र में स्थित हो तो ऐसा जातक शास्त्रों को जानने वाला, पुण्यात्मा और ६० वर्ष की आयु प्राप्त करने वाला होता है॥१४॥

केन्द्रे सपापे तनुपे व्ययस्थे लग्नेश्वरे रन्ध्रगते हि वह्नौ ।
लोकान्तरं प्रापयति स्म जातं कुशीलवृत्तं कुलपांसनं तम् ।।१५।।

केन्द्र में सपाप लग्नेश स्थित हो अथवा पापयुक्त लग्नेश अष्टम या द्वादश भाव में तो वह मनुष्य दुष्ट स्वभाव एवं चरित्र वाला तथा कुलनाश करने वाला होता है और अग्नि में जलकर उसकी मृत्यु होती है॥१५॥

षष्टिवर्षे निधनयोगानाह

लग्नाभिधाने विबुधारिपूज्ये बुधेज्यचन्द्रैः परिदृश्यमाने ।
जातं नरं भूमिपतिं धनाढ्यं करोति षष्ट्या सुतभेन्द्रपूज्ये ।।१६।।

शनि लग्न में, चतुर्थ भाव में चन्द्र, सप्तम भाव में मंगल, दशम भाव में सूर्य स्थित हो और शुक्र बुध या गुरु में से किसी के साथ स्थित हो तो जातक राजा के सदृश तथा ६० वर्ष की आयु को प्राप्त करने वाला होता है॥१६॥

सौरो विलग्ने हिबुके शशाङ्के कुजे कलत्रे गगने दिनेशे ।
कवीज्यसौम्येष्विहतैर्युतेषु नरेश्वरो जीवति वर्षषष्ट्या ।।१७।।

लग्न में शुक्र चन्द्र, बुध व गुरु से दृष्ट हो तथा पञ्चम भाव में स्थित हो तो व्यक्ति को धनवान एवं राजा बनाता है और ६० वर्ष की आयु प्रदान करता है॥१७॥

सिते विलग्ने बुधभास्करात्मजौ चतुष्टयस्थाः परमोच्चखेचराः ।
तृतीयलाभर्क्षगतास्तु योगे महीपतिः स्यान्निधनं च षष्ट्या ।।१८।।

शुक्र लग्न में स्थित हो, बुध तथा शनि केन्द्र में स्थित हों तथा परमोच्च राशिगत ग्रह तृतीय एवं एकादश भाव में स्थित हों तो ऐसे योग में उत्पन्न मनुष्य राजा बनता है तथा ६० वर्ष की आयु को प्राप्त होता है॥१८॥

षट्षष्टिवर्षे मृत्युयोगः

होराजन्माधिनाथौ निधनमुपगतौ मृत्युनाथे च केन्द्रे
योगे जातो नरोऽस्मिन् जनयति नरपं कीर्तिवित्तान्वितं च ।
षष्ट्यां षड्भिर्युतायां निधनमभिहितं नन्दिकोक्ते द्विनिघ्नं
वर्षे त्रिंशेऽथवा स्यात् खलमिति खचरैर्जायते पार्थिवेन्द्रः ।।१९।।

यदि होरालग्न का स्वामी तथा जन्मलग्न का स्वामी दोनों अष्टम भाव में हों एवं अष्टमेश केन्द्र में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक राजा तथा कीर्तिमान होता है और उसकी छियासठ वर्ष की आयु होती है। नन्दिकेश ने इस योग में साठ वर्ष की आयु कही है। यदि ये ग्रह (होरालग्नेश, जन्मलग्नेश, अष्टमेश) पापग्रह हों तो वह दुष्ट मति का राजा होता है तथा उसकी आयु तीस वर्ष होती है॥१९॥

विशेष– एक विद्वान् ने **होराजन्माधिनाथौ** का अर्थ जन्मकालिक होरा (कालहोरा) का स्वामी तथा लग्नेश किया है; परन्तु मेरी दृष्टि में होरालग्नेश ही युक्तिसंगत है।

अष्टषष्टिवर्षे मृत्युयोगः

नक्षत्रनाथसहितः सविता नभस्थः
सौरिर्विलग्नसहितो हिबुके सुरेज्यः ।
अस्मिन् योगे जायते यो मनुष्यः
क्षोणीपतिर्नैधनमष्टषष्ट्या ।।२०।।

जब सूर्य चन्द्रमासहित दशम भाव में हो और शनि लग्न में तथा गुरु चतुर्थ भाव

में हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य राजा होता है तथा उसकी आयु अड़सठ वर्ष होती है॥२०॥

पुनश्च षट्षष्टिवर्षायुर्योग:

जीवे विलग्ने बुधसूर्ययुक्ते
मीने शनौ द्वादशगे हिमांशौ ।
जातो योगे चार्थवान् सौख्यभाक्च
जीवेत्षष्ट्या षट्सहायेन जात: ।।२१।।

यदि गुरु लग्न में बुध एवं सूर्य के साथ हो, चन्द्रमा बारहवें भाव में हो तो इस योग में उत्पन्न जातक सम्पत्तिशाली तथा सुखी होता है और छियासठ वर्ष तक जीवित रहता है॥२१॥

पञ्चषष्टिवर्षायुयोग:

चन्द्रे विलग्ने स्वगृहं प्रयाते नीचे शनौ सप्तमगे च सूर्ये ।
अस्मिञ्जातो मानुषो ज्ञानिमुख्यो जीवेत्षष्टि: पञ्चभि: सम्प्रयुक्त: ।।२२।।

यदि स्वगृही चन्द्रमा लग्न में हो, शनि नीच राशि का (मेष का) हो, सूर्य सप्तम में हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य ज्ञानियों में मुख्य होता है तथा पैंसठ वर्ष तक जीवित रहता है॥२२॥

सप्ततिवत्सरायुयोग:

नीचे मन्दे केन्द्रगे वा त्रिकोणे सौम्ये केन्द्रे भास्करे वा ससौम्ये ।
योगे जात: पण्डितो धर्मशीलो ज्ञानी प्राज्ञ: सप्ततेर्वत्सराणाम् ।।२३।।

यदि शनि नीच राशि (मेष) का होकर केन्द्र या त्रिकोण में हो, शुभ ग्रह केन्द्र में हों अथवा सूर्य-बुध की युति केन्द्र में हो तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति पण्डित, धर्मशील, ज्ञानी तथा प्रज्ञासम्पन्न होता है और उसकी आयु सत्तर वर्ष होती है॥२३॥

प्रबले केन्द्रगे सौम्ये निधने सौम्यवर्जिते ।
लग्नाधिपेन दृष्टश्चेत्पापैर्जीवति सप्ततिम् ।।२४।।

यदि बलवान शुभ ग्रह केन्द्र में हो तथा अष्टम भाव में शुभ ग्रह का अभाव हो; साथ ही अष्टम भाव पर लग्नेश की दृष्टि न हो तो जातक सत्तर वर्ष जीवित रहता है॥२४॥

पञ्चमस्थे धरासूनौ नीचे मन्देऽस्तगे रवौ ।
अस्मिञ्जातो मनुष्यस्तु सप्तत्या निधनं व्रजेत् ।।२५।।

यदि पञ्चम भाव में मंगल, नीच राशि में शनि तथा सप्तम भाव में सूर्य हो तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति सत्तर वर्ष का होकर मृत्यु को प्राप्त होता है॥२५॥

ग्रन्थकर्तुः कथनम्

इत्येवं बहुधा मया निगदिता योगास्त्वसंख्या इमे
ये प्रोक्ता यवनादिभिर्मुनिगणैर्निश्चित्य योगान् स्थितान् ।
ज्ञात्वा सम्यगुदाहरन्ति मनसा ते यान्ति कीर्तिम्परम्पराम्
एवं प्रश्नविधौ सुजन्मसमये वैवाहिके कर्मणि ।।२६।।

ग्रन्थकार कहते हैं कि इस प्रकार कुछ योग यहाँ पर मैंने कहा है; किन्तु ऐसे योग बहुत अधिक हैं, जिन्हें यवनादि ने कहा है। मैंने मुनिगणों के मत को भी देखा है, जो मुझे ठीक प्रतीत हुए हैं, उन्हीं को मैंने यहाँ दिया है। इनका उपयोग जो विद्वान् प्रश्न, जातक एवं विवाह में करते हैं, वे ज्योतिष शास्त्र की कीर्तिपरम्परा को प्राप्त होते हैं।।२६।।

◆

अथ दीर्घायुर्योगाः

सप्ततिवर्षाधिकायुर्योगः

दीर्घायुराप्नोति खगाः समस्ताः शुभाऽशुभाः षड्भवनान्तरस्थाः ।
लग्नात्तथैवापरभागयुक्ताः शुभाऽशुभास्तद्विपरीतमन्यत् ।।२७।।

लग्न से छठे भावपर्यन्त सभी शुभाऽशुभ ग्रह हों तो जातक दीर्घायु होता है। इसी प्रकार सप्तम से द्वादश तक सभी शुभाऽशुभ ग्रह हों तो दीर्घायु होता है; परन्तु यदि विपरीत स्थिति हो (अर्थात् कुछ ग्रह लग्न से सप्तम तक तथा कुछ उसके बाहर हों) तो यह फल नहीं होगा।।२७।।

अशीत्यायुर्योगः

लग्नादिषट्के शुभखेचरेन्द्राः सर्वे बलाढ्यास्त्वपरे तु पापाः ।
प्रदीप्तियुक्तो गुणवान् सुशीलः श्रीमानशीत्या निधनं प्रयाति ।।२८।।

यदि लग्न से छठे भावपर्यन्त सभी शुभ ग्रह हों तथा सप्तम से द्वादश भावपर्यन्त सभी अशुभ ग्रह हों तो जातक तेजस्वी, गुणवान्, सच्चरित्र तथा श्रीमान् होता है और उसे अस्सी वर्ष की आयु प्राप्त होती है।।२८।।

चत्वारिंशद्वर्षोपरान्तसुखयोगः

लग्ने केन्द्रे शशिसुते कोणे चन्द्रे शुभे शनौ ।
जातस्तु देवमुनिभिर्वर्षैः क्लिश्यत्यतः सुखम् ।।२९।।

यदि लग्न में बुध हो, चन्द्रमा त्रिकोण में तथा शनि दशम में हो तो ऐसा जातक दीर्घायु तो होता है; परन्तु वह चालीस वर्ष तक अनेक कठिनाइयों को सहन करता है और तदुपरान्त सुखी जीवन व्यतीत करता है।।२९।।

पुरुषस्यसभाग्यदीर्घायुर्योग:

ओजराशिगता: सर्वे पूर्णचन्द्रसमन्विता: ।
ओजलग्ने परं भाग्यं दीर्घमायुरुपैति स: ।।३०।।

जिस पुरुष का जन्म विषन लग्न में हो तथा पूर्ण चन्द्रमासहित सभी ग्रह भी विषम राशियों में हों तो उसे परम भाग्य तथा दीर्घायु की प्राप्ति होती है।।३०।।

स्त्रीणां सौभाग्यदीर्घायुर्योगश्च

समराशिगता: सर्वे पूर्णचन्द्रसमन्विता: ।
स्त्रियास्तु जननं युग्मलग्ने भाग्यमुपैति सा ।।३१।।

यदि कन्या के जन्मसमय में सभी ग्रह सम राशियों में हों तथा लग्न एवं पूर्ण चन्द्रमा भी सम राशिगत हो तो उसे सौभाग्य तथा दीर्घायु प्राप्त होती है।।३१।।

निर्भाग्यानां दीर्घायुकथनम्

भाग्ययोगेषु दीर्घायुर्वदन्ति यवनादय: ।
तत्पृथक् पृथगेवाहुर्वराहमिहिरादय: ।।३२।।

भाग्ययोगों में दीर्घायु होता है— ऐसा यवनादि का कथन है; परन्तु वराहमिहिरादि ने उन सबका पृथक्-पृथक् वर्णन किया है; क्योंकि बहुत से भाग्यहीन भी दीर्घायु हुआ करते हैं।।३२।।

भाग्यसहितदीर्घायुर्योगानां विरलता

यत्र तत्र तयोर्योगस्तदिष्टं मम सम्मतम् ।
कदाचित्कान्तयोर्योग: सर्वथा न भवेत्तदा ।।३३।।

इस श्लोक में ग्रन्थकर्ता कहते हैं कि जिन कुण्डलियों में भाग्य तथा दीर्घायु योग साथ-साथ मिलते हैं, वहाँ ऐश्वर्य तथा दीर्घायु दोनों की प्राप्ति होती है; परन्तु ऐसे योग बहुत कम मिलते हैं। राजयोग तथा दीर्घायु योग अलग-अलग होते हैं; अत: सबको यहाँ अलग-अलग दिया गया है।।३३।।

अशीत्यायुर्योग:

जीवे सचन्द्रे केन्द्रस्थे सौम्यदृष्टे परे ग्रहा: ।
दशमात्परतो युक्तास्त्वशीत्या निधनं भवेत् ।।३४।।

यदि गुरु-चन्द्र की युति केन्द्र में हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो; साथ ही सभी ग्रह दशम भाव से आगे ग्यारहवें-बारहवें में हों तो जातक की आयु अस्सी वर्ष की आयु होती है।।३४।।

षडशीत्यायुर्योगः

चतुष्टयगताः सौम्याः पापाश्चाष्टमवर्जिताः ।
चन्द्रो विलग्नात्षष्ठस्थः षडशीत्या यमं व्रजेत् ।।३५।।

यदि शुभ ग्रह केन्द्र में हों तथा अष्टम भाव पापग्रहों से रहित हो और चन्द्रमा लग्न से छठे भाव में हो तो छियासी वर्ष की आयु होती है।।३५।।

दीर्घायुर्योगः

पापास्त्रिलाभषष्ठस्थाश्चन्द्रः षष्टाष्टमङ्गतः ।
केन्द्रे गुरौ त्रिसाहस्त्रग्रामनाथाश्चिरायुषः ।।३६।।

यदि पापग्रह तृतीय, षष्ठ तथा एकादश भाव में हो, चन्द्रगा छठे या आठवें भाव में हो और गुरु केन्द्र में हो तो ऐसा जातक तीन सहस्त्र ग्रामों का नायक होकर दीर्घायु होता है।।३६।।

जितेन्द्रिययोगाः

लग्नात् त्रिकोणे निधनायकेन्द्रे ग्रहास्त्रयः पञ्च पयोधिसंख्याः ।
जातः स्त्रियं प्राप्य जितेन्द्रियस्तु जीवेत्स यत्नान्नृपतिः परे हि ।।३७।।

यदि लंग्न से त्रिकोण, अष्टम, एकादश तथा केन्द्र में से किसी में भी तीन या चार या पाँच ग्रह एकत्रित हों तो इस योग में उत्पन्न जातक स्त्री के साथ होने पर भी जितेन्द्रिय होता है तथा दीर्घायु को प्राप्त करता है। वह यत्नपूर्वक अपनी आयु को बढ़ाता है।।३७।।

कुछ आचार्यों ने ऐसे योग को राजयोग भी माना है। इस प्रकार के योग की कुछ प्रसिद्ध कुण्डलियाँ नीचे दी जा रही है—

श्री रामकृष्णपरमहंस

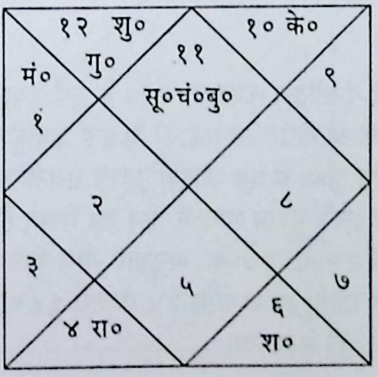

इन महात्मा का जन्म संवत् १८८९ (अट्ठारह सौ नवासी) विक्रमी में फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदा बुधवार शतभिषा नक्षत्र में इष्ट ०/१२ पर हुआ था। इनका विवाह हो गया था। आजीवन धर्मपत्नी उनके आश्रम में साथ रहीं। ये स्वामी विवेकानन्द के गुरु थे। इनकी कुण्डली में लग्न में तीन ग्रह एक साथ हैं।

प्रो० बी वी रामन्

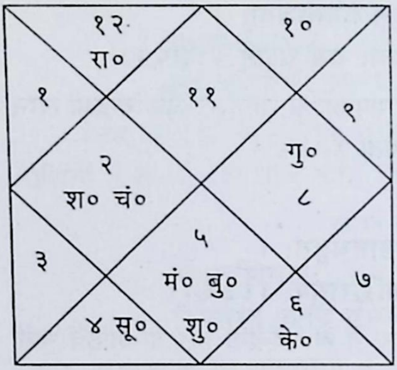
१२
रा०
१०
१
११
९
गु०
२
श० चं०
८
३
५
मं० बु०
७
६
४ सू०
शु०
के०

ज्योतिष जगत् के मूर्धन्य विद्वान् प्रो० बेङ्गलूरू वेंकटरामन् की इस कुण्डली में सप्तम में तीन ग्रह हैं। इन्हें भी दीर्घायुष्य की प्राप्ति हुई। यह भी अपनी पत्नी श्रीमती राजेश्वरी रमन् के साथ आजीवन ज्योतिष जगत् की सेवा करते रहे। इन्होंने ज्योतिष के अनेक ग्रन्थों की अंग्रेजी में टीका तथा रचना की है। भारत की सर्वाधिक प्राचीन ज्योतिषपत्रिका एस्ट्रोलोजिकल मैगजीन का सम्पादन भी इन्होंने ही किया।

ओशो रजनीश

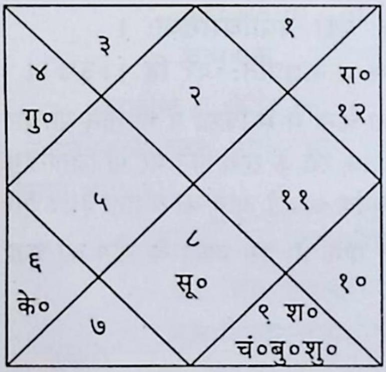
३
१
४
गु०
२
रा०
१२
५
११
८
६
के०
सू०
१०
७
९ श०
चं०बु०शु०

इनका जन्म ११ दिसम्बर १९३१ ईस्वी को सायंकाल पाँच बजकर बत्तीस मिनट पर गाडरवाड़ा (जबलपुर) के गाँव कुचावड़ा में हुआ था। ये अपने आश्रम में स्त्रियों तथा पुरुषों के साथ रहते थे। इनकी महिलाशिष्या भी बहुत थीं। इनके अष्टम भाव में पापग्रह एकत्रित हैं। इनकी मृत्यु कथित रूप से जहरीले इंजेक्शन द्वारा अमेरिका में हुई थी; अन्यथा यह भी दीर्घायु प्राप्त करते।

श्री मोरारजी देसाई

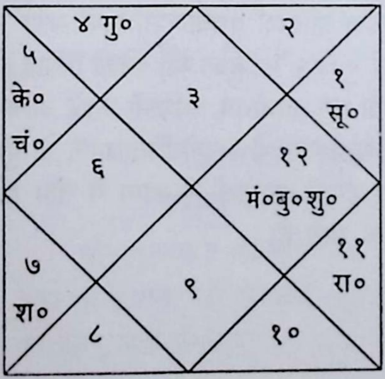
४ गु०
२
५
के०
चं०
३
१
सू०
६
१२
मं०बु०शु०
७
श०
११
रा०
९
८
१०

यह पार्श्वाङ्कित कुण्डली भारत के पूर्व प्रधान मन्त्री श्री मोरारजी देसाई की है। इन्हें दीर्घायुष्य प्राप्त हुआ। ये एक आदर्श गृहस्थ राजनीतिज्ञ थे। इनके दशम भाव में तीन ग्रह स्थित हैं, जो श्लोक ३७ के अनुसार योग घटित कर रहे हैं। इनका जन्म २४ फरवरी १८९६ ई० को हुआ था।

श्री महात्मा गान्धी

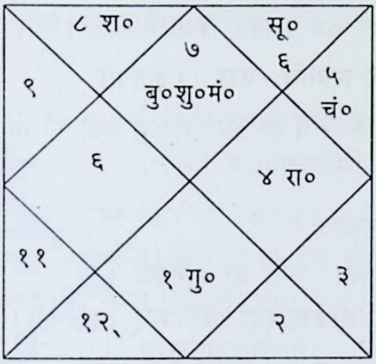
८ श०
सू०
७
६
९
बु०शु०मं०
५
चं०
६
४ रा०
११
१ गु०
३
१२
२

महात्मा गान्धी का जन्म दो अक्टूबर सन् १८६९ ई० को हुआ था। ये भी गृहस्थ थे और पत्नी कस्तूरबा के साथ आश्रम में रहते थे। इनके लग्न में तीन ग्रह स्थित हैं। यहाँ दी गई कुण्डलियाँ श्री भगवान दास मित्तल द्वारा लिखित 'विश्व के भगवानों की कुण्डलियाँ' नामक पुस्तक से उद्धृत हैं।

गुरुनानकदेवजी

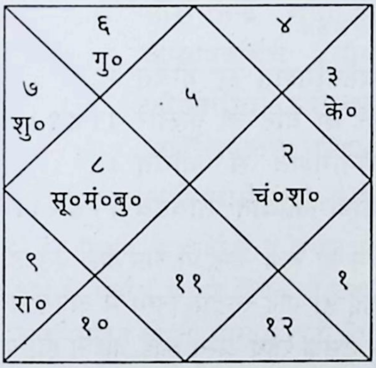
६
गु०
४
७
शु०
५
३
के०
८
सू०मं०बु०
२
चं०श०
९
रा०
११
१
१०
१२

सिक्ख पन्थ के प्रवर्तक सन्त गुरु नानक देव जी का जन्म दिनाङ्क १८ नवम्बर सन् चौदह सौ कार्तिक सुदी पूर्णिमा को हुआ था। ये गृहस्थ सन्त थे। इनके केन्द्र (चतुर्थ) में सूर्य-मंगल-बुध— ये तीन ग्रह स्थित हैं। इन्हें भी दीर्घायुष्य प्राप्त हुआ।

डॉ० सम्पूर्णानन्द

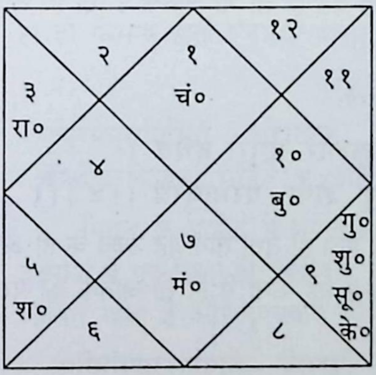
१२
२
१
११
३
रा०
चं०
४
१०
बु०
गु०
शु०
सू०
के०
७
५
मं०
९
श०
६
८

डॉ० सम्पूर्णानन्द जी का जन्म संवत् १९४६ विक्रमी पौष शुक्ल द्वादशी को हुआ था। ये सुप्रसिद्ध संस्कृत विद्वान् तथा मूर्धन्य राजनेता थे, जिन्होंने राज्यपाल तथा मुख्य मन्त्री जैसे पदों को सुशोभित किया था। इनके त्रिकोण (नवम भाव) में सूर्य-शुक्र-गुरु स्थित हैं।

जीवे लग्नेश्वरात्केन्द्रे केन्द्रकोणविवर्जिताः ।
पापाः सुखानि सत्वात्तु जीवेद्वर्षशतं नरः ।।३८।।

यदि गुरु लग्नेश से केन्द्र में हो तथा पापग्रह केन्द्र एवं त्रिकोण में न होकर अन्यत्र हों तो इस योग में जन्मा जातक सुखपूर्वक सौ वर्ष जीवित रहता है॥३८॥

जीवे लग्नेश्वरात्केन्द्रे नियतिः सप्ततिः परा ।।३९।।

यदि उक्त योग में केवल गुरु लग्नेश से केन्द्र में हो तथा पापग्रह कहीं भी हों तो जातक की आयु सत्तर वर्ष की होती है॥३९॥

शताधिक आयुर्योगा:

केन्द्रे गुरौ लग्नगते दिनेशे भूसूनुयुक्ते यदि वा मृतिस्थे ।
जातः श्रियं प्राप्य गुणाधिकारी शतन्तु जीवेच्छरदां विशेषात् ।।४०।।

यदि गुरु केन्द्र में और सूर्य लग्न में हो अथवा सूर्य मंगल के साथ मूर्ति (अष्टम) भाव में हो तो इस योग में जन्मे जातक को लक्ष्मी तथा गुणों की प्राप्ति होती है; साथ ही वह सौ वर्ष से अधिक आयु प्राप्त करता है॥४०॥

मीनान्त्यलग्ने खचरैश्चतुर्भिः केन्द्रस्थितैर्नागशतं स जीवेत् ।
निशाकरे लग्नगते स्वभागे मीनस्थिते वा यदि वा कुलीरे ।।४१।।
ग्रहैर्विहीने खचरैश्चतुर्भिः केन्द्रस्थितैर्नागशतं स जीवेत् ।
सिंहे विलग्ने खचरैश्चतुर्भिः त्रिकोणगैर्जीवति तावदेव ।।४२।।

यदि लग्न में मीन राशि अन्तिम अंशों में हो तथा केन्द्र में चार ग्रह बैठे हों तो वह जातक प्रतिष्ठित होकर सौ वर्ष जीवित रहता है। यदि चन्द्रमा लग्न में अपने नवांश में एवं कर्कनवांश में या मीननवांश में हो और उसके साथ अन्य कोई ग्रह न हो; परन्तु केन्द्र में चार ग्रह बैठे हों तो जातक सौ वर्षों तक प्रतिष्ठापूर्वक जीवित रहता है। यदि सिंह लग्न हो तथा लग्न से त्रिकोण में चार ग्रह बैठे हों तो भी जातक उतना ही जीवित रहता है अर्थात् शताधिक जीता है॥४१-४२॥

परमायुर्योगा:

त्रिभिर्ग्रहैः स्वोच्चगतैर्विलग्ने वृषे कुलीरे सगुरौ तथैव ।
मृगे कुजे कर्किणि देवपूज्ये केन्द्रेषु शेषाः परमायुरत्र ।।४३।।

यदि वृष या कर्क लग्न हो, लग्न में गुरु बैठा हो तथा तीन ग्रह उच्च के हों अथवा मकर का मंगल तथा कर्क का गुरु हो एवं अन्य ग्रह केन्द्र में हों तो जातक को परमायु प्राप्त होती है॥४३॥

भृगौ चतुर्थे सगुरौ विलग्ने सेन्दौ शनौ कर्मणि पापहीने ।
जातो नरोऽस्मिन् समुपैति दीर्घमायुश्च विद्यां यशसा समेताम् ।।४४।।

यदि शुक्र चतुर्थ में, गुरु लग्न में, चन्द्रमा तथा शनि एक साथ हों, दशम भाव

में पापग्रह न हों तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक दीर्घायु होकर विद्या तथा यश प्राप्त करता है॥४४॥

पुनश्च परमायुर्योगाः

लग्ने मृगापरार्धे तु पूर्वार्धे भौमसंयुते ।
लग्ने शशाङ्कसहिते गुरौ केन्द्रे परं वयः ।।४५।।

लग्न मकर का उत्तरार्द्ध (१५° से ३०° के मध्य) हो और उसके पूर्वार्द्ध (०° से १५° के मध्य) में मंगल हो चन्द्र और गुरु युत होकर केन्द्र में स्थित हों हो परमायु १२० वर्ष की प्राप्त होती है॥४५॥

नृयुग्मपूर्वार्धगते भौमे लग्ने परार्धके ।
चापपूर्वार्धगे जीवे लग्ने त्वपरभागगे ।।४६।।

सौरो केन्द्रे भृगोः पुत्रे सचन्द्रे त्वपरं वयः ।
कन्यापूर्वार्धगे सौम्ये परार्धे लग्नमागते ।।४७।।

ग्रहैस्त्रिभिर्वा स्वोच्चस्थैः शतवर्षात्परं वयः ।
पापास्त्रिषष्ठलाभस्थाः सौम्ये लग्नान्त्यभागके ।।४८।।

लग्ने सौरौ गुरौ केन्द्रो भृगौ वा त्वपरं वयः ।।४९।।

मिथुन के पूर्वार्द्ध में मंगल स्थित हो और लग्न मिथुन का उत्तरार्द्ध हो अथवा धनु के पूर्वार्द्ध में गुरु स्थित हो तथा लग्न धनु का उत्तरार्द्ध हो एवं शनि केन्द्र में शुक्र-चन्द्र-सहित हो तो परमायु होती है। लग्न कन्या का उत्तरार्द्ध हो तथा बुध पूर्वार्द्ध में हो अथवा तीन ग्रह उर्च्चं के हों तो शताधिक आयु प्राप्त होती है। पाप ग्रह ३।६।११वें भाव में स्थित हों, बुध लग्न के अन्त्य भाग में स्थित हो, लग्न में गुरु अथवा शुक्र स्थित हो तो परमायु होती है॥४६-४९॥

पुनश्च पुण्यसहितपरमायुर्योगाः

नृयुग्मपूर्वार्द्धगते धरात्मजे लग्ने परार्द्धे सगुरौ विशेषात् ।
केन्द्रेच्छविद्भ्यां सहितेऽत्र जातः शतात्परं जीवति पुण्यभाक् च ।।५०।।

मिथुन के पूर्वार्द्ध में मंगल हो तथा लग्न मिथुन का उत्तरार्द्ध हो और लग्न के उत्तरार्द्ध में गुरु स्थित हो; विशेषतः केन्द्र में शुक्र-बुध स्थित हों तो मनुष्य शताधिक वर्ष जीवित रहता है और पुण्यवान् भी होता है॥५०॥

अनिमिषपरमांशके विलग्ने शशितनये गवि पञ्चवर्गलिप्ते ।
भवति हि परमायुषः प्रमाणं यदि सहिताः सकलाः स्वतुङ्गभेषु ।।५१।।

मीन लग्न हो और वह अपने परमोच्चांश में हो तथा बुध वृष राशि में हो और

पञ्चवर्ग (होरादि) में स्ववर्ग का हो तथा अन्य ग्रह उच्च राशियों में स्थित हों तो परमायु-प्रमाण आयु प्राप्त होती है॥५१॥

अमितायुर्योगाः

गुरुशशिसहिते कुलीरलग्ने शशितनये भृगुजे च केन्द्रयाते ।
भवरिपुसहजोपगैश्च शेषैरमितमिहायुरनुक्रमाद्विना स्यात् ।।५२।।

गुरु-चन्द्रयुत होकर कर्क लग्न में स्थित हों तथा बुध-शुक्र केन्द्र में स्थित हों एवं अन्य ग्रह सूर्य-मंगल-शनि तृतीय, षष्ठ, एकादश भाव में से किसी में स्थित हों तो अमित आयु (१२० वर्ष से अधिक आयु) प्राप्त होती है॥५२॥

पुनश्च अमितायुर्योगमाह

लग्ने घटे देवगुरौ झषस्थे व्यये भृगौ वासरपे विलग्ने ।
जातः परं ब्रह्मपरं प्रयाति रसायनाद्यैर्दशवर्धितं तत् ।।५३।।

कुम्भ लग्न हो, गुरु मीन राशि में स्थित हो, व्ययभाव में शुक्र स्थित हो और सूर्य लग्न में स्थित हो तो व्यक्ति रसायन आदि के सेवन से गणित से प्राप्त आयु से दश गुनी आयु को प्राप्त करता है और ब्रह्मपद को प्राप्त होता है॥५३॥

सिंहे विलग्ने सगुरौ भृगौ तु कुलीरगे सोमसुते धनस्थे ।
पापग्रहैः षट्त्रिषडायगैश्च सहस्रवर्षं समुपैति जातः ।।५४।।

सिंह लग्न हो, बृहस्पति कर्क राशि में स्थित हो, शुक्र-चन्द्र द्वितीय स्थान में हों और पापग्रह तृतीय, षष्ठ, एकादश भाव में स्थित हों तो मनुष्य सहस्र वर्ष की आयु प्राप्त करता है॥५४॥

पुनरप्यमितायुर्योगाः

दिनेशभौमौ हिबुके विलग्ने मन्दान्विते भोगिपतौ व्ययस्थे ।
शेषग्रहैः मृत्युगृहोपपन्नैः सहस्रवर्षद्वयमत्र जातः ।।५५।।

सूर्य, मंगल चतुर्थ भाव में हों, शनि लग्न में बैठा हो, राहु व्ययभाव में हो तथा शेष ग्रह अष्टम भाव में स्थित हों तो व्यक्ति दो हजार वर्ष तक जीवित रहता है॥५५॥

अजे विलग्ने च रवौ सुखस्थे माने ग्रमे भूमिसूते कलत्रे ।
रिष्फे शशाङ्के परिपूर्णवीर्ये रसायनाद्यैर्द्विसहस्रमायुः ।।५६।।

मेष लग्न हो, सूर्य चतुर्थ भाव में बैठा हो, शनि दशम भाव में स्थित हो तथा मंगल सप्तम भाव में हो और चन्द्र द्वादश भाव में स्थित होने के साथ-साथ बल से परिपूर्ण हो तो व्यक्ति रसायनादि के द्वारा दो हजार वर्ष की आयु प्राप्त करता है॥५६॥

वृषे शशाङ्के तनुगे विशेषात् समन्विते सौम्यसुरासुरेज्यैः ।
जातस्तु देवेन्द्रपदं प्रयाति शैषग्रहैरर्थसमन्वितैर्वा ।।५७।।

चन्द्र वृष राशि का हो, विशेषतः लग्न में हो तथा बुध-गुरु-शुक्र भी लग्न में स्थित हों, शेष ग्रह धनभाव में स्थित हों तो मनुष्य इन्द्रसमान पद को प्राप्त होता है॥५७॥

इन्द्रतुल्ययोगाः

जीवे विलग्ने स्वगृहं प्रपन्ने शून्ये नृयुग्मे भृगुजे च केन्द्रे ।
रसायनाद्यैर्बहुवर्षजीवी जातस्तु देवेन्द्रपदं प्रयाति ।।५८।।

यदि गुरु स्वक्षेत्री होकर लग्न (धनु या मीन) में हो अथवा दशम भाव में स्वक्षेत्री हो तथा मिथुन राशि का शुक्र केन्द्र में बैठा हो तो जातक आयुर्वेदोक्त रसायन के प्रयोग से बहुत वर्षों तक जीवित रहकर इन्द्र-जैसे पद को प्राप्त होता है॥५८॥

एकर्क्षगैर्व्योमचरैरशेषैः त्रिकोणगैः केन्द्रचतुष्टयस्थैः ।
जातः शिशुर्नश्यति जातमात्रो जीवेद्युगान्तं यदि मन्त्रसिद्ध्या ।।५९।।

यदि किसी कुण्डली में सभी ग्रह (सात या आठ) केन्द्र या त्रिकोण में चरराशिगत हों तो ऐसा जातक या तो जन्म के तुरन्त पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हो जाता है; लेकिन उसको मन्त्रादि की शक्ति से यदि बचा लिया जाय तो उसकी आयु युगान्त (बारह सौ वर्षो) की होती है॥५९॥

रसायनप्रयोग— आयुर्वेद के आठ अंग हैं, उनमें एक रसायनतन्त्र है। इस तन्त्र के अनुसार शरीर को बुढ़ापे तथा रोगों से बचाकर अमितायु बना लिया जाता है। प्राचीन काल में इसके प्रयोग से ऋषि-मुनि युवा रहकर सहस्रों वर्षों तक जीवित रहते थे। अवस्था को बनाए रखने के लिये आयु, मेधा और बल को बढ़ाने के लिये, रोगों को दूर करने की शक्ति के लिए ही रसायनतन्त्र है। सुश्रुतसूत्र (सूत्रस्थान-१.७) में कहा भी है—

रसायनतन्त्रं नाम वयःस्थापनं आयुर्मेधाबलकरंरोगाहरणसमर्थं च ।

देवतुल्ययोगाः

त्रिकोणे पापनिर्मुक्ते केन्द्रे सौम्यविवर्जिते ।
निधने पापरहिते जातस्त्वमरसन्निभः ।।६०।।

त्रिकोण-स्थान पाप ग्रहों से युक्त हो, केन्द्र में सौम्य ग्रह न हों, अष्टम भाव में पाप ग्रह न हों तो इस योग में जन्म लेने वाला जातक अमर (देवता) के समान आयु, आरोग्य एवं सम्पत्तिवान् होता है॥६०॥

लग्ने वृषे शुक्रयुते गुरौ तु केन्द्रान्विते षट्त्रिदशायसंस्थैः ।
रसायनाद्यैरिह मन्त्रसिद्ध्या जातस्तु देवेन्द्रपदं प्रयाति ।।६१।।

वृष लग्न हो, उसमें शुक्र बैठा हो, गुरु केन्द्र में हो तथा शेष ग्रह तीसरे, छठे या ग्यारहवें भाव में हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति आयुर्वेदोक्त रसायनादि प्रयोग तथा मन्त्रसिद्धि के द्वारा देवेन्द्र पद को प्राप्त होता है॥६१॥

शनौ तुलायां मकरे गुरौ च लग्ने कुलीरे वृषभे शशाङ्के ।
जातः सुखी ब्रह्मपदं प्रयाति प्रसाधनाद्यैरिह मन्त्रसिद्ध्या ।।६२।।

यदि शनि तुला में, गुरु मकर में, चन्द्रमा वृष का तथा कर्क लग्न हो तो इस योग में उत्पन्न जातक सुखी रहता है तथा प्रसाधनादि मन्त्रसिद्धि के द्वारा ब्रह्मपद को प्राप्त होता है।।६२।।

प्रसाधनादि— प्रकृत श्लोक में 'प्रसाधन' शब्द का प्रयोग हुआ है; इसका अर्थ आयुर्वेदीय पञ्चकर्मादि के द्वारा तथा अन्य उपायों के द्वारा शरीर की शुद्धि तथा रक्षा करना है। रसायन के द्वारा उसकी पुष्टि की जाती है। आचार्य वागभट कहते हैं कि जो तत्त्व को साक्षात्कार कराने वाली श्रुति-स्मृत्यादि विद्याओं का आधार है और धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष का मूल है, ऐसे एक जीवन-मरण से रहित शरीर के सिवाय अन्य कौन-सा उत्तम श्रेय है? जो पुरुष देह स्थिर करने वाले प्रत्यक्ष प्रमाणों से भी पारद के रसायन गुणों को भी यथार्थ नहीं समझता है, वह स्थूल नेत्रों से अदृष्ट तथा ज्ञानस्वरूप चिन्मय शरीर से रहित ब्रह्मदेव को कैसे यथार्थ रूप में जान सकेगा। 'जो शरीर वृद्धावस्था से जर्जर हो गया है, श्वास-कास इत्यादि से परेशान है, ऐसा शरीर परमात्मा का ध्यान एकाग्रचित्त होकर करने में असमर्थ है। इसी शरीर से जिसने परमात्मा को न जान पाया तो मृत्यु के पश्चात् वह कैसे मुक्त हो सकता है, मुक्ति तो जीव-मुक्ति ही होती है, मृत्युपश्चात् मुक्ति सम्भाव्य नहीं है।'

बालः षोडशवर्षो विषयरसास्वादलम्पटः परतः ।
यातविवेको वृद्धो मर्त्यः कथमाप्नुयान्मुक्तिम् ।।
अस्मिन्नेव शरीरे येषां परमात्मनो न संवेदः ।
देहत्यागादूर्ध्वं तेषां तद् ब्रह्म दूरतरम् ।।
ब्रह्मादयो यतन्ते तस्मिन्दिव्यां तनुं समाश्रित्य ।
जीवन्मुक्ताश्चान्ये कल्पान्तस्थायिनो मुनयः ।।
तस्माज्जीवन्मुक्तिं समीहमानेन योगिना प्रथमम् ।
दिव्या तनुर्विधेया हंरगौरीसृष्टिसंयोगात् ।।

(रसरत्नसमुच्चय- १.५७-५९)

प्राचीन काल में बहुत से लोग रसायनों एवं प्रसाधनों के समुचित प्रयोग से स्वयं को दीर्घजीवी बनाया करते थे।

वर्गोत्तमे लग्नगते कुलीरे केन्द्रे गुरौ भूमिसुते कलत्रे ।
सिंहासनांशे भृगुजे विशेषाद् रसायनाद्यैरमितायुरेति ।।६३।।

यदि कर्क लग्न वर्गोत्तम हो, गुरु केन्द्र में हो, सिंहासनांश में शुक्र हो, सप्तम भाव में मंगल हो तो रसायनादि के द्वारा विशेष रूप से अमितायु की प्राप्ति होती है।।६३।।

पुनश्च अमितायुयोगाः

कन्यान्त्यलग्ने सबुधे कलत्रे जीवे यदा गोपुरभाग्ययुक्ते ।
मृद्वंशके वा दिननाथपुत्रे जातस्त्वसंख्यायुरुपैति सूनुः ।।६४।।

यदि जन्म के समय कन्या लग्न का अन्तिम नवांश हो और उसमें बुध स्थित हो, सप्तम भाव में गुरु गोपुरांशक में हो अथवा शनि मृद्वंशक में हो तो जातक असंख्य आयु प्राप्त करता है।।६४।।

देवलोकांशगे शुक्रे केन्द्रस्थे धरणीसुते ।
सिंहासनांशके जीवे केन्द्रे जातस्त्वसंख्यकः ।।६५।।

यदि शुक्र देवलोकांश में, मंगल केन्द्र में तथा गुरु सिंहासनांशगत होकर केन्द्र में हो तो जातक को असंख्य आयु की प्राप्ति होती है।।६५।।

उत्तमांशे बुधे केन्द्रे शुक्रे पारावतांशके ।
स्वर्गलोके गुरौ केन्द्रे त्वौषधाद्यैरसंख्यकः ।।६६।।

यदि बुध उत्तमांश में केन्द्र में तथा शुक्र पारावतांश में और गुरु स्वर्गलोकांश में हो तब जातक औषधि इत्यादि के प्रयोग से असंख्य आयु प्राप्त करता है।।६६।।

गोपुरेशे भृगौ केन्द्रे गुरौ पारावतांशके ।
त्रिकोणे कर्किलग्ने तु युगान्तं स तु जीवति ।।६७।।

यदि शुक्र गोपुरांश में हो तथा गुरु पारावतांशक में होकर त्रिकोण में स्थित हो एवं कर्क लग्न हो तो जातक युगान्त आयु को प्राप्त करता है।।६७।।

ब्रह्मपदप्राप्तियोगानाह

चापांशे कर्किलग्ने च तस्मिन्देवेन्द्रपूजिते ।
त्रिचतुर्भिर्ग्रहैः केन्द्रे जातो ब्रह्मपदं लभेत् ।।६८।।

यदि कर्क लग्न हो, लग्न का नवांश धनु हो तथा गुरु उसमें बैठा हो (तात्पर्य यह है कि गुरु कर्क राशि का १६° ४०' से २०' तक होना चाहिए) तथा तीन या चार ग्रह केन्द्र में हों तो उस जातक को ब्रह्मपद की प्राप्ति होती है।।६८।।

तृतीयैकादशे शुक्रे गोपुराद्यंशकान्विते ।
वृषे वर्गोत्तमे लग्ने ब्रह्मणाः परमं पदम् ।।६९।।

यदि तृतीय अथवा एकादश स्थान में गोपुरांशक में शुक्र बैठा हो तथा वृष लग्न वर्गोत्तम हो तो भी जातक को ब्रह्मपद की प्राप्ति होती है।।६९।।

लग्ने शुक्रे गुरौ कामे कन्यायामुडुनायके ।
चापे मेषांशके लग्ने जातो याति परं पदम् ।।७०।।

यदि लग्न में शुक्र, सप्तम में गुरु, कन्या में उडुनायक अर्थात् चन्द्रमा हो तथा धनु लग्न हो और उसमें मेष नवांश हो तो इस योग में उत्पन्न जातक परम पद को प्राप्त करता है॥७०॥

पञ्चमे बुधसंयुक्ते गोपुराद्यंशकान्विते ।
गुरौ घटे विलग्नेऽस्मिन् जातो ब्रह्मपदं लभेत् ।।७१।।

यदि पञ्चम भाव में बुध गोपुरांशक में हो तथा कुम्भ का गुरु लग्न में हो तो मनुष्य को ब्रह्मपद की प्राप्ति होती है॥७१॥

पुनरप्यमितायुर्योगाः

केन्द्रे गुरौ लाभगतेऽर्कपुत्रे धने रवौ मान्दियुते कलत्रे ।
भाग्ये धरासूनुयुतेऽत्र जातो युगान्तकालं समुपैति मन्त्रैः ।।७२।।

यदि गुरु केन्द्र में, शनि एकादश भाव में, सूर्य धनभाव में, केतु सप्तम में तथा मंगल नवम भाव में हो तो जातक की मन्त्रबल से युगान्तपर्यन्त आयु होती है। १२०० वर्षों का एक युगान्त होता है॥७२॥

त्रिकोणगौ जीवबुधौ विशेषाल्लग्ने वृषे तत्र युते धराजे ।
निशाकरे गोपुरभागयुक्ते जातः सहस्रद्वयवर्षमेति ।।७३।।

यदि गुरु-बुध त्रिकोण में हों, वृष लग्न हो और लग्न में मंगल हो तथा चन्द्रमा गोपुरांश में बैठा हो तो दो सहस्र वर्ष की जातक की आयु होती है॥७३॥

पक्षे सिते जन्म यदाह्निकाले केन्द्रे गुरौ वा शशिभे विलग्ने ।
दारे कुजे भानुसुते सुखस्थे जातस्तु जीवेदयुताब्दसंख्यम् ।।७४।।

यदि शुक्ल पक्ष में दिन का जन्म हो और गुरु केन्द्र में बैठा हो अथवा कर्क का गुरु लग्न में हो और मंगल सप्तम में तथा गुरु चतुर्थ स्थान में हो तो जातक की आयु अयुत (१०,००० वर्ष) होती है॥७४॥

जीवमन्दारशुक्राणामन्योन्यं केन्द्रसम्भवे ।
त्रिकोणे वा यदा याते जातस्त्वयुतवत्सरः ।।७५।।

यदि गुरु-शनि व शुक्र अन्योन्य सम्बन्ध से केन्द्र में बैठे हों अथवा त्रिकोण में हों तो जातक एक अयुत वर्ष जीवित रहता है॥७५॥

शुभैर्युक्ते चतुष्केन्द्रे पापैः षट्त्रिभवान्वितैः ।
सिंहे लग्ने यदा जातो जीवेत्षडयुतानि सः ।।७६।।

यदि चारो केन्द्रों में शुभग्रह हों और पापग्रह छठे, तीसरे और ग्यारहवें भावों में हों तथा सिंह लग्न का जन्म हो तो जातक ६ अयुत वर्ष आयु (६०,००० वर्ष आयु) प्राप्त करता है॥७६॥

मुनियोगाः

कर्क्यादिस्थैर्ग्रहैः सर्वैर्गुरुचन्द्रादिभिर्यदा ।
शून्यं तैः परमोच्चस्थैर्मुनितुल्यो भवेन्नरः ।।७७।।

यदि कर्क से मकरपर्यन्त सभी जगह गुरु-चन्द्रादि हों और इनके मध्य जिनके उच्च पड़ते हैं वे उच्च में हों (अर्थात् गुरु कर्क में, बुध कन्या में, शनि तुला में, मंगल मकर में हो) तो जातक मुनि के समान होता है।।७७।।

शन्यादिभौमपर्यन्ते लग्नादौ खेचराः शुभाः ।
वैशेषिकांशकयुता जातास्त्वमरसन्निभाः ।।७८।।

यदि लग्न से लेकर सप्तम भाव तक शनि से लेकर भौम तक पाँचों ताराग्रह वैशेषिकांश में हों तो जातक देवतुल्य होता है।।७८।।

आकल्पं जीवति नरो मृगे लग्ने कुजादिकाः ।
रव्यन्ताः खेचराः सर्वे सोत्थे जीवेऽह्नि जन्मनि ।।७९।।

यदि मकर लग्न हो और लग्न में मंगल, बुध, शुक्र, शनि, सूर्य हो तथा गुरु तृतीय में हो और दिन का जन्म हो तो मनुष्य कल्पपर्यन्त जीवित रहता है।।७९।।

मेषान्त्यलग्ने सगुरौ भृगौ वा निशाकरे गोधनुमध्यमांशे ।
सिंहासनांशे यदि वा धराजे जातस्त्वसंख्याब्दमुपैति मन्त्रैः ।।८०।।

यदि गुरु मेष लग्न में धनुनवांश में हो अथवा उसमें शुक्र स्थित हो, चन्द्र वृष अथवा धनु लग्न के मध्यम नवांश (वृष का मध्यम नवांश— वृष, धनु का मध्यमनवांश—सिंह) में हो अथवा मंगल सिंहासनांश में हो तो ऐसे योग में उत्पन्न मनुष्य मन्त्रबल से असंख्य वर्षों तक जीवित रहता है।।८०।।

स्थिरे रवौ सोमसुतेन युक्ते चन्द्रे वृषस्थे मिथुने च शुक्रे ।
गुरौ कुलीरे यदि वा विलग्ने शनौ तुलायां मुनिसाम्यमेति ।।८१।।

सूर्य-बुध स्थिर राशि में युत होकर बैठे हों, चन्द्र वृष राशि में हो, मिथुन राशि में शुक्र हो, गुरु कर्क राशि में स्थित हो तथा शनि तुला राशि में लग्न में स्थित हो तो ज़ातक मुनितुल्य होता है।।८१।।

देवलोकांशके चन्द्रे भौमे पारावतांशके ।
सिंहासने रवौ लग्ने जातो मुनिसमो भवेत् ।।८२।।

यदि चन्द्र देवलोकांश में, मंगल पारावतांश में तथा सूर्य सिंहसनांश में होकर लग्न में बैठा हो तो भी जातक मुनि के समान होता है।।८२।।

मेषलग्ने रवौ माने जीवे स्वोच्चसमन्विते ।
त्रिषडायगते पापे जातो मुनिसमो भवेत् ।।८३।।

मेष लग्न हो, सूर्य दशमस्थ हो, गुरु उच्च राशि का हो तथा पापग्रह तृतीय, षष्ठ, एकादश भाव में हों तो जातक मुनि के समान होता है॥८३॥

अध्यायोपसंहारः

चिन्तामणौ मया प्रोक्तं संख्यायुश्च मनीषिणाम् ।
यदुक्तं पूर्वकैः सर्वं तत्तदेव मयाऽधुना ।।८४।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणावायुस्संख्यानिरूपणो नाम द्वादशोऽध्यायः।।१२।।

आचार्य कहते हैं कि सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ में मैंने जो आयु की संख्या बतलाई है, यह सब पूर्ववर्त्ती विद्वानों के अनुसार है। उसी सबको मैंने इसमें लिखा है॥८४॥

इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ के बारहवें अध्याय की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़कृत 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥१२॥

* * *

अथ त्रयोदशोऽध्यायः

सूर्य-चन्द्रदशाफलविचाराध्यायः

तत्रादौ दीप्ताद्यवस्थानाह

दशानुरोधेन फलं वदन्ति मुनीश्वरा जातशुभाशुमं तत् ।
सारं समुद्धृत्य तदेव वक्ष्ये भेदं यथा विस्तरतो दशानाम् ।।१।।

प्राचीन मुनियों ने दशा के अनुसार शुभाशुभ फल कहा है; अतः उसका सारांश ग्रहण करके दशाओं के भेदों को अब (आगे) विस्तारपूर्वक कहता हूँ।।१।।

दीप्तः स्वस्थस्तु मुदितः शान्तो हीनोऽतिदुःखितः ।
विकलश्च खलः कोपी नवधा खेचरो भवेत् ।।२।।

दीप्त, स्वस्थ, स्वस्थ, मुदित, शान्त, हीन, अतिदुःखित, विकल, खल तथा कोपी— ये ग्रहों की नौ प्रकार की अवस्थायें होती हैं।।२।।

उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थः स्वक्षेत्रमित्रभे ।
मुदितो मित्रभे शान्तस्त्वपरो हीन उच्यते ।।३।।

शत्रुभे दुःखसंयुक्तो विकलः पापसंयुतः ।
खलः पराजितो ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः ।।४।।

जो ग्रह अपनी उच्च राशि में होता है, वह दीप्त कहलाता है। जो स्वराशि में हो वह स्वस्थ (अपने में स्थित) होता है। मित्र राशि में मुदित कहलाता है। शुभ राशि में शुभ वर्ग में शान्त, नीच राशि में हीन, शत्रु राशि में दुःखयुक्त, पापग्रह के साथ विकल, पराजित ग्रह के साथ खल तथा सूर्य के साथ कोपी कहलाता है।।३-४।।

पृथक्-पृथक् फलं तेषां दशाकालविशेषतः ।
तत्र नामानुरोधेन परिपाके वदन्ति हि ।।५।।

दशाकाल में इन ग्रहों का फल पृथक्-पृथक् होता है। वह फल उनकी अवस्थाओं के अनुसार हुआ करता है।।५।।

दीप्ताद्यवस्थाज्ञान चक्र

दीप्त	स्वस्थ	मुदित	शान्त	हीन	दुःखित	विकल	खल	कोपी	अवस्था
उच्चराशिगत	स्वराशिगत	मित्रराशिगत	शुभराशिग्रहयुक्त	नीचराशिगत	शत्रुराशिगत	पापयुत	पराजित	सूर्ययुक्त	परिभाषा

वृहत् पाराशर में दस तथा गुणाकर ने आठ अवस्था बताई गई है।

दीप्तग्रहदशाफलम्

पाके प्रदीप्तस्य धराधिपत्यमुत्साहशौर्यं धनवाहनञ्च ।
स्त्रीपुत्रलाभं सुखबन्धुपूजे क्षितीश्वरान्मानमुपैति विद्याम् ।।६।।

दीप्त ग्रह की दशा में राजसत्ता की प्राप्ति (अधिकार-प्राप्ति) होती है, उत्साह तथा शौर्य प्रकट होता है। स्त्री, पुत्र, धन, वाहन, विद्या आदि का लाभ होता है। बन्धु-बान्धवों से प्रतिष्ठा प्राप्त होती है तथा राज्यपक्ष से सम्मान मिलता है।।६।।

स्वस्थदशाफलम्

स्वस्थस्य खेटस्य दशाविपाके स्वास्थ्यं नृपाल्लब्ध नादिसौख्यम् ।
विद्यायशःप्रीतिमहत्त्वताञ्च दारार्थभूम्यात्मजमन्त्रमेति ।।७।।

स्वस्थ ग्रह की दशा में स्वास्थ्यलाभ, राजपक्ष से लाभ, धनादि का सुख, विद्या, प्रीति तथा प्रतिष्ठा की प्राप्ति, स्त्री, धन, भूमि, सन्तान तथा सत्परामर्श का सुख मिलता है।।७।।

मुदितदशाफलम्

मुदान्वितस्यापि दशाविपाके वस्त्रादिभूगन्धसुतार्थधैर्यम् ।
पुराणधर्मश्रवणादिगानदानादियानाम्बरभूषणाप्तिम् ।।८।।

मुदित ग्रह की दशा-विपाक के समय में वस्त्रादि, भूमि, सुगन्धित पदार्थ, पुत्र, धन तथा धैर्य की प्राप्ति होती है। पुराण तथा धर्मकथा सुनने में मन लगता है, दानकर्म चलता है एवं वाहन-परिधान तथा आभूषणादि की प्राप्ति होती है।।८।।

शान्तग्रहदशाफलम्

दशाविपाके सुखधैर्यमेति शान्तस्य भूपुत्रकलत्रयानम् ।
विद्याविनोदान्वितधर्मशास्त्रं बह्वर्थदेशाधिपपूज्यताञ्च ।।९।।

शान्त ग्रह की दशा में सुख, धैर्य, भूखण्ड, भवन, पुत्र, स्त्री, वाहन, विद्या आदि का जातक को सुख रहता है। मनोरञ्जन के साथ में धर्मशास्त्र का अभ्यास उपलब्ध होता है। धन की पुष्कलता रहती है तथा उस देश (क्षेत्र) के मुखिया से सत्कार या सम्मान प्राप्त होता है।।९।।

हीनदशाफलम्

स्थानच्युतिं बन्धुविरोधिताञ्च हीनस्य खेटस्य दशाविपाके ।
जीवत्यसौ कुत्सितहीनवृत्त्या त्यक्तो जनैः रोगनिपीडितः स्यात् ।।१०।।

हीन ग्रह की दशा में स्थानच्युति (स्थानान्तर, पदावनति, निलम्बन, पदमुक्ति, घर

या दुकान का स्थान बदलना) बन्धुओं से विरोध होता है, उसे जाति-बिरादरी तथा नाते-रिश्तेदार छोड़ देते हैं, वह कुत्सित तथा हीन वृत्ति से अपनी आजीविका चलाता है एवं रोग से पीड़ित रहता है।।१०।।

दुःखितग्रहस्य दशाफलम्

दुःखान्वितस्यापि दशाविपाके नानाविधं दुःखमुपैति नित्यम् ।
विदेशगो बन्धुजनैर्विहीनः चौरादिभूपैर्भयमाभिशस्तः ।।११।।

दुःखित ग्रह की दशा में नाना प्रकार के दुःख नित्य ही प्राप्त होते हैं। दूर-दूर की यात्रा करनी पड़ती है। अपने बन्धुओं से हीन होकर जातक चोरों, डाकुओं, तस्करों, जेबकतरों तथा पुलिस आदि से परेशान रहता है।।११।।

विकलदशाफलम्

वैकल्यखेटस्य दशाविपाके वैकल्यमायाति मनोविकारम् ।
पित्रादिकानां मरणं विशेषात् स्त्रीपुत्रयानाम्बरचोरपीडाम् ।।१२।।

विकल ग्रह की दशा में जातक मनोरोगों से पीड़ित तथा व्याकुल रहता है। उसके पित्रादि (माता-पिता-चाचा आदि) की मृत्यु होती है या उन्हें पीड़ा होती है। उसको स्त्री-पुत्र, वाहन, वस्त्र तथा चोरों का भी कष्ट रहा करता है।।१२।।

खलदशाफलम्

दशाविपाके कलहं वियोगं खलस्य खेटस्य पितुर्वियोगम् ।
शत्रुज्ञनानां धनभूमिनाशमुपैति नित्यं स्वजनैश्च निन्दाम् ।।१३।।

खल ग्रह की दशा में कलह, प्रियजनों से वियोग, पिता का वियोग, शत्रुओं एवं चुगलखोरों द्वारा धन, भूमि आदि की हानि होती है और अपने ही खास लोगों के द्वारा उसकी निन्दा तथा आलोचना होती है।।१३।।

कोपान्वितग्रहदशाफलम्

कोपान्वितस्यापि दशाविपाके पापं समायाति बहुप्रकारैः ।
विद्यायशःस्त्रीधनभूमिनाशं राज्ञाञ्च वित्तं हरतेऽत्र योगी ।।१४।।

कोपी ग्रह की दशा में जातक को बहुत प्रकार के पाप का फल भोगना पड़ता है। जातक की विद्या, यश, भूमि, स्त्री तथा धन का नाश होता है। राज्य या उसके सदृश शक्तिशाली लोगों का धन भी किसी योगी (दुष्टतान्त्रिक, मान्त्रिक या कपटी व्यक्ति) द्वारा हर लिया जाता है।।१४।।

◆

अथ सूर्यदशाफलानि

परमोच्चगतसूर्यफलम्

भानोर्दशायां परमोच्चगस्य भूम्यर्थदारात्मजकीर्तिशौर्यम् ।
सम्माननं भुमिपतेः सकाशादुपैति सञ्चारविनोदगोष्ठीम् ।।१५।।

परमोच्चगत सूर्य (मेष के १०°) की दशा में भूमि, धन, स्त्री, पुत्र, कीर्ति आदि से जातक को सुख मिलता है। राजा से सम्मान की प्राप्ति तथा मनोरञ्जन के साधनों की उपलब्धि होती है॥१५॥

उच्चस्थसूर्यदशाफम्

उच्चान्वितस्यापि रवेर्दशायां गोवृद्धिधान्यार्थपरिभ्रमञ्च ।
सञ्चारयुग्बन्धुजनैर्विरोधं देशाद्विदेशं चरति प्रकोपात् ।।१६।।

केवल उच्च का सूर्य (मेष राशिमात्र का) होने पर घर में गाय, भैंस की वृद्धि, अनाज, धन की वृद्धि, वृथा भ्रमण, अपने बन्धुजनों से विरोध तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने की निरन्तरता बनी रहती है॥१६॥

प्रचण्डवेश्यागमनं क्षितीशादुपैति वृत्तिं रतिकेलिमानम् ।
मृदङ्गभेरीरवयुक्तयानमन्योऽन्यवैरं लभते मनुष्यः ।।१७।।

परन्तु इस उच्चस्थ सूर्य की दशा में जातक किसी वेश्या (कालगर्ल) के चक्कर में राजनेता के कारण फँसता है। यदि वह राजनीति में है तो उसे सुविधायुक्त चार पहिया वाहन उपलब्ध होता है; लेकिन उसकी बहुत लोगों से शत्रुता हो जाती है॥१७॥

आरोहीसूर्यदशाफलम्

आरोहिणी वासरनायकस्य दशा महत्त्वं कुरुतेऽतिसौख्यम् ।
परोपकारं सुतदारभूमिगोवाजिमातङ्गकृषिक्रियादीन् ।।१८।।

यदि आरोही (उच्चाभिलाषी) सूर्य की दशा हो तो उसमें जातक का महत्त्व बढ़ जाता है। सुख की प्राप्ति होती है। वह परोपकार करता है। पुत्र, स्त्री, भूमि, गाय, घोड़ा, हाथी तथा कृषि का सुख होता है (आज के सन्दर्भ में ट्रेक्टर आदि समझना चाहिए)॥१८॥

अवरोही सूर्यदशाफलम्

दशावरोहाद्दिननायकस्य कृषिक्रिया वित्तगृहेष्टनाशम् ।
चोराग्निपीडां कलहं विरोधं नरेशकोपं कुरुते विदेशम् ।।१९।।

जब सूर्य अवरोही (नीचाभिलाषी) हो तो उसकी दशा में खेती, धन, अन्न, फसल तथा प्रिय वस्तु का नाश होता है। उसे चोर, अग्नि (बिजली आदि) से पीड़ा, झगड़ा, विरोध तथा राजा के कोप का सामना करना पड़ता है। अपना स्थान छोड़कर बाहर जाना पड़ता है॥१९॥

नीचस्थसूर्यदशाफलम्

नीचस्थितस्यापि रवेर्विपाके मानार्थनाशं क्षितिपालकोपात् ।
स्वबन्धुनाशं सुतमित्रदारैः पित्रादिकानामपकीर्तिमेति ।।२०।।

नीचस्थित (तुला राशि सम्पूर्ण) सूर्य की दशा जातक के सम्मान व धन का नाश राजकोप से कराती है। पुत्र, मित्र, स्त्री, पिता आदि की अपकीर्ति होती है। स्वजनों की हानि होती है॥२०॥

परमनीचसूर्यदशाफलम्

अत्यन्तनीचान्वितसूर्यदाये विपत्तिमाप्नोति गृहच्युतिञ्च ।
विदेशयानं मरणं गुरूणां स्त्रीपुत्रगोभूमिकृषेर्विनाशम् ।।२१।।

अत्यन्त नीच सूर्य (तुला के दसवें अंश पर) की दशा में जातक पर विपत्ति आती है। गृहच्युति (घर बिक जाना या छूट जाना), विदेश-गमन, गुरुजनों का मरण तथा स्त्री, पुत्र, गाय बैल, भूमि, वाहन, कृषि आदि का विनाश होता है॥२१॥

मूलत्रिकोणस्थरविदशाफलम्

मूलत्रिकोणस्थरवेर्विपाके क्षेत्रार्थदारात्मजबन्धुसौख्यम् ।
राजाश्रयं गोधनमित्रलाभं स्वस्थानयानादिकमेति राज्यम् ।।२२।।

मूल त्रिकोणस्थ सूर्य (सिंह के बीस अंश तक) की दशा में खेत, प्लाट, स्त्री, पुत्र, बन्धु, धनादि का सुख होता है। राजकीय सहयोग, गोधन, मित्रादि का लाभ तथा पद आदि की प्राप्ति होती है॥२२॥

स्वक्षेत्री रविदशाफलम्

स्वक्षेत्रगस्यापि रवेर्दशायां स्वबन्धुसौख्यं कृषिवित्तकीर्तिम् ।
विद्यायशःप्रार्थितराजपूजां स्वभूमिलाभं समुपैति विद्याम् ।।२३।।

स्वक्षेत्री सूर्य (सिंह के २१ से ३० अंश तक) की दशा में जातक को अपने बन्धु-बान्धवों का सुख, कृषिलाभ, वित्तलाभ, विद्या, यश, कीर्ति, राजकीय सम्मान, स्वभूमि लाभ होता है॥२३॥

अधिशत्रुसूर्यदशाफलम्

दशाविपाके ह्यधिशत्रुगस्य रवेः प्रनष्टार्थकलत्रपुत्रः ।
गोमित्रपित्रादिशरीरकष्टं शत्रुत्वमायाति जनैः समन्तात् ।।२४।।

अधिशत्रु राशिगत सूर्य की दशा में जातक को धन, स्त्री, पुत्र, गो, मित्रादि की हानि होती है, पित्रादि को कष्ट शारीरिक कष्ट होता है एवं उसके चारो ओर लोग शत्रु हो जाते हैं॥२४॥

शत्रुराशिस्थसूर्यदशाफलम्

सपत्नराशिस्थितसूर्यदाये दु:खी परिभ्रष्टसुतार्थदार: ।
नृपाग्निचौरैर्विपदं विवादं पित्रोर्विरोधं च दशान्तमेति ।।२५।।

शत्रु राशिगत सूर्य की दशा में जातक दु:ख़ी रहता है। स्त्री-पुत्रादि से उसे दूर रहना पड़ता है। राज्य, अग्नि, चौर आदि से विपत्ति-विवाद होता है तथा दशान्त में पिता से विरोध होता है।।२५।।

मित्रराशिस्थसूर्यफलम्

स्वमित्रराशिस्थितसूर्यदाये स्वभृत्यपित्रात्मजराजपूजाम् ।
स्वगेहवासं स्वजनस्य सङ्गं यानादिभूषाम्बरताम्रलाभम् ।।२६।।

मित्रराशिस्थ सूर्य की दशा में जातक को अपने अधीनस्थ, पिता, पुत्र तथा राजपक्ष से सम्मान मिलता है। अपने घर में, अपने प्रिय लोगों के साथ, वाहन, वस्त्र, परिधान तथा ताम्रादि का लाभ मिलता है।।२६।।

अधिमित्रराशिगतसूर्यदशाफलम्

अत्यन्तमित्रर्क्षगतस्य भानोर्दशाविपाके ह्यतिसौख्यमेति ।
स्त्रीपुत्रधान्यार्थमनोविलासरथादियानाम्बरभूषणानि ।।२७।।

अधिमित्र राशिगत सूर्य की दशा में जातक को अत्यन्त सुख प्राप्त होता है। उसे स्त्री, पुत्र, धान्य, धन, रथादि यान (कार) तथा वस्त्राभूषण की प्राप्ति होती है एवं उसका मनोरञ्जन होता है।।२७।।

समराशिस्थसूर्यदशाफलम्

समर्क्षगस्यापि रवेर्दशायां समं जनै: स्यात्कृषिभूमिधान्यम् ।
गोवाजियानाम्बरदेहसौख्यं स्त्रीपुत्रदोषं रणपीडित: स्यात् ।।२८।।

सम राशिगत सूर्य की दशा में लोगों के साथ समान व्यवहार रहता है। कृषि, भूमि, धान्य, गाय-भैंस-बैल, सवारी, वस्त्राभूषण तथा शरीर का सुख प्राप्त होता है। स्त्री तथा पुत्रों को कलंक लगता है और मुकदमेबाजी तथा लड़ाई-झगड़े से पीड़ित रहता है।।२८।।

नीचयुतसूर्यदिशाफलम्

नीचान्वितस्यापि रवेर्दशायां नीचानुवृत्त्या कुनखी कुशील: ।
स्त्रीपुत्रधान्यार्थपशुक्रियादिमनोविकारं समुपैति हेयम् ।।२९।।

जब सूर्य नीच ग्रह के साथ बैठा हो तो जातक उन दिनों नीच वृत्ति से जीविका चलाता है। वह कुनख रोग से पीड़ित होता है। चरित्र से भ्रष्ट होता है। स्त्री-पुत्र, धान्य-धन, पशु आदि के सुख की हानि तथा बुरे विचारों से युक्त रहता है।।२९।।

उच्चान्वितसूर्यदशाफलम्

उच्चान्वितस्यापि रवेर्दशायां मनोभिलाषं लभते स्ववृत्त्या ।
तीर्थाभिषेकं हरिकीर्तनञ्च प्राकारकूपादिपुराणशास्त्रम् ।।३०।।

उच्चान्वित सूर्य की दशा में जातक की उसके द्वारा किये गये पुरुषार्थ से मनोभिलाषायें पूरी होती हैं। तीर्थाटन, ईश्वराराधन एवं पुराणशास्त्र का श्रवण होता है। परकोटा, कूप आदि का निर्माण होता है।।३०।।

पापयुक्तसूर्यदशाफलम्

पापान्वितस्य द्युमणेर्दशायां नित्यं मनः क्लिश्यति देयबुद्ध्या ।
कुभोजनं कुत्सितवस्त्रपाने कुशीलवृत्त्या त्वधनं कृशत्वम् ।।३१।।

पापग्रह के साथ बैठे हुए सूर्य की दशा में प्रतिदिन जातक का मन उद्विग्न रहता है, देनदारी (उधारी पटाने) की चिन्ता रहती है। इन दिनों जातक को कुभोजन तथा कुत्सित वस्त्रादि की प्राप्ति होती है। धनरहितता, कृशता से वह पीड़ित रहता है एवं कुशील वृत्ति से जीवनयापन करता है।।३१।।

शुभयुक्तसूर्यदशाफलम्

दिनाधिनाथस्य शुभान्वितस्य पाके सुखं भूमिधनादिवस्त्रम् ।
इष्टैर्विलासं स्वजनैः समाजं कल्याणवाग्जालविनोदगोष्टीम् ।।३२।।

शुभयुक्त सूर्य की दशा में भूमि, धन, वस्त्रादि का सुख, इष्ट वस्तुओं की प्राप्ति के साथ समाजकल्याण के कार्य होते हैं। जातक वाग्जाल की गोष्ठियों में लगा रहता है तथा स्वजनों से उसका मनोविनोद होता है।।३२।।

शुभदृष्टसूर्यदशाफलम्

करोति भानुः शुभवीक्षितश्चेद् विद्यायशःस्त्रीसुतवाग्विलासम् ।
कान्तिप्रतापं रतिकेलिसौख्यं पित्रोः सुखं भूपतिमाननञ्च ।।३३।।

शुभ ग्रहों से दृष्ट सूर्य की दशा में जातक को विद्या, यश, स्त्री, पुत्र का सुख मिलता है। मधुर वार्तालाप होता है। शरीर की कान्ति बढ़ती है। प्रभाव बढ़ता है, स्त्रीसुख, पितृसुख की प्राप्ति तथा राज्यपक्ष से सम्मान प्राप्त होता है।।३३।।

पापदृष्टसूर्यदशाफलम्

पापेक्षितस्यापि सहस्रभानोर्दशाविपाके परमं तु दुःखम् ।
पित्रोर्विनाशं सुतदारकष्टं चौराग्निभूपालकृतं कृशत्वम् ।।३४।।

पापदृष्ट सूर्य की दशा में अतीव दुःख प्राप्त होता है। पिता की मृत्यु, स्त्री-पुत्रों को कष्ट, राजा (पुलिस आदि), अग्नि, चोर आदि से कष्ट तथा शरीर में कृशता होती है।।३४।।

केन्द्रस्थसूर्यदशाफलम्

केन्द्रान्वितस्यापि दिवाकरस्य दशाविपाके नृपदण्डमुग्रम् ।
स्थानच्युतिं बन्धुवियोगमेति भङ्गः कृषेर्वित्तपरिभ्रमञ्च ।।३५।।

केन्द्रस्थित सूर्य की दशा में सश्रम कारावास की सजा या कठोर जुर्माना आदि हो जाता है। अपना स्थान छूट जाता है। भाइयों एवं बान्धवों का वियोग होता है। खेती तथा व्यवसाय में हानि होती है। व्यर्थ का घूमना-फिरना होता रहता है।।३५।।

त्रिकोणस्थसूर्यदशाफलम्

त्रिकोणसंयुक्तरवेर्दशायां बुद्धिभ्रमं राजविमाननञ्च ।
सौख्यादिहानिं निधनं पितुश्च कर्मादिवैकल्यमुपैति काले ।।३६।।

त्रिकोणस्थ सूर्य की दशा में बुद्धिभ्रम होता है। राज्य पक्ष से अपमान (मुकदमे आदि में हार) होता है, सुख की हानि तथा पिता की मृत्यु होती है। कर्मादि वैकल्य (कोई भी कार्य समय पर नहीं होता तथा बेराजगारी रहती है) होता है।।३६।।

उच्चांशकगतसूर्यदशाफलम्

उच्चांशकस्य च दशा विदधाति वृत्तिं
नित्यं प्रतापजनितां महतीं श्रियञ्च ।
नानाविनोदललितं रतिकेलिसौख्यं
स्त्रीवस्त्रलाभमनिशं पितृवर्गनाशम् ।।३७।।

उच्च नवांश (मेष का नवांश) में स्थित सूर्य की दशा में जातक को आजीविका के नये साधन प्राप्त होते हैं! नित्यप्रति प्रभाव बढ़ता है तथा समृद्धि भी बढ़ती चली जाती है। अनेक प्रकार के मनोरञ्जन तथा विलासिताजन्य सुख प्राप्त होते हैं। निरन्तर स्त्री, वस्त्र आदि का लाभ होता है; परन्तु पितृवर्ग की हानि होती है।।३७।।

नीचनवांशगतसूर्य दिशाफलम्

नीचांशयुक्तस्य रवेर्दशायां भार्यार्थभूहानिविदेशयानम् ।
त्यक्तो जनैर्बन्धुविकुत्सितस्तु मनोविकारं ज्वरमेहरोगम् ।।३८।।

नीचांशगत सूर्य की दशा में जातक को स्त्री, धन, भूमि की हानि एवं विदेशगमन होता है। जातक स्वजनों द्वारा त्याग दिया जाता है एवं कुत्सित आचार तथा कुविचारयुक्त होता है; ज्वर तथा प्रमेह आदि का उसे कष्ट रहता है।।३८।।

सूर्यदशाकाले आदिमध्यान्तफलम्

आदौ सूर्यदशायां दुःखं पितृरोगकृत्क्षयश्चाधिः ।
मध्ये पशुधनहानिश्चान्ते विद्यां महत्त्वञ्च ।।३९।।

सामान्य रूप से सूर्यदशा के प्रारम्भ में जातक को दुःख, पिता को रोगादि कष्ट,

क्षय तथा मनोविकार उत्पन्न होते हैं। सूर्यदशा के मध्य में पशुधनहानि तथा अन्त में विद्या, महत्त्व आदि की प्राप्ति होती है॥३९॥

षष्ठस्थसूर्यदशाफलम्

दशाविपाके धनहानिमेति षष्ठस्थभानोरतिदुःखजालम् ।
गुल्मक्षयोद्भूतपवित्ररोगं मूत्रादिकृच्छ्रं त्वथवा प्रमेहम् ।।४०।।

षष्ठ भावगत सूर्य की दशा आने पर जातक को धन की हानि होती है। दुःखों का जाल फैल जाता है। गुल्म तथा क्षय से उत्पन्न अतिसार, मूत्रकृच्छ्र अथवा प्रमेह रोग उत्पन्न होते हैं॥४०॥

अष्टमभावगतसूर्यदशाफलम्

रन्ध्रस्थभानोरपि वा दशायां देहस्य कष्टं त्वथ वाग्निभीतिम् ।
चातुर्थिके नेत्रविकारकासं ज्वरातिसारं स्वपदच्युतिञ्च ।।४१।।

अष्टम भावगत सूर्य की दशा में शरीर को नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। आग से जलने का भय या अग्निकाण्डादि का भय, चौथिया बुखार, नेत्ररोग तथा खाँसी होती है। ज्वर के साथ अतिसार होता है। जातक को पदच्युत होना पड़ता है॥४१॥

विशेष— पदच्युत का अर्थ पदावनति, निलम्बन आदि होता है।

द्वादशस्थसूर्यदशाफलम्

भानोर्द्वादशगस्य चेद्यदि दशा क्लेशार्थहानिं कृशं
स्त्रीबन्ध्वात्मजभूमिनाशमथ वा पित्रोर्विनाशं कलिम् ।
स्थानात्स्थानपरिभ्रमं विषकृतं राज्ञो भयं पादरुक्
विद्यावादविनोदगोष्ठिकलहं गोवाजिसम्पीडनम् ।।४२।।

द्वादश भावगत सूर्य की दशा में क्लेश, धनहानि, कमजोरी, स्त्री, बन्धु, आत्मज, भूमि का नाश, माता-पिता की हानि, झगड़े, स्थान-स्थान पर भटकना, विषभय, राजभय, पैरों में रोग, विद्यासम्बन्धी वाद-विवाद, विनोदसभा में कलह तथा गाय, घोड़ों से कष्ट होता है॥४२॥

द्वितीयस्थसूर्यदशाफलम्

पुत्रोत्पत्तिविपत्तिमत्र कुरुते भानोर्धनस्थस्य वा
क्लेशं बन्धुवियोगदुःखकलहं वाग्दूषणं क्रोधनम् ।
स्त्रीनाशं धननाशनं नृपभयं भूपुत्रयानाम्बरं
सर्वं नाशमुपैति तत्र शुभयुग्वाच्यं न चैतत्फलम् ।।४३।।

द्वितीयस्थ सूर्य की दशा में पुत्रोत्पत्ति एवं हानि होती है। क्लेश, बन्धुजन-वियोग, दुःख, कलह, वाणी में दोष, क्रोध, स्त्रीनाश, धननाश, राजभय, भूमि, पुत्र, वाहन और

वस्त्र इत्यादि सबका नाश होता है। यदि सूर्य शुभ ग्रह से युक्त हो तो केवल शुभ फलों की प्राप्ति होती है।।४३।।

तृतीयस्थसूर्यदशाफलम्

भानोर्विक्रमयुक्तस्य दशा धैर्यं महत्सुखम् ।
नृपमाननमर्थाप्तिं भ्रातृवैरविपत्तथा ।।४४।।

तृतीय भावस्थ सूर्य की दशा में जातक को धैर्य, सुख, राजसम्मान, धनप्राप्ति तथा भाइयों से वैर और उनसे विपत्ति होती है।।४४।।

चतुर्थभावस्थसूर्यदशाफलम्

सुखस्थितस्यापि रवेर्दशायां भोगार्थभूभृत्यकलत्रहानिम् ।
क्षेत्रादिनाशं स्वपदच्युतिं वा यानच्युतिं चोरविषाग्निभीतिम् ।।४५।।

चतुर्थ भाव में स्थित सूर्य की दशा में भौतिक पदार्थ, भूमि, सेवक, स्त्री की हानि, खेती इत्यादि का नाश, अपने अधिकारक्षेत्र से पतन अथवा वाहन से गिरने का भय और चोर, विष तथा अग्नि से भय उपस्थित होता है।।४५।।

सप्तमस्थानगतसूर्यदशाफलम्

दारान्वितस्यापि रवेर्दशायां कलत्ररोगं त्वथ वा मृतिं च ।
कुभोजनं कुत्सितपाकजातं क्षीरादिदध्याज्यविहीनमन्नम् ।।४६।।

सप्तम भावगत सूर्य की दशा में जातक की स्त्री को रोग अथवा जीवनसाथी की मृत्यु, कुभोजन (स्वादरहित, अपौष्टिक भोजन, मांसादि) एवं दूध-दही-घीरहित अन्न की प्राप्ति होती है।।४६।।

कर्मभावस्थसूर्यदशाफलम्

कर्मस्थितस्यापि रवेर्दशायां राज्यार्थलाभं समुपैति धैर्यम् ।
उद्योगसिद्धिं यशसा समेतं जयं विवादे नृपमाननं च ।।४७।।

दशमस्थ सूर्य की दशा में जातक को राज्यलाभ एवं धनलाभ होता है, मन में धैर्य उपस्थित होता है, कार्यसिद्धि, यश-प्राप्ति, विवादादि में विजय प्राप्त होती है तथा राजा के द्वारा सम्मान प्राप्त होता है।।४७।।

लाभस्थसूर्यदशाफलम्

आयस्थितस्यापि दशाविपाके भानोर्धनाप्तिं शुभकर्मलाभम् ।
उद्योगसिद्धिं सुतदारसौख्यं यानादिभूषाम्बरदेहसौख्यम् ।।४८।।

लाभभाव में स्थित सूर्य की दशा में जातक को धन की प्राप्ति, सत्कार्य-लाभ, कार्यसिद्धि, पुत्र एवं पत्नीसुख की प्राप्ति, वाहन, वस्त्राभूषण इत्यादि का सुख तथा शरीरसुख प्राप्त होता है।।४८।।

अन्यफलम्

संज्ञाध्याये यस्य यद्द्रव्यमुक्तं कर्माजीवे यस्य यच्चोपदिष्टम् ।
भावस्थानालोकयोगोद्भवं च तत्तत्सर्वं तस्य योज्यं दशायाम् ।।४९।।

संज्ञाध्याय में जिस ग्रह का जो द्रव्य बतलाया गया है तथा कर्माजीवों में जिस प्रकार की जो जीविका बताई गई है, उस सबके आधार पर भाव और ग्रह के बलाबलानुसार जो भी फल घटित होगा, वह उसकी दशा में ही होगा; ऐसा समझना चाहिये।।४९।।

स्थानबलाधिकसूर्यदशाफलम्

सूर्ये स्थानबलाधिके कृषिधनं गोभूमियानाम्बरं
सौख्यं राजसुमाननं परधनैः संयुज्यते कान्तिमान् ।
तत्पाके शयनाम्बरादि लभते सर्वोपकारं महा-
कीर्तिं भूषणमिष्टबन्धुसहितं तीर्थाभिषेकं महत् ।।५०।।

सूर्य का स्थानबल अधिक हो तो उसकी दशा में खेती-बाड़ी, गाय-बैल-भैंस, वाहन, वस्त्रादि का सुख प्राप्त होता है। राज्यपक्ष से सम्मान, पराये धन की प्राप्ति होती है एवं कान्ति बढ़ती है। लोकोपकार के कार्य करने से कीर्ति, भूषण, इष्टबन्धुओं के साथ तीर्थाटन होता है।।५०।।

स्थानबलहीनसूर्यदशाफलम्

रवौ यदा स्थानबलेन हीने तत्पाककाले बलमर्थनाशम् ।
स्थानच्युतिं बन्धुविरोधतापं देशाद्विदेशं समुपैति दुःखम् ।।५१।।

स्थानबल से हीन सूर्य की दशा में बल तथा धन का नाश होता है। स्थानभ्रष्ट होना पड़ता है, बन्धु-बान्धवों से विरोध होता है, स्वदेश से अन्य स्थान पर जाना पड़ता है, ताप तथा दु:ख की प्राप्ति होती है।।५१।।

दिग्बली सूर्यदशाफलम्

दिग्वीर्ययुक्ते दिवसेश्वरे तु दिगन्तराक्रान्तधनोऽपि सौख्यम् ।
तत्तद्दिशः प्राप्तयशोऽर्थभूमिर्नो चेत्तथा तादृशमत्र नास्ति ।।५२।।

दिग्बली सूर्य की दशा में जातक इतना धनी हो जाता है कि उसकी ख्याति दिगन्त (दिशाओं के अन्त) तक पहुँच जाती है। जिस राशि में दिग्बली हो, उसी राशि की दिशा से धन, यश तथा सुख मिलता है। दिग्बली न होकर अन्य प्रकार से बली होने पर ऐसा सुख नहीं मिलता।।५२।।

कालबली सूर्यदशाफलम्

तत्कालमानात्तनुते बलिष्ठे रवौ विपाके कृषिभूमिवित्ते ।
उद्योगसिद्धिं नृपमानमञ्च हीने रवौ कालबलेन नाशम् ।।५३।।

कालबली सूर्य की दशा में कृषि-कृत्य से लाभ, भूमि एवं धनलाभ मिलता है। उद्यम सफल होता है। राजसत्ता से सम्मान क़ी प्राप्ति होती है (अन्य जिन वस्तुओं का कारक सूर्य है, उनसे भी लाभ होता है)। सूर्य के कालबल से हीन होने पर इन चीजों की हानि होती है।।५३।।

निसर्गबली सूर्यदशाफलम्

निसर्गतः सर्वमुपैति काले रवौ तु नैसर्गिकवीर्ययुक्ते ।
यानार्थभूषाम्बरदेहसौख्यं हीने रवौ चौरनृपाग्निभीतिम् ।।५४।।

नैसर्गिक बली सूर्य की दशा में वाहन, धन, परिधान, वस्त्र, शरीरसौख्य आदि सब कुछ प्राप्त होता है। नैसर्गिक बल से हीन सूर्य की दशा में चोर, नृप तथा अग्नि आदि से भय होता है।।५४।।

चेष्टाबली सूर्यदशाफलम्

रवौ तु चेष्टाधिकवीर्ययुक्ते स्वचेष्टितार्थागममेति सौख्यम् ।
नृपस्य मानं सुतदारसौख्यं कृष्यादियानं न च हीनचेष्टे ।।५५।।

चेष्टाबली सूर्य की दशा में जातक अपने प्रयत्नों से धन प्राप्त करता है। उसे स्त्री-पुत्रादि का भी सुख मिलता है। राजसम्मान, कृषि तथा यान (सवारी) का सुख मिलता है। चेष्टाबल से हीन होने पर यह सब नहीं मिलता।।५५।।

दृग्बली सूर्यदशाफलम्

रवौ खगानां बलदृष्टियुक्ते त्वचिन्तयित्वा सकलञ्च सौख्यम् ।
तज्जायते तत्परिपाककाले तेनैव हीने सकलं विनाशम् ।।५६।।

जब सूर्य दृष्टि-बल से युक्त हो तो उसकी दशा में सभी प्रकार के सुख (जिनका कारक सूर्य होता है, वे सब सुख) होते हैं; परन्तु जब सूर्य दृग्बल से हीन होता है तो वे सब सुख नहीं होते।।५६।।

क्रूरादिषष्ट्यंशगतसूर्यदशाफलम्

क्रूरादिषष्ट्यंशरवेर्दशायां स्थानच्युतिं वा नृपचौरभीतिम् ।
कोपाधिकं तत्र शिरोरुजञ्च पित्रादिनाशं त्वथ वा तदीयम् ।।५७।।

जो षष्ट्यंश क्रूर हैं, उनमें से किसी में स्थित सूर्य की दशा में स्थानच्युति, राजभय, चौरभय, क्रोध की अधिकता, शिरःशूल, पित्रादिनाश (पिता-चाचा-ताऊ आदि) होता है।।५७।।

मृद्वंशषष्ट्यंशगतसूर्यफलम्

मृद्वंशषष्ट्यंशरवेर्दशायां मृद्वंशपादम्बभूषणाप्तिम् ।
नामद्वयं राजसुपूज्यताञ्च वेदान्तशास्त्रागमधर्मशास्त्रम् ।।५८।।

मृद्वंशसंज्ञक षष्ट्यंशकों की दशा में उस मृद्वंश के स्वामी ग्रह की प्रकृति के अनुरूप परिधान तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है। नयी उपाधि प्राप्त होती है, राजपक्ष से सम्मानित होता है। वेदान्त, तन्त्र तथा धर्मशास्त्र का अध्ययन होता है।।५८।।

पारावतांशयुतसूर्यदशाफलम्

पारावताद्यंशयुतस्य भानोर्दशाविपाके महतीञ्च कीर्तिम् ।
बन्ध्वर्थदेशाधिपमाननं च पुत्रादिसन्मित्रकलत्रलाभम् ।।५९।।

पारावतांशादि में स्थित सूर्य की दशा में जातक की कीर्ति दूर-दूर तक फैलती है, बन्धुओं तथा क्षेत्रीय नेताओं में दबदबा बढ़ता है। पुत्र, मित्र एवं स्त्री का सुख प्राप्त होता है।।५९।।

दशाफले तारतम्यमाह

स्वोच्चादिजन्यं फलमाहुरादौ पश्चात्फलं खेचरदृष्टिजन्यम् ।
मध्ये फलं स्थानभावं तथैव पापग्रहाणामिह योजयन्ति ।।६०।।

अब ग्रन्थकार यह बताते हैं कि यदि सूर्य उच्चादि में स्थित हो तथा विभिन्न प्रकार के बलों से युक्त हो तो फल का तारतम्य कैसे बैठाया जायेगा? कहते हैं कि ऐसे सूर्य की दशा में दशा के तीन भाग कर विचार करना चाहिये। प्रारम्भ में उच्चादि का फल मिलता है, मध्य में स्थानबल का फल मिलता है तथा अन्त में दृग्बल का फल मिलता है। पापग्रहों के दशाफल का तारतम्य भी सूर्य की भाँति विचारना चाहिये।।६०।।

सर्पादिद्रेष्काणगतसूर्यदशाफलम्

भुजङ्गमन्त्र्यंशयुतस्य भानोर्दशाविपाके हि भयं विषाद्वा ।
नृपाग्निपातित्यमनेकदु:खं पाशादिभृत्यंशयुतस्य चैवम् ।।६१।।

यदि सूर्य सर्पद्रेष्काण में हो तो उसकी दशा में जातक को विष या राजा से भय होता है। अग्नि में पतित होने से अनेक दु:ख मिलते हैं। इसी प्रकार का फल पाशादि द्रेष्काणस्थ सूर्य की दशा में भी मिलता है। अग्निपातित्य का अर्थ द्विज के लिये दैनिक यज्ञादि से भ्रष्ट होना है; परन्तु दूसरा अर्थ अग्नि तथा विद्युदादि का भय है।।६१।।

उच्चराशौ नीचानवांशे सूर्यदशाफलम्

स्वोच्चस्थोऽपि दिनेशो नीचांशे चेत्कलत्रहानि: ।
स्वकुलजबन्धुविरोध: पित्रादीनां तथैव मुनिवाक्यम् ।।६२।।

यदि सूर्य उच्च राशि (मेष) का हो; परन्तु नीचनवांश (तुला का नवांश = २०°

से २३°।२०' तक) में हो तो उसकी दशा में स्त्री की हानि होती है। अपने कुल में उत्पन्न बन्धु-बान्धवों से विरोध होता है, इसी प्रकार पित्रादि (पिता-पितामह, चाचा, ताऊ आदि से भी होता है। ऐसा मुनिजनों का कथन है।।६२।।

उच्चनवांशे नीचराशौ च सूर्यदशाफलम्

उच्चांशकयुतो भानुर्नीचस्थोऽपि महत्फलम् ।
करोति राज्यभारञ्च दशान्ते विपदं कृशाम् ।।६३।।

यदि सूर्य उच्च नवांश का होकर भले ही नीच राशि में हो (अर्थात् जब सूर्य स्पष्ट राश्यादि ६।२०°।०'। ०" से राश्यादि ६।२३°।२०'।०" तक हो तब यह स्थिति होती है) तो अपनी दशा में अच्छा फल देता है। राज्यभार (उत्तरदायित्व) की प्राप्ति होती है; परन्तु दशा के अन्त में विपत्ति तथा परेशानी होती है।।६३।।

विशेष— इस श्लोक से नवांश का फल राशि की अपेक्षा प्रमुख है, यह स्पष्ट होता है।

इति रविदशाफलानि

◆

अथ चन्द्रदशाफलानि

तत्रादौ परमोच्चचन्द्रदशाफलम्

अत्युच्चगस्यापि निशाकरस्य दशाविपाके कुसुमाम्बरञ्च ।
महत्त्वमाप्नोति कलत्रलाभं धनायतिं पुत्रमनोविलासम् ।।६४।।

परमोच्चस्थित चन्द्र (वृष के तीन अंश पर) की दशा में उत्तम पुष्प (सुगन्धित द्रव्य), सुन्दर वस्त्र, प्रतिष्ठा आदि की प्राप्ति होती है। स्त्रीपक्ष से लाभ, धनागम, पुत्रसुख तथा मनोविलास (मनोरञ्जन) होता है।।६४।।

उच्चस्थचन्द्रदशाफलम्

उच्चस्थितस्यापि निशाकरस्य प्राप्तौ दशायां सुतदारवित्तम् ।
मिष्टान्नपानाम्बरभूषणाप्तिं विदेशयानं स्वजनैर्विरोधम् ।।६५।।

उच्च राशिस्थित चन्द्रमा (सम्पूर्ण वृष राशि में तीसरे अंश को छोड़कर किसी भी अंश पर) की दशा में पुत्र, स्त्री, धन, मिष्टान्न भोजन, उत्तम पेय पदार्थ, वस्त्राभूषण, परिधान आदि की प्राप्ति होती है; परन्तु विदेशगमन तथा स्वजनों से विरोध होता है।।६५।।

आरोही चन्द्रदशाफलम्

आरोहिणी चन्द्रदशा प्रपन्ना स्त्रीपुत्रवित्ताम्बरकीर्तिसौख्यम् ।
करोति राज्यं सुखभोजनञ्च देवार्चनं भूसुरतर्पणञ्च ।।६६।।

आरोही चन्द्रमा (उच्चाभिलाषी = मेष राशि का) की दशा में स्त्री, पुत्र, धन, वस्त्र, की प्राप्ति, कीर्ति तथा सुख होता है। जातक को अधिकार की प्राप्ति होती है, अच्छा भोजन प्राप्त होता है तथा वह देवपूजन एवं ब्राह्मणभोजनादि कराता है॥६६॥

अवरोही चन्द्रदशाफलम्

निशाकरस्याप्यवरोहकाले स्त्रीपुत्रमित्राम्बरसौख्यहानिम् ।
मनोविकारं स्वजनैर्विरोधं चौराग्निभूपैः पतनं तडागे ।।६७।।

चन्द्रमा के अवरोही (नीचाभिलाषी = तुला राशि में) होने पर उसकी दशा में स्त्री, पुत्र, मित्र, वस्त्र तथा सौख्य की हानि होती है। मानसिक रोग एवं स्वजनों से विरोध होता है। चौर, अग्नि, पुलिस तथा नदी-तालाबादि में डूबने का भय रहता है॥६७॥

नीचनवांशगतचन्द्रदशाफलम्

नीचांशगस्यापि निशाकरस्य प्राप्तौ दशायां विविधार्थहानिम् ।
कुभोजनं कुत्सितराजसेवां मनोविकारं समुपैति निद्राम् ।।६८।।

यदि नीच नवांशगत चन्द्रमा की दशा हो तो उसमें विविध प्रकार से (चोरी, ठगी, घाटा, वस्तुनाश, रोग, मुकदमा आदि के द्वारा) धन की हानि होती है। कुभोजन की प्राप्ति होती है तथा बुरे व्यक्ति के यहाँ नौकरी आदि करनी पड़ती है। उसे नींद अधिक आती है एवं मन में चिन्ता आदि रहती है॥६८॥

मूलत्रिकोणस्थचन्द्रदशाफलम्

मूलत्रिकोणस्थितचन्द्रदाये नृपाद्धनं भूमिसुतार्थदारान् ।
प्राप्नोति भूषाम्बरमानलाभं सुखं जनन्या रतिकेलिलोलम् ।।६९।।

मूल त्रिकोणस्थित चन्द्र की दशा में राजपक्ष से धन, भूमि आदि की प्राप्ति होती है। पुत्र, पत्नी, आदि का सुख होता है। वस्त्रादि की प्राप्ति होती है, माता का सुख मिलता है। विलासितापूर्ण कार्यों में जातक संलग्न रहता है॥६९॥

स्वक्षेत्रगतचन्द्रफलम्

स्वक्षेत्रगस्यापि निशाकरस्य नृपाद्धनप्राप्तिमुपैति सौख्यम् ।
प्रचण्डवेश्यागमनं क्षितीशात् सम्माननं स्त्रीसुतबन्धुसौख्यम् ।।७०।।

स्वराशिगत चन्द्रमा (कर्क राशि का) की दशा में राजा से धन की प्राप्ति तथा सुख होता है; परन्तु इस दशा में जातक अधिक कामुक तथा लम्पट हो जाता है। ऐसा वह शक्ति एवं सम्पन्नता के मद में करता है। वह वेश्यागामी हो सकता है। उसे सम्मान की प्राप्ति एवं ससुराल पक्ष तथा कुटुम्ब से सहयोग मिलता है॥७०॥

अधिशत्रुक्षेत्री चन्द्रदशाफलम्

निशाकरस्याप्यतिशत्रुराशिं गतस्य दाये कलहार्थनाशम् ।
कुवस्त्रतां कुत्सितभोजनञ्च क्षेत्रार्थदारात्मजतापमेति ।।७१।।

अधिशत्रु (पञ्चधा मैत्री में) राशिगत चन्द्रमा की दशा में जातक की झगड़े-मुकदमेबाजी एवं धनहानि होती है। उसके वस्त्र मैले-कुचैले रहते हैं, अपौष्टिक तथा स्वादहीन भोजन मिलता है। साथ ही खेती, धन का लेन-देन, स्त्री-पुत्रादि के कारण विवाद उत्पन्न होता है।।७१।।

शत्रुराशिगतचन्द्रदशाफलम्

यानाम्बरालङ्करणादिहानिं विदेशयानं परिचारकत्वम् ।
देशान्तरे गच्छति बन्धुहीनो दुःखी परिक्लिश्यति शत्रुदाये ।।७२।।

शत्रु राशिगत चन्द्रमा की दशा में वाहन, वस्त्र, साज-सज्जा तथा रौनक आदि की हानि होती है। घर से बाहर दूर की यात्रा या प्रवास करना पड़ता है। दूसरे की चाकरी, परिचर्या आदि करनी पड़ती है। बन्धु-बान्धवों से सहयोग नहीं मिलता एवं वह दुःखी तथा क्लेशयुक्त रहता है।।७२।।

मित्रक्षेत्री चन्द्रदशाफलम्

मित्रर्क्षगस्यापि निशाकरस्य पाकेऽर्थलाभं क्षितिपालमैत्रीम् ।
उद्योगसिद्धिं जलवस्तुलाभं चित्राम्बराभूषणवाग्विलासम् ।।७३।।

मित्रक्षेत्रगत चन्द्र की दशा में जातक को धन का लाभ होता है। राजनेताओं तथा उच्चाधिकारियों से मित्रता होती है, कार्यों में सफलता मिलती है। जलीय वस्तु (बर्फ, ठण्ढ़ा पानी, पेय, मछली, मोती, मूंगा, शंख, सीप, समुद्रफेन, ककड़ी, तरबूज, खरबूजा, मेथी, पालक आदि सब्जियाँ) से लाभ होता है। विविध प्रकार के वस्त्राभूषण प्राप्त होते हैं तथा मनोविनोद एवं गप-शप चलती-रहती है।।७३।।

अधिमित्रराशिगतचन्द्रदशाफलम्

सुधाकरस्याप्यतिमित्रराशिं गतस्य दाये त्वतिसौख्यमेति ।
विद्याविनोदाङ्कितराजपूजां क्षेत्रार्थदारात्मजकामलाभम् ।।७४।।

अधिमित्र राशिगत चन्द्र की दशा में खूब सुख प्राप्त होता है। विद्या के कारण राजपक्ष तथा समाजपक्ष से सम्मान प्राप्त होता है। मन प्रसन्न रहता है, खेती, भूमि, धन आदि का लाभ होता है। स्त्री तथा सन्तान से सुख मिलता है। मनोकामनायें पूरी होती हैं एवं योजनाओं में आशातीत सफलता मिलती है।।७४।।

समराशिगतचन्द्रदशाफलम्

दशाविपाके समराशिगस्य कलानिधेः काञ्चनभूमिलाभम् ।
किञ्चित्सुखं बान्धवरोगपीडां विदेशयानं लभते मनुष्यः ।।७५।।

सम राशिगत चन्द्रमा की दशा में जातक को सोना, चाँदी, भूमि आदि का लाभ होता है एवं थोड़ा सुख प्राप्त होता है। साथ ही बन्धुजनों को रोगपीड़ा एवं विदेशयात्रा (दूर की यात्रा) होती है।।७५।।

नीचराशिगतचन्द्रदशाफलम्

नीचस्थितस्य दशया विपदं महार्तिं
क्लेशार्थदुःखवनवासमुपैति काले ।
कारागृहं निगडपादकृशान्नहीनो
चौराग्निभूपतिभयं सुतदारशेषम् ।।७६।।

नीचस्थित चन्द्रमा की दशा में विपत्ति आती है, महापीड़ा होती है, क्लेश प्राप्त होता है। धन के कारण दुःख होता है। वनवास (एकान्त या भयंकर स्थान में निवास) होता है। जेल जाने का डर रहता है या अपहरण आदि के कारण अपहर्त्ताओं के चंगुल में दुःख भोगना पड़ता है। भोजन के अभाव में जातक दुबला हो जाता है, उसे चोर, अग्नि तथा राजभय होता है। स्त्री-पुत्रादि की हानि होती है।।७६।।

क्षीणचन्द्रदशाफलम्

क्षीणेन्दुपाके सुकलाविहीनो राजार्थभूपुत्रकलत्रमित्रम् ।
उन्मादचित्तं स्वजनैर्विरोधमृणत्वमायाति कुशीलवृत्त्या ।।७७।।

क्षीण चन्द्रमा, जो कलाविहीन हो (अमावस्या के समीप का), की दशा में जातक स्वयं कलाविहीन, अधिकार, धन, धरती, पुत्र, स्त्री तथा मित्र से हीन हो जाता है। उसका चित्त पागलों-जैसा रहता है, उसके व्यवहार से नाते-रिश्तेदार विरोधी हो जाते हैं तथा स्वयं के दुष्कर्मों से उस पर ऋण चढ़ जाता है।।७७।।

पूर्णचन्द्रदशाफलम्

पूर्णेन्दुपाके परिपूर्णमेति विद्याविनोदाङ्कितराजपूज्यम् ।
स्त्रीपुत्रभृत्यार्थमनोविलासं विशेषतः शोभनकर्मलाभम् ।।७८।।

पूर्ण चन्द्र की दशा में जातक विद्या की परिपूर्णता को प्राप्त होता है। राजपूज्यता प्राप्त होती है। स्त्री, पुत्र, भृत्य आदि का सुख, मानसिक प्रसन्नता तथा शुभ कर्म से लाभ होता है।।७८।।

उच्चस्थग्रहयुक्तचन्द्रदशाफलम्

केनापि स्वोच्चस्थवियच्चरेण युक्तस्य चन्द्रस्य दशाविपाके ।
मनःप्रसादं मदनाभिरामं स्त्रीपुत्रभृत्यादिविनोदगोष्ठीम् ।।७९।।

किसी भी उच्च राशिगत ग्रह के साथ चन्द्र की युति हो तो उसकी दशा में जातक को मानसिक प्रसन्नता, रतिसुख की प्राप्ति, स्त्री-पुत्र-नौकर आदि का सुख तथा मनोरञ्जक वातावरण उपलब्ध रहता है। गप-शप चलती रहती है॥७९॥

पापान्वितचन्द्रदशाफलम्

पापान्वितस्यापि निशाकरस्य पाकेऽग्निचौरक्षितपालकोपैः ।
दुखं सुतस्त्रीसुखबन्धुहानिं विदेशयानं त्वशुभादिकर्म ।।८०।।

पापान्वित चन्द्रमा की दशा में चोर, अग्नि तथा राजकोप से दुःख प्राप्त होता है। पुत्र, स्त्री, सुख, बन्धु— इनकी हानि होती है। घर छूट जातक है तथा जातक अशुभ कर्म में लगा रहता है॥८०॥

शुभग्रहयुक्तचन्द्रदशाफलम्

चन्द्रस्य. सौम्यग्रहसंयुतस्य प्राप्तौ दशायां शुभकर्मलाभम् ।
गोभूहिरण्याम्बरभूषणानि तीर्थाभिषेकं परदारसौख्यम् ।।८१।।

शुभ ग्रह से युक्त चन्द्र की दशा में शुभ कर्मों का सम्पादन होता है। गाय-बैल, भैंस, वाहन, सोना-चाँदी, वस्त्राभूषण आदि की प्राप्ति होती है। तीर्थ तथा देवताओं के दर्शन होते हैं। उसके महिला-मित्रों की संख्या में वृद्धि होती है॥८१॥

पापेक्षितचन्द्रदशाफलम्

पापेक्षितस्यापि निशाकरस्य दशाविपाके विफलं सुकर्म ।
कोपाधिकं कुत्सितभोजनञ्च मातुर्वियोगं त्वथ वा तदीयम् ।।८२।।

पापग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा की दशा में अच्छे कामों में असफलता मिलती है। क्रोध अधिक आता है। कुत्सित (दूषित एवं अपवित्र) भोजन प्राप्त होता है। माता से वियोग होता है॥८२॥

शुभेक्षितचन्द्रफलम्

निशाकरस्यापि शुभेक्षितस्य परोपकारं महतीं च कीर्तिम् ।
इष्टार्थबन्ध्वागमभूपमानं जलक्रियावस्त्रमनोविलासम् ।।८३।।

शुभ ग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा की दशा में जातक परोपकार के कार्य करता है, जिससे उसे महान् कीर्ति मिलती है। मनोवाञ्छित पदार्थों की प्राप्ति होती है। बन्धुजनों से मेल-मिलाप होता है। जलक्रीडा तथा मनोरञ्जन होता है। राजपक्ष से सम्मान मिलता है॥८३॥

पुनश्च मूलत्रिकोणगतचन्द्रदशाफलम्

मूलत्रिकोणभेन्दोर्दशां प्रपन्नो नरः सुबहुकोशः ।
बहुपुत्रवान् विनीतो बन्धुविरोधं प्रधानतां याति ।।८४।।

मूल त्रिकोणगत चन्द्र की दशा में जातक को कोश (खजानों) की प्राप्ति होती है (उसे या तो गड़ा धन मिलता है या दूसरे की सम्पत्ति मिलती है या लॉटरी आदि खुल जाती है)। इस दशा में उसे पुत्रों का सुख मिलता है। वह विनीत बना रहता है। उसे प्रधानता प्राप्त होती है; परन्तु बन्धु से विरोध बना रहता है॥८४॥

चतुर्थभावगतचन्द्रदशाफलम्

सुखस्थितस्यापि निशाकरस्य मातुर्वियोगं सुखयानभूमिम् ।
कृषेर्धनाप्तिं गृहकर्मलाभं कीर्तिस्वनामाङ्कितपद्यलाभम् ।।८५।।

चतुर्थ भावगत चन्द्रमा की दशा में माता का वियोग होता है; क्योंकि चन्द्रमा माता का कारक होता है; अत: 'कारको स्थाननाशक:' इस ज्योतिषीय उक्ति के अनुसार चतुर्थ में बैठा चन्द्र अपनी दशा में मातृवियोग कराता है; लेकिन अन्य बातों में शुभ फल देता है। सवारी, भूमि, भवन, प्लाट आदि का सुख मिलता है। खेती तथा बागवानी से धन-प्राप्ति होती है। घर के कामों में लाभ होता है। कीर्ति प्राप्त होती है। प्रशंसापत्र, प्रमाणपत्र, प्रशस्तिपत्र तथा पदक, जो कि जातक के नाम से ही होता है, प्राप्त होता है अर्थात् उपाधि आदि मिलती है॥८५॥

सप्तमभावस्थचन्द्रदशाफलम्

दारान्वितस्यापि निशाकरस्य पाके कलत्राप्तिमुदाहरन्ति ।
सुपुत्रसौख्यं शयनाम्बरञ्च प्रमेहमूत्रादिकृशं तथाधिम् ।।८६।।

सप्तम भावगत चन्द्रमा की दशा में जातक को स्त्री प्राप्त होती है, विवाह होता है या वैवाहिक सुख मिलता है। पुत्र का सुख, शयन (पलंग) आदि का सुख मिलता है; परन्तु प्रमेह, मधुमेह तथा बहुमूत्रादि रोगों से जातक कृश (दुबला) होता है तथा आधि (मानसिक रोग) से पीड़ित रहता है॥८६॥

दशमस्थितचन्द्रदशाफलम्

कर्मस्थितस्यापि दशा प्रपन्ना चन्द्रस्य कीर्ति लभते सुविद्याम् ।
यज्ञादिकर्माप्तिमनेकसौख्यं भूपुत्रयानाम्बरबन्धुपूज्यम् ।।८७।।

दशम भावस्थ चन्द्र की दशा आने पर जातक की कीर्ति बढ़ती है, उत्तम विद्या प्राप्त होती है। जातक यज्ञादि कर्म करता है। उसे भूमि, पुत्र, वाहन, वस्त्र आदि का सुख मिलता है तथा वह अपने बन्धुजनों से प्रतिष्ठा प्राप्त करता है॥८७॥

नीचनवांशगतचन्द्रदशाफलम्

नीचांशगतस्यापि ददाति रोगं महत्तरं चेन्दोः ।
पादाक्षिरोगपीडां युद्धेषु पराजयं गतोत्साहम् ।।८८।।

यदि चन्द्रमा नीच नवांश में हो तो अपनी दशा में वह कोई बड़ा रोग उत्पन्न करता

है। पैरों एवं नेत्रों में कष्ट होता है। युद्ध, मुकदमा, झगड़ा आदि में जातक की पराजय होती है। उसका उत्साह समाप्त हो जाता है और वह मनोबल से हीन हो जाता है॥८८॥

उच्चनवांशगतचन्द्रदशाफलम्

उच्चांशगस्यापि दशा ददाति सौख्यं महत्तरं चेन्दोः ।
नानाविधधनलाभं भूपतिसन्मानतां सुपुष्टिञ्च ।।८९।।

उच्च नवांशगत चन्द्रमा की दशा जातक को बहुत बड़ा सुख देती है। उसे अनेक स्रोतों से धन-लाभ होता है। राजपक्ष से सम्मान प्राप्त होता है, शरीर पुष्ट होता है तथा मन प्रसन्न रहता है॥८९॥

चन्द्रदशायां नानाविधफले तारतम्यकथनम्

चन्द्रदशायामादौ नरपतिसन्मानकीर्तिसौख्यञ्च ।
मध्ये स्त्रीसुतनाशं गृहधनसौख्याम्बरञ्चान्ते ।।९०।।

चन्द्रदशा के प्रारम्भ में सम्मान, कीर्ति तथा सुख मिलता है। मध्य भाग में स्त्री-पुत्रादि की हानि होती है तथा अन्तिम भाग में घर, धन, सुख तथा वस्त्रादि की हानि होती है॥९०॥

षष्ठस्थचन्द्रदशाफलम्

षष्ठस्य चन्द्रस्य दशा प्रपन्ना करोति दुःखं कलहं वियोगम् ।
चौराग्निभूपालभयं जलेन मूत्रादिकृच्छ्रं धननाशमाहुः ।।९१।।

छठे भाव में स्थित चन्द्रमा की दशा लगने पर जातक को दुःख देती है। लडाई-झगड़ा होता है। प्रियजनों से वियोग होता है; चौरभय, अग्निभय तथा राजभय होता है। जल से भी भय होता है। डूबने का भय तथा जलसन्त्रास, मूत्रकृच्छ्रादि व्याधियाँ तथा धन का नाश होता है॥९१॥

अष्टमस्थचन्द्रदशाफलम्

रन्ध्रस्थितस्यापि दशा प्रपन्ना देहस्य कार्श्यं जलभीतिदुःखम् ।
विदेशयानं सकलैर्विरोधं कुभोजनं मातृजनेषु कष्टम् ।।९२।।

अष्टम भावस्थ चन्द्र की दशा में देह में कृशता (दुबला-पतलापन) होती है। जल से भय तथा कष्ट होता है। घर से दूर जाना पड़ता है। अधिकांश लोगों से वैमनस्य हो जाता है। अच्छा भोजन नहीं मिलता तथा मातृजनों (माँ, सौतेली माँ, दादी, चाची, ताई, मौसी, मामी आदि) को कष्ट होता है॥९२॥

द्वादशस्थचन्द्रदशाफलम्

रिष्फगचन्द्रदशायां सम्प्राप्तो भृतिनाशनं कुरुते ।
राज्ञोऽनृतधनभाग्यं स्थानविनाशं महत्परं दुःखम् ।।९३।।

बारहवें चन्द्रमा की दशा आने पर जातक का ऐश्वर्य नष्ट हो जाता है तथा परम दुःख प्राप्त होता है। जातक राजद्वार में झूठ बोलता है (अर्थात् झूठ आरोप लगाता है या झूठी गवाही देता है) एवं धन, भाग्य तथा स्थान का नाश होता है।।९३।।

धनस्थानगतचन्द्रदशाफलम्

चन्द्रस्य वित्तस्य विपाककाले वित्तात्मजस्त्रीसुखभोगभाग्यम् ।
मिष्टान्नपानाम्बरकेलिसौख्यं धनागमं पुण्यजलाभिषेकम् ।।९४।।

धनभावस्थित चन्द्रमा की दशा में जातक को धन-सन्तति स्त्री आदि का सुख मिलता है। मिष्टान्न भोजन मिलता है। हँसी-मजाक, होहल्ला, गप-शप का आनन्द मिलता है। धन की आमदनी होती है तथा पवित्र जल से अभिषेक सम्पन्न होता है।।९४।।

तृतीयभावस्थचन्द्रफलम्

तृतीयराशिस्थनिशाकरस्य दशा महत्सौख्यमनेकवित्तम् ।
मनोदृढं भ्रातृजनादिसौख्यं कृष्यन्नपानाम्बरभूषणाप्तिम् ।।९५।।

तृतीय भावस्थित चन्द्रमा की दशा जातक में महान् उत्साह रहता है, अनेक स्रोतों से धन प्राप्त होता है। मनोबल बढ़ा हुआ रहता है। भाई-भतीजों का सुख मिलता है। खेती से उत्पन्न अन्न का सुन्दर भोजन मिलता है। आभूषणों की प्राप्ति होती है।।९५।।

एकादशस्थचन्द्रदशाफलम्

लाभस्थितस्यापि निशाकरस्य प्राप्तौ दशायां विविधार्थलाभम् ।
मृद्वन्नपानाम्बरकेलिलोलं स्त्रीपुत्रलाभञ्च मनोविलासम् ।।९६।।

एकादश भाव में स्थित चन्द्र की दशा में अनेक स्रोतों से अन्न-धन-वस्त्रादि की प्राप्ति होती है। उसे उत्कृष्ट भोज्य तथा पेय पदार्थ प्राप्त होते हैं। वह वैभव तथा विलासिता को प्रदर्शित करने वाले वस्त्रों को धारण करता है एवं मनोरञ्जन के कार्य में अधिक समय बिताता है। वह अपने स्त्री एवं पुत्रों से लाभान्वित होता है तथा उनके साथ प्रसन्नतापूर्वक समय व्यतीत करता है। उसके चित्त में चञ्चलता रहती है तथा इन्द्रियों में लौल्य रहता है।।९६।।

अस्तङ्गतचन्द्रदशाफलम्

दिनेश्वरस्याहतचन्द्रदाये प्राप्नोति दुःखं स्वजनैर्विरोधम् ।
भार्याक्षयं भीतिनृपाग्निचौरैः मातुर्वियोगं कृषिधान्यनाशम् ।।९७।।

सूर्य से आहत चन्द्र की दशा में जातक को दुःख प्राप्त होता है। उसका स्वजनों से वैर-विरोध हो जाता है, पत्नी को हानि पहुँचती है, राजा-अग्नि तथा चोरों से भय होता है, मातृवियोग प्राप्त होता है तथा कृषि, धान्य, व्यापार आदि की हानि सहन करनी पड़ती है।।९७।।

स्थानबली चन्द्रदशाफलम्

चन्द्रे स्थानबलाधिके धनसुखं कीर्तिं च विद्यागमं
देवब्राह्मणतर्पणं नृपधनान्याप्नोति भूमिं धनम् ।
स्त्रीरत्नाम्बरभूषणं कृषिधनं गोविक्रयं सेवनं
मिष्टान्नादिरसायनं फलयुतं दध्याज्यमाल्याम्बरम् ।।९८।।

स्थानबली चन्द्रमा की दशा में जातक को धनसुख तथा कीर्त्ति की प्राप्ति होती है, विद्या-प्राप्ति में सफलता मिलती है, देवताओं, ब्राह्मणों एवं गुरुजनों को सन्तुष्ट किया जाता है, राज्यशासन से धनादि की प्राप्ति होती है, भूमि तथा धन से सम्पन्नता होती है। जिनका विवाह न हुआ हो, उनका विवाह होता है तथा विवाहितों को दाम्पत्य सुख प्राप्त होता है। अच्छे वस्त्राभूषण पहनने को मिलते हैं एवं खेती-पशुपालन, व्यवसाय आदि से खूब आमदनी होती है। उसे दूध-दही-घी-मेवा-मिष्ठान्न तथा च्यवन, मल्टी-विटामिन तथा प्रोटीनयुक्त औषधियाँ सेवन करने को प्राप्त होती हैं एवं सुगन्धित पदार्थों का उपयोग होता है।।९८।।

स्थानबलहीनचन्द्रदशाफलम्

निशाकरे स्थानबलेन हीने स्थानार्थनाशं स्वपदच्युतिं च ।
स्वबन्धुनाशन्त्वथ वा वियोगं कृषेर्विनाशं समुपैति काले ।।९९।।

स्थानबल से हीन चन्द्रमा की दशा में जातक को स्थान तथा धन की हानि होती है। उस व्यक्ति का स्थान छूट जाता है अथवा उसका आवास टूट-फूट जाता है अथवा बिक जाता है या दूसरे के अधिकार में बलपूर्वक चला जाता है। उसे सुख-सुविधा-सम्पन्न आवास को छोड़कर अन्यत्र रहना पड़ता है। वह जिस पद पर कार्यरत होता है या तो वह पद छिन जाता है अथवा उसे निलम्बित कर दिया जाता है। बन्धु-बान्धवों की हानि या उनसे वियोग होता है एवं उसका उद्योग-कृषि-व्यापार-वाणिज्य आदि नष्ट हो जाता है।।९९।।

दिग्बली चन्द्रदशाफलम्

निशाकरे दिग्बलसंयुतेऽस्मिन् दिगन्तरादागतवस्तुचित्रम् ।
विद्यागमं भूपतिमित्रतां च स्वबन्धुपूज्यङ्गजवाजिसौख्यम् ।।१००।।

दिग्बली चन्द्रमा की दशा में जातक के पास देश-प्रदेशों से अनेक प्रकार की वस्तुयें, लाभ या भेंट उपहार के रूप में आते हैं। विद्या में सफलता उपाधि के रूप में प्राप्त होती है, शासकीय अधिकारियों से मित्रता होती है। वह बन्धु-बान्धवों से पूजनीय होता है तथा उसे वाहनसुख प्राप्त होता है।।१००।।

कालबली चन्द्रदशाफलम्

चन्द्रे तथा कालबलान्वितेऽस्मिन् तुरङ्गयानं कृषिगोमहीश्च ।
विद्यादिघोषं नखकेशदन्तचर्माम्बरालंकृतवाहनञ्च ।।१०१।।

कालबली चन्द्र की दशा प्रारम्भ होने पर जातक को वाहनसुख मिलता है। कृषि, गाय, भैंस, बैल तथा भूमि का सुख होता है। जातकी विद्या का उपयोग, प्रचार तथा प्रसार होता है। नख, केश, दाँत तथा चमड़े के बने हुए एवं मढ़े हुए अलंकार, वस्त्राभूषण तथा वाहन आदि प्राप्त होते हैं।।१०१।।

प्राचीन शब्दावली का आधुनिक सन्दर्भ में अर्थ— यह ग्रन्थ आज से लगभग छ: सौ से अधिक वर्ष पूर्व लिखा गया था; अत: उस समय की जो देश की परिस्थिति थी, तदनुसार वस्तुओं एवं पदार्थों के लाभ-हानि का उद्देश्य बदल चुका है; अत: ग्रन्थ के अध्ययनकर्ताओं को उन शब्दों के भावार्थ आधुनिक सन्दर्भों में ग्रहण करने चाहिये। यहाँ कुछ शब्दों के अर्थ का स्पष्टीकरण दिया जा रहा है—

राजकोप या राजभय— आज के समय में इसका अर्थ पुलिस, प्रशासन तथा वैधानिक परेशानियाँ समझना चाहिये और राजा का अर्थ सक्षम न्यायालम, प्रशासनिक अधिकारी, केन्द्रीय शासन, राज्यशासन या स्थानीय स्वशासन ग्रहण करना चाहिये। पुलिस भी राजा ही है। अत: इसके द्वारा जो बाधायें पहुँचे, उन्हें राजकोप या राजभय समझना चाहिये।

मान लीजिए कि किसी का भवन बन रहा है और ऐसे में राज्यशासन, न्यायालय या स्थानीय स्वशासन (नगरपालिका या नगर निगम) से उस निर्माणकार्य को रोक देने का कोई आदेश आ जाता है अथवा न्यायालय का स्थगन आदेश या निषेध आता है तो उसके कारण भवनस्वामी को जो आर्थिक क्षति होगी, वह राजकोप से धननाश होगा।

गोवाजिगजतुरगरथादि— 'गो' शब्द का अर्थ गाय तथा बैल दोनों होता है, भैंस को भी गाय के साथ ही गिना जाता है, इसलिए गोसुख का अर्थ आज के सन्दर्भ दूध-दही का पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना तथा वाहन उपलब्ध होना माना जायेगा। आजकल हाथी-घोड़ों का उपयोग नहीं होता और वे किसी विशेष अवसर पर ही दिखलाई पड़ते हैं, घोड़े के स्थान पर मोटरसाईकल तथा स्कूटर आदि का अर्थ ग्रहण करना चाहिए तथा हाथी के स्थान पर कार, ट्रक इत्यादि का अर्थ समझना चाहिए। रथ का अर्थ भी मोटर, बस इत्यादि के समानार्थी मानना श्रेयस्कर होगा।

नख— प्राणियों के नाखूनों का उपयोग प्राचीन काल से लेकर अब तक वस्तुओं के निर्माण में हो रहा है; अत: उनसे बनी वस्तुयें नखनिर्मित वस्तुयें समझनी चाहिए। सान्माइका-जैसी वस्तुयें इसी के अन्तर्गत आती हैं।

केश— प्राणियों के बालों का उपयोग ऊन के रूप में वस्त्र तथा कम्बल बनाकर अनादि काल से हो रहा है। कम्बल तथा रस्सियों के निर्माण में केशों का व्यवहार होता रहा है। आजकल इनका स्थान नाइलोन, टेरीन आदि से निर्मित कृत्रिम धागों ने ले लिया है। अत: इनको भी समझना चाहिए।

दन्त— दाँतों में हाथी दाँत प्रमुख है। प्राचीन काल में इसका प्रयोग बहुलता से होता था। चूडियाँ, पलंग, सिंहासन के निर्माण के साथ ही साथ इसका उपयोग डिबिया, तलवार, चाकू आदि की मूठ बनाने में भी होता रहा है। आजकल इन वस्तुओं के स्थान पर उच्च कोटि के प्लास्टिक, फायवर इत्यादि का अर्थ ग्रहण करना चाहिए।

चर्म— 'चर्म' शब्द का अर्थ गेंड़े की खाल से बनी हुई ढोल (जिनका उपयोग योद्धागण युद्ध में अपनी रक्षा के लिए करते थे) होता है। इसके अतिरिक्त जूते, मोजे, तथा वस्त्र भी चर्म से बनते रहे हैं। फर से निर्मित वस्तुयें भी चर्मनिर्मित ही हैं। पर्स, थैले आदि भी उसी के अन्तर्गत आते हैं।

अलंकारयुक्त वाहन— आधुनिक साज-सज्जा एवं सुविधाओं से युक्त वाहनों को इस श्रेणी में समझना चाहिए।

नैसर्गिकबलयुक्तचन्द्रदशाफलम्

निसर्गवीर्यान्वितचन्द्रदाये निसर्गतश्चापि करोति सौख्यम् ।
अयत्नतो वाहनदेशलाभं नृपालपूज्यं बहुवाहनं च ।।१०२।।

निसर्गबली चन्द्र की दशा में जातक को स्वत: ही सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं। विना प्रयत्न ही वाहनसुख प्राप्त होता रहता है एवं राजा से सम्मान तथा बहुत से वाहनों के उपयोग की अनुमति होती है।।१०२।।

पुनश्च दिग्बली चन्द्रदशाफलम्

चन्द्रो यदा दिग्बलवीर्ययुक्तः कृपाकटाक्षेण नरेश्वरस्य ।
समस्तभाग्यं समुपैति सौख्यं परोपकारं च मनोऽभिलाषम् ।।१०३।।

जब चन्द्रमा दिग्बल-वीर्य से युक्त हो तो जातक को राजा का विशेष अनुग्रह प्राप्त होता है। वह परोपकार के कार्य करता है, उसके भाग्य की वृद्धि होती है तथा उसे सुख प्राप्त होता है। मन की इच्छायें पूरी होती हैं।।१०३।।

क्रूरादिषष्ट्यंशगतचन्द्रदशाफलम्

क्रूरादिषष्ट्यंशसमन्वितस्य दाये शशाङ्कस्य बहुत्वदु:खम् ।
स्त्रीपुत्रनाशं क्षितिपालकोपं विद्याविवादं कलहं जनैश्च ।।१०४।।

क्रूरादि षष्ट्यंश में स्थित चन्द्र की दशा में जातक को बहुत प्रकार के दु:ख प्राप्त होते हैं। पत्नी तथा पुत्र को रोग या दुर्घटना के कारण कष्ट होता है, राजा का कोप होता

है, लोगों के साथ विद्यासम्बन्धी वाद-विवाद, कलह तथा झगड़े होते हैं॥१०४॥

मृद्वंशषष्ट्यंशस्थितचन्द्रदशाफलम्

मृद्वंशषष्ट्यंशसमन्वितस्य चन्द्रस्य दाये बहुपुत्रलाभम् ।
भृत्यार्थलाभं विजयं सुखं च कीर्तिं च विद्यां लभते विशेषात् ।।१०५।।

मृद्वंशादि षष्ट्यंश में स्थित चन्द्र की दशा में जातक को बहुत-से पुत्रों का लाभ होता है। सेवक एवं धन का लाभ होता है एवं विजय और सुख की प्राप्ति होती है तथा विद्या व कीर्त्ति का विशेष लाभ प्राप्त होता है॥१०५॥

पारावतांशगतचन्द्रदशाफलम्

पारावताद्यंशसमन्वितस्य चन्द्रस्य दाये महतीं च कीर्त्तिम् ।
विद्याविनोदं लभते च सौख्यं देवार्चनं पुण्यंजलाभिषेकम् ।।१०६।।

पारावतादि अंशक में स्थित चन्द्र की दशा में जातक को श्रेष्ठत्व तथा कीर्ति की प्राप्ति होती है, हँसते खेलते विद्यालाभ होता है और सुख की प्राप्ति होती है, देवपूजन तथा जलाभिषेक इत्यादि का पुण्य अर्जित होता है॥१०६॥

क्रूरद्रेष्काणस्थितचन्द्रदशाफलम्

क्रूरद्रेष्काणसंयुक्तश्चन्द्रो दिशति रोगिताम् ।
कार्ये पापसमायुक्तं गोब्राह्मणनिपीडनम् ।।१०७।।

क्रूर द्रेष्काणस्थित चन्द्र की दशा में व्यक्ति रोग से पीड़ित रहता है, वह पापयुक्त कार्य करता है तथा गो-ब्राह्मण को कष्ट पहुँचाता है॥१०७॥

चन्द्रदशाफलपद्धति

आदौ भावफलं प्रोक्तं स्थानजन्यं ततः परम् ।
अंशोद्भवफलं पश्चात् ग्रहजातफलं तथा ।।१०८।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणै ग्रहदीप्ताद्यवस्था-सूर्यचन्द्रदशाफलनिरूपणो
नाम त्रयोदशाऽध्यायः।।१३।।

सर्वप्रथम भावफल, तत्पश्चात् स्थान के अनुसार फल, उसके पश्चात् अंशानुसार एवं तत्पश्चात् ग्रहयोग के अनुसार फल कहना चाहिए॥१०८॥

इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ के तेरहवें अध्याय की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़कृत 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥१३॥

◆

अथ चतुर्दशोऽध्यायः

भौमबुधदशाफलविचाराध्यायः

तत्रादौ परमोच्चभौमदशाफलम्

अत्युच्चभूनन्दनदायकाले क्षेत्रार्थलाभं समरे जयञ्च ।
आधिक्यमन्वेति नरेशमानं सहोदरस्त्रीसुतवाग्विलासम् ।।१।।

यदि मंगल परमोच्चांश (मकर राशि के २८°) पर हो तो उसकी दशा में जातक को भूमि, खेत आदि का लाभ होता है। युद्ध (लड़ाई-झगड़ा-मुकदमा आदि) में जीत होती है। राजसत्ता, विशेष रूप से पुलिस अधिकारियों से अच्छे सम्बन्ध होते हैं। भाइयों, पत्नी एवं पुत्र का पारिवारिक सुख मिलता है। हास-परिहास तथा आमोद-प्रमोद में उसका समय व्यतीत होता है।।१।।

उच्चस्थभौमदशाफलम्

उच्चङ्गतस्य च दशासमये कुजस्य
प्राप्नोति राज्यमथवा क्षितिपाच्च वित्तम् ।
भूमध्यदारसुतबन्धुसमागमञ्च
यानादिरोहणविशेषविदेशयानम् ।।२।।

उच्चगत मंगल (मकर राशि सम्पूर्ण में कर्कनवांश छोड़कर) की दशा में जातक को शासन से आर्थिक सहयोग, अनुदान आदि प्राप्त होता है। भूमि, पुत्र तथा स्त्री से सुख प्राप्त होता है। बन्धु-बान्धवों से मिलने का अवसर प्राप्त होता है, वाहनादि का सुख तथा विशेषतः विदेशगमन का अवसर प्राप्त होता है।।२।।

उच्चारोहितभौमदशाफलम्

आरोहिणी भूमि सुतस्य सौख्यं दशा तनोत्यत्र नरेन्द्रपूज्यम् ।
प्रधानतां धैर्यमनोऽभिलाषं भाग्योत्तरं गोगजवाजिसङ्घम् ।।३।।

उच्चारोहित मंगल की दशा में जातक को सुखप्राप्ति, राजसुख की प्राप्ति, श्रेष्ठत्व की प्राप्ति होती है, धैर्य प्राप्त होता है, मनोभिलाषा पूर्ण होती है, भाग्यवृद्धि और गौ, हाथी, घोड़े (अर्थात् वाहन) का सुख प्राप्त होता है।।३।।

अवरोही कुजदशाफलम्

धरासुतस्याप्यवरोहकाले स्थानार्थनाशं कलिकोपदुःखम् ।
विदेशवासं स्वजनैर्विरोधं चौराग्निभूपैर्भयमेति कष्टम् ।।४।।

अवरोही मङ्गल की दशा में स्थान एवं धन का नाश, कलह, क्रोध, दुःख, परदेश में निवास, स्वजनों से विरोध, चोर, अग्नि, राजा से कष्ट प्राप्त होता है॥४॥

नीचराशिगतभौमदशाफलम्

नीचस्थितस्यापि धरासुतस्य दाये कुवृत्त्या स्वजनादिरक्षा ।
कुभोजनं गोगजवाजिनाशं स्वबन्धुनाशं नृपवह्निचौरैः ।।५।।

नीचस्थित भौम की दशा में जातक कुवृत्ति से अपने कुटुम्ब (स्वजनों) की रक्षा करता है, उसे कुभोजन प्राप्त होता है। गो, हाथी, घोड़े की हानि होती है तथा राजा, अग्नि एवं चोरों से हानि होती है॥५॥

मूलत्रिकोणस्थितकुजदशाफलम्

मूलत्रिकोणस्थितभौमदाये मिष्टान्नपानाम्बरभूषणाप्तिम् ।
पुराणधर्मश्रवणं मनोज्ञं भ्रात्रादिसौख्यं कृषिलाभमेति ।।६।।

मूलत्रिकोण राशि में स्थित मंगल की दशा में जातक को मिष्ठान्नपान, वस्त्राभूषणों की प्राप्ति, पुराण-धर्मादि का श्रवण, भाई-बन्धुओं का सौख्य तथा कृषिकार्य-व्यापार-वाणिज्य आदि से लाभ प्राप्त होता है॥६॥

स्वक्षेत्रीकुजदशाफलम्

स्वक्षेत्रगस्यापि धरासुतस्य दशाविपाके लभतेऽर्थभूमिम् ।
स्थानाधिपत्यं सुखवाहनं च नामद्वयं भ्रातृसुखं सुखाप्तिम् ।।७।।

स्वराशिगत भौम की दशा में जातक को धनलाभ तथा भूमिलाभ होता है, स्थान (या पद) का आधिपत्य प्राप्त होता है तथा वाहनसुख प्राप्त होता है, नामद्वय अर्थात् उपाधि की प्राप्ति होती है तथा भ्रातृसुख प्राप्त होता है॥७॥

अतिशत्रुराशिगतकुजदशाफलम्

धरासुतस्याप्यतिशत्रुराशिं गतस्य दाये कलहादि दुःखम् ।
नरेशकोपं स्वजनैर्विरोधं भूम्यर्थदारात्मजमित्ररोगम् ।।८।।

अतिशत्रु की राशि में स्थित कुज की दशा में जातक को कलह, झगड़े इत्यादि से दुःख प्राप्त होता है, राज्यकोप से भय उत्पन्न होता है तथा स्वजनों का विरोध प्राप्त होता है। भूमि तथा धन का लाभ प्राप्त होता है, स्त्री तथा पुत्र एवं मित्र को रोग हो जाने का भय रहता है॥८॥

शत्रुराशिगतमङ्गलदशाफलम्

भूनन्दनस्याप्यरिराशिगस्य दशाविपाके समरे च पीडाम् ।
शोकाग्निभूपालविषैः प्रमादं पीडातिकृच्छ्रादिगुदाक्षिरोगम् ।।९।।

शत्रुराशिस्थ मंगल की दशा में युद्ध (लड़ाई-झगड़े-मुकदमे आदि) की परेशानी उठानी पड़ती है। शोक प्राप्त होता है। अग्नि (बिजली आदि भी), राजा, विषाक्त पदार्थ से पीड़ा होती है। प्रमाद (असावधानी) से दुर्घटनादि हो जाती है। शरीर में भयंकर पीड़ा, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका, अतिसार, भगन्दर, बवासीर तथा नेत्ररोगों से कष्ट होता है।।९।।

मित्रराशिगतभौमदशाफलम्

मित्रर्क्षजस्यापि कुजस्य दाये मित्रत्वमायाति सपत्नसङ्घैः ।
चौराग्निमान्द्याक्षिविपादभूमिं कृषेर्विनाशं कलिकोपदुःखम् ।।१०।।

मित्रराशिगत मंगल की दशा में जातक की शत्रुओं से मित्रता हो जाती है। शत्रु शान्त हो जाते हैं। चोरभय, अग्निभय, दृष्टिमन्दता आदि नेत्ररोग, विपाद (पैरों में विबाई फटती है) कष्ट होता है। भूमि तथा कृषि की हानि होती है। कलिकोप से दुःख होता है (लड़ाई-झगड़ा-कलह-गाली-गलौज, फूट, वैमनस्य, मार-काट, घात लगाना, कपट करना, दम्भ, झूठ, लोभ आदि कलि के कोप होते हैं)।।१०।।

अधिमित्रराशिगतभौमदशाफलम्

कुजस्य दाये त्वतिमित्रराशिं गतस्य भूपालकृतार्थभूमिम् ।
वस्त्रादियज्ञादिविवाहदीक्षामुपैति देशान्तरलब्धभाग्यम् ।।११।।

अधिमित्र राशिगत मंगल की दशा में जातक राजा द्वारा भूमि से कृतार्थ किया जाता है (जीविकोपार्जन की वृत्ति के साथ-साथ उसके आवासादि की व्यवस्था शासन से होती है)। वस्त्रादि की प्राप्ति होती है। जातक यज्ञादि कर्म करता है तथा दीक्षा ग्रहण करता है। उसका भाग्य देशान्तर (अपने जन्म से दूरवर्ती स्थान) में उदित होता है।।११।।

समराशिस्थभौमदशाफलम्

धरासुतस्यापि समर्क्षगस्य गृहोपकार्यं त्वधनप्रमाणात् ।
स्त्रीपुत्रभृत्यात्मसहोदराणां शत्रुत्वमाप्नोति नृपाग्निपीडाम् ।।१२।।

सम राशिगत भौम की दशा में धनाभाव के कारण घर के उपकार्य (मरम्मत, सजावट तथा अन्य आवश्यक व्यवस्थायें) नहीं हो पाते हैं। अर्थाभाव से ही घर के सदस्य, पत्नी, पुत्र, सगे भाई आदि से मनमुटाव हो जाता है। राजपीड़ा तथा अग्निपीड़ा होती है। नौकर आदि को वेतन न मिलने से वे भी काम छोड़ कर चले जाते हैं।।१२।।

नीचसहितभौमफलम्

नीचग्रहेणापि समन्वितस्य धरासुतस्यापि मनोविकारम् ।
प्रेष्यत्ववृत्तिं परकीयमन्नं स्त्रीपुत्रनाशं नृपवह्निचौरैः ।।१३।।

नीच ग्रह से संयुक्त मंगल की दशा में मनोविकार (निराशा, खीझ, क्रोध, लोभ आदि) उत्पन्न होता है। दूसरे की छोटी-मोटी नौकरी करनी पड सकती है। पराया अन्न

खाना पड़ता है। स्त्री-पुत्रों को पीड़ा, उनकी हानि (रोग, दुर्घटना, अपहरण आदि से) तथा राजा, अग्नि एवं चोरों का भय होता है॥१३॥

उच्चसहितभौमदशाफलम्

किञ्चित्सुखं भोजनवस्त्रपानं कृच्छ्रेण वृत्तिं नृपपूजनञ्च ।
उच्चान्वितेनापि समन्वितस्य भौमस्य दाये सुतदारपीडा ।।१४।।

उच्च ग्रह से समन्वित मंगल की दशा में जातक को किञ्चित् सुख प्राप्त होता है। बड़ी कठिनाई से उसकी आजीविका चलती है; सम्पन्न लोगों से थोड़ा-बहुत सहयोग मिलता रहता है। उसके स्त्री-पुत्रादि को पीड़ा या इनके व्यवहार से जातक को पीड़ा होती है॥१४॥

पापान्वितभौमदशाफलम्

पापान्वितस्यापि कुजस्य दाये पापानि कर्माणि करोति नित्यम् ।
देवद्विजानाञ्च सहोदराणां कुमार्गवृत्त्या ह्यपकारणञ्च ।।१५।।

पापयुक्त भौम की दशा में जातक पापबुद्धि हो जाता है। वह नित्य ही पाप कर्मों में (झूठ, छल-कपट, हिंसा आदि में) लगा रहता है। वह इतना आचरणभ्रष्ट हो जाता है कि मन्दिरों, ब्राह्मणों एवं अपने सगे भाइयों का भी कुमार्ग वृत्ति से (चोरी, अपहरण, व्यभिचार आदि) अपकार (हानि) करता है॥१५॥

शुभान्वितभौमदशाफलम्

शुभान्वितस्यापि कुजस्य दाये किञ्चित्सुखं देहकृशाङ्गरोगम् ।
भूपैर्विवादं समरे जयञ्च विद्या विवादं परदेशवासम् ।।१६।।

शुभान्वित कुज की दशा में जातक को बहुत थोड़ा सुख प्राप्त होता है। उसका शरीर निर्बल तथा पतला हो जाता है। शरीर में रोग रहता है। राजनेताओं तथा उच्चाधिकारियों से सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। तू तू-मैं मैं होती है; परन्तु लड़ाई-झगड़े या विवाद आदि में जातक की जीत होती है। बौद्धिक वाद-विवाद होता है और अपना स्थान छोड़कर जातक को अन्यत्र दूर रहना पड़ता है॥१६॥

शुभेक्षितकुजदशाफलम्

शुभेक्षितधरासूनोर्दाये भूम्यर्थनाशनम् ।
तस्मिन् गोचरसंयुक्ते त्वत्यन्तं शोभनं भवेत् ।।१७।।

शुभ ग्रहों से दृष्ट मंगल की दशा में जातक को भूमि, प्लाट, मकान आदि बेचना पड़ता है। व्यापार-रोजगार में घाटा होता है एवं अन्य प्रकार से भी धन की हानि होती है। परन्तु यदि दशाकाल में मंगल गोचर में भ्रमण करता हुआ उसी ग्रह के साथ युति करे तो इस परिस्थिति में अत्यन्त शुभ फल प्रदान करता है॥१७॥

पापदृष्टभौमदशाफलम्

आरस्य पापग्रहवीक्षितस्य प्राप्तौ दशायां बहुदु:खकष्टे ।
जन: परित्यक्तकलत्रमित्रो देशान्तरस्थ: क्षितिपालकोपात् ।।१८।।

पापग्रह से दृष्ट मंगल की दशा आने पर जातक को बहुत दु:ख तथा कष्ट झेलना पड़ता है। उस जातक को उसके मित्र तथा पत्नी आदि छोड़ जाते हैं अथवा उसे स्वयं इन सबको छोड़कर जाना पड़ता है। किसी आपराधिक कार्य के कारण (झूठे या सच्चे आरोपों के लगने से) उसे घर से दूर रहना पड़ सकता है या फिर छिपकर ही रहना पड़ता है॥१८॥

केन्द्रगतभौमदशाफलम्

केन्द्रगतभौमदाये चौरविषाभ्यामुपैति दु:खानि ।
कलहो वा स विरोधं लभते देशान्तरं याति ।।१९।।

जब केन्द्र में स्थित भौम की दशा आती है तब जातक का समान चोरी हो जाता है या उसे कोई विष खिला देता है। इस तरह दु:ख भोगना पड़ता है। उससे दूसरे लोगों से कलह तथा विरोध होता है और जान के लाले पड़ जाते हैं, जिससे उसे घर छोड़कर बाहर रहना पड़ता है॥१९॥

चतुर्थराशिस्थितभौमदशाफलम्

चतुर्थराशिस्थितभौमदाये स्थानच्युतिं बन्धुविरोधितां वा ।
चौराग्निपीडां नृपते: सकाशाद् भीतिं परे दुर्गपदे प्रयाति ।।२०।।

चतुर्थ राशिस्थित मंगल की दशा में जातक जिस पद पर काम करता है, वह छूट जाता है। उसका अपने नातेदारों से विरोध हो जाता है। चोरी हो जाती है या आग लगने से धन की हानि होती है, पुलिस-प्रशासन आदि से परेशानी आती है। कभी-कभी उसके जीवन को गम्भीर संकट उत्पन्न हो जाता है। उसे अपनी सुरक्षा का भय सताता है; अत: भयभीत होने के कारण वह अपने आवास को छोड़कर दूसरा सुरक्षित आवास चुनता है और उसी में निवास करने लगता है॥२०॥

सप्तमस्थितभौमदशाफलम्

कलत्रयुक्तस्य कुजस्य दाये कलत्रहानिर्गुदमूत्रकृच्छ्रम् ।
अगोचरस्थस्य च तादृशैव तदन्यथा चेत्फलमन्यथैव ।।२१।।

सप्तम भाव में स्थित मंगल की दशा में जातक कीं पत्नी को पीड़ा होती है। उसे गुदकृच्छ्र (प्रवाहिका अतिसार, बवासीर भगन्दर आदि) तथा मूत्रकृच्छ्र का कष्ट रहता है। यह फल मंगल के विना गोचर के केवल दशाफल हैं। यदि गोचर में सप्तम का मंगल सञ्चार करे तो फल अलग होता है॥२१॥

दशमभावस्थभौमफलम्

कर्मस्थितस्यापि कुजस्य पाके कर्मादिवैकल्यमुपैति दुःखम् ।
उद्योगभङ्गं त्वपकीर्तिमेति विद्यासुतस्त्रीधनमानहानिम् ।।२२।।

दशम भावस्थित कुज की दशा में कर्मादि का वैकल्य होता है। काम अधूरे रह जाते हैं। समय पर काम नहीं हो पाता है। दुःख प्राप्त होता है। व्यापार में घाटा सहना पड़ता है। धन्धा या फैक्ट्री बन्द हो जाती है। बाजार में उसकी बदनामी होती है, साख गिर जाती है और कभी-कभी टाटपलट जाता है या दिवाला निकल जाता है। विद्या की हानि होती है; क्योंकि जो सीखा जाता है वह अभ्यास में न रहने से भूल जाता है। इसी प्रकार से पुत्रों की शिक्षा-दीक्षा भी नहीं हो पाती तथा पत्नी भी शारीरिक-मानसिक दृष्टि से कष्ट भोगती है॥२२॥

सूर्यसहितभौमदशाफलम्

अर्कगभौमदशायां दधाति शोकं स्त्रिया विरोधञ्च ।
राज्याच्च्युतिं विपक्षाद् देशाद् देशान्तरं याति ।।२३।।

सूर्य के सहित भौम के होने पर उसकी दशा में जातक को शोक-सन्ताप प्राप्त हो जाता है। पत्नी से विरोध हो जाता है; अतः वह या तो रूठकर पीहर (मायके) चली जाती है अथवा दोनों में घटस्फोट (तलाक) हो जाता है। उसे पद एवं अधिकार से वञ्चित होना पड़ता है। उसके शत्रु उसे चैन से नहीं रहने देते; अतः उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकना पड़ता है॥२३॥

धनस्थभौमदशाफलम्

वित्तगभौमदशायां सम्प्राप्तौ तस्य वृद्धिमुपयाति ।
स्वकुलाढ्यत्वं लभते नृपहृतचित्तं मुखाक्षिरोगञ्च ।।२४।।

धनस्थानस्थित मंगल की दशा आने पर उस जातक की उन्नति होती है। वह अपने वंश एवं कुल में सम्पन्न होता है तथा प्रतिष्ठितों में उसकी गणना होती है। वह अपने व्यवहार से शासक या उच्चाधिकारी को प्रसन्न रखता है; अतः उसका मुँनलगा हो जाता है; फलस्वरूप वह अपने परिवार की उन्नति कर लेता है। वह मुखरोग तथा नेत्ररोगों से पीड़ित होता है॥२४॥

तृतीयस्थभौमदशाफलम्

भ्रातृस्थानगतश्च सौख्यफलदो भूनन्दनोऽरातिहा
धैर्यं वित्तसुतार्थदारसहजैः सङ्गं नृपात्पूज्यताम् ।
पुत्रस्थानगतस्य पुत्रमरणं बुद्धिभ्रमं जाड्यतां
शत्रुक्षेत्रगतस्य भूमिसहजैर्दुःखं महारोगभाक् ।।२५।।

तृतीय भावस्थ मंगल की दशा शत्रुओं को नष्ट करने वाली होती है। उस समय जातक धैर्यवान होता है। धन की सम्पन्नता बढ़ती है। पराक्रम से कार्य बनते हैं। उसे स्त्री-पुत्रादि तथा भाइयों का सुख मिलता है। राज्यपक्ष से भी सम्मान प्राप्त होता है। पुत्र-स्थानगत (पञ्चम भावगत) मंगल की दशा में जातक को सन्तति-हानि होती है। बुद्धि में भ्रम रहता है। जड़ता रहती है। जातक भूलें करता है और पछताता है। शत्रुक्षेत्री मंगल से भूमिहानि के साथ भाइयों से कष्ट होता है तथा किसी गम्भीर बीमारी से जातक ग्रसित होता है॥२५॥

पुत्रस्थानगतभौमदशाविशेषफलम्

पञ्चमस्थधरासूनोर्दायः कीर्त्तिविवेकताम् ।
नेत्ररोगं त्वर्थनाशं दद्यात्कलहमेव वा ॥२६॥

पञ्चम भावगत मङ्गल की दशा में जातक की कीर्त्ति फैलती है, कार्य करने या न करने की समझ आती है, नेत्ररोग होता है, धननाश की आशंका रहती है अथवा घर में कलह होने की आशंका रहती है॥२६॥

अष्टमभावस्थितभौमदशाफलम्

मरणपदस्थो भौमः करोति दुःखं महद्भयं पाके ।
स्फोटकमन्नविरोधं स्थानविनाशं विदेशयानञ्च ॥२७॥

अष्टम भाव में स्थित भौम की दशा बहुत कष्टदायक होती है। उसमें जातक सदैव भयभीत रहता है। उसके शरीर में फोड़े-फुंसी होते हैं। उसे तन्त्रिकातन्त्र की दुर्बलता के कारण अन्न से विरोध रहता है अर्थात् भोजन के प्रति रुचि नहीं होती। इस लक्षण को आजकल के चिकित्सक नाडीजन्य अरुचि कहते हैं। स्थानभ्रष्ट होकर उसे दूर-दूर भटकना पड़ता है॥२७॥

नवमस्थभौमफलम्

नवमस्थधरासूनोः दशापाकः पदच्युतिम् ।
गुरूणाञ्च तथा कष्टं तपोविघ्नं महद्भयम् ॥२८॥

नवमस्थ भौम की दशा लगने पर जातक की पदच्युति होती है। वह जिस पद पर होता है, वह उसके अधिकार से निकल जाता है। उसके सम्मान में कमी आ जाती है। उसके गुरुजनों (माता, पिता, गुरु तथा वृद्धजनों) को कष्ट होता है। उसकी तपस्या में विघ्न आता है और महान् भय उत्पन्न होता है। आजकल जिसे खोजकार्य या अनुसन्धानकार्य कहते हैं, वह भी तपस्या ही समझा जाना चाहिये॥२८॥

लाभस्थभौमदशाफलम्

आयस्थभौमदायः करोति राज्यार्थभूपसन्मानम् ।
समरे जयप्रतापं वागुपकारं मनोजवं कीर्तिम् ।।२९।।

एकादश भावस्थित मंगल की दशा अधिकार तथा पद में उन्नति करती है। भौतिक सफलता प्राप्त होती है। जातक अपने ऊपर खतरनाक जिम्मेवारियाँ ले लेता है। कारोबार में बलप्रयोग करना पड़ता है। कार्य में सफलता मिलती है। नियोक्ता या वरिष्ठ अधिकारियों से प्रशंसा प्राप्त होती है। युद्ध तथा मुकदमों में सफलता मिलती है। उसके प्रतिस्पर्धी तथा प्रतिद्वन्द्वी परास्त हो जाते हैं। चारो ओर से प्रशंसा के स्वर उठते हैं। इस समय में जातक कोमल तथा कल्याणप्रद वचन बोलता है। परोपकार करता है। उसकी अनुशंसा पर लोगों के काम होने लगते हैं एवं वह बड़े-बड़े अधिकारियों से इच्छित कार्य करा लेने में समर्थ होता है। उसके कहने से लोगों को नौकरी, रोजगार, ठेका आदि मिल जाते हैं। गरीब एवं जरूरतमन्द लोगों को शासन से आर्थिक सहायतायें भी उसके कहने से मिलती हैं। यही वागुपकार है। उसकी ख्याति मन के वेग-सदृश फैलती है।।२९।।

व्ययगतभौमफलम्

व्ययगतभौमदशायां प्राप्तौ धनहृतिं नृपाद्भीतिम् ।
स्थानसुतदारनाशं भ्रातृणामन्यदेशवासञ्च ।।३०।।

एकादश भाव में स्थित मंगल की दशा में जातक को व्यापार में घाटा होता है। कर आदि में आशातीत वृद्धि होने से व्यापार तथा बिक्री कम हो जाती है। उत्पादन की लागत अधिक आती है। नौकरीपेशा लोगों का भी खर्च बढ़ा-चढ़ा रहता है। बचत बिल्कुल नहीं होती। मकान का किराया चढ़ जाने से मकान खाली करने की स्थिति आ जाती है। पत्नी तथा बच्चे बीमार रहते हैं। पुत्रों की पढ़ाई चौपट हो जाती है। सहोदर भाई बँटवारा कर अलग घर या अलग स्थान में रहने के लिये चले जाते हैं।।३७।।

उच्चनवांशगतभौमफलम्

उच्चांशसंयुक्तधराजकाले मनोऽभिलाषं विजयं सुखञ्च ।
प्रचण्डदासीगमनं नृपस्य प्रधानतां याति सुधर्मकीर्तिम् ।।३१।।

मंगल जब किसी भी राशि में मकर के नवांश में हो तब उच्चांश में होगा। उच्चनवांशस्थित मंगल की दशा में जातक को मन की अभिलाषायें पूरी होती हैं। उसका समाज तथा शासन वर्ग में वर्चस्व स्थापित होता है। उसका समय सुख-चैन से कटता है। इस दशा में पुलिस एवं प्रशासन में दबदबा होने से जनता ड़रती है; अतः यदि व्यक्ति सम्पन्न या राजनीति में काम करने वाला हुआ तो वह स्त्रियों के जाल में फँसता है, किसी प्रचण्ड स्वभाव वाली नौकरानी आदि से उसके शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं। वह किसी बड़े नेता या पदाधिकारी का मुँहलगा हो जाता है और वह नेता उसकी बात

को वरीयता देता है। प्रायः इस दशा में अच्छी राजनैतिक पृष्ठभूमि वाले लोग इतने प्रभावशाली हो जाते हैं कि उनके कहने से संसद तथा विधानसभाओं के टिकिट भी मिलते हैं। साधारण कोटा-पर्मिटों की तो बात ही क्या? उसके अच्छे कार्यों की ख्याति चतुर्दिक प्रसारित होती है।।३१।।

नीचनवांशगतभौमदशाफलम्

नीचांशभौमदाये नीचयुते कर्मवैकल्यम् ।
धनहानिभूपदण्डः शिश्नोदरपरायणोऽशीलः ।।३२।।

नीच नवांशगत भौम (किसी भी राशि में कर्क का नवांश हो और उसमें मंगल हो तो वह नीचनवांश कहा जायेगा) की दशा में जातक बेरोजगार होता है। उसका कोई भी कार्य समय पर पूरा नहीं होता और अधिकांश कार्य निलम्बित या आधे-अधूरे रहते हैं। वह बेकार बैठा रहता है या निठल्ला घूमता रहता है। वह यदि नौकरी या मजदूरी करता है तो उसका वेतन कट जाता है। यदि व्यापार करता है तो घाटा उठाता है। उसे शासन के आदेश से या न्यायालयीय आदेश से अर्थदण्ड भरना पड़ता है। इस अवधि में वह शिश्नोदरपरायण होकर जीवनयापन करता है। वह चरित्रहीन भी हो जाता है। इसका अर्थ है कि इस समय व्यक्ति कामेच्छा की पूर्ति तथा क्षुधापूर्त्ति—इन दो आवश्यकताओं को प्रमुखता देता हुआ जीवन बिताता है। यह दो सुविधायें जहाँ उसे प्राप्त होती हैं, वहीं वह रमा रहता है। उसके लिये ये दो ही परम पुरुषार्थ होते हैं और शेष कर्तव्यों एवं दायित्वों की ओर से वह आँखें मूंद लेता है। वह भोजन में भक्ष्याभक्ष्य में भेद नहीं करता तथा कामेच्छा की पूर्ति में गम्य-अगम्य का ध्यान नहीं रखता। जिन सैनिकों या पुलिसकर्मियों की कुण्डली में भौम नीचनवांश में होता है, उस समय यदि मंगल की दशा चल रही हो तो वे अपने अधिकारियों की आज्ञा तथा कानून की अवहेलना कर युद्धादि के समय लूट-खसोट तथा बलात्कार में लग जाया करते हैं।

शिश्नोदरी व्यक्ति— यदि निष्पक्षता से विचार किया जाय तो ऐसी शिक्षा, जो भोगवाद को ही प्रधानता देती हो, व्यक्ति को शिश्नोदरपरायणशील ही बनाती है। इन दो आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही देश के शत्रुओं से सांठगांठ की जा रही है। इस देश में राक्षसों (जिन्हें आजकल आतंकवादी कहा जाता है) को प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग देने वाले राजनेता, अधिकारी, पत्रकार तथा जनसामान्य भी 'शिश्नोदरी' वृत्ति के शिकार हैं। आज जो बड़े-बड़े भ्रष्टाचार के काण्ड समाचार पत्रों की चमकियों में दिखायी पड़ते हैं, उसके मूल में ये शिश्नोदरपरायण लोग ही हैं।

भौमदशायां फले तारतम्यमाह

भौमदशायामादौ लभते विविधार्थमानहानिञ्च ।
मध्येऽग्निभूपचौरैर्भीतिं तत्र विनिर्दिशेन्मतिमान् ।।३३।।

मंगल की दशा के आरम्भ में विविध प्रकार के अर्थलाभ होते हैं और मान हानि होती है। दशा के मध्य में अग्नि से भय होता है, राजा के कोप का भय रहता है तथा घर में चोरी हो जाने की आशंका रहती है— ऐसा बुद्धिमान लोगों को निर्देश करना चाहिए।।३३।।

विविधार्थ— विविधार्थ से तात्पर्य अनेक प्रकार के धन से होता है। यहाँ पर धन का अर्थ केवल रुपये-पैसों से ही नहीं लगाना चाहिए; अपितु स्वर्णादि लाभ, वस्तुलाभ या पशुधन का लाभ भी मानना चाहिए; क्योंकि ये भी तो एक प्रकार के धन ही हैं।

पुनश्च भौमदशायां फले तारतम्यमाह

अन्त्ये भ्रातृवियोगं सुतदाराग्निगुल्ममूत्रादिम् ।
भौमेऽप्येवं न भवेद्गोचरयुक्ते विशेषतः कथयेत् ।।३४।।

मंगल की दशा के अन्त्य (अन्तिम) भाग में भाई से वियोग होता है, पुत्र तथा पत्नी आदि को गुल्मरोग और मूत्रादि रोगों से कष्ट होता है। यदि गोचर में भी भौम उसी दशा में हो तो घटित होने में वैशिष्ट्य रहता है। अन्यथा पूर्वोक्त कहे गए फल पूर्ण रूप से घटित नहीं होते, ऐसा जानना चाहिए।।३४।।

विशेष— यहाँ पर सर्वार्थचिन्तामणिकार ने विंशोत्तरी दशाफल के साथ-साथ गोचर का भी उल्लेख किया है। उनके अनुसार ग्रहों का विंशोत्तरी दशाफल जो कहा गया है, उसमें पूर्णता तभी प्राप्त होगी, जबकि उक्त ग्रह गोचर में भी उसी स्थिति में भ्रमण कर रहा हो अर्थात् यदि विंशोत्तरी में ग्रह की दशा अशुभ है, किन्तु उस समय ग्रह शुभ गोचर में स्थित हो तो कहे गए फल में विशेषता प्राप्त नहीं होगी।

स्थानबलयुक्तभौमदशाफलम्

भौमस्य संस्थानबलान्वितस्य दशाविपाकेऽर्थकलत्रसौख्यम् ।
स्थानादिलाभं सुखकीर्त्तिशौर्यमुद्योगसिद्धिं त्वनयादुपैति ।।३५।।

स्थानबल से युक्त मंगल की दशा में जातक को धन तथा स्त्री का सुख प्राप्त होता है, स्थान इत्यादि का लाभ प्राप्त होता है, सुख की प्राप्ति होती है। कीर्त्ति तथा शौर्य में वृद्धि होती है। उद्योग-सिद्धि (अर्थात् कार्य में सफलता) अन्याय से प्राप्त होती है।।३५।।

उद्योगसिद्धिं त्वनयादुपैति— कार्य तथा उसकी सफलता प्राप्त करने का तरीका दोनों ही दो प्रकार के होते हैं— (१) न्यायपूर्वक (२) अन्यायपूर्वक। पूर्वोक्त श्लोक-वर्णित फल के अन्तिम चरण में 'नय' शब्द आया है। यह शब्द नैतिक प्रयासों का संकेतक है। कार्यसिद्धि हेतु व्यक्ति हर प्रकार का तरीका अपनाना चाहता है, चाहे वह सही हो या गलत। कार्य को विना रिश्वत, घूससोरी, डराये-धमकाये पूर्ण कर लेना ही 'नय' है। दो नम्बर द्वारा किया गया कार्य 'अनय' के अन्तर्गत आता है अर्थात् उसे अन्याय माना जाता है।

स्थानबलहीनभौमदशाफलम्

स्थानवीर्यविहीनस्तु कुरुते स्वपदच्युतिम् ।
कुजः कुसीदवृत्त्या च करोति ध्रुवजीवनम् ।।३६।।

स्थानबल से हीन मंगल की दशा में स्वपद अर्थात् अपने अधिकारस्थान से हाथ धोना पड़ता है। कुसीद वृत्ति द्वारा वह व्यक्ति अपने जीवन को स्थिर करता है अर्थात् अपनी आजीविका चलाता है।।३६।।

कुसीद वृत्ति— कुसीद वृत्ति से तात्पर्य सूद पर धन देने की वृत्ति से है। किसी को निश्चित व्याज पर निश्चित समय के लिए धन देना कुसीद वृत्ति कहलाता है। दिये गये धन का सवाया लेना इत्यादि कुसीदवृत्ति है। कुसीदवृत्ति से तात्पर्य बैंक में कार्यरत कर्मचारियों द्वारा किया गया कार्य भी होता है। फाइनेंस कम्पनी इत्यादि खोलना भी कुसीद वृत्ति में गिने जाते हैं। गहने इत्यादि गिरवी रखना भी कुसीद वृत्ति है।

दिग्बली भौमदशाफलम्

दिग्वीर्ययुक्तस्य कुजस्य दाये नृपात्सुलब्धार्थरणप्रतापम् ।
गोभूहिरण्याम्बरयानलाभं दिगन्तराक्रान्तयशःप्रतापम् ।।३७।।

दिग्बल से युक्त मंगल की दशा में जातक को राजा से धन प्राप्त होता है, रण में शौर्य-प्रदर्शन, गो, भूमि, स्वर्ण, वस्त्र, वाहन इत्यादि का लाभ होता है तथा यश के प्रभाव से दिगन्त रहते हैं।।३७।।

कालबली भौमदशाफलम्

कालवीर्ययुतभौमदशायां काम्यलब्धिरतिसौख्यमुपैति ।
पट्टवस्त्रमणिमौक्तिकलाभं चित्रवस्त्रकृषिगोगजलाभम् ।।३८।।

कालबल से युक्त भौम की दशा में जातक को मनोरथसिद्धि एवं अति सुख प्राप्त होता है, रेशमी वस्त्र, मणि-मुक्ता इत्यादि का लाभ प्राप्त होता है तथा रंग-बिरंगे वस्त्र, कृषिलाभ तथा गो-गजलाभ अर्थात् वाहनसुख प्राप्त होता है।।३८।।

निसर्गबली कुजदशाफलम्

निसर्गवीर्यान्वितभौमदाये कृपाकटाक्षेण महीपतीनाम् ।
समस्तभाग्यात्मजमित्रबन्धूगोभूमिभूषाम्बरदेहसौख्यम् ।।३९।।

निसर्गबल से युक्त भौम की दशा में जातक को राजा की कृपा से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। पुत्र, मित्र, गौ, भूमि, वस्त्राभूषण तथा देहसुख की प्राप्ति होती है।।३९।।

निसर्गबलहीनकुजदशाफलम्

निसर्गतः स्थानधनाक्षिनाशं पित्ताधिकं कुत्सितभोजनञ्च ।
कुजस्य दाये कुनखी पितृघ्नः सहोदराणामपि देहपीडा ।।४०।।

निसर्गबलहीन भौम की दशा में स्थान एवं धन का नाश, नेत्रविकार, पित्ताधिक्य, कुत्सित भोजन की प्राप्ति, कुनखी, पितृपक्षघाती तथा भाइयों के शरीरों में पीड़ाकारक होता है।।४०।।

वक्री भौमदशाफलम्

वक्रान्वितस्य भौमस्य दशाकाले महद्भयम् ।
चौराग्निसर्पपीडां च वनवासं पदच्युतिम् ।।४१।।

वक्री मंगल की दशा में अधिक भय होता है, चोर, अग्नि तथा सर्पपीड़ा होती है, वनवास होता है तथा पद से निलम्बन हो जाता है।।४१।।

पुनश्च दिगबलयुतकुजदशाफलम्

दिग्वीर्ययुक्तस्य कुजस्य दाये कृपाकटाक्षेण महीपतीनाम् ।
समस्तभाग्यात्मजमित्रबन्धूगोभूमिभूषाम्बरदेहसौख्यम् ।।४२।।

दिग्बल से युक्त मंगल की दशा में राजा की कृपा से समस्त प्रकार के ऐश्वर्यों की प्राप्ति तथा पुत्र, मित्र, बन्धु, गो, भूमि, वस्त्राभूषण एवं देहसुख प्राप्त होता है।।४२।।

क्रूरषष्ट्यंशगतचन्द्रदशाफलम्

क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्तभौमदायेऽतिपीडनम् ।
कारागृहप्रवेशश्च समस्तविभवक्षयम् ।।४३।।

क्रूर षष्ट्यंश में स्थित मंगल की दशा में अतिपीड़ा होती है, कारागृह-प्रवेश अर्थात् जेल जाने की स्थिति बन जाती है तथा समस्त प्रकार के ऐश्वर्य, भोग-विलास इत्यादि की वस्तुयें, वाहन इत्यादि का नाश हो जाता है।।४३।।

सौम्यषष्ट्यंशगतमङ्गलफलम्

सौम्यषष्ट्यंशसंयुक्तभौमदाये महत्सुखम् ।
भूम्यर्थदारसम्पत्तिधनवाहनभोजनम् ।।४४।।

सौम्य षष्ट्यंशगत मंगल की दशा में जातक को अधिक सुख की प्राप्ति होती है। भूमिलाभ होता है। अर्थ की प्राप्ति अर्थात् धनलाभ होता है, सम्पत्ति की प्राप्ति होती है (सम्पत्ति प्राप्ति से तात्पर्य यह है कि या तो व्यक्ति सम्पत्ति क्रय करता है अथवा किसी के द्वारा उसे सम्पत्ति की प्राप्ति होती है), धन-प्राप्ति होती है, वाहन प्राप्त होता है तथा सुमधुर भोजन प्राप्त होता है।।४४।।

पाशवतांशगतभौमदशाफलम्

पारावतादिसंयुक्तभौमदाये शुभं भवेत् ।
विवाहदीक्षायज्ञं च सर्वेषामुपकारकम् ।।४५।।

पारावतादि अंशक में स्थित मंगल की दशा में जातक को शुभ फलों की प्राप्ति होती है। जातक का विवाह होता है, उसे दीक्षादि की प्राप्ति होती है तथा दूसरों के ऊपर उपकार करने का अवसर प्राप्त होता है॥४५॥

क्रूरद्रेष्काणगतभौमदशाफलम्

क्रूरद्रेष्काणसंयुक्तकुजदाये मनोव्यथा ।
निगडं विषभीतिञ्च पाशबन्धनमेव च ।।४६।।

क्रूर द्रेष्काण में स्थित मंगल की दशा में जातक को मन व्यथित रहता (अर्थात् मन में चिन्ता लगी रहती है) है। निगड अर्थात् मुस्कें बँधने का भय रहता है, विष का भय रहता है तथा पाश में बँधने का भय लगा रहता है॥४६॥

उच्चराशिगतभौमदशाफलम्

उच्चस्थोऽपि धरासूनुः नीचांशकसमन्वितः ।
तत्पाके भ्रातृमरणं नृपवह्निविषाद् भयम् ।।४७।।

उच्च राशि में स्थित मंगल यदि अपने नीचांशक में स्थित हो तो उसकी दशा में भाइयों का मरण (अथवा मृत्युतुल्य कष्ट), राजा से भय, अग्नि से हानि की आशंका रहती है तथा विषभय बना रहता है॥४७॥

नीचोच्चांशकस्थितभौमदशाफलम्

भूमिपुत्रोऽपि नीचस्थः स्वोच्चभागसमन्वितः ।
तत्पाके भूमिदारार्थपुत्रमित्रविवर्द्धनम् ।।४८।।

नीच राशि में स्थित मंगल यदि उच्चांशक में स्थित हो तो उसकी दशा में भूमिलाभ, पत्नीसुख, अर्थप्राप्ति, पुत्र तथा मित्रों की संख्या में वृद्धि होती है॥४८॥

इति कुजदशाफलम्

◆

अथ बुधदशाफलम्

अत्युच्चसोमात्मजदायकाले धनान्वितः ख्यातिमुपैति सौख्यम् ।
ज्ञानञ्च कीर्तिं जननायकत्वं स्त्रीपुत्रभूम्यर्थमहोत्सवञ्च ।।४९।।

परमोच्च बुध (कन्या राशि के पन्द्रह अंश में) की दशा में जातक की आर्थिक समृद्धि बढ़ती है, उसकी ख्याति चारो ओर फैलती है। सुख-सुविधा के साज-सामान जुटते हैं। उसके ज्ञान तथा प्रतिभा की धाक जम जाती है। वह लोकप्रियता के शिखर पर विराजमान होता है। वह व्यक्ति यदि राजनीति के क्षेत्र में काम करता हो तो इस दशा में वह उच्च कोटि का नेता बनता है। घर में मंगलकार्य सम्पन्न होते हैं एवं जातक स्त्री-पुत्रों, भूमि, भवन, सम्पत्ति तथा अन्य सामग्री से सम्पन्न होता है॥४९॥

उच्चस्थबुधदशाफलम्

उच्चस्थितस्यापि शशाङ्कसूनोर्दशा महत्त्वं कुरुतेऽर्थसौख्यम् ।
देहस्य पुष्टिं धनधान्यपुत्रगोवाजिमत्तेभमृदङ्गनादम् ।।५०।।

उच्च राशिगत बुध की दशा में जातक की प्रतिष्ठा बढ़ती है। उसे अर्थ का सुख प्राप्त होता है। शरीर पुष्ट तथा निरोग रहता है। धन-धान्य की कमी नहीं रहती है। दुधारु पशुओं तथा सवारी का सुख प्राप्त होता है। घर में मृदङ्गनाद होता है (आजकल इसका स्थान इलेट्रोनिक्स के संगीत उपकरणों ने ले लिया है)।।५०।।

आरोही बुधदशाफलम्

आरोह्णिी सौम्यदशा प्रपन्ना यज्ञोत्सवं गोवृषवाजिसङ्गम् ।
मृद्वन्नभूषाम्बरयानलाभं वाणिज्यभूम्यर्थपरोपकारम् ।।५१।।

आरोही बुध की दशा आने पर जातक यज्ञोत्सवों में भाग लेता है। उसके पास दूध, घी की प्रचुरता रहती है। वाहन का सुख मिलता है। अच्छा पौष्टिक भोजन मिलता है। व्यापार अच्छा चलता है। शासकीय सेवा में वेतनवृद्धि हो जाती है और जातक परोपकार में लगा रहता है।।५१।।

अवरोहिबुधदशाफलम्

शशाङ्कसूनोस्त्ववरोहिणी या दशा महत्कष्टतरं च दुःखम् ।
विज्ञानहीनं परदारसङ्गं नृपाग्निचौरैर्भयमत्र कष्टम् ।।५२।।

बुध सिंह राशि में आरोही (उच्चाभिलाषी) होता है तथा कुम्भ में अवरोही (नीचाभिलाषी) होता है। अवरोही बुध की दशा में जातक को घोर कष्ट होता है। उसकी मति भ्रष्ट हो जाती है। वह बुरी स्त्रियों के चक्कर में फँस जाता है। उसे राजा, अग्नि, चोर आदि से भंय तथा कष्ट होता है।।५२।।

नीचस्थबुधदशाफलम्

नीचस्थचन्द्रात्मजदायकाले ज्ञानेन हीनं स्वजनैर्वियुक्तम् ।
पदच्युतिं बन्धुविरोधिताञ्च विदेशयानं वनवासदुःखम् ।।५३।।

नीच राशिगत बुध की दशा में जातक अपने परिवारादि से वियुक्त होकर दूर रहता है। उसकी बुद्धि ठीक से काम नहीं करती। वह 'किङ्कर्तव्यविमूढ' हो जाता है। वह जिस पद पर होता है, उससे पृथक् हो जाता है। उसका अपने बन्धुओं से विरोध होता है और परदेश में रहना पड़ता है। वह वनवासजन्य दुःख भोगता है अर्थात् उसे ऐसे स्थान पर रहना पड़ता है, जो दैनिक जीवन की सुविधाओं से रहित, एकान्त तथा खतरनाक होता है।।५३।।

मूलत्रिकोणस्थबुधफलम्

मूलत्रिकोणान्वितसौम्यदाये राज्यं महत्सौख्यकरञ्च कीर्तिम् ।
विद्याविलासं निगमार्तिशीलं पुराणधर्मश्रवणादिपूतः ।।५४।।

मूलत्रिकोणस्थ बुध (कन्या के १५° से २०° तक) की दशा में जातक को उच्च पद एवं अधिकारादि की प्राप्ति होती है। उसकी कीर्ति बढ़ती है। जीवन सुखी रहता है। स्वाध्याय में मन लगता है। वेदों एवं पुराणों का अभ्यास चलता है एवं आचरण से वह पवित्र होता है।।५४।।

स्वक्षेत्रगतबुधदशाफलम्

स्वक्षेत्रगस्यापि शशाङ्कसूनोः प्राप्तौ दशायां धनधान्यसम्पत् ।
वाणिज्यगोभूमिसुतार्थदारमृद्वन्नपानाम्बरभूषणाप्तिः ।।५५।।

स्वक्षेत्री बुध की दशा में जातक को धन-धान्य तथा सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। व्यापार में सफलता मिलती है। खेती से लाभ मिलता है। पुत्र, पत्नी तथा परिवार का सुख मिलता है। उत्तम गुणकारी, पौष्टिक तथा स्वास्थ्यवर्धक भोजन मिलता है। आभूषणों तथा उत्तम वस्त्राभूषणों की प्राप्ति होती है।।५५।।

शत्रुक्षेत्री बुधफलम्

शशाङ्कसूनोस्त्वरिराशिगस्य शत्रोर्भयं भूपतिकोपजातम् ।
विद्याविहीनं कुलहीनसेवां कुभोजनं दारसुतार्थनाशम् ।।५६।।

शत्रु राशिगत बुध की दशा में शत्रु से भय होता है तथा किसी उच्चाधिकारी से सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। ऐसे समय में जातक विद्यारहित होकर विचरण करता है। उसका पढ़ने-लिखने तथा स्वाध्याय में बिलकुल मन नहीं लगता है। वह नीच और अकुलीन मनुष्यों की सेवा तथा चाटुकारिता में लगा रहता है। उसे अपवित्र, अपौष्टिक, अस्वास्थ्यकर, असात्त्विक भोजन प्राप्त होता है। पत्नी-पुत्र रोग, शोक तथा दीनता से पीड़ित रहते हैं और उनको हानि पहुँचती है। कभी-कभी उनकी मृत्यु भी हो जाया करती है।।५६।।

अधिशत्रुराशिगतबुधफलम्

शशाङ्कसूनोरतिशत्रुराशिं गतस्य पाके विपदञ्च दुःखम् ।
उद्योगभङ्गं स्वजनैर्विरोधं यज्ञादिविघ्नं शुभकर्मनाशम् ।।५७।।

जब पञ्चधा मैत्री के अनुसार बुध अधिशत्रु राशि में हो, तब जातक को अनेक विपत्तियों एवं दुःखों का सामना करना पड़ता है। परिवार के सदस्यों में रोग, मुकदमेबाजी आदि होती है। विवाहादि हेतु तय किये गये सम्बन्ध टूट जाते हैं। बना बनाया काम, उद्योग-धन्धा चौपट हो जाता है। योजनायें असफल हो जाती हैं। अपने लोग शत्रु हो जाते हैं। कोई भी शुभ मंगलकार्य, विवाह, यज्ञ, कथा आदि का आयोजन हो तो उसमें विघ्न

आते हैं। विवाह में किसी निकटसम्बन्धी की मृत्यु या अन्य दुर्घटना हो जाना— यह सब यज्ञादि के विघ्न कहलाते हैं। शुभ कर्म नष्ट हो जाता है, उसके स्थान पर अपयश मिलता है। इस दशा में कई बार घर पर आई हुई बारात लौट जाती है।।५७।।

मित्रक्षेत्री बुधदशाफलम्

मित्रक्षेत्रदशाया शशाङ्कसूनोर्धनायतिः सौख्यम् ।
नामद्वयसम्प्राप्तिः स्वनामाङ्कितगद्यपद्यानि ।।५८।।

मित्रक्षेत्री बुध की दशा में अनेक स्रोतों से धन आता है। सुख की वृद्धि होती है। इस दशा में उसे शैक्षणिक अर्हता प्राप्ति के प्रतिफल में किसी विद्या प्रतिष्ठान द्वारा उपाधि प्रदान की जाती है। ऐसी उपाधि के साथ उसका नाम एवं उपलब्ध अर्हता तथा विषय आदि की जानकारी गद्य, पद्य या ललित सुवाच्य, सुस्पष्ट अक्षरों में होती है। कई व्यक्तियों को विश्वविद्यालय मानद उपाधि प्रदान करते हैं। राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा भारतरत्न, भारतभूषण तथा अन्य अनेक अलङ्करण एवं प्रशंसा-पत्र दिये जाते हैं। वे सब नामद्वय-सम्प्राप्ति के अन्तर्गत ही होते हैं।।५८।।

अधिमित्रक्षेत्री बुधफलम्

अतिमित्रराशिगस्य दशां प्रपन्नो महत्त्वतां याति ।
भूपतिमैत्रं सौख्यं धनसुतदारांश्च बन्धुसन्मानम् ।।५९।।

अधिमित्र राशिगत बुध की दशा में जातक का महत्त्व बढ़ जाता है। उसकी पूछ परख होने लगती है। वह विशिष्ट व्यक्तियों में गिना जाने लगता है। उसकी नेताओं तथा उच्चाधिकारियों से मित्रता स्थापित होती है। सुख प्राप्त होता है। धन की वृद्धि होती है। स्त्री तथा पुत्र भी सुखी रहते हैं। अपनी बिरादरी से भी उसे सम्मान मिलता है।।५९।।

समराशिगतबुधदशाफलम्

समर्क्षगस्यापि शशाङ्कसूनोर्दशा सुखं धान्ययुताम्बराणि ।
करोति राज्यच्युतिमत्र विघ्नं विज्ञानहीनं पिडकादिरोगम् ।।६०।।

समराशिस्थ बुध की दशा में जातक को सुख प्राप्त होता है। घर में खाद्य पदार्थों तथा उत्तम वस्त्रों का सञ्चय रहता है; परन्तु इस दशा में व्यक्ति की प्रज्ञा नष्ट हो जाती है। उसमें दूर दृष्टि का अभाव हो जाता है; अतः वह कोई ऐसा कार्य कर बैठता है, जिससे कि उसका पद छिन जाता है तथा कारोबार में भी घाटा हो जाता है। उसे मधुमेह इत्यादि के कारण या अन्य कारणों से फोड़ा-फुंसी उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार अनेक विघ्न उत्पन्न होते हैं।।६०।।

नीचग्रहसंयुक्तबुधदशाफलम्

नीचखेचरसंयुक्तसौम्यदायेतिकष्टताम् ।
पदभ्रमं बन्धुनाशं कर्मनाशं मनोरुजम् ।।६१।।

नीच राशिगत ग्रह के साथ यदि बुध की युति हो तो उसकी दशा में जातक अनेक परेशानियाँ भुगतता है। उसे मनोरुजा उत्पन्न होती है अर्थात् उसका मन चिन्तित, उद्विग्न, खिन्न तथा निराश-सा रहता है। कभी वह अधिक उत्साहित रहता है तो कभी उसे विषाद घेर लेता है। इस कारण वह मनोविदलता का शिकार हो जाता है। अनिश्चित मन:स्थिति तथा बेचैनीं के कारण वह स्थान-स्थान पर भटकता रहता है। इसी को 'पदभ्रमं' कहते हैं। किसी टीकाकार ने 'पदभ्रमं' का अर्थ पद में सन्देह किया है, जो मुझे उचित प्रतीत नहीं होता। उसके बन्धुजन उसका सहयोग करने की स्थिति में नहीं रहते हैं। वे शारीरिक, मानसिक तथा अर्थिक दृष्टि से अक्षम हो जाते हैं। उनकी संख्या भी घट जाती है। इसी को बन्धुनाश कहा गया है। वह जो भी कार्य करता है, उसमें असफलता ही हाथ लगती है और वह बुरी तरह से विफल होता है। इसी को बन्धुनाश कहा गया है।।६१।।

उच्चस्थग्रहसंयुक्तबुधफलम्

उच्चखेचरसंयुक्तसौम्यदाये महत्सुखम् ।
भाग्योत्तरं सुविद्याञ्च वाणिज्यं गोकृषिक्रियाः ।।६२।।

उच्च राशिगत बुध की दशा में जातक को खूब सुख होता है। जातक का भाग्योदय होता है। उसे उत्तम प्रकार की विद्या प्राप्त होती है। उसके उपयोग में आने से कल्याण तथा सुख होता है। रोजी, रोजगार, नौकरी तथा व्यापार के क्षेत्र में सफलता मिलती है। खेती-बाड़ी, उद्योग-धन्धा खूब फलता-फूलता है।।६२।।

पापान्वितबुधफलम्

विदः पापान्वितस्यापि दाये पापमुपैति च ।
क्षेत्रार्थदारपुत्रादिकृषिगोभूमिनाशनम् ।।६३।।

पापान्वित बुध की दशा में जातक घृणित, निन्दित तथा नीच कर्म करता है। ऐसे कार्य उसकी कुलपरम्परा तथा गरिमा के अनुसार निकृष्ट होते हैं। इस दशा में कृषि, उद्योग, आजीविका आदि का नाश होता है। स्त्री-पुत्रादि को कष्ट होता है। कभी-कभी भूमि बिक भी जाती है। यही 'भूमिनाशनम्' का अभिप्राय है।।६३।।

शुभसंयुक्तबुधफलम्

विदः सौम्ययुतस्यापि परिपाके महत्सुखम् ।
राज्ययोगं सुखं कीर्तिं दारपुत्रनृपात्सुखम् ।।६४।।

शुभ ग्रहों के साथ बैठे हुए बुध की दशा में जातक को प्रभूत सुख मिलता है। राज्य, अधिकार या पद की प्राप्ति होती है। बेरोजगारों को रोजगार मिलता है। उसकी कीर्ति चतुर्दिक फैलती है। उसके पुत्र आज्ञाकारी होते हैं। उन्हें शिक्षा तथा कार्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता मिलती है। पत्नी भी जातक के अनुकूल रहती है। प्रशासनिक

लोगों से अच्छे सम्पर्क होने से काम बनते रहते हैं। उनमें शासकीय-प्रशासकीय बाधायें नहीं आती हैं।।६४।।

शुभग्रहदृष्टबुधदशाफलम्

सौम्येक्षितस्यापि शशाङ्कसूनोर्दशाविपाके महतीं च कीर्तिम् ।
विद्याविलासोद्भवराजपूजां कान्तिप्रतापं यशसा समेतम् ।।६५।।

शुभ ग्रह से दृष्ट बुध की दशा में जातक की ख्याति दूर-दूर तक फैलती है, उसका अतिविशिष्ट व्यक्तियों से परिचय बढ़ता है। शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त होती है, उपाधि प्राप्त होती है, शरीर सुन्दर-स्वस्थ दिखलाई पड़ता है एवं व्यक्तित्व प्रभावशाली हो जाता है।।६५।।

पापेक्षितबुधदशाफलम्

पापेक्षितस्यापि शशाङ्कसूनोर्धान्यक्षयं बन्धुजनैः वियुक्तिम् ।
विदेशयानं स्वपदं च्युतिं च प्रेष्यानुवृत्त्या कलहोऽत्र कृच्छ्रम् ।।६६।।

पापदृष्ट बुध की दशा में घर में खाद्य पदार्थों की कमी हो जाती है। भाइयों में बँटवारा होता है अथवा उनसे अलग रहना पड़ता है। घर छोड़कर अन्यत्र जाना पड़ता है। व्यक्ति जिस पद पर काम करता है, उससे हटा दिया जाता है। उसे हरकारा, संदेश-वाहक, पत्रवाहक, चपरासी आदि का काम करना पड़ता है, उसका चाहे जिस किसी से झगड़ा हो जाता है और अनेक प्रकार के क्लेश प्राप्त होते हैं।।६६।।

केन्द्रगतबुधदशाफलम्

केन्द्रोपगस्य हि दशा शशिनन्दस्य भूपालमित्रधनधान्यकलत्रपुत्रान् ।
यज्ञादिकर्मनृपमानयशःप्रलब्धिं मृद्वन्नपानशयनाम्बरभूषणानि ।।६७।।

केन्द्रगत बुध की दशा में राजनीतिज्ञों, मन्त्रियों तथा उच्चाधिकारियों से जातक की मैत्री होती है। घर में धन-धान्य-वस्त्रादि का भण्डार भरा रहता है। स्त्री-पुत्रों का सुख प्राप्त होता है। जातक धार्मिक कार्यों एवं अनुष्ठानों में संलग्न रहता है अथवा कहीं पर सम्पन्न होने वाले यज्ञ-यागादि कार्यों में स्वप्रेरणा से भाग लेता है। उसे शासन और समाज से सम्मान प्राप्त होता है। उसका यश चारो ओर फैलता है। मिष्ठान्न, फल, मेवे, दूध-घी इत्यादि खाद्य पदार्थों की प्रचुरता रहती है। घर में विलासिता और आरामदायक वस्तुओं का संग्रह होता है।।६७।।

लग्नगतबुधदशाफलम्

लग्नं गतस्य च दशा शशिनन्दस्य भूपालमानकृषिवाहनलब्धभाग्यम् ।
भेरीरवादिपरिघोषितयानमार्गं तीर्थाभिषेकमथ वा जगति प्रसिद्धिम् ।।६८।।

लग्न में स्थित बुध की दशा में राज्यपक्ष से सम्मान प्राप्त होता है। खेती-बाड़ी,

उद्योग-धन्धा तथा नौकरी इत्यादि में सुगमता रहती है, कारखानों में उत्पादन बढ़ जाता है, भाग्य के कारण सुख-सुविधायें प्राप्त होती हैं और कारोबार में वृद्धि होती जाती है। जातक इलेक्ट्रानिक उपकरणों के संगीत का लाभ आरामदेह वाहनों में बैठकर उठाता है। वह तीर्थाटन करता है और उसकी प्रसिद्धि चतुर्दिक होती है।।६८।।

धनभावगतबुधदशाफलम्

वित्तगसौम्यदशायां विद्याप्राप्तिं महत्प्रकीर्तिं च ।
भूपतिभाग्यसमानां राजस्थाने प्रधानतां याति ।।६९।।

द्वितीय भावगत बुध की दशा में जातक गणित, शिल्प, वाणिज्य, कम्प्यूटर, इलेक्ट्रानिक्स, खगोलशास्त्र आदि के अध्ययन में प्रगति करता है। उसे विद्वत्सभाओं की फेलोशिप मिलती है। वह अपने ज्ञान के कारण अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रसिद्धि प्राप्त करता है। देश या प्रदेश की सरकार अथवा विदेश की सरकार उसे महत्त्वपूर्ण पद पर नियुक्ति प्रदान करती है अथवा वह शासन में तकनीकी या तत्सम्बद्ध विषय का परामर्शदाता बनाया जाता है। सरकारें उसकी सिफ़ारिश पर विशेष ध्यान देती हैं।।६९।।

तृतीयभावगतसौम्यदशाफलम्

तृतीयराशिस्थितचन्द्रसूनोः दशाविपाके जडतां समेति ।
उद्गानमाजीवनगुल्मरोगमन्नार्त्तियोगे नृपमाननं च ।।७०।।

तृतीय-स्थित बुध की दशा में जातक की बुद्धि जड़ हो जाती है। वह सही निर्णय नहीं ले पाता, जिसके कारण वह भूलों पर भूलें दोहराता रहता है। जातक संगीत सुनने में तथा गाने में विशेष रुचि रखता है। इस दशा में उसे गुल्मरोग हो जाता है, जो कि आजीवन कष्ट देता रहता है। उसे अन्न से पीड़ा होती है तथा शासनपक्ष से बराबर सहयोग प्राप्त होता है।।७०।।

अन्नार्त्ति— अन्नार्त्ति का अर्थ होता है— अन्न से पीड़ा पहुँचना। जब किसी को बहुत दिनों तक आम्लपित्त बना रहता है, तब उसे आमाशयिक व्रण या प्रप्राचीय व्रण हो जाते हैं। इन दोनों बीमारियों में पेट में अन्न पहुँचते ही शूल या दर्द तीव्रता से होने लगता है। कभी यह धीमे-धीमे होता है। वमन होकर या अपने-आप ही कुछ देर में दर्द में आराम हो जाता है। यह रोग जीभ की चञ्चलता और मानसिक चिन्ताओं से होता है। बुध के कारण मानसिक चिन्ता और जिह्वा में लोलुपता दोनों आ जाती हैं। इसी प्रकार के कष्ट को अन्नार्त्ति कहा गया है, इसी को अन्नद्रवशूल भी कहते हैं।

सुखभावस्थबुधदशाफलम्

शशाङ्कसूनोर्हिबुकस्थितस्य दशा प्रपन्ना गृहधान्यनाशम् ।
सौख्यादिहानिं हिबुके समृत्युमुद्योगभङ्गञ्च पदच्युतिं वा ।।७१।।

चतुर्थ भाव में स्थित बुध की दशा में घर टूट जाता है या नीलाम हो जाता है

अथवा घर कोई कब्जा कर लेता है, धान्यादि का नाश हो जाता है। सुखादि में हीनता होती है, माता को कष्ट होता है अथवा माता की मृत्यु हो जाती है। जातक के उद्योग-धन्धे समाप्त हो जाते हैं और वह जिस पद पर कार्यरत होता है, उस पद से उसे हटा दिया जाता है।।७१।।

उद्योगभङ्ग— उद्योगभंग का सामान्य अर्थ है— उद्योग का टूट जाना या समाप्त हो जाना। कहीं-कहीं इसका अर्थ कार्य में असफलता से लिया जाता है। वाणिज्य शास्त्र के अनुसार व्यापार में आई रूकावट को उद्योगभङ्ग कहते हैं। इसे दो भागों में वर्गीकृत किया जाता है— उद्योगभग्नता एवं औद्योगिक रुग्णता। उद्योगभग्नता से तात्पर्य व्यापार के नाश से होता है। साझेदारों के अलग हो जाने के कारण, व्यापार में घाटा पड़ने के कारण, मजदूरों की हड़ताल के कारण, फैक्टरी इत्यादि पर छापे पड़ने के कारण उद्योग या फैक्टरी का ठप्प हो जाना उद्योगभग्नता कहलाता है। औद्योगिक रुग्णता बाजांर में चलने वाली गलाकाट प्रतिस्पर्द्धा, मुद्रा का अवमूल्यन, कालाबाजारी इत्यादि से उत्पन्न होती है। औद्योगिक रुग्णता का बढ़ता हुआ समय इसे औद्योगिक भग्नता में परिणत कर देता है।

पञ्चमभावस्थबुधदशाफलम्

पञ्चमस्थशशिनन्दनस्य वा क्रूरबुद्धिरतिकष्टता भवेत् ।
हीनवृत्तिरपि राजसेवया कृच्छ्रलब्धधनमेति सम्पदम् ।।७२।।

पञ्चम भावस्थ शशिनन्दन अर्थात् बुध की दशा में बुद्धि क्रूर हो जाती है। लोगों के प्रति असहिष्णुता का भाव जागृत हो जाता है। मन में क्रोध अधिक रहता है, अतिकष्ट प्राप्त होता है। व्यक्ति अपनी आजीविका हीनवृत्ति अर्थात् निन्द्यकर्मों द्वारा प्राप्त करता है! राजसेवा के द्वारा बड़ी ही कठिनाई से सेवा-खुशामद करने से धन-सम्पत्ति का लाभ होता है।।७२।।

त्रिकभावगतबुधदशाफलम्

षष्ठाष्टमान्त्यस्थितसौम्यदाये त्वग्दोषजातं बहुरोगमेति ।
विचर्चिका पैत्तिकपाण्डुरोगं नृपाग्निचौरैः मरणं कृशत्वम् ।।७३।।

छठे, आठवें एवं द्वादश भावगत बुध की दशा में जातक की त्वचा (चमड़े) में अनेकप्रकार के रोग, एक्झिमा, दाद, खाज, खुजली, कुष्ठ, श्विप्र इत्यादि हो जाते हैं। पैत्तिक मन्थ (पित्त से उत्पन्न रोग), पाण्डुरोग हो जाता है, राजा से भय होता है, घर में चोरी तथा अग्नि का भय रहता है। जातक के शरीर में कमजोरी आ जाती है अथवा उसकी मृत्यु हो जाती है।।७३।।

द्वादशभावगतबुधविशेषफलम्

देहाङ्गवैकल्यकलत्रबन्धुविद्वेषणं भूपतिदत्तकोपम् ।
आकस्मिकं मृत्युभयं प्रसादं रिष्फस्थितस्यापि शशाङ्कसूनोः ।।७४।।

अंगों में विकलता उत्पन्न होने लगती है अर्थात् शरीर शिथिल होने लगता है, स्त्री से कलह होता है, भाई-बन्धु से द्वेष होता है, राजकोप का भय रहता है, आकस्मिक मृत्यु अथवा अल्प मृत्यु या अधिक अपमान होता है। कार्य करने में मन नहीं लगता, व्यक्ति प्रमादी हो जाता है। ये सब फल द्वादशभावगत बुध की दशा में विशेष रूप से उपस्थित होते हैं।।७४।।

कलत्रगे बुधदशाफलम्

दारस्थितस्यापि शशाङ्कसूनोः दशाविपाके सुतदारवित्तम् ।
विद्याविनोदं विमलाम्बरञ्च नामद्वयं भूपतिमित्रताञ्च ।।७५।।

सप्तम भाव में स्थित बुध की दशा में जातक को पुत्र तथा स्त्री का सुख प्राप्त होता है। धन की प्राप्ति होती है। हँसते-खेलते सरलतापूर्वक विद्या की प्राप्ति होती है, अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने को प्राप्त होते हैं। नामद्वय की प्राप्ति होती है अर्थात् विशेष अवसरों, शौर्यादि के कारण उपाधि की प्राप्ति होती है तथा भूपति की मित्रता अर्थात् बड़े-बड़े अफ़सरों से मित्रता हो जाती है।।७५।।

नवमभावस्थबुधदशाफलम्

भाग्यस्थितस्यापि शशाङ्कसूनोः भाग्योत्तरं दारसुतार्थलाभम् ।
तीर्थाभिषेकं जपहोमदानं यज्ञादिकर्माणि लभेन्मनुष्यः ।।७६।।

भाग्य में स्थित बुध की दशा में भाग्यबल से जातक को सभी प्रकार के ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है, पत्नी का सुख प्राप्त होता है, पुत्र-सुख प्राप्त होता है, धन की प्राप्ति होती है। व्यक्ति तीर्थाटन करने जाता है। जप, होम, दान, यज्ञ इत्यादि धार्मिक कार्यों से मनुष्य पुण्यलाभ अर्जित करने में सफल रहता है।।७६।।

कर्मभावस्थितबुधदशाफलम्

कर्मस्थितस्यापि शशाङ्कसूनोः दशाविपाके नृपतौल्यमेति ।
सौख्यं स्वनामाङ्कितगद्यपद्यं नामद्वयं दारसुतार्थलाभम् ।।७७।।

कर्मभाव में स्थित बुध की दशा में जातक को राजा के समान श्रेष्ठत्व प्राप्त करता है, सुख प्राप्त होता है, वह स्वयं के नाम से अंकित गद्यों तथा पद्यों की रचना करता है। उसे उपाधि की प्राप्ति होती है तथा पत्नी एवं बच्चों का सुख प्राप्त करता है।।७७।।

लाभभावस्थबुधदशाफलम्

प्रपूजनं देवमहीसुराणां साम्राज्यलाभं जननायकत्वम् ।
कवित्वमार्गं समुपैति काले यज्ञादीक्षां स्वजनैर्विशेषात् ।।७८।।

लाभ भाव में स्थित बुध की दशा में व्यक्ति देवताओं और महीसुर अर्थात् ब्राह्मणों का पूजन करता है, उसे साम्राज्य का लाभ प्राप्त होता है तथा जनप्रतिनिधि, पार्षद,

मन्त्री, विधायक इत्यादि बनने का अवसर प्राप्त होता है। उसे कवित्व शक्ति प्राप्त होती है। वह यज्ञ-यागादि, दीक्षा इत्यादि करवाता है तथा स्वजनों को प्राप्त करता है॥७८॥

द्वादशस्थबुधदशाफलम्

उपान्त्यराशिस्थितसौम्यदाये त्वनेकधा वित्तमुपैति काले ।
दानेन वा भूपतिमाननाद्वा कृषेश्च वाणिज्यविचारतो वा ।।७९।।

यदि द्वादश भावस्थित बुध की दशा हो तो उसमें अनेक प्रकार से धन प्राप्त होता है। उसे वह धन किसी के द्वारा दिये गए दान से अथवा शासन द्वारा प्राप्त अनुदान से, खेती, उद्योग या व्यवसाय आदि से अथवा विचार (मन्त्रणा, परामर्श) से शुल्क या दक्षिणा के रूप में प्राप्त होता है॥७९॥

उच्चनवांशस्थितबुधदशाफलम्

उच्चांशसंयुक्तशशाङ्कसूनोर्दशाविशेषे सुतभूषणाप्तिम् ।
मनोविलासं मदनाभिराममुत्साहधैर्यञ्च जलाभिषेकम् ।।८०।।

उच्च नवांशगत बुध की दशा में विशेष रूप से पुत्र तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है। कामेच्छा की पूर्ति होती है। मन प्रफुल्लित रहता है। रुद्राभिषेक आदि का कृत्य या पवित्र जल में स्नान होता है। मन में उत्साह तथा धैर्य का सञ्चार रहता है। दशाफल में यह ध्यान रखना चाहिये कि यदि किसी दशा में पुत्र-प्राप्ति लिखी हो और दशाफल के समय जातक की आयु यदि पचहत्तर वर्ष की हो तब वहाँ पुत्र-प्राप्ति का अर्थ पौत्रादि की प्राप्ति या बिछुड़े पुत्र से मिलन समझना चाहिये॥८०॥

नीचांशगतबुधदशाफलम्

नीचांशकयुतः सौम्यो नीचवृत्त्यानुजीवनम् ।
प्रेष्यत्वं परिहारञ्च दशायाञ्च करोति तत् ।।८१।।

नीच नवांशगत बुध की दशा में नीच वृत्ति से जातक की आजीविका चलती है। इसमें चपरासी आदि की नौकरी अपमानजनक शर्तों पर करनी पड़ती है॥८१॥

बुधदशाफलम्

सौम्यदशायामादौ लभते धनधान्यसम्पदं पुरुषः ।
अन्त्ये स्वजनविरोधं मध्ये दाये नरेशसन्मानम् ।।८२।।

बुध की दशा के प्रारम्भ में जातक को धन का लाभ होता है, कृषि, व्यापार इत्यादि से धान्य का लाभ प्राप्त होता है तथा व्यक्ति को सम्पत्ति प्राप्त होती है। दशा के मध्य में व्यक्ति राजा से सम्मान प्राप्त करता है तथा दशा के अन्तिम भाग में उसे अपने भाई-बन्धु-मित्र-स्नेही स्वजनों का विरोध सहन करना पड़ता है॥८२॥

सूर्ययुतबुधदशाफलम्

अर्कगसौम्यदशायां लभते विविधापदं मनोदुःखम् ।
स्वकुलजनविरोधं निन्दाभीः वाऽक्षिकर्णरोगञ्च ।।८३।।

सूर्ययुक्त बुध की दशा में विविध प्रकार के पद जातक को प्राप्त होते हैं, मन दुःखी रहता है, उसे स्वजनों का विरोध सहन करना पड़ता है, निन्दा प्राप्त होती है तथा आँख और कान के रोगों से त्रास होता है॥८३॥

स्थानबलयुक्तसौम्यदशाफलम्

स्थानवीर्ययुते सौम्ये तत्पाकः कीर्त्तिराज्यदः ।
मनोधैर्यं मनोत्साहं यज्ञदीक्षाशुभप्रदः ।।८४।।

स्थानबलयुक्त बुध की दशा में जातक की यश-कीर्त्ति फैलती है, लोकप्रियता के क्षेत्र में विस्तार होता है, कार्यक्षेत्र बढ़ जाता है। मन में धैर्य आता है, उत्साह रहता है, यज्ञ-दीक्षादि शुभ कार्य उसके हाथों सम्पन्न होते हैं॥८४॥

स्थानबलहीनबुधदशाफलम्

तद्विहीनबुधे स्थानदारपुत्रमहद्भयम् ।
विदेशवासं दुःखञ्च नानापरिभवक्रियाः ।।८५।।

स्थानबल से हीन बुध की दशा में स्थान, पत्नी, पुत्र इत्यादि के सम्बन्ध में जातक के मन में अधिक भय रहता है, उसे विदेश में वास करना पड़ता है, दुःख होता है तथा विभिन्न प्रकार के अपमान सहन करने पड़ते हैं॥८५॥

दिग्बलयुतसौम्यदशाफलमाह

दिग्वीर्यसहिते सौम्ये दिगन्ताद्धनिकः सुधीः ।
सामन्तराजमित्रत्वं गन्धमाल्यस्य लेपनम् ।।८६।।

दिग्बल से युक्त बुध की दशा में जातक को देश-देशान्तरों से धन की प्राप्ति होती है, उसकी बुद्धि निर्मल रहती है तथा सामन्तों (तहसीलदार, नायब तहसीलदार इत्यादि अधिकारी) से मित्रता तथा विभिन्न प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों का लेपन करने को मिलता है॥८६॥

कालबली बुधदशाफलम्

कालवीर्ययुतसौम्यदशायां देहसौख्यमतुलं रिपुहानिः ।
दारपुत्रनृपमाननमेति गाङ्गतोयपरिपूततनुः स्यात् ।।८७।।

कालबली बुध की दशा में जातक को बहुत प्रकार के शारीरिक सुख एवं शत्रुहानि होती है। स्त्री-सुख एवं पुत्रों की संख्या में वृद्धि होती है, राजसम्मान प्राप्त होता है, गंगास्नान का अवसर प्राप्त होता है॥८७॥

निसर्गबली बुधदशाफलम्

निसर्गवीर्यान्वितसौम्यदाये निसर्गतश्चापि शुभादिकर्म ।
विद्याविवादं स्वजनैर्विरोधं मातुर्वियोगं त्वथ वा च कष्टम् ।।८८।।

निसर्ग बल से युक्त बुध की दशा में नैसर्गिक रूप से शुभ कार्य होते हैं, विद्या-विवाद अर्थात् विद्या से सम्बन्धित विवाद होते हैं, स्वजनों का विरोध सहन करना पड़ता है, माता से वियोग होता है अथवा माता को कष्ट प्राप्त होता है।।८८।।

वक्री चेष्टाबलयुक्तबुधदशाफलम्

वक्रचेष्टान्विते सौम्ये भाग्यदारसुतार्थभाक् ।
तथा पुराणदानादिसमुद्रस्नानमाचरेत् ।।८९।।

बुध वक्री हो तथा चेष्टाबल से युक्त हो तो उसकी दशान्तर्दशा में ऐश्वर्य की प्राप्ति, स्त्री-पुत्रों का सुख एवं धन-वृद्धि होती है। पुराणदान, समुद्रस्नान इत्यादि कार्य जातक द्वारा किये जाते हैं।।८९।।

दृग्बलयुक्तबुधदशाफलम्

दृग्बलेन युते सौम्ये सर्वभूतेषु सौम्यताम् ।
करोति रतिकेलिं च राज्यभाग्यसमन्विताम् ।।९०।।

दृग्बल से युक्त बुध की दशा में जातक वह सभी पर अपनी सौम्य दृष्टि रखता है, कामक्रीड़ा में सुखपूर्वक मग्न रहता है तथा राज्यसुख प्राप्त करता है; साथ ही उसे भाग्यबल भी प्राप्त होता है।।९०।।

क्रूरषष्ट्यंशगतबुधदशाफलम्

क्रूरषष्ट्यंशसौम्यस्य दशापाके महद्भयम् ।
चौराग्निभूपैः भीतिः स्यात् शुभदृग्योगवर्जिते ।।९१।।

क्रूर षष्ट्यंश में स्थित बुध की दशा में बुध पर यदि किसी शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तो जातक के मन में अधिक भय लगा रहता है। चोर, अग्नि तथा राजभय मन में उपस्थित रहता है।।९१।।

मृद्वंशस्थितबुधदशाफलम्

मृद्वंशादियुते सौम्ये राज्यलाभं महत्सुखम् ।
मार्दवं सर्वभूतेषु कृषिपुत्रार्थसम्पदम् ।।९२।।

मृद्वंशकादि में स्थित बुध की दशा में राज्यलाभ अर्थात् अधिकार क्षेत्र की प्राप्ति, बहुत सुख, सभी जीवों पर दयाभाव तथा कृषि, पुत्र, धन तथा सम्पदा का लाभ प्राप्त होता है।।९२।।

वैशेषिकांशस्थबुधदशाफलम्

सौम्ये वैशेषिकांशस्थे विशेषाद्राजपूज्यताम् ।
सुगन्धाम्बरमाल्यञ्च विद्यागोष्ठीरहस्यताम् ।।९३।।

वैशेषिकांश में स्थित बुध की दशा में राज्य में पूज्यत्व या श्रेष्ठत्व प्राप्त होता है, सुगन्धि (इत्र इत्यादि), वस्त्र, पुष्पहारादि की प्राप्ति होती है। उसके द्वारा पठित विद्या से सम्बन्धित सम्मेलन में उसे बुलाया जाता है तथा मन्त्रणा की जाती है।।९३।।

क्रूरद्रेष्काणस्थितबुधदशाफलम्

क्रूरद्रेष्काणसंयुक्तश्चन्द्रसूनुर्यदा तदा ।
चौराग्निभूपतिभयं स्थाननाशं महद्भयम् ।।९४।।

क्रूर द्रेष्काण में स्थित बुध की दशा में जातक को चौरभय, अग्निभय तथा राजकोप का भय रहता है, स्थाननाश की आशंका रहती है तथा विभिन्न प्रकार के भय उसके मन में रहते हैं।।९४।।

उच्चराशिस्थबुधदशाफलम्

उच्चराशिगतः सौम्यो नीचभागगतो यदि ।
राज्यं सुखञ्च कीर्त्तिञ्च विनाशयति तत्क्षणात् ।।९५।।

उच्च राशि में स्थित बुध यदि नीच नवांश में स्थित हो तो जातक को राज्यसुख की प्राप्ति होती है, उसके यश-कीर्त्ति में विस्तार होता है; किन्तु तत्काल ही इनका विनाश भी हो जाता है।।९५।।

नीचराशिस्थ उच्चांशगतबुधदशाफलम्

चन्द्रात्मजोऽपि नीचस्थः स्वोच्चभागसमन्वितः ।
अशुभं फलमादौ तु शुभमन्ते प्रयच्छति ।।९६।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ भौमबुधदशाफलनिरूपणो नाम चतुर्दशोऽध्यायः ।।१४।।

यदि बुध नीच राशि में हो, किन्तु उच्च नवांश में स्थित हो तो दशा के पूर्वार्द्ध में अशुभ फल प्राप्त होते हैं; किन्तु उत्तरार्द्ध शुभ फल प्रदान करता है।।९६।।

इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ के तेरहवें अध्याय की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़कृत 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।।१३।।

◆

अथ पञ्चदशोऽध्यायः

गुर्वादिदशाफलविचाराध्यायः

परमोच्चगतगुरुदशाफलम्

गुरोर्दशायां परमोच्चगस्य राज्यं महत्सौख्यमुपैति कीर्त्तिम् ।
मनोविलासं गजवाजिसङ्घंनृपाभिषेकं स्वकुलाधिपत्यम् ।।१।।

परमोच्चगत गुरु की दशा में राज्यसुख, बहुत प्रकार के सुख तथा कीर्त्ति की लब्धि होती है। विलास के वस्तुओं की प्राप्ति, हाथी-घोड़ों के झुण्ड की प्राप्ति (अनेक वाहनों की प्राप्ति), राज्याभिषेक का सुख एवं कुल में मुखिया का अधिकार प्राप्त होता है।।१।।

कर्कस्थितगुरुदशाफलम्

कुलीरगस्यापि गुरोर्दशायां भाग्योत्तरं भूपतिमाननाद्वा ।
विदेशयानं महदाधिपत्यं दुःखैः परिक्लिन्नतनुर्मनुष्यः ।।२।।

कर्क राशि में स्थित गुरु की दशा में भाग्यवृद्धि होती है। ऐश्वर्यवृद्धि, राजा से सम्मान की प्राप्ति होती है, किसी विशेष कार्य से विदेशगमन होता है तथा मन दुःखों से क्लान्त रहता है।।२।।

उच्चारोही गुरुदशाफलम्

आरोहिणी देवगुरोर्महत्त्वं दशा प्रपन्ना कुरुतेऽर्थभूमिम् ।
गानक्रिया स्त्रीसुतराजपूज्यं स्ववीर्यतः प्राप्तयशःप्रतापम् ।।३।।

उच्चारोही गुरु की दशा में महत्ता अर्थात् बड़प्पन, धन, भूमि आदि की प्राप्ति होती है। व्यक्ति गायन में रुचि रखता है। स्त्री, पुत्र एवं राज्य में पूज्यत्व प्राप्त करता है तथा यश एवं प्रताप में वृद्धि होती है।।३।।

उच्चारोही जीवदशाफलम्

जीवदशायामारोहिण्यामीशो मण्डलाधिनाथो वा ।
द्विजभूपाललब्धधनो मेधावी कान्तिमान् विनीतिज्ञः ।।४।।

उच्चारोही गुरु की दशा में मण्डलाधिनाथ अर्थात् कुछ गावों का राजा (जिला. पञ्चायत का पार्षद इत्यादि) होता है। ब्राह्मण, राजादि के द्वारा उसे लाभ प्राप्त होता है. वह मेधावी होता है, कान्तिमान होता है तथा नीतिशास्त्र में निपुण होता है।।४।।

उच्चावरोही जीवदशाफलम्

देवेन्द्रपूज्यस्य दशावरोही करोति सौख्यं सकृदेव नाशम् ।
सकृद्यशः कान्तिविशेषजालं नरेश्वरत्वं सकृदेव याति ।।५।।

नीचारोही जीव की दशा में कभी सुख प्राप्त होता है तो कभी उस सुख का नाश हो जाता है। बार-बार यश प्राप्त होता है तथा विशेष कान्ति प्राप्त होती है। गुरु की दशा में व्यक्ति को राज्यपद प्राप्त होता है तो कभी वह पद छिन जाता है।।५।।

अतिनीचस्थगुरुदशाफलम्

अतिनीचभागभाजो गुरोर्दशायां प्रभग्नगृहपुञ्जः ।
अन्योन्यहृदयवैरं कृषिनाशं याति परभृत्यः ।।६।।

अति नीच (परम नीच) गुरु की दशा में जातक का घर भग्न हो जाता है, टूट
गता है (यहाँ पर घर टूटने से तात्पर्य परिवार में पड़ने वाली दरार से है), आपस में
में वैर उत्पन्न हो जाता है, खेती-बाड़ी नष्ट हो जाती है तथा दूसरों की नौकरी करनी
।।

मूलत्रिकोणगतगुरुदशाफलम्

य गुरोर्दशार्यं राज्यार्थभूमिसुतदारविशेषसौख्यम् ।
बलाप्तवित्तं यज्ञादिकर्मजनपूजितपादपीठम् ।।७।।

रु की दशा में जातक को राज्यलाभ, धनलाभ, पत्नी
है। यात्रा करनी पड़ती है। जातक स्वबल से धन
तथा लोगों में पूजनीय होता है।।७।।

फलम्

सुखाम्बरञ्च ।
दशास्त्रम् ।।८।।

तथा अन्नादि का लाभ
ने के लिए प्राप्त
न) का सुख
विविध
।।

अतिशत्रु की राशि में स्थित गुरु की दशा में जातक को दु:ख, शोक तथा विषाद की प्राप्ति होती है। उसकी भूमि तथा धन का नाश हो जाता है, पत्नी को कष्ट होता है एवं राजा, अग्नि तथा चोर से बहुत प्रकार के दु:ख तथा पीड़ायें प्राप्त होती हैं।।९।।

शत्रुराशिस्थजीवदशाफलम्

गुरोर्दशायामरिराशिगस्य क्षेत्रादिवित्तं शयनाम्बरञ्च ।
नरेशसन्मानमुपैति नित्यं स्त्रीपुत्रभृत्यात्मसहोदरार्त्तिम् ।।१०।।

शत्रु राशि में स्थित गुरु की दशा में जातक को धन प्राप्त होता है, शय्यासुख मिलता है, क्षेत्रादि की प्राप्ति होती है। राजा से सम्मान एवं स्त्री, पुत्र, सेवक, भाई इत्यादि का कष्ट प्राप्त होता है।।१०।।

अधिमित्रराशिगतगुरुदशाफलम्

प्राप्तौ दशायामतिमित्रराशिं गतस्य जीवस्य नरेन्द्रपूज्यम् ।
मृदङ्गभेरीरवयानघोषं दिगन्तराक्रान्तसमस्तभाग्यम् ।।११।।

अधिमित्र राशिगत गुरु की दशा में शासक वर्ग से अच्छे सम्बन्ध रहते हैं। उसके वाहन में संगीत के वाद्य यन्त्र लगे रहते हैं (समाचार माध्यमों = मीडिया द्वारा उसके कार्यों का खूब प्रचार होता है)। दूर-दूर तक उसकी ख्याति फैलती है। भाग्य सम्पूर्णता के साथ संग देता है।।११।।

मित्रराशिगतगुरुदशाफलम्

मित्रर्क्षगस्यापि गुरोर्दशायां नरेशमैत्रीं समुपैति कीर्त्तिम् ।
विद्याविवादे जयमन्त्रसौख्यं सुगन्धमृद्वस्त्रपरोपकारम् ।।१२।।

मित्र की राशि में स्थित गुरु की दशा में राज-मैत्री (राज्याधिकारियों; जैसे– तहसीलदार, कलेक्टर, एस० पी०, थानेदार, विधायक इत्यादि से मित्रता) तथा कीर्त्ति फैलती है। विद्या से सम्बन्धित विवादों में सफलता एवं विजय की प्राप्ति होती है, सुख प्राप्त होता है। जातक सुगन्धित वस्त्रों को धारण करता है, मिट्टी से बनी हुई कलात्मक मूर्त्तियाँ, वस्तुयें इत्यादि खरीदता है अथवा उसे मिलती हैं तथा व्यक्ति मन से परोपकार में संलग्न रहता है।।१२।।

समराशिस्थितगुरुदशाफलम्

समर्क्षगस्यापि गुरोर्दशायां सामान्यतो भूपतिदत्तभाग्यम् ।
कृष्यर्थगोभूमिमनोविलासं मित्राम्बरालंकृतिभूषणाप्तिम् ।।१३।।

सम राशि में स्थित गुरु की दशा में सामान्य रूप से राजा द्वारा प्रदत्त वस्तुओं से व्यक्ति सुखोपभोग करता है। कृषि, धन, गाय, भूमि तथा विलास की वस्तुयें प्राप्त होती हैं। मित्र, वस्त्र, अलङ्कार तथा विभिन्न प्रकार के आभूषणों की प्राप्ति होती है।।१३।।

नीचराशिस्थग्रहसंयुक्तजीवदशाफलम्

नीचखेचरसंयुक्तजीवदाये मनोरुजम् ।
परप्रेष्यापवादञ्च पुत्राणाञ्च विरोधिताम् ।।१४।।

नीच राशिगत ग्रह से संयुक्त गुरु की दशा में मन से सम्बन्धित रोग (फोबिया, उन्माद, अपस्मार, विषाद इत्यादि) उत्पन्न होते हैं, दूसरों के कहने से यात्रायें करनी पड़ती हैं तथा पुत्रों का विरोध सहन करना पड़ सकता है॥१४॥

उच्चराशिस्थग्रहसंयुक्तजीवदशाफलम्

उच्चखेचरसंयुक्तगुरुदाये महत्सुखम् ।
अनेकगोपुरादीनां निर्माणं नृपपूज्यताम् ।।१५।।

उच्च राशि में स्थित ग्रह से संयुक्त गुरु की दशा में जातक को बहुत सुख प्राप्त होता है, वह अनेक बड़े-बड़े, विशाल भवनों का निर्माण करता है तथा राजा से उसे पूज्यत्व प्राप्त होता है॥१५॥

पापयुतजीवदशाफलम्

पापान्वितस्यापि गुरोर्दशायां करोति पापं हृदयान्तरस्थम् ।
गूढं बहिः पुण्यफलं विशेषाद् भूम्यर्थदारात्मजसौख्यमेति ।।१६।।

पापयुत गुरु की दशा में व्यक्ति अपने मन में किए हुए पाप को छिपाकर रखता है, बाहर लोगों को दिखाने के लिए पुण्यकर्म करता है, भूमि, धन, पत्नी, पुत्र इत्यादि का सुख उसे प्राप्त होता है॥१६॥

शुभग्रहयुक्तजीवदशाफलम्

शुभान्वितस्यापि गुरोर्दशायां नरेशयानं मृदुलाम्बरञ्च ।
दानेन वित्तं नृपमाननाद्वा यज्ञादिसन्मार्गविशेषलाभम् ।।१७।।

शुभ ग्रह से युक्त गुरु की दशा में राज्य से वाहन की प्राप्ति होती है, मृदुल कपड़े प्राप्त होते हैं। दान से अथवा राजा द्वारा सम्मान में धन दिया जाता है। यज्ञादि के सम्मार्ग से विशेष लाभ की प्राप्ति होती है॥१७॥

पापेक्षितजीवदशाफलम्

पापेक्षितस्यापि गुरोर्दशायां प्राप्तं सुखं किञ्चिदुपैति धैर्यम् ।
क्वचिद्यशः कुत्रचिदाप्तसौख्यं क्वचिद्धनं नाशमुपैति चान्ते ।।१८।।

पापग्रह से दृष्ट गुरु की दशा में व्यक्ति को थोड़ा-सा सुख और थोड़ा-सा धैर्य तथा थोड़ा-सा धन प्राप्त होता है, सुख भी अल्प मात्रा में ही प्राप्त होता है और अन्त में इन सबका नाश हो जाता है॥१८॥

शुभेक्षितजीवदशाफलम्

शुभेक्षितस्यापि गुरोर्दशायां देशान्तरे वित्तमुपैति भूपात् ।
देवार्चनं भूसुरतर्पणञ्च तीर्थाभिषेकं गुरुपूज्यताञ्च ।।१९।।

शुभ ग्रह से दृष्ट गुरु की दशा में जातक को विदेश में राजा से धन प्राप्त होता है, वह देवों की पूजा, अर्चना, ब्राह्मणों की अभ्यर्थना करता है, पितरों का तर्पण करता है तथा तीर्थाटन एवं देवाभिषेक द्वारा पुण्य अर्जन करता है; साथ ही गुरु की पूजा करता है एवं उनका सम्मान करता है।।१९।।

केन्द्रगतजीवदशाफलम्

केन्द्रगतजीवदाये राज्यं भूदारराजसन्मानम् ।
विविधसुखानन्दकरं बहुजनरक्षां प्रधानतां याति ।।२०।।

केन्द्रगत गुरु की दशा में जातक को राज्य, भूमि तथा स्त्री की प्राप्ति होती है। राजसम्मान प्राप्त होता है, व्यक्ति अनेक प्रकार के सुखोपभोग का आनन्द प्राप्त करता है। वह कई मनुष्यों की रक्षा करता है तथा समाज में उसे प्रधानता प्राप्त होती है।।२०।।

लग्नस्थजीवदशाफलम्

लग्नं गतस्य हि दशा पुरुषे करोति
जीवस्य सौख्यममलाम्बरभूषणाप्तिम् ।
यानाधिरोहणमृदङ्गपणारवैश्च
मत्तेभवाजिभटसङ्ग्युतं करोति ।।२१।।

लग्न में स्थित गुरु की दशा में व्यक्ति सुख प्राप्त करता है, उसे निर्मल वस्त्राभूषण प्राप्त होते हैं। वाहन की सवारी करता है, जो कि वाद्यादि युक्त होता है। उन्मत्त हाथी-घोड़ों से युक्त संघ का नेतृत्व प्राप्त होता है।।२१।।

चतुर्थभावस्थगुरुदशाफलम्

चतुर्थकेन्द्रस्थितजीवदाये यानत्रयं भूपतिमित्रभावम् ।
भूपालयोगे यदि भूपतित्वं नो चेत्तथा तत्सदृशं करोति ।।२२।।

चतुर्थ भाव में केन्द्र में स्थित गुरु की दशा में जातक को तीन वाहनों की प्राप्ति होती है, राजा से मित्रभाव रहता है। व्यक्ति का राजयोग फलीभूत हो तो वह राजा बनता है; अन्यथा राजा के समान उसे पद एवं सम्मान प्राप्त होता है।।२२।।

कलत्रभावस्थितगुरुदशाफलम्

कलत्रराशिस्थितजीवदाये दारार्थपुत्रार्थसुखम्प्रयाति ।
विदेशयानं समरे जयञ्च ध्यानं परब्रह्मणि पुण्यकर्म ।।२३।।

सप्तम भाव में स्थित गुरु की दशा में जातक को पत्नी-पुत्रों का सुख प्राप्त होता

है। धन की प्राप्ति होती है तथा विभिन्न प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं। विदेशगमन होता है, मुकदमे इत्यादि में विजय प्राप्त होती है। वह ईश्वर में ध्यानमग्न रहता है तथा पुण्य-कर्म में रत रहता है।।२३।।

दशमस्थजीवदशाफलम्

कर्मस्थितस्यापि गुरोर्विपाके राज्याप्तिमाहुर्मुनयस्तदानीम् ।
भूपालयोगे त्वथ वाऽर्थपुत्रकलत्रसत्कर्मसुराजयोगम् ।।२४।।

कर्म (दशम) भाव में स्थित गुरु की दशा में जातक के राज्य की प्राप्ति की घोषणा मुनि लोग करते हैं। राजयोग फलीभूत होता है अथवा धन प्राप्त होता है, पुत्रसुख होता है, स्त्रीलाभ होता है, शुभ कार्यों में मन लगता है, राजप्रासाद अर्थात् विशाल भवन विना राजयोग के भी प्राप्त होता है।।२४।।

पञ्चमभावस्थगुरुदशाफलम्

पञ्चमस्थगुरोर्दाये मन्त्रोपास्तिं महत्सुखम् ।
सुताप्तिं राजपूजाञ्च वेदान्तश्रवणादिकम् ।।२५।।

पञ्चम भावस्थ गुरु की दशा में जातक मन्त्रोपासना करता है, उसे विशाल सुख की प्राप्ति होती है, पुत्रप्राप्ति होती है। वह राजगृह में पूजा करता है तथा वेदान्तों का श्रवण करता है।।२५।।

त्रिकोणस्थजीवदशाफम्

त्रिकोणसंस्थस्य गुरोर्दशायां स्त्रीपुत्रधान्यार्थविवेकबुद्धिम् ।
मृद्वन्नपानाम्बरपट्टवस्त्रयानादिलाभं भवनेशसौख्यम् ।।२६।।

त्रिकोण भाव में स्थित गुरु की दशा में जातक को स्त्री, पुत्र, धान्य, अर्थ आदि की प्राप्ति के साथ-साथ विवेकबल तथा बुद्धिबल प्राप्त होता है। मीठे अन्न का खान-पान, वस्त्राभूषण की प्राप्ति, सवारी आदि का लाभ प्राप्त होता है; साथ ही जातक को मकान का स्वामित्व एवं सुख प्राप्त होता है।।२६।।

उच्चांशगतजीवदशाफल्

उच्चांशसंयुक्तगुरोर्दशायां भाग्योत्तरं राजसमानमेति ।
प्रवालमुक्तामणिरत्नलाभं सर्वेषु सख्यं समुपैति सौख्यम् ।।२७।।

उच्चांशगत गुरु की दशा में जातक की ऐश्वर्यवृद्धि होती है, उसे राजा से सन्मान प्राप्त होता है। मूँगा, मोती, मणि, रत्न आदि का लाभ प्राप्त होता है साथ ही साथ सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं।।२७।।

नीचांशसंयुक्तगुरुदशाफलम्

नीचांशसंयुक्तगुरोर्विपाके भूपाद्भयं गुल्मविचर्चिकादीन् ।
स्थानच्च्युतिं बन्धुविरोधिताञ्च नृपाग्निचौरैः स्वकुलोद्भवैश्च ।।२८।।

नीचांशसंयुक्त गुरु की दशा में जातक को राजा से भय होता है। गुल्म, अरुचि आदि रोग होते हैं। उसका स्थान छूट जाता है, बन्धु-बान्धवों में विरोध होता है, साथ ही राजा, अग्नि और चोर तथा अपने कुल वालों से भी भय होता है॥२८॥

अस्तङ्गतजीवदशाफलम्

अर्कगजीवदशायां सहसा ज्वरपीडितो भवेत् क्षीणः ।
ऊर्ध्वाङ्गरोगतप्तो दुःशीलत्वं प्रभग्नसंसारः ।।२९।।

सूर्य से युक्त अस्तंगत गुरु की दशा में व्यक्ति अचानक ही ज्वर से पीड़ित हो जाता है, उसका शरीर क्षीण हो जाता है। व्यक्ति के ऊर्ध्व भाग में रोग होता है। वह दुःशील होता है तथा उसे संसार प्रभग्न अर्थात् टूटा हुआ मालूम होता है॥२९॥

गुरुदशाफलम्

आदौ गुरुदशाकाले नृपपूजां महत्सुखम् ।
मध्ये स्त्रीपुत्रलाभादि चान्ते कष्टं विनिर्दिशेत् ।।३०।।

गुरु की दशा में आरम्भ में राजपूज्यता प्राप्त होती है। दशा के मध्य में पुत्रादि का लाभ प्राप्त होता है एवं दशा के अन्त में कष्ट प्राप्त होता है— ऐसा कहना चाहिए॥३०॥

द्वितीयभावगतजीवदशाफलम्

धनस्थितस्यापि गुरोर्विपाके धनायतिम्भूपतिमाननं च ।
विद्याविवादाङ्कितराजगोष्ठीं सर्वोपकारं विजयं सुखं च ।।३१।।

धनभाव में स्थित गुरु की दशा में धनवृद्धि होती है, राजा से मान-सम्मान प्राप्त होता है। राजगोष्ठी में विद्या से सम्बन्धित विवाद होते हैं। उसमें सबका उपकार करने की सामर्थ्य आती है, विजय तथा सौख्य प्राप्त होता है॥३१॥

पुनरपि द्वितीयभावस्थजीवदशाफलम्

नृपकृतबहुमानं भ्रातृभिर्भूमिलाभं
परयुतविजनैर्वा दत्तगोभूमिवित्तम् ।
अशनवसनभूषागन्धमाल्याम्बराणि
परकृतमुपकारं विज्ञतामेति शौर्य्यम् ।। ३२।।

धनभाव में स्थित गुरु की दशा में जातक को राजा द्वारा बहुत सम्मान की प्राप्ति होती है, भाई-बन्धुओं के सहयोग से भूमि का लाभ प्राप्त होता है, शत्रु से अथवा अन्य

दूसरे मनुष्य से गाय, पशुधन तथा भूम्यादि की प्राप्ति होती है। भोजन, वस्त्रादि आभूषण, सुगन्धित वस्तुयें प्राप्त होती हैं। वह दूसरों से उपकृत होता है तथा अच्छी बुद्धिमत्ता एवं शौर्य का प्रदर्शन करता है।।३२।।

तृतीयभावगतजीवदशाफलम्

तृतीयस्थगुरोर्दाये भ्रातृणाञ्च सुखं भवेत् ।
नृपदत्तं धनं सौख्यं गन्धमाल्याम्बरादिकम् ।।३३।।

तृतीय भाव में स्थित गुरु की दशा में जातक को भाईयों का सुख प्राप्त होता है एवं राजा द्वारा प्रदत्त धन से सुख प्राप्त होता है । उसे गन्ध, माला, वस्त्रादि की प्राप्ति होती है।।३३।।

षष्ठभावगतजीवशाफलम्

नीरोगता पुत्रकलत्रलाभं लग्नाद्रिपुस्थस्य गुरोर्दशायाम् ।
आदौ भवेदेवमथान्त्यपाके दारार्थचौरादिभयं सरोगम् ।।३४।।

षष्ठ भाव में स्थित गुरु की दशा में व्यक्ति नीरोगी रहता है। उसे स्त्री-पुत्रादि का लाभ होता है। इन फलों की प्राप्ति दशा के प्रारम्भ में होती है। उसे दशा के अन्त में स्त्री-हानि, धनहानि एवं चौरभय रहता है तथा वह व्यक्ति रोग से पीड़ित होता है।।३४।।

अष्टमस्थजीवदशाफलम्

जीवो मरणपदस्थः करोति सौख्यं स्वबन्धुजनहानिम् ।
स्थानच्युतिं विदेशं चान्ते स्त्रीराजपुत्रसन्मानम् ।।३५।।

अष्टम भाव में स्थित गुरु की दशा में सौख्य की हानि होती है। स्वजनों, बन्धुओं इत्यादि की हानि होती है, विदेशगमन होता है तथा अन्त में स्त्रीलाभ, पुत्रलाभ, राजसम्मान इत्यादि प्राप्त होता है।।३५।।

लाभस्थजीवदशाफलम्

लाभगजीवदशायां सम्प्राप्तौ राज्यलाभमुपयाति ।
वह्वर्थदारपुत्रान् भूपविरोधं स्वबन्धुविद्वेषम् ।।३६।।

एकादश भाव में स्थित गुरु की दशा में व्यक्ति राज्यलाभ प्राप्त करता है, स्त्री तथा बहुत से पुत्र एवं धन की प्राप्ति होती है, राजा से तथा स्वबन्धुओं से द्वेष होता है।।३६।।

व्ययस्थजीवदशाफलम्

व्ययगतजीवदशायां प्राप्तौ वाहनादि समुपयाति ।
लभते विदेशयानं नानाक्लेशैश्च परिभूतः ।।३७।।

बारहवें भाव में स्थित गुरु की दशा में जातक को वाहन आदि प्राप्त होते हैं तथा

बहुत प्रकार के कष्टों से व्यथित होकर उसे स्थान से दूर जाना पड़ता है॥३७॥

स्थानबली जीवदशाफलम्

पाके स्थानबलान्वितस्य च गुरोः क्षेत्रार्थदारात्मजान्
सम्प्राप्नोति गजांश्च वस्त्रकनकं चित्राम्बरं भूषणम् ।
दिग्वीर्यान्वितदेवनायकगुरौ लोके प्रसिद्धिं तथा
जीवे कालबलाधिके नृपवधूसन्मानतां याति सः ।।३८।।

स्थानबल से युक्त गुरु की दशा में जातक को कृषि, धन, स्त्री, पुत्र आदि प्राप्त होते हैं। हाथी, घोड़े, वाहन, वस्त्र, सुवर्णादि, अनेक प्रकार के वस्त्र आभूषण इत्यादि का लाभ होता है। दिग्बल से युक्त गुरु की दशा में लोक में ख्याति प्राप्त होती है। कालबल से युक्त जीव की दशा में राजा-रानियों इत्यादि से व्यक्ति को सम्मान अथवा श्रेष्ठ व्यवहार प्राप्त होता है॥३८॥

निसर्गबलयुतजीवदशाफलम्

निसर्गवीर्यान्वितजीवदाये निसर्गतश्चातिसुखं महत्त्वम् ।
विद्याविलासं रतिकेलिसौख्यं भागीरथीतोयकृताभिषेकम् ।।३९।।

निसर्ग बल से युक्त गुरु की दशा में स्वत: ही व्यक्ति को बहुत प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं। विद्या प्राप्त होती है, कामक्रीड़ा करने का सुख प्राप्त होता है तथा व्यक्ति या तो गंगास्नान को जाता है अथवा उस जल से अभिषिक्त होता है॥३९॥

वक्रजीवदशाफलम्

वक्रं गतस्यापि गुरोर्दशायां महार्थतां याति सुतार्थदारान् ।
युद्धे जयं भूपतिमित्रतां च सुगन्धजाताम्बरवाग्विलासम् ।।४०।।

वक्री गुरु की दशा में धनसम्पन्नता, स्त्री-पुत्र-धनलाभ होता है। वाद-विवाद, मुकदमे इत्यादि में विजय प्राप्त होती है, राज्याधिकारियों से मित्रता होती है, सुगन्धित द्रव्य, उत्तम प्रकार के वस्त्र तथा वाणी का विलास प्राप्त होता है॥४०॥

दृष्टिबलयुक्तजीवदशाफलम्

दृग्वीर्ययुक्तस्य गुरोर्विपाके कृपाकटाक्षेण महीपतीनाम् ।
समस्तभाग्यं समुपैति नित्यं देशान्तरे भ्राम्यति किञ्चिदेव ।।४१।।

दृष्टिबल से युक्त गुरु की दशा में जातक को राजाओं तथा राज्याधिकारियों के कृपाप्रसाद से विभिन्न प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं तथा व्यक्ति अन्य स्थानों का भी थोड़ा-बहुत भ्रमण कर लेता है॥४१॥

क्रूरषष्ट्यंशस्थजीवदशाफलम्

क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्तगुरोर्दायेऽतिकष्टताम् ।
राजकोपावमानादीन् लभते नात्र संशयः।।४२।।

क्रूरषष्ट्यंश से युक्त गुरु की दशा में जातक को कष्ट प्राप्त होता है, उसे राजा के कोप का भाजन बनना पड़ता है तथा अन्य प्रकार के कष्ट भी व्यक्ति को प्राप्त होते हैं।।४२।।

शुभषष्ट्यंशस्थजीवदशाफलम्

सौम्यषष्ट्यंशसंयुक्तगुरोर्दायेऽतिसौख्यताम् ।
वाहनं बन्धुसन्मानं यज्ञवैवाहिकं शुभम् ।।४३।।

शुभ षष्ट्यंश में स्थित गुरु की दशा में जातक को अति सुख प्राप्त होता है, वाहन प्राप्त होता है, भाई-बन्धुओं में सम्मान मिलता है एवं यज्ञादि शुभ कर्म तथा विवाहादि माङ्गलिक कर्म सम्पन्न होते हैं।।४३।।

पारावतांशयुक्तजीवदशाफलम्

पारावतांशयुक्तस्य गुरोर्दाये महत्सुखम् ।
मृद्वन्नपट्टवस्त्रं च हेमविक्रयभूषणम् ।।४४।।

पारावतांश में स्थित गुरु की दशा में जातक को बहुत सुख की प्राप्ति होती है, उसे मिष्ठान्न प्राप्त होता हैं, रेंशमी वस्त्र प्राप्त होते हैं, सुवर्णादियुक्त आभूषण प्राप्त होते हैं।।४४।।

पाशद्रेष्काणयुक्तजीवदशाफलम्

पाशद्रेष्काणयुक्तस्य गुरोर्दाये च बन्धनम् ।
कारागृहप्रवेशश्च निगडं दारविग्रहम् ।।४५।।

पाशद्रेष्काण में स्थित गुरु की दशा में व्यक्ति बन्धन में बँध जाता है, उसे जेल इत्यादि जाना पड़ता है, कठिन स्थान में बन्दी होना पड़ता है, अपहरण का भय रहता है, घर में स्त्री के साथ क्लेश होते रहते हैं।।४५।।

उच्चराशिनीचांशकस्थजीवदशाफलम्

उच्चस्थोऽपि गुरुर्नीचराश्यंशकसमन्वितः ।
महाभाग्ये तु सम्प्राप्ते तत्क्षणादेव नश्यति ।।४६।।

उच्च राशि में स्थित गुरु नीचांशक में हो तब उसकी दशा में व्यक्ति को प्राप्त सभी सुख, ऐश्वर्य के साधन, सौन्दर्य की वस्तुयें इत्यादि का तत्काल नाश हो जाता है।।४६।।

नीचराशि उच्चांशकस्थजीवदशाफलम्

नीचस्थो देवपूज्योऽपि स्वोच्चांशकसमन्वितः ।
भाग्यक्षयेऽपि सम्प्राप्ते भाग्यं याति तदा नरः ।।४७।।

नीच राशि में स्थित गुरु भी यदि अपने उच्चांशक में स्थित हो तो सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सुख-सुविधा के साधन यदि नष्ट हो गये हों तब भी भाग्यबल से व्यक्ति को पुनः प्राप्त हो जाते हैं।।४७।।

इति गुरुदशाफलम्

◆

अथ शुक्रदशाफलम्

परमोच्चशुक्रदशाफलम्

अत्युच्चभृगुदशायां मतविलासप्रियार्थभोगी स्यात् ।
माल्याच्छादनभोजनशयनस्त्रीपुत्रधनयुक्तः ।।४८।।

परम उच्च राशिगत शुक्र की दशा में व्यक्ति हास-परिहास का आनन्द प्राप्त करता है एवं उसे प्रिय वस्तु का भोग प्राप्त होता है। सुगन्धित पुष्प, वस्त्र, भोजन, शय्या, स्त्री-पुत्र तथा धन से युक्त रहता है।।४८।।

उच्चराशिगतशुक्रदशाफलम्

स्वोच्चस्थितस्यापि भृगोर्दशायां स्त्रीसङ्गनष्टार्थविरुद्धधर्मम् ।
पित्रोर्विनाशं समुपैति दुःखं शिरोरुजं भूपतिमाननञ्च ।।४९।।

अपनी उच्च राशि में स्थित शुक्र की दशा में स्त्री के कारण धन नष्ट हो जाता है, जातक विधर्मी हो जाता है, माता-पिता की हानि होती है, व्यक्ति शिरोरोग से दुःखी तथा पीड़ित होता है तथा राजा (या राज्याधिकारियों) से सम्मान मिलता है।।४९।।

विशेष— यहाँ पर सामान्य उच्च राशि (मीन) के फल में जातक की चारित्रिक भ्रष्टता का संकेत किया गया है। शुक्र का उच्चत्व जातक को अतिकामी बनाता है, विशेष रूप से यदि यह मीन का शुक्र सप्तम में हो। अतः लम्पट होने पर वह धर्मरहित तथा विरुद्ध चेष्टा वाला हो ही जाएगा।

उच्चारोही शुक्रदशाफलम्

आरोहिणी शुक्रदशा प्रपन्ना धान्याम्बरालंकृतिकान्तिपूजाम् ।
प्रवृत्तिसिद्धिं स्वजनैर्विरोधं मात्रादिनाशं परदारसङ्गम् ।।५०।।

उच्चारोही शुक्र की दशा में जातक को धन, धान्य, वस्त्र, आभूषण की प्राप्ति होती है, व्यक्ति उत्तम कान्तियुक्त हो जाता है। समाज में पूज्य होता है, उसके द्वारा

कृतकर्म सफल होते हैं तथा स्वजनो से उसका विरोध होता है। व्यक्ति की माता या मातृपक्ष से हानि होती है। अन्य स्त्रियों के संग से दूषित होता है॥५०॥

नीचावरोही शुक्रदशाफलम्

भृगोः सुतस्याप्यवरोहकाले प्रचण्डवेश्यागमनं धनाप्तिम् ।
स्त्रीपुत्रबन्ध्वार्त्तिमनोविकारं हृच्छूलरोगं. मदनार्त्तिमेति ।।५१।।

नीचावरोही शुक्र की दशा में व्यक्ति वेश्यागामी हो जाता है। उसे धनप्राप्ति होती है एवं उसके स्त्री तथा पुत्र पीड़ित होते हैं। भाई-बन्धुओं की हानि का भय रहता है, मनोविकार होते हैं; हृदयशूल की सम्भावना रहती है तथा व्यक्ति कामज रोगों से ग्रसित रहता है॥५१॥

परमनीचगतशुक्रदशाफलम्

उद्वेगरोगतप्तः कर्मसु विफलेषु सर्वदाभिरतः ।
अतिनीचगस्य दाये शुक्रस्यात्मार्थदारपुत्रार्त्तिम् ।।५२।।

परम नीच राशिगत शुक्र की दशा में व्यक्ति उद्वेग रोग से पीड़ित रहता है। उसे कार्यों में असफलता प्राप्त होती है फिर भी हमेशा कार्यों में तत्पर रहता है। उसके शरीर में पीड़ा होती है तथा स्त्री, पुत्र इत्यादि भी पीड़ित रहते हैं॥५२॥

मूलत्रिकोणराशिस्थशुक्रदशाफलम्

मूलत्रिकोणभाजो भृगोर्दशायां महाधिपत्यं स्यात् ।
क्रयविक्रयेषु कुशलो धनकीर्त्तिसमन्वितो विधिज्ञश्च ।।५३।।

मूल त्रिकोण राशि में (तुला में) स्थित शुक्र की दशा में जातक को महाधिपत्य (राज्याधिकार) प्राप्त होता है। व्यक्ति वस्तु के क्रय-विक्रय में कुशल होता है, धन एवं कीर्त्ति से युक्त होता है तथा विधि (अर्थात् कानून) को जानने वाला होता है॥५३॥

वृषराशिगतशुक्रदशाफलम्

शुक्रक्षेत्रदशायां लभते स्त्रीपुत्रमित्रधनशौर्यम् ।
नित्योत्साहं द्वेषं परोपकारं महत्त्वं च ।।५४।।

शुक्र की वृषभ राशि में स्थिति हो तो उसकी दशा में स्त्री, पुत्र, मित्र तथा धन एवं पराक्रमशील होता है। व्यक्ति में नित-प्रतिदिन उत्साह में वृद्धि होती जाती है, द्वेष भी प्राप्त होता है, उपकार करने की सामर्थ्य तथा बड़प्पन प्राप्त होता है॥५४॥

अतिशत्रुराशिस्थभृगुदशाफलम्

भृगोर्दशायामतिशत्रुराशिं गतस्य पुत्रार्थकलत्रहानिम् ।
प्रभग्नसंसारविशीर्णदिहं गुल्माक्षिरोगं ग्रहणीप्रकोपम् ।।५५।।

अतिशत्रु की राशि में स्थित शुक्र की दशा में जातक को पुत्र, धन तथा स्त्री की

हानि होती है, संसार से विरक्ति होती है, शरीर शिथिल हो जाता है। गुल्मरोग तथा नेत्ररोग एवं संग्रहणी (पेचिश) से व्यक्ति परेशान रहता है॥५५॥

शत्रुराशिस्थशुक्रदशाफलम्

शत्रुक्षेत्रिदशायां भृगोरपत्यार्थदारहानिः स्यात् ।
भूपतिरोषं कुरुते मत्तविलासार्थपापकर्माणि ।।५६।।

शत्रु राशिगत शुक्र की दशा में जातक के पुत्र, धन तथा स्त्री की हानि होती है। व्यक्ति द्वारा संगृहित विलास की वस्तुयें नष्ट हो जाती हैं और व्यक्ति पापकर्म में रत हो जाता है॥५६॥

मित्रराशिगतशुक्रदशाफलम्

मित्रक्षेत्रदशायां परोपकारी कलाविधिज्ञश्च ।
पूगारामकृषिः स्याद् देवमनुष्यैश्च वोद्धृतार्थश्च ।।५७।।

मित्रक्षेत्री शुक्र की दशा में व्यक्ति परोपकारी, कला तथा विधि में प्रवीण होता है। वह सुपारी इत्यादि का बागान लगाता है तथा देवालयों के निर्माण एवं मनुष्यों के हितार्थ कार्यों में धन को व्यय करता है॥५७॥

अतिमित्रराशिगतशुक्रदशाफलम्

अतिमित्रशुक्रदाये भूपतिसन्मानसौख्यं च ।
गोधनवाजिसमेतं गजपतिसङ्घैर्निरस्तदोषैश्च ।।५८।।

अतिमित्र की राशि में स्थित शुक्र की दशा में जातक को राजा से सम्मान प्राप्त होता है, सुख प्राप्त होता है, गाय इत्यादि दुधारू पशु तथा वाहन प्राप्त होते हैं तथा व्यक्ति अन्य बड़े-बड़े वाहनों को प्राप्त करता है॥५८॥

समराशिगतशुक्रदशाफलम्

समर्क्षगस्यापि भृगोर्विपाके प्रमेहगुल्माक्षिगुदप्ररोगः ।
किञ्चित्सुखं भूपतिवह्निचौरैर्भयं स्वनामाङ्कितगद्यपद्यम् ।।५९।।

सम राशि में स्थित ग्रह से शुक्र की दशा में जातक को प्रमेह, गुल्मरोग, आँखों के रोग, गुदद्वार से सम्बन्धित रोग (बवासीर इत्यादि) होते हैं एवं थोड़ा सुख प्राप्त होता है। व्यक्ति राजा, अग्नि तथा चोर से भयभीत रहता है तथा उसके नाम से गद्य-पद्य की रचना की जाती है॥५९॥

नीचगतग्रहयुक्तशुक्रफलम्

नीचखेचरसंयुक्तभृगोर्दाये महाद्भयम् ।
अपवादकृतं दोषं लभते पापकर्मभिः ।।६०।।

नीच राशि में स्थित ग्रह से युक्त शुक्र की दशा में जातक को भय उपस्थित होते हैं, व्यक्ति को पापकर्मों के कारण लोकापवाद तथा भ्रान्तियों का सामना करना पड़ता है॥६०॥

उच्चराशिगतग्रहयुक्तशुक्रदशाफलम्

स्वोच्चस्थितेन सहितस्य भृगोर्विपाके
राज्यं महत्त्वसमराधिपतित्वमेव ।
हेमाम्बरादिमणिभूषणयानलाभं
भेरीमृदङ्गपणवारववाद्यघोषैः ।।६१।।

उच्च राशि में स्थित ग्रह से युक्त शुक्र की दशा में राज्य में पूज्यत्व, युद्ध की प्रधानता, स्वर्णाभूषण, मणि, वस्त्रादि की प्राप्ति होती है। भेरी, मृदंग, नक्कारे इत्यादि से युक्त वाहन में वह गमन करता है॥६१॥

पापयुक्तशुक्रदशाफलम्

पापान्वितस्यापि भृगोर्दशायां स्थानच्युतिं बन्धुजनैर्विरोधम् ।
आचारहानिं कलहप्रियत्वं कृष्यर्थभूम्यात्मजदारनाशम् ।।६२।।

पापग्रहयुक्त शुक्र की दशा में स्थानभ्रष्टता अर्थात् पदभ्रष्टता, भाई-बन्धुओं का विरोध, आचारहीनता, कलह में वृद्धि होती है। कृषि, धन, भूमि, आत्मज (पुत्र) तथा पत्नी का नाश होता है॥६२॥

शुभग्रहयुक्तशुक्रदशाफलम्

शुभान्वितस्यापि भृगोर्दशायां सौभाग्यमित्रात्मजधान्यलाभम् ।
नरेशपूजां गजवाजिसङ्घं प्रवालमुक्तामणियानलाभम् ।।६३।।

शुभग्रहयुक्त शुक्र की दशा में सौभाग्य (ऐश्वर्य इत्यादि) प्राप्त होते हैं, मित्र तथा पुत्र से लाभ होता है, धान्यलाभ होता है, राजा से पूजित होता है, वाहनादि प्राप्त होते हैं, विभिन्न प्रकार के रत्न, वाहन इत्यादि का लाभ प्राप्त होता है॥६३॥

पापदृष्टशुक्रदशाफलम्

पापेक्षितस्यापि भृगोर्दशायां मानार्थहानिं समुपैति दुःखम् ।
स्त्रिया विरोधं स्वपदच्युतिञ्च विदेशवासं निजकर्महीनम् ।।६४।।

पापदृष्ट शुक्र की दशा में धन, मान-सम्मान इत्यादि की हानि होती है, दुःख होता है। स्त्रियों का विरोध तथा स्वपद से च्युति होती है, विदेश में निवास होता है और उसका कारण स्वकृत हीन कर्म होते हैं॥६४॥

शुभग्रहदृष्टशुक्रदशाफलम्

शुभेक्षितस्यापि भृगोर्विपाके धनाम्बरं भूपतिपूजनं च ।
जनाधिपत्यं स्वशरीरकान्तिं कलत्रमित्रात्मज सौख्यमेति ।।६५।।

शुभग्रह से दृष्ट शुक्र ग्रह की दशा में जातक की धन, वस्त्र इत्यादि प्राप्त होते हैं। जातक राजा से पूजित होता है, उसे नायकत्व प्राप्त होता है, शरीर की कान्ति में वृद्धि होती है, पत्नी, मित्र तथा पुत्रों का सुख प्राप्त होता है।।६५।।

केन्द्रगतशुक्रदशाफलम्

केन्द्रे गतस्य हि दशा भृगुनन्दनस्य यानाम्बरादिमणिभूषितदेहकान्तिम् ।
राज्यार्थभूमिकृषिवाहनवस्त्रशस्त्रदुर्गाधियानवनवासजलाभिषेकम् ।।६६।।

केन्द्रभाव में स्थित शुक्र की दशा में वाहन, वस्त्र आदि की प्राप्ति, मणि, रत्नाभूषण तथा देहकान्ति प्राप्त होती है। राज्य, धन, भूमि, वाहन, वस्त्रादि, अस्त्र-शस्त्र, किले में गमन तथा दुर्गम स्थान में निवास और जल से अभिषेक होता है।।६६।।

लग्नस्थशुक्रदशाफलम्

लग्न शुक्रदशायां सम्प्राप्तो राजमाननं लभते ।
मणिगोधनकृषिलाभं परापवादं महोत्साहम् ।।६७।।

लग्न में स्थित शुक्र की दशा में व्यक्ति राज्य से सम्मान प्राप्त करता है। उसे मणि, गाय इत्यादि पशु, धन, कृषि इत्यादि का लाभ होता है। मन उत्साहित रहता है तथा व्यक्ति को अपवाद प्राप्त होते हैं।।६७।।

चतुर्थभावस्थशुक्रदशाफलम्

चतुर्थराशिस्थितशुक्रदाये राज्यं महत्सौख्यमुपैति यानम् ।
कृषिक्रियावित्तपशुप्रजानां वृद्धिं प्रतापान्वितकीर्तिजालम् ।।६८।।

चौथे शुक्र की दशा में जातक को राज्य तथा महासुख प्राप्त होता है। कृषिकर्म, धन, पशु, सन्तान में वृद्धि होती है। व्यक्ति का प्रताप एवं कीर्ति फैलती है।।६८।।

सप्तमस्थशुक्रदशाफलम्

कलत्रराशिस्थितशुक्रदाये कलत्रनाशं त्वथ वा विदेशम् ।
प्रमेहगुल्मादिशरीररोगं प्रभग्नवित्तात्मजबन्धुराज्यम् ।।६९।।

सप्तम भाव में स्थित शुक्र की दशा में जातक की स्त्री का नाश हो जाता है अथव विदेशगमन होता है, व्यक्ति प्रमेह, गुल्म आदि से पीड़ित होता है, धन, पुत्र, बन्धु, रोग इत्यादि तथा राज्यभग्न हो जाता है।।६९।।

दशमस्थशुक्रदशाफलम्

कर्मस्थशुक्रस्य दशाविपाके विद्याधनप्राप्तिनरेशपूजा ।
भाग्योत्तरं पालितदेहकान्तिं दिगन्तरप्राप्तयशः प्रतापम् ।।७०।।

कर्मभाव में स्थित शुक्र की दशा में व्यक्ति को विद्या तथा धन प्राप्त होता है। वह राजाओं से पूजित होता है एवं उसे ऐश्वर्य के सभी साधन प्राप्त होते हैं। उसकी देहकान्ति में वृद्धि होती है तथा सभी दिशाओं अर्थात् चारो ओर उसी की यश गूँजता रहता है।।७०।।

नवमस्थशुक्रदशाफलम्

त्रित्रिकोणगतः शुक्रः करोति नृपपूज्यताम् ।
यज्ञकर्मादिलाभञ्च गुरुपित्रोः सुखं यशः ।।७१।।

त्रि-त्रिकोण (नवम भाव) में स्थित शुक्र की दशा में व्यक्ति राजा द्वारा पूजित होता है। उसे यज्ञकर्मों से लाभ प्राप्त होता है तथा वह गुरु एवं पिता का सुख एवं यश प्राप्त करता है।।७१।।

पञ्चमस्थशुक्रदशाफलम्

पञ्चमस्थभृगोर्दाये पुत्रावाप्तिं विनिर्दिशेत् ।
कीर्त्तिञ्च राजपूजाञ्च सर्वेषामुपकारकम् ।।७२।।

पञ्चम भाव में स्थित शुक्र की दशा में जातक को पुत्र की प्राप्ति होती है। उसकी कीर्ति फैलती है तथा व्यक्ति राजा से पूजित होता है; साथ ही अपने कर्मों से सभी को उपकृत करता है।।७२।।

धनभावस्थशुक्रदशाफलम्

वित्तगशुक्रदशायां धनहानिमाहुर्धनायतिं चापि ।
अन्नसुखं वाग्विलासं परोपकारं नरेशसन्मानम् ।।७३।।

धनस्थानगत शुक्र की दशा में पहले धनहानि, तत्पश्चात् धनवृद्धि होती है। अन्न का सुख, वाणी का विलास (हास-परिहास), दूसरों का उपकार करने की प्रवृत्ति तथा राजा से सम्मान मिलता है।।७३।।

तृतीयभावस्थशुक्रदशाफलम्

तृतीयराशिस्थितशुक्रदाये धैर्यं महोत्साहमदीनसत्त्वम् ।
चित्राम्बरालंकृतवाहनाप्तिं सहोदराणां बहुभाग्यलाभम् ।।७४।।

तीसरे भाव में स्थित शुक्र की दशा में धैर्य, मन का उत्साह, नम्रता तथा प्रतापी होता है, विचित्र प्रकार के वस्त्रों से शोभित होता है तथा वाहन प्राप्त करता है, भाईयों का सुख प्राप्त होता है तथा बहुत प्रकार के ऐश्वर्य आदि का लाभ प्राप्त करता है।।७४।।

षष्ठभावस्थशुक्रदशाफलम्

भृगोर्विपाकेऽरिगतस्य नाशं धान्यार्थबह्वात्मजसोदराणाम् ।
रोगं महत्कार्यविनाशनं च शत्रोर्भयं भूपतिवह्निचौरैः ।।७५।।

छठे भाव में स्थित शुक्र की दशा में जातक के अन्न, धन, पुत्र, भाई इत्यादि की हानि होती है, कठिन रोग होता है। शत्रुओं से, राजा से, अग्नि से तथा चोर से भय उत्पन्न होता है।।७५।।

अष्टमस्थशुक्रदशाफलम्

रन्ध्रे स्थितस्यापि भृगोर्विपाके शस्त्राग्निचौरक्षतमित्रविघ्नम् ।
क्वचित्सुखं किञ्चिदुपैति वित्तं क्वचिन्नरेशाप्तयशः प्रतापम् ।।७६।।

अष्टमस्थ शुक्र की दशा में शस्त्र, अग्नि, चोर से भय होता है, चोट लगती है एवं मित्रता में विघ्न होता है। कभी-कभी सुख प्राप्त होता है, कभी धन प्राप्त होता है तथा कभी-कभी राजा से प्रशंसित एवं प्रतापी होता है।।७६।।

लाभस्थशुक्रदशाफलम्

लाभस्थितस्यापि भृगोर्विपाके सुगन्धमाल्याम्बरराजपूजाम् ।
पुत्रार्थसौख्यं कृषिविक्रयं च दानं स्वनामाङ्कितपद्यजालम् ।।७७।।

लाभस्थ शुक्र की दशा में जातक को सुगन्धित द्रव्य, मालायें, वस्त्र इत्यादि प्राप्त होते हैं। जातक राजपूजित होता है, पुत्र तथा धन का सुख प्राप्त करता है, कृषि-विक्रय से लाभ, दानादि देता है तथा उसके नाम पर पद्यों की रचना की जाती है।।७७।।

व्ययस्थशुक्रदशाफलम्

व्ययगतशुक्रदशायां लभते धान्यार्थराजसन्मानम् ।
स्थानच्युतिं प्रवासं मातृवियोगं मनोविलासं च ।।७८।।

बारहवें में बैठे हुए शुक्र की दशा में जातक को धन से लाभ होता है, अन्न की प्राप्ति है, राजा से सम्मान मिलता है। जातक स्थानभ्रष्ट हो जाता है, उसे प्रवास करना पड़ता है, माता से वियोग होता है तथा व्यक्ति मनोविलासी हो जाता है।।७८।।

जीवराशिगतशुक्रदशाफलम्

जीवर्क्षगतस्य भृगोः स्त्रीपुत्रभूमिनाशनं कुरुते ।
कर्मसु नित्योद्विग्नो जननीक्लेशान्वितो मनोदुःखी ।।७९।।

गुरु की राशि में स्थित शुक्र की दशा में स्त्री, पुत्र, भूमि का नाश होता है। कामों में उद्विग्नता रहती है, माता को कष्ट तथा मन दुःखी रहता है।।७९।।

अस्तंगतशुक्रदशाफलम्

अर्कगशुक्रदशायां जीर्णगृहौकाः शुभावरोधश्च ।
लभते दारविनाशं भ्रातृवियोगं च कलहं च ।।८०।।

अस्तंगत शुक्र की दशा में जीर्ण गृह में निवास होता है, शुभ कार्यों में विघ्न आते है, स्त्रीहानि, भाइयों से द्वेष, कलह तथा वियोग होता है।।८०।।

सूर्यराशिगतशुक्रदशाफलम्

सिंहगशुक्रदशायां लभते विविधापदं मनोदुःखम् ।
उद्योगरोगतप्तः कर्मसु विफलेषु सर्वदाभिरतः ।। ८१।।

सूर्य की राशि सिंहगत शुक्र की दशा में अनेक प्रकार की विपत्तियाँ आती हैं, मन में क्लेश रहता है, व्यापार में हानि, रोग एवं कृत कर्म में विफलता मिलती है तथा व्यक्ति निष्फल कार्यों में लगा रहता है।।८१।।

स्थानबलयुक्तशुक्रदशाफलम्

शुक्रे स्थानबलाधिके नरपतेः सन्माननं भूषणं
विद्यावादविवादगोष्ठिरसिकं नामद्वयं सम्भ्रमम् ।
तस्मिन् दिक्प्रबलान्विते बहुयश पुत्रार्थदाराम्बरं
शुक्रे कालबलान्विते सुखधनं कीर्त्तिः स्वनामाङ्किता ।।८२।।

स्थान-बलयुक्त शुक्र की दशा में जातक को आभूषण तथा राजा से सम्मान प्राप्त होता है, विद्या से सम्बन्धित वाद-विवाद वाली गोष्ठी में जाना होता है, मन में रसिकता में वृद्धि होती है। दो नामों की प्राप्ति की है अर्थात् उसे दो पदों की किंवा पदनाम किंवा उपनाम की प्राप्ति होती है। दिग्बली शुक्र की दशा में जातक को बहुत यश, पुत्र, धन, स्त्री तथा वस्त्र प्राप्त होते हैं। कालबली शुक्र की दशा में सुख, धन तथा नाम से युक्त कीर्ति मिलती है।।८२।।

निसर्गबलयुक्तशुक्रदशाफलम्

निसर्गवीर्ययुक्तस्य भृगोर्दाये महत्सुखम् ।
कृषिगोभूमिवित्तादिभ्रातृमातृसुखं भवेत् ।।८३।।

नैसर्गिक बल से युक्त शुक्र की दशा में जातक को बहुत से सुख प्राप्त होते हैं, जातक को कृषि, गाय इत्यादि, भूमि, धन आदि प्राप्त होते हैं एवं भाई-बन्धुओं तथा माता का सुख प्राप्त होता है।।८३।।

वक्रशुक्रदशाफलम्

वक्रं गतस्यापि भृगोः सुतस्य दशाविपाके त्वतिराजपूज्यम् ।
मृदङ्गभेरीरवयुक्तयानं विचित्रवस्त्राभरणानि राज्यम् ।।८४।।

वक्री शुक्र की दशा में व्यक्ति को राजपूज्यता एवं मृदंग, भेरी आदि के शब्दों से युक्त वाहन की प्राप्ति होती है। उसे विचित्र प्रकार के वस्त्र प्राप्त होते हैं और राज्य (राज्यपद) प्राप्त होता है॥८४॥

दृग्बलयुक्तशुक्रदशाफलम्

दृग्वीर्ययुक्तस्य भृगोर्विपाके यज्ञादिकर्माणि करोति काले ।
विद्याविलासं शयनाम्बरञ्च नृपाभिषेकं कलहं विरोधम् ।।८५।।

दृष्टिबल से युक्त शुक्र की दशा में जातक यज्ञ इत्यादि कर्म करता है, उसे विद्या प्राप्त होती है, बिछावन प्राप्त होता है, राजा का अभिषेक देखने को प्राप्त होता है, झगड़ा तथा विरोध होता है॥८५॥

क्रूरषष्ट्यंशस्थितशुक्रदशाफलम्

क्रूरषष्ट्यंशयुक्तस्य भृगोर्दाये विपद्भयम् ।
चौराग्निराजभीतिश्च कृषिगोभूमिनाशनम् ।।८६।।

क्रूर षष्ट्यंश में स्थित शुक्र की दशा में विपत्ति तथा भय होते हैं। चौर, अग्नि तथा राजदण्ड का भय रहता है एवं कृषि, गाय तथा भूमि का विनाश हो जाता है॥८६॥

सौम्यषष्ट्यंशागतशुक्रदशाफलम्

सौम्यषष्ट्यंशयुक्तस्य भृगोर्दाये महत्सुखम् ।
कूपारामतडागानां निर्माणं देवपूजनम् ।।८७।।

शुभ षष्ट्यंश से युक्त शुक्र की दशा में बहुत आनन्द की प्राप्ति होती है। जातक कुँआ, बगीचा, तालाब इत्यादि का निर्माण कराता है तथा देवपूजन करता है॥८७॥

वैशेषिकांशयुक्तशुक्रदशाफलम्

वैशेषिकांशयुक्तस्य भृगोर्दाये महत्सुखम् ।
वाहनं भूपसन्मानं भ्रातृस्त्रीधनसम्पदः ।।८८।।

वैशेषिकांशयुक्त शुक्र की दशा में बहुत सुख प्राप्त होता है, वाहन मिलता है, राजा से सम्मानित होता है। जातक को भाई, स्त्री, धन, सम्पत्ति प्राप्त होता है॥८८॥

क्रूरद्रेष्काणस्थितशुक्रदशाफलम्

क्रूरद्रेष्काणसंयुक्तभृगोर्दायेऽरिभीतयः ।
कारागारमहत्कष्टमनलं चौरपीडनम् ।।८९।।

क्रूर द्रेष्काण से युक्त शुक्र की दशा में शत्रु से कष्ट होता है, कारागार (जेल) का कष्ट होता है, अग्नि तथा चौर से पीड़ा होती है॥८९॥

उच्चराशिनीचांशगतशुक्रदशाफलम्

उच्चक्षेत्रेऽपि नीचांशयुक्तः शुक्रोऽतिकष्टदः ।
करोति राज्यनाशञ्च स्थाननाशमथापि वा ।।९०।।

उच्च राशि तथा नीचांश में स्थित शुक्र की दशा अतिकष्टप्रद होती है। यह राज्य का नाश करती है अथवा स्थान का नाश करती है।।९०।।

नीचराशि उच्चांशकगतशुक्रदशाफलम्

उच्चांशयुक्तशुक्रोऽपि नीचराशिसमन्वितः ।
कृषिगोभूमिवाणिज्यं धनधान्यविवर्द्धनम् ।।९१।।

यदि शुक्र नीच राशि में उच्चांशक में हो तो इसकी दशा में कृषि, भूमि तथा व्यापार में लाभ होता है, धन प्राप्त होता है तथा धान्य की भी प्राप्ति होती है।।९१।।

इति शुक्रदशाफलम्

◆

अथ शनिदशाफलम्

परमोच्चगतशनिदशाफलम्

मन्दोऽत्युच्चदशायां ग्रामसभामण्डलाधिपत्यं स्यात् ।
लभते विनोदशीलं पितृनाशं बन्धुकलहं च ।।९२।।

परमोच्चांश में स्थित शनि की दशा में जातक को ग्रामसभा, मण्डल का आधिपत्य प्राप्त होता है, स्वभाव में विनोदशीलता आती है, पितृनाश होता है तथा भाई-बन्धुओं से कलह होता है।।९२।।

उच्चगतशनिदशाफलम्

स्वोच्चदशायां कुरुते देशभ्रंशं मनोरुजं दुःखम् ।
वाणिज्यसत्त्वहानिं कृषिहानिं नृपविरोधञ्च ।।९३।।

उच्वगत शनि की दशा दाँत गिराती है, मन का रोग, दुःख, व्यापार में हानि, तेज की हानि, कृषि की हानि और राजा से विरोध भी कराती है।।९३।।

आरोही शनिदशाफलम्

आरोहिणी वासरनाथसूनोर्दशाविपाके नृपलब्धभाग्यम् ।
वाणिज्यलाभं कृषिभूमिलाभं गोवाजियानं सुतदारलाभम् ।।९४।।

उच्च राशि में जाने वाले शनि की दशा में राजा से ऐश्वर्य प्राप्त होता है। व्यापार में लाभ, गौ, घोड़े, सवारी, पुत्र, स्त्री का लाभ होता है।।९४।।

अवरोहिशनिदशाफलम्

दिनेशसूनोस्त्ववरोहकाले राज्यच्युतिं दारसुतार्थनाशम् ।
भाग्यक्षयं भूपतिकोपयुक्तं प्रेष्यत्वमायाति गुदाक्षिरोगम् ।।९५।।

नीच राशि में जाने वाले शनि की दशा में जातक को राज्यहानि, स्त्री-पुत्र-धन का नाश, ऐश्वर्य का क्षय, राजा के कोपसहित पराया प्रेष्यत्व (दूतकर्म) और गुदा एवं नेत्र में रोग होता है।।९५।।

नीचराशिगतशनिदशाफलम्

नीचस्थितस्यापि दिनेशसूनोर्दाये कलत्रात्मजसोदराणाम् ।
नाशं महत्कष्टतरां कृषिं च नीचानुवृत्त्या समुपैति वृत्तिम् ।।९६।।

नीच राशिगत शनि की दशा में स्त्री-पुत्र-भाइयों का नाश, कृषि बड़े कष्ट से और आजीवन नीच वृत्ति से होती है।।९६।।

मूलत्रिकोणशनिदशाफलम्

मूलत्रिकोणनिलयस्य शनेर्दशायां
देशान्तरादिवनवासमुपैति काले ।
नामद्वयं यदि सभानगराधिपत्यं
विद्वेषणं सुतकलत्रधनादिभिर्वा ।।९७।।

मूल त्रिकोण राशिगत शनि की दशा में देशान्तरगमन, वन में वास, उपाधिनाम, सभा एवं नगर का आधिपत्य एवं पुत्र, स्त्री अथवा धन से विद्वेषिता प्राप्त होती है।।९७।।

स्वक्षेत्री शनिदशाफलम्

स्वक्षेत्रगस्य च दशा दिवसेशसूनो-
र्द्वेषं करोति बलपौरुषकीर्तिजालम् ।
राज्याश्रयं कनकभूषणभूमिलाभं
धैर्यं स्वनामसदृशानुगुणञ्च सौख्यम् ।।९८।।

स्वक्षेत्री शनि की दशा में शत्रुता तथा द्वेष उत्पन्न होते हैं, पराक्रम तथा कीर्ति फैलती है। शासन पक्ष से सहयोग मिलता है। स्वर्णाभूषण, भूमि, भवन, भूखण्ड आदि की खरीददारी होती है। धैर्य के साथ कार्य सम्पन्न होते हैं। व्यक्ति को उसके नाम-गुणों तथा ख्याति के अनुसार सुख प्राप्त होता है।।९८।।

अतिशत्रुराशिगतशनिदशाफलम्

शनेर्दशायामतिशत्रुगस्य स्थानच्युतिं बन्धुविरोधिताञ्च ।
चौरादिभूपैर्भयमत्र विघ्नो भृत्यार्थदारात्मजकोपमेति ।।९९।।

अति शत्रु राशिस्थ शनि की दशा में स्थानान्तर, पदावनति होती है या नौकरी छूट जाती है। भाई-बन्धुओं से विरोध होता है (अथवा नौकरी में स्टाफ के सदस्यों से वैमनस्य हो जाता है)। चोरों, डाकुओं, जेबकतरों, धोखेबाजों, ठगों या अपहरणकर्त्ताओं से भय होता है। शासनपक्ष से भय होता है, कार्यों में बाधा उत्पन्न होती है, नौकर-चाकर, पत्नी-प्रेमिका तथा पुत्रादि में असन्तोष उत्पन्न होता है। फैक्ट्री में श्रमिक हड़ताल तथा बगावत करते हैं॥९९॥

शत्रुराशिगतशनिदशाफलम्

दिनेशसूनोस्त्वरिराशिगस्य वैश्याद्धनं प्राप्यति भूमिनाशम् ।
कृषेर्विनाशं स्वपदच्युतिञ्च वैरं समायाति शरीरकृच्छ्रम् ।।१००।।

शत्रु राशि में स्थित शनि की दशा में जातक को व्यापारियों से धनलाभ होता है। भूखण्ड या भूमि पर दूसरों का आधिपत्य हो जाता है या अन्य प्रकार से घाटा या भूमिसम्बन्धी हानि होती है। खेती-बाड़ी, बाग-बगीचे आदि की फसल ओला, पाला, टिड्डी, सूखा, कीड़ा, बाढ़ आदि से नष्ट होती है। पद छिन जाता है, शत्रुओं की अधिकता होती है तथा शरीर में कष्ट रहता है॥१००॥

मित्रक्षेत्री शनिदशाफलम्

मित्रक्षेत्रदशायां मन्दस्य तु शिल्पकर्मगुणवेत्ता ।
ज्ञानबलञ्च प्रतापं ददाति दुःखं महत्त्वञ्च ।।१०१।।

मित्रक्षेत्री शनि की दशा में जातक द्वारा अनेक प्रकार का शिल्प (तकनीकी ज्ञान) सीखा जाता है। उसके ज्ञान की धाक जम जाती है। उसकी ख्याति चारो ओर फैलती है। उसका महत्त्व बढ़ता है; परन्तु इस दशा में दुःख भी रहता है (अधिक परिश्रम करना पड़ता है)॥१०१॥

अधिमित्रगतशनिदशाफलम्

अधिमित्रमन्ददाये ददाति सौख्यं नरेशसन्मानम् ।
सुतधनदारविशेषात् पशुकृषिमहिषादिवाणिज्यम् ।।१०२।।

अधिमित्र राशिगत शनि की महादशा में जातक को सुख तथा राजसम्मान मिलता है। पुत्र, धन, स्त्री आदि से सुख मिलता है। पशु, कृषि तथा भैंस, गाय आदि के व्यापार से लाभ मिलता है। जातक इनके व्यापार में प्रवृत्त होता है (काले रंग के पशुओं पर शनि का अधिकार है; अत: काली भैंसों तथा काली गायों के पालने तथा क्रय-विक्रय से लाभ होता है)॥१०२॥

समराशिगतशनिदशाफलम्

समर्क्षगस्यापि शनेर्दशायां समानबुद्धिः सुतदारमित्रे ।
भृत्यापदं बन्धुजनेषु वैरं देहस्य कष्टं क्षयवातपित्तैः ।।१०३।।

सम राशिगत शनि की दशा में पुत्रों, स्त्रियों एवं मित्रों में समता का भाव होता है (प्राचीन काल में व्यक्ति के एक से अधिक पत्नियाँ हुआ करती थीं)। नौकर-चाकर काम छोड़कर चले जाते हैं या सङ्कटग्रस्त हो जाते हैं। बान्धवों से शत्रुता हो जाती है। शरीर में रोगादि का कष्ट रहता है एवं उसका शरीर वात-पित्त की अधिकता से क्षीण हो जाता है।।१०३।।

नीचराशिगते नीचसंयुक्ते वा शनिदशाफलम्

नीचखेचरसंयुक्तशनेर्दाये महद्भयम् ।
विप्रलम्भोपवासश्च नीचवृत्त्यानुजीवनम् ।।१०४।।

यदि शनि नीच राशि में हो या किसी नीच ग्रह के साथ हो तो उसकी महादशा में जातक को महान् भय होता है। विप्रलम्भ होता है अर्थात् जातक अपने वादे पूरा नहीं कर पाता है। उसे समय पर भोजन की प्राप्ति नहीं होती है एवं नीच वृत्ति (चपरासी आदि कार्य) से उसका जीविकोपार्जन होता है।।१०४।।

उच्चस्थग्रहसंयुक्तशनिदशाफलम्

स्वोच्चखेचरसंयुक्तशनेर्दाये महत्सुखम् ।
किञ्चिद्राज्यं कृषेर्लाभं भृत्यवर्गार्थनाशनम् ।।१०५।।

यदि कुण्डली में शनि किसी उच्च राशिगत ग्रह के साथ स्थित होता है तो उसकी दशा आने पर जातक को बहुत सुख प्राप्त होता है। कुछ-कुछ अधिकार तथा सम्मान की भी प्राप्ति होती है तथा थोड़ी मात्रा में कृषि आदि कार्यों से लाभ होता है। नौकर-चाकर अस्वस्थता या अन्य कारणों से काम पर नहीं आते हैं या फिर कामचोर हो जाते हैं। वे मेहनत से काम नहीं करते; अत: धन की हानि होती है।।१०५।।

पापान्वितशनिदशाफलम्

पापान्वितस्यापि शनेर्दशायां पापानि गूढानि करोति काले ।
नीचस्त्रिया सङ्गमनं विशेषात् चौरादिनीचैः कलहं विदारम् ।।१०६।।

पापग्रहों से युक्त शनि की दशा आने पर जातक छिपकर दुष्कर्म करता है। नीच स्त्रियों (बुरी एवं वदचलन स्त्रियों) के साथ ही उसका अधिकांश समय व्यतीत होता है। इस दशा में उसका समाजविरोधी तत्त्वों, चोरों, उचक्कों तथा उठाईगीरों से झगड़ा होता है। उसे स्त्री की हानि होती है अथवा वह घायल होता है अथवा वह शरीर के फटने से कष्ट भोगता है।।१०६।।

विदारम्— इस श्लोक में विदारम् शब्द आया है, जिसका अर्थात् वि + दारम् = स्त्री से रहित होता है। परन्तु 'विदार:' (वि + धा + घञ्) का अर्थ फाड़ना, चीरना, घायल होना तथा भगन्दर-जैसी बीमारी अर्थात् फिशर आदि भी होता है। पापी शनि की दशा में यह भी होना सम्भव है।

शुभान्वितशनिदशाफलम्

शुभान्वितस्यापि शनेर्दशायां विशेषतो ज्ञानमुपैति काले ।
परोपकारं नृपलब्धभाग्यं कृष्णानि धान्यानि यशश्च लाभम् ।।१०७।।

शुभ ग्रह से संयुक्त शनि की दशा में जातक को विशेष ज्ञान (दार्शनिक तत्त्वज्ञान) प्राप्त होता है। उन दिनों वह परोपकार के कार्यों में लगा रहता है। राजपक्ष से उसकी भाग्यवृद्धि होती है। शनि काले रंग के धान्यों का कारक होता है; अत: इस दशा में काले रंग के धान्य (उड़द, तिल आदि), कृष्ण वर्ण के वस्त्र, लोहा, तैल, काली भैंस, गाय, बकरी आदि का लाभ होता है तथा यश प्राप्त होता है।।१०७।।

पापेक्षितशनिदशाफलम्

पापेक्षितस्यापि शनेर्दशायां भृत्यार्थदारात्मजसोदराणाम् ।
नाशं समायाति परापवादं कुभोजनं कुत्सितगन्धमाल्यम् ।।१०८।।

पापग्रह से दृष्ट शनि की दशा आने पर जातक के नौकर काम छोड़कर चले जाते हैं अथवा उद्योग में लगे मजदूर हड़ताल कर देते हैं। उसे घाटा हो जाता है। पत्नी से मन-मुटाव होता है अथवा वह रोगिणी हो जाती है। भ्रातृवर्ग को कष्ट पहुँचता है, उनकी हानि होती है। पुत्र एवं पुत्रियाँ कष्टान्वित होती हैं। इन सबको विविध लाञ्छन लगते हैं। बदनामी होती है। पोषण एवं पवित्रता से रहित भोजन प्राप्त होता है। जातक को इस दशा में दुर्गन्धित वातावरण में काम करना पड़ता है। सदैव मैले-कुचैले दाग-धब्बे लगे वस्त्रादि पहिनने पड़ते हैं।।१०८।।

शुभेक्षितशनिदशाफलम्

शुभेक्षितस्यापि शनेर्दशायां स्त्रीपुत्रभृत्यार्थमुपैति काले ।
पश्चादुपैत्यत्र महत्त्वकष्टं गोभूमिवाणिज्यकृषेर्विनाशनम् ।।१०९।।

शुभग्रहों से दृष्ट शनि की दशा में जातक को स्त्री, सन्तानसम्बन्धी सुख होता है। नौकर-चाकर स्वामिभक्तिपूर्वक परिश्रम करते हैं। उद्योगों में श्रमिक समय के पाबन्द होकर उत्पादन कार्य करते हैं। व्यापार में लाभ होता है। इस दशा के उत्तरार्ध में ख्याति तो प्राप्त होती है; परन्तु कष्ट भी प्राप्त होता है। गवादि पशु, भूमि, भवन, कृषि, वाणिज्य में हानि होती है।।१०९।।

केन्द्रान्वितशनिदशाफलम्

केन्द्रान्वितशनेर्दाये कलहायासपीडनम् ।
पुत्रमित्रार्थदारादिबन्धूनां मरणं ध्रुवम् ।।११०।।

जन्मकुण्डली में यदि शनि केन्द्रों में से किसी में भी स्थित हो तो उसकी दशा में

जातक को कलह तथा परिश्रम से पीड़ा होती है। उसके पुत्र, मित्र, धन, स्त्री, बन्धु आदि का मरण होता है॥११०॥

लग्नस्थशनिदशाफलम्

लग्नस्थितशनेर्दाये देहकृच्छ्रमुपैति च ।
स्थानच्युतिं प्रवासञ्च राजकोपं शिरोरुजम् ।।१११।।

लग्न में स्थित शनि की दशा में जातक को शरीरकष्ट प्राप्त होता है। वह स्थानच्युति (तबादला, पदावनति, कार्य-परिवर्तन, पदपरिवर्तन आदि) को प्राप्त होता है। उसे नौकरी या काम-धन्धे के लिये भटकना पड़ता है। मुकदमे आदि में पराजय का सामना करना पड़ता है; साथ ही शिरदर्द से वह परेशान रहता है॥१११॥

चतुर्थस्थानगतशनिदशाफलम्

चतुर्थस्थशनेर्दाये मातृतद्वर्गनाशनम् ।
गृहदाहं पदभ्रंशं चौरार्तिं नृपपीडनम् ।।११२।।

चतुर्थ स्थानस्थित शनि की दशा में जातक के माता की मृत्यु होती है तथा मातृवर्ग (मौसी, चाची, ताई, बुआ, दादी आदि) की मृत्यु होती है। घर में अग्निकाण्डादि हो जाता है। उसे पद छोड़ना पड़ता है या उसका धन्धा ठप हो जाता है। चौरादि से पीड़ा होती है। शासकीय कानून के अन्तर्गत छापा आदि पड़ता है॥११२॥

सप्तमभावगतशनिदशाफलम्

दारराशिगतस्यापि शनेर्दायेऽरिपीडनम् ।
मूत्रकृच्छ्रं महाद्वेषं स्त्रीहेतोर्मरणञ्च वा ।।११३।।

सप्तम भावस्थित शनि की दशा में जातक को शत्रुओं से पीड़ा होता है। उसे मूत्रकृच्छ्र, वृक्कविकार, सर्वाङ्गशोथ आदि रोग होते हैं। लोगों से द्वेष बढ़ जाता है। स्त्री के पीछे झगड़ा, बदनामी या मृत्यु होती है॥११३॥

दशमस्थशनिदशाफलम्

दशमस्थशनेर्दाये कर्मनाशमुपैति च ।
देशान्तरं पदभ्रंशं निगडं राजपीडनम् ।।११४।।

दशम भावगत शनि की दशा में जातक बेरोजगार (कर्मनाश) हो जाता है। उसे किसी कार्य में सफलता नहीं मिलती है। पूँजी तथा धन्धा चौपट हो जाता है। उसे इधर-उधर भटकना पड़ता है। नौकरी छूट जाती है। कारावास, बन्धन या अपहरण होता है। मुकदमे में हार होती है॥११४॥

द्वितीयभावगतशनिदशाफलम्

द्वितीयस्थशनेर्दाये वित्तनाशमथाक्षिरुक् ।
राजकोपं मनस्तापमन्नद्वेषं मनोरुजम् ।।११५।।

द्वितीय भावगत शनि की दशा में जातक को धन तथा पूँजी की हानि होती है। नेत्रों में कष्ट होता है। छापा पड़ता है या शासकीय नौकरी में विभागीय पूछताछ होती है। मन में पश्चात्ताप तथा उद्विग्नता रहती है। अन्न से अरुचि रहती है। जातक किसी मनोरोग का शिकार हो जाता है।।११५।।

तृतीयस्थशनिदशाफलम्

तृतीयस्थशनेर्दाये कृषिगोधनसम्पदः ।
मनोजाड्यं मनोत्साहं भ्रातृतद्वर्गनाशनम् ।।११६।।

तृतीय भावस्थ शनि की दशा लगने पर जातक के खेती, दुधारू पशु आदि की हानि होती है। कभी मन में विषाद (डिप्रेशन) तथा कभी मन में उत्साह (एक्साइटमेण्ट) होता है। भाइयों तथा भ्रातृवर्ग का नाश होता है।।११६।।

पञ्चमभावगतशनिदशाफलम्

पञ्चमस्थशनेर्दाये पुत्रनाशं मनोरुजम् ।
राजकोपं भृत्यनाशं बन्धुस्त्रीचित्तविभ्रमम् ।।११७।।

पञ्चम भावगत शनि की दशा में जातक को सन्ततिकष्ट होता है। मन में व्यथा रहती है। राजकोप (शासन द्वारा कर आदि की बलात् वसूली, छापा या शासकीय सेवा में विभागीय जाँच आदि) होता है। नौकर काम छोड़ जाते हैं। चित्त भ्रमित रहता है। बन्धुओं, स्त्री आदि के सम्बन्ध में मन में आशंकायें रहती हैं।।११७।।

षष्ठस्थशनिदशाफलम्

षष्ठस्थरविसूनोस्तु दशाकालेऽरिपीडनम् ।
व्याधिचौरविषैर्बाधां गृहक्षेत्रविनाशनम् ।।११८।।

षष्ठ भावगत शनि की दशा में शत्रुओं से पीड़ा रहती है, रोग उत्पन्न होते हैं। चोरी, डकैती, अपहरण, जेब कटने आदि से धन की हानि होती है। विषप्रयोग, विषाक्त जन्तुओं से भय, आवास तथा कृषि आदि का विनाश होता है।।११८।।

अष्टमभावस्थशनिदशाफलम्

मरणपदस्थो मन्दः करोति नित्यं सुतार्थदाराणाम् ।
नाशं भृत्यजनानां गोमहिषभूमिदारनाशञ्च ।।११९।।

अष्टम भावस्थ शनि की दशा में पुत्र तथा पत्नी को प्रतिदिन नई-नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आर्थिक सङ्कट उत्पन्न होता है। नौकर काम छोड़ जाते हैं।

गाय, भैंस, भूमि, भवन, वाहन तथा स्त्री आदि की हानि होती है॥११९॥

नवमस्थशनिदशाफलम्

नवमगतमन्ददाये पित्रोर्नाशं गुरोस्तथैवापि ।
लभते विदेशयानं स्वकुलजातैर्विनाशमुपयाति ।।१२०।।

नवम भावगत शनि की दशा में जातक के पिता की मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट होता है। इसी प्रकार गुरुजनों (गुरु, चाचा, ताऊ, मामा, मौसा, फूफा आदि) की भी हानि होती है। उसे घर से दूर की यात्रा करनी पड़ती है। जातक के कुटुम्बी जनों को भी कष्ट पहुँचता है॥१२०॥

एकादशस्थशनिदशाफलम्

लाभगतमन्ददशायां लभते विविधार्थसौख्यसन्मानम् ।
सुतदारभृत्यसौख्यं मनोविलासं कृषेश्च धनलाभः ।।१२१।।

एकादश भागवत शनि क्री दशा आने पर जातक के पास अनेक स्रोतों से धन, सम्पत्ति आदि आती है। उसे सुख तथा सम्मान की प्राप्ति होती है। पुत्र तथा पत्नी आदि से सुख मिलता है। नौकरों-चाकरों का सुख रहता है। मनोरञ्जन के साधन जुड़ते हैं। कृषि आदि कार्यों से धनलाभ होता है॥१२१॥

द्वादशस्थशनिदशाफलम्

व्ययगतमन्ददशायां भीतिं चौराग्निभूपसङ्घैश्च ।
विविधापदञ्च दुःखं विदेशयानं स्वबन्धुनाशश्च ।।१२२।।

व्यय भागवत शनि की दशा में चोरों, डाकुओं का भय होता है। अग्नि या विद्युत् से कष्ट होता है। माफिया गिरोहों से भी भय प्राप्त होता है। अनेक प्रकार की आपत्तियाँ आती हैं। दुःख प्राप्त होता है। निवासस्थान से बहुत दूर भटकता पड़ता है तथा अपने बन्धुओं की हानि होती है॥१२२॥

अस्तङ्गतशनिदशाफलम्

अर्कगमन्ददशायां स्वजनद्वेषं परस्त्रियं लभते ।
भृत्यापत्यविरोधं महोद्यमं दोषपरिभूतम् ।।१२३।।

सूर्य-सान्निध्य में अस्त शनि के दशाकाल में अपने जनों से द्वेष होता है। महिला-मित्रों की संख्या बढ़ती है। पुत्रों से वैचारिक मतभेद तथा विरोध होता है। नौकर लोग मालिक के आदेश की अवहेलना करने लगते हैं। परिश्रम के साथ उद्योग-धन्धे में विस्तार होता है; परन्तु आचरण में अनेक प्रकार के दोष विद्यमान रहते हैं॥१२३॥

नीचनवांशगतशनिदशाफलम्

नीचांशमन्ददाये नीचाचारेण जीवनं लभते ।
सर्वेषां प्रेष्यत्वं धनसुतदारैश्च विग्रहं दुःखम् ।।१२४।।

यदि कुण्डली में शनि नीच नवांशगत हो तो उसकी दशा में जातक की नीच कर्माचार से जीविका चलती है। सिर, पीठ आदि पर बोझा ढोना, हथठेला आदि से माल ढोना, खोमचा लगाना, होटल या तन्दूर पर भोजन पकाना, सफाई करना, बर्तन माँजना, कपड़े धोना आदि नीच कर्म हैं। इनसे या इसी प्रकार के अन्य कामों से जातक का पेट भरता है। घर में या संस्थान या प्रतिष्ठान में हर किसी की आज्ञा माननी पड़ती है। चपरासीगीरी करनी पड़ती है। धन की हानि, स्त्री-पुत्रों से वियोग, झगड़ा तथा दुःख होता है।।१२४।।

उच्चांशगतशनिदशाफलम्

उच्चांशमन्ददाये विविधसुखानन्दभोगभाग्यादीन् ।
कुरुते विदेशयानं ग्रामसभामण्डलाधिपत्यं वा ।।१२५।।

उच्च नवांशगत शनि की दशा में जातक को अनेक प्रकार के सुख तथा आनन्द प्राप्त होते हैं। विलासिता के साधनों का संग्रह होता है। भाग्य बढ़ता है। दूरस्थ स्थानों की सुख-सम्मानसहित यात्रा होती है। बिगड़े हुए काम बनते हैं। जातक की रुचि राजनीति में होने पर वह इस दशा में ग्रामसभा, नगरपालिका, नगर निगम, जनपद पञ्चायत, विधान सभा आदि में निर्वाचित या मनोनीत होता है।।१२५।।

शनिदशायामादिमध्यान्तफलम्

आदौ मन्ददशायामतिदुःखं मातृनाशनं कुरुते ।
मध्ये विदेशयानं परगृहवासं परान्नभुक्चान्ते ।।१२६।।

शनि की दशा के प्रारम्भ में दुःख तथ माता को कष्ट होता है। मध्य में विदेशगमन होता है तथा अन्त में दूसरे के घर में निवास करना पड़ता है; साथ ही दूसरे का अन्न खाना पड़ता है।।१२६।।

स्थानबली शनिदशाफलम्

स्थानवीर्ययुतमन्ददशायां दारपुत्रधनकीर्त्तिमुपैति ।
चौरशत्रुनृपवह्निभयं वा धान्यभूमिकृषिवाहनलाभम् ।।१२७।।

स्थानबल से युक्त शनि की दशा में जातक को स्त्री, पुत्र, धन तथा कीर्त्ति प्राप्त होती है अथवा चोर, शत्रु, राजा तथा अग्नि से भय होता है और धन-धान्य, भूमि, कृषि, वाहन इत्यादि का लाभ प्राप्त होता है।।१२७।।

दिग्वीर्ययुतशनिदशाफलम्

मन्दस्य दिग्वीर्ययुतस्य दाये दिगन्तरादाप्तसुतार्थकीर्त्तिम् ।
भूगूढदारात्मजसोदराणां विनाशनं बन्धुजनैर्विरोधम् ।।१२८।।

दिग्बल से युक्त शनि की दशा में सभी ओर जातक की यश और कीर्त्ति फैलती है, उसे पुत्र तथा धन प्राप्त होता है। भूमि, गुप्त स्त्री (व्यक्ति की वह पत्नी, जिसके सम्बन्ध में लोगों को ज्ञात न हो) तथा भाईयों का नाश होता है एवं बन्धु-बाधवों से विरोध सहन करना पड़ता है।।१२८।।

कालबलयुक्तशनिदशाफलम्

कालवीर्ययुतमन्ददशायां कालकूटविषभीतिमुपैति ।
दारपुत्रनृपचौरभयं वा धान्यभूमिकृषिवाहनलाभम् ।।१२९।।

कालबल से युक्त शनि की दशा में कालकूट विष का भय अथवा स्त्री, पुत्र का भय, राजा तथा चोर से भय होता है। व्यक्ति धान्य (अन्न), भूमि, कृषि तथा वाहन का लाभ प्राप्त करता है।।१२९।।

वक्रशनिदशाफलम्

वक्रचारयुतो मन्दः करोति विफलां क्रियाम् ।
उद्योगभङ्गं दुःखञ्च सोदराणाञ्च नाशनम् ।।१३०।।

वक्री शनि की दशा में व्यक्ति के कार्य विफल हो जाते हैं, उद्योग भंग हो जाता है, व्यक्ति कपट प्राप्त करता है तथा जातक के भाइयों की हानि भी होती है।।१३०।।

क्रूरषष्ट्यंशस्थशनिदशाफलम्

क्रूरषष्ट्यंशयुक्तस्य शनिदाये महद्भयम् ।
नृपकोपं पदभ्रंशं कारागृहनिवेशनम् ।।१३१।।

क्रूर षष्ट्यंश में स्थित शनि की दशा में जातक को बहुत प्रकार के भय होते हैं। राजा का कोप होता है, पदभ्रष्टता अर्थात् अधिकार का नाश हो जाता है तथा कारागृह जाना पड़ता है।।१३१।।

सौम्यषष्ट्यंशयुक्तशनिदशाफलम्

सौम्यषष्ट्यंशसंयुक्तशनिदाये महत्सुखम् ।
दारपुत्रार्थसम्पत्तिं लभते बन्धुविग्रहम् ।।१३२।।

सौम्य षष्ट्यंश में स्थित शनि की दशा में जातक को बहुत प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं। पत्नी, पुत्र, धन तथा सम्पत्ति का लाभ प्राप्त होता है और भाई-बन्धुओं से सम्बन्ध प्रगाढ़ होते हैं।।१३२।।

वैशेषिकांशस्थशनिदशाफलम्

वैशेषिकांशसंयुक्तः शनिः सौख्यं करोति च ।
विशेषाद्राजसन्मानं विचित्राम्बरभूषणम् ।।१३३।।

वैशेषिकांश में स्थित शनि की दशा सुखकर होती है, राजसन्मान विशेष रूप से प्राप्त होता है, विचित्र प्रकार के वस्त्र तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है॥१३३॥

क्रूरद्रेष्काणस्थशनिदशाफलम्

क्रूरद्रेष्काणसंयुक्तशनिदाये महद्भयम् ।
उद्बन्धनं विषाद्भीतिं नृपचौराग्निजं भयम् ।।१३४।।

क्रूर द्रेष्काण में स्थित शनि की दशा में जातक को अनेक प्रकार के भय होते हैं। फाँसी, विष इत्यादि से मृत्यु का भय रहता है। राजा, अग्नि तथा चौर से भय उपस्थित होता है॥१३४॥

नीचराशिस्थशनिदशाफलम्

नीचराशिगतो मन्दः स्वोच्चांशकसमन्वितः ।
दशादौ दुःखमापाद्य दशान्ते सुखदो भवेत् ।।१३५।।

नीच राशि में स्थित शनि यदि उच्चांशक में हो तो दशा के प्रारम्भ में (प्रथम भाग में) दुःख होता है तथा अन्त में (द्वितीय भाग में) सुख प्राप्त होता है॥१३५॥

उच्चराशिनीचांशकस्थितशनिदशाफलम्

उच्चराशिगतो मन्दो नीचांशकसमन्वितः ।
दशादौ सुखमापाद्य दशान्ते कष्टदो भवेत् ।।१३६।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ गुर्वादिशन्यन्तर्दशाफलनिरूपणो
नाम पञ्चदशोऽध्यायः ।।१५।।

उच्च राशि नीचांशक में स्थित शनि की दशा के प्रारम्भ में जातक को सुख प्राप्त होता है तथा दशा के अन्त में कष्ट प्राप्त होता है॥१३६॥

इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ के पद्रहवें अध्याय की आचार्य पं० गुरुप्रसाद गौड़कृत 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई ॥१५॥

* * *

अथ षोडशोऽध्याय:

राहुकेतुदशाफलसहितसर्वग्रहान्तर्दशाफलविचाराध्याय:

अथ राहुदशाफलम्

राहोर्तुङ्गादिकथनम्

राहोस्तु वृषभं केतोर्वृश्चिकं तुङ्गसंज्ञितम् ।
मूलत्रिकोणं कुम्भं च प्रियं मित्रभमुच्यते ।।१।।

अब राहु-केतु के उच्च-नीचादि कहते हैं— राहु वृष में तथा केतु वृश्चिक में उच्च का होता है। राहु की मूल त्रिकोण राशि कुम्भ है। क्रिय (मेष) राहु की मित्रराशि होती है।।१।।

विशेष— इस प्रकार राहु की जो उच्च राशि है, उससे सप्तम नीच होगा। अत: इस स्थिति में राहु-केतु-वृष वृश्चिक में होने पर उच्च राशि के होंगे तथा विपर्यय होने पर (वृश्चिक-वृष में होने पर) दोनों ही नीच राशि के हो जायेंगे।

केतोः मूलत्रिकोणकथनम्

एषां सप्तमराशिस्तु केतोर्मूलत्रिकोणभम् ।
षष्ठाष्टरिष्फगो राहुः स्वदाये कष्टदो भवेत् ।।२।।

कुम्भ से सप्तम राशि सिंह केतु का मूल त्रिकोण होता है। यदि राहु ६-८-१२ भाव में बैठा हो तो अपनी दशा में कष्ट देता है।।२।।

उच्चस्थराहुफलम्

उच्चस्थः सैंहिकेयस्तु तत्पाके सुखदो भवेत् ।
राज्यं करोति मित्राप्तिं धनधान्यविवर्धनम् ।।३।।

यदि राहु उच्च राशि का (वृष का) हो तो अपनी दशा में सुख देता है। राज्याधिकार प्राप्त होते हैं। मित्रों के सहयोग से धन-धान्य की वृद्धि होती है।।३।।

नीचस्थराहुफलम्

राहुर्नीचस्थितो दाये चौराग्निनृपभीतिदः ।
उद्बन्धनं विषाद्भीतिं कुरुते सिंहिकासुतः ।।४।।

जब राहु नीच राशि (वृश्चिक) का हो तो चोर, डाकू, जेबकतरों आदि से धन की हानि होती है। सत्तापक्ष से कष्ट मिलता है। उद्बन्धन (फाँसी आदि पर टंगना) आदि की

स्थिति बनती है। विषाक्त रसायनों एवं जीव-जन्तुओं से भय होता है, कभी-कभी किसी रोग से शरीर में विषाक्तता भी होती है।।४।।

सामान्यराहुदशाफलम्

राहोर्दशायां सम्प्राप्तौ नृपचौराग्निपीडनम् ।
विदेशयानं दुःखार्तिं वनवासाद्भयं ध्रुवम् ।।५।।

सामान्यतः राहु की दशा में राजा, चोर, अग्नि, विद्युत् आदि का भय होता है। दूरवर्ती कष्टप्रद यात्रा या प्रवास होता है। दुःख प्राप्त होता है। भयानक, एकान्त निर्जन स्थान में रहना पड़ता है, जहाँ भय तथा दुःख प्राप्त होता है।।५।।

लग्नगतराहुदशाफलम्

लग्नगतराहुदाये बुद्धिविहीनं विषाग्निशस्त्राद्यैः ।
बन्धुविनाशं लभते दुःखार्तिं च पराजयं समरे ।।६।।

लग्नगत राहु की दशा में जातक की बुद्धि मन्द हो जाती है। विष, अग्नि तथा शस्त्रादि से उसके बन्धुओं का विनाश होता है। युद्ध तथा मुकदमे में पराजय होती है। दुःख तथा रोग-शोक से जातक पीड़ित होता है।।६।।

द्वितीयस्थराहुदशाफलम्

राहोर्दशायां धनराशिगस्य राज्यञ्च वित्तं हरते विशेषात् ।
कुभोजनं कुत्सितराजसेवा मनोविकारन्त्वनृतं प्रकोपम् ।।७।।

द्वितीय भावस्थ राहु की दशा में धन तथा राज्य (अधिकार तथा आधिपत्य) की हानि विशेष रूप से होती है। कुभोजन प्राप्त होता है तथा नीच स्वभाव तथा कर्म वाले अधिकारी के अधीन रहकर काम करना पड़ता है। जातक मानसिक रोगों से पीड़ित रहता है। वह झूठ अधिक बोलता है तथा उसे क्रोध भी अधिक आता है।।७।।

तृतीयस्थराहुदशाफलम्

तृतीयराशिस्थितराहुदाये पुत्रार्थदारात्मसहोदराणाम् ।
सुखं कृषेर्वर्धनमाधिपत्यं विदेशयानं नरपालपूज्यम् ।।८।।

तृतीय भावगत राहु की दशा का फल शुभ होता है। इसमें सन्तति, धन, स्त्री तथा सहोदरों का सुख प्राप्त होता है। कृषि से लाभ होता है, कृषि तथा अधिकार की वृद्धि, विदेशयात्रा तथा राजा से सम्मान मिलता है।।८।।

चतुर्थस्थराहुदशाफलम्

चतुर्थराशिस्थितराहुदाये मातुर्विनाशं त्वथ वा तदीयम् ।
क्षेत्रार्थनाशं नृपतेः प्रकोपं भार्यादिपातित्यमनेकदुःखम् ।।९।।

चौराग्निबन्धार्तिमनोविकारं दारात्मजानामपि रोगपीडा ।
चतुर्थराशिस्थितराहुदाये प्रभग्नसंसारकलत्रपुत्रम् ।।१०।।

चतुर्थ राशिगत राहु की दशा में माता की मृत्यु होती है अथवा स्वयं जातक की मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट होता है। खेती तथा धन का नाश होता है। शासन द्वारा बकाये राशि की बलपूर्वक वसूली होती है। स्त्री की प्रवृत्ति चरित्रभ्रष्टता की ओर होती है। अनेक प्रकार के दुःख होते हैं। इसके अतिरिक्त चतुर्थगत राहु की दशा में चोर, अग्नि, बन्धन आदि से भय प्राप्त होता है। जातक मनोरोग से पीड़ित होता है। साथ ही स्त्री, पुत्रादि को रोगादि से पीड़ा होती है। इन दुःखों के कारण सांसारिक सुखों से स्त्री-पुत्रादि से मन विरक्त हो जाता है या बनी-बनायी गृहस्थी ही नष्ट हो जाती है॥९-१०॥

पञ्चमभावस्थराहुफलम्

बुद्धिभ्रमं भोजनसौख्यनाशं विद्याविवादं कलहञ्च दुःखम् ।
कोपं नरेन्द्रस्य सुतस्य नाशं राहोः सुतस्थस्य दशाविपाके ।।११।।

पञ्चम भावगत राहु की दशा में बुद्धि में भ्रम होता है। बुद्धि की निर्णय लेने की क्षमता दुर्बल हो जाती है। भोजन उत्तम प्रकार का नहीं मिलता अथवा भोजन में रुचि में कमी आ जाती है। खा लिया तो खा लिया, अन्यथा यों ही चाय आदि पीकर भटकता रहता है। विद्या के क्षेत्र में विवाद होता है। लोगों से विना बात झगड़ा होता है। अनेक प्रकार का कष्ट होता है। शासन द्वारा जबरिया करारोपण होता है तथा बलपूर्वक उसकी वसूली होती है। पुत्र की हानि या अवनति होती है॥११॥

षष्ठस्थराहुदशाफलम्

दशाविपाके त्वरिराशिगस्य चौराग्निभूपैर्भयमाप्तनाशम् ।
प्रमेहगुल्मक्षयपित्तरोगं त्वग्दोषरोगं त्वथ वा मृतिञ्च ।।१२।।

षष्ठ भावस्थित राहु की दशा में जातक को चोर, डाकू, लुटेरे, जेबकतरे, अग्नि, बिजली आदि से तथा राज्यसत्ता से भय रहता है। इस दशा में आप्त पुरुषों (हितैषी, सत्यवादी, तपस्वी गुरुजनों) की मृत्यु होती है। प्रमेह, गुल्म (पेट, गैस आदि), क्षयरोग, पित्तरोग, त्वचाविकार, एलर्जी अथवा मृत्यु होती है॥१२॥

सप्तमस्थराहुदशाफलम्

कलत्रराशिस्थितराहुदाये कलत्रनाशं समुपैति शीघ्रम् ।
विदेशयानं कृषिभाग्यहानिं सर्पाद्भयं मृत्युसुतार्थनाशम् ।।१३।।

सप्तम भावस्थ राहु की दशा में जातक के पत्नी की मृत्यु आकस्मिक रूप से हो जाती है। उसे विदेश में भटकना पड़ता है। खेती में घाटा होता है तथा भाग्य की हानि होती है। सर्प से भय होता है अथवा सर्पदंश से मृत्यु भी सम्भव होती है। पुत्र तथा धन की हानि होती है॥१३॥

अष्टमस्थराहुदशाफलम्

राहोर्दशायां निधनस्थितस्य यमालयं याति सुतार्थनाशम् ।
चौराग्निभूपैः स्वकुलोद्भवैश्च भयं भृगोर्वा वनवासदुःखम् ।।१४।।

अष्टम भावस्थित राहु की दशा में जातक की मृत्यु होती है। उसके पुत्रों तथा धन का नाश होता है। चोरों, अग्नि तथा शासकीय अधिकारियों से भय उत्पन्न होता है। जातक के कुल में उत्पन्न लोग ही उसके शत्रु हो जाते हैं। वे जातक के साथ विश्वासघात या भितरघात करते हैं। उसे जंगल में रहना पड़ता है तथा हिंसक जीवों से भय उत्पन्न होता है॥१४॥

नवमस्थराहुदशाफलम्

राहोर्दशायां नवमस्थितस्य पित्रोर्विनाशं लभते मनुष्यः ।
विदेशयानं गुरुबन्धुनाशं स्नानं समुद्रस्य सुतार्थनाशम् ।।१५।।

नवम भाव में स्थित राहु की दशा आने पर जातक के पिता का मरण होता है। उसे दूर देश की यात्रा करनी पड़ती है। उसके गुरुजनों तथा बन्धु-बान्धवों का मरण या अवनति होती है। उसे समुद्रस्नान का लाभ प्राप्त होता है एवं पुत्र तथा धन की हानि होती है॥१५॥

दशमभावस्थितराहुदशाफलम्

मानस्थितस्यापि दशाविपाके राहोः प्रवृत्तिं लभते मनुष्यः ।
पुराणधर्मश्रवणादिभिश्च गाङ्गेयतोयैरपि शुद्धदेहः ।।१६।।

दशम भावस्थित राहु की दशा में मनुष्य की कर्म करने में विशेष रुचि होती है। वह इस दशा में पुराण कथा, धर्मशास्त्र का श्रवण, मनन तथा अध्ययन करता है। उसका शरीर गङ्गास्नान से पवित्र होता है अथवा वह गङ्गा के पवित्र जल में घर पर ही नित्य स्नान करता है॥१६॥

दशमस्थराहोर्विशेष(दशा)फलम्

सौम्यर्क्षगश्चेत्फलमेवमेव पापर्क्षगश्चेन्न तथा भवेद्धि ।
प्रोक्तं फलं यत्सकलं तदेव पापर्क्षगश्चेत्फलमन्यथा स्यात् ।।१७।।

ऊपर कहा गया फल तब प्राप्त होता है, जब राहु शुभ राशि में हो। यदि पाप राशि में राहु दशम में हो तो उक्त शुभ फल नहीं होता और जो भी फल कहा गया है वह पाप राशिगत राहु में विपरीत हो जाता है॥१७॥

पापराशिगतदशमराहुदशाफलम्

पापक्षेत्रगतो राहुः कर्मस्थः पापसंयुतः ।
अभिशप्तस्तदा काले पुत्रदाराग्निपीडनम् ।।१८।।

दशम भाव में पाप राशिगत राहु या पापसंयुत राहु की दशा में पुत्र-स्त्री आदि से कष्ट, अग्निभय तथा अभिशाप (कलंक) लगता है॥१८॥

एकादशभावस्थराहुफलम्

आयराशिगतो राहुस्तत्पाके नृपमाननम् ।
धनाप्तिं दारलाभञ्च गृहक्षेत्रादिसम्पदः ।।१९।।

एकादश भाव में स्थित राहु के दशाकाल में जातक को शासन द्वारा सम्मान, पदोन्नति आदि मिलती है। धन का लाभ, स्त्रीलाभ, आवास, कृषि-भूमि आदि की सम्पत्ति बढ़ती है॥१९॥

व्ययभावगतराहुदशाफलम्

व्ययगतराहुदशायां देशभ्रंशं मनोरुजं कुरुते ।
विच्छिन्नदारपुत्रं कृषिपशुधनधान्यसम्पदां नाशम् ।।२०।।

बारहवें भाव के राहु की दशा में जातक को अपना क्षेत्र छोड़कर अन्यत्र जाना पड़ता है। उसे मानसिक रोग हो जाता है। वह अपने परिवार से दूर रहकर जीविकोपार्जन करता है। उसकी सन्तति, कृषि, पशु तथा धन-धान्य की हानि होती है॥२०॥

कर्क-वृष-मेषराहुदशाफलम्

कुलीरगोमेषयुतस्य राहोर्दशाविपाके धनलाभमेति ।
विद्याविनोदं नृपमाननञ्च कलत्रभृत्यात्मसुखम्प्रयाति ।।२१।।

यदि राहु कर्क, वृषभ या मेष राशियों में स्थित हो तो उसकी दशा में धनलाभ होता है। विद्याध्ययन तथा परीक्षा में सफलता मिलती है। शासन से पुरस्कार या प्रोत्साहन या सम्मान मिलता है। स्त्री-नौकर आदि का सुख मिलता है॥२१॥

कन्या-मीन-धनुस्थराहुदशाफलम्

पाथोनमीनाश्वयुतस्य राहोर्दशाविपाके सुतदारलाभम् ।
देशाधिपत्यं नरवाहनञ्च दशावसाने सकलं विनाशम् ।।२२।।

कन्या-मीन-धनु राशिगत राहु की दशा में राजनैतिक निर्वाचनों में पद प्राप्त होता है। आरामदायक वाहन की प्राप्ति होती है; परन्तु दशा की समाप्तिकाल में सब कुछ नष्ट हो जाता है॥२२॥

नरवाहन— नरवाहन का मतलब मनुष्य की शक्ति से चलने वाला वाहन होता है। विशेष अर्थ पालकी है। प्राचीन काल में पालकी आराम की सवारी थी। आजकल तो इनका अर्थ आरामदायक मोटरकार समझना चाहिये।

पापग्रहयुक्तराहुदशाफलम्

पापर्क्षसंयुक्तफणीन्द्रदाये देहस्य कार्श्यं स्वकुलस्य नाशम् ।
भूपाद्भयं वञ्चनतोऽरिभीतिः प्रमेहकासक्षयमूत्रकृच्छ्रम् ।।२३।।

पापग्रह से युक्त राहु के दशा काल में शरीर कृश (दुबला-पतला) हो जाता है। कुल की हानि होती है। भूप से भय, ठगी, धोखा, शत्रुभय आदि होता है। प्रमेह, खाँसी, क्षयरोग तथा मूत्रकृच्छ्र आदि रोग उत्पन्न होते हैं।।२३।।

शुभग्रहनिरीक्षितराहुफलम्

शुभदृष्टियुतो राहुः करोति सफलक्रियाम् ।
राजमाननमर्थाप्तिं बन्धूनां मरणं ध्रुवम् ।।२४।।

शुभग्रह से निरीक्षित राहु की दशा में कार्य में सफलता प्राप्त होती है। राजसन्मान प्राप्त होता है, धनागम होता है तथा भाई-बन्धु में से किसी बन्धु का निश्चित ही मरण होता है।।२४।।

पापदृष्टराहुदशाफलम्

पापदृष्टियुतो राहुः कर्मनाशं करोति च ।
उद्योगभङ्गं देहार्त्तिं चौराग्निनृपपीडनम् ।।२५।।

पापग्रहों से दृष्ट राहु की दशा में कार्यनाश या कार्य में असफलता, व्यापारभङ्ग, शरीरकष्ट तथा चौर, अग्नि एवं राजा से पीड़ा होती है।।२५।।

उच्चग्रहयुक्तराहुफलम्

उच्चग्रहयुतो राहू राज्यलाभं करोति च ।
स्त्रीपुत्रधनसम्पत्तिवस्त्राभरणलेपनम् ।।२६।।

उच्च ग्रह से युक्त राहु की दशा में राज्यलाभ होता है। स्त्री, पुत्र, धन, सम्पत्ति, अनेक वस्त्र तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है तथा व्यक्ति चन्दन इत्यादि सुगन्धित द्रव्यों का लेपन करता है।।२६।।

नीचराशियुतराहुदशाफलम्

नीचग्रहयुतो राहुः नीचवृत्त्यानुजीवनम् ।
कुभोजनं कुदारञ्च कुपुत्रं लभते तदा ।।२७।।

नीच ग्रह के साथ स्थित राहु की दशा में व्यक्ति नीच कर्मों से जीवन-यापन करता है, कुभोजन (स्वाद-रहित, अपौष्टिक भोजन) प्राप्त होता है, कुस्त्री (बुरी औरत) का संग होता है तथा कुपुत्र प्राप्त होता है।।२७।।

आदिमध्यान्तराहुदशाफलम्

दशादौ दुःखमाप्नोति दशामध्ये सुखं यशः ।
दशान्ते स्थाननाशं च गुरुपुत्रादिनाशनम् ।।२८।।

दशा के प्रारम्भ में व्यक्ति को कष्ट होते हैं, दशा का मध्य सुखकर तथा यश देने वाला होता है एवं दशा के अन्त में उस व्यक्ति का स्थाननाश होता है तथा गुरु एवं पुत्रादि की हानि होती है।।२८।।

इति राहुदशाफलविचार:

◆

अथ केतुदशाफलम्

भार्यापुत्रविनाशनं नरपतेर्भ्रान्तिर्महत्कष्टतां
विद्याबन्धुधनाप्तिमित्ररहितं रोगाग्निभित्रैर्भयम् ।
यानारोहणपातनं विषजलैः शस्त्रादिभिर्वा भयं
देशाद्देशनिवासनं कलिरुचिं देहादिभिर्वा भयम् ।।२९।।

केतु की दशा में पत्नी, पुत्र की हानि, राजा के सम्बन्ध में भ्रान्ति रहती है, बहुत बड़ा कष्ट होता है, विद्या, भाई-बन्धु की प्राप्ति होती है, धन मिलता है, मित्र की हानि होती है, रोग, अग्नि तथा मित्रों से भय होता है। वाहन से गिरने का भय रहता है। विष, जल तथा शस्त्रादि से भय होता है। एक देश से दूसरे देश में निवास करना पड़ता है। झगड़ों में रुचि बढ़ती है तथा शरीर में रोग इत्यादि का भय उपस्थित होता है।।२९।।

केतोर्दशायां सम्प्राप्तौ दारपुत्रविनाशनम् ।
राजकोपं मनस्तापं चौराग्निकृषिनाशनम् ।।३०।।

केतु की दशा में प्राप्त हुये जातक के स्त्री-पुत्र इत्यादि का नाश हो जाता है, राज्यकोप, मन में सन्ताप रहता है। चौर, अग्नि से भय होता है तथा जातक की खेती का नाश हो जाता है।।३०।।

केन्द्रस्थितकेतुदशाफलम्

केन्द्रस्थस्य दशाकेतोः करोति विफलक्रियाम् ।
राज्यार्थसुतदाराणां नाशनं विपदं तथा ।।३१।।

केन्द्र में स्थित केतु की दशा में व्यक्ति द्वारा कृत क्रियायें विफलता को प्राप्त होती हैं। राज्य, धन, पुत्र, पत्नी इत्यादि का नाश होता है तथा व्यक्ति विपत्तियों से घिरा रहता है।।३१।।

लग्नस्थितकेतुदशाफलम्

लग्नकेन्द्रगतस्यापि केतोर्दाये महद्भयम् ।
ज्वरातिसारमेहञ्च स्फोटकादिविषूचिकाः ।। ३२ ।।

लग्न में स्थित केतु की दशा में बहुत भय होता है। ज्वर, अतिसार, मेह (प्रमेह इत्यादि) तथा स्फोटक एवं विसूचिका से कष्ट होता है।।३२।।

धनराशिगतकेतुदशाफलम्

धनराशिगतस्यापि केतोर्दाये धनक्षयम् ।
वाक्पारुष्यं मनोदुःखं कुत्सितान्नं मनोरुजम् ।। ३३ ।।

धनराशि में स्थिति केतु की दशा में धनक्षय होता है। वाणी कठोर हो जाती है, मन में दुःख रहते हैं और व्यक्ति निन्दित अन्न तथा भोजन प्राप्त करता है।।३३।।

तृतीयभावस्थकेतुदशाफलम्

तृतीयराशिगतस्यापि केतोर्दाये महत्सुखम् ।
मनोवैकल्यमायाति भ्रातृभिर्द्वेषणं परम् ।। ३४ ।।

तृतीय राशि में स्थित केतु की दशा में व्यक्ति को बहुत सुख प्राप्त होते हैं। मन में विकलता आती है तथा भाइयों में परस्पर द्वेष उत्पन्न होता है।।३४।।

चतुर्थराशिस्थकेतुदशाफलम्

चतुर्थराशिगस्यापि केतोर्दाये सुखक्षयम् ।
प्रभग्नदारपुत्रादिगृहे धान्यप्रहर्षितः ।। ३५ ।।

चतुर्थ राशि में स्थित केतु की दशा में सुख का नाश हो जाता है। स्त्री, पुत्र आदि से दूर रहना पड़ता है तथा घर में अन्न अधिक होता है।।३५।।

पञ्चमभावस्थकेतुदशाफलम्

पञ्चमस्थस्य केतोस्तु दशाकाले सुतक्षयम् ।
बुद्धिभ्रमं विशेषेण राजकोपं धनक्षयम् ।। ३६ ।।

पञ्चम भाव में स्थित केतु की दशा में पुत्र की हानि होती है, मन में भ्रम बना रहता है, राजकोप होता है तथा व्यक्ति के धन का नाश हो जाता है।।३६।।

षष्ठभावस्थकेतुदशाफलम्

केतोस्त्वरिगतस्यापि दशाकाले महद्भयम् ।
चौराग्निविषभीतिश्च दशाप्तिं समुपैति च ।। ३७ ।।

षष्ठ भाव में स्थित केतु की दशा में व्यक्ति भयभीत रहता है। उसे चौर, अग्नि एवं विष से भय होता है।।३७।।

सप्तमस्थकेतुदशाफलम्

कलत्रराशिसंयुक्तकेतोर्दाये महद्भयम् ।
दारपुत्रार्थनाशं च मूत्रकृच्छ्रं मनोरुजम् ।।३८।।

सप्तम भाव में स्थित केतु की दशा में व्यक्ति को बहुत प्रकार के भय होते हैं। पत्नी, पुत्र, धन इत्यादि का नाश हो जाता है। वह मूत्रकृच्छ्र रोग से तथा मानसिक रोगों से पीड़ित रहता है।।३८।।

अष्टमभावस्थकेतुदशाफलम्

केतोरष्टमयुक्तस्य दशाकाले महद्भयम् ।
पितृमृत्युकासश्वासग्रहण्यादिक्षयान्वितः ।।३९।।

अष्टम भाव में स्थित केतु की दशा में व्यक्ति को अनेक प्रकार के भय होते हैं, पिता की मृत्यु, कास (खाँसी), श्वास, संग्रहणी, क्षय आदि रोगों से वह सदा-सर्वदा त्रस्त रहता है।।३९।।

नवमस्थकेतुदशाफलम्

नवमस्थस्य केतोस्तु दशापाके पितुर्विपत् ।
गुरोर्वा विपदं दुःखं शुभकर्मविनाशनम् ।।४०।।

नवम भाव में स्थित केतु की दशा में पिता अथवा गुरु को कष्ट, दुःख तथा शुभ कर्मों की हानि होती है।।४०।।

कर्मस्थकेतुदशाफलम्

कर्मस्थकेतोः सम्प्राप्तौ दशायां सुखमेति च ।
मानहानिं मनोजाड्यमपकीर्त्तिं मनोरुजम् ।।४१।।

कर्मभाव में स्थित केतु की दशा में जातक को सुख प्राप्त होता है। उसकी मान-हानि होती है, मन में जड़ता आती है, अपयश प्राप्त होता है और मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं।।४१।।

लाभस्थकेतुदशाफलम्

लाभस्थकेतोः सम्प्राप्तौ दाये सौख्यं करोति च ।
भ्रातृवर्गादिसौख्यं च यज्ञदानादिवर्द्धनम् ।।४२।।

लाभभाव में स्थित केतु की दशा में सुख प्राप्त होता है। उसे भाई आदि का सुख मिलता है। यज्ञ, दान इत्यादि कार्यों में वृद्धि होती है।।४२।।

द्वादशस्थकेतुदशाफलम्

रिष्फस्थकेतोः सम्प्राप्तौ दाये कष्टतरं भवेत् ।
स्थानच्युतिं प्रवासं च राजपीडाक्षिनाशनम् ।।४३।।

द्वादश भाव में स्थित केतु की दशा में जातक को कष्ट होता है, वह स्थानभ्रष्ट हो जाता है या उसे प्रवास पर जाना पड़ता है। राज्यपक्ष से पीड़ा तथा नेत्रहानि (या रोग) होती है।।४३।।

आदिमध्यान्तकेतुदशाफलम्

दशादौ सुखमाप्नोति दशामध्ये महद्भयम् ।
दशान्ते राजभीतिश्च देहजाड्यमथापि वा ।।४४।।

दशा के प्रारम्भ में जातक को सुख प्राप्त होता है। दशा के मध्यम में भय होता है तथा दशा के अन्त में राजभय एवं देहजाड्य (शरीर में जड़ता, लकवा इत्यादि रोग) होते हैं।।४४।।

शुभदृष्टकेतुदशाफलम्

शुभवीक्षणसंयुक्तः केतुः सौख्यं करोति च ।
राज्यार्थं गृहशान्तिञ्च राजपूजां महादृढम् ।।४५।।

शुभ ग्रहों से दृष्ट केतु की दशा में सुख प्राप्त होता है। राज्य, धन, गृहशान्ति (घर में शान्ति) रहती है। व्यक्ति राजपूज्य होता है तथा मन में दृढ़ता आती है।।४५।।

पापदृष्टकेतुदशाफलम्

पापेक्षितयुतो वापि केतुर्दुःखं करोति च ।
ज्वरातिसारमेहांश्च त्वग्दोषं राजपीडनम् ।।४६।।

पापदृष्ट केतु की दशा में दुःख प्राप्त होता है। ज्वर, अतिसार तथा प्रमेहादि एवं त्वचादोष से जातक सन्त्रस्त रहता है एवं उसे राज्यपक्ष से पीड़ा होती है।।४६।।

इति केतुदशाफलानि

◆

अथान्तर्दशाफलानि

तत्रादौ नवांशबलयुक्तग्रहान्तर्दशाफलम्

तेजस्विनमतिसुखिनं सुस्थिरविभवं नृपाच्च लब्धधनम् ।
स्वनवांशकबलयुक्तः पुरुषं कुर्याद् धनान्वितं ख्यातम् ।।४७।।

नवांश बलयुक्त ग्रह की अन्तर्दशा में जातक तेजस्वी, अति सुखी, सुस्थिर वैभवयुक्त, राजा से धनादि द्वारा सम्मानित, धनी तथा सुविख्यात होता है।।४७।।

शुभसंयुक्तग्रहान्तर्दशाफलम्

शुभदर्शनफलयुक्तः करोति विख्यातिकं सधनम् ।
सुभगप्रयासममलं सुरूपदेहं सुसौम्यञ्च ।।४८।।

शुभ ग्रहों से दृष्ट ग्रहों की अन्तर्दशा आने पर जातक ख्यातिमान, धनवान, पवित्र चरित्र वाला, सुन्दर शरीर वाला तथा सौम्य स्वभाव वाला होता है।।४८।।

षष्ठाष्टमेशयोः परस्परान्तर्दशाफलम्

अन्योऽन्यषष्ठाष्टमदायकाले नृपाद्भयं भृत्यजनैर्विरोधम् ।
स्त्रिया विरोधं सुतदारनाशं चौराग्निबन्ध्वार्तिमनोविकारम् ।।४९।।

षष्ठेश-अष्टमेश की परस्पर अन्तर्दशा (षष्ठेश में अष्टमेश की अन्तर्दशा हो अथवा अष्टमेश में षष्ठेश की अन्तर्दशा हो) में राजभय, चौरभय, अग्निपीड़ा, बन्धुओं को पीड़ा तथा मानसिक कष्ट रहता है।।४९।।

पाकेशादन्त्यगतग्रहान्तर्दशाफलम्

पाकेश्वरादन्त्यगतस्य भुक्तौ स्थानच्युतिं बन्धुजनैर्विरोधम् ।
विदेशयानं स्वजनैर्विरोधं पादाक्षिहृद्रोगमुपैति काले ।।५०।।

पाकेश्वर (महादशा का स्वामीग्रह) से बारहवें भाव में स्थित ग्रह की अन्तर्दशा में स्थानच्युति, बन्धुजनों से विरोध, विदेशगमन, स्वजनों से विरोध, पैरों में कष्ट, नेत्ररोग, हृद्रोग आदि से कष्ट प्राप्त होता है।।५०।।

पाकेशयुक्तग्रहान्तर्दशाफलम्

दशाधिपेनापि युतस्य भुक्तौ स्त्रीपुत्रभृत्यार्थकृषेर्विनाशम् ।
उद्योगभङ्गं स्वजनैर्विरोधमाकस्मिकं दूषणमेति काले ।।५१।।

जो ग्रह महादशानाथ से युत हो, उसकी अन्तर्दशा में जातक के पत्नी, पुत्र, भृत्य, धन, कृषि आदि का विनाश होता है। कारोबार में असफलता, स्वजनों से विरोध तथा आकस्मिक रूप से कलंक लगता है।।५१।।

पाकेशाद्द्वितीयस्थानगतग्रहान्तर्दशाफलम्

दशाधिपाद्वित्तगतस्य भुक्तौ मृद्वन्नपानाम्बरगन्धमाल्यम् ।
परोपकारं स्वजनस्य सख्यं स्त्रीपुत्रबन्ध्वात्ममनोविलासम् ।।५२।।

पाकेश से द्वितीय स्थानगत ग्रह की दशा में सुभोजन, सुपेय पदार्थ, सुवस्त्र, गन्धमाल्य की प्राप्ति, परोपकार, स्वजनों से मैत्री एवं स्त्री-पुत्र-बन्धुजनों के साथ आमोद-प्रमोद होता है।।५२।।

पाकेशात्तृतीयभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्

दशाधिपात्सोदरराशिगस्य भुक्तौ नृपाद्वित्तमुपैति सख्यम् ।
सुगन्धमाल्याम्बरभूषणञ्च सुहृद्भवं भोजनसौख्यपुष्टिम् ।।५३।।

महादशानाथ से तृतीय भाव में बैठे ग्रह की अन्तर्दशा में जातक को राजसम्मान,

मित्रता का लाभ, सुगन्ध, माल्य, वस्त्राभूषणों का सञ्चय, मित्रों द्वारा भोजन, सुख तथा पुष्टि की प्राप्ति होती है।।५३।।

पाकेशाच्चतुर्थभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्

दायेश्वरादम्बुगतस्य भुक्तौ दारात्मजार्थगृहधर्मयानम् ।
मिष्टान्नपानाम्बरभूषणञ्च शुभग्रहश्चेत् फलमन्यथा तत् ।।५४।।

दायेश्वर (पाकेश = महादशानाथ) से चतुर्थ भावगत ग्रह की अन्तर्दशा में पत्नी, सन्तति, धन, गृहस्थी का उपयोगी सामान, वाहन, मिष्टान्न-पान, सुन्दर वस्त्राभूषण आदि की प्राप्ति होती है। यदि चतुर्थ में शुभ ग्रह स्थित हो तो विपरीत फल मिलता है।।५४।।

विशेषफलम्

पापग्रहोऽपि शुभदः खलु दायनाथाद्
बन्धुस्थितस्वभवनोच्चबलादियुक्तः ।
सौम्यग्रहोऽप्यशुभदः सुखराशियुक्तो
दायेश्वरात् स्वभवनोच्चबलादिहीनः ।।५५।।

यदि दायनाथ (महादशेश) से चतुर्थ में स्वक्षेत्री एवं उच्च राशिगत ग्रह पापग्रह भी क्यों न हो, वह शुभ फल देता है; परन्तु बल से ही शुभ ग्रह भी यदि चतुर्थ में स्थित हो तो अशुभ फल देता है।।५५।।

पाकेशात्पञ्चमभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्

दशानाथात्सुतस्थस्य भुक्तौ पुत्रादिमादिशेत् ।
शुभग्रहस्य सौख्यञ्च पापभुक्तौ सुतक्षयम् ।।५६।।

महादशानाथ से पञ्चमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा में सन्तति की प्राप्ति होती है। यदि शुभ ग्रह हो तो सन्ततिसुख और पापग्रह होने पर सन्तति की हानि होती है।।५६।।

पाकेशात्षष्ठभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्

अन्तर्दशायां पापस्य षष्ठस्थस्य दशेश्वरात् ।
चौरादिऋणदेहार्तिं लभते पदविभ्रमम् ।।५७।।

यदि महादशेश से छठे भाव में पाप ग्रह स्थित हो तो उसकी अन्तर्दशा में चौरभय, ऋणग्रस्तता, शरीरपीड़ा, पादविभ्रम (पद का असम्मान) होता है।।५७।।

तस्मात् षष्ठस्य सौम्यस्य दशेशात् सुखवर्धनम् ।
लभते पुत्रमित्राप्तिं स्वोच्चमूलादिगस्य तु ।।५८।।

यदि पाकेश से षष्ठ भाव में शुभ ग्रह हो तो उसकी अन्तर्दशा में सुख बढ़ता है। पुत्र, मित्रादि की प्राप्ति होती है। यही फल उच्च स्वराशिग्रत ग्रह की अन्तर्दशा में भी होता है।।५८।।

पाकेशात्सप्तमभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्

दायेशात्सप्तमस्थस्य पापस्यापहृतौ तथा ।
दारार्थपुत्रबन्धूनां नाशं भूमिपतेर्भयम् ।।५९।।

पाकेश से सप्तम में यदि पापग्रह की हति (अन्तर्दशा) हो तो जातक के स्त्री, पुत्र, बन्धु आदि का नाश तथा राजभय होता है।।५९।।

सप्तमस्थशुभस्यापि हृतौ सौख्यं दशाधिपात् ।
नीचशत्रुविहीनस्य सद्रत्नाम्बरभूषणम् ।।६०।।

यदि (पाकेश से) सप्तम भाव में शुभ ग्रह बैठा हो तो उसकी हति (अर्न्तदशा) में तथा नीच या शत्रुयुति से रहित ग्रह की भुक्ति में श्रेष्ठ वस्त्राभूषणों की प्राप्ति होती है।।६०।।

पाकेशादष्टमभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्

पाकेशादष्टमस्थस्य सौम्यस्यापहृतौ सुखम् ।
भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तमन्ते कष्टं विनिर्दिशेत् ।।६१।।
पाकेशादष्टमस्थस्य पापस्यापहृतौ भयम् ।
निधनं कुत्सितान्नञ्च चौराग्निनृपपीडनम् ।।६२।।

पाकेश से अष्टम भावस्थ शुभ ग्रह की अपहति (अन्तर्दशा) सुखप्रद होती है, उसके पूर्वार्ध में शुभ फल तथा उत्तरार्ध में कष्ट होता है। पाकेश से अष्टम भावगत पापग्रह की अपहति (अन्तर्दशा) में भय, मृत्यु, कुत्सितान्न भोजन, चौर, अग्नि, राजा आदि से पीड़ा होती है।।६१-६२।।

पाकेशान्नवमभावस्थग्रहान्तर्दशाफलम्

दायेशान्नवमस्थस्य पापस्यापहृतौ यदा ।
अशुभं लभते कर्मस्थानभ्रंशो मनोरुजम् ।।६३।।

दशानाथ से नवम भावगत पापग्रह की अन्तर्दशा में जातक अशुभ कर्म करता है तथा स्थानभ्रष्ट होता है उसे मानसिक कष्ट भी होता है।।६३।।

प्रधानतः शुभस्थस्य सौम्यस्यापहृतौ यदा ।
विवाहं यज्ञदीक्षाञ्च दानादीन् लभते नरः ।।६४।।

दशेश से नवम में शुभ ग्रह की अन्तर्दशा में घर में मंगल कार्य, विवाहादि होते हैं। यज्ञ, दीक्षा तथा दानादि की प्राप्ति होती है।।६४।।

पाकेशाद् दशमभावस्थग्रहान्तर्दशाफलम्

कर्मस्थपापखेटस्य हृतौ पाकेश्वराद्यदा ।
कर्मनाशमवाप्नोति दुष्कीर्तिं विविधापदम् ।।६५।।

यदि दशम भाव में (दशानाथ से) पापग्रह की अन्तर्दशा हो तो असफलता (कर्मनाश), अपकीर्ति तथा संकट आते हैं॥६५॥

तस्मात्कर्मस्थसौम्यस्य हृतौ सौख्यं विनिर्दिशेत् ।
तडागगोपुरादीनां पुण्यकर्मादिसङ्ग्रहः ।।६६।।

यदि पाकेश से दशम में शुभ ग्रह हो तो सुख होता है और जातक उस दशाकाल में शुभ कर्म (तालाब, गोपुरादि का निर्माण) कराता है॥६६॥

पाकेशादेकादशभावस्थग्रहान्तर्दशाफलम्

लाभस्थस्य दशानाथात् पापस्यापहृतौ धनम् ।
लभते पुत्रमित्रार्थस्थानप्राप्तिं च शाश्वतीम् ।।६७।।

पाकेश से लाभस्थानगत पाप ग्रह की अन्तर्दशा में जातक को धन, पुत्र, मित्र, अर्थ, स्थान आदि की चिर काल के लिये प्राप्ति हो जाती है॥६७॥

पाकेशाल्लाभयुक्तस्य सौम्यस्यापहृतौ सुखम् ।
भाग्योत्तरं नृपात्प्रीतिं दारपुत्रादिवर्धनम् ।।६८।।

पाकेश से लाभस्थान में शुभ ग्रह के स्थित होने पर उसकी अन्तर्दशा में सुख, भाग्यवृद्धि, उच्चाधिकारियों से मेल-मिलाप एवं स्त्री-पुत्रादि की उन्नति होती है॥६८॥

पाकेशाद्व्ययभावगतग्रहान्तर्दशाफलम्

व्ययस्थस्य हृतौ दुःखं पापस्य तु दशाधिपात् ।
अर्थनाशं नृपात्क्रोधं स्थाननाशं स्मृतिभ्रमम् ।।६९।।

दशेश से व्यय भावगत ग्रह यदि पापग्रह हो तो उसकी अन्तर्दशा में दुःख, धनहानि, राजकोप और स्मरणशक्ति में भ्रम होता है॥६९॥

पाकेश्वराद् व्ययस्थस्य सौम्यस्यापहृतौ यदा ।
वाहनं भोगभाग्यञ्च वस्त्राभरणभूषणम् ।।७०।।

यदि दशानाथ से व्ययभावगत ग्रह शुभ ग्रह हो तो उसकी अन्तर्दशा में वाहन, भोग, ऐश्वर्य, वस्त्राभूषणादि प्राप्त होते हैं॥७०॥

पापे पापान्तर्दशाफलम्

तत्तद्दशायां संयोज्यमेवमेवं विशेषतः ।
स्वर्क्षोच्चमित्रवर्गादि विना सर्वत्र कल्पयेत् ।।७१।।

इस प्रकार पापदशा पापान्तर में सभी स्थानों पर विना स्वराशि, उच्च राशि, मित्रवर्ग के पापफल की कल्पना करनी चाहिए॥७१॥

लग्नार्थसोत्थगस्यापि पापस्यापहृतौ तदा ।
पाकेशाद् दुःखमाप्नोति सौम्यभुक्तौ शुभं भवेत् ।।७२।।

लग्न, द्वितीय, तृतीय भाव में स्थित पाप के अन्तर में दुःख एवं शुभान्तर में सुख प्राप्त होता है। उपर्युक्त फल दशेश से लग्नादिगत अन्तरेश के लिये हैं।।७२।।

अन्तर्दशायां क्रूरस्य क्रूरदाये महद्भयम् ।
स्थानाक्षिबन्धुपुत्रार्थदारनाशं नृपाद्भयम् ।।७३।।

क्रूर ग्रह की दशा तथा क्रूरान्तर में बहुत भय होता है। स्थान, आँख, भाई-बन्धु, पुत्र, धन तथा स्त्री का नाश हो जाता है और राज्यपक्ष से भय उपस्थित होता है।।७३।।

शुभे शुभान्तर्दशाफलकथनम्

शुभयुक्तौ शुभे दाये स्थानवाहनभूषणम् ।
सौम्यभुक्तौ पापदाये त्वादौ सौख्यं परं भयम् ।।७४।।

शुभ ग्रह की दशा तथा शुभान्तर में स्थान (पद, भूमि), वाहन तथा आभूषण प्राप्त होते हैं। सौम्य दशा-पापान्तर में प्रारम्भ में सुख तथा अन्त में कष्ट प्राप्त होता है।।७४।।

सौम्यदाये पापभुक्तौ त्वादौ कष्टं ततः शुभम् ।
शीर्षोदयर्क्षगाः खेटास्त्वादौ चान्तेऽन्यत्रृक्षगाः ।।७५।।

सौम्य दशा-पापान्तर में प्रारम्भ में कष्ट तथा अन्त में शुभ फल प्राप्त होते हैं। शीर्षोदय राशिगत ग्रह होने पर प्रारम्भ में शुभता तथा अन्य राशियों में अन्त में शुभता प्राप्त होती है।।७५।।

यत्र सम्पादबाहुल्यं योजयित्वा फलं वदेत् ।
अपि संवादकार्येषु यथोक्तं फलमादिशेत् ।।७६।।

जहाँ शुभ फल प्रदान करने वाले तथा अशुभ फल देने वाले दोनों प्रकार के ग्रह हों तब बलाबल का विचार करके तुल्य लग्नानुसार यथोक्त फल कहना चाहिए।।७६।।

इति सामुदायिकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ ग्रहाणां लग्नादिस्थितिभेदेन पुनरप्यन्तर्दशाफलविशेषमाह

अथ सूर्यान्तर्दशाफलम्

लग्नस्थसूर्यदशाफलम्

लग्नगस्य रवेः पाके भौमार्किशिखिभोगिनाम् ।
अन्तर्दशायां दुःखञ्च राज्यार्थगृहनाशनम् ।।७७।।

लग्नस्थ सूर्य की दशा में मंगल, शनि, केतु तथा राहु की अन्तर्दशा होने पर दुःख तथा राज्य, धन एवं गृहनाश होता है॥७७॥

गोचरागोचरकथनम्

तेषामगोचरस्थानां दिनेशात् फलमीदृशम् ।
गोचरस्थे फलं सौख्यं सर्वस्मिन् पाकपाद्गृहे ।।७८।।

यदि वे ग्रह सूर्य की दशा में अगोचर में हों तभी उपर्युक्त फल कहना चाहिये; अन्यथा गोचरग्रह की दशा सुखकर होती है॥७८॥

गोचरत्वन्नामस्वर्क्षतुङ्गत्रिकोणस्थः षडष्टान्त्यविवर्जितः ।
अनस्तगो मित्रगस्तु गोचरस्थो भवेद् ग्रहः ।।७९।।

गोचर ग्रह वे होते हैं, जो स्वराशि, उच्च राशि, मूल त्रिकोण राशि में हों तथा ६।८।१२ स्थान में न हों, अस्तंगत न हो और मित्रराशि में हों॥७९॥

अस्तगो नीचगो वापि स्वर्क्षमूलविवर्जितः ।
षष्ठाष्टमव्ययस्थो वा यः खेटोऽयमगोचरः ।।८०।।

जो अस्तंगत हों अथवा स्वराशि, उच्च या मूलत्रिकोण में हों अथवा ६।८।१२ में हों तो इन ग्रहों को अगोचर कहते हैं॥८०॥

लग्नस्थसूर्यान्तर्दशाफलम्

लग्नस्थवासरेशस्य दशायामिज्यशुक्रयोः ।
शशाङ्कसौम्ययोर्भुक्तौ कृषिगोसुतदारभूः ।।८१।।

लग्नस्थ सूर्य की दशा में गुरु, शुक्र, चन्द्र तथा बुध की अन्तर्दशा में खेती, गाय, पुत्र, पत्नी तथा भूमि का लाभ होता है॥८१॥

धनस्थसूर्यान्तर्दशाफलम्

धनस्थवासरेशस्य पापभुक्तौ धनक्षयम् ।
वाक्पारुष्यं मनोदुःखं नेत्ररोगं महद्भयम् ।।८२।।

धनभाव में स्थिर सूर्य की दशा में पापग्रहों के अन्तर में धननाश, वाणी में कठोरता, मन में दुःख, नेत्ररोग तथा बहुत भय होता है॥८२॥

सौम्यभुक्तौ रवेः पाके धनस्थस्य महत्सुखम् ।
विद्यालाभं नृपात्प्रीतिं वस्त्रवाहनभूषणम् ।।८३।।

सूर्य की दशा (धनभाव में स्थित) में शुभान्तर में बहुत सुख, विद्यालाभ, राजाओं से या राजासदृश लोगों से प्रीति, वस्त्र, वाहन तथा आभूषण का लाभ होता है॥८३॥

तृतीयस्थसूर्यदशाफलम्

तृतीयस्थस्य तु रवेः पाके पापहृतौ यदा ।
गोचरस्थे महत्सौख्यं नो चेत्पापफलं वदेत् ।।८४।।

तृतीय भाव में स्थित सूर्य की दशा पापान्तर में गोचर में हो तो शुभ; अन्यथा अशुभ फल प्राप्त होते हैं।।८४।।

तत्रस्थभानुपाके च शुभयुक्तौ महत्सुखम् ।
धैर्यं वित्तं सुताप्तिश्च समरे जयमाप्नुयात् ।।८५।।

तृतीय भाव में स्थित शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा में बहुत सुख प्राप्त होतें हैं, मन में धैर्य रहता है। धन तथा पुत्र प्राप्त होता है एवं युद्ध में विजय प्राप्त होती है।।८५।।

चतुर्थस्थसूर्यदशाफलम्

दिनेशस्य सुखस्थस्य दशायां पापिनां हतौ ।
मातृनाशं मनोदुःखं चौराग्निनृपपीडनम् ।।८६।।

चतुर्थ भाव में स्थित सूर्य की दशा में पापग्रहों की अन्तर्दशा में माता की हानि, मन में दुःख, चोर, अग्नि तथा राजा से पीड़ा होती है।।८६।।

रवेः सुखस्थितस्यापि शुभभुक्तौ महत्सुखम् ।
राज्यार्थपुत्रदारादिवस्त्रमाल्यानुलेपनम् ।।८७।।

चतुर्थस्थ सूर्य की दशा के शुभान्तर में बहुत सुख प्राप्त होता है। राज्य, धन, पुत्र, पत्नी आदि की प्राप्ति होती है। वस्त्र, माला तथा चन्दनादि का अनुलेपन होता है।।८७।।

पञ्चमस्थसूर्यदशाफलम्

पञ्चमस्थरवेः पाके शन्यारशिखिभोगिनाम् ।
अन्तर्दशायां पुत्रार्तिं चौरभूपाग्निपीडनम् ।।८८।।

लग्न से पञ्चमस्थ रवि की दशा में शनि, मंगल, राहु, केतु की अन्तर्दशा होने पर सन्ततिपीड़ा, चौरभय, राजभय तथा अग्निपीड़ा होती है।।८८।।

शुभग्रहाणां भुक्तौ च रवेः पञ्चमगस्य तु ।
परिपाके सुताप्तिश्च राज्यवाहनभूषणम् ।।८९।।

पञ्चमस्थ रवि में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर सन्ततिप्राप्ति, राज्याप्ति, वाहनाप्ति तथा भूषणाप्ति होती है।।८९।।

लग्नात् षष्ठगरवेरन्तर्दशाफलन्

षष्ठस्थसूर्यदायेऽस्मिन् पापदाहृतिपापिनाम् ।
ऋणचौराग्निभूपैस्तु भीतिरावश्यकी तथा ।।९०।।

लग्न से छठा सूर्य होने पर जब उसमें पाप ग्रहों की भुक्ति (अर्न्तदशा) हो तब ऋणग्रस्तता, चोर, अग्नि, राजा आदि से भय होता है॥९०॥

सौम्यानामपहारे तु भास्करस्यारिगस्य च ।
परिपाके सुखं पूर्वं पश्चाद्रिष्टं विनिर्दिशेत् ।।९१।।

शुभ ग्रहों की अपहति में अन्तर्दशा के पूर्वार्ध में सुख तथा पश्चार्ध में कष्ट की प्राप्ति होती है॥९१॥

लग्नात्सप्तमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्

सप्तमस्थरवेः पाके शुक्रेज्याब्जविदां हृतौ ।
दारलाभं मनोत्साहं यानाम्बरविभूषणम् ।।९२।।

लग्न से सप्तम में रवि होने पर उसकी महादशा में शुक्र, गुरु, चन्द्र, बुध की अन्तर्दशा आने पर जातक को विवाह, स्त्रीलाभ, मनोत्साह तथा वाहन, वस्त्राभूषणादि की प्राप्ति होती है॥९२॥

तथाविधरवेः पाके दुःखं स्यात् पापिनां हृतौ ।
ज्वरातिसारं पित्तं च मेहकृच्छ्रारिपीडनम् ।।९३।।

उसी प्रकार के सूर्य में पापग्रहों की अन्तर्दशाओं में ज्वरातिसार (बुखार के साथ दस्त लगना), पित्तविकार, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र तथा शत्रुओं से पीड़ा होती है॥९३॥

लग्नादष्टमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्

अष्टमस्थरवेः पाके शुभभुक्तौ शुभं वदेत् ।
किञ्चिद्दुःखं शुभाधिक्यं शयनाम्बरभूषणम् ।।९४।।

लग्न से अष्टमस्थ रवि होने पर उसमें शुभ ग्रहों की अन्तर्दशाओं में शुभ फल कहना चाहिये; परन्तु साथ ही कुछ न कुछ दुःख भी रहता है; लेकिन शुभाधिक्य होता है। शयन, वस्त्राभूषण आदि का सुख प्राप्त होता है॥९४॥

तथाविधरवेर्दाये पापभुक्तौ महद्भयम् ।
मरणं व्याधिपीडा वा परप्रेष्यत्वमेव वा ।।९५।।

यदि उक्त रवि में पापग्रहों की अन्तर्दशा हो तो उसमें महान् भय होता है। मृत्यु, रोग, पीड़ा या दासता होती है॥९५॥

लग्नान्नवमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्

शुभस्थानगतस्यापि रवेः पाके हृतौ यदा ।
सौम्यानां शुभकर्माप्तिं दानयज्ञं महोत्सवम् ।।९६।।

लग्न से नवमस्थ रवि होने पर उसमें शुभ ग्रहों की अन्तर्दशाओं में जातक शुभ कर्म करता है। दान, यज्ञ, महोत्सव आदि धर्मकार्य चलते हैं॥९६॥

नवमस्थरवेः पाके पापभुक्तौ यदा तदा ।
करोति दुःखबाहुल्यं गुरुपित्रादिपीडनम् ।।९७।।

नवमस्थ रवि में पाप ग्रहों की अन्तर्दशाओं में दुःख की अधिकता रहती है। गुरु, पिता तथा पितृतुल्य गुरुजनों को पीड़ा होती है।।९७।।

लग्नाद्दशमस्थरवेरन्तर्दशाफलम्

कर्मस्थरविदाये तु पापभुक्तिर्यदा तदा ।
करोति कर्मशोकार्तिं चौराग्निनृपपीडनम् ।।९८।।

लग्न से दशमस्थ रवि की दशा में पाप ग्रहों की अन्तर्दशाओं में जातक ऐसे कार्य करता हैं, जिनको करने के बाद पछताना पड़ता है। चोर, अग्नि, राजा— इनसे पीड़ा होती है।।९८।।

तथाविधरवेः पाके शुभभुक्तिर्यदा तदा ।
करोति विपुलं राज्यं कीर्तिश्चाचन्द्रतारकम् ।।९९।।

इसी प्रकार उक्त रवि में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर विपुल राजसी ठाठ-बाट, अधिकार की प्राप्ति होती है तथा जब तक सूर्य एवं चन्द्रमा इस धरती पर रहते हैं तब तक (यह अतिशयोक्ति है। इसका अर्थ है— दीर्घकाल तक) जातक की कीर्तिपताका फहराती रहती है।।९९।।

लग्नादेकादशस्थरवेरन्तर्दशाफलम्

लाभराशिगतस्यापि रवेः पाके शुभेतरा ।
भुक्तिर्यदा तदा दुःखं पश्चात्सौख्यं करोति च ।।१००।।

लग्न से ग्यारहवें भाव में सूर्य के स्थित होने पर उसकी महादशा में शुभेतर (शुभ + इतर = पाप) ग्रहों की अन्तर्दशा हो तो पूर्वार्ध में दुःख तथा उत्तरार्ध में सुख प्राप्त होता है।।१००।।

तथाविधरवेः पाके शुभभुक्तिर्यदा तदा ।
धनाप्तिं राजसम्मानं दारपुत्रनृपात्प्रियम् ।।१०१।।

तथैव उक्त सूर्य की महादशा में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशाओं में धन की प्राप्ति, राजसम्मान, स्त्री-पुत्रों का सुख प्राप्त होता है तथा उच्चाधिकारियों से निकटता के सम्बन्ध स्थापित होते हैं।।१०१।।

लग्नाद्व्ययभावगतरवेरन्तर्दशाफलम्

द्वादशस्थरवेः पाके पापभुक्तौ महद्भयम् ।
स्थानच्युतिं प्रवासञ्च नृपकोपाद्विमानता ।।१०२।।

द्वादशस्थ सूर्य की महादशा में जब पापग्रहों की भुक्ति (अन्तर्दशा) हो तो महान्

भय उत्पन्न होता है। जातक स्थानभ्रष्ट होकर भटकता रहता है। शासन पक्ष की प्रतिकूलता के कारण उसे अपमानित होना पड़ता है॥१०२॥

तथाविधरवेः पाके शुभभुक्तौ महत्सुखम् ।
गोभूमिवस्त्रधान्यादिमणिविद्रुमभूषणम् ॥१०३॥

इसी प्रकार उक्त रवि की दशा में शुभ ग्रहों की भुक्ति होने पर गो, महिष, भूमि, वाहन, वस्त्र, अन्न, मणि, स्वर्णादि आभूषण की प्राप्ति होती है॥१०३॥

इति रविपाकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ चन्द्रदशायामन्तर्दशाफलम्

लग्नगतचन्द्रदशाफलम्

मूर्त्तिस्थचन्द्रदाये तु शुक्रेज्याब्जविदां हृतौ ।
देहारोग्यं नृपात्प्रीतिं वाहनाम्बरभूषणम् ॥१०४॥

लग्न में स्थित चन्द्र की दशा में शुक्र, गुरु, चन्द्र, बुध के अन्तर में नीरोगिता, राजा से प्रसन्नता तथा वाहन, वस्त्र एवं आभूषण की प्राप्ति होती है॥१०४॥

तथाविधस्य चाब्जस्य परिपाके शुभेतरा ।
हृतिः करोति दुःखं च कृषिगोभूमिनाशनम् ॥१०५॥

ऐसे चन्द्र की दशा में पाप ग्रहों के अन्तर में दुःख, कृषि, गो, भूमि का नाश हो जाता है॥१०५॥

धनस्थचन्द्रदशाफलम्

द्वितीयस्थनिशानाथपरिपाके शुभेतरा ।
कलत्रपुत्रबन्धूनां नृपाद्भीतिं करोति च ॥१०६॥

द्वितीय भाव में स्थित चन्द्र की दशा में पापग्रहों का अन्तर पत्नी, पुत्र, बन्धुओं को कष्ट तथा राजा से भय देने वाली होती है॥१०६॥

सौम्याहृतौ द्वितीयस्थचन्द्रदाये महत्सुखम् ।
भोजनाम्बरपानञ्च मनोत्साहं करोति च ॥१०७॥

धनस्थ चन्द्रदशा के शुभान्तर में बहुत सुख प्राप्त होता है। यह दशा भोजन, वस्त्र, खान-पान तथा मन में उत्साह देने वाली होती है॥१०७॥

तृतीयस्थचन्द्रदशाफलम्

तृतीयस्थनिशानाथपरिपाके महत्सुखम् ।
शुभग्रहाणां भुक्तिस्तु करोति नृपमान्यताम् ॥१०८॥

तृतीय भाव में स्थित चन्द्र की दशा के शुभान्तर में बहुत प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं तथा राजा का सम्मान प्राप्त होता है।।१०८।।

तथाविधनिशानाथपरिपाके शुभेतरा ।
हृतिः करोति वैकल्यं भ्रातृधैर्यविनाशनम् ।।१०९।।

तृतीयस्थ चन्द्र की दशा के पापान्तर में मन में विकलता रहती है तथा धैर्य का नाश होता है।।१०९।।

चतुर्थस्थचन्द्रदशाफलम्

चतुर्थस्थनिशानाथपरिपाके महत्सुखम् ।
शुभभुक्तौ नृपात्प्रीतिर्जायते गृहजं सुखम् ।।११०।।

चतुर्थ भाव में स्थित चन्द्र की दशा में शुभान्तर में बहुत सुख प्राप्त होता है, राजा की प्रीति अर्थात् राजा का वरदहस्त प्राप्त होता है तथा घर का सुख मिलता है।।११०।।

पापभुक्तौ महत्कष्टं गृहदारार्थनाशनम् ।
चौराग्निनृपभीतिश्च तादृगब्जदशान्तरे ।।१११।।

पापान्तर में व्यक्ति को बहुत कष्ट उठाने पड़ते हैं। घर, पत्नी, धन इत्यादि का नाश हो जाता है एवं चौर, अग्नि, राजा से भय प्राप्त होता है।।१११।।

पञ्चमस्थचन्द्रदशाफलम्

पञ्चमस्थनिशानाशपरिपाके महत्सुखम् ।
सौम्यभुक्तौ कलत्रार्थपुत्रमित्राम्बराणि च ।।११२।।

पञ्चम भाव में स्थित चन्द्र की दशा में शुभान्तर में बहुत प्रकार के सुखों की प्राप्ति, पत्नी (दाम्पत्य सुख), धन, पुत्र, मित्र तथा वस्त्रों की प्राप्ति होती है।।११२।।

तथाविधदशानाथदाये पापहृतौ यदा ।
बुद्धिक्षोभं मनस्तापं पुत्रदारनृपाद्भयम् ।।११३।।

यदि चन्द्र की दशा और पापग्रहों का अन्तर हो तो बुद्धिक्षोभ, मनस्ताप (पछतावा), पुत्र तथा पत्नी को कष्ट होता है तथा मन में राजा का भय रहता है।।११३।।

षष्ठभावस्थचन्द्रदशाफलम्

कृषिनाशमृणग्रस्तं षष्ठस्थितनिशाकरात् ।
स्यात्पापिनां हृतौ दुःखं प्रमेहक्षयपाण्डुभिः ।।११४।।

षष्ठ भाव में स्थित चन्द्र की दशा में शुभान्तर में हृदय में दुःख, क्षोभ आदि रहते हैं एवं शरीर प्रमेह, क्षय, पाण्डु इत्यादि रोगों से त्रस्त रहता है।।११४।।

रिपुस्थितदशानाथे सौम्यानान्तु यदा हृतिः ।
करोति सर्वतो मैत्रीं चौराग्निभयनाशनम् ।।११५।।

षष्ठस्थ चन्द्र हो और शुभान्तर हो तो सभी लोगों के प्रति मैत्रीभाव रहता है तथा चौर, अग्नि इत्यादि भयों का नाश हो जाता है।।११५।।

सप्तमस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्

कलत्रस्थनिशानाथाद् यदा सौम्याहृतिस्तदा ।
कलत्रपुत्रसम्पत्तिर्वाहनाम्बरभूषणम् ।।११६।।

सप्तम भाव में स्थित चन्द्र की दशा के शुभान्तर में पत्नी, पुत्र, धन, वाहन, वस्त्र तथा आभूषणों का लाभ प्राप्त होता है।।११६।।

तथाविधदशानाथात्पापिनां तु हृतिर्यदा ।
विदेशयानं पुत्रार्थदारबन्धुविनाशनम् ।।११७।।

यदि सप्तमस्थ चन्द्र की दशा एवं पापान्तर हो तो विदेशगमन (स्थानान्तर में गमन), पुत्र, धन, दाम्पत्य सुख एवं भाई-बन्धुओं की हानि होती है।।११७।।

अष्टमभावस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्

अष्टमस्थनिशानाथात्पापभुक्तौ महद्भयम् ।
मरणं दारपुत्राणां कुत्सितान्नं पराजयम् ।।११८।।

अष्टम भाव में स्थित चन्द्र की अन्तर्दशा में बहुत प्रकार के भय होते हैं। पत्नी, पुत्र की हानि होती है, दूषित तथा अपौष्टिक एवं तामसी भोजन करने को मिलता है तथा मुकदमे, विवाद इत्यादि में पराजय प्राप्त होती है।।११८।।

रन्ध्रस्थितनिशानाथपरिपाके महत्सुखम् ।
सौम्यभुक्तौ महत्कीर्त्तिर्धैर्यवाहनभूषणम् ।।११९।।

अष्टम भावस्थ चन्द्र की दशा के शुभान्तर में बड़ा सुख, विशाल कीर्त्ति एवं यशप्राप्ति, धैर्यता एवं वाहन तथा आभूषण प्राप्त होते हैं।।११९।।

नवमभावस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्

धर्मस्थितदशानाथात् शुभभुक्तौ पितुः सुखम् ।
धर्मं यज्ञं विवाहञ्च राज्यस्त्रीधनसम्पदः ।।१२०।।

भाग्यभाव में स्थित चन्द्र की दशा में शुभान्तर में जातक को पिता का सुख प्राप्त होता है। धर्म, यज्ञ, विवाह इत्यादि शुभ कर्म एवं मांगलिक कर्म होते हैं तथा व्यक्ति को राज्य (या सरकारी पद) प्राप्त होता है; साथ ही स्त्री, धन तथा सम्पत्ति प्राप्त होती है।।१२०।।

पुनरपि नवमभावस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्

तथाविधदशानाथात् पापिनान्तु हृतिर्यदा ।
धर्महानिः मनोदुःखं राज्यार्थगृहनाशनम् ।।१२१।।

ऐसे चन्द्र की दशा में पापग्रहों के अन्तर में धर्म की हानि, मन में कष्ट, राज्य, धन, घर-गृहस्थी या घर की हानि होती है।।१२१।।

दशमस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्

कर्मस्थचन्द्रदाये च सौम्यभुक्तिः करोति हि ।
स्वकर्मनिरतं शास्त्रधर्मदानपरायणम् ।।१२२।।

कर्मभाव में स्थित चन्द्र की दशा तथा शुभान्तर में व्यक्ति अपने कार्यों में संलग्न रहता है एवं शास्त्र, धर्म तथा दानशील होता है।।१२२।।

कर्मस्थितनिशानाथात्पापभुक्तिर्यदा तदा ।
कर्मनाशं करोत्यत्र ह्यपकीर्त्ति महद्भयम् ।।१२३।।

यदि दशम भाव में स्थित चन्द्र की दशा में पापान्तर हो तो व्यक्ति जो कार्य करता है, उसमें नाश या असफलता प्राप्त होती है। अपकीर्त्ति प्राप्त होती है तथा व्यक्ति के मन में बहुत प्रकार के भय होते हैं।।१२३।।

लाभस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्

लाभचन्द्रदशाभुक्तिः धनधान्याम्बराणि च ।
वाहनं राज्यलाभञ्च करोति विविधं सुखम् ।।१२४।।

लाभ भाव में स्थित चन्द्र की दशा में शुभ ग्रह के अन्तर में जातक को धन, धान्य तथा वस्त्रों का लाभ होता है। वाहनादि प्राप्त होते हैं तथा विभिन्न प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं।।१२४।।

लाभचन्द्रे पापभुक्तौ धननाशमुपैति च ।
कृषिधान्याक्षिदेहार्त्ति नृपचौरादिपीडनम् ।।१२५।।

लाभस्थ चन्द्र की दशा में पापग्रह की भुक्ति होने पर जातक के धन का नाश हो जाता है। खेती, अन्नादि की हानि, आँख एवं शरीर में कष्ट तथा राजा एवं चौर का भय होता है।।१२५।।

द्वादशस्थचन्द्रान्तर्दशाफलम्

द्वादशस्थनिशानाथपरिपाकेऽर्थनाशनम् ।
पापभुक्तौ महत्कष्टं सर्वशत्रुत्वमेव च ।।१२६।।

बारहवें भाव में स्थित चन्द्र की दशा में पापभुक्ति (अर्थात् पापग्रह का अन्तर) होने

पर धन का नाश हो जाता है, बहुत कष्ट प्राप्त होता है तथा सभी जगह शत्रु उत्पन्न हो जाते हैं (अर्थात् व्यक्ति अकारण ही वैरी बन जाता है)॥१२६॥

शुभभुक्तौ व्ययस्थस्य वस्त्रमाल्यविभूषणम् ।
दारार्थपुत्रमित्राणां वर्धनं वाहनं सुखम् ।।१२७।।

शुभान्तर होने पर जातक को कपड़े, माल्यादि सुगन्धित वस्तुयें, आभूषण इत्यादि प्राप्त होते हैं। पत्नी, धन, पुत्र, मित्रों का लाभ होता है तथा वाहनों एवं सुखों में वृद्धि होती है॥१२७॥

इति चन्द्रपाकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ भौमदशान्तरफलानि

लग्नस्थभौमान्तर्दशाफलम्

लग्नस्थितधरासूनोः परिपाके व्रणं क्षतम् ।
पापभुक्तौ महत्कष्टमजीर्णादिमहद्भयम् ।।१२८।।

लग्न में स्थित मंगल की दशा में पापान्तर में फोड़े (व्रण) के कारण बड़ा घाव हो जाता है, बहुत से कष्ट होते हैं एवं अजीर्णादि रोगों से बहुत भय होता है॥१२८॥

शुभभुक्तौ नृपात्प्रीतिं भ्रातृवर्गभवं सुखम् ।
तथाविधधरासूनोर्दशायां क्षेत्रवाहने ।।१२९।।

शुभ ग्रह के अन्तर में राजा या राज्याधिकारियों से मित्रता, भ्रातृवर्ग में सुख होता है तथा खेती का लाभ एवं वाहन प्राप्त होता है॥१२९॥

द्वितीयस्थभौमान्तर्दशाफलम्

धनस्थितधरासूनोः शुभभुक्तिर्यदा तदा ।
भ्रातृसौख्यं मनोत्साहं विद्यावाहनभूषणम् ।।१३०।।

धनभाव में स्थित मंगल की दशा के शुभान्तर में भाई-बहिनों का सुख प्राप्त होता है, मन में उत्साह भरा रहता है, विद्या, वाहनादि तथा आभूषणों का लाभ प्राप्त होता है॥१३०॥

द्वितीयस्थधरासूनोः परिपाके शुभाहतिः ।
पूर्ववित्तविनाशं च राजकोपं ज्वराग्निभीः ।।१३१।।

द्वितीय भाव में स्थित मंगल की दशा के पापग्रह के अन्तर में अशुभ फल द्रप्त होते हैं। पूर्व में सञ्चित धन का नाश हो जाता है, राजकोप (या राज्याधिकारियों की विषमता) का भाजन बनना पड़ता है, ज्वर, (बुखार), अग्नि से भय होता है॥१३१॥

तृतीयस्थभौमान्तर्दशाफलम्

तृतीयस्थधरासूनोः पापभुक्तिर्यदा तदा ।
मनोवैकल्यमायाति भ्रातृवर्गविनाशनम् ।।१३२।।

तीसरे भाव में स्थित मंगल की दशा में पापभुक्ति होने पर मन में विकलता आती है तथा भ्रातृपक्ष (यहाँ पर भ्रातृपक्ष के अन्तर्गत मित्रों को भी गिनना चाहिए) की हानि होती है।।१३२।।

तृतीयस्थधरासूनोः पाके सौम्यहृतिर्यदा ।
भोजनाम्बरसौख्यं च कृषिभूषणवाहनम् ।।१३३।।

तृतीय भाव में स्थित मंगल की दशा में यदि शुभ ग्रहों का अन्तर हो तो अच्छे-अच्छे भोजन, वस्त्रादि प्राप्त होते हैं, खेती का लाभ मिलता है, वाहन प्राप्त होते हैं, साथ ही आभूषण इत्यादि भी प्राप्त होते हैं।।१३३।।

चतुर्थस्थभौमान्तर्दशाफलम्

हिबुकस्थधरासूनोः क्रूरभुक्तौ महद्भयम् ।
गृहक्षेत्रविनाशश्च नृपचौराग्निपीडनम् ।।१३४।।

चतुर्थ भाव में स्थित मंगल की दशा और क्रूर ग्रह का अन्तर होने पर बहुत प्रकार के भय होते हैं, घर तथा खेती का नाश हो जाता है तथा व्यक्ति राज्यपक्ष एवं चोरों से पीड़ित होता है।।१३४।।

हिबुकस्थधरासूनोः पाके सौम्यहृतिर्यदा ।
क्षेत्राम्बरसुखावाप्तिं पशुवाहनभूषणम् ।।१३५।।

चतुर्थस्थ मंगल की दशा में शुभ ग्रह का अन्तर होने पर व्यक्ति को खेती, वस्त्रादि का लाभ प्राप्त होता है, पशु-वाहन तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है।।१३५।।

पञ्चमस्थभौमान्तर्दशाफलम्

पञ्चमस्थधरासूनोः पाके पापहृतिर्यदा ।
कृषिगोधनधान्यार्थसुतदारविनाशनम् ।।१३६।।

पञ्चम भाव में स्थित मंगल की अन्तर्दशा में पापान्तर होने पर खेती, गाय, धन, अन्नादि, अर्थ तथा पुत्र एवं पत्नी की हानि होती है ।।१३६।।

तथाविधकुजात्सौम्यभुक्तौ शोभनमादिशेत् ।
राजपूज्यं सुताप्तिश्च मन्त्रावाप्तिमिहादिशेत् ।।१३७।।

तथा इसी स्थान में स्थित मंगल की दशा में शुभ ग्रह की भुक्ति होने पर शुभ फल प्राप्त होते हैं। राज्यपूज्यता (अर्थात् राज्य में सम्मान एवं प्रेष्ठत्व की प्राप्ति), पुत्र की प्राप्ति, तथा श्रेष्ठ मन्त्र की प्राप्ति होती है।।१३७।।

षष्ठस्थभौमान्तर्दशाफलम्

षष्ठस्थितकुजात्पापभुक्तौ कष्टं विनिर्दिशेत् ।
चौराग्निनृपपीडां च स्फोटकक्षयमेहनम् ।।१३८।।

छठे भाव में स्थित मंगल की दशा में पापभुक्ति होने पर कष्टफल प्राप्त होंगे— ऐसा कहना चाहिए। चौर, अग्नि, राजा से पीड़ा होती है। विस्फोटक, क्षय तथा प्रमेहादि रोग उत्पन्न हो जाते हैं॥१३८॥

तथाविधकुजात्सौम्यभुक्तौ भूपालमित्रताम् ।
बन्धुनाशं मनोदुःखं पश्चात्सौख्यं विनिर्दिशेत् ।।१३९।।

तथा इसी स्थान में शुभान्तर होने पर राजा से मित्रता होती है, भाई-बन्धुओं की हानि, मानसिक कष्ट एवं तत्पश्चात् सुख होगा— ऐसा कहना चाहिए॥१३९॥

सप्तमभावस्थभौमान्तर्दशाफलम्

कलत्रस्थकुजात्पापभुक्तौ स्त्रीसुतराजभीः ।
शुभभुक्तौ महत्सौख्यं नृपवाहनभूषणम् ।।१४०।।

सप्तमस्थ मंगल की दशा में पापान्तर हो तो व्यक्ति को स्त्री तथा पुत्र की हानि का भय तथा राजभय होता है और शुभान्तर होने पर बहुत प्रकार के सुख, राजा से या सरकार द्वारा वाहन तथा अनेक प्रकार के आभूषण प्राप्त होते हैं॥१४०॥

अष्टमस्थभौमान्तर्दशाफलम्

अष्टमस्थकुजाद्भुक्तौ पापिनां मरणं कृशम् ।
सौम्यभुक्तौ महासौख्यं कृषिगोनृपपूजनम् ।।१४१।।

अष्टम भाव में स्थित मंगल की दशा में पापान्तर हो तो व्यक्ति अल्प मृत्यु तथा कृश शरीर वाला हो जाता है एवं यदि शुभान्तर हो तो बहुत सुख, कृषि, गाय का लाभ होता है तथा राजा से पूजित होता है॥१४१॥

नवमस्थभौमान्तर्दशाफलम्

नवमस्थधरासूनोर्दाये पापहृतिर्यदा ।
पित्रोर्नाशं गुरोर्नाशं धर्महानिं मनोरुजम् ।।१४२।।

नवम भाव में स्थित मंगल की दशा में यदि पापग्रहों का अन्तर हो तो पिता की हानि, गुरु की हानि, धर्म की हानि तथा मनोरोग होते हैं॥१४२॥

तथाविधकुजात्सौम्यभुक्तौ गोधनसम्पदः ।
विवाहं यज्ञदीक्षाञ्च देवभूसुरतर्पणम् ।।१४३।।

तथा शुभान्तर होने पर गो, धन, सम्पत्ति प्राप्त होती है, विवाहादि माङ्गलिक कार्य होते हैं, यज्ञ-दीक्षादि पुण्य कर्म सम्पन्न होते हैं, जातक देवताओं तथा ब्राह्मणों का यजन-तर्पण करता है॥१४३॥

दामस्थमंगलदशान्तर्दशाफलम्

कर्मस्थितधरासूनोः दुःखं स्यात्पापिनां हृतौ ।
विदेशयानं दुष्कीर्त्तिं लभते हि पराजयम् ।।१४४।।

दशम भाव में स्थित मंगल की दशा में पापग्रह का अन्तर होने पर जातक को स्थानान्तर पर जाना पड़ता है, उसे अपयश प्राप्त होता है तथा मुकदमे, विवादादि में पराजय होती है॥१४४॥

एकादशस्थभौमान्तर्दशाफलम्

लाभस्थभूमिपुत्रस्य पाके पापहृतिर्यदा ।
करोति विपुलं राज्यं गन्धमाल्यादिभूषणम् ।।१४५।।

लाभभाव में स्थित मंगल की दशा में पापान्तर हो तो बड़ा अधिकार प्राप्त होता है। चन्दन, पुष्प आदि सुगन्धित द्रव्य तथा वस्त्राभूषण प्राप्त होते हैं॥१४५॥

शुक्रेज्याब्जविदां भुक्तौ लाभराशिगतस्य तु ।
परिपाके महत्सौख्यं दानधर्मादिसंग्रहम् ।।१४६।।

शुभ ग्रहों का अन्तर होने पर बहुत प्रकार के सुख, दान, धर्म इत्यादि पुण्य कार्य तथा धनादि का संग्रह होता है॥१४६॥

व्ययस्थभौमान्तर्दशाफलम्

द्वादशस्थधरासूनोः पाके पापहृतिर्यदा ।
करोति दुःखबाहुल्यं कारागृहनिवेशनम् ।।१४७।।

बारहवें भाव में स्थित मंगल की दशा के पापान्तर में दु:ख होता है तथा जेल जाने की स्थिति आ जाती है॥१४७॥

शुभापहारे सौख्यं च यानाम्बरविभूषणम् ।
भुक्त्यन्ते राजकोपञ्च पदभ्रंशं मनोरुजम् ।।१४८।।

शुभान्तर होने पर व्यक्ति को सुख प्राप्त होता है, वाहन, वस्त्र तथा आभूषण का लाभ होता है, राजकोप भी होता है तथा स्थानभ्रष्टता एवं मानसिक रोग उत्पन्न हो जाते हैं॥१४८॥

इति भौमपाकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ राहुदशान्तरफलानि

लग्नस्थराह्वन्तर्दशाफलम्

लग्नस्थसैंहिकेयस्य दाये पापहृतिर्यदा ।
करोति दुःखबाहुल्यं नृपचौराग्निपीडनम् ।।१४९।।

लग्न में स्थित राहु की दशा में पापान्तर हो तो दुःख की बहुलता रहती है एवं राजा, चौर, अग्नि से पीड़ा होती है।।१४९।।

तत्रस्थभोगिनः पाके शुभभुक्तौ शुभं वदेत् ।
गृहक्षेत्रादिवृद्धिश्च भोजनाम्बरभूषणम् ।।१५०।।

लग्नस्थित राहु की दशा में शुभान्तर हो तो शुभ फल कहना चाहिए। घर, खेती-बाड़ी इत्यादि में वृद्धि होती है, भोजन, वस्त्र, आभूषण इत्यादि प्राप्त होते हैं।।१५०।।

दुःस्थानस्थराह्वन्तर्दशाफलम्

षडष्टान्त्यगतस्याहेः परिपाके शुभेतरा ।
हृतिः कलहरोगाग्निनृपचौरविषाहिभीः ।।१५१।।

दुःस्थान (षष्ठ, अष्टम, द्वादश भाव) में स्थित राहु की दशा के पापान्तर में झगड़े इत्यादि, रोग, अग्नि, राजा, चोर, विष तथा सर्प से भय उत्पन्न होता है।।१५१।।

श्वासक्षयप्रमेहादिशूलनिद्रादिभाग्भवेत् ।
कुभोजनं कुवस्त्रञ्च स्थाननाशं नृपाद्भयम् ।।१५२।।

श्वास, क्षय, प्रमेहादि, शूल, अनिद्रा इत्यादि से जातक पीड़ित होता है तथा उसे कुभोजन, कुवस्त्र प्राप्त होते हैं, स्थान की हानि होती है तथा राजा से भय होता है।।१५२।।

दुःस्थस्य चाहिनाथस्य परिपाके शुभा हृतिः ।
आदौ शुभं महत्सौख्यं नृपमानं धनागमम् ।।१५३।।

दुःस्थान में स्थित राहु की दशा में जब शुभान्तर हो तो दशा के आदि में शुभ फल प्राप्त होते हैं। बहुत से सुख, राजा से मान-सम्मान तथा धनागम होता है।।१५३।।

अन्ते तु राजभीतिः स्यात्स्थाननाशं मनोरुजम् ।
कृषिगोभूमिवस्त्रादिबन्धुपुत्रार्थनाशनम् ।।१५४।।

दशा के अन्त में राजा (या राज्याधिकारियों) से भय होता है, स्थान की हानि होती है, मानसिक कष्ट उत्पन्न होते हैं, खेती, गाय, भूमि, वस्त्र इत्यादि, भाई-बन्धु, पुत्र तथा धन का नाश हो जाता है।।१५४।।

केन्द्रत्रयस्थितराह्वन्तर्दशाफलम्

केन्द्रत्रयस्थितस्याहेः पापानां तु हृतिर्यदा ।
गृहदाहाक्षिरोगादिदारपुत्रमहद्भयम् ।।१५५।।

लग्न के अतिरिक्त तीन केन्द्रों (चतुर्थ, सप्तम एवं दशम भाव) में बैठे हुए राहु की दशा में पापान्तर आने पर गृहदाह अर्थात् घर जल जाता है, नेत्र इत्यादि में रोग होते हैं तथा स्त्री, पुत्रों के सम्बन्ध में भय उपस्थित होता है॥१५५॥

स्थानच्युतिं मनोदुःखं निजाचारविवर्जितम् ।
अकस्मात् कलहं चैवं चौराग्निनृपपीडनम् ।।१५६।।

स्थानहानि, मन में दुःख, अपने आचार-विचार के वर्जन से कलह तथा रोग उत्पन्न होते हैं एवं चौर, राजा (या राज्याधिकारियों) से भय तथा अग्नि से भय होता है॥१५६॥

चतुष्टयगतस्याहेः परिपाके शुभा हृतिः ।
क्वचित्सौख्यं क्वचित्कीर्तिं क्वचिद्धर्मं क्वचिन्न हि ।।१५७।।

केन्द्र में स्थित राहु की दशा में शुभग्रह का अन्तर होने पर कभी सुख, कभी कीर्त्ति तथा कभी धर्मवृद्धि होती है तथा कभी-कभी कुछ भी फल प्राप्त नहीं होता॥१५७॥

एवमादौ तु भुक्त्यन्ते राजकोपाद्धनक्षयम् ।
युद्धे पराजयं चैव विद्यावादं महद्भयम् ।।१५८।।

इस प्रकार के फल दशा के प्रारम्भ में होते हैं तथा दशा के अन्त में राजा के कोप के कारण धन का नाश हो जाता है, युद्ध में पराजय प्राप्त होती है और विद्या से सम्बन्धित वाद-विवाद होते हैं तथा व्यक्ति बड़ा ही भयभीत रहता है॥१५८॥

त्रिकोणस्थितराह्वन्तर्दशाफलम्

त्रिकोणस्थफणीन्द्रस्थ दशापाके महत्कृशम् ।
पापभुक्तौ महत्कष्टं पापाचारसमन्वितम् ।।१५९।।

त्रिकोण (पञ्चम तथा नवम भाव) में स्थित राहु की दशा में पापान्तर होने पर शरीर में कृशता (कमजोरी), बहुत से कष्ट तथा व्यक्ति पापाचारी हो जाता है ॥१५९॥

अपकीर्त्तिं कुभोज्यञ्च कृषिगोभूमिनाशनम् ।
नृपभीतिञ्च शौर्यं च मौल्यादिपतनं भवेत् ।।१६०।।

जातक को अपकीर्त्ति (अपयश) प्राप्त होता है, स्वाद एवं पौष्टिकतारहित तामसी भोजन प्राप्त होता है, खेती, गौ, भूमि इत्यादि की हानि होती है, राजा से भय उत्पन्न होता है तथा मौल्यादि का पतन अर्थात् मूल्य में कमी आ जाती है॥१६०॥

तथाविधफणीन्द्रस्य शुभभुक्तौ शुभक्रिया ।
सुतदारधनाप्तिश्च भुक्त्यन्ते फलमीदृशम् ।।१६१।।

त्रिकोणस्थ राहु की दशा में जब शुभ ग्रह का अन्तर हो तो जातक के द्वारा शुभ कार्य होते हैं, पुत्र, धन तथा स्त्री की प्राप्ति होती है। इस प्रकार के फल दशादि के अन्त में प्राप्त होते हैं।।१६१।।

किञ्चित्सुखं तदादौ तु विदेशगमनं तथा ।
मन्त्रोपास्तिं मनोत्साहं कलत्रात्मजदूषणम् ।।१६२।।

दशा के प्रारम्भ में थोड़ा-सा सुख, परदेश (स्थानान्तर) में गमन, मन्त्रोपासना करता है, मन उत्साहित रहता है तथा स्त्री, पुत्र इत्यादि को दूषण होता है ।।१६२।।

तृतीयलाभस्थराह्वन्तर्दशाफलम्

तृतीयलाभगस्याहेः परिपाके महत्सुखम् ।
पापभुक्तौ नृपप्रीतिं फलमीदृशमादितः ।।१६३।।

तृतीय तथा लाभभाव में स्थित राहु की दशा के पापान्तर में जातक को बहुत से सुख प्राप्त होते हैं एवं राजा से मित्रता हो जाती है। इस प्रकार के फल प्रथमतः प्राप्त होते हैं।।१६३।।

अन्ते कष्टं विनिर्देश्यं चौराग्निनृपपीडनम् ।
बन्धुद्वेषं मनोदुःखं भ्रातृवर्गविनाशनम् ।।१६४।।

अन्त में कष्ट प्राप्त होता है। चौर, अग्नि, राजा से कष्ट होता है, भाइयों से द्वेष (झगड़ा) हो जाता है, मन दुःखी रहता है तथा भाइयों अथवा भाइयों के समान लोगों की हानि हो जाती है।।१६४।।

धनराशिस्थराह्वन्तर्दशाफलम्

धनराशिगतस्याहेः पापानां तु हतिर्यदा ।
धननाशं मनोदुःखं भार्यापुत्रविनाशनम् ।।१६५।।

धन भाव में स्थित राहु की दशा के पापान्तर में धन का नाश हो जाता है, मन दुःखी रहता है तथा स्त्री एवं पुत्रादि की हानि या उनसे दूर रहना पड़ता है।।१६५।।

क्रयविक्रयवित्ताप्तिं वाग्दूषणमथापि वा ।
तथाविधफणीन्द्रस्य शुभभुक्तौ तु भोजनम् ।।१६६।।

व्यापार में हानि होती है, धन का नाश हो जाता है अथवा वाणी से दूषण प्राप्त होते हैं। धनभाव में स्थित राहु की दशा के शुभान्तर में उत्तम भोजन मिलता है।।१६६।।

वस्त्रवाहनभूषाप्तिं क्रयविक्रयदूषणम् ।
उद्योगभङ्गं देहार्त्तिं गूढपापं लभेन्नरः ।।१६७।।

वस्त्र, वाहन तथा आभूषण इत्यादि प्राप्त होते हैं, व्यापार में दूषण होता है, उद्योग भंग हो जाता है, देहपीड़ा होती है तथा मनुष्य गुप्त रूप से पापकर्म करता है॥१६७॥

इति राहुपाकान्तंर्दशाफलम्

◆

अथ जीवान्तर्दशाफलम्

केन्द्रस्थितजीवान्तर्दशाफलम्

केन्द्रस्थितस्य जीवस्य दशायां देहपीडनम् ।
पापाहतौ तथा दुःखं राजकोपं धनक्षयम् ।।१६८।।

जब केन्द्र में स्थित गुरु की दशा आती है तब जातक को शरीरकष्ट रहता है। उसमें यदि पाप ग्रहों की अन्तर्दशा हो तो दुःख प्राप्त होता है एवं राजकोप से धन नष्ट होता है॥१६८॥

कृषिगोभूमिनाशं च विरोधं बन्धुभिः सह ।
उत्साहभङ्गं वैकल्यमादौ चान्ते शुभं वदेत् ।।१६९।।

कृषि, गाय, भैंस, भूमि से सम्बन्धित कार्यों में हानि होती है। अपने बन्धुओं से विरोध होता है। उत्साह-भङ्ग होकर निराशा रहती है। मन में विकलता रहती है। यह सब अशुभ फल पापान्तर्दशाओं के पूर्वार्ध में होते हैं। उत्तरार्ध में शुभ फल प्राप्त होता है॥१६९॥

भुक्तौ शुभानां तत्काले गुरोः केन्द्रगतस्य तु ।
राज्यलाभं मनोत्साहं वस्त्रवाहनभूषणम् ।।१७०।।

जब केन्द्रगत गुरु में शुभ ग्रहों की भुक्ति होती है तब जातक को अधिकारप्राप्ति, पदवृद्धि होती है। मन में उत्साह का सञ्चार रहता है। वस्त्राभूषणों की प्राप्ति तथा संग्रह होता है॥१७०॥

दानं होमं जपं धर्म्यं नृपलालनमानताम् ।
सर्वोपकारं कल्याणं विचित्राम्बरकाञ्चनम् ।।१७१।।

साथ ही उपरोक्त गुरु की दशा में जातक दान, यज्ञ, जप, होम, अनुष्ठानादि सम्पन्न करने में लगा रहता है एवं अन्य जो धार्मिक कृत्य होते हैं, उन्हें भी करता है। उसे सत्ता पक्ष से सम्मान प्राप्त होता है। वह परोपकार एवं लोककल्याण के कार्य करता है। उसके पास अनेक प्रकार के वस्त्राभूषण (विलासिता की सामग्री) का सञ्चय होता है॥१७१॥

त्रिकोणस्थगुर्वन्तर्दशाफलम्

त्रिकोणस्थगुरोः पाके शुभभुक्तौ महत्सुखम् ।
प्राकारगोपुरादीनां निर्माणं देवतर्पणम् ।।१७२।।

त्रिकोण स्थित गुरु की दशा में शुभगहों की अन्तर्दशा हो तो जातक को महान सुख प्राप्त होता है। इस अन्तर्दशा में जातक परकोटा, भवन आदि का निर्माण कराता है एवं देवताओं को तृप्त करने वाला कार्य करता है॥१७२॥

भाग्योत्तरं महाकीर्तिं दारपुत्रार्थसम्पदः ।
विदेशयानादाप्तार्थं यशो विद्यां जयं सुखम् ।।१७३।।

साथ ही उक्त दशा में उत्तरोत्तर भाग्यवृद्धि होती है। उसकी ख्याति सब दिशाओं में फैलती है एवं उसे स्त्री, पुत्र तथा सम्पत्ति का सुख मिलता है। अपने स्थान से दूर जाकर वह धन कमाता है एवं उसका यश, विद्या तथा सुख बढ़ता है तथा उसकी धाक जम जाती है॥१७३॥

तत्रस्थितगुरोः पाके पापानाञ्च हतिर्यदा ।
दारपुत्रनृपक्रोधं बन्धूनां मरणं तथा ।।१७४।।

उपर्युक्त दशा में यदि पाप ग्रहों की अन्तर्दशा हो तो स्त्री-पुत्रों से पीड़ा होती है। सत्तापक्ष से सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। बन्धु-बान्धवों का विनाश होता है॥१७४॥

बुद्धिभ्रंशं पदभ्रंशं कार्यविघ्नकरं तथा ।
चौराग्निदारपीडाञ्च कुरुते नात्र संशयः ।।१७५।।

साथ ही उक्त दशान्तर्दशा में बौद्धिक जड़ता उत्पन्न होती है। जातक की निर्णय लेने की शक्ति समाप्त हो जाती है, वह ऐसे काम करता है, जिनका परिणाम अच्छा नहीं होता है। उसकी नौकरी छूट जाती है या सम्मान की हानि होती है। कार्यों में असफलता प्राप्त होती है। चौरादि से कष्ट होता है। अग्निकाण्ड से हानि होती है। उसकी स्त्री को कष्ट होता है। इन फलों की प्राप्ति में संशय नहीं है॥१७५॥

अन्यफलम्

स्वकुलाचारहीनञ्च परदाराभिमर्शनम् ।
चाञ्चल्यं मानहानिञ्च मणिविद्रुमनाशनम् ।।१७६।।

त्रिकोणस्थ गुरुदशा के पापान्तर में जातक अपने कुलपरम्परा से व्यवहृत शिष्टाचार तथा मर्यादाओं को त्याग देता है। वह पराई स्त्रियों से सम्पर्क बनाने में जुटा रहता है। उसके भीतर इतनी चञ्चलता तथा इन्द्रियलोलुपता बढ़ जाती है कि जिसके कारण उसे पग-पग पर अपमानित होना पड़ता है तथा इसी चक्कर में पड़कर वह सोना, चाँदी के

आभूषण, मणिजडित आभूषण दूसरों को दे डालता है और स्वयं कंगाली की स्थिति में आ जाता है॥१७६॥

षष्ठाष्टमव्ययस्थगुरोरन्तर्दशाफलम्

षष्ठाष्टमव्ययस्थस्य गुरोः पाके शुभेतरा ।
करोति स्वकुलाचारहीनं राज्यार्थनाशनम् ॥१७७॥

छठे, आठवें, बारहवें भावों में स्थित गुरु की दशा में शुभेतर (पाप) ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर जातक अपने कुल-परम्परा के शिष्टाचार से च्युत हो जाता है। उसके अधिकार-धन आदि का नाश हो जाता है॥१७७॥

आत्मार्थबन्धुमरणं विदेशान्नृपलालनम् ।
भूमिवादं मनोदुःखं व्याधीनां भयमेव च ॥१७८॥

जातक के लिये उसके भाई की जान चली जाती है और उसे किसी दूरवर्ती राजनेता या प्रभावशाली व्यक्ति की सहायता अपनी रक्षा एवं पोषण हेतु लेनी पड़ती है। भूमि के पीछे मुकदमेबाजी होती है, जिसमें लड़ाई-झगड़े की नौबत आती है। मन में व्यथा रहती है। कठिन व्याधियों का भय मन ही मन सताता रहता है॥१७८॥

दुःस्थानगतगुरोर्दशायां शुभभुक्तौ फलम्

गुरोर्नाशं गतस्यापि परिपाके महत्सुखम् ।
देशग्रामाधिपत्यञ्च शुभभुक्तौ महद्यशः ॥१७९॥

नाशभाव (अष्टम भाव) गत गुरु की दशा में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर महान् सुख होता है। विधान सभा, ग्राम पञ्चायत, जनपद पञ्चायत, जिला पञ्चायत आदि में निर्वाचित या मनोनीत पद की प्राप्ति होती है तथा महान् यश प्राप्त होता है॥१७९॥

देहारोग्यकरं किञ्चिद् गजाश्वाद्यम्बराणि च ।
सुष्ठु भोजनमुल्लासं क्षीरदध्याज्यशर्कराः ॥१८०॥

उक्त दशा में शरीर का स्वास्थ्य उत्तम रहता है। हाथी, घोड़ा, वस्त्रादि की प्राप्ति होती है (अनेक प्रकार के वाहनों की प्राप्ति होती है) एवं स्वादिष्ट भोजन प्राप्त होता है। मन उल्लसित होता है। दूध, दही, घी, शक्कर आदि खाने को मिलते हैं॥१८०॥

तृतीयायगतगुरोरन्तर्दशाफलम्

तृतीयायगतस्यापि गुरोः पाके महद्यशः ।
सौम्यानां भुक्तिकाले तु वस्त्रवाहनभूषणम् ॥१८१॥
मणिविद्रुममुक्तादिकाञ्चनाद्यम्बराणि च ।
देशाधिपत्यं मन्त्रित्वं लभते नात्र संशयः ॥१८२॥

तृतीय, षष्ठ या एकादश भाव में बैठे गुरु की महादशा महान् यश देती है। उसमें

सौम्य ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर नये वस्त्र, नये वाहन तथा नये आभूषणों एवं साज-सज्जा की प्राप्ति होती है। उस दशाकाल में मणि, रत्न, मूँगा, मोती, सोना-चाँदी तथा इनसे जडित जरीगोटा, किनारी वाले वस्त्र, मीनाकारी वाले आभूषण तथा पात्र प्राप्त होते हैं। उस समय उसे चुनाव तथा परीक्षा में सफलता मिलती है एवं वह किसी महत्त्वपूर्ण सभा, समिति आदि का निर्वाचित या मनोनीत सदस्य बन जाता है अथवा किसी प्रतिष्ठान में परामर्शदाता या निर्देशक बनता है अथवा सञ्चालक मण्डल का सदस्य बनाया जाता है॥१८१-१८२॥

तादृशस्य गुरोर्दाये पापभुक्तौ महद् भयम् ।
आचारहीनं कुरुते स्वकुलोद्भवनाशनम् ।।१८३।।
विदेशवासं कष्टञ्च नानादुःखपरिभ्रमम् ।
एवमादौ दशान्ते च सुखं वाहनभोजनम् ।।१८४।।

उक्त प्रकार की ग्रहदशा में पापग्रहों की भुक्ति (अन्तर्दशा) होने पर जातक को महान् भय प्राप्त होता है। वह अनेक विपत्तियों में फँस जाता है, एक के बाद एक समस्या सामने आती रहती है। इस अन्तर्दशा में जातक अपने कुल को कलंकित करता है। वह अपने कुलाचार से भ्रष्ट हो जाता है। उसका आचरण पतित हो जाता है। वह मारा-मारा फिरता रहता है। उसे किसी कार्य में सफलता नहीं मिलती है। यह सब फल पापान्तर्दशा के पूर्वार्ध में प्राप्त होते हैं; परन्तु उत्तरार्ध में उसके सब दुःखों का नाश होकर सुख प्राप्त होता है। उसे सुन्दर भोजन, वाहन तथा विलासिता की सामग्री प्राप्त होती है ॥१८३-१८४॥

धर्मस्थितगुरोरन्तर्दशाफलम्

धर्मस्थितगुरोर्दाये शुभभुक्तौ धनागमम् ।
विद्यालाभं जयं सौख्यं दारपुत्रनृपात्सुखम् ।।१८५।।
सर्वेषामुपकर्तृत्वं धनाधिक्यं महत्प्रियम् ।
भोजनं पौष्टिकञ्चैव धर्मदारधनादिकम् ।।१८६।।

नवम भाव (भाग्य = धर्म) में स्थित गुरु की दशा में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर धन का आगमन होता है और आय के अनेक स्रोत प्रारम्भ हो जाते हैं। उसे शिक्षा तथा परीक्षा में सफलता मिलती है। उसकी श्रेष्ठता तथा विद्वत्ता की धाक जम जाती है। उस समय जातक को सब प्रकार का सुख प्राप्त होता है। स्त्री तथा पुत्र अनुकूल रहते हैं। उन्हें सफलता मिलती है। उच्चाधिकारियों से अच्छे सम्बधों का लाभ मिलता है। इस दशा में जातक दूसरों का भला करने में लगा रहता है। इसके कारण उसकी धन-समृद्धि तो बढ़ती ही है; उसकी लोकप्रियता भी दिनानुदिन वृद्धिगत रहती है। वह लोकप्रियता

के शिखर पर पहुँचता है। उसे पौष्टिक भोजन प्राप्त होता है। वह धर्मकार्यों में लगा रहता है। उसकी पत्नी भी समृद्ध हो जाती है॥१८५-१८६॥

विशेष— इन श्लोकों में अशुभ ग्रहों की भुक्ति का फल नहीं कहा गया है; अतः उसे विकल्प से जानना चाहिये कि नवम भावगत गुरु में अशुभ ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर शुभ फलों में कमी तो होती ही है; साथ ही अशुभ फल, दुःख, कष्ट तथा अर्थाभाव भी होता है।

भोजनं पौष्टिकं चैव— उपयुर्क्त श्लोक में पौष्टिक भोजन से तात्पर्य क्या है? गीता (१७.८) में जिसे सात्त्विक भोजन कहा है, वह पौष्टिक भोजन के ही अन्तर्गत आता है। यथा—

आयुः सत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्याः आहाराः सात्त्विकप्रियाः ॥

जो भोजन आयु, सत्त्व (जीवनी शक्ति), आरोग्य, सुख, प्रीति, बल— इनको बढ़ाने वाला; सरस, स्निग्ध, स्थिर तथा हृदय के लिये हितकारी हो, वह सात्त्विक तथा सही अर्थ में पौष्टिक होता है। गाय का दूध, दही, मट्ठा, घी, गेहूँ, चावल, चना, मटर, दालें, जौ, फल, पत्तेदार शाक— ये सब पौष्टिक भोजन के अन्तर्गत आते हैं।

सन्तुलित भोजन— आधुनिक चिकित्साशास्त्री पौष्टिक भोजन को सन्तुलित भोजन कहते हैं। इसमें पाँच तत्त्व होते हैं— प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, विटामिंस, खनिज तथा सेल्युलोज। दूध, दही, दालें— यह प्रोटीन हैं। आटा तथा गुड, शक्कर (गेहूँ, जौ, बाजारा, चावल)— ये कार्बोहाड्रेट्स हैं। हरी शाक-सब्जी, गेंहू आदि के चोकर में विटामिंस होते हैं। इन्हीं चीजों में लोहा, ताँबा, कैल्सियम आदि खनिज पदार्थ प्राप्त होते हैं। सब्जियों तथा अनाज के छिलकों में सेल्युलोज होता है, जो आँतों में कब्ज नहीं रहने देते।

उपयोग के आधार पर भोजन (खाद्य पदार्थ) भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चेष्य— इन चार प्रकारों में विभाजित है।

द्वितीयभावगतगुर्वन्तर्दशाफलम्

द्वितीयस्थगुरोः पाके पापभुक्तौ यदा तदा ।
करोति दुःखबाहुल्यं राज्ञा हृतधनं तथा ।।१८७।।
बन्धुद्वेषं मनोद्विग्नं वाचिकं दैन्यमेव च ।
कुभोजनादिदुष्कर्मकुत्सितप्रेष्यभावताम् ।।१८८।।

द्वितीय भाव में स्थित गुरु की महादशा में जब पापग्रहों में से किसी ग्रह की बहुलता होती है तब कई प्रकार के दुःख एवं समस्यायें एक साथ उत्पन्न होती हैं। उस समय टैक्सचोरी आदि के कारण छापा पड़ जाता है, जिसमें तमाम सम्पत्ति चली जाती है।

अपने ही भाई-बन्धुओं से वैमनस्यता बढ़ जाती है। वही शत्रुपक्ष से मिल जाते हैं तथा भितरघात करते हैं। मन में निराशा, खीझ, चिड़चिड़ाहट तथा उद्विग्नता रहती है। जातक की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, वह निन्दनीय कर्म करने लगता है। चरित्रपतित हो जाता है। उसकी वाणी में दीनता प्रकट होती है। वह दूसरों से सहायता के लिये रोता, कलपता तथा गिड़गिड़ाता है। वह अपने ऊपर दूसरों का अनुचित दबाव झेलता रहता है तथा अन्याय सहन करता रहता है। वह कुभोजन (गन्दा, बासी, सड़ा-गला तथा जूठा) का सेवन करता है। दुष्कर्म करता है। चोरी, झूट, छल, कपट आदि से युक्त कार्य दुष्कर्म होते हैं। किसी कुलीन व्यक्ति के लिये दूसरों के जूठे बर्तन धोना, गन्दे कपड़े धोना, घर की सफाई, उबटन, मालिश आदि सब दुष्कर्म की श्रेणी में आते हैं। वह कुत्सित प्रेष्य भाव से काम करता है। बुरे तथा चरित्रभ्रष्टता के कार्यों में अपने मालिक का सहयोग करना कुत्सित प्रेष्यता है। जैसे व्यभिचार के अड्डों आदि पर स्त्री-पुरुषों की व्यवस्था करना, अफीम, गाँजा, चरस, शराब, हीरोइन आदि का लाना-ले जाना आदि इसी प्रकार के प्रेष्य कर्म हैं।

इति गुरुपाकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ शनेरन्तर्दशाफलम्

तत्रादौ केन्द्रस्थशनिर्दायफलम्

केन्द्रस्थस्य शनेर्दाये यदा पापहृतिस्तदा ।
स्थानच्युतिं प्रवासञ्च नृपचौराग्निपीडनम् ।।१८९।।

केन्द्रस्थित शनि की महादशा में जब पापग्रहों (सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु) की हृति (अन्तर्दशा) हो तो जातक को अपना स्थान छोड़ना पड़ता है। वह कार्य हेतु दूसरे शहर या कस्बे में जाता है अथवा उसकी नौकरी छूट जाती है अथवा उसके कार्यालय में विभाग-परिवर्तन हो जाता है, जिससे कि उसे परिवर्तित पर पद कार्य करना पड़ता है। कभी-कभी जिस मकान में जातक रहता है, उसे छोड़कर किसी अन्य आवास में उसे रहना पड़ता है। उसे अनेक स्थानों पर यात्रा-प्रवास में भटकना पड़ता है। सत्तापक्ष से या प्रभावशाली नेताओं या व्यक्तियों से टकराव होने से उसे हानि उठानी पड़ती है। चोरी हो जाती है। कई बार महत्त्वपूर्ण वस्तुयें या अभिलेख गुम हो जाते हैं, जिनके कारण परेशानी उठानी पड़ती है। अग्निकाण्ड आदि से सम्पत्ति की हानि होती है। बिजली के करण्ट आदि से भी उसे नुकसान उठाना पड़ता है॥१८९॥

तथाविधशनेर्दाये शुभभुक्तौ महत्सुखम् ।
नृपाभिषेकमर्थाप्तिं देशग्रामाधिपत्यताम् ।।१९०।।

फलमीदृशमादौ तु भुक्त्यन्ते रोगपीडनम् ।
परापवादं बन्धूनां मरणं धननाशनम् ।।१९१।।

उक्त प्रकार की केन्द्रस्थित शनिर्दाय (महादशा) में यदि शुभग्रहों (चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र) की भुक्ति (अन्तर्दशा) हो तो उसमें जातक को महान् सुख प्राप्त होता है, उसे किसी उच्च सम्माननीय पद की प्राप्ति होती है। अच्छा वेतन-भत्ता तथा सुविधायें मिलती हैं। अथवा अन्य प्रकार से धनलाभ होता है। स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं (पञ्चायत, नगरपालिका, नगरनिगम आदि) के निर्वाचित या मनोनीत पद की प्राप्ति होती है; इस प्रकार का फल इस अन्तर्दशा में प्रारम्भिक भाग (पूर्वार्ध) में प्राप्त होता है। परन्तु उत्तरार्ध में रोगों से कष्ट, निन्दा, कलंक आदि की प्राप्ति तथा बन्धुओं का मरण एवं धनहानि होती है॥१९०-१९१॥

त्रिकोणस्थशनिर्दाये पापान्तर्दशाफलम्

त्रिकोणस्थशनेर्दाये पितृपुत्रविनाशनम् ।
पापभुक्तौ महत्कष्टं कर्मनाशमथापि वा ।।१९२।।
वाताक्षिमूलरोगं च स्वबन्धुकलहं तथा ।
उद्योगभङ्गं दुःखञ्च स्थलधान्यविनाशनम् ।।१९३।।

जन्मकुण्डली में त्रिकोण (नवम-पञ्चम भाव) में स्थित शनि की दशा में पापान्तर्दशा होने पर पिता तथा पुत्र का विनाश होता है अर्थात् जातक के पिता या पितृव्यों को तथा सन्तति को कष्ट होता है। उसे अन्य प्रकार से भी बहुत कष्ट प्राप्त होता है। जिस कार्य को वह करता है, उसमें असफलता हाथ लगती है और कार्य पूरा नहीं होता। यदि कार्य पूरा भी हो जाय तो उस कार्य का कोई फल ही प्राप्त नहीं होता है। जातक को अस्सी प्रकार के वातरोग सताते हैं। उसे मूल रोग से कष्ट होता है (अर्श (खूंनी तथा बादी बवासीर, भगन्दर, गुदन्दर, कृमिरोग आदि मूलरोग कहलाते हैं)। अपने भाई-बन्धुओं से कलह तथा वैमनस्य रहता है। अच्छा-खासा चलता हुआ उद्योग (कारोबार, धन्धा, दुकानदारी आदि) ठप हो जाता है या फैक्टरी में उत्पादन बन्द हो जाता है या फिर नौकरी छूट जाती है। उसे अनेक प्रकार से दुःख प्राप्त होता है। भूमि या कारोबार करने की जगह नष्ट हो जाती है या खेती या खड़ी फसल नष्ट हो जाती है, जिससे जातक बेघर-बार तथा बेरोजगार हो जाता है॥१९२-१९३॥

शनेर्दाये शुभभुक्तौ फलम्

तथाविधशनेर्दाये शुभभुक्तौ महत्सुखम् ।
राजपूज्यं कृषेर्लाभं धनधान्यविवर्धनम् ।।१९४।।
स्वबन्धुदारपुत्राणामारोग्यं भूषणादिकम् ।
भृत्यमित्रार्थसम्पत्तिं लभते धर्मसंग्रहम् ।।१९५।।

उक्त प्रकार की शनिदशा (त्रिकोणस्थ) में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा में जातक को महान् सुख होता है। कृषिकार्य से लाभ होता है। घर में धन-धान्य की वृद्धि होती है। काम-धन्धा तथा नौकरी में प्रगति होती है। जातक के परिवार में बन्धु-बान्धव, पुत्र-कलत्रादि सुखी, स्वस्थ तथा निरोग रहते हैं। घर में वस्त्राभूषणों का सञ्चय होता है। साज-सज्जा पर व्यय होता है। नौकर-चाकरों अथवा आरामदायक उपकरणों की व्यवस्था होती है। मित्रों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है। धन-सम्पत्ति में प्रचुरता होती है। जातक तीर्थाटन, भजन-पूजन, स्नान-दानादि का कार्य करता है॥१९४-१९५॥

षष्ठाष्टमव्ययस्थशनेर्दाये पापान्तर्दशाफलम्

षष्ठाष्टमव्ययस्थस्य शनेर्दाये शुभेतरा ।
हृतिर्दुःखं महत्कष्टं स्थाननाशं धनक्षयम् ।।१९६।।
गुह्यरोगं विषार्तिञ्च ज्वरवह्निनृपाद्भयम् ।
अत्याप्तबन्धुमरणमुद्योगस्य विनाशनम् ।।१९७।।

छठे, आठवें या बारहवें भाव में स्थित शनि की दशा में पाप ग्रहों की अन्तर्दशा लगने पर दुःख तथा महान् कष्ट होता है। स्थानपरिवर्तन या पदहानि होती है। धन का क्षय होता है। उद्योग-धन्धे में घाटा पड़ता है, नौकरी में वेतन कट जाता है। लड़ाई, झगड़ा, रोग, बीमारी आदि से निपटने में धन पानी की तरह बह जाता है। गुप्तांगों में रोग होते हैं या कैंसर-जैसी गुप्त बीमारी शरीर के भीतर पनप सकती है। विषाक्त जन्तुओं, विषाक्त पदार्थों के सम्पर्क में आने के कारण शरीर-स्वास्थ्य का खतरा उत्पन्न हो जाता है। बार-बार या निरन्तर कई दिनों तक लगातार चलने वाला ज्वर पीड़ित करता है। अत्यधिक निकटवर्ती आत्मीय तथा विश्वसनीय बन्धु-बान्धवों की मृत्यु होती है। उद्योग-धन्धा ठप हो जाता है॥१९६-१९७॥

षष्ठाष्टमव्ययस्थशनेर्दाये शुभान्तर्दशाफलम्

षष्ठाष्टमव्ययस्थस्य शुभपाके महत्सुखम् ।
आरोग्यं कान्तिवृद्धिञ्च देशग्रामाधिपत्यताम् ।।१९८।।

छठे-आठवें-बारहवें भाव में स्थित शनि की दशा में जब किसी शुभ ग्रह की भुक्ति (पाक) अर्थात् अन्तर्दशा होती है तो उसमें जातक को खूब सुख होता है। शरीर के स्वास्थ्य में उन्नति होती है। शरीर की चमक बढ़ जाती है तथा उसे क्षेत्र या ग्रामादि के मुखिया (विधायक, चेयरमैन, सरपञ्च, सदस्य आदि) का पद मिलता है॥१९८॥

तृतीयलाभभावस्थशनेर्दाये शुभहृतिफलम्

तृतीयलाभराशिस्थशनेः शुभहृतिर्यदा ।
पाके शुभफलं प्रोक्तं नृपलालनभूषणम् ।।१९९।।

जब कुण्डली में शनि तीसरे या ग्यारहवें भाव में बैठा हो तब शनि की दशा में

शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा आने पर शुभ फल कहा गया है। उस दशा में राज्यपक्ष से सम्मान तथा सहयोग मिलता है। उच्चाधिकारियों से मिलाप का लाभ मिलता है॥१९९॥

तृतीयलाभराशिस्थशनेर्दाये पापहतिफलम्

तृतीयलाभराशिस्थशनेः पापहतिर्यदा ।
पाके धनाप्तिं दुःखञ्च भ्रातृवर्गविनाशनम् ।।२००।।
विदेशयानं कलहं वैकल्यं भृत्यनाशनम् ।
कुभोजनं परप्रेष्यं कुस्त्रीसङ्गमनं लभेत् ।।२०१।।

जब तीसरे या ग्यारहवें भावस्थित शनि की दशा में पापग्रहों की अन्तर्दश हो तो धन की प्राप्ति होती है। पराक्रम द्वारा अनेक स्रोतों से आमदनी होती है; लेकिन अनेक प्रकार से दु:ख भी पहुँचते हैं। आर्थिक दृष्टि से यह अन्तर्दशा श्रेष्ठ होने पर भी इसमें भ्रातृवर्ग (चाचा, ताऊ आदि के पुत्रों) का नाश होता है अथवा अपने निकटस्थ सहयोगियों की मृत्यु हो जाती है। नौकर-चाकर काम छोड़कर भाग जाते हैं। उनमें असन्तोष पनपता है। दूर स्थानों की यात्रा करनी पड़ती है, जिसमें कष्ट होता है। बात-बात पर लोगों से लड़ाई-झगड़ा या तू-तू मैं-मैं हो जाया करती है। मन में क्षोभ, उद्विग्नता तथा विकलता रहती है, किसी काम में मन नहीं लगता है। अपौष्टिक तथा हानिकर भोजन मिलता है। किसी की घरेलू नौकरी करनी पड़ती है। बुरी स्त्रियों की संगति रहती है॥२००-२०१॥

धनभावस्थशनेपकि पापहतिफलम्

धनस्थितशनेः पाके यदा पापहतिर्भवेत् ।
राजदण्डं महाविघ्नं कारागृहनिरोधनम् ।।२०२।।
उत्साहभङ्गं देहार्तिं ज्वरातीसारपीडनम् ।
राज्यनाशं गवाश्वानां मरणं वाहनाद्भयम् ।।२०३।।

धनस्थित शनि की दशा में यदि पापग्रहों की अन्तर्दशा चल रही हो तो उसमें शासन द्वारा प्रतिष्ठान पर छापा मार कर या घर पर छापा मारकर अनियमित रूप से एकत्रित वस्तुओं, अवैध आमदनी आदि या किसी अन्य आपराधिक गतिविधि में संलग्नता या संलिप्तता के कारण अभियोग चलाया जाता है, जिसमें कारावास या अर्थदण्ड भुगतान पड़ता है। दैनिक कार्यकलापों में अनेकानेक विघ्न उपस्थित होते हैं अथवा शत्रुपक्षादि से अपहरण होकर उनके निरोध में कष्ट सहना पड़ता है। उत्साहभंग होकर मन में निराशा छा जाती है। उस अवधि में मनोविदलता-जैसे मनोरोग हो जाते हैं। शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्गों में पीड़ा रहती है। ज्वर के साथ अतिसार (दस्त-पेचिश) का कष्ट होता है। अधिकार, पद एवं स्थायी सम्पत्ति छिन जाती है। गाय-भैंस-घोड़े आदि

पशु मर जाते हैं अथवा वाहन दुर्घटनायें होकर वाहनों तथा शरीर— दोनों को क्षति पहुँचती है। वाहन-दुर्घटना से मृत्यु होने का भय रहता है॥२०२-२०३॥

द्वितीयस्थशनेर्दशायां शुभभुक्तिफलम्

द्वितीयस्थशनेः पाके शुभभुक्तौ मनोदृढम् ।
उपकर्तृत्वमन्येषां द्यूतविद्याविनोदनम् ।।२०४।।
गानकेलिरहस्यञ्च भोजनाम्बरभूषणम् ।
उद्योगसिद्धिं राज्याप्तिं मणिविद्रुमकाञ्चनम् ।।२०५।।

द्वितीयस्थ शनि की दशा में यदि शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा चल रही हो तो उस कालावधि में जातक के मन में उत्साह का सञ्चार रहता है। उसका मनोबल तथा आत्मविश्वास बढ़ा-चढ़ा रहता है। उस समय जातक दूसरों का उपकार करने में लगा रहता है। वह जुआ, ताश, शतरंज, चौपर, ल्यूडो-जैसे खेलों से मनोविनोद करता है। लॉटरी के टिकिट खरीदने में रुचि बढ़ जाती है। मनोरञ्जन के अन्य साधन भी जुट जाते हैं। इन दिनों वह गाना-बजाना-नाचना आदि सीखने, सुनने, समझने में लगा रहता है। उसे उत्तम वस्त्राभूषण प्राप्त होते रहते हैं। उत्तम प्रकार की चिकित्सा-सुविधा उपलब्ध रहती है। उद्योग में सफलता मिलती है। उच्चाधिकार तथा पद की प्राप्ति होती है। मणि, रत्न, स्वर्ण, चाँदी आदि की प्राप्ति होती है। सम्पन्नता बढ़ती है॥२०४-२०५॥

इति शनिपाकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ बुधान्तर्दशाफलम्

केन्द्रस्थितबुधान्तर्दशाफलम्

केन्द्रस्थितस्य सौम्यस्य दशायां पापिनां हृतौ ।
कर्मविघ्नं महादुःखं मनश्चाञ्चल्यमेव च ।।२०६।।

केन्द्र में स्थित बुध की दशा में पापग्रह का अन्तर होने पर अशुभ फल प्राप्त होते हैं। कार्यों में विघ्न (बाधायें) आती रहती हैं, कार्य में सफलता नहीं मिलती, अनेक प्रकार के दुःख सामने आ जाते हैं तथा मन में खिन्नता एवं चञ्चलता अर्थात् मन किसी एक बात या स्थान पर टिकता नहीं है॥२०६॥

उत्साहभङ्गं गोभूमिहिरण्याम्बरनाशनम् ।
स्थानच्युतिं महाद्वेषं विद्यानाशं लभेत्तदा ।।२०७।।

जातक का उत्साह भङ्ग हो जाता है, उसके पशु आदि नष्ट हो जाते हैं, भूमि पर दूसरे का कब्जा हो जाता है या उसे बेचना पड़ता है या कृषि से हाथ धोना पड़ता है, स्वर्णादि आभूषणों की हानि होती है, कपड़े जल जाते हैं अथवा फट जाते हैं, स्थान-

च्युति (स्थानच्युति से तात्पर्य अपने अधिकार खोने एवं स्थान को छोड़ने से होता है) हो जाती है, लोगों से अकारण ही बड़े-बड़े झगड़े होने लगते हैं, विद्या का विनाश अर्थात् सीखी हुई विद्या को भूल जाता है।।२०७।।

शुभभुक्तौ बुधस्याथ पापकेन्द्रगतस्य तु ।
वैवाहिकं यज्ञकर्म दानधर्मजपादिकम् ।।२०८।।

केन्द्रस्थित बुध की दशा में शुभग्रह की भुक्ति होने पर विवाहादि माङ्गलिक कार्य होते हैं, यज्ञादि पुण्य कर्म होते हैं, दान, धर्म, जपादि में व्यक्ति संलग्न रहता है।।२०८।।

ज्ञानाधिक्यं नृपात् प्रीतिं कृषिगोभूमिवर्द्धनम् ।
मुक्तामणिप्रवालादिवाहनाम्बरभूषणम् ।।२०९।।

व्यक्ति अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करता है, राजा से प्रीति अर्थात् मेल-जोल बढ़ता है, खेती, गाय इत्यादि दुधारू पशुओं की वृद्धि होती है, भूमिवृद्धि होती है, मोती, माणिक्य इत्यादि रत्नों से जड़ित आभूषण प्राप्त होते हैं तथा वाहन (सवारी) का लाभ होता है, वस्त्र इत्यादि प्राप्त होते हैं।।२०९।।

त्रिकोणस्थबुधान्तर्दशाफलम्

ज्ञस्य त्रिकोणयुक्तस्य दशायां पापिनां हृतौ ।
दारपुत्रार्थनाशं च कर्मनाशं मनोरुजम् ।।२१०।।

त्रिकोण (पञ्चम, नवम) में स्थित बुध की दशा में पापग्रह का अन्तर हो तो व्यक्ति की स्त्री, पुंत्रादि का नाश या वियोग होता है, धननाश हो जाता है, कृतकार्यों में असफलता मिलती है, मन रुग्ण रहता है (अर्थात् व्यक्ति मानसिक रूप से बीमार रहता है)।।२१०।।

कृषिवाणिज्यनाशञ्च बन्धुनाशमथापि वा ।
पादभङ्गं महाद्वेषं बन्धुद्वेषं लभेन्नरः ।।२११।।

त्रिकोण में स्थित बुध की दशा में खेती-बाड़ी तथा व्यापार में हानि होती है और वह बन्द होने की स्थिति में पहुँच जाता है। भाई-बन्धुओं का नाश हो जाता है। पादभङ्ग (अर्थात् जातक का पैर टूट जाता है, कट जाता है या पैर में लकवा होना, पैर में मोच आना तथा चलने में पैरों के कारण परेशानी को पादभंग कहा जाता है) होता है तथा व्यक्ति का कई लोगों से विरोध हो जाता है।।२११।।

तथाविधज्ञस्य पाके शुभभुक्तौ नृपात्प्रियम् ।
आरोग्यमतिसौख्यं च सोमपानादिकं सुखम् ।।२१२।।

यदि त्रिकोणस्थ बुध की दशा हो और शुभ ग्रह का अन्तर हो तो राजा (अथवा राजा के समान लोगों) से मित्रता होती है, शरीर नीरोग रहता है, मन प्रसन्न तथा विभिन्न

प्रकार के सुख भोगता है और सोमपानादि का सुख प्राप्त करता है (यहाँ सोमरस का अर्थ कोल्ड ड्रिंक इत्यादि के रूप में माना जा सकता है)॥२१२॥

स्वनामाङ्कितपद्यानि नामद्वयमथापि वा ।
भोजनाम्बरभूषाप्तिं नरेशत्वं लभेन्नरः ।।२१३।।

त्रिकोणस्थ बुध की दशा में शुभ ग्रहों का अन्तर होने पर जातक स्वनामधन्य श्लोकों की रचना करता है, कविता करता है अथवा उसे नामद्वय (अर्थात् सम्मान में उपाधि) प्राप्त होती है। भोजन सुमधुर प्राप्त होता है, वस्त्र, आभूषण इत्यादि प्राप्त होते हैं तथा उसे राजत्व अर्थात् दरबार में पात्रता या राज्य पद की प्राप्ति होती है॥२१३॥

दुःस्थानस्थबुधान्तर्दशाफलम्

षष्ठाष्टमगतज्ञस्य परिपाके तु पापिनाम् ।
हृतौ चौरारिपीडां च ज्वरातीसारपीडनम् ।।२१४।।

छठे, आठवें स्थान में स्थित बुध की दशा में पापग्रह का अन्तर होने पर अशुभ फल प्राप्त होते हैं। चोर और शत्रुओं से कष्ट प्राप्त होता है तथा ज्वर (बुखार) एवं अतिसारादि रोगों से कष्ट प्राप्त करता है॥२१४॥

स्वबन्धुमरणं क्लेशं भृत्यस्त्रीपुत्रनाशनम् ।
विवादं विग्रहं सर्वैः बन्धुभिः लभते नरः ।।२१५।।

भाई-बन्धुओं की हानि होती है, मन में चिन्ता तथा क्लेशों से कष्ट होता है, सेवक, दाम्पत्य-जीवन तथा पुत्र की हानि होती है। व्यक्ति कई प्रकार के विवादों में घिर जाता है तथा सभी भाई-बन्धुओं का साथ मिलता है॥२१५॥

तथाविधाब्जपुत्रस्य शुभभुक्तौ महद्यशः ।
आरोग्यं कान्तिलाभञ्च देवभूसुरतर्पणम् ।।२१६।।

यदि इन स्थानों में स्थित बुध की दशा तथा शुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो व्यक्ति बहुत यश, कीर्त्ति, प्रसिद्धि प्राप्त करता है। आरोग्यलाभ होता है, कान्तिलाभ होता है तथा जातक देवताओं एवं ब्राह्मणों का यजन करता है॥२१६॥

दशादौ फलमेवं स्याद्भुक्त्यन्ते सुखनाशनम् ।
गोमहिष्यादिपीडाञ्च वाक्पारुष्यं नृपाद्भयम् ।।२१७।।

दशा के प्रारम्भ से ही इस प्रकार के फल प्राप्त होते हैं तथा दशा के अन्त में सुख का नाश हो जाता है। गाय, भैंस इत्यादि पशुओं को पीड़ा होती है, वाणी में कर्कशता समावेशित हो जाती है तथा व्यक्ति राजा से भयभीत रहता है॥२१७॥

तृतीयलाभस्थबुधान्तर्दशाफलम्

तृतीयायगतज्ञस्य शुभभुक्तौ शुभं भवेत् ।
मनोधैर्यं मनोत्साहं विदेशाद् द्रव्यसञ्चयम् ।।२१८।।

तृतीय तथा लाभभाव (एकादश भाव) में स्थित बुध की दशा में शुभ ग्रह के अन्तर में शुभ फल प्राप्त होते हैं, मन में धैर्य रहता है, मन उत्साहित रहता है तथा व्यक्ति को परदेश से धन प्राप्त होता है॥२१८॥

विद्याजयं नृपात्प्रीतिं भोजनं पौष्टिकन्तथा ।
यज्ञवैवाहिकं कर्म पुराणश्रवणादिकम् ।।२१९।।

विद्याजय होती है, राजा से मित्रता होती है, पौष्टिक भोजन प्राप्त होता है, यज्ञ-विवाहादि मांगलिक एवं शुभ कर्म होते हैं तथा इस समय में व्यक्ति पुराणादि, शास्त्रादि धार्मिक ग्रन्थों का श्रवण करता है॥२१९॥

विद्याजयम्— विद्याजयम् से यहाँ तात्पर्य केवल विद्या से सम्बन्धित गोष्ठी में प्राप्त सफलता से नहीं है; अपितु परीक्षाओं में सफलता, परीक्षाओं में शीर्षस्थान की प्राप्ति, भाषण, निबन्धादि प्रतियोगिताओं में सफलता आदि से भी है।

तथाविधज्ञस्य पाके पापभुक्तौ महद्भयम् ।
भ्रातृवर्गविनाशं च वैक्लव्यं नृपपीडनम् ।।२२०।।

इन स्थानों में स्थित बुध की दशा में पापग्रह का अन्तर हो तो व्यक्ति अनेक प्रकार के भयों से भयभीत रहता है। भ्रातृवर्ग (भाई-बन्धु, मित्र, बहिन इत्यादि) की हानि होती है, व्यक्ति बल तथा वीर्य से हीन हो जाता है और उसे राजा या राज्याधिकारियों से कष्ट प्राप्त होता है॥२२०॥

चौरारिवह्निभीतिञ्च कुस्त्रीभूतादिसेवनम् ।
कर्महीनं कृषेर्नाशं गजाश्वानां च पीडनम् ।।२२१।।

चोरी का भय रहता है, शत्रु कहीं छिपकर वार न करे अथवा किसी कार्य का नाश न कर दे— इसका भय मन में निरन्तर रहता है, आग लगने का डर रहता है, निन्द्य स्त्री का संग (समाज से बहिष्कृत अथवा पापिनी या दुराचारिणी स्त्री का संग) करता है। भूतादि पूजन (कुलदेवता जैसे— गौड़ बाबा, प्रेतपूजन, कमाल बाबा, साधुओं के नाम पर बने स्थानों की पूजा) इत्यादि करता है। जातक कर्महीन होकर भाग्यवादी बन जाता है, उसकी खेती का नाश हो जाता है, हाथी, घोड़े (अथवा विशाल वाहन) से कष्ट होता है— इस प्रकार के फल कहने चाहिए॥२२१॥

धनभावस्थबुधदशाफलम्

धनस्थिताब्जपुत्रस्य परिपाके शुभेतरा ।
करोति राजदण्डञ्च बन्धनं निगडं तथा ।।२२२।।
विषार्त्तिं बन्धुविद्वेषं कृषिगोभूमिनाशनम् ।
शत्रुत्वं सकलैः सार्द्धं नित्याचारविवर्जनम् ।।२२३।।

द्वितीय भाव में स्थित बुध की दशा में पापग्रह के अन्तर में भाई-बन्धुओं के साथ वैर होता है। कृषि, गौ, भूमि इत्यादि का नाश हो जाता है, विष से पीड़ा होती है, राजा के द्वारा दण्डित किये जाने से उसे कैद होती है। सबसे शत्रुता हो जाती है तथा उसे नित्याचार से राहित्य प्राप्त होता है॥२२२-२२३॥

द्वितीयस्थस्य सौम्यस्य परिपाकेऽर्थलाभभाक् ।
शुभभुक्तौ महाप्रीतिं देवभूसुरतर्पणम् ।।२२४।।

द्वितीय भाव में स्थित बुध की दशा में शुभ ग्रह का अन्तर होने पर धनलाभ प्राप्त होता है, मन में प्रसन्नता रहती है, व्यक्ति देवताओं, पूज्यों, वृद्धों तथा ब्राह्मणों का सन्मान करता है॥२२४॥

अध्वरादिमहत्कर्म दानहोमजपादिकम् ।
बन्धुपूज्यं महोत्साहं विद्यालाभं च विन्दति ।।२२५।।

इस समय में व्यक्ति यज्ञादि बड़े-बड़े पुण्यकार्य करता है, दानादि कार्यों में संलग्न रहता है, हवन तथा जप इत्यादि शुभ कार्यों में सहयोग करता है तथा स्वयं भी इन्हीं कृत्यों को करता है। जातक को समाज, भाई-बन्धुओं, जाति-बिरादरी वालों में सम्मान, श्रेष्ठत्व प्राप्त होता है, भाई-बहनों से आदर प्राप्त करता है, विभिन्न प्रकार की विद्याओं (जैसे शिल्पकला, पाककला, छन्दरचनाकौशल इत्यादि कलाओं) में निपुणता प्राप्त करता है॥२२५॥

इति बुधपाकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ केतोरन्तर्दशाफलम्

तत्रादौ चतुष्टयस्थकेतोर्पापहतिफलम्

केतोश्चतुष्टयस्थस्य यदा पापहतिस्तदा ।
मानभङ्गं महाद्वेषं नृपचौराग्निपीडनम् ।।२२६।।
मातृनाशं तदीयं वा दारपुत्रविनाशनम् ।
कर्मनाशं पदभ्रंशमकस्मात्कलहो भवेत् ।।२२७।।

जब जन्मकुण्डली में केतु चतुष्टय (केन्द्र) में बैठा हो और उसकी दशा में पापग्रहों

की अन्तर्दशा हो तब जातक को अपमानित होना पड़ता है। वह अधिकांश लोगों का द्वेष-भाजन हो जाता है। उसकी लोकप्रियता समाप्त हो जाती है। उसे सत्तापक्ष से कष्ट प्राप्त होता है। चोरों तथा असामाजिक तत्त्वों से पीड़ा होती है। जातक की स्वयं की मृत्यु होती है अथवा उसकी माता या मातृतुल्य स्त्रियों की मृत्यु होती है। उसके स्त्री-पुत्रों को भी पीड़ा पहुँचती है। कभी-कभी उनका वियोग भी सहन करना पड़ता है। जातक जिस काम को हाथ में लेता है वह या तो अपूर्ण रह जाता है अथवा उसका कोई फल ही नहीं मिलता और इस प्रकार उसका सारा परिश्रम अकारथ जाता है। उसे अपने पद से या नौकरी से हाथ धोना पड़ता है अथवा वह नौकरी से निलम्बित हो जाता है। अकस्मात् तथा अकारण लोगों से उसका झगड़ा हो जाता है॥२२६-२२७॥

केन्द्रस्थकेतोर्दाये शुभभुक्तिफलम्

केतोस्तथाविधस्यापि शुभभुक्तौ नृपात्प्रियम् ।
देहारोग्यकरं सौख्यं बन्धुभिश्च समागमम् ।।२२८।।
भोजनाम्बरभूषाप्तिमादौ चान्ते मनोरुजम् ।
उद्योगभङ्गं कामार्तिं स्वकुलोद्भवनाशनम् ।।२२९।।

केन्द्रस्थित केतु की दशा में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा आने पर शरीर का स्वास्थ्य उत्तम हो जाता है। कुटुम्बी जनों से सुख प्राप्त होता है। बन्धुजनों का समागम होता है। किसी मंगलकार्य में नाते-रिश्तेदार आते हैं। सुभोजन तथा वस्त्रों की प्राप्ति होती है। यह सभी फल इस अन्तर्दशा के पूर्वार्ध में प्राप्त होते हैं; परन्तु अन्तर्दशा के उत्तरार्ध में विपरीत परिणाम होते हैं। किये-कराये पर पानी फिर जाता है, प्रयत्न निष्फल होते हैं। जातक अधिक कामुक एवं विलासी प्रकृति का हो जाता है। जातक के कुल में उत्पन्न किसी व्यक्ति का मरण होता है॥२२८-२२९॥

त्रिकोणस्थकेतोर्दाये पापान्तर्दशाफलम्

त्रिकोणराशियुक्तस्य केतोर्दाये शुभेतरा ।
हृतिस्तदा मनस्तापं करोति विविधापदम् ।।२३०।।
पुत्रवर्गादिमरणं पित्रोर्नाशमथापि वा ।
स्थानार्थयोस्तथा नाशं भृत्यबन्धुविरोधनम् ।।२३१।।

नवम-पञ्चम भावों में स्थित केतु की महादशा में पापग्रहों की अन्तर्दशा होने पर जातक के मन में चिन्ता तथा सन्ताप होता है। विविध प्रकार की आपत्तियाँ आती रहती हैं। इस कालावधि में पुत्रवर्ग (पुत्र, पुत्री, भतीजे, भतीजियाँ, भानजे आदि) का मरण होता है अथवा जातक के पिता या पितृतुल्य व्यक्तियों का नाश होता है। स्थाननाश होता है। व्यक्ति जिस स्थान पर रहता है अथवा जहाँ कारोबार करता है, वह स्थान या तो नष्ट हो जाता है या फिर ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं कि जातक को वह मकान-

दुकान-कार्यस्थल या नगर, ग्राम छोड़ना पड़ जाता है। उसकी चल-अचल सम्पत्ति का ह्रास होता है। नौकरों एवं कर्मचारियों से विरोध होता है। सहयोगीजनों से भी विरोध हो जाता है; फलस्वरूप वे लोग असहयोग करते हैं और उनके तेवर बगावती हो जाते हैं॥२३०-२३१॥

त्रिकोणस्थकेतोर्दाये शुभानामन्तर्दशाफलम्

शुभग्रहाणां केतोस्तु परिपाके हतिर्यदा ।
कृषिगोभूमिलाभञ्च विद्याबन्धुसमागमम् ।।२३२।।
भोजनाम्बरसौख्यञ्च भुक्त्यादौ फलमीदृशम् ।
भुक्त्यन्ते स्थानचलनमकस्मात्कलहं वदेत् ।।२३३।।

जब त्रिकोण स्थानों में स्थित केतु की महादशा में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा हो तो जातक को कृषि, गाय, भैंस, वाहन, भूखण्ड आदि का लाभ होता है। विद्या, शिक्षा, परीक्षा आदि में सफलता तथा उन्नति होती है। बन्धुजनों से समागम-मेल-मिलाप आदि होता है। भोजन तथा वस्त्राभूषण आदि का सुख प्राप्त होता है। यह सब फल इस अन्तर्दशा के प्रारम्भ में मिलते हैं; परन्तु भुक्ति के उत्तरार्ध में स्थानपरिवर्तन या आकस्मिक कलह होता है, जिससे तनाव बढ़ जाता है॥२३२-२३३॥

षष्ठाष्टमव्ययस्थकेतोर्दाये पापान्तर्दशाफलम्

षष्ठाष्टमव्ययस्थस्य केतोर्दाये शुभेतरा ।
हतिः करोति मरणं विदेशं वा पदभ्रमम् ।।२३४।।
प्रमेहमूत्रगुल्मादिराजचौराग्निपीडनम् ।
फलमादौ तदन्ते च यत्किञ्चित्सुखवर्धनम् ।।२३५।।

छठे, आठवें तथा व्ययभाव में स्थित केतु की दशा में पापग्रहों की अन्तर्दशा में जातक की मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट होता है। विदेश या दूरवर्ती स्थानों में कष्टप्रद प्रवास होता है। जातक एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकता रहता है। इस स्थिति को पदभ्रम कहा गया है। उसे बीस प्रकार के प्रमेहों का कष्ट होता है। मूत्रकृच्छ्र, गुल्म (पेटगैंस, बायगोला अथवा ट्यूमर) का कष्ट होता है। राजसत्ता या उच्चाधिकारियों से परेशानी होती है। उद्योग-व्यवसाय से सम्बन्धित शासकीय अनुज्ञापत्र (लाइसेंस) का बखेड़ा उत्पन्न होता है। अग्निभय या चोरभय हो जाता है। जेब कट जाती है या धोखा-धड़ी हो जाती है। इस प्रकार का फल अन्तर्दशा के पूर्वार्ध में होता है; परन्तु उत्तरार्ध में फल में विपर्यय हो जाता है। तब कुछ सुख प्राप्त होता है तथा परेशानियाँ भी दूर हो जाती हैं एवं परिस्थितियाँ अनुकूल हो जाती हैं॥२३४-२३५॥

उक्तकेतोर्दाये सौम्यान्तर्दशाफलम्

भुक्तौ सौम्यग्रहाणान्तु हृतौ स्त्रीपुत्रवर्धनम् ।
धान्याम्बरविभूषाप्तिं मणिप्रवरकाञ्चनम् ।।२३६।।
विप्रलम्भञ्च शौर्यञ्च मौल्यादिपतनन्तथा ।
स्वबन्धुजनशत्रुत्वं शिरोऽक्षिगुदपीडनम् ।।२३७।।

छठे-आठवे या बारहवें भाव में स्थित केतु की अन्तर्दशा में जातक को स्त्री का सुख मिलता है, पुत्रों की उन्नति होती है, पत्नी का स्वास्थ्य अच्छा रहता है एवं वह प्रसन्न रहती है। उस काल में घर धन-धान्य एवं खाद्य सामग्री से भरा रहता है। फ्रिज में उत्तम प्रकार के फलों का संग्रह रहता है। उत्तम प्रकार के नई डिजायनों की भूषा (सूट-साड़ियाँ आदि) प्राप्त होती हैं। बहुमूल्य एवं उत्तम कोटि के रत्न (मूँगा, मोती, पन्ना, पुखराज आदि) तथा स्वर्ण, रौप्यादि के आभूषणों का संग्रह होता है। नाना प्रकार के उपरत्न भी प्राप्त होते हैं। इस दशा में जातक की आदत दूसरों को चकमा देने की होती है। वह किसी बात को अंगीकार करने के पश्चात् या वायदा करने के बाद पलट जाता है या भूल जाने का बहाना करता है। इसे विप्रलम्भ कहते हैं। आजकल के नेता लोग इसी प्रकार जनता के साथ विप्रलम्भ करते हैं। जातक शौर्य (शूरता-वीरता) दिखाता है। चकमा देने की आदत के कारण लोगों में उसका मौल्यादि पतन हो जाता है अर्थात् उसकी बात का कोई विश्वास नहीं करता। लोग उसे झूठा, अविश्वसनीय तथा मक्कार समझने लगते हैं। इस समय उसकी अपने ही लोगों से शत्रुता हो जाती है। शिरोरोग, नेत्ररोग तथा गुदरोगों से वह परेशान रहता है।।२३६-२३७।।

त्रिलाभस्थकेतोर्दाये शुभान्तर्दशाफलम्

तृतीयलाभयुक्तस्य केतोः पाके परं सुखम् ।
शुभभुक्तौ नृपात्प्रीतिं विचित्राम्बरभूषणम् ।।२३८।।
वाहनं भूमिलाभञ्च गन्धमाल्यानुलेपनम् ।
दूरात्करागमञ्चैव स्वबन्धुजनपूज्यताम् ।।२३९।।

तृतीय भाव या एकादश भाव में स्थित केतु की महादशा में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा आने पर शासन पक्ष तथा उच्चाधिकारियों से अनुकूल सम्बन्ध होते हैं। अनेक प्रकार के वस्त्र, भूषा तथा आभूषणों का संग्रह होता है। विलासिता की वस्तुओं की खरीद होती है। नया वाहन खरीदा जाता है अथवा प्राप्त होता है। भूमि, भवन या भूखण्ड की प्राप्ति होती है। जातक उत्तम प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग करता है एवं कास्मेटिक्स श्रेणी के द्रव्यों पर उसका अधिक व्यय होता है। दूर से उधारी की रकम वसूल होकर आती है। किरायेदारों तथा भाड़ेदारों से धन मिलता है। अपने बन्धुजनों में पूज्यता (आदर-सत्कार) प्राप्त होती है।।२३८-२३९।।

दूरात्करागमञ्चैव— यह फल प्राचीन राजाओं, जमीन्दारों, जागीरदारों या भूपतियों के लिये लिखा गया है। तब ये सामन्त लोग ही अपने गाँव तथा क्षेत्र में बसने वाले किसानों तथा व्यापारियों से कर वसूलते थे। आजकल यह स्थिति बदल गयी है; अत: इसका अर्थ व्यापारी के लिये उधार दिये गए माल पर उसके मूल्य की मुनीमों तथा गुमाश्तों द्वारा वसूली होता है। इसी प्रकार दुकान, मकान, भूखण्डादि के भाड़े की उगाही भी समझना चाहिये।

उक्तकेतोर्दाये पापभुक्तिफलम्

पापभुक्तौ तथा जन्तो: पापकर्मसमाचरेत् ।
सर्वेषां विघ्नकर्तृत्वं बन्धुभिस्त्यक्तजीवनम् ।।२४०।।
परप्रेष्यं कुवस्त्रञ्च भुक्त्यादौ फलमीदृशम् ।
भुक्त्यन्ते सुखमाप्नोति दारपुत्रधनागमम् ।।२४१।।

तृतीय-एकादश भावों में स्थित केतु की दशा में पापग्रहों की भुक्ति (अन्तर्दशा) होने पर जातक खोटे काम करता है, उसका मन परपीड़ा तथा हिंसा में लगता है। वह खल बन जाता है; अत: दूसरों के कामों में विघ्न करने में लगा रहता है। उसमें अत्यधिक ईर्ष्या भरी रहती है, जिससे प्रेरित होकर वह दूसरों के बने-बनाये काम बिगाड़ने में आनन्द का अनुभव करता है (उसमें खलों के वे सब लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, जिनका वर्णन गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस, बालकाण्ड के प्रारम्भ में किया है)। उसके बन्धुजन उसके इन दुर्गुणों के कारण उसका साथ छोड़ देते हैं। दूसरों का प्रेष्य (हरकारा) बनकर वह काम करता है। कुवस्त्र धारण करता है। उसकी वेश-भूषा भद्रजनों जैसी नहीं होती। अन्तर्दशा के पूर्वार्ध में इस प्रकार का फल प्राप्त होता है। उत्तरार्ध में जातक के व्यक्तित्व तथा आचरण में भलमनसाहत आ जाती है। उसके पास धन आने लगता है तथा स्त्री-पुत्रों का सुख मिलने लगता है।।२४०-२४१।।

धनभावस्थितध्वजदाये पापान्तरफलम्

धनस्थितध्वजस्यापि परिपाके शुभेतरा ।
करोति विविधं दु:खं भैक्ष्यमन्नं मनोरुजम् ।।२४२।।
पुत्रमित्रकलत्राणां नाशनं महदापदम् ।
राज्ञा चौरेण वा वित्तं ह्रियते बन्धुनाशनम् ।।२४३।।

द्वितीय भाव में स्थित केतु की दशा में पाप ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर जातक को अनेक प्रकार के दु:ख प्राप्त होते हैं। उसे भिक्षाटन करना पड़ता है या माँगकर दूसरों के घर भोजन करना पड़ता है। उसके मन में बहुत क्लेश रहता है। उसके मित्रों पर भी संकट आ जाता है और विपन्नता के कारण वे जातक की मदद नहीं कर पाते हैं अथवा मित्रों से विछोह हो जाता है। सन्तान को पीड़ा रहती है, उन्हें रोग से कष्ट होता है और

परीक्षा में असफलता मिलती है। पत्नी भी परेशान रहती है। बहुत प्रकार की विपत्तियाँ उसे घेर लेती हैं। उसका धन राजा या चौर द्वारा हरण कर लिया जाता है। उसे बन्धु-बान्धवों से वियोग होता है अथवा वे नष्ट हो जाते हैं।।२४२-२४३।।

धनभावस्थध्वजदाये शुभान्तर्दशाफलम्

शुभभुक्तौ धनाप्तिश्च विद्यावादजयावहम् ।
परोपकारं सर्वेषां भोजनाम्बरभूषणम् ।।२४४।।
भुक्त्यादौ फलमेवं स्यादन्ते किञ्चिद्धनव्ययम् ।
वाक्पारुष्यं मनोद्वेगं प्रवृत्तेर्भङ्गमेव वा ।।२४५।।

द्वितीय भावस्थित केतु की दशा में शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा होने पर जातक को धन प्राप्त होता है, आय के स्रोत बढ़ जाते हैं तथा उसके विद्या एवं ज्ञान की धाक जमती है। वह इस दशा में विद्वत् गोष्ठियों में शोधप्रबन्धों का वाचन करता है अथवा किसी उद्योग या सामाजिक राजनैतिक संगठन के सञ्चालकों में होने पर उसके परामर्श को महत्त्वपूर्ण माना जाता है। वह सभी से प्रिय बोलता है तथा यथासम्भव परोपकार में लगा रहता है। उसे उत्तम वस्त्रभूषा, आभूषण आदि प्राप्त होते हैं। इस प्रकार का फल भुक्ति के पूर्वार्ध में होता है। उत्तरार्ध में धन का व्यय कुछ अधिक होता है। उसकी वाणी में कठोरता आ जाती है। मन में खिन्नता रहती है एवं काम करने में भी उसका मन नहीं लगता है।।२४४-२४५।।

इति केतुपाकान्तर्दशाफलम्

◆

अथ शुक्रान्तर्दशाफलम्

तत्रादौ केन्द्रस्थभृगुदाये शुभान्तर्दशाफलम्

केन्द्रस्थितस्य शुक्रस्य सौम्यानान्तु हृतिर्यदा ।
राज्याप्तिं राजसन्मानं यानाम्बरविभूषणम् ।।२४६।।
उत्साहं कीर्तिसम्पत्तिस्त्रीपुत्रधनसम्पदः ।
भाग्योत्तरं मनोधैर्यं राजद्वाराधिपत्यताम् ।।२४७।।

केन्द्रस्थित शुक्र की दशा में जब शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा हो तो जातक को अधिकार प्राप्ति होती है। सत्तापक्ष से सम्मान प्राप्त होता है। वाहन, वस्त्रभूषा, आभूषण, अलङ्कार आदि की प्राप्ति होती है। जातक में उत्साह हिलोरें मारता है। उसकी कीर्ति चारो ओर फैलती है। सम्पत्ति की वृद्धि होती है। स्त्री-पुत्र, धन एवं सम्पदा से वह सुखी रहता है। उत्तरोत्तर भाग्यवृद्धि होती है। मन में विपरीत परिस्थितियों का सामना करने का धैर्य बना रहता है। शासकीय अधिकारी उसकी बात मानते हैं तथा वह एक अच्छा जन-प्रतिनिधि सिद्ध होता है।।२४६-२४७।।

केन्द्रस्थभृगुदाये पापभुक्तौ फलम्

तथाविधस्य वाऽच्छस्य पापभुक्तौ धनक्षयम् ।
कुभोजनं कुवस्त्रञ्च' शुभकर्मविनाशनम् ।।२४८।।
भुक्त्यादौ फलमेवं स्यादन्ते शोभनमादिशेत् ।
गृहगोभूमिलाभञ्च दूरदेशाद्धनागमम् ।।२४९।।

यदि उक्त प्रकार के (केन्द्रस्थित) अच्छ (शुक्र) की दशा में पाप ग्रहों की भुक्ति हो तो जातक का धनक्षय होता है। उसे बेस्वाद, अपवित्र तथा पौष्टिकतारहित भोजन मिलता है। उसकी वेश-भूषा मैली-कुचैली होती है। धारित वस्त्र भद्रजनोचित नहीं होते। उसकी अच्छे कर्म करने में रुचि नहीं रहती है। वह अशुभ कर्मों में संलग्न रहता है। इस प्रकार का फल भुक्ति के पूर्वार्ध में प्राप्त होता है; उत्तरार्ध में शुभ फल कहना चाहिये। उत्तरार्ध में गृहलाभ (आवास की व्यवस्था), गोलाभ (गाय-भैंस तथा वाहनादि) तथा भूमिलाभ होता है। दूरवर्ती देश-प्रदेश से धन आता है। आय के स्रोतों में वृद्धि होती है।।२४८-२४९।।

त्रिकोणस्थशुक्रदाये शुभभुक्तिफलम्

त्रिकोणस्थस्य शुक्रस्य शुभभुक्तौ शुभक्रिया ।
देवभूसुरभक्तिश्च सुतदारविवर्धनम् ।।२५०।।
यज्ञादिकर्मलाभञ्च गोभूषणमथो जयम् ।
आरोग्यं देहकान्तिञ्च चिन्तितार्थमनोरथम् ।।२५१।।

त्रिकोण स्थानों में स्थित शुक्र की दशा में जब शुभ ग्रहों में से किसी की अन्तर्दशा होती है तब जातक शुभ कर्म करता है। उसकी रुचि जनकल्याण में होती है। वह देवताओं, ब्राह्मणों, विद्वानों एवं साधु-सन्तों की भक्ति करता है एवं उसके स्त्री-पुत्रों एवं परिवार के उन्नति होती है । वह यज्ञादि की दीक्षा ग्रहण करता है। उसकी चल-अचल सम्पत्ति में वृद्धि होती है तथा समाज में उसका प्रभुत्व प्रकट होता है। इस अवधि में उसकी पूर्व से अभीप्सित अभिलाषा पूर्ण होती है।।२५०-२५१।।

त्रिकोणस्थशुक्रदाये पापभुक्तिफलम्

तथाविधस्य शुक्रस्य पापभुक्तौ मनोरुजम् ।
अनारोग्यममर्यादं नृपचौराग्निपीडनम् ।।२५२।।
कुस्त्रीसङ्गं कुवार्ताञ्च बन्धुद्वेषं मतिभ्रमम् ।
दुःस्वप्नं मौलिपतनमपकीर्तिं लभेन्नरः ।।२५३।।

इस प्रकार के (त्रिकोणस्थ) शुक्र की दशा में पापग्रह की अन्तर्दशा आने पर जातक के मन में सन्ताप रहता है। वह बीमार, अमर्यादित होता है तथा राजा, चोर, अग्नि से उसे पीड़ा होती है। वह बुरी स्त्री की संगत में, बुरी बातों एवं बुरे कामों में मतिभ्रष्ट होकर

लगा रहता है। वह अपने बन्धुओं से द्वेष करता हैं और उसे अच्छी नींद नहीं आती। बुरे सपने देखता है। उसकी मौलि (साख) समाप्त हो जाती है। उसकी सब तरफ बदनामी होती है॥२५२-२५३॥

दुःस्थानस्थशुक्रदाये अन्तर्दशाफलम्

पाके शुक्रस्य दुःस्थस्य शुभभुक्तौ महद्यशः ।
राजसन्मानमर्थाप्तिं पुत्रस्त्रीधनसम्पदः ।।२५४।।

दुःस्थान अर्थात् षष्ठ, अष्टम एवं द्वादश भाव में स्थित शुक्र की दशा के शुभान्तर में बहुत यश प्राप्त होता है, राज्य से सम्मान प्राप्त होता है, धन की प्राप्ति होती है, पुत्र का सुख प्राप्त होता है, स्त्री की प्राप्ति अथवा दाम्पत्य जीवन सुखकर हो जाता है तथा धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है— ऐसा कहना चाहिए॥२५४॥

वस्त्रवाहनभूषाप्तिमादौ चान्ते मनोरुजम् ।
बन्धुद्वेषं गुरोर्नाशं स्वकुलोद्भवनाशनम् ।।२५५।।

पहनने के लिए सुन्दर-सुन्दर वस्त्र प्राप्त होते हैं, जड़ाऊ आभूषण मिलते हैं, वाहन प्राप्त होता है, इस प्रकार के फल दशा के पूर्व भाग (प्रारम्भ) में प्राप्त होते हैं। दशा के अन्त में व्यक्ति मानसिक रूप से कष्ट प्राप्त करता है, भाई-बन्धुओं से उसका द्वेष अर्थात् झगड़ा हो जाता है। गुरु की हानि होती है तथा उस व्यक्ति के कुल के किसी का नाश करता है॥२५५॥

शुभग्रहाणां भुक्तौ तु देहारोग्यं महत्सुखम् ।
परान्नं पट्टवस्त्राप्तिं गन्धमाल्यविभूषणम् ।।२५६।।

ऐसे शुक्र की दशा शुभान्तर में शरीर को निरोग बनाती है। उसे बहुत प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं, वह दूसरे का अन्न ग्रहण करता है, उसे रेशमी वस्त्रों की प्राप्ति होती है, गन्ध (सुगन्धित द्रव्य; जैसे— इत्र, गुलाबजल, शरीर के दुर्गन्ध दूर करने वाले पदार्थ, पाउडर इत्यादि), मालादि की प्राप्ति होती है और इनसे विभूषित होता है॥२५६॥

भुक्त्यादौ फलमेवं स्यादन्ते क्लेशकरं भवेत् ।
चौरारिदेहपीडां च स्वबन्धुजननाशनम् ।।२५७।।

दशा के प्रारम्भ में ही इस प्रकार के फल प्राप्त होते हैं। दशा के अन्त में मानसिक रोग (जैसे— फोविया, अपस्मार, उन्माद, उपदंश इत्यादि रोग) हो जाते हैं, कष्टफल प्राप्त होते हैं, चोर तथा शत्रुओं से उसे देहपीड़ा प्राप्त होती है तथा उसके भाई-बन्धु का नाश हो जाता है॥२५७॥

तृतीयलाभस्थशुक्रदशामध्ये अन्तर्दशाफलम्

तृतीयायस्थशुक्रस्य परिपाके शुभेतरा ।
हृतिः दुःखमवाप्नोति धनधान्यविनाशनम् ।।२५८।।

तृतीय एवं लाभभाव में स्थित शुक्र की दशा में पापग्रह के अन्तर में जातक दुःखी रहता है। उसे कष्टफल प्राप्त होते हैं। उसके धन का नाश हो जाता है और अन्न की हानि होती है॥२५८॥

उद्योगभङ्गं क्लेशञ्च चौराग्निनृपपीडनम् ।
भूमिवादं स्वबन्धूनां नाशनं स्वपदस्य च ।।२५९।।

उस व्यक्ति के उद्योग-धन्धे (व्यापारादि) में हानि होती है, उद्योग बन्द होने की स्थिति में पहुँच जाता है, कष्ट प्राप्त होता है तथा वह चोर, अग्नि एवं राजा से कष्ट प्राप्त करता है। उसका भूमि से सम्बन्धित वाद-विवाद-मुकदमे इत्यादि होते हैं, उसके भाई की हानि होती है अथवा भाई को कष्ट प्राप्त होता है तथा उसके पद एवं अधिकारों की भी हानि हो जाती है ॥२५९॥

तथाविधस्य शुक्रस्य शुभभुक्तौ महत्सुखम् ।
नृपपूजां मनोधैर्यं देशग्रामाधिपत्यताम् ।।२६०।।

इन भावों (तृतीय तथा एकादश भावों) में स्थित शुक्र की दशा में शुभ ग्रह का अन्तर होने पर अनेक प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं। व्यक्ति राज्य में सम्मान प्राप्त करता है, राजा से सम्मान, पूज्यत्व प्राप्त होता है, मन में धैर्य रखता है तथा उसे देश, ग्राम अथवा नगर का आधिपत्य अर्थात् वह राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री, सांसद, मन्त्री, विधायक, नगरपालिकाध्यक्ष, पार्षद, सरपञ्च या पञ्चपद प्राप्त करता है॥२६०॥

वाहनं भूषणाप्तिञ्च पुत्रस्त्रीभृत्यसम्पदः ।
प्रपारामतडागानां निर्माणं धर्मसंग्रहम् ।।२६१।।

वह वाहन तथा आभूषण प्राप्त करता है, पुत्रवृद्धि, स्त्रीसुख में वृद्धि, सेवकों (नौकरों) में वृद्धि होती है। वह जलाशय (तालाब), प्याऊ, बावड़ी, बगीचे, पार्क इत्यादि का निर्माण कराता है तथा धर्मसंग्रह अर्थात् यज्ञादि कर्म, पुराणादि कथाश्रवण तथा धार्मिक पुस्तकें संगृहीत करता है॥१६१॥

धनस्थितशुक्रदाये अन्तर्दशाफलम्

धनस्थस्यापि शुक्रस्य शुभभुक्तौ महत्प्रियम् ।
दारपुत्रार्थलाभञ्च स्वबन्धुजनरक्षणम् ।।२६२।।

धनभाव में स्थित शुक्र की दशा तथा शुभ ग्रह के अन्तर में मन बहुत प्रसन्न रहता है, पत्नी, पुत्र, धनादि का लाभ प्राप्त होता है तथा वह अपने भाई-बहनों, मित्रों तथा परिवार वालों की रक्षा करता है॥२६२॥

विद्याजयं मनोल्लासं देवभूसुरतर्पणम् ।
यज्ञादिकर्मलाभं च लभेन्नामद्वयं तथा ।।२६३।।

विद्याजय होती है अर्थात् गोष्ठियों में, वाद-विवादों में अपनी विद्याबल से सफलता प्राप्त करता है, परीक्षाओं में सफलता तथा उच्च स्थान प्राप्त होता है, निबन्ध प्रतियोगिताओं में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त होता है। मन में उल्लास तथा प्रसन्नता रहती है, वह देवताओं-ब्राह्मणों का यजन, पूजन तथा तर्पणादि करता है, यज्ञादि पुण्यकर्म तथा शुभ कर्मों में संलग्न रहता है तथा उसे नामद्वय की प्राप्ति होती है अर्थात् उसे उपाधि के रूप में नाम प्राप्त होता है।।२६३।।

धनस्थितस्य शुक्रस्य पापभुक्तौ भृशं वदेत् ।
राजदण्डं मनोदुःखं हृद्रोगाक्षिप्रपीडनम् ।।२६४।।

यदि पापग्रह का अन्तर हो तो व्यक्ति बार-बार राजदण्ड प्राप्त करता है, मन अत्यन्त दु:खी रहता है, उसे हृदयादि रोग, नेत्ररोग इत्यादि कष्ट प्राप्त होते हैं।।२६४।।

विद्यावादं कृषेर्नाशं कर्महानिं पदभ्रमम् ।
वह्निचौरारिभीतिञ्च लभते नात्र संशयः ।।२६५।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ राहुकेत्वादिदशाफलान्तर्दशाफलनिरूपणो
नाम षोडशोऽध्यायः ।।१६।।

विद्या से सम्बन्धित वाद-विवाद होते हैं, खेती-बाड़ी नष्ट हो जाती है, कार्यों की हानि होती है, वह पदच्युत हो जाता है तथा अग्नि, चौरादि से पीड़ित रहता है; साथ ही वह इनसे भयभीत भी रहता है ।।२६५।।

इति शुक्रपाकान्तर्दशाफलम्

इस प्रकार सर्वार्थ चिन्तामणि ग्रन्थ के सोलहवें अध्याय की आचार्य पण्डित गुरु प्रसाद गौड़कृत 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।।१६।।

◆

अथ सप्तदशोऽध्यायः

प्रकीर्णाध्यायः

तिथ्यादीनां वृद्धि-क्षयफलम्

यद्यज्जन्मनि नक्षत्रे वृद्धिभावमुपेयुषि ।
तस्य श्रीरायुरारोग्यं भवत्येवं विनिश्चयः ।।१।।
तिथ्यादिषु तथा वाच्यं क्षये तस्मिन् क्षयो भवेत् ।
तिथिरेकगुणा प्रोक्ता ऋक्षं दशगुणं भवेत् ।
लग्नं लक्षगुणं प्रोक्तं तत्समूहे फलादिकम् ।।२।।

जिसका जन्मनक्षत्र वृद्धिभाव को प्राप्त हो, उस जातक का श्री, आयु, आरोग्य सब कुछ बढ़ता है। इनकी स्थिरता रहती है। वृद्धिभाव को प्राप्त तिथि एवं योग में जन्म लेने पर भी यही फल होता है— यह निश्चयपूर्वक जानना चाहिये। तिथिक्षय, नक्षत्रक्षय या योगक्षय में जन्मे जातक के आयुरारोग्य एवं लक्ष्मी का क्षय होता है। तिथि का प्रभाव एक-गुणा, नक्षत्र का दशगुणा, लग्न का लाखगुणा— इस प्रकार ऊहापोहपूर्वक फल-कथन करना चाहिये।।१-२।।

वृद्धिभावगततिथ्यादि— जो तिथि, नक्षत्र या योग दो दिन के सूर्योदय काल में विद्यमान रहते हैं, वे वृद्धिभाव को प्राप्त माने जाते हैं। इस स्थिति में उनका मान पञ्चाङ्ग में पूर्व दिन पूरे साठ घटी लिखा रहता है तथा दूसरे दिन में उस तिथि-नक्षत्र या योग के नामोल्लेखपूर्वक उसके सामने कुछ घटी-पलात्मक मान अवश्य ही लिखा होता है।

क्षयतिथ्यादि— जो तिथि, नक्षत्र या विष्कम्भादि योग किसी भी सूर्योदयकाल में विद्यमान नहीं होता, उसे क्षय कहते हैं। यदि पञ्चाङ्ग में रविवार को विष्कम्भ योग लिखा है तथा दूसरे दिन सोमवार को आयुष्मान् योग तथा उसके घटी-पल लिखे हैं तो इनमें मध्य का योग प्रीति क्षय हो गया है, ऐसा समझना चाहिये।

फलकथन में वृद्धि-क्षय का महत्त्व— जातक के फलकथन में कुण्डली के ग्रहयोगों की भाँति इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसी कारण इसे यहाँ स्थान दिया गया है। वृद्धियुक्त तिथि, नक्षत्रयोग में जन्मे जातक की उन्नति होती रहती है।

प्रकीर्णयोगाः

केन्द्रस्थिता जन्मनि यस्य कस्य पापाश्च सर्वे विफलप्रदाः स्युः ।
कुर्वन्ति दारिद्र्यमनेकदुःखं श्वासक्षयप्लीहगुदोदरार्तिम् ।।३।।

जन्मकुण्डली में केन्द्र में सभी पापग्रह शुभ फलों को विफल कर दारिद्र्य तथा अनेक दुःख उत्पन्न करते हैं (यदि शुभ ग्रह भी केन्द्र में हों तो दुःखों में कमी रहती है)।

जातक को श्वास, खाँसी, प्लीहा तथा गुदरोग होते हैं।।३।।

पापग्रहे कर्मगतेऽतिनीचे वक्रान्विते पापखगैः प्रदृष्टे ।
नाशं कलत्रस्य वदन्ति नूनं मुनीश्वरास्तद्वदनेकशास्त्रैः ।।४।।

यदि दशम भाव में पापग्रह हों, वक्री हो तथा पापगहों से दृष्ट हो तो जातक का पत्नीसुख नष्ट होता है— यह शास्त्रज्ञ मुनियों का मत है।।४।।

दुःखी मूढो लोकविद्वेषकारी काणः पङ्गुर्निर्धनो मानहीनः ।
अल्पायुः स्यात्केन्द्रगाः पापखेटा ब्रह्मद्वेषी चापकीर्तिश्च सर्वे ।।५।।

केन्द्रगत सभी पापग्रहों से जातक अल्पायु, ब्रह्मद्वेषी, काना, लूला, लंगड़ा, निर्धन, मानहीन, ब्रह्मद्वेषी, निन्दित तथा लोकविद्वेषकारी होता है ।।५।।

शङ्कराचार्यमते तु

लग्ने माने सप्तमे चाथ बन्धौ पापाः खेटा जन्मकाले तु सर्वे ।
तिष्ठन्त्येते स्वल्पमायुष्प्रमाणं तेषामेको लग्नपो वा यदि स्यात् ।।६।।

यहाँ ग्रन्थकार ने शंकराचार्य नामक ज्योतिर्विद का मत देते हुए कहा है कि यदि लग्न, दशम, सप्तम तथा चतुर्थ में सभी पापग्रह जन्म के समय स्थित हों और उन ग्रहों में से एक लग्नेश भी हो तो इस योग में जन्मा व्यक्ति अल्पायु होता है।।६।।

विशेष— इन स्थानों अर्थात् केन्द्रों में यदि पापग्रह के साथ शुभ ग्रह भी स्थित हों तो पूर्वोक्त फल-प्राप्ति की सम्भावना कम हो जाती है।

तथापि तद्योगफलप्रमाणं तादृग्विधं स्यान्मुनयो वदन्ति ।
स्वनीचभागादिमहीपयोगेऽप्येवं फलं दुःखितनिर्गतायुः ।।७।।

यदि राजयोगकारक ग्रह नीचांशकादि अंशों में हों तथा निर्बल हों तो उस राजयोग का फल भी कमजोर होता है तथा जातक अल्पायु होता है।।७।।

तथास्थिते जन्मनि यस्य कस्य बाल्ये च पित्रोर्मरणञ्च कष्टम् ।
भिक्षाशनेनाप्युदरस्य पूर्तिस्तदा भवत्येव तदङ्गहानिः ।।८।।

पूर्व में कहे गए दो श्लोकों की स्थितियों में अल्पायु जातक के माता-पिता को हानि तथा कष्ट प्राप्त होता है, वह भिक्षाटन द्वारा उदरपूर्त्ति करता है तथा उसके एकाधिक अङ्ग की हानि होती है।।८।।

ग्रहाणां खगादिद्रेष्काणकथनम्

मेषद्वितीयो मिथुनः पूर्णः सिंहस्य प्रथमः खगद्रेष्काणः कर्कस्य द्वितीय-तृतीयौ वृश्चिकस्य प्रथमतृतीयौ मीनतृतीयो व्यालः मकराद्यो निगडः ।।९।।

अब आचार्य खगादि द्रेष्काण का फल कहते हैं कि मेष का दूसरा, मिथुन के तीनों एवं सिंह का प्रथम द्रेष्काण खगसंज्ञक होता है, इसी प्रकार कर्क का द्वितीय-तृतीय

द्रेष्काण, वृश्चिक का प्रथम-तृतीय तथा मीन का तृतीय द्रेष्काण व्याल (सर्प) संज्ञक होता है एवं मकर का प्रथम द्रेष्काण निगड (पाश) संज्ञक होता है॥९॥

नभोगानां शुष्कादिकथनम्

रविभौमार्कजाः शुष्का सजलौ चन्द्रभार्गवौ ।
बुधवाचस्पती ज्ञेयौ सजलौ जलराशिगौ ।।१०।।

सूर्य, मंगल तथा शनि को शुष्क माना जाता है। चन्द्र तथा शुक्र सजल हैं, बुध एवं गुरु जलराशियों में आर्द्र एवं शुष्क राशियों में शुष्क हैं॥१०॥

कुम्भकर्कटकौ मीनमकरालितुलाधराः ।
सजला राशयः प्रोक्ता निर्जला शेषराशयः ।।११।।

कुम्भ, कर्क, मीन, मकर, वृश्चिक तथा तुला राशियाँ सजल हैं एवं शेष (मेष, वृष, मिथुन, सिंह, कन्या तथा धनु) राशियाँ निर्जल राशियाँ कही जाती हैं॥११॥

ग्रहाणां नीचभागादिफलकथनम्

स्वनीचभागादिमहीपयोगे जातेऽपि यस्यापि नरस्य कस्य ।
केन्द्रत्रिकोणेषु शुभो यदि स्यात्तद्राजयोगं सफलं वदन्ति ।।१२।।

यदि नीचांशकादिगत ग्रहजन्य राजयोग हो और केन्द्र में तथा त्रिकोण में शुभ ग्रह स्थित हों तो राजयोग का फल सफल होगा अर्थात् उसको जीवन में राजयोग का फल प्राप्त होगा— ऐसा कहना चाहिए॥१२॥

स्वांशेक्षिते लग्नगते क्रमांशे जीवेन दृष्टे धनराशिपेन ।
स्वनीचभागादिमहीपयोगे जातोऽपि भूमेरधिपत्यमेति ।।१३।।

अपने नवांश में हो, शुभ ग्रह से दृष्ट हो, लग्न में स्थित हो तथा वह राजयोग बनाने वाला ग्रह गुरु एवं धनेश से युक्त या दृष्ट हो तो पूर्व में कहे गये अशुभ फलों का निवारण कर भूमि का आधिपत्य प्रदान करता है॥१३॥

अध्यायोपसंहारः

एवं चिन्तामणौ प्रोक्तं वेङ्कटेशेन धीमता ।
नीचभागादियोगार्थराजयोगादिजं फलम् ।।१४।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणौ प्रकीर्णभावफलनिरूपणो
नाम सप्तदशोऽध्यायः ।।१७।।

इस प्रकार धीमान् वेङ्कटेश जी ने सर्वार्थचिन्तामणि नामक इस ग्रन्थ में नीचांशकादि योगसहित राजयोग के फल कहे हैं॥१४॥

इस प्रकार सर्वार्थचिन्तामणि ग्रन्थ के सत्रहवें अध्याय की आचार्य पण्डित
गुरुप्रसाद गौड़कृत 'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥१७॥

* * *

अथाऽष्टादशोऽध्यायः

उपसंहारकाध्यायः

ताराकथनम्

जन्मन्यर्को हिमकरसुतः सैंहिकेयः सुरेज्यः
केतुश्चन्द्रो दिनकरसुतो भार्गवो भूमिपुत्रः ।
तापं कान्तिं क्षतिधृतिलयं कीर्त्तिहानिं प्रमोदं
मृत्युं ताराबलमनुदिनं सञ्चरन्ति क्रमेण ।।१।।

जन्मसमय में जो जन्मनक्षत्र हो, उससे लेकर नौ नक्षत्रों तक क्रम से सूर्य, बुध, राहु, गुरु, केतु, चन्द्र, शनि, शुक्र तथा मङ्गल— इन ताराओं के स्वामी होते हैं। इनका फल क्रमशः ताप, कान्ति, क्षति, धृति, लय, कीर्त्ति, हानि, प्रमोद तथा मृत्यु होता है।।१।।

ताराबोधकचक्र

प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पञ्चम	षष्ठ	सप्तम	अष्टम	नवम	क्रमांक
सूर्य	बुध	राहु	गुरु	केतु	चन्द्र	शनि	शुक्र	मंगल	इस ग्रन्थ के मत के स्वामी
ताप	कान्ति	क्षति	धृति	लय	कीर्ति	हानि	प्रमोद	मृत्यु	फल
जन्म	सम्पत्	विपत्	क्षेम	प्रत्यरि	साधक	वध	मित्र	अतिमित्र	ग्रन्थान्तरों के नाम

विशेष— ऊपरी कोष्टक में नवाँ तारा मृत्युकारक फल देता है; जबकि अन्य ग्रन्थों में अतिमित्र तारा नाम से इसका शुभ फल दिया गया है। इनका विचार दैनिक फल के शुभाशुभ विचार में जन्मनक्षत्र के अनुसार किया जाता है। प्रथम श्लोक में यही संकेत है।

ग्रहाणां विशेषबाधकत्वकथनम्

क्रमाच्च रागद्विशरीरभाजामुपान्त्यधर्मस्मरगास्तदीशाः ।
खरेशमान्दिस्थितराशिनाथा अतीवबाधाकरखेचराः स्युः ।।२।।

क्रमानुसार चर, स्थिर तथा द्विस्वभाव के लिये ग्यारहवें, नवें तथा सातवें भावों में बैठे ग्रह तथा उसी क्रम से एकादशेश, नवमेश तथा बाधक ग्रह होते हैं। इसी प्रकार खरेश (२२वें द्रेष्काण का स्वामी ग्रह) तथा मान्दि (गुलिक) स्थित राशि का स्वामी ग्रह भी अतीव बाधाकारक होते हैं।।२।।

भावानां कारकाः

द्युमणिरमरमन्त्री भूसुतः सोमसौम्यौ
गुरुरिनतनयारौ भार्गवो भानुपुत्रः ।
दिनकररविजेज्यो जीवभानुज्ञमन्दाः
सुरगुरुरिनसूनुः कारकाख्या विलग्नात् ।।३।।

लग्न के सूर्य, द्वितीय के गुरु, तृतीय के मंगल, चतुर्थ के चन्द्र, पञ्चम का बुध-गुरु, छठे का शनि-मंगल, सप्तम का शुक्र, अष्टम का शनि, नवम के सूर्य-गुरु, दशम के गुरु, सूर्य, बुध, शनि, ग्यारहवें के गुरु तथा बारहवें के शनि कारक होते हैं। इनकी गणना लग्न से करनी चाहिये॥३॥

अथ कारकसूत्राणि

पितृप्रतापारोग्यमनःशुचिरुचिज्ञानोदयकारकः सूर्यः ।।१।।

सूर्य— पिता, प्रताप, आरोग्य, मानसिक शुद्धता, रुचि, ज्ञानोदय इत्यादि का कारक सूर्य है॥१॥

धवलचामरयशोदयामोदकान्तिमुखलावण्यमातृमनःप्रसादकारकः चन्द्रः ।।२।।

चन्द्र— चर्म, चामर, यश, दया, हर्ष, कान्ति, मुख की कोमलता, माता, मन की प्रसन्नता का कारक चन्द्रमा है॥२॥

पराक्रमविजयविख्यातिसंग्रामसाहससेनापत्यदण्डनेतृत्वखड्गपरश्वधकुन्तकुठारशतघ्नीभिन्दिपालधनुर्वाणनैपुण्यधृतिकान्तिगाम्भीर्यकामक्रोधशत्रुवृद्धि आग्रहावग्रहपरापवादस्वतन्त्रधातृभूकारकः कुजः ।।३।।

मङ्गल— पराक्रम, विजय, ख्याति, संग्राम, साहस, सेनापति होना, सामन्त, खड्ग, फर्सा, कुन्त, कुल्हाड़ा, तोप, भिन्दिपाल, धनुष, बाण, निपुणता, धैर्य, गम्भीरता, काम, क्रोध, शत्रुवृद्धि, आग्रह, अवग्रह, कलंक, स्वतन्त्रता, दाई, तथा भूमि का कारक मंगल है॥३॥

सन्ततिशान्तिविनयभक्तिमतिमातुलबान्धवज्ञातिगोत्रसमृद्धिगणितप्रज्ञावेदान्तविद्याकारको बुधः ।।४।।

बुध— सन्तान, शान्ति, नम्रमा, भक्ति, बुद्धि, मामा, बान्धव, सगोत्रीय, समृद्धि, बुद्धि-चातुर्य, गणित, वेदान्त, विद्या इत्यादि का कारक बुध है॥४॥

वाग्घोरणीमन्त्रराजतन्त्रनैष्ठिकगजतुरगयाननिगमावबोधकर्मपुत्रसम्पज्जीवनोपायकर्मयोगसिंहासनकारको गुरुः ।।५।।

गुरु— वाणी, सवारी, मन्त्र, राजतन्त्र, निष्ठा, हाथी, घोड़ा, पालकी, वेदों का

ज्ञान, शास्त्रों का ज्ञान, कर्म, पुत्र, सम्पत्ति, जीवनोपाय, कर्मयोग, सिंहासनादि का कारक गुरु है॥५॥

सङ्गीतसाहित्यदास्यरसाद्भुतमदनयुवतिरतिकेलिविलासविचित्रकान्तिसौन्दर्यराजवशीकरणराजमुखवशीकरणगारुडेन्द्रजालमालावैशद्यमहदणिमाद्यष्टैश्वर्यकाव्यकलासमभोगकलत्रकारकः शुक्रः ।।६।।

शुक्र— संगीत, काव्य, दासत्व, रस, काम, स्त्री, कामज क्रियायें, विलास, चित्र, कान्ति, सौन्दर्य, राजा, राज्याधिकारी, वशीकरण, गारुडविद्या, इन्द्रजाल, चांतुर्य, बड़े-छोटे ऐश्वर्य, काव्यकला तथा स्त्री का कारक ग्रह शुक्र है॥६॥

लोभमोहविषमपरपीडानियतिनैष्ठुर्यदुर्मतिदारिद्र्यदुर्दशामयवातवञ्चनमहिषीयवागूकृष्णधान्यायुष्यजीवनोपायकारकः शनिः ।।७।।

शनि— मोह, लोभ, विषम, परपीड़ा, निर्घातादि शब्द, निष्ठुरता, दुर्मति, दरिद्रता, दुर्दशा, रोग, वातादि रोग, ठगी, भैंस, दलिया, कृष्ण अन्न (काले तिल, उड़द इत्यादि), आयु, जीवन का उपायकारक ग्रह शनि है॥७॥

यशःप्रतिष्ठाछत्रकारको राहुः ।।८।।

इति श्रीसर्वार्थचिन्तामणावुपसंहाराध्यायो
नामाष्टादशोऽध्यायः ।।१८।।

राहु— यश, प्रतिष्ठा, छत्रादि का कारक ग्रह राहु है॥८॥

इस प्रकार 'सर्वार्थचिन्तामणि' ग्रन्थ की आचार्य पण्डित गुरुप्रसाद गौड़कृत
'सर्वार्थबोधिनी' हिन्दी टीका में अट्ठारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ॥१८॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थ

ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

भाषा टीका सहित

- **ग्रहलाघवम्**। ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **लघुजातकम्**। कमलकान्त पाण्डेय
- **फलित विकास**। रामचन्द्र पाठक
- **सूर्यसिद्धान्तः**। रामचन्द्र पाण्डेय
- **जातकालङ्कार**। सत्येन्द्र मिश्र
- **जातकपारिजात**। हरिशंकर पाठक
- **मुहूत्तपारिजात**। सीताराम झा
- **भावप्रकाश**। सत्येन्द्र मिश्र
- **भुवनदीपक**। सत्येन्द्र मिश्र
- **षट्पञ्चाशिका**। गुरुप्रसाद गौड़
- **पञ्चस्वराः**। सत्येन्द्र मिश्र
- **लघुपाराशरी-मध्यापाराशरी**। सुरकान्त झा
- **बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्**। पद्मनाभ शर्मा
- **(केशवीय) जातकपद्धतिः**। सुरकान्त झा
- **भावकुतूहलम्**। हरिशंकर पाठक
- **सर्वार्थचिन्तामणिः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **नक्षत्रचिकित्सा-ज्योतिषम्**। अभयकात्यायन
- **समरसारः**। अभय कात्यायन
- **प्रश्नमार्गः**। गुरुप्रसाद गौड़ (१-२ भाग)
- **दशाफलदर्पणः**। हरिशंकर पाठक
- **सिद्धान्तशिरोमणिः**। सत्यदेव शर्मा
- **मयमतम्**। शैलजा पाण्डेय (१-२ भाग)
- **वास्तुमण्डनम्**। श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **आर्यभटीयम्**। सत्यदेव शर्मा
- **मुहूर्त्तकल्पद्रुमः**। श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **सुगम फलित ज्योतिष**। ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **लीलावती**। सीताराम झा
- **मकरन्दप्रकाशः**। लषणलाल झा
- **सर्वतोभद्रचक्रम्** । ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **फलचिन्तामणि**। कुलानन्द झा
- **राजवल्लभमण्डनम्**। शैलजा पाण्डेय
- **फलितसंग्रह**। सत्येन्द्र मिश्र
- **मुहूर्तदीपकः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नवैष्णवः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **केरलप्रश्नशास्त्रसंग्रह**। गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नभूषणम्**। गुरुप्रसाद गौड़
- **गृहवास्तुप्रदीपः**। शैलजा पाण्डेय
- **पंचसिद्धान्तिका**। सत्यदेव शर्मा
- **ताजिक पद्मकोषः**। अभय कात्यायन
- **पूर्वकालामृतम्**। रामचन्द्र पाण्डेय
- **अद्भुतसागरः**। शिवकान्त झा
- **प्रश्नचण्डेश्वरः**। अभय कात्यायन
- **सामुद्रिकशास्त्रम्**। अभय कात्यायन
- **वास्तुशास्त्रसार**। स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द
- **रमलनवरत्नम्**। अभय कात्यायन
- **बृहत्संहिता**। अच्युतानन्द झा
- **बृहद्वास्तुमाला**। रामनिहोर द्विवेदी
- **बृहत्जातक (होराशास्त्र)**। सत्येन्द्र मिश्र
- **दैवज्ञवल्लभाः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **अर्थर्वेदीय ज्योतिष**। अभय कात्यायन
- **खेटकौतुकम्**। श्रीनारायणदास
- **जातकतत्त्वम्**। हरिशंकर पाठक
- **ताजिकनीलकण्ठी**। सीताराम झा
- **दीर्घवृतलक्षणम्**। सत्यदेव शर्मा
- **फलदीपिका**। हरिशंकर पाठक
- **भार्गव नाडिका**। अभय कात्यायन
- **मानसागरी**। मधुकान्त झा
- **मुहूर्तचिन्तामणिः**। विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी
- **वेदाङ्गज्योतिषम्**। शिवराज कौण्डिन्यायन
- **शीघ्रबोधः**। ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **सरलत्रिकोणमितिः**। सत्यदेव शर्मा
- **हस्तसञ्जीवनम्**। सुरकान्त झा

कालसर्पयोग-शान्ति-प्रयोग

* * *

हिन्दीव्याख्याकार-डॉ. रामप्रिय पाठक

ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

भाषा टीका सहित

- **ग्रहलाघवम्**। ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **लघुजातकम्**। कमलकान्त पाण्डेय
- **फलित विकास**। रामचन्द्र पाठक
- **सूर्यसिद्धान्तः**। रामचन्द्र पाण्डेय
- **जातकालङ्कार**। सत्येन्द्र मिश्र
- **जातकपारिजात**। हरिशंकर पाठक
- **मुहूर्त्तपारिजात**। सीताराम झा
- **भावप्रकाश**। सत्येन्द्र मिश्र
- **भुवनदीपक**। सत्येन्द्र मिश्र
- **षट्पञ्चाशिका**। गुरुप्रसाद गौड़
- **पञ्चस्वराः**। सत्येन्द्र मिश्र
- **लघुपाराशरी-मध्यापाराशरी**। सुरकान्त झा
- **बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्**। पद्मनाभ शर्मा
- **(केशवीय) जातकपद्धतिः**। सुरकान्त झा
- **भावकुतूहलम्**। हरिशंकर पाठक
- **सर्वार्थचिन्तामणिः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **नक्षत्रचिकित्सा-ज्योतिषम्**। अभयकात्यायन
- **समरसारः**। अभय कात्यायन
- **प्रश्नमार्गः**। गुरुप्रसाद गौड़ (१-२ भाग)
- **दशाफलदर्पणः**। हरिशंकर पाठक
- **सिद्धान्तशिरोमणिः**। सत्यदेव शर्मा
- **मयमतम्**। शैलजा पाण्डेय (१-२ भाग)
- **वास्तुमण्डनम्**। श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **आर्यभटीयम्**। सत्यदेव शर्मा
- **मुहूर्त्तकल्पद्रुमः**। श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **सुगम फलित ज्योतिष**। ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **लीलावती**। सीताराम झा
- **मकरन्दप्रकाशः**। लषणलाल झा
- **सर्वतोभद्रचक्रम्** । ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **फलचिन्तामणि**। कुलानन्द झा
- **राजवल्लभमण्डनम्**। शैलजा पाण्डेय
- **फलितसंग्रह**। सत्येन्द्र मिश्र
- **मुहूर्तदीपकः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नवैष्णवः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **केरलप्रश्नशास्त्रसंग्रह**। गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नभूषणम्**। गुरुप्रसाद गौड़
- **गृहवास्तुप्रदीपः**। शैलजा पाण्डेय
- **कुण्डार्कः**। अभय कात्यायन
- **ताजिक पद्मकोषः**। अभय कात्यायन
- **पूर्वकालामृतम्**। रामचन्द्र पाण्डेय
- **अद्भुतसागरः**। शिवकान्त झा
- **प्रश्नचण्डेश्वरः**। अभय कात्यायन
- **सामुद्रिकशास्त्रम्**। अभय कात्यायन
- **वास्तुशास्त्रसार**। स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द
- **नरपतिजयचर्यास्वरोदयः**। सत्येन्द्र मिश्र
- **बृहत्संहिता**। अच्युतानन्द झा
- **बृहद्वास्तुमाला**। रामनिहोर द्विवेदी
- **बृहत्जातक (होराशास्त्र)**। सत्येन्द्र मिश्र
- **दैवज्ञवल्लभाः**। गुरुप्रसाद गौड़
- **अथर्ववेदीय ज्योतिष**। अभय कात्यायन
- **खेटकौतुकम्**। श्रीनारायणदास
- **जातकतत्त्वम्**। हरिशंकर पाठक
- **ताजिकनीलकण्ठी**। सीताराम झा
- **दीर्घवृतलक्षणम्**। सत्यदेव शर्मा
- **फलदीपिका**। हरिशंकर पाठक
- **भार्गव नाडिका**। अभय कात्यायन
- **मानसागरी**। मधुकान्त झा
- **मुहूर्तचिन्तामणिः**। विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी
- **वेदाङ्गज्योतिषम्**। शिवराज कौण्डिन्यायन
- **शीघ्रबोधः**। ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **सरलत्रिकोणमितिः**। सत्यदेव शर्मा
- **हस्तसञ्जीवनम्**। सुरकान्त झा

प्राप्ति स्थान

चौखाम्बा पब्लिशिंग हाऊस
4697/2, 21-ए, अंसारी रोड़,
दरियागंज नई दिल्ली - 110002
फोन न. 011-23286537, 32996391

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
के - 37/117 गोपाल मंदिर लेन
वाराणसी-221001
फोन न. 0542-2335263, 2335264

SAM Enterprises, Delhi